4197

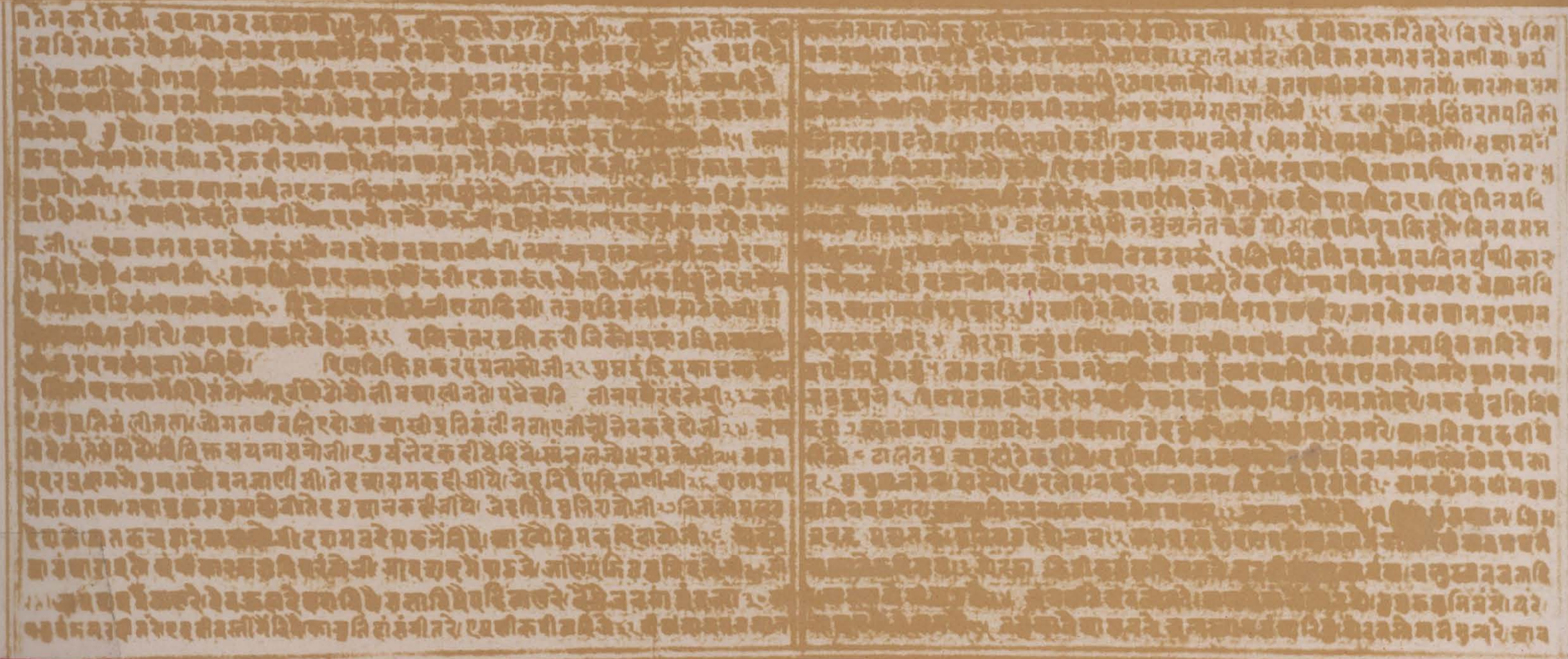

भगवती-जोड़

(खण्ड-४)

श्रीमज्जयाचार्य

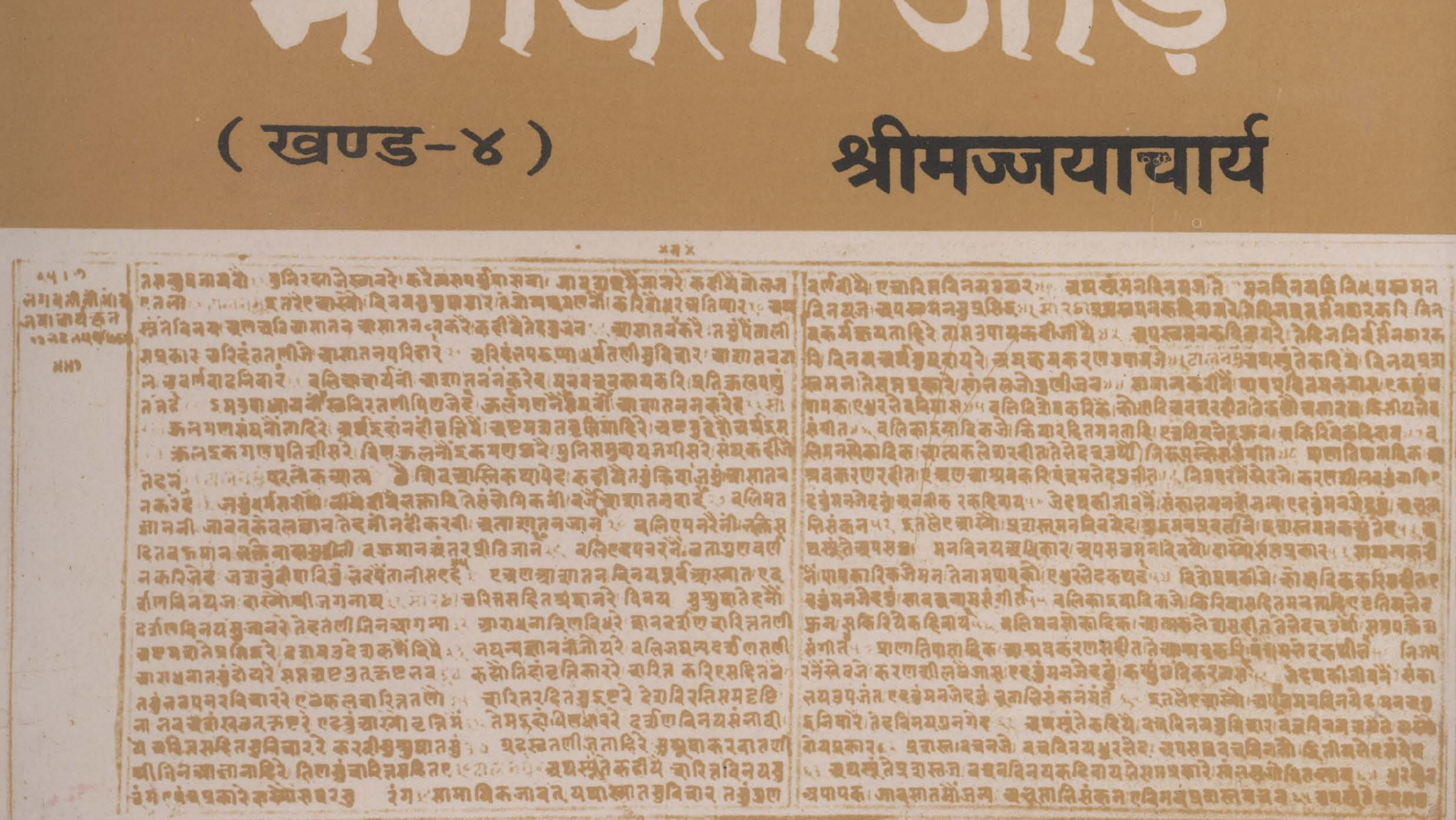

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन आगमों के मुख्य दो विभाग हैं- अंग और अंग बाह्य। अंग बारह थे। आज केवल ग्यारह अंग ही उपलब्ध होते हैं। उनमें पांचवां अंग है- भगवती। इसका दूसरा नाम व्याख्या-प्रज्ञप्ति है। इसमें अनेक प्रश्नों के व्याकरण हैं। जीव-विज्ञान, परमाणु-विज्ञान, सृष्टि-विधान, रहस्यवाद, अध्यात्म - विद्या, वनस्पति- विज्ञान आदि विद्याओं का यह आकर-ग्रन्थ है। उपलब्ध आगमों में यह सबसे बड़ा है। इसका ग्रन्थमान १६००० अनुष्टुप् श्लोक प्रमाण माना जाता है। नवांगी टीकाकार अभयदेव सूरी ने इस पर टीका लिखी। उसका ग्रन्थमान अठारह हजार श्लोक प्रमाण है।

भगवती सूत्र की सबसे बड़ी व्याख्या है- यह 'भगवती जोड़'। इस की भाषा है राजस्थानी। यह पद्यात्मक व्याख्या है, इसलिए इसे 'जोड़' की संज्ञा दी गई है।

इस ग्रन्थ में सर्व प्रथम जयाचार्य द्वारा प्रस्तुत जोड़ के पद्य और ठीक उनके सामने उन पद्यों के आधार-स्थल दिये गये हैं। जयाचार्य ने मूल के अनुवाद के साथ-साथ अपनी ओर से स्वतंत्र समीक्षा भी की है।

*

आवरण पृष्ठ पर मुद्रित हस्त-लिखित पत्र ग्रन्थ की ऐतिहासिक पाण्डुलिपि के नमूने हैं। इनकी लेखिका हैं— तेरापंथ धर्मसंघ की विदुषी साध्वी गुलाब, जो आशु- लेखन की कला में सिद्धहस्त थीं। जयाचार्य भगवती-जोड़ की रचना करते हुए पद्यों का सृजन कर बोलते जाते और महासती गुलाब अविकल रूप से उन्हें कलम की नोक से कागज पर उतारती जातीं। उस प्रथम ऐतिहासिक प्रति के ये पत्र प्रज्ञा, कला और ग्रहण-शीलता की समन्विति के जीवन्त साक्ष्य हैं। मुद्रण का आधार यही प्रति है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भगवती जोड़

(शतक १२ से १५)

श्रीमज्जयाचार्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जय वाङ्मय : ग्रन्थ १५

भगवती-जोड़

खण्ड ४

(शतक १२ से १५)

प्रवाचक
आचार्य तुलसी

प्रधान सम्पादक
युवाचार्य महाप्रज्ञ

सम्पादन
साध्वी-प्रमुखा कनकप्रभा

प्रकाशक
जैन विश्व भारती
लाडनूं (राजस्थान)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रबन्ध-सम्पादक :
श्रीचन्द रामपुरिया
निदेशक
आगम और साहित्य प्रकाशन
(जैन विश्व भारती

ISB No. 81-7195-030-2

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

राष्ट्रीय अभिलेखागार, भारत सरकार, नई दिल्ली
के आर्थिक सौजन्य से प्रकाशित

प्रथम संस्करण :
१९९४

मूल्य : ₹ 400-00

मुद्रक :
मित्र परिषद् कलकत्ता के आर्थिक सौजन्य से स्थापित
जैन विश्व भारती प्रेस, लाडनूं (राजस्थान)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

'भगवती जोड़' का प्रथम खण्ड जयाचार्य निर्वाण शताब्दी के अवसर पर 'जय वाङ्मय' के चतुर्दश ग्रन्थ के रूप में सन् १९८१ में प्रकाशित हुआ था। इसका दूसरा खण्ड सन् १९८६ में प्रकाशित हुआ और तीसरा खण्ड सन् १९९० में प्रकाशित हुआ। अब उसी ग्रन्थ का चतुर्थ खण्ड पाठकों के हाथों में सौंपते हुए अति हर्ष का अनुभव हो रहा है।

प्रथम खण्ड में उक्त ग्रन्थ के चार शतक समाहित हैं। द्वितीय खण्ड में पांचवें से लेकर आठवें शतक और तृतीय खण्ड में नौवें से लेकर ग्यारहवें शतक तक की सामग्री समाहित है। प्रस्तुत खण्ड में बारहवें से पन्द्रहवें तक चार शतक एवम् एक परिशिष्ट 'गोशाला री चोपई' संगृहीत है।

साहित्य की बहुविध दिशाओं में आगम ग्रन्थों पर श्रीमज्जयाचार्य ने जो कार्य किया है वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्राकृत आगमों को राजस्थानी जनता के लिए सुबोध करने की दृष्टि से उन्होंने उनका राजस्थानी पद्यानुवाद किया जो सुमधुर रागिनियों में ग्रथित है।

प्रथम आचारांग की जोड़, उत्तराध्ययन की जोड़, अनुयोगद्वार की जोड़, पन्नवणा की जोड़, संजया की जोड़, नियंठा की जोड़—ये कृतियां उक्त दिशा में जयाचार्य के विस्तृत कार्य की परिचायक हैं।

"भगवई" अंग ग्रन्थों में सबसे विशाल है। विषयों की दृष्टि से यह एक महान् उदधि है। जयाचार्य ने इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आगम-ग्रन्थ का भी राजस्थानी भाषा में गीतिकाबद्ध पद्यानुवाद किया। यह राजस्थानी भाषा का सबसे बड़ा ग्रन्थ माना गया है। इसमें मूल के साथ टीका ग्रन्थों का भी अनुवाद है और वार्तिक के रूप में अपने मंतव्यों को बड़ी स्पष्टता के साथ प्रस्तुत किया है। इसमें विभिन्न लय ग्रथित ५०१ ढालें तथा कुछ अन्तर ढालें हैं। ४१ ढालें केवल दोहों में हैं। ग्रन्थ में ३२९ रागिनियां प्रयुक्त हैं।

इसमें ४९९३ दोहे, २२२५४ गाथाएं, ६५५२ सोरठे, ४३१ विभिन्न छंद, १८४८ प्राकृत, संस्कृत पद्य तथा ७४४९ पद्य-परिमाण ११९० गीतिकाएं, ९३२९ पद्य-परिमाण १०४ यन्त्रचित्र आदि हैं। इसका अनुष्टुप् पद्य-परिणाम ग्रन्थाग्र ६०९०६ है।

प्रस्तुत खण्ड में मूल राजस्थानी कृति के साथ संबंधित आगम पाठ और टीका गाथाओं के सामने दी गई है। इससे पाठकों को समझने की सुविधा के साथ-साथ मूल कृति के विशेष मंतव्य की जानकारी भी हो सकेगी।

इस ग्रन्थ का कार्य युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी के तत्त्वावधान में हुआ है और साध्वीप्रमुखा कनकप्रभाजी ने उनका पूरा-पूरा हाथ बंटाया है। उनका श्रम पग-पग पर अनुभूत होता-सा दृग्गोचर होता है।

योगक्षेम वर्ष की सम्पन्नता के बाद तृतीय खण्ड प्रकाशित हुआ है। अब उसके बाद चतुर्थ खण्ड को पाठकों के हाथ में प्रदान करते हुए जैन विश्व भारती अपने आपको अत्यंत गौरवान्वित अनुभव करती है।

इस ग्रंथ का मुद्रण कार्य जैन विश्व भारती के निजी मुद्रणालय में सम्पन्न हुआ है, जिसकी स्थापना जयाचार्य निर्वाण शताब्दी के उपलक्ष में मित्र परिषद्, कलकत्ता के आर्थिक सौजन्य से हुई थी।

दिनांक १०-११-९३

श्रीचन्द रामपुरिया
कुलपति
जैन विश्व भारती, लाडनूं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

भगवती-जोड़ का चतुर्थ खंड भगवती सूत्र के चार शतकों का समवाय है। बारहवें से पन्द्रहवें शतक तक चार शतकों में अनेक विषयों का विवेचन किया गया है। बारहवें शतक के दस उद्देशक हैं। इन उद्देशकों की विषय वस्तु का आकलन संग्रहणी गाथा में है। गाथा के आधार पर जयाचार्य ने दो दोहे लिखे हैं—

संख जयंती श्राविका, पृथ्वी रत्न प्रमाद।
पुद्गल प्राणातिपात नों, राहु तणो विधिवाद ॥
लोक नाग सुर वारता, भेद आत्म संपेख।
द्वादशमा जे शतक नां, दश उद्देशा देख ॥

प्रथम उद्देशक में शंख-पोखली आदि श्रावकों का प्रसंग वर्णित है। वे श्रावक श्रावस्ती नगरी में रहते थे। वहां एक बार भगवान महावीर पधारे। लोग देशना सुनने गए। देशना का समय पूरा हो गया। श्रावक अपने घर लौटने लगे। शंख श्रावक ने उनसे कहा—'आज हम सामूहिक भोजन कर पाक्षिक पौषध की आराधना करें।' शंख के निर्देशानुसार सामूहिक भोजन की व्यवस्था हो गई। समय पर प्रायः सभी श्रावक पहुंच गए, पर शंख नहीं पहुंचा। सब लोग शंख की प्रतीक्षा करने लगे। उसके आने में विलम्ब होता देख पोखली श्रावक ने कहा—'मैं जाता हूं और शंखजी को बुलाकर लाता हूं।' पोखली श्रावक शंख के घर पहुंचा। शंख की पत्नी उत्पला ने उसका अभिवादन किया, स्वागत किया और आने का प्रयोजन पूछा। पोखली ने कहा—'सब श्रावक पहुंच गए। भोजन तैयार हो गया। शंखजी नहीं पहुंचे। मैं उन्हें बुलाने आया हूं।' उत्पला बोली—'वे आज पौषधशाला में साधना कर रहे हैं।' पोखली श्रावक पौषधशाला में शंख से मिला और बोला—'सब लोग आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। आप अब तक पहुंचे क्यों नहीं?' शंख ने उत्तर दिया—आज मैं विशेष साधना में संलग्न हूं। इसलिए आपके साथ नहीं जा सकता और भोजन भी नहीं कर सकता।

शंख के मना करने पर पोखली वहां से चलकर प्रतीक्षारत श्रावकों के पास पहुंचा। उसने सबको वस्तु स्थिति की जानकारी दी। उन्होंने भोजन कर सामूहिक रूप में पाक्षिक पौषध की आराधना की।

दूसरे दिन सूर्योदय के बाद शंख भगवान् महावीर के दर्शन करने गया। अन्य श्रावक भी वहां आए। भगवान् ने प्रवचन किया। प्रवचन सम्पन्न होने पर श्रावक शंख के पास जाकर बोले—'देवानुप्रिय! कल आपने हमारे साथ धोखा क्यों किया? आपको भोजन नहीं करना था, सामूहिक पौषध नहीं करना था तो हमें क्यों कहा? आपके कारण हमें कितना हास्यास्पद बनना पड़ा?'

श्रावक शंख को उपालम्भ दे रहे थे, उसी समय भगवान महावीर ने उन्हें प्रतिबोध देते हुए कहा—श्रावको! तुम शंख की अवहेलना मत करो। शंख प्रियधर्मी और दृढ़धर्मी श्रावक है। इसने जागरिका की है। श्रावकों को अपने प्रमाद का बोध हुआ। उन्होंने भगवान् को वंदन-नमस्कार किया। शंख के साथ खमतखामणा किया। कालांतर में शंख श्रावक ने भगवान के पास अनगार धर्म—मुनि दीक्षा स्वीकार की।

जयाचार्य ने भगवती के इस प्रेरक कथानक को 'जोड़' में आबद्ध किया ही है, इसके साथ-साथ कुछ विमर्ष योग्य शब्दों की समीक्षा भी की है।

दूसरे उद्देशक में कौशाम्बी नरेश उदयन के परिवार का वर्णन है। उदयन की माता मृगावती एक तत्त्वज्ञ श्राविका थी। उदयन की बुआ जयन्ती भी अच्छी तत्त्वज्ञा थी। साधुओं की प्रथम शय्यातर के रूप में उसकी प्रसिद्धि थी।

एक बार भगवान् महावीर कौशाम्बी नगरी पधारे। जयंती श्राविका को यह संवाद मिला। उसने प्रसन्न हो अपनी भाभी मृगावती तक यह सूचना पहुंचाई। मृगावती जयन्ती को साथ लेकर भगवान् के दर्शन करने गई। राजा उदयन भी उनके साथ था। भगवान का प्रवचन सुन राजा उदयन और महारानी मृगावती घर लौट गई। जयंती के मन में कुछ जिज्ञासाएं थीं। उसने भगवान् की उपासना कर अपनी जिज्ञासाएं प्रस्तुत कीं।

जयन्ती के प्रश्न—

(१) भन्ते! जीव भारी कैसे होते हैं?
(२) जीव की भव्यता स्वाभाविक है या पारिणामिक?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) सब भव्य जीवों की मुक्ति होगी ?
(४) सब भव्य जीव मुक्त हो जाएंगे तो क्या लोक भव्य जीवों से शून्य हो जाएगा ?
(५) सोना अच्छा है या जागना ?
(६) बलवत्ता अच्छी है या दुर्बलता ?
(७) दक्षता—पुरुषार्थ अच्छा है या आलस्य ?
(८) इन्द्रियों की वशवर्तिता से किन कर्मों का बन्ध होता है ?

भगवान् महावीर ने जयन्ती के सब प्रश्नों को उत्तरित कर उसे समाहित कर दिया।

तीसरे उद्देशक में नरक की सात पृथ्वियों, उनके नाम, गोत्र आदि का निरूपण है।

चतुर्थ उद्देशक में पुद्गलों के मिलन और भेद का विस्तृत विवेचन है। जोड़ में जो विवेचन है, उसे यन्त्रों के माध्यम से और अधिक स्पष्ट करके निर्दशित किया गया है। इसके बाद पुद्गल-परावर्त का पूरे विस्तार के साथ वर्णन है। पुद्गल परावर्त के प्रकार, चौबीस दण्डकों में पुद्गल परावर्त, इनमें अल्पबहुत्व आदि की चर्चा है।

पांचवें उद्देशक में वर्णादि की अपेक्षा से द्रव्य की मीमांसा की गई है। क्रोध, मान, माया और लोभ के पर्यायवाची नामों की व्याख्या और उनमें वर्ण, गंध आदि का उल्लेख है। इसी क्रम से बुद्धि के प्रकार, मतिज्ञान के प्रकार, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार-पराक्रम, जीव परिणामी, अजीव-परिणामी, अवकाशांतर, चौबीस दण्डक, पंचास्तिकाय, कर्म, लेश्या, दृष्टि, शरीर, योग, उपयोग, सब द्रव्य और गर्भोत्पत्ति काल में वर्ण आदि का विवेचन है। उद्देशक के अन्त में कर्मों के योग से होने वाली जीवों की विचित्रता का वर्णन है।

छठे उद्देशक में चन्द्रमा-सूरज का ग्रहण, राहू का स्वरूप, राहू के भेद और चन्द्रमा एवं सूरज के कामभोग का विवेचन है।

सातवें उद्देशक में लोक में जीवों की उत्पत्ति और मृत्यु का विस्तार से वर्णन है।

आठवें उद्देशक में देवों के द्विशरीरी उपपाद आदि का वर्णन है। नौवें उद्देशक में पांच प्रकार के देवों का विस्तृत विवेचन है। दसवें उद्देशक में आत्मा की चर्चा है। आत्मा के प्रकार, किस गुणस्थान तक कौन-सी आत्मा, किस आत्मा में किन आत्माओं की नियमा-भजना, आठ आत्माओं का अल्प बहुत्व, आत्मा के साथ ज्ञान-दर्शन का भेदाभेद आदि का निरूपण है। परमाणु, स्कन्ध आदि के सन्दर्भ में आत्मा-नोआत्मा के प्रसंग को यन्त्रों के माध्यम से भी स्पष्ट किया गया है।

जयाचार्य ने १३ ढालों, दोहों-सोरठों, वार्तिकाओं और यन्त्रों के द्वारा बारहवें शतक को कहीं संक्षेप और कहीं विस्तार के साथ विश्लेषित किया है। बीच-बीच में अपने स्वतन्त्र चिन्तन के आधार पर कुछ समीक्षाएं भी की गई है।

तेरहवें शतक का गुम्फन १९ ढालों, दोहों-सोरठों एवं वार्तिकाओं में किया गया है। इसके प्रथम उद्देशक में सात नरकभूमियों का वर्णन है। गणधर गौतम ने भगवान् महावीर से नरकभूमियों की संख्या, नरकावासों की संख्या और उनमें उत्पन्न होने वाले जीवों के सम्बन्ध में उनचालीस प्रश्न किए हैं। नरकभूमियों से उद्वर्तन—निकलने और सत्ता के बारे में भी ऐसी ही प्रश्नावली है। दृष्टि और लेश्या को भी विषयवस्तु बनाकर प्रश्न उपस्थित किए गए हैं। भगवान ने प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देकर गौतम को समाहित कर दिया।

दूसरे उद्देशक में नैरयिकों की भांति औपातिक होने के कारण देवों का वर्णन किया है। देवों के प्रकार, उनके आवास, उनमें उत्पन्न होने वाले देवों में दृष्टि, लेश्या आदि का वर्णन मूल पाठ और वृत्ति के आधार पर किया गया है। उसके बाद जयाचार्य ने अन्य ग्रन्थों के आधार पर भी नैरयिक जीवों और देवों के आवासों की संख्या का वर्णन किया है।

तीसरे उद्देशक में चौबीस दण्डकों के जीवों के आहार ग्रहण, शरीर संरचना और परिचारणा आदि का वर्णन संक्षेप में वर्णित है।

चोथे उद्देशक में नरकभूमियों और नैरयिक जीवों में स्थान, कर्म, वेदना आदि की अल्पता और अधिकता का प्रतिपादन है। इसी प्रकार नरकभूमियों की मोटाई, लम्बाई, चौड़ाई, नरकभूमियों के पार्श्ववर्ती जीवों के कर्म, वेदना आदि का विवेचन है। इसी उद्देशक में लोक के मध्य आयाम, दिशाओं-विदिशाओं का प्रवाह, लोक का स्वरूप, पंचास्तिकाय का वर्णन, उनकी स्पर्शना, अवगाहना जीवों की अवगाहना, लोक का संस्थान आदि अनेक विषयों का वर्णन है।

पांचवें उद्देशक में नैरयिक जीवों के आहार का वर्णन है। यह वर्णन प्रज्ञापना सूत्रानुसारी है। इसलिए यहां उसका उल्लेख करते हुए मात्र संक्षिप्त सूचना दी गई है।

छठे उद्देशक में नैरयिक जीवों एवं देवों की सान्तर-निरन्तर उत्पत्ति एवं च्यवन की चर्चा करते हुए असुरेन्द्र चमर के चमरचंचा नामक आवास का विस्तृत विवेचन है। देशव्रत और सर्वव्रत के विराधक व्यक्ति असुरकुमार देव बनते हैं। जैन शासन में इस प्रकार की विराधना के सन्दर्भ में सिन्धु-सौवीर देश में वीतिभय नामक नगर के राजा उदायन का विस्तृत कथानक इसी उद्देशक में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्णित है। राजा उदायन का पुत्र अभीचिकुमार श्रमणोपासक था। अनशन में भी वह अपने पिता के प्रति उत्पन्न द्वेष भाव से मुक्त नहीं हुआ। इस क्रम से देशव्रत की विराधना कर असुरकुमारावास में पैदा हुआ।

सातवें उद्देशक में भाषा, मन और काय का अनेक दृष्टियों से विवेचन किया गया है। इसी उद्देशक में आगे मरण के पांच प्रकारों का वर्णन है। आठवें उद्देशक में कर्म प्रकृतियों की चर्चा है, पर यहां प्रज्ञापना सूत्र की सूचना देकर उनका उल्लेख मात्र किया गया है।

नवमें उद्देशक में भावितात्म मुनि द्वारा किए जाने वाले वैक्रियलब्धि के विविध प्रयोगों की चर्चा है। उद्देशक के अन्त में यह बताया गया है कि मायी भावितात्म अनगार विक्रिया करता है। विक्रिया करने वाला अनगार आलोचना और प्रतिक्रमण करके अपनी जीवन यात्रा पूरी करता है तो वह आराधक है। आलोचना किए बिना मृत्यु को प्राप्त करने वाला विराधक होता है।

दसवें उद्देशक में छाद्मस्थिक समुद्घातों की चर्चा की गई है। विविध विषयों का स्पर्श करने वाला मूलपाठ और वृत्ति के आधार पर रचित तथा बीच-बीच में समीक्षात्मक गद्य और पद्यों से परिवर्धित प्रस्तुत शतक पाठक को ज्ञान की गहराई तक पहुंचाने वाला है।

चौदहवें शतक के दस उद्देशक हैं। शतक के प्रारंभ में संग्रहणी गाथा के आधार पर सात दोहों में वर्ण्य विषयों को उल्लिखित किया गया है। प्रथम उद्देशक में लेश्यानुसारी उपपाद तथा चौबीस दण्डकों के जीवों का अनन्तर, परम्पर आदि की चर्चा है।

दूसरे उद्देशक में दो प्रकार के उन्माद बताकर चौबीस दण्डकों में उन्माद का वर्णन किया गया है। इसी उद्देशक में देवों द्वारा वृष्टिकाय और तमस्काय करने की चर्चा है।

तीसरे उद्देशक में देवों और नैरयिक जीवों की विनय विधि तथा उनके द्वारा अनुभव किए जाने वाले पुद्गल-परिणामों की संक्षिप्त चर्चा की गई है।

चौथे उद्देशक में पुद्गल और जीवों की विविध परिणतियों तथा जीव परिणाम और अजीव परिणाम के भेदों का उल्लेख है।

पांचवें उद्देशक में चौबीस दण्डक के जीवों द्वारा अग्निकाय के अतिक्रमण का प्रश्न उपस्थित किया है। इस सन्दर्भ में उनकी विग्रहगति और अविग्रहगति को आधार बनाकर समझाया गया है। इसी प्रकार शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, गति, स्थिति, लावण्य, यशर्कीति और उत्थान-कर्म-बल-वीर्य-पुरुषाकार पराक्रम— इन दस बोलों को चौबीस दण्डकों के सन्दर्भ में चर्चित किया गया है।

छठे उद्देशक के प्रारंभ में नैरयिक जीवों के आहार आदि का वर्णन है। दूसरा प्रसंग इन्द्र का है। इन्द्र के मन में दिव्य भोग भोगने की इच्छा होती है, तब वह क्या करता है? इस प्रश्न को विस्तार के साथ उत्तरित किया गया है।

सातवें उद्देशक में भगवान महावीर द्वारा गणधर गौतम को आश्वस्त करने का वर्णन है। गौतम द्वारा दीक्षित साधुओं को केवलज्ञान उपलब्ध हो गया। वे वीतराग बन गए। इस घटना से गौतम उद्वेलित हो गए। भगवान् महावीर ने गौतम के केवलज्ञान में उपस्थित बाधा का मनोवैज्ञानिक ढंग से वर्णन किया और अन्त में यह बताया है कि इस शरीर को छोड़ने के बाद हम तुल्य हो जाएंगे। यह कथन गौतम के लिए बहुत बड़ा आलम्बन बन गया। महावीर और गौतम की तुल्यता को अनुत्तरोपपातिक देव जानते हैं या नहीं? इस प्रश्न को समाहित करने के बाद छह प्रकार की तुल्यता का विवेचन है। अनशन की स्थिति में उत्पन्न आहार की इच्छा, लवसत्तम देव और अनुत्तर विमान के देवों की संक्षिप्त चर्चा के साथ उद्देशक पूरा हुआ है।

आठवें उद्देशक में नरकभूमियों और देवों के आवासों के मध्य की दूरी का वर्णन है। वृक्षों के पुनर्जन्म की चर्चा है। अम्बड़ परिव्राजक के शिष्यों का अनशन, अम्बड़ की चर्या, अव्याबाध देवों की शक्ति, इन्द्र की शक्ति तथा जृम्भक देवों का वर्णन है। प्रस्तुत उद्देशक की जोड़ में कुछ स्थलों पर जयाचार्य की लम्बी समीक्षा भी है।

नौवे उद्देशक के प्रारंभ में लेश्या, पुद्गल, देवभाषा, सूर्य और श्रमणों की तेजोलेश्या का वर्णन है। एक मास की दीक्षा पर्यायवाला श्रमण व्यन्तर देवों की तेजोलेश्या को अतिक्रांत कर देता है—उन्हें प्राप्त होने वाले सुखों से आगे बढ़ जाता है। इसी क्रम में दो मास तीन मास यावत बारह मास की दीक्षा पर्यायवाला श्रमण अनुत्तर विमान के देवों की तेजोलेश्या को अतिक्रांत कर देता है। इस उद्देशक का प्रतिपाद्य यह है कि साधु जीवन में जिस सुख का अनुभव हो सकता है, वह देवों को भी उपलब्ध नहीं है।

दसवें उद्देशक में केवली और सिद्धों के ज्ञान-दर्शन के बारे में कुछ प्रश्न उपस्थित कर उनको समाहित किया गया है।

चौदहवें शतक की पूरी जोड़ पन्द्रह ढालों और दोहों-सोरठों में रची गयी है।

भगवती सूत्र के पन्द्रहवें शतक की रचना नई शैली में है। इसमें न किसी संग्रहणी गाथा का संकेत है और न अलग-अलग उद्देशक हैं। पूरा शतक संलग्न रूप में व्याख्यात है। इसमें मुख्य रूप से गोशालक का वर्णन है। प्रासंगिक रूप में आजीवक मत, भगवान महावीर की तपस्या, उनके द्वारा गोशालक का शिष्य रूप में स्वीकार, नियतिवाद, पोट्टपरिहार, वैश्यायन तपस्वी द्वारा तेजोलब्धि का प्रयोग, भगवान् द्वारा गोशालक का बचाव, इस सन्दर्भ में समीक्षात्मक वार्तिका, तेजोलब्धि प्राप्त करने की विधि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक का स्वतन्त्र विहार, लब्धि प्राप्ति, छह दिशाचरों का योग, केवली के रूप में स्वयं को प्रतिष्ठित करने का प्रयास, श्रावस्ती में भगवान् महावीर का आगमन, गोशालक के असत्य संभाषण का प्रतिवाद, गोशालक को कोप, स्थविर आनन्द के साथ उसका वार्तालाप, चार बल्गुओं का दृष्टांत, आनन्द और भगवान् का संवाद, गोशालक का भगवान् के समवसरण में आगमन, सर्वानुभूति और सुनक्षत्र मुनियों पर तेजोलब्धि का सफल प्रयोग, भगवान् पर तेजोलब्धि का असफल प्रयोग, तेजोलब्धि का पुनः गोशालक के शरीर में प्रवेश, भगवान् और गोशालक का संवाद, श्रावस्ती नगरी में जन प्रवाद, भगवान् के शिष्यों द्वारा गोशालक की पुनः हालाहला कुंभकारी के आपण में वापसी, गोशालक द्वारा विचित्र सिद्धान्तों के रूप में आठ चरम तत्त्वों का निरूपण और उनका आचरण। आजीवक श्रमणोपासक अयंपुल का गोशालक के पास आगमन, आजीवक स्थविरों द्वारा अयंपुल का समाधान, गोशालक को अपनी मृत्यु का आभास, अन्तिम संस्कार के बारे में निर्देश, गोशालक के परिणामों में परिवर्तन, पश्चात्ताप, अपने बारे में श्रावकों को नया निर्देश, गोशालक की मृत्यु और उसके निर्हरण का विस्तार के साथ विवेचन है।

गोशालक ने भगवान् पर तेजोलब्धि का प्रयोग किया। वह शरीर के भीतर प्रविष्ट नहीं हो पाई। भगवान् का आत्मबल अनन्त था। वह उस कष्ट से प्रभावित नहीं हुआ। किन्तु शरीर पर उसका प्रभाव होने लगा। उस स्थिति में भी महान् आत्मबली भगवान् श्रावस्ती नगरी से विहार कर मिढियग्राम नगर के साण कोष्ठक उद्यान में पधारे। वहां भगवान् के शरीर में अस्वस्थता बढ़ी। पित्तज्वर का प्रकोप हुआ। लोगों में चर्चा होने लगी कि गोशालक की घोषणा के अनुसार छह महीनों के भीतर महावीर अस्वस्थ हो गए। अब वे निश्चित रूप से छद्मस्थ अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त होंगे।

भगवान् महावीर का शिष्य सिंह नामक मुनि ने भगवान् के सम्बन्ध में उक्त जनप्रवाद सुना। वह अधीर हो गया। वह मालुका कच्छ में प्रविष्ट होकर बाढ़ स्वर में विलाप करने लगा। भगवान् ने अपने ज्ञान बल से सिंह मुनि की मनःस्थिति को जाना। साधुओं को भेजकर सिंह को अपने पास बुलाया। सिंह मुनि को आश्वस्त किया। उसे रेवती के घर से बीजोरापाक लाने का निर्देश दिया। सिंह मुनि रेवती के घर गोचरी गया। सहज निष्पन्न बीजोरापाक लेकर आया। भगवान् ने उसका सेवन कर स्वास्थ्य लाभ किया। इससे चतुर्विध संघ में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई।

भगवान् का शरीर स्वस्थ होने पर गणधर गौतम ने सर्वानुभूति और सुनक्षत्र मुनि के बारे में कुछ प्रश्न किए। गोशालक के बारे में जिज्ञासा की। भगवान् ने पूरे विस्तार के साथ गोशालक के संसार भ्रमण का चित्र उपस्थित किया। अनन्तकाल तक संसार में परिभ्रमण करने के बाद गोशालक महाविदेह क्षेत्र में दृढ़प्रतिज्ञ नामक केवली होगा। वह अपने शिष्य साधुओं को गोशालक भव का पूरा वृत्तांत सुनाकर कहेगा—'आर्यो! मैंने अपने धर्माचार्य भगवान् महावीर की प्रत्यनीकता की। उनका अवर्णवाद किया। उन्हें कष्ट दिया। इसलिए मुझे संसार में दीर्घकाल तक भ्रमण करना पड़ा। कोई भी व्यक्ति आचार्य-उपाध्याय का प्रत्यनीक बनता है, उसकी यही स्थिति होती है।' दृढ़प्रतिज्ञ केवली बहुत वर्षों तक केवली पर्याय में रहकर अनशनपूर्वक देह त्याग कर मुक्त हो जाएंगे।

११८९ दोहों में निबद्ध गोशालक-चरित्र की शैली भगवती-जोड़ की चालू शैली से हटकर है। इसका कारण पन्द्रहवें शतक के अन्तिम पद्यों में उल्लिखित है। उन पद्यों पर दिए गए टिप्पणों से उसकी पूरी जानकारी उपलब्ध हो जाती है। प्रस्तुत खण्ड में एक परिशिष्ट भी रखा गया है। उसमें आचार्य भिक्षु द्वारा रचित गोशालक की चौपई दी गई है। चौपई की इकतालीस ढालें हैं। चौदहवें शतक की आखिरी ढाल की संख्या ३०५ है। पन्द्रहवें शतक की जोड़ के दोहों को इकतालीस ढालों की संख्या में गिनकर सोलहवें शतक का प्रारंभ ३४७ वीं ढाल से किया गया है। यह प्रसंग आचार्य भिक्षु के प्रति जयाचार्य के उत्कृष्ट समर्पण का उदाहरण है।

भगवती जोड़ के प्रथम तीन खण्डों की तरह चतुर्थ खण्ड का सम्पादन परमाराध्य आचार्यवर की मंगल सन्निधि में हुआ है। यत्र-तत्र युवाचार्यश्री का मार्गदर्शन भी मिलता रहा है। सम्पादन कार्य में आदि से अन्त तक निष्ठा के साथ काम किया है साध्वी जिनप्रभाजी ने। जोड़ में निर्दिष्ट आगमों के प्रमाण-स्थलों की खोज में मुनि हीरालालजी का सहयोग अविस्मरणीय है। किसी भी आगम या व्याख्या ग्रंथ का विवक्षित स्थल वे जिस सहजता से खोज लेते हैं वह उनके गंभीर आगम-अनुशीलन का परिचायक है। प्रति शोधन, प्रूफ निरीक्षण आदि कार्यों में साध्वी जिनप्रभाजी को अनेक साध्वियों का सहयोग सुलभ रहता है। इससे कार्य सम्पादन की गति में त्वरा आ जाती है। भगवती-जोड़ का मुद्रण कार्य भी बहुत श्रम साध्य है। राजस्थानी, प्राकृत और संस्कृत भाषा वाले इस ग्रंथ को सही ढंग से कम्पोजिंग करने में भी पूरी एकाग्रता की अपेक्षा रहती है। जैन विश्व भारती प्रेस के कार्यकर्ता इस कार्य में उत्तरोत्तर दक्षता बढ़ाते जा रहे हैं। कुल मिलाकर यह माना जा सकता है प्रस्तुत ग्रंथ में कुछ भी नया लेखन न होने पर भी जितना समय और श्रम इसके सम्पादन में लगता है, वह इसके वैशिष्ट्य का सूचक है है। आचार्यप्रवर का मंगल आशीर्वाद और सम्पादन कार्य में आए अवरोधों को दूर करने में आपकी तत्परता से मुझे जो आलोक मिलता है, वह आगामी खण्डों के सम्पादन में और अधिक सघनता से प्राप्त होगा, यह विश्वास ही मेरी सम्पादन यात्रा का सबसे बड़ा आलम्बन है।

साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रम

विषय	पृष्ठ
शंख पोक्खली पद	१
राजा उदयन परिवार पद	१०
राजा उदयन आदि का धर्मश्रवण पद	११
जयन्ती प्रश्न	१२
जीव की गुरुता और लघुता	१३
जीव की भवसिद्धिता	१३
जीव की बलवत्ता और दुर्बलता	१८
जीव की दक्षता और आलस्य	१८
इन्द्रियों की वशवर्तिता	१९
पृथ्वी पद	२०
परमाणु पुद्गलों का संघात-भेद	२०
पुद्गल परावर्तन पद	३९
चउवीस दंडक आश्री पुद्गल परावर्त	४०
औदारिक आदि पुद्गल परावर्त नो स्वरूप	४५
वर्णादि की अपेक्षा से द्रव्य मीमांसा पद	५०
क्रोध के दस नाम	५१
मान के बारह नाम	५२
माया के पन्द्रह नाम	५४
लोभ के सोलह नाम	५५
मति के चार प्रकार	५९
उत्थान आदि का स्वरूप	५९
अवकाशांतर आदि में वर्णादिक की पृच्छा	६१
जंबूद्वीप आदि में वर्णादिक की पृच्छा	६२
चौबीस दंडकों में वर्णादिक की पृच्छा	६२
धर्मास्तिकाय आदि में वर्णादिक की पृच्छा	६३
कर्म, लेश्या और दृष्टि में वर्णादिक की पृच्छा	६४
उदयभाव जीव-अजीव	६४
शरीर, जोग और उपयोग में वर्णादिक की पृच्छा	६५
सब द्रव्यों में वर्णादिक की पृच्छा	६५
गर्भोत्पत्ति काल में वर्णादिक की पृच्छा	६६
कर्म विभक्ति पद	६७
चंद्रसूर्य ग्रहण पद	६८
राहू वर्णन	६८
राहू के भेद	७१
शशि-आदित्य पद	७३
चंद्रसूर्य-कामभोग पद	७५
जीवों का जन्म-मृत्यु पद	७९
अनेक अथवा अनन्त वार उपपात पद	८१
देवों का द्विशरीर-उपपाद पद	८५
पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनि उपपाद पद	८६
पंचविध देवों का उपपाद पद	९१
पंचविध देवों का स्थिति पद	९३
पंचविध देवों का विकुर्वणा पद	९४
पंचविध देवों का उद्वर्तना पद	९६
पंचविध देवों का संचिट्ठुणा पद	९७
पंचविध देवों का अंतर-पद	९८
पंचविध देवों का अल्पबहुत्व पद	१००
आत्मा-पद	१०३
आठ आत्मा का अल्पबहुत्व पद	१०९
आत्मा के साथ ज्ञान-दर्शन का भेदाभेद	११०
रत्नप्रभा आदि पृथ्वी आत्मा या नोआत्मा	१११
सौधर्म आदि स्वर्ग आत्मा या नोआत्मा	११२
परमाणु स्कंध आदि आत्मा या नोआतमा	११२
नरक उपपाद पद	१२५
नरक उद्वर्तना पद	१३०
नरक-सत्ता पद	१३१
सक्करप्रभा का विस्तार	१३३
वालुकप्रभा का विस्तार	१३४
पंकप्रभा का विस्तार	१३४
धूमप्रभा का विस्तार	१३४
तमा का विस्तार	१३४
तमतमा का विस्तार	१३५
नरक में सम्यक्दृष्टि आदि की पृच्छा	१३६
नरक में लेश्या की पृच्छा	१३७
देवों के प्रकार	१४०
असुरकुमार आदि देवों की पृच्छा	१४०
व्यन्तर देवों की पृच्छा	१४२
ज्योतिषी देवों की पृच्छा	१४२
वैमानिक देवों की पृच्छा	१४३
अनुत्तर विमान के देवों की पृच्छा	१४७
देवों में सम्यग्दृष्टि आदि की पृच्छा	१४८
देवों में लेश्या की पृच्छा	१४९
२४ दण्डकों में आहार यावत परिचारणा	१५१
नरक और नैरयिक-अल्पमहत् पद	१५२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक स्पर्शानुभव पद	१५५
नरक-बाहल्य क्षुद्रत्व पद	१५६
नरक परिसामन्त पद	१५६
लोक मध्य पद	१५६
दिशि विदिशि प्रवह पद	१५८
लोक पद	१६०
धर्मास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना	१६३
अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना	१६४
आकाशास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना	१६४
जीवास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना	१६६
पुद्गलास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना	१६७
अद्धा समय के प्रदेशों की स्पर्शना	१७३
धर्मास्तिकाय आदि की परस्पर स्पर्शना	१७५
अवगाहना द्वार	१७७
अन्य प्रकार से अवगाहना द्वार	१८१
जीवों की अवगाहना द्वार	१८२
अस्तिकाय प्रदेश निषीदन द्वार	१८३
बहुसम द्वार	१८४
संस्थान द्वार	१८४
नैरयिक आहार पद	१८५
सांतर-निरंतर पद	१८६
चमर आवास पद	१८६
उदायन कथा पद	१८९
उदायन की धर्म जागरणा	१९१
वीतिभय में महावीर का आगमन	१९२
उदायन की दीक्षा की स्वीकृति	१९३
केशीकुमार का राज्याभिषेक	१९४
उदायन का अभिनिष्क्रमण	१९६
अभीचिकुमार का आक्रोश	१९८
व्रत-विराधना की परिणति	१९९
भाषा पद	२००
मन पद	२०३
काय पद	२०५
मरण पद	२१०
कर्म-प्रकृति पद	२१४
भावितात्मा विक्रिया पद	२१५
छाद्मस्थिक समुद्घात	२२०
लेश्यानुसारी उपपाद पद	२२५
नैरयिक आदि का गतिविषय पद	२२९
नैरयिक आदि का अनंतरोपपन्नगादि पद	२३२
उन्माद पद	२३५
वृष्टिकाय करण पद	२३८
तमस्काय करण पद	२३९
विनयविधि पद	२४०
पुद्गल जीव परिणाम पद	२४४
अग्निकाय अतिक्रमण पद	२५०
प्रत्यनुभव पद	२५३
देव उल्लंघन पद	२५५
नैरयिक आदि का आहारादि पद	२५६
देवेन्द्र-भोग पद	२५७
गोतम-आश्वासन पद	२६२
महावीर और गौतम की तुल्यता	२६३
भावी तुल्यता-परिज्ञान पद	२६४
तुल्यता पद	२६५
भक्त प्रत्याख्यात-आहार पद	२६९
लवसत्तम देव पद	२७१
अणुत्तरोपपातिक देवपद	२७२
अबाधा अन्तर पद	२७३
अम्मड अंतेवासी पद	२७७
अम्मड चर्या पद	२८२
अव्याबाध देवशक्ति पद	२८३
शक्रशक्ति पद	२८४
जृम्भक देव पद	२८५
सरूपी सकर्म लेश्या पद	२८७
अत्त-अणत्त पुद्गल पद	२९०
इष्ट-अनिष्ट आदि पुद्गल पद	२९०
देवभाषा सहस्र पद	२९१
सूर्य पद	२९१
श्रमणों की तेजोलेश्या पद	२९२
केवली पद	२९५
गोशालक पद	३०१
भगवान् विहार पद	३०६
प्रथम मासखमण पद	३०६
द्वितीय मासखमण पद	३०९
तृतीय मासखमण पद	३१०
चतुर्थ मासखमण पद	३१०
गोशालक का शिष्य रूप स्वीकरण पद	३१२
तिल स्तंभ पद	३१३
वैश्यायन बाल तपस्वी पद	३१५
तिलस्तंभ-निष्पत्ति और गोशालक-अपक्रमण पद	३२०
तेजोलेश्या-उत्पत्ति पद	३२१
गोशालक अमर्ष पद	३२२
गोशालक आक्रोश प्रदर्शन पद	३२३
वल्मीक दृष्टांत पद	३२३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आनंद स्थविर द्वारा भगवान् को निवेदन पद ३३०
गोतम आदि को अनुज्ञापन पद ३३२
गोशालक द्वारा स्वसिद्धांत निरूपण पद ३३४
गोशालक वचन प्रतिकार पद ३४०
गोशालक का पुनः आक्रोश पद ३४१
सर्वानुभूति भस्मराशिकरण पद ३४२
सुनक्षत्र परितापन पद ३४३
भगवान् पर तेजोलब्धि प्रयोग पद ३४३
श्रावस्ती में जनप्रवाद पद ३४५
गोशालक के साथ श्रमणों के प्रश्नोत्तर ३४५
गोशालक संघ भेद पद ३४७
गोशालक प्रतिगमन पद ३४७
नाना सिद्धांत प्ररूपण पद ३४८
अयंपुल आजीवकोपासक पद ३५१
निर्हरण निर्देश पद ३५५
गोशालक परिणाम परिवर्तन पद ३५६
निर्हरण पद ३५७
भगवान् के रोगातंक प्रादुर्भाव पद ३५८
मुनि सिंह का मानसिक दुःख पद ३५९
भगवान् द्वारा आश्वासन पद ३५९
सिंह द्वारा रेवती से भैषज्य आनयन पद ३६१
सर्वानुभूति उपपाद पद ३६३
सुनक्षत्र उपपाद पद ३६४
गोशालक का भवभ्रमण पद ३६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२ : १-१२२

शतक १३ : १२३-२२२

शतक १४ : २२३-२९८

शतक १५ : २९९-३८०

परिशिष्ट (गोशालक की चौपई) : ३८१-४४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वादश शतक

ढाल : २४९

दूहा

१. एकादशमां शतक में, विविध अर्थ अवदात।
द्वादशमें पिण तेहिज हिव, कहियै अर्थ सुजात।।

१. व्याख्यातं विविधार्थमेकादशं शतम्, अथ तथाविधमेव द्वादशमारभ्यते। (वृ. प. ५५२)

२. संख जयंती श्राविका, पृथ्वी रत्न प्रमाद।
पुद्गल प्राणातिपात नों, राहु तणो विधिवाद।।
३. लोक नाग सुर वारता, भेद आत्म संपेख।
द्वादशमा जे शतक नां, दश उद्देशा देख।।

२,३ संखे जयंति पुढवि पोग्गल अइवाय राहु लोगे य।
नागे य देव आया, बारसमसए दसुद्देसा।। (श. १२ संगहणी-गाहा)

शंख पोक्खली पद

४. तिण काले नें तिण समय, नगरी सावत्थी नाम।
कोट्ठग नामे चैत्य थो, वर्णक बिहुं नो ताम।।

४. तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नामं नगरी होत्था—वण्णओ। कोट्ठए चेइए—वण्णओ।

५. तिण सावत्थी नें विषे, संख प्रमुख बहु जान।
समणोपासग सुंदरू, वसै अधिक ऋद्धिवान।।

५. तत्थ णं सावत्थीए नगरीए बहवे संखप्पामोक्खा समणोवासया परिवसंति—अड्ढा।

६. यावत अपरिभूत छै, जाण्या जीव अजीव।
तावत मुनि प्रतिलाभता, विचरै सखर सदीव।।

६. जाव बहुजणस्स अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव······विहरंति।

७. वनिता संख तणी सही, नाम उत्पला तास।
कर पग तनु सुखमाल है, जाव सरूप उजास।।

७. तस्स णं संखस्स समणोवासगस्स उप्पला नामं भारिया होत्था—सुकुमालपाणिपाया जाव सुरूवा।

८. ते पिण छै सुध श्राविका, जीवाजीव पिछाण।
जाव पात्र प्रतिलाभती, विचरै ते गुणखाण।।

८. समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा जाव····विहरइ।

९. नगरी सावत्थी नें विषे, वसै पोक्खली नाम।
समणोपासग सुंदरू, अड्ढे ऋद्धिवंत ताम।।

९. तत्थ णं सावत्थीए नगरीए पोक्खली नामं समणोवासए परिवसइ—अड्ढे।

१०. जाण्या जीव अजीव नें, यावत विचरै तेह।
जाव शब्द में जाणवूं, श्रावक वर्णक जेह।।

१०. अभिगयजीवाजीवे जाव······विहरइ। (श. १२।१)

११. तिण काले नें तिण समय, समवसरचा भगवंत।
कवण प्रकार थयो तदा, ते सुणज्यो धर खंत।।

११. तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे।

*प्राणी गुणरसियो।
जेह सुगुण नर नार तेहनें मन वसियो।। (ध्रुपदं)

१२. महावीर जिन आविया रे, गुणिजन!
जावत परिषद जान। प्राणी गुणरसियो।
सेव करै साचै मनें रे, गुणिजन!
त्रिहुं जोगे शुभ ध्यान। प्राणी गुणरसियो।।

१२. परिसा जाव पज्जुवासइ।

१३. ते बहु श्रावक तिण समे रे, सांभल वीर वृतंत।
आलभिया जिम आविया रे, यावत सेव करंत।।

१३. तए णं ते समणोवासगा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा जहा आलभियाए जाव पज्जुवासंति।

१४. वीर प्रभू तिण अवसरे रे, श्रावकां नें सुखकार।
महामोटी परिषद विषे रे, धर्म कथा कही सार।।

१४. तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महतिमहालियाए परिसाए धम्मं परिकहेइ।

१५. 'आण धर्म' ओलखावियो रे, केवली-भाषित तेह।
वाण सुणी नें परषदा रे, जाव गई निज गेह।।

१५ जाव परिसा पडिगया। (श. १२।२)

***लय : पंखी गुणरसियो**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. वाण सुणो महावीर नीं रे, श्रावक सखर सुजान।
हिये धार हरष्या घणां रे, पवर संतोष प्रधान।।
१७. वच-स्तुती जिन वंदनें रे, नमस्कार शिर नाम।
प्रश्न प्रते पूछी करी रे, अर्थ ग्रही अभिराम।।

१८. ऊठी नें ऊभा थई रे, वीर कनां थी ताहि।
कोठग बाग थी नीकली रे, आवै सावत्थी मांहि।।

१९. संख श्रावक तिण अवसरे रे, श्रावकां नें कहै वाय।
तुम्हे अहो देवानुप्रिया! रे बहु चिहुं आ'र निपाय।।

१६. तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा।
१७. समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता पसिणाइं पुच्छंति, पुच्छित्ता अट्ठाइं परियादियंति।
१८. उट्ठाए उट्ठेंति, उट्ठेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव सावत्थी नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए। (श. १२।३)
१९. तए णं से संखे समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी—तुब्भे णं देवाणुप्पिया! विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह।

सोरठा

२०. उदक केम रंधाय, तास न्याय इम संभवै।
अन्न विषे जल आय, तथा उदक उन्हो करै।।

२१. *ते बहु चिहुं असणादि नें रे, आस्वादता विस्वाद।
देता भोगवता विचरसां रे, पक्खी पोसह जाग्रत समाध।।

२१. तए णं अम्हे तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणा विस्साएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो। (श. १२।४)

सोरठा

२२. आस्वादन संवादि, अल्प खाय बहु न्हाखवो।
इक्षु-खंड इत्यादि, तेहनीं पर पहिछाणवो।।
२३. विस्वादन सुविशेष, घणो खायवो छै तसु।
अल्प न्हाखवो शेष, छुहारादिक नीं परै।।
२४. परिभाए पहिछाण, मांहोमां देतां छतां।
परिभुंजमाणा जाण, सहु खाये पिण नहि तजै।।

२२. '**आसाएमाण**' त्ति ईषत्स्वादयंतो बहु च त्यजन्तः इक्षुखण्डादेरिव। (वृ. प. ५५५)
२३. '**विस्साएमाण**' त्ति विशेषेण स्वादयन्तोऽल्पमेव त्यजन्तः खर्जूरादेरिव (वृ. प. ५५५)
२४. '**परिभाएमाण**' त्ति ददतः '**परिभुंजेमाण**' त्ति सर्वमुपभुञ्जाना अल्पमप्यपरित्यजन्तः। (वृ. प. ५५५)

वा०—'**आसाएमाणा इत्यादि**' ए पद नै वर्त्तमान प्रत्ययांतपणे पिण अतीत प्रत्ययांतपणो जाणवो। अनैं वली तेह थकी ते विस्तीर्ण असनादि आस्वादितवंत छता '**पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो त्ति**' पक्ष ते अर्द्धमास नैं विषे थयुं ते पाक्षिक, पोषध ते अव्यापार एतलै सावज्ज व्यापार नां त्याग, ते पोषध प्रते जागता—अनुपालता विचरसां—रहिसां।

जे इहां **अस्साएमाणा** इत्यादिक पूर्व कह्या ते पद नैं विषे अतीत काल प्रत्ययांतपणां नैं विषे **वर्तमान** प्रत्यय ग्रहण करिवो, ते भोजन कीधां पछैहीज अविलंब करिकै पोसह अंगीकार करिवुं ते देखाड़वा नैं **अर्थे** हीज। एवं उत्तर पद नैं विषे पिण गमनिका करवी।

वा.—एतेषां च पदानां वार्तमानिकप्रत्ययान्तत्वेऽप्यतीतप्रत्ययान्तता द्रष्टव्या, ततश्च तद्विपुलमशानाद्यास्वादितवन्तः सन्तः '**पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो**' त्ति पक्षे—अर्द्धमासे भवं पाक्षिकं '**पौषधं**' अव्यापारपौषधं '**प्रतिजाग्रतः**' अनुपालयन्तः '**विहरिष्याम**' स्थास्यामः।

यच्चेहातीतकालीनप्रत्ययान्तत्वेऽपि वार्त्तमानिकप्रत्ययोपादानं तद्भोजनानन्तरमेवाक्षेपेणं पौषधाभ्युपगमप्रदर्शनार्थं, एवमुत्तरत्रापि गमनिका कार्येत्येके। (वृ. प. ५५५)

२५. धर्म तणी जे पुष्ट[1], जीमी पोसह नाम तसु।
दशमो व्रत अदुष्ट, पिण नहि व्रत इग्यारमों।।
२६. *तिण अवसर श्रावक बहु रे, संख श्रावक नीं वाय।
विनय करीनैं सांभलै रे, अंगीकार करै ताय।।

२६. तए णं ते समणोवासगा संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति। (श. १२।५)

***लय : पंखी गुणरसियो**

१. पुष्टि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. तिण समय ते संख श्रावक भणी रे, एहवे रूपे सार।
अज्झत्थिए जाव ऊपनों रे, मन नैं विषे विचार।।
२८. निश्चै मुझ नैं श्रेय नहीं रे, ते विस्तीर्ण चिहुं आ'र।
आस्वादता नैं पक्खी पोसहो रे, पालता विचरवूं धार।।

२९. निश्चै करि मुझ नैं सिरे रे, पोषधसाला मांहि।
पोसह करि सहित नैं रे, ब्रह्मचर्य धारी ताहि।।
३०. मूक्या सुवर्ण मणी भणी रे, पोसह करतां जेह।
अलगा मेल्या छै तसु रे, त्याग्या धर अति नेह।।
३१. पुष्पमाल अलगी करी रे, सचित्त सर्व थी जाण।
वन्नग उगट्टण नां क्रिया रे, पोसा में पचखाण।।
३२. चंदन प्रमुख विलेपन भणी रे, ते पिण पोसह मांय।
करिवा नां पचखाण छै रे, पूर्व थी भंग न थाय।।
३३. 'इमज उगट्टणा प्रते रे, पोसा में पचखाण।
आगै उगट्टणो कियो हुवै रे, तिण सूं पोसा में भंग म जाण।।
३४. इमहिज वलि सुवर्ण नवा रे, पहिरण रा पचखाण।
पहिलां जे पहिरचा हुवै रे, तिण सूं पोसा में भंग म जाण।।' (ज.स.)
३५. वले किया जे वेगला रे, सस्तर मूसल धार।
एकलो पिण बीजो नहीं रे, बेसी दर्भ संथार।।

वा०—एगस्स कहितां एकहीज, बाह्य सहाय अपेक्षा करिकै दूसरो सहाय्य देणं वालो नहीं। अबितियस्स कहितां तथाविध क्रोधादि सहाय अपेक्षा करिकै एकलो हीज, पिण बीजो नहीं। इहां पाठ में एगस्स अबिइयस्स इम कहिवा थकी पोषधशाला नैं विषे एकला नैं हीज पोषध करिवो कल्पे, एहवो निश्चय नहीं करवो। कारण इण पोषध नों चरितानुवादरूपपणो होवा थकी। चरितानुवाद एतलै संख श्रावक चित में चिंतव्यो—एकला नैं हीज आज पोषध करवो। तेह जिम विचार कियो, तिमज सूत्र में बतायो। पर शास्त्रकार नों 'एकला नैं हीज पोषध करवो' एहवो कथन नथी, एणे माटे।

तथा ग्रंथांतरे बहु श्रावकां नो पोषधशाला में एकठा मिलवा नो सुणवा थकी दोष नां अभाव थकी। तथा परस्परस्मारणादि ते चरचा बोल याद करै। आदि शब्द करिकै अशुद्ध काया नुं वर्जवुं, चोलना-प्रतिचोलना नुं करिवुं, विशिष्ट गुण नां संभव थकी।

३६. पक्खी नां पोसा प्रते रे, पालंतो इहवार।
सिरै अछै मुझ विचरवो रे, एहवो करी विचार।।
३७. सावत्थी नगरी छै जिहां रे, जिहां निज गृह निज नार।
नाम उत्पला श्रावका रे, तिहां आव्यो तिण वार।।
३८. उत्पला प्रति पूछी करी रे, आयो पोषधसाल।
वलि पोषधसाला प्रते रे, पूंजी दृष्टि निहाल।।

३९. बड़ी नीत लघु नीत नीं रे, भूमि प्रते प्रतिलेख।
दर्भ संथारो साथरी रे, बैठो आप संपेख।।

२७. तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं. पा.) समुप्पज्जित्था।
२८. नो खलु मे सेयं तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणस्स...पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए।
२९. सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभचारिस्स

३०. ओमुक्कमणिसुवण्णस्स

३१,३२. ववगयमालावण्णगविलेवणस्स

३५. निक्खित्तसत्थमुसलस्स एगस्स अबिइयस्स दब्भ-संथारोवगयस्स

वा०—'**एगस्स अबिइयस्स**' 'त्ति एकस्य' बाह्यसहाया-पेक्षया केवलस्य अद्वितीयस्य तथाविधक्रोधादिसहाया-पेक्षया केवलस्यैव, न चैकस्येति भणनादेकाकिन एव पौषध-शालायां पौषधं कर्त्तुं कल्पत इत्यवधारणीयं, एतस्य चरितानुवादरूपत्वात्।

तथा ग्रन्थान्तरे बहूनां श्रावकाणां पौषधशालायां मिलनश्रवणाद्दोषाभावात्परस्परेण स्मारणादिवि-शिष्टगुणसंभवाच्चेति। (वृ. प. ५५५)

३६. पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ।
३७. जेणेव सावत्थी नगरी जेणेव सए गिहे जेणेव उप्पला समणोवासिया तेणेव उवागच्छइ।
३८. उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पोसहसालं अणुपविस्सइ, अणुपविसित्ता पोसहसालं पमज्जइ पमज्जित्ता।
३९. उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ, पडिलेहेत्ता दब्भ-संथारगं संथरइ, संथरित्ता दब्भसंथारगं दुरुहइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०. पोषधशाला नैं विषे रे, पोसह युक्ति सुबंभ।
जाव पाक्षिक पोसह प्रते रे, पालतो विचरै अदंभ ।।

४१. ते बहु श्रावक तिण समै रे, सावत्थी नगरी मांय।
जिहां निज-निज घर स्थान छै रे, आया तिहां चलाय ।।

४२. विस्तीर्ण चिहुं आहार नें रे, रंधावै रंधाय।
मांहोमांहि तेडायनैं रे, बोलै इहविध वाय ।।

४३. इम निश्चै देवानुप्रिया ! रे, विस्तीर्ण चिउं आहार।
अम्है रंधाया छै इहां रे, पिण संख न आयो इहवार ।।

४४. श्रेय निश्चै देवानुप्रिया ! रे, लीजै संख बोलाय।
पोखली श्रावक तिण समै रे, श्रावकां प्रति कहै वाय ।।

४५. बेसो तुम्है देवानुप्रिया ! लीजे सुख विश्राम।
संख श्रावक प्रति हूं सही रे, तेडी ल्यावं ताम ।।

४६. एम कहीनै नीसरचो रे, सावत्थी बीच में होय।
संख श्रावक नो घर तिहां रे, आवी पेठो सोय ।।

४७. संख त्रिया तिण अवसरे रे, तास उत्पला नाम।
पोखली श्रावक आवतो रे, निरखी हरषी ताम ।।

४८. आसण सूं ऊठी करी रे, सात-आठ पग धार।
पोखली साहमी जायनैं रे, करै वंदन स्तुति नमस्कार ।।

सोरठा

४९. 'वंदै ते गुणग्राम, नमस्कार शिर नाम नैं।
साहमी आवी ताम, विनय रीत निज साचवी ।।

५०. नवकार नां पद पंच, श्रावक नैं तिहां टालियो।
नमस्कार नी संच, ए आज्ञा नहिं जिन तणी ।।' (ज० स०)

५१. *आसन आमंत्रण करी रे, बोलै इहविध वाय।
आज्ञा द्यो देवानुप्रिया ! रे, कवण प्रयोजन आय ?

सोरठा

५२. 'श्रावक साहमी आय, आसन आमंत्र्यो वली।
निज छंदे कहिवाय, पिण नहिं अरिहंत आगन्या ।।

५३. नमस्कार पिण ताहि, गृहस्थ नैं करिवा तणी।
जिन आज्ञा दे नांहि, धर्म नहीं आज्ञा बिना ।।' (ज०स०)

*लय : पंखी गुणरसियो

४०. पोसहसालाए पोसहिए बंभचारी जाव (सं. पा.) पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरइ। (श. १२।६)

४१. तए णं ते समणोवासगा जेणेव सावत्थी नगरी जेणेव साइं साइं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति।

४२. विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावेत्ता अण्णमण्णं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—

४३. एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं से विउले असण-पाण-खाइम-साइमे उवक्खडाविए, संखे य णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ।

४४. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं संखं समणोवासगं सद्दावेत्तए। (श. १२।७)
तए णं से पोक्खली समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी—

४५. अच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सुनिव्वुयवीसत्था, अहण्णं संखं समणोवासगं सद्दावेमि

४६. त्ति कट्टु तेसिं समणोवासगाणं अंतियाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता सावत्थीए नगरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव संखस्स समणोवासगस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता संखस्स समणोवासगस्स गिहं अणुपविट्ठे। (श. १२।८)

४७. तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठा

४८. आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता पोक्खलिं समणोवासगं वंदति, नमंसति।

५१ आसणेणं उवनिमंतेइ, उवनिमंतेत्ता एवं वयासी— संदिसतु णं देवाणुप्पिया ! किमागमणप्पयोयणं ? (श. १२।९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४. *पोखली श्रावक तिण समे रे, कहै उत्पला नैं इम वाय।
किहां अहो देवानुप्रिया ! रे, संख श्रावक सुखदाय ?

५५. तिण अवसर ते उत्पला रे, कहै पोखली प्रति इम वाय।
इम निश्चय देवानुप्रिया ! रे, संख श्रावक सुखदाय ।।

५६. पोषधशाला नैं विषे रे, पोसह कर अंगीकार।
ब्रह्मचर्य प्रति आदरी रे, यावत विचरै सार ।।

५७. तिण अवसर ते पोखली रे, जिहां छै पौषधशाल।
जिहां संख श्रावक अछै रे, तिहां आवै तत्काल ।।

५८. शंख श्रावक पे आयनैं रे, गमणागमण पडिक्कमंत।
इरियावहि पाटी गुणी रे, ए उत्तरगुण साधंत ।।

५९. संख श्रावक प्रति पोखली रे, वच-स्तुति वंदंत।
नमस्कार शिर नाम नै रे, ए निज छंद करंत ।।

६०. वंदी नमण करी कहै रे, इम निश्चै सुविचार।
अहो देवानुप्रिया ! अम्हे रे, रंधाया बहु चिहुं आ'र ।।

६१. ते माटे आवो तुम्है रे, बहु चिहुं आ'र आस्वाद।
जाव पोसह प्रतिपालता रे, विचरां धर अहलाद ।।

६२. संख श्रावक तिण अवसरे रे, कहै पोखली प्रति इम वाय।
निश्चै मुझ कल्पै नहीं रे, अहो देवानुप्रिया ! ताय ।।

६३. ते विस्तीर्ण चिहुं आ'र नैं रे, आस्वादता नैं ताहि।
यावत पोसह पालता रे, विचरवुं कल्पै नांहि ।।

६४. कल्पै छै मुझ नैं सही रे, पोसहशाला मांहि।
पोसह ब्रह्म सहित नैं रे, जाव विचरवो ताहि ।।

६५. पोता नैं छांदै तुम्हें रे, विस्तीर्ण चिहुं आ'र।
आस्वादता यावत सहु रे, विचरो छो इहवार ।।

सोरठा

६६. वृत्ति टबा रै मांहि, छंदेणं नों अर्थ इम।
निज इच्छाइं ताहि, पिण म्हारी आज्ञा नथी ।।

६७. 'जीमै आज्ञा बार, तो जीमावै तेहनैं
किम ह्वै धर्म उदार ? न्याय दृष्टि करि देखियै ।' (ज० स०)

६८. *तिण अवसर ते पोखली रे, संख कना थी ताय।
ते पोषधशाला थकी रे, निकली बाहिर आय ।।

६९. सावत्थी नगरी नैं विषे रे, मध्योमध्य थइ नैं सोय।
जिहां ते बहु श्रावक अछै रे, तिहां आयो अवलोय ।।

---

५४. तए णं से पोक्खली समणोवासए उप्पलं समणोवासियं एवं वयासी—कहिण्णं देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए ? (श० १२।१०)

५५. तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए

५६. पोसहसालाए पोसहिए बंभचारी जाव (सं० पा०) विहरइ। (श० १२।११)

५७. तए णं से पोक्खली समणोवासए जेणेव पोसहसाला जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ।

५८. उवागच्छित्ता गमणागमणाए पडिक्कमइ
'गमणागमणाए पडिक्कमइ' त्ति ईर्यापथिकीं प्रतिक्रामतीत्यर्थः। (वृ० प० ५५५)

५९. संखं समणोवासगं वंदइ नमंसइ।

६०. वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं से विउले असण-पाण-खाइम-साइमे उवक्खडाविए।

६१. तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणा जाव (सं०पा०) पोसहं पडिजागरमाणा विहरामो। (श० १२।१२)

६२. तए णं से संखे समणोवासए पोक्खलिं समणोवासगं एवं वयासी—नो खलु कप्पइ देवाणुप्पिया !

६३. तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणस्स जाव (सं० पा०) पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए।

६४. कप्पइ मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभचारिस्स जाव (सं० पा०) विहरित्तए।

६५. तं छंदेणं देवाणुप्पिया ! तुब्भे तं विउलं असणं पाणं खाइमं खाइमं अस्साएमाणा जाव (सं० पा०) विहरइ। (श० १२।१३)

६६. 'छंदेणं' ति स्वाभिप्रायेण न तु मदीयाज्ञयेति। (वृ० प० ५५५)

६८. तए णं से पोक्खली समणोवासए संखस्स समणोवासगस्स अंतियाओ पोसहसालाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता

६९. सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव ते समणोवासगा तेणेव उवागच्छइ।

*लय : पंखी गुणरसियो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. श्रावकां प्रति इहविध कहै रे, इम निश्चै सुवदीत।
संख पोषधसाला विषे रे, जाव विचरै पोसह सहीत ।।

७१. निज अभिप्राये ते भणी रे, विस्तीर्ण चिहुं आ'र।
जाव विचरो छो आस्वादता रे, तसु आज्ञा न लिगार ।।

७२. संख श्रावक तिण कारणैं रे, शीघ्रपणैं करि ताम।
आपां कन्है आवै नहीं रे, जीमण नैं इण ठाम ।।

७३. ते श्रावक तिण अवसरे रे, विस्तीर्ण चिहुं आ'र।
आस्वादता विस्वादता रे, यावत विचरै तिवार ।।

७४. दोयसौ नैं गुणपचासमीं रे, आखी ढाल उदार।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' हरष अपार।

७०. ते समणोवासए एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए जाव विहरइ।

७१. तं छंदेणं देवाणुप्पिया ! तुब्भे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणा जाव (सं० पा०) विहरह।

७२. संखे णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ।

७३. तए णं ते समणोवासगा तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं अस्साएमाणा जाव विहरंति।
(श० १२।१४)

ढाल : २५०

दूहा

१. संख श्रावक नैं तिण समय, मध्य रात्रि रै मांय।
धर्म जागरणा जागतो जाव उपना ए अध्यवसाय ।।

२. मुझ नैं निश्चै श्रेय छै, काल थये परभात।
यावत जाज्वलमान रवि ऊगंतेज विख्यात ।।

३. भगवंत श्री महावीर नैं, वंदन करि शिर नाम।
तिहां थी पाछो आयनैं, पोसह पारिस ताम ।।

४. एहवी करी विचारणा, काले जाव जलंत।
पोषधशाला थी तदा, नीकलियो गुणवंत ।।

५. निर्मल पहिरण जोग्य जे, पवर वस्त्र मंगलीक।
पहिरी नैं निज घर थकी, नीकलियो तहतीक ।।

६. 'पोसह कीधा प्रथम जे, राख्यो ह्वै आगार।
तेह वस्त्र पहिरचा तिणे, इम दीसै ववहार ।।' (ज० स०)

७. पग अलवाणैं चालतो, नगरी सावत्थी तास।
मध्योमध्य थई करी, जाव करै पर्युपास ।।

८. अभिगमण जे पंच छै, ते इहां कहिवा नांहि।
पोसह छै तिण कारणैं, सचित्त त्याग पहिलां हि ।।

*कटुक वचन मति बोलो,
सुध वयण कपाटज खोलो जी, बोलो तो पहिली तोलो जी।
या राखो मून अमोलो जी, कटुक वचन मति बोलो ।। (ध्रुपदं)

१. तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्तावरत्त-कालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेया-रूवे जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

२. सेयं खलु मे कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते

३. समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जु-वासित्ता तओ पडिनियत्तस्स पक्खियं पोसहं पारित्तए

४. त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते पोसहसालाओ पडिनिक्खमइ।

५. सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिए साओ गिहाओ पडिनिक्खमइ।

७. पायविहारचारेणं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जाव (सं० पा०) पज्जुवासति। (श० १२।१५)

८. 'अभिगमो णत्थि' त्ति पंचप्रकारः पूर्वोक्तोऽभिगमो नास्त्यस्य सचित्तादिद्रव्याणां विमोचनीयानाम-भावादिति। (वृ० प० ५५५)

*लय : झूठ वचन मति बोलो, थांरी सत्य जबानज खोलो जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. हिवै ते श्रावक तिण वारे, दिनकर ऊगां अवधारे जी।

१०. स्नान बलिकर्म कीधा, यावत तनु शोभ प्रसीधा जी।।

११. निज-निज घर थी नीकलिया, पछै सर्व एकठा मिलिया जी।।

१२. अवशेष वारता लहिवूं. जिम प्रथम कह्यो तिम कहिवूं जी।।
१३. पहिली वंदन नैं आया, तिम बीजी वार सिधाया जी।।
१४. यावत करता जिन सेवा, जिन-वाण सुधारस मेवा जी।।
१५. प्रभु धर्म कथा विस्तारी, महामोटी परषद सारी जी।।

१६. यावत आज्ञा आराधक, कहिवूं इहां लगै सुसाधक जी।।

१७. ते श्रावक तिण वारो, निसुणी जिन-वाण उदारो जी।।

१८. हिये धार हरष अति पाया, संतुष्टपणैं अधिकाया जी।।
१९. ऊठी प्रभुजी नै वंदै, बलि नमस्कार आनंदै जी।।

२०. वंदी जिन नें शिर नामैं, आवै संख पास निज कामैं जी।।

२१. संख प्रति बोलै इम वायो, अहो देवानुप्रिया! ताह्यो जी।।

२२. गत दिन अम्हनैं तुम्ह आख्यो, निश्चै करीनैं इम भाख्योजी।।

२३. तुम्हे देवानुप्रिय! सारो, विस्तीर्ण चिहुं आहारो जी।।
२४. जावत आपे विचरसां, जीमी पोसह करसां जी।।

२५. तिण अवसर तुम्ह ताह्यो, पोषधशाला मांह्यो जी।।
२६. इहविध अम्ह नैं विप्रतारी, बिन जीम्यै पोसह धारी जी।।
२७. ते भलुं करच्यूं! इम केहवै, इह रीत ओलूंभो देवै जी।।
२८. म्हे हीला निन्दा अति पाया, म्हांनै हास्यास्पद बणवाया जी।।
२९. तिण अवसर श्री भगवंतो, महावीर श्रमण तपवंतो जी।।
३०. अहो आर्यो! इम वच आखै, श्रावकां प्रति प्रभु भाखै जी।।

३१. संख श्रावक नैं मत हेलो, मत निंदो खिसो कुवेलो जी।।

३२. गर्हा अवज्ञा नहिं कीजै, मन कलुष भाव मेटीजै जी।।
३३. संख श्रावक अधिक उदारो, निश्चै प्रियधर्मी सारो जी।।
३४. निश्चै दृढधर्मी जाणी, धर्म विषे दृढ गुण खाणी जी।।
३५. सुदक्खु जागरणा जागै, तसु अर्थ सुणीजै आगै जी।।
३६. सु कहितां भलो शोभन छै, दक्खु सम्यक दर्शन छै जी।।
३७. ते सहित जागरणा जाणी, प्रमाद रहित पहिछाणी जी।।

९. तए णं ते समणोवासगा कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव उट्ठियम्मि सूरे।

१०. ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकिय-सरीरा

११. सएहिं सएहिं गिहेहिंतो पडिनिक्खमंति, पडिनिक्ख-मित्ता एगयओ मेलायंति।

१२-१४. सेसं जहा पढमं जाव पज्जुवासंति।
(श० १२।१६ पा० टि० ४)

१५. तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं⋯महति-महालियाए परिसाए धम्मं परिकहेइ।

१६. जाव आणाए आराहए भवइ।
(श० १२।१७)

१७. तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म

१८. हट्ठतुट्ठा

१९. उट्ठाए उट्ठेंति, उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति।

२०. वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छंति।

२१. संखं समणोवासयं एवं वयासी—तुमं णं देवाणुप्पिया!

२२. हिज्जो अम्हे अप्पणा चेव एवं वयासी—
'हिज्जो' त्ति ह्यो—ह्यस्तनदिने (वृ० प० ५५५)

२३,२४. तुम्हे णं देवाणुप्पिया! विउलं असणं⋯⋯ परिभुंजेमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा जाव (सं० पा०) विहरिस्सामो।

२५,२६. तए णं तुमं पोसहसालाए जाव (सं० पा०) विहरिए।

२७. तं सुट्ठु णं तुमं देवाणुप्पिया!

२८. अम्हे हीलसि। (श० १२।१८)

२९,३०. अज्जोति! समणे भगवं महावीरे ते समणो-वासए एवं वयासी—

३१. मा णं अज्जो! तुब्भे संखं समणोवासगं हीलह निंदह खिंसह।

३२. गरहह अवमण्णह।

३३,३४. संखे णं समणोवासए पियधम्मे चेव, दढधम्मे चेव।

३५. सुदक्खुजागरियं जागरिए। (श० १२।१९)

३६,३७. 'सुदक्खुजागरियं जागरिए' त्ति सुट्ठु दरिसणं जस्स सो सुदक्खु तस्स जागरिया प्रमादनिद्राव्यपोहेन जागरणं सुदक्खुजागरिया तां जागरितः कृतवा-नित्यर्थः (वृ० प० ५५५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. 'शुभ जोग रूप जागरणा, तेहनों छै इहां वागरणा जी ।।
३९. जसु अशुभ जोग वरतायो, ते कथन इहां न कहायो जी ।।' [ज.स.]
४०. हे भगवंत ! इम कही वाणी, गोतम गणधर गुणखाणी जी ।।
४१. जिन वंदी नमण करीनें, इम पूछै हरष धरीनें जी ।।
४२. हे भगवंत ! किती जागरणा ? कृपा करी करो वागरणा जी ।।
४३. जिन भाखै तीन प्रकारो, जागरणा कहि सारो जी ।।
४४. बुद्ध-जागरणा पहली छै, केवल अवबोध करी छै जी ।।

४५. जागरणा अबुद्ध कहायो, तसुं केवलज्ञान न पायो जी ।।

४६. सुदक्खु-जागरणा जाणी, ए श्रावक नीं पहिछाणी जी ।।
४७. किण अर्थे प्रभु ! इम आखी, जागरणा तीनज दाखी जी ?

४८. भाखै तब श्री जिनरायो, त्रिण जागरणा नों न्यायो जी ।।
४९. जे अरिहंतो भगवंतो, उपनो तसु ज्ञान अनंतो जी ।।
५०. वलि केवलदर्शनधारो, जिम खंधक नें अधिकारो जी ।।
५१. यावत सहु द्रव्य जाणंता, वलि सर्व वस्तु देखंता जी ।।
५२. केवलज्ञान छै जेहनें, वर बुद्ध कहीजै तेहनें जी ।।
५३. अजाणपणो तसु नांही, तिण करि जाग्या छै त्यांही जी ।।
५४. बुद्ध-जागरिका तसु कहियै, हिव न्याय अबुद्ध नों लहियै जी ।।

५५. जे ज्ञानवंत अणगारा, वर पंच समितधर सारा जी ।।

५६. ते जाव गुप्त ब्रह्मचारी, छद्मस्थ संत सुविचारी जी ।।
५७. ज्यां केवलज्ञान न पायो, तिण कारण अबुद्ध कहायो जी ।।
५८. जे जागरिका प्रति जागै, ते अबुद्ध जागरिका सागै जी ।।
५९. जे समणोपासक साचा, जीवादिक जाण्या जाचा जी ।।
६०. यावत मुनि प्रतिलाभंता, ते विचरै छै मतिवंता जी ।।

६१. सुध सम्यक्त्व करि जागै, सुदक्खु-जागरिका सागैजी ।।
६२. गोतम ! तिण अर्थे ए आखो, जागरिका त्रिविध भाखी जी ।।

६३. हिव संख श्रावक तिणवारो, जिन वंदी करि नमस्कारो ।।

६४. श्रावक नों कोप मिटावा, फल क्रोध प्रश्न सद्भावा जी ।।

६५. प्रभु ! क्रोध तणें वस पीड़ित, स्यूं बंध पकर चिण उपचित जी ?

६६. जिन भाखै संख ! अतीवा, क्रोधे करि पीड़ित जीवा जी ।।
६७. आऊखो वर्जी सोयो, सप्त कर्म प्रकृति अवलोयो जी ।।
६८. ढीलै बंधन जे बंधी, दृढ बंधन करै सुसंधी जी ।।
६९. इम प्रथम शतक अधिकारो, कह्यो असंवृत अणगारो जी ।।
७०. तिण रीत इहां पिण कहियै संसार अनंत दुख लहियै जी ।।

४०,४१. भंतेति ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—
४२. कतिविहा णं भंते ! जागरिया पण्णत्ता ?
४३. गोयमा ! तिविहा जागरिया पण्णत्ता ।
४४. बुद्धजागरिया
बुद्धाः केवलावबोधेन (वृ० प० ५५५)
४५. अबुद्धजागरिया
अबुद्धाः केवलज्ञानाभावेन । (वृ० प० ५५५)
४६. सुदक्खुजागरिया । (श० १२।२०)
४७. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—तिविहा जागरिया पण्णत्ता ।

४९,५०. गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंतो उप्पण्णनाण-दंसणधरा जहा खंदए (भ० २।३८) ।
५१. जाव (सं० पा०) सव्वण्णू सव्वदरिसी ।
५२-५४. एए णं बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति ।
बुद्धाः केवलावबोधेन, ते च बुद्धानां—व्यपोढाज्ञान-निद्राणां जागरिका—प्रबोधो बुद्धजागरिका तां कुर्वन्ति । (वृ० हृ० ५५५)
५५. जे इमे अणगारा भगवंतो रियासमिया भासासमिया ··· ।
५६. जाव (सं० पा०) गुत्तबंभचारी ।
५७. एए णं अबुद्धा ।
५८. अबुद्धजागरियं जागरंति ।
५९. जे इमे समणोवासगा अभिगयजीवाजीवा ।
६०. जाव अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरंति—
६१. एए णं सुदक्खुजागरियं जागरंति ।
६२. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—तिविहा जागरिया पण्णत्ता । (श० १२।२१)
६३. तए णं से संखे समणोवासए समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता ।
६४. अथ भगवन्तं शंखस्तेषां मनाक्परिकुपितश्रमणोपासकानां कोपोपशमनाय क्रोधादिविपाकं पृच्छन्नाह— (वृ० प० ५५६)
६५. कोहवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधइ ? किं पकरेइ ? किं चिणाइ ? किं उवचिणाइ ?
६६,६७. संखा ! कोहवसट्टे णं जीवे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ
६८. सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ ।
६९,७०. एवं जहा पढमसए (भ० १।४५) असंवुडस्स अणगारस्स जाव अणुपरियट्टइ ।
(श० १२।२२ पा० टि० ८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७१. प्रभु ! मान वसै जे पीड़ित, स्यूं बांधै यावत उपचित जी ?

७२. जिन भाखै एवं जाणी, इम माया लोभ पिछाणी जी ।।
७३. जावत भ्रमण करंतो, दुख पामै काल अनंतो जी ।।
७४. ते श्रावक तिणवारो, सुण जिन-वाण उदारो जी ।।

७५. हियै धारी डरिया ताह्यो, वलि त्राठा मन मांह्यो जी ।।
७६. पाया उद्वेगज मंदो, सोखव्यो रस आनंदो जी ।।
७७. संसार भ्रमण भय भारी, तेहथी थया उद्विग्न अपारी जी ।।
७८. भगवंत वीर प्रति वंदी, करि नमस्कार आनंदी जी ।।

७९. जिहां संख तिहां आवंता, वंदै वच-स्तुति करंता जी ।।
८०. वलि नमस्कार शिर नामी, निज छंदे इहविध धामी जी ।।

८१. पहलां जे अविनय कीधो, तेहिज जे अर्थ प्रसीधो जी ।।
८२. साचै मन विनय करीनैं, खमावै वच उचरी नैं जी ।।
८३. बार-बार खमावी चाल्या, आलभिया जिम दिश हाल्या जी ।।
८४. यावत सहु निज घर आया, हिवै गोतम प्रश्न सुहाया जी ।।

८५. हे भगवंत ! इहविध धामी, इम पूछै गोतम स्वामी जी ।।
८६. जिन वंदी करी नमस्कारो, इम बोल्या वचन उदारो जी ।।
८७. प्रभु ! श्रावक संख हुलासै, दीक्षा लेसै तुम्ह पासै जी ?

८८. इम शेष सर्व अधिकारो, ऋषिभद्र-पुत्र जिम सारो जी ।।
८९. यावत दुख अंत करेसै, शिव सुंदर वेग वरेसै जी ।।
९०. सेवं भंते ! बे वारे, इम गोतम शब्द उचारे जी ।।

९१. द्वादशम शतक सुविशेषे, अर्थ आख्यूं प्रथम उद्देशे जी ।।
९२. बे सय ऊपर सुविशालो, ए कही पचासमीं ढालो जी ।।
९३. भिक्षु भारिमाल ऋषिरायो, 'जय-जश' सुख तास पसायो जी ।।

द्वादशशते प्रथमोद्देशकार्थः ।।१२।१।।

७१. माणवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधइ ?······ किं उवचिणाइ ? (श० १२।२३)

७२,७३. एवं चेव, एवं मायवसट्टे वि, एवं लोभवसट्टे वि जाव अणुपरियट्टइ। (श० १२।२२ पा० टि० ९)

७४. तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा

७५. निसम्म भीया तत्था तसिया

७६,७७. संसारभउव्विग्गा

७८. समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

७९,८०. जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता संखं समणोवासगं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

८१ ८२. एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेंति।

८३,८४. तए णं ते समणोवासगा सेसं जहा आलभियाए (भ० ११।१८१) जाव पडिगया। (श० १२।२६ पा० टि० ५)

८५,८६. भंतेति ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—

८७. पभू णं भंते ! संखे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?

८८,८९. सेसं जहा इसिभद्दपुत्तस्स (भ० ११।१८२,१८३) जाव अंतं काहिति। (श० १२।२८)

९०. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ। (श० १२।२९)

ढाल : २५१

दूहा

१. प्रथम उद्देशा नैं विषे, श्रावक प्रश्न विचार ।
द्वितीय श्राविका प्रश्न नो, वीर कियो निरधार ।।

१. अनन्तरोद्देशके श्रमणोपासकविशेषप्रश्नितार्थनिर्णयो महावीरकृतो दर्शितः इह तु श्रमणोपासिका-विशेषप्रश्नितार्थनिर्णयस्तत्कृत एव दर्श्यते। (वृ० प० ५५६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजा उदयन परिवार-पद

*चतुर नर ! सांभलज्यो चित ल्याय ।। [ध्रुपदं]

२. तिण काले नैं तिण समय रे, कोसंबी अभिधान ।
चंद्रायण[1] नामे चैत्य है रे, वर्णक उभय[2] बखान ।।

३. कोसंबी नगरी विषे रे, सखर नृपति शुभ सूत ।
पोतो सहस्रानीक नों रे, सतानीक नो पूत ।।

४. चेडा राजा नो तिको रे, दोहितरो दीपंत ।
मृगावती राणी तणो रे, अंगजात ओपंत ।।

५. शुद्ध जयंती श्राविका रे, तास भतीजो ताम ।
नाम उदायन नृप हुंतो रे, वर्णक अति अभिराम ।।

६. वलि कोसंबी नैं विषे रे, सहस्रानीक नृप सार ।
तेहनां पुत्र तणी बहू रे, सतानीक नीं नार ।।

७. चेडा राजा नीं सुता रे, राय उदायन जान ।
माता तास मनोहरू रे, प्रवर पुन्याईवान ।।

८. नाम जयंती श्रावका रे, तास भोजाई सार ।
मृगावती नामे हुंती रे, राणी अधिक उदार ।।

९. तनु वर्णन तेहनों घणो रे, जाव सुरूप निधान ।
इतला लग कहिवो सहू रे, प्रवर पाठ पहिछान ।।

१०. सखर अछै ते श्राविका रे, जाण्या जीव अजीव ।
यावत मुनि प्रतिलाभती रे, विचरै सुजश अतीव ।।

११. वलि कोसंबी नैं विषे रे, सहस्रानीक गुणगहन ।
ते नृप नीं छै पुत्रिका रे, सतानीक नी बहन ।।

१२. नाम उदायन नृप तणी रे, भूआ भली गुणवान ।
मृगावती राणी तणी रे, कहियै नणद प्रधान ।।

१३. सुकुल विशाले ऊपना रे, वैशालिक महावीर ।
सुणै सुणावै वच तसु रे, एहवा संत सधीर ।।

१४. ते मुनि वलि केहवा अछै रे? देव तास अरिहंत ।
एहवा साधू तेहनैं रे, पूर्व सेज्यातरी तंत ।।

१५. प्रथम स्थानदायक तिका रे, आवै अपूरव संत ।
जयंती पासे तिकै रे, वसती प्रथम जाचंत ।।

१६. प्रथम स्थान दात्रीपणैं रे, प्रसिद्धपणैं सुविशाल ।
जयंती प्रथम सेज्यातरी रे, हुंती अधिक सुखमाल ।।

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसंबी नामं नगरी होत्था—वण्णओ । चंदोतरणे चेइए—वण्णओ ।

३. तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रण्णो पोत्ते सयाणीयस्स रण्णो पुत्ते ।

४. चेडगस्स रण्णो नत्तुए, मिगावतीए देवीए अत्तए
'**नत्तुए**' त्ति नप्ता—दौहित्रः । (वृ० प० ५५८)

५. जयंतीए समणोवासियाए भत्तिज्जए उदयणे नामं राया होत्था—वण्णओ ।

६. तत्थ णं कोसंबीए नयरीए सहस्साणीयस्स रण्णो सुण्हा सयाणीयस्स रण्णो भज्जा ।

७. चेडगस्स रण्णो धूया, उदयणस्स रण्णो माया ।

८. जयंतीए समणोवासियाए भाउज्जा मिगावती नामं देवी होत्था—

९. सुकुमालपाणिपाया जाव सुरूवा ।

१०. समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा जाव अहापरिग्गहिएहि तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।

११. तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रण्णो धूया, सयाणीयस्स रण्णो भगिणी ।

१२. उदयणस्स रण्णो पिउच्छा मिगावतीए देवीए नणंदा ।

१३,१४. वेसालियसावयाणं अरहंताणं पुव्वसेज्जातरी
वैशालिको—भगवान् महावीरस्तस्य वचनं श्रृण्वन्ति श्रावयन्ति वा तद्रसिकत्वादिति वैशालिक-श्रावकास्तेषाम् '**आर्हतानाम्**' अर्हद्देवतानां साधूनामिति गम्यम् । (वृ० प० ५५८)

१५,१६. '**पूर्वशय्यातरा**' प्रथमस्थानदात्री **साधवो** ह्यपूर्वे समायातास्तद्गृह एव प्रथमं वसतिं **याचन्ते** तस्याः स्थानदात्रीत्वेन प्रसिद्धत्वादिति सा **पूर्वशय्यातरा** । (वृ० प० ५५८)
जयंती नामं **समणोवासिया** होत्था—सुकुमालपाणिपाया ।

---

* **लय : राम पूछै सुग्रीव नैं रे**

१. जोड़ में चन्द्रायण चैत्य है । जयाचार्य को प्राप्त आदर्श में यही पाठ रहा होगा। अंगसुत्ताणि भाग २ में 'चंदोतरणे' पाठ है ।

२. नगरी और चैत्य—दोनों का वर्णक यहां ज्ञातव्य है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. जाव सुरूपित तनु तसुं रे, जाण्या जीव अजीव।
यावत मुनि प्रतिलाभती रे, विचरै हर्ष अतीव ।।

१७. जाव सुरूवा अभिगयजीवाजीवा जाव अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणो विहरइ। (श० १२।३०)

१८. दोयसौ नैं एकावनमीं रे, आखी ढाल उदार।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय' सुख हर्ष अपार ।।

ढाल : २५२

दूहा

१. तिण काले नैं तिण समय, भगवंत श्री महावीर।
ग्रामां नगरां विचरता, मेरु तणी पर धीर ।।
२. कोसंबी नां बाग में, समवसरचा जिनराज।
अतिशयधारी ओपता, प्रभुजी भवदधि पाज ।।

१,२. तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे।

राजा उदयन आदि का धर्मश्रवण-पद

*वीर पधारिया जी ।। [ध्रुपदं]

३. वीर पधारिया जी, जाण्यो नगर मझार।
यावत परषद जिन तणी जी, सेव करै सुखकार ।।
४. राय उदायन तिण समैं जी, ए कथा अर्थ लाधे ताय।
हरष संतोष पायो घणो जी, कहै सेवग पुरुष बोलाय ।।

३. जाव परिसा पज्जुवासइ। (श० १२।३१)
४. तए णं से उदयणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—

५. शीघ्र तुम्हे देवानुप्रिया ! जी, नगर कोसंबी मांय।
वलि कोसंबी बाहिरे जी, कचर काढ छिड़काय ।।
६. जिम उववाई[1] में कह्यो जी, कोणक वर्णक तास।
तिमज इहां कहिवो सहू जी, जाव करै पर्युपास ।।

५,६. खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कोसंबि नगरिं सब्भिंतर-बाहिरियं आसित्त-सम्मज्जिओवलित्तं करेत्ता य कारवेत्ता य एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। एवं जहा कूणिओ तहेव सव्वं जाव पज्जुवासइ। (श० १२।३२)

७. जयंती श्रमणोपासिका जी, प्रभू पधारचा जाण।
हरष संतोष पामी घणी जी, भ्यंतर बाह्य पिछाण ।।
८. मृगावती राणी कनैं जी, आय कहै सुविशेष।
इम जिम नवमा शतक में जी, तेतीसम उद्देश ।।
९. देवानंदा नैं कह्यो जी, ऋषभदत्त वर वाय।
यावत अनुगामी हुस्यै जी, एतला लग कहिवाय ।।
१०. तिण अवसर मृगावती जी, जयंती तणां वचन्न।
अंगीकार करै तदा जी, तन मन अधिक प्रसन्न ।।
११. जिम देवानंदा ऋषभदत्त नों जी, वचन कियो अंगीकार।
तिमज वचन जयंती तणां जी, मृगावती अवधार ।।

७. तए णं सा जयंती समणोवासिया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठा।
८,९. जेणेव मिगावती देवी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता मिगावतिं देविं एवं वयासी—एवं जहा नवमसए (भ० ९।१३९) उसभदत्तो जाव भविस्सइ। (श० १२।३३ पा० टि० १५)
१०,११. तए णं सा मिगावती देवी जयंतीए समणोवासियाए जहा देवाणंदा (भ० ९।१४०) जाव पडिसुणेइ। (श० १२।३४)

---

*लय : राम पधारिया जी

१. ओवाइयं सू० ५५-६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. तिण अवसर मृगावती जी, कहै सेवग पुरुष बोलाय ।
शीघ्र तुम्हे देवानुप्रिया ! जी, त्यार करो रथ ताय ।।
१३. लहुकरण शीघ्र गति तसु जी, क्रिया युक्त पिछाण ।
इत्यादिक इहां पाठ छै जी, यावत धार्मिक जाण ।।
१४. धर्म नैं अर्थे ए अछै जी, यान बहिल-बेली सुप्रधान ।
जोतर ले आओ इहां जी, शीघ्रपणैं पहिछान ।।

१२-१४. तए णं सा मिगावती देवी कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! लहुकरणजुत्त-जोइय जाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह । (श० १२।३५)

१५. यावत रथ आणी थापियो जी, सेवग पुरुष तिवार ।
यावत मृगावती भणी जी, आज्ञा सूंपै जिवार ।।

१५. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा मिगावतीए देवीए एवं वुत्ता समाणा धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेंति, उवट्ठवेत्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति । (श० १२।३६)

१६. तिण अवसर मृगावती जी, जयंती साथ जिवार ।
स्नान अनैं बलिकर्म करी जी, यावत तनु श्रृंगार ।।

१६. तए णं सा मिगावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं ण्हाया कयबलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा

१७. कूबडी आदि देई घणी जी, बहु दास्यां संघात ।
अंतेउर थी नीकली जी, नणद भोजाई साथ ।।

१७. बहूहिं खुज्जाहिं जाव चेडियाचक्कवालवरिसधर-थेरकंचुइज्ज-महत्तरगवंदपरिक्खित्ता अंतेउराओ निग्गच्छइ ।

१८. उवठाण शाला बाहिरली जी, छै जिहां धार्मिक यान ।
तिहां आवै आवी करी जी, यावत बैठी आन ।।

१८. जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मिए जाणप्पवरं दुरूढा । (श० १२।३७)

१९. देवी मृगावती तिण अवसरे जी, जयंति श्राविका संघात ।
धार्मिक यान प्रवर प्रते जी, बैठी थकी सुविख्यात ।।

१९. तए णं सा मिगावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा समाणी

२०. निज परिवार सहीत सूं जी, वीर वंदण नैं जाय ।
ऋषभदत्त विप्र नीं परैं जी, आया प्रभु नैं पाय ।।

२०. नियगपरियालसंपरिवुडा जहा उसभदत्तो । (भ० ९।१४५)

२१. यावत धार्मिक रथ थकी जी, प्रवर प्रधान ते जान ।
ते थकी हेठी ऊतरै जी, पवर अधिक पुन्यवान ।।

२१. जाव धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ । (श० १२।३८)

२२. तिण अवसर मृगावती जी, जयंति श्राविका साथ ।
बहु कूबडी आदि दे जी, दास्यां संघाते आत ।।

२२. तए णं सा मिगावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं बहूहिं खुज्जाहिं

२३. देवानंदा नीं परै जी, यावत वंदै ताम ।
नमस्कार शिर नामनैं जी, करै बेहुं जणी गुणग्राम ।।

२३. जहा देवाणंदा (भ० ९।१४६) जाव वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

२४. नृपति उदायन प्रति तदा जी, आगल करिनैं ताम ।
रही थकी महावीर नीं जी, सेव करै अभिराम ।।

२४. उदयणं रायं पुरओ कट्टु ठिया चेव जाव (सं०पा०) पज्जुवासइ । (श० १२।३९)

२५. तब प्रभु उदायन राय नैं जी, मृगावती नैं ताहि ।
वले जयंती श्रावका प्रते जी, मोटी परिषद मांहि ।।

२५. तए ण समणे भगवं महावीरे उदयणस्स रण्णो मिगावतीए देवीए जयंतीए समणोवासियाए तीसे य महतिमहालियाए परिसाए

२६. यावत धर्म कथा कही जी, यावत परषद जान ।
वाण सुणी महावीर नीं जी, पोंहती निज-निज स्थान ।।

२६. जाव धम्मं परिकहेइ जाव परिसा पडिगया ।

२७. राय उदायन पिण गयो जी, मृगावती पिण जाण ।
पोता नैं स्थानक गई जी, वीर तणी सुण वाण ।।

२७. उदयणे पडिगए, मिगावती वि पडिगया । (श० १२।४०)

२८. जयंती श्रमणोपासिका जी, प्रभु पे धर्म सुण निर्दोष ।
हिये धार हरषी घणी जी, वलि पामी संतोष ।।

२८. तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा

२९. श्रमण भगवंत महावीर नैं जी, वच-स्तुति वंदंत ।
नमस्कार शिर नामनैं जी, प्रवर प्रश्न पूछंत ।।

२९. समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता, नमंसित्ता एवं वयासी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. दोयसौ नें बावनमों जी, आखी ढाल उदार।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी जी, 'जय-जश' हरष अपार।।

ढाल : २५३

जयन्ती प्रश्न

दूहा

१. प्रश्न जयंती नां हिवै, सांभलज्यो इक चित्त।
महावीर महिमागरू, उत्तर दियै पवित्त।।

*श्री महावीर तणां वचनामृत, भाग्य भला सो ही पावै।
भाग्य भला सो ही पावे मैं वारी जाऊं, सरस वयण सरधावै हो।
श्री महावीर तणां वच वारू, भाग्य भला सो ही पावै।। [ध्रुपदं]

जीव की गुरुता और लघुता

२. किसै प्रकार अहो भगवंत जी! जीव बहू जग मांही।
भारीपणो शीघ्र किम पामै? तेहथी अति दुख थाई।।

३. श्री जिन भाखै सुणे जयंती! सेवै प्राणातिपातो।
यावत मिथ्यादर्शणसल्य करि, शीघ्र जीव भारी इम थातो।।

४. इम जिम धुर शत नवम उद्देशे, आख्यो जिम अधिकारो।
जाव अठारै पाप निवर्त्यां, शिव सुख पामैं सारो।।

२. कहण्णं भंते! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति?

३. जयंती! पाणाइवाएणं जाव (सं० पा०) मिच्छा-दंसणसल्लेणं एवं खलु जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति।

४. एवं जहा पढमसए (भ० १।३८४-३९२) जाव वीतिवयंति। (श० १२।४१-४८)

जीव की भवसिद्धिता

५. वली जयंती पूछै प्रभु नें, भवसिद्धिकपणुं सोय।
जीव तणैं प्रभु! अछै स्वभावे, कै परिणाम थी जोय?

६. श्री जिन भाखै सुणे जयंती! स्वभाव थी छै एह।
पिण परिणमवा थी नहीं छै, ए भवसिद्धिकपणुं जेह।।

५. भवसिद्धियत्तणं भंते! जीवाणं किं सभावओ? परिणामओ?

६. जयंती! सभावओ, नो परिणामओ। (श० १२।४९)

सोरठा

७. स्वभाव थी अवलोय, पुद्गल नों रूपीपणो।
तिण विध ए पिण जोय, स्वभाव करि भवसिद्धियो।।

८. परिणमन पहिछाण, बालक तरुणपणों लहै।
तरुणां नैं पिण जाण, वृद्धपणुं जे परिणमैं।।

९. *वली जयंती पूछै प्रभु नें, हे भगवंत! सुज्ञानी।
सहु भवसिद्धिक जीव सीभस्यै? जिन कहै हंता जानी।।

१०. जो प्रभु! सहु भवसिद्धिक सीभस्यै, तो इण लोक मभारो।
भवसिद्धिक नो विरहो होस्ये, अभव्य रहिस्यै लारो?

७. 'सभावओ' त्ति स्वभावतः पुद्गलानां मूर्तत्ववत्। (वृ० प० ५५८)

८. 'परिणामओ त्ति' परिणामेन अभूतस्य भवनेन पुरुषस्य तारुण्यवत्। (वृ० प० ५५८)

९. सव्वेवि णं भंते! भवसिद्धिया जीवा सिज्भिस्संति? हंता जयंती! सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्भिस्संति। (श० १२।५०)

१०. जइ णं भंते! सव्वे भवसिद्धिया जीवा सिज्भिस्संति, तम्हा णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ?

---

*लय : पारसदेव तुम्हारा दरसण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. जिन कहै अर्थ समर्थ ए नाहीं, तो किण अर्थ कहायो'?
सहु भवसिद्धिया जीव सीझस्यै, भव विरह नहि थायो?

११. णो इणट्ठे समट्ठे । (श० १२।५१)
से केणं खाइणं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति, नो चेव णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?

वा०—इहां जयंती पूछयो—आगामिक काले सिद्धि थायवूं जेह नैं ते भवसिद्धिका । ते सर्व पिण जीव हे भगवंत ! सीझस्यै ? इति प्रश्न । तेहनों उत्तर—सर्व पिण भवसिद्धिका जीव सीझस्यै, एहनों ए अर्थ छै—समस्त पिण भवसिद्धिया जीव सीझस्यै अन्यथा तेहनों भवसिद्धिकपणो पिण नहीं ।

वा०—'सव्वेवि णं भंते ! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति' त्ति भवा—भाविनी सिद्धिर्येषां ते भवसिद्धिकास्ते सर्वेऽपि भदन्त ! जीवा सेत्स्यन्ति ? इति प्रश्नः, 'हंते' त्यादि तूत्तरम्, अयं चास्यार्थः—समस्ता अपि भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्त्यन्यथा भवसिद्धिकत्वमेव न स्यादिति ।

अथ सर्व पिण भवसिद्धिया सीझस्यै तिवारे लोक में भवसिद्धिया नो अभाव थस्ये ? उत्तर—इम नहि, कारण समय नां दृष्टांत थकी । जिम सर्व पिण अनागतकाल नां समय वर्त्तमानपणो पामस्यै । कह्यो पिण छै—

अथ सर्वभवसिद्धिकानां सेत्स्यमानताऽभ्युपगमे भवसिद्धिकशून्यता लोकस्य स्यात्, नैवं, समयज्ञातात्, तथाहि—सर्व एवानागतकालसमया वर्त्तमानतां लप्स्यन्ते ।

अतीत तेहनैं हिज कहियै जे वर्त्तमानपणां प्रते प्राप्ति थयो । अनैं अनागत तेहनैं हिज कहियै जे वर्त्तमानपणां प्रति प्राप्त थस्यै । ए बात अंगीकार करिवा थकी इम कहियै कि सर्व पिण अनागत काल नां समय वर्त्तमानपणो पामस्यै । परंतु कदा पिण लोक नैं विषे अनागत काल नां समा नो विरह नहि पड़स्यै । तिमज सर्व भवसिद्धिका सीझस्यै, परंतु भवसिद्धिया नो विरह लोक नैं विषे कदा पिण नहीं थस्यै ।

भवति स नामातीतः प्राप्तो यो नाम वर्त्तमानत्वम् ।
एष्यंश्च नाम स भवति यः प्राप्स्यति वर्त्तमानत्वम् ।।
इत्यभ्युपगमात्, न चानागतकालसमयविरहितो लोको भविष्यतीति ।

वलि जयंती नां प्रश्न द्वारे करी ए उपरोक्त समय-दृष्टांत नीं अपेक्षया बीजो दृष्टांत देई एहिज शंका टालवा नैं माटे शास्त्रकार कहै छै—'जइण' मित्यादि इम एकेक आचार्य कहै छै ।

अथैतामेवाशंकां जयन्तीप्रश्नद्वारेणास्मदुक्तसमयज्ञातापेक्षया ज्ञातान्तरेण परिहर्त्तुमाह—'जइ ण' मित्यादि इत्येके व्याख्यान्ति ।

वलि अन्य आचार्य कहै छै—'सर्व भवसिद्धिया सीझस्यै' एहनो ए परमार्थ छै—जे सीझस्यै ते सर्व भवसिद्धिया हीज सीझस्यै, पर अभवसिद्धियो एक पिण नहीं सीझस्यै । अन्यथा भवसिद्धिकपणो पिण तेह में नहि ते माटे ।

अन्ये तु व्याचक्षते—सर्वेऽपि भदन्त ! भवसिद्धिका जीवा सेत्स्यन्ति—ये केचन सेत्स्यन्ति ते सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव नाभवसिद्धिक एकोऽपि, अन्यथा भवसिद्धिकत्वमेव न स्यादित्यभिप्रायः, 'हंते' त्याद्युत्तरम् ।

हिवै जे सीझस्यै ते भवसिद्धिक सीझस्यै, इम मानवा थी पिण कालान्तरे सर्व भवसिद्धिक सीझस्यै तिवारे जगत में भव्य नी शून्यता थशे । ए जयंती नीं आशंका अनैं तेहनों उत्तर कहिता शास्त्रकार कहै छै—जइ णं भंते ! सव्वे भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति तम्हा णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ? णो इणट्ठे समट्ठे । से केणं खाइणं अट्ठेणं भंते ! इत्यादि । हिवै आकाशश्रेणी नो दृष्टांत देई नैं कहै छै—

अथ यदि ये केचन सेत्स्यन्ति सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव नाभवसिद्धिक एकोऽपीत्यभ्युपगम्यते तदा कालेन सर्वभवसिद्धिकानां सिद्धिगमनात् भव्यशून्यता जगतः स्यादिति जयन्त्याशंकां तत्परिहारं च दर्शयितुमाह—'जइ ण' मित्यादि । (वृ० प० ५५८, ५५९)

१२. श्री जिन भाखै सुणै जयंति ! यथानाम दृष्टंत ।
सर्व आकाश तणी हुवै श्रेणी, नहीं आदि नहि अंत ।।

१२. जयंति ! से जहानामए सव्वागाससेढी सिया—अणादीया अणवदग्गा

सोरठा

१३. सर्वाकाश कहेण, बुद्धि करी चतुरस्र जे ।
प्रतरीकृत नी श्रेण, प्रदेश नीं पंक्ती तिका ।।
१४. परित्ता कहितां तेह, एक प्रदेशपणैं करी ।
विष्कंभ अभावे जेह, परिमित तसु परिमाण ए ।।

१३. सर्वाकाशस्य—बुद्धया चतुरस्रप्रतरीकृतस्य श्रेणिः—प्रदेशपंक्तिः सर्वाकाशश्रेणिः । (वृ० प० ५५९)
१४. परित्ता
'परित्त' त्ति एकप्रदेशिकत्वेन विष्कम्भाभावेन परिमिता । (वृ० प० ५५९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. परीवृत पहिछाण, अन्य श्रेणि करिनें तिका।
परिकर थकी सुजाण, स्वरूप ए तिण श्रेणि नुं ।।

१६. *तिका परमाणु मात्र खंड करि, समय-समय करि सोई।
अपहरतां-अपहरतां थी जे, काल अनंतो होई ।।

१७. उत्सर्प्पिणी अनंती करिकै, अवसर्प्पि करि धारो।
अपहरतां ते निश्चै तेहनों, नहिं होवै अपहारो ।।

१८. तिण अर्थे म्है कह्यो जयंति ! सर्व भव्य शिव जास्यै।
लोक विषे जे भव्य जीव नों, विरह कदे नहि थास्यै ।।

सोरठा

१९. सर्व आकाश प्रदेश, दृष्टांते करि सर्व भव्य।
न सीझस्यै सुविशेष, भव्य बहू छै ते भणी ।।

२०. तब शिष्य बोल्यो वाय, ते भव्य नो भविपणो।
किणहि प्रकारे नांय, वलि भव्य तसु किम कह्या ?

२१. जे थइ भव्यपणेह, जीव केयक शिव नां लहे।
इम तो भवि पिण तेह, अभवी ईज कहीजियै ।।

२२. अभव्य शिव न लहाय, तो भव्य में फुन अभव्य में।
कवण विशेष कहाय ? अथवा विशेष छै नथी ।।

२३. जास्यै मोक्ष मझार, ते सगला भव्यसिद्धिया।
पिण न लहै शिव सार, अभव्यसिद्धियो एक पिण ।।

२४. शिव गति जावा योग्य, भव्य नाम तेहनों अछै।
लहिस्ये शिव आरोग्य, ते सहु योग्यज मांहिला ।।

२५. चंदन आदिज वृक्ष, प्रतिमादिक नें जोग्य छै।
एरंड भिंड प्रत्यक्ष, अजोग्य ए संसार में ।।

२६. प्रतिमा न हुवै कोय, सर्व जोग्य जे तरु तणी।
तिम शिव जोग्यज सोय, ते पिण सहु नहिं सीझस्यै ।।

२७. प्रतिमादिक जे होय, ते सहु जोग्य तरू तणी।
निश्चै करि अवलोय, पिण अजोग्य तरु नीं नहीं ।।

२८. इण कारण थी जोय, न लहै शिव ते भव्य नें।
अजोग्यपणो नहिं होय, है शिव जोग्यज भव्य ते ।।

२९. तिम होस्यै शिव सार, सिद्धि गति जोगज मांहिला।
अजोग्य जे अवधार, इक पिण शिव लहिस्यै नहीं ।।

३०. अथवा काल आश्रित्य, सहु भव्य नों व्यवछेद नहीं।
अतीत नें अनागत्य, ए बिहुं अद्धा तुल्य छै ।।

३१. गया काल रै मांहि, भव्य जीव छै तेहनों।
भाग अनंतमो ताहि, एक भाग सिद्ध सीझिया ।।

३२. एताईज पिछाण, काल अनागत सीझस्यै।
इण न्याये करि जाण, गयो अनागत काल सम ।।

*लय : पारसदेव तुम्हारा दरसण

१५. परिवुडा।
'परिवुड' त्ति श्रेण्यन्तरैः परिकरिता, स्वरूपमेतत्तस्याः
(वृ० प० ५५९)

१६,१७. सा णं परमाणुपोग्गलमेत्तेहिं खंडेहिं समए समए अवहीरमाणी अवहीरमाणी अणंताहिं ओसप्पिणी-उस्सप्पिणीहिं अवहीरंति, नो चेव णं अवहिया सिया।

१८. से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ—सव्वेवि णं भव-सिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति, नो चेव णं भवसिद्धि-अविरहिए लोए भविस्सइ। (श० १२।५२)

१९,२०. किह पुण भव्वबहुत्ता सव्वागासपएसदिट्ठंता।
नवि सिज्झिहिति तो भणइ किं नु भव्वत्तणं तेसिं ।।
(वृ० प० ५५९)

२१,२२. जइ होऊ णं भव्वावि केइ सिद्धिं न चेव गच्छन्ति।
एवं तेवि अभव्वा को व विसेसो भवे तेसिं ?
(वृ० प० ५५९)

२५. पडिमाईणं जोगा बहवो गोसीसचंदणदुमाई।
संति अजोगावि इहं अन्ने एरंडभेंडाई ।।
(वृ० प० ५५९)

२६-२८. न य पुण पडिमुप्पायणसंपत्ती होइ सव्वजोगाणं।
जेसिंपि असंपत्ती न य तेसिं अजोग्गया होइ।।
किं पुण जा संपत्ती सा नियमा होइ जोग्गरुक्खाणं।
न य होइ अजोग्गाणं एमेव य भव्वसिज्झणया ।।
(वृ० प० ५५९,५६०)

३०. अहवा पडुच्च कालं न सव्वभव्वाण होइ वोच्छित्ती।
जं तीतणागयाओ अद्धाओ दोवि तुल्लाओ ।।
(वृ० प० ५६०)

३१,३२. तत्थातीतद्धाए सिद्धो एक्को अणंतभागो सिं।
कामं तावइयो च्चिय सिज्झिहिइ अणागयद्धाए ।।
(वृ० प० ५६०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. जे वलि इम भाखंत, गया काल थी आगलो।
अनंतगुणो आखंत, ए छै बात मतांतरे।।
३४. अतीत अनागत काल, ए दोनूंइ तुल्य है।
ते किण रीते न्हाल, मतांतरे नों प्रश्न ए।।
३५. मुहूर्त्तादिक अतिक्रंत, अतीत अद्धा अधिक ह्वै।
हीन अनागत हुंत, तिणसूं सम नहिं इम कहै।।
३६. क्षण-क्षण प्रति-क्षयमान, अद्धा अनागत क्षय नहीं।
अतीत सूं इम जान, अनागत अनंतगुणो कहै।।
३७. ए तो आखी बात, मतांतरे नीं म्हैं इहां।
अतीत अनागत ख्यात, ए बिहुं सम तसु न्याय हिव।।
३८. उभय समपणों साध, काल अनागत अंत नहीं।
अतीत नीं नहिं आद, तिण कारण बिहुं समपणों।।
३९. ए सहु विस्तर हीज, कह्यूं वृत्ति में तिम अख्यूं।
पिण मिलतूं सूत्र थकीज, तेहिज सत्य करि सद्दहिवूं।।

वा०—जे वली इम कहै अतीत अद्धा थकी अनागत अद्धा अनंतगुणो ते मतांतर। तेहनों ए बीज—रहस्य—अतीत अनागत ए बिहुं पिण जो सम हुवै तो तिवारे मुहूर्त्तादिक अतिक्रम्ये छते अतीत काल अधिक हुवै अनै अनागत काल हीन हुवै। इण लेखे समपणो न रह्यो। अनै इम मुहूर्त्तादिक करिकै क्षण-क्षण प्रति क्षय थातो छतो पिण अनागत काल क्षीण न हुवै ते भणी ते अनंतगुणो अनै दोनूं काल नों समपणो ते इम—जिम अनागत काल नों अंत नहीं इम अतीत काल नीं आदि नहीं, इम समपणो हुवै इति। ए विस्तार वृत्तिकार कह्यो तिम लिख्यो छै, पिण सूत्र में तो अतीत अद्धा थकी अनागत अद्धा एक समय अधिक कह्यो छै। जे वर्त्तमान एक समय ते अनागत अद्धा नैं विषे लेखव्यो छै ते माटै।[1]

३३. यत्पुनरिदमुच्यते—अतीताद्धातोऽनागताद्धाऽनन्तगुणेति तन्मतान्तरं। (वृ० प० ५६०)

३४,३५. तस्य चेदं बीजं—यदि द्वे अपि ते समाने स्यातां तदा मुहूर्त्तादावतिक्रान्तेऽतीताद्धा समधिका अनागताद्धा च हीनेति हतं समत्वम्। (वृ० प० ५६०)

३६. एवं च मुहूर्त्तादिभिः प्रतिक्षणं क्षीयमाणाऽप्यनागताद्धा यतो न क्षीयते ततोऽवसितं ततः साऽनन्तगुणेति। (वृ० प० ५६०)

३८. यच्चोभयोः समत्वं तदेवं—यथाऽनागताद्धाया अन्तो नास्ति एवमतीताद्धाया आदिरिति समतेति। (वृ० प० ५६०)

४०. सर्वेपि भव्य जान, सीझीस्यै इम प्रभु कह्यो।
जेम जयंती वान, पूछ्यो तिम उत्तर दियो।।
४१. सूता नहिं सीझंत, सीझै जीवज जागरा।
ए संबंध करि हुंत, प्रश्न सुप्त जागर तणो।।

४१. जीवाश्च न सुप्ताः सिद्ध्यन्ति किं तर्हि जागरा एवेति सुप्तजागरसूत्रम्— (वृ० प० ५६०)

जीव का सोना और जागना

४२. *सुतापणुं भलुं हे प्रभुजी ! निद्रापणुंज थावै।
अथवा जाग्रतपणुं भलुं छै, निद्रा तणै अभावे ?
४३. श्री जिन भाखै सुणै जयंती ! कितरायक जीवां रे।
सूतापणुं भलुं ते सूता, जबर बंध नहिं त्यांरे।।
४४. कितरायक जीवां रे आछूं, जाग्रतपणुं सुजाणी।
किण अर्थे इम प्रभुजी आख्यूं ? तसु उत्तर पहिछाणी।।

४२. सुत्तत्तं भंते ! साहू ? जागरियत्तं साहू ?
'सुत्तत्तं' ति निद्रावशत्वम्। (वृ० प० ५६०)
४३. जयंती ! अत्थेगतियाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू।
४४. अत्थेगतियाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू।
(श० १२।५३)
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—

---

*लय : पारसदेव तुम्हारा दरसण

१. यह वार्तिक ३३-३९ तक की सात गाथाओं का स्पष्टीकरण है। वृत्ति के जिस अंश के आधार पर यह स्पष्टीकरण किया गया है, उसे गाथाओं के सामने उद्धृत कर दिया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. श्री जिन भाखै सुणै जयंती ! जे ए प्रत्यक्ष जीवा ।
श्रुत चारित्र धर्म करि रहितज, तेह अधर्मी अतीवा ।।

४६. अधर्म नैं मारग ते चालै, अधर्म वल्लभ तासो ।
अधर्म प्रते कहै लोकां नैं, एहवूं शीलज जासो ।।

४७. अधर्म आदरवै करि तेहिज, देखै तेह प्रलोकी ।
अधर्म विषे हीज रंजै ते, रति पामै महादोखी ।।

४८. अधर्म विषे प्रमोद सहित छे, तथा अधर्म आचारो ।
अधर्म करी वृत्ति—आजीविक करता विचरै धारो ।।

४९. सूतापणुं इसा जीवां रै, भलुं कह्यु छै ताह्यो ।
सूता थका जीव ए पापी, बहु भारी नहिं थायो ।।

५०. प्राण भूत बहु जीव सत्व नैं, जीव अधर्मी ताह्यो ।
सूता दुख अर्थे नहिं वर्त्तै, सोक हेतु नहिं थायो ।।

५१. यावत परितापन नैं अर्थे, ए बहु वर्त्तै नांही ।
घणां पाप सूं भारी न हुवै, इम तसु भलुं कहाई ।।

५२. वलि ए सूता थका अधर्मी, निज पर बिहुं नैं जोई ।
जे बहु अधर्म तणी योजना जोड़नहार न होई ।।

५३. सूतापणुं अधर्मी नैं इम, भलुं कह्यु छै तासो ।
जाग्रतपणुं भलुं हिव ज्यांरै, तेहनों न्याय प्रकाशो ।।

५४. श्री जिन भाखै सुणै जयंती ! जे ए प्रत्यक्ष जाणी ।
धर्म श्रुत चारित्र नां धारक, करणहार पहिछाणी ।।

५५. यावत धर्म करी आजीविक करता ते विचरंता ।
ज्यांरै जाग्रतपणुं भलुं छै, पाप-पिंड न भरंता ।।

५६. जाग्रत थका जीव ए धर्मी, बहु प्राणी नैं त्यांही ।
यावत घणां सत्व नैं दुख नैं अर्थे वर्त्तै नांही ।।

५७. जावत परिताप नैं अर्थे, वर्त्तै नहीं विचारी ।
तिणसूं जाग्रतपणुं भलुं तसु, धर्मी नैं सुखकारी ।।

५८. वलि जे जाग्रत थकाज धर्मी, निज बेहुं नैं जोई ।
जे बहु धर्म तणीज योजना जोड़नहारा होई ।।

५९. धर्म जागरणा करै ए जीवा, जाग्रत छताज जाणी ।
आतम प्रते जगाड़णहारा, तेह हुवै गुणखाणी ।।

६०. एहवा जे धर्मी जीवा नैं, जाग्रतपणोंज रूड़ो ।
उत्तम पुरुष मुनी मतिवंता, करै कर्म चकचूरो ।।

४५. जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया
'अहम्मिय' त्ति धर्मेण श्रुतचारित्ररूपेण चरन्तीति धार्मिकास्तन्निषेधादधार्मिकाः । (वृ० प० ५६०)

४६. अहम्माणुया अहम्मिट्ठा अहम्मक्खाई

४७. अहम्मपलोइ अहम्मपलज्जणा
'अहम्मपलोइ' त्ति न धर्ममुपादेयतया प्रलोकयन्ति ये तेऽधर्मप्रलोकिनः 'अहम्मपलज्जण' त्ति न धर्मे प्ररज्यन्ते—आसजन्ति ये तेऽधर्मप्ररञ्जनाः । (वृ०प० ५६०)

४८. अहम्मसमुदायारा अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति ।
'अहम्मसमुदाचार' त्ति न धर्मरूपः—चारित्रात्मकः समुदाचारः—समाचारः सप्रमोदो वाऽऽचारो येषां ते तथा। (वृ० प० ५६०)

४९. एएसि णं जीवाणं सुत्तत्तं साहू ।

५०. एए णं जीवा सुत्ता समाणा नो बहूणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं दुक्खणयाए सोयणयाए

५१. जाव (सं.पा.) परियावणयाए वट्टंति ।

५२. एए णं जीवा सुत्ता समाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा नो बहूहिं अहम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति ।

५३. एएसि णं जीवाणं सुत्तत्तं साहू ।

५४. जयंती ! जे इमे जीवा धम्मिया धम्माणुया

५५. जाव (सं.पा.) धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू ।

५६. एए णं जीवा जागरा समाणा बहूणं पाणाणं जाव (सं. पा.) सत्ताणं अदुक्खणयाए

५७. जाव (सं. पा.) अपरियावणयाए वट्टंति ।

५८. एए णं जीवा जागरा समाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा बहूहिं धम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति ।

५९. एए णं जीवा जागरा समाणा धम्मजागरियाए अप्पाणं जागरइत्तारो भवंति ।

६०. एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१. तिण अर्थे करि कह्यो केइक नैं, सूतापणुंज आछूं ।
जाग्रतपणुं भलुं केइक नैं, न्याय अर्थ ए साचूं ।।

सोरठा

६२. भलापणुं आख्यात, सुप्त अनैं जाग्रत तणों ।
दुर्बल प्रमुखज बात, तथैव तेहिज हिव कहै ।।

जीव की बलवत्ता और दुर्बलता

६३. *हे प्रभु ! बलवंतपणुं भलुं छै, कै दुर्बलपणुं उदारू ?
ए बिहुं प्रश्न किया तसु उत्तर, श्री जिन भाखै वारू ।।

६४. केइक नैं बलवंतपणुं वर, केइक नैं वलि ताम ।
दुर्बलपणुं भलुं ए उत्तर, किण अर्थे हे स्वाम ?

६५. श्री जिन भाखै सुणे जयंती ! जीव अधर्मी जेहो ।
यावत अधर्म करी आजीविक करता विचरै तेहो ।।

६६. दुर्बलपणुं भलुं छै तेहनैं, कहियै सूता जेमो ।
बलवंतपणुं भलुं धर्मी नैं, जाग्रत नीं पर एमो ।।

६७. तिण अर्थे म्है कह्यो केइक नैं, बलवंतपणुंज आछो ।
दुर्बलपणुं भलुं केइक नैं, न्याय सहित वच साचो ।।

जीव की दक्षता और आलस्य

६८. वली जयंती पूछै प्रभुजी ! दक्ष—डाहापणुं वारू ।
अथवा उद्यमपणुं दक्ष वर, कै आलस्यपणुं उदारू ?

६९. श्री जिन भाखै केई जीव नैं, दक्षपणुं इज वारू ।
आलस्यपणुं भलुं केइक नैं, प्रभु ! किण अर्थ उदारू ?

७०. जिन कहै जीव अधर्मी जावत, अधर्म करि विचरंता ।
आलस्यपणुं भलुं छै तेहनैं, सूता जेम कहंता ।।

७१. जिम जाग्रत तिम दक्षज भणवा, जाव संयोजनहारा ।
निज पर उभय प्रते जे धर्मे जोड़ै अधिक उदारा ।।

७२. दक्ष थका ए धर्मी जीवा, बहु गणपति नीं ताह्यो ।
वैयावच्च विषे निज आतम जोड़णहारा थायो ।।

७३. इम बहु उपाध्याय नीं व्यावच, स्थविर भणी इम जाणी ।
प्रवर तपस्वी गिलाण नव-शिष्य, तास वेयावच ठाणी ।।

---

*लय : पारसदेव तुम्हारा दरसण

६१. से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ—अत्थेगतियाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू अत्थेगतियाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू । (श० १२।५४)

६२. अनन्तरं सुप्तजाग्रतां साधुत्वं प्ररूपितं, अथ दुर्बलादीनां तथैव तदेव प्ररूपयन् सूत्रद्वयमाह— (वृ० प० ५६०)

६३. बलियत्तं भंते ! साहू ? दुब्बलियत्तं साहू ?

६४. जयंती ! अत्थेगतियाणं जीवाणं बलियत्तं साहू, अत्थेगतियाणं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू । (श० १२।५५)

से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ—

६५. जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति ।

६६. एएसि णं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू । एए णं जीवा एवं जहा सुत्तस्स तहा दुब्बलियवत्तव्वया भाणियव्वा, बलियस्स जहा जागरस्स तहा भाणियव्वं जाव संजोएत्तारो ।

६७. से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ—अत्थेगतियाणं जीवाणं बलियत्तं साहू, अत्थेगतियाणं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू । (श० १२।५६)

६८. दक्खत्तं भंते ! साहू ? आलसियत्तं साहू ?

६९. जयंती ! अत्थेगतियाणं जीवाणं दक्खत्तं साहू, अत्थेगतियाणं जीवाणं आलसियत्तं साहू । (श० १२।५७)

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—

७०. जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, एएसि णं जीवाणं आलसियत्तं साहू । जहा सुत्ता तहा आलसा भाणियव्वा ।

७१. जहा जागरा तहा दक्खा भाणियव्वा जाव संजोएत्तारो ।

७२. एए णं जीवा दक्खा समाणा बहूहिं आयरिय-वेयावच्चेहिं

७३. उवज्झायवेयावच्चेहिं थेरवेयावच्चेहिं तवस्सि-वेयावच्चेहिं गिलाणवेयावच्चेहिं सेहवेयावच्चेहिं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४. कुल गच्छ नां समुदाय तणी वलि, गण कुल नों समुदायो।
संघ गण नां समुदाय तणी जे, करै वेयावच ताह्यो।।

७४. कुलवेयावच्चेहिं गणवेयावच्चेहिं संघवेयावच्चेहिं

७५. साधर्मी ते साधु साधवी, तास वेयावच सोयो।
आतम प्रति जे सम्यक प्रकारे, जोड़णहारा होयो।।

७५. साहम्मियवेयावच्चेहिं अत्ताणं संजोएतारो भवंति।

७६. यां जीवां रै दक्षपणो वर, तिण अर्थे सुविचारू।
दक्षपणो जे भलो केइक नैं, केई आलसू वारू।।

७६. एएसि णं जीवाणं दक्खत्तं साहू। से तेणट्ठेणं जयंती! एवं वुच्चइ—अत्थेगतियाणं जीवाणं दक्खत्तं साहू, अत्थेगतियाणं जीवाणं आलसियत्तं साहू। (श० १२।५८)

सोरठा

७७. दक्षपणो वर जास, इंद्री जीती छै जिणे।
न पड़ै इंद्रिय पास, ते मुनिवर सुखियो हुवै।।

७७,७८. दक्षत्वं च तेषां साधु ये नेन्द्रियवशा भवन्तीतोन्द्रियवशानां यद्भवति तदाह— (वृ० प० ५६०)

इन्द्रियों की वशवर्तिता

७८. इंद्रिय जीती नांहि, ते इंद्री नैं वश पड्यो।
भ्रमण करै भव मांहि, तास प्रश्न पूछै हिवै।।

७९.*हे प्रभु! श्रोत्रेंद्रिय वश पीड्यो, स्यूं बांधै अघ-भारो?
इम जिम क्रोध वशे आख्यो तिम, यावत भ्रमण संसारो।।

७९. सोइंदियवसट्टे णं भंते! जीवे किं बंधइ? (सं. पा.) एवं जहा कोहवसट्टे तहेव जाव अणुपरियट्टइ।
'सोइंदियवसट्टे' त्ति श्रोत्रेन्द्रियवशेन—तत्पारतन्त्र्येण ऋतः—पीडितः श्रोत्रेन्द्रियवशार्त्तः। (वृ०प० ५६०)

८०. इम चक्षु इंद्रिय वश पीड्यो, जाव फासेंदिय एमो।
यावत भ्रमण करै संसारे, कहिवो पाठज तेमो।।

८०. एवं चक्खिदियवसट्टे वि एवं जाव फासिंदियवसट्टे वि जाव अणुपरियट्टइ। (श० १२।५९-६३)

८१. ताम जयंती जिन पे वच सुण, हियै धार हरषाई।
देवानंदा जेम शेष सहु, इम दीक्षा दिल आई।।

८१. तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा सेसं जहा देवाणंदा (भ० ९।१५२-१५५) तहेव पव्वइया।

८२. जाव सर्व दुख थी मूकाणी, सेवं भंते! वारू।
शतक बारमा नों ए आख्यो, द्वितीय उद्देश उदारू।।

८२. जाव सव्वदुक्खप्पहीणा। (श० १२।६४)
सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति। (श० १२।६५)

८३. आखी एह दोय सौ ऊपर, तीन पचासमों ढालो।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे, 'जय-जश' मंगलमालो।।

द्वादशशते द्वितीयोद्देशकार्थः ।।१२।२।।

ढाल : २५४

दूहा

१. द्वितीय उद्देशा में कह्यो, पंचेंद्रिय वश जीव।
पाप कर्म नीं प्रकृति प्रति, बांधै अधिक अतीव।।
२. अष्ट कर्म बंधन थकां, नारक पृथ्वी सरूप।
ते प्रतिपादन हिव कहूं, तृतीय उद्देश तद्रूप।।

१,२. अनन्तरं श्रोत्रादीन्द्रियवशार्त्ता अष्टकर्म्मप्रकृतीर्बध्नन्तीत्युक्तं, तद्बन्धनाच्च नरकपृथिवीष्वप्युत्पद्यन्त इति नरकपृथिवीस्वरूपप्रतिपादनायतृतीयोद्देशकमाह— (वृ० प० ५६१)

*लय : पारसदेव तुम्हारा दरसण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी पद

३ नगर राजगृह जाव इम, बोल्या गोतम स्वाम।
किती प्रभु ! पृथ्वी कही ? जिन कहै सप्त तमाम ।।

४. पहिली नैं दूजी वली, जाव सप्तमी जान।
नाम गोत्र नों प्रश्न हिव, सुणो सुरत दै कान ।।

५. पहिली पृथ्वी नो प्रभु ! नाम गोत्र स्यूं होत ?
जिन कहै घम्मा नाम है, रत्नप्रभा है गोत ।।

६. नाम ऐच्छिक अभिधान है, गोत्र अर्थ अनुसार।
सातूंइ जे नरक नां, नाम गोत्र अवधार ।।

७. इम जिम जीवाभिगम में, प्रथम नरक उद्देश।
यावत अल्पाबहुत लग, कहिवूं सर्व विशेष ।।

८. सेवं भंते ! बार बे, शतक बारमें सोय।
तृतीय उद्देशक नों कह्यो, अर्थ अनूपम जोय ।।

द्वादशशते तृतीयोद्देशकार्थः ।।१२।३।।

९. पृथ्वी तृतीय उद्देश कहि, पुद्गल प्रमुख तेह।
पुद्गल चिंतवतां हिवै, तुर्य उद्देश कहेह ।।

१०. नगर राजग्रह नैं विषे, यावत गोतम स्वाम।
इम बोल्या स्तवना करी, विनय करी शिर नाम ।।

परमाणु पुद्गलों का संघात-भेद पद

*वीर कहै सुण गोयमा ! ।। [ध्रुपदं]

११. दोय परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थका स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! दुप्रदेशियो खंध जोय जी ।।

१२. ते खंध भेदीजतो छतो, दोय विभाग में तास जी।
इक पासे एक परमाणुओ, दूजो परमाणु इक पास जी ।।

१३. तीन परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! त्रिप्रदेशिक खंध जोय जी ।।

१४. ते खंध भेदीजतो थको, दोय विभागज थाय जी।
अथवा तसु तीन विभाग ह्वै, सांभलजो तसु न्याय जी ।।

१५. दोय विभाग करतां थकां, परमाणु हुवै इक पास जी।
एक पासे दोय प्रदेशियो खंध ह्वै अछै तास जी ।।

१६. तीन भागे करता छतां, तीन परमाणुया होय जी।
तीनूंइ परमाणु जूजुआ, न्याय थकी अवलोय जी ।।

३. रायगिहे जाव एवं वयासी—कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?
गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ।

४. तं जहा—पढमा, दोच्चा जाव सत्तमा। (श० १२।६६)

५. पढमा णं भंते ! पुढवी किंगोत्ता पण्णत्ता ?
गोयमा ! घम्मा नामेणं रयणप्पभा गोत्तेणं।

६. तत्र नाम—यादृच्छिकमभिधानं गोत्रं च अन्वर्थिकमिति। (वृ० प० ५६१)

७. एवं जहा जीवाभिगमे (३।४-७५) पढमो नेरइयउद्देसओ सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो जाव अप्पाबहुगं ति। (श० १२।६७)

८. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १२।६८)

९. अनन्तरं पृथिव्य उक्तास्ताश्च पुद्गलात्मिका इति पुद्गलाश्चिन्तयंश्चतुर्थोद्देशकमाह— (वृ० प० ५६१)

१०. रायगिहे जाव एवं—

११. दो भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! दुप्पएसिए खंधे भवइ।

१२. से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ—एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ। (श० १२।६९)

१३. तिण्णि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! तिपएसिए खंधे भवइ।

१४. से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि कज्जइ—

१५. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ।

१६. तिहा कज्जमाणे तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति। (श० १२।७०)

---

*लय : मम करो काया माया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च्यार प्रदेशिया खंध नां ४ भांगा

१७. च्यार परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! चउ प्रदेशिक खंध जोय जी ।।

१८. ते खंध भेदीजतो छतो, बिहुं भागे पिण होय जी ।
तीन विभाग पिण ह्वै तसु, च्यार भागे पिण जोय जी ।।

१९. दोय विभाग करतां थकां, परमाणु ह्वै इक पास जी ।
एकण पास होवै वलि, त्रिप्रदेशिक खंध तास जी ।।

२०. अथवा बेहुं द्विप्रदेशिया, खंध हवै अछै सोय जी ।
दोय विभाग ह्वै तेहनां, भांगा कह्या ए दोय जी ।।

२१. तीन भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ दोय जी ।
इक पासे दोय प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

२२. च्यार भागे करतां थकां, हुवै परमाणुआ च्यार जी ।
च्यार प्रदेशिया खंध नां, ए चिउ भंग अवधार जी ।।

१७. चत्तारि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति,
साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! चउपएसिए खंधे भवइ।

१८. से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि कज्जइ—

१९. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ
तिपएसिए खंधे भवइ।

२०. अहवा दो दुपएसिया खंधा भवंति।

२१. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ
दुपएसिए खंधे भवइ।

२२. चउहा कज्जमाणे चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति।
(श० १२।७१)

च्यार प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।३
२	२।२
३	१।१।२
४	१।१।१।१

पंच प्रदेशिया खंध नां ६ भांगा

२३. पंच परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! पंच प्रदेशिक खंध जोय जी ।।

२४. ते खंध भेदीजतो छतो, दोय भागे पिण होय जी ।
वलि त्रिहुं भाग चिहुं भाग ह्वै, पंच भागे पिण जोय जी ।।

२५. बिहुं भागे करतां थकां, परमाणु हुवै इक पास जी ।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

२६. अथवा वलि एक पासे हुवै, दोय प्रदेशियो खंध जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै छै संबंध जी ।।

२७. तीन भागे करतां थकां, इक पास परमाणुया दोय जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अवलोय जी ।।

२८. अथवा वलि एक पासे हुवै, एक परमाणुओ सोय जी ।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।।

२९. च्यार भागे करतां थकां, तीन परमाणु इक पास जी ।
इक पासे द्विप्रदशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

३०. पांच भागे करतां थकां, पांच परमाणुआ थाय जी ।
पंच प्रदेशिया खंध नां, भांगा छह कहिवाय जी ।।

२३. पंच भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति,
साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! पंचपएसिए खंधे भवइ।

२४. से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि पंचहा
वि कज्जइ—

२५. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ
चउपएसिए खंधे भवइ।

२६. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए
खंधे भवइ।

२७. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ
तिपएसिए खंधे भवइ।

२८. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो दुपएसिया
खंधा भवंति।

२९. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला,
एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ।

३०. पंचहा कज्जमाणे पंच परमाणुपोग्गला भवंति।
(श० १२।७२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंच प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।४
२	२।३
३	१।१।३
४	१।२।२
५	१।१।१।२
६	१।१।१।१।१

छह प्रदेशिया खंध नां १० भांगा

३१. षट परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! षट प्रदेशिक खंध जोय जी ।।

३१. छब्भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! छप्पएसिए खंधे भवइ ।

३२. ते खंध भेदीजतो थको, दोय भागे पिण होय जी ।
त्रिण चिउं पंच षट भाग ह्वै, हिव तसु न्याय अवलोय जी ।।

३२. से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि जाव छव्विहा वि कज्जइ ।

दो भाग स्यूं ३ विकल्प—

३३. दोय भागे करतां थकां, इक परमाणु इक पास जी ।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

३३. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

३४. अथवा जे एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी ।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी ।।

३४. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ ।

३५. अथवा जे तीन प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।
दोय भागे करतां थकां, तीन भांगा इम होय जी ।।

३५. अहवा दो तिपएसिया खंधा भवंति ।

तीन भाग स्यूं ३ विकल्प—

३६. तीन भागे करतां छतां, परमाणु दोय इक पास जी ।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

३६. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ ।

३७. अथवा इक पास परमाणु ह्वै, द्विप्रदेशिक इक पास जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

३७. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

३८. अथवा जे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु तीन जी ।
तीन भागे करतां थकां, ए त्रिहुं भंग सुचीन जी ।।

३८. अहवा तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति ।

च्यार भाग स्यूं २ विकल्प—

३९. च्यार भागे करतां थकां, तीन परमाणु इक पास जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

३९. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

४०. अथवा जे एक पासे तसु, दोय परमाणुआ होय जी ।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।।

४०. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिए खंधा भवंति ।

४१. पंच भागे करतां थकां, परमाणु च्यार इक पास जी ।
इक पासे दोय प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

४१. पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ ।

४२. छए भागे करतां थका, षट परमाणुओ होय जी ।
षट प्रदेशिक खंध नां, ए दश भंग अवलोय जी ।।

४२. छहा कज्जमाणे छ परमाणुपोग्गला भवंति ।

(श० १२।७३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छह प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।५
२	२।४
३	३।३
४	१।१।४
५	१।२।३

६	२।२।२
७	१।१।१।३
८	१।१।२।२
९	१।१।१।१।२
१०	१।१।१।१।१।१

सप्त प्रदेशिया खंध नां १४ भांगा

४३. सप्त परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सप्त प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

४३. सत्त भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! सत्तपएसिए खंधे भवइ।

४४. ते खंध भेदीजतो छतो, दोय भागे पिण होय जी।
त्रिण चिउं पंच षट भाग पिण, सप्त भागे पिण जोय जी ।।

४४. से भिज्जेमाणे दुहा वि जाव सत्तहा वि कज्जइ—

दो भाग स्यूं ३ विकल्प—

४५. बिहुं भागे करतां थकां, परमाणु हुवै इक पास जी।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

४५. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ।

४६. अथवा जे एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी ।।

४६. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

४७. अथवा जे एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध थाय जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै तसु ताय जी ।।

४७. अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

तीन भाग स्यूं ४ विकल्प—

४८. तीन भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ दोय जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी ।।

४८. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

४९. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

४९. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ।

५०. अथवा वलि एक पासे तसु, परमाणु पुद्‌गल होय जी।
एक पासे त्रिप्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।।

५०. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

५१. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध दोय जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

५१. अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

च्यार भाग स्यूं ३ विकल्प—

५२. च्यारे भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ तीन जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै चीन जी ।।

५२. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ।

५३. अथवा इक पास परमाणु बे हुवै, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

५३. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

५४. अथवा वलि एक पासे हुवै, परमाणु पुद्‌गल एक जी।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध त्रिण होय विशेख जी ।।

५४. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांच भाग स्यूं २ विकल्प—

५५. पंच भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ च्यार जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै तिणवार जी ।।

५६. अथवा वलि एक पासे तसु, तीन परमाणुआ होय जी ।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।।

५७. छए भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ पंच जी ।
इक पासे द्विप्रदेशियो खंध हौवै अछै संच जी ।।

५८. साते भागे करतां थकां, सात परमाणुआ होय जी ।
सप्त प्रदेशिया खंध नां, चवद भांगा इम जोय जी ।।

५५. पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

५६. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति ।

५७. छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ ।

५८. सत्तहा कज्जमाणे सत्त परमाणुपोग्गला भवंति ।
(श० १२।७४)

सप्त प्रदेशिया नों स्थापना

१	१।६	८	१।१।१।४
२	२।५	९	१।१।२।३
३	३।४	१०	१।२।२।२
४	१।१।५	११	१।१।१।१।३
५	१।२।४	१२	१।१।१।२।२
६	१।३।३	१३	१।१।१।१।१।२
७	२।२।३	१४	१।१।१।१।१।१।१

अष्ट प्रदेशिया खंध नां २१ भांगा—

५९. अष्ट परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै अष्ट प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

६०. ते खंध भेदीजतो थको, दोय भागे पिण होय जी ।
यावत आठ भागे हुवै, तास लेखो सुण सोय जी ।।

५९. अट्ठ भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! अट्ठपएसिए खंधे भवइ ।

६०. से भिज्जमाणे दुहा वि जाव अट्ठहा वि कज्जइ ।

दो भाग स्यूं ४ विकल्प—

६१. दोय भागे करतां थकां, इक पास परमाणु एक जी ।
इक पासे सात प्रदेशियो खंध होवै सुविशेख जी ।।

६२. अथवा इक पास होवै तसु, द्विप्रदेशिक खंध सोय जी ।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध हुवै तास अवलोय जी ।।

६३. अथवा वलि एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध होय जी ।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

६४. अथवा वलि च्यार प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी ।
दोय भागे हुवै तेहनां, विकल्प च्यार ए जोय जी ।।

६१. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ ।

६२. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ ।

६३. अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

६४. अहवा दो चउप्पएसिया खंधा भवंति ।

तीन भाग स्यूं ५ विकल्प—

६५. तीने भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ दोय जी ।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

६५. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला भवंति, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक खंध इक पास जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।
६७. अथवा इक पास परमाणुओ, त्रिप्रदेशिक खंध इक पास जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।
६८. अथवा वलि एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध दोय जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी।।
६९. अथवा वलि एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी।।

च्यार भाग स्यूं ५ विकल्प—

७०. च्यारे भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ तीन जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै चीन जी।।
७१. अथवा इक पास परमाणु दो, द्विप्रदेशिक खंध इक पास जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।
७२. अथवा वलि एक पासे तसु, दोय परमाणुआ होय जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी।।
७३. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक दो इक पास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।
७४. अथवा वलि दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु च्यार जी।
च्यार भागे हुवै तेहनां, विकल्प पंच विचार जी।।

पांच भाग स्यूं ३ विकल्प—

७५. पंच भागे करतां थकां, एक पास परमाणुआ च्यार जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै तिणवार जी।।
७६. अथवा वलि एक पासे हुवै, तीन परमाणुआ तास जी।
एक पासे द्विप्रदेशियो, त्रिप्रदेशिक खंध इक पास जी।।
७७. अथवा वलि एक पासे हुवै, दोय परमाणुआ चीन जी।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु तीन जी।।

छह भाग स्यूं २ विकल्प—

७८. छए भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ पंच जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै संच जी।।
७९. अथवा वलि एक पासे तसु, च्यार परमाणुआ होय जी।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी।।
८०. साते भागे करतां थकां, छह परमाणु इक पास जी।
इक पासे दोय प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।
८१. आठे भागे करतां थकां, अष्ट परमाणुआ होय जी।
अष्ट प्रदेशिया खंध नां, भंग इकवीस ए जोय जी।।

६६. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

६७. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

६८. अहवा एगयओ दो दुप्पएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

६९. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

७०. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

७१. अहवा एगयओ दोण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

७२. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

७३. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

७४. अहवा चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति।

७५. पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

७६. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

७७. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति।

७८. छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

७९. अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिए खंधा भवंति।

८०. सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ।

८१. अट्ठहा कज्जमाणे अट्ठ परमाणुपोग्गला भवंति।
(श० १२।७५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्ट प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।७
२	२।६
३	३।५
४	४।४
५	१।१।६
६	१।२।५
७	१।३।४
८	२।२।४
९	२।३।३
१०	१।१।१।५
११	१।१।२।४
१२	१।१।३।३
१३	१।२।२।३
१४	२।२।२।२
१५	१।१।१।१।४
१६	१।१।१।२।३
१७	१।१।२।२।२
१८	१।१।१।१।१।३
१९	१।१।१।१।२।२
२०	१।१।१।१।१।१।२
२१	१।१।१।१।१।१।१।१

नव प्रदेशिया खंध नां २८ भांगा

८२. नव परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! नव प्रदेशिक खंध जोय जी ।।

८२. नव भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! नवपएसिए खंधे भवइ ।

८३. ते खंध भेदीजतो छतो, दोय भागे करि होय जी ।
यावत ते नव भाग करि ह्वै तसु न्याय अवलोय जी ।।

८३. से भिज्जमाणे दुहा वि जाव नवहा वि कज्जइ—

दो भाग स्यूं ४ विकल्प—

८४. दोय भागे करतां थकां, परमाणुओ इक पास जी ।
इक पासे अष्ट प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

८४. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ ।

८५. अथवा वलि एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी ।
इक पासे सात प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

८५. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ ।

८६. अथवा वलि एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध हाय जी ।
एक पासे छह प्रदेशियो, खंध होवै तसु सोय जी ।।

८६. अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ ।

८७. अथवा वलि एक पासे तसु, चिउं प्रदेशिक खंध होय जी ।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी ।।

८७. अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

तीन भाग स्यूं ६ विकल्प—

८८. तीन भागे करतां थकां, दोय परमाणु इक पास जी ।
इक पासे सात प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

८८. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ ।

८९. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास जी ।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

८९. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ ।

९०. अथवा इक पास परमाणुओ, त्रिप्रदेशिक इक पास जी ।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

९०. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

९१. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे अवलोय जी ।
च्यार प्रदेशिया खंध ते, दोय होवै अछै सोय जी ।।

९१. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति ।

९२. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध तास जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो, चिउं प्रदेशिक इक पास जी ।।

९२. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

९३. अथवा वलि तीन प्रदेशिया खंध होवै तसु तीन जी ।
तीन भागे हुवै तेहनां, ए षट विकल्प चीन जी ।।

९३. अहवा तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

च्यार भाग स्यूं ६ विकल्प—

९४. च्यारे भागे करता थकां, तीन परमाणु इक पास जी।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।

९४. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ।

९५. अथवा इक पास परमाणु बे हुवै, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।

९५. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

९६. अथवा इक पास परमाणु दो, त्रिप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।

९६. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

९७. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे वलि तास जी।
दोय प्रदेशिया खंध बे, चिउं प्रदेशिक इक पास जी।।

९७. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

९८. अथवा एक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया, बे खंध होवै तास जी।।

९८. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

९९. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध तीन जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै अछै चीन जी।।

९९. अहवा एगयओ तिण्णि दुप्पएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

पांच भाग स्यूं ५ विकल्प—

१००. पांच भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ च्यार जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै छै तिवार जी।।

१००. पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

१०१. अथवा इक पास परमाणुआ तीन होवै छै तास जी।
इक पासे दोय प्रदेशियो, चिउं प्रदेशिक इक पास जी।।

१०१. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

१०२. अथवा इक पास परमाणुआ तीन होवै अछै सोय जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया खंध होवै अछै दोय जी।।

१०२. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

१०३. अथवा इक पास परमाणु दो, एक पासे वलि तास जी।
दोय प्रदेशिया खंध बे, त्रिप्रदेशिक इक पास जी।।

१०३. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

१०४. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे अवधार जी।
द्विप्रदेशिक खंध चिउं हुवै, विकल्प पंच विचार जी।।

१०४. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति।

छह भाग स्यूं ३ विकल्प—

१०५. छए भागे करतां थकां, पंच परमाणु इक पास जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।

१०५. छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

१०६. अथवा इक पास परमाणुआ, च्यार हुवै अछै तास जी।
इक पासे दोय प्रदेशियो, त्रिप्रदेशिक इक पास जी।।

१०६. अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुप्पएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

१०७. अथवा इक पास परमाणुआ, तीन होवै अछै तास जी।
इक पासे दोय प्रदेशिया खंध त्रिण ह्वै ते विमास जी।।

१०७. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति।

सात भाग स्यूं २ विकल्प—

१०८. साते भागे करतां थकां, छह परमाणु एक पास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध हुवै अछै तास जी।।

१०८. सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

१०९. अथवा इक पास परमाणुआ, पंच होवै अवलोय जी।
दोय प्रदेशिया खंध ते, एक पासे हुवै दोय जी।।

१०९. अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति।

आठ भाग स्यूं १ विकल्प—

११०. आठ भागे करतां थकां, सात परमाणु इक पास जी।
इक पासे दोय प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी।।

११०. अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नौ भाग स्यूं १ विकल्प—

१११. नवे भागे करतां थकां, नव परमाणु जगीस जो।
नव प्रदेशिया खंध नां, विकल्प कह्या अठवीस जो॥

१११. नवहा कज्जमाणे नव परमाणुपोग्गला भवंति।
(श० १२।७६)

नव प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।८	१५	१।२।३।३
२	२।७	१६	२।२।२।३
३	३।६	१७	१।१।१।१।५
४	४।५	१८	१।१।१।२।४
५	१।१।७	१९	१।१।१।३।३
६	१।२।६	२०	१।१।२।२।३
७	१।३।५	२१	१।२।२।२।२
८	१।४।४	२२	१।१।१।१।१।४
९	२।३।४	२३	१।१।१।१।२।३
१०	३।३।३	२४	१।१।१।२।२।२
११	१।१।१।६	२५	१।१।१।१।१।१।३
१२	१।१।२।५	२६	१।१।१।१।१।२।२
१३	१।१।३।४	२७	१।१।१।१।१।१।१।२
१४	१।२।२।४	२८	१।१।१।१।१।१।१।१।१

दश प्रदेशिया नां ४० भांगा—

११२. दश परमाणु प्रभु ! एकठा, मिलियां थकां स्यूं होय जी ?
जिन कहै सांभल गोयमा ! दश प्रदेशियो खंध जोय जी॥

११३. ते खंध भेदीजतो थको, दोय भागे पिण होय जी।
यावत ह्वै दश भाग करि, आगल न्याय तसु जोय जी॥

११२. दस भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! दसपएसिए खंधे भवइ।

११३. से भिज्जमाणे दुहा वि जाव दसहा वि कज्जइ—

दो भाग स्यूं ५ विकल्प—

११४. दोय भागे करतां थकां, परमाणुओ इक पास जी।
इक पासे नव प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी॥

११५. अथवा वलि एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी।
इक पासे अष्ट प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी॥

११४. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गलले, एगयओ नवपएसिए खंधे भवइ।

११५. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११६. अथवा वलि एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध होय जी।
एक पासे सप्त प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी॥

११७. अथवा वलि एक पासे तसु, चिउं प्रदेशिक खंध होय जी।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै तसु सोय जी॥

११८. अथवा वलि पंच प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय जी।
दोय भागे हुवै तेहनां, विकल्प पंच ए होय जी॥

११६. अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ।

११७. अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ।

११८. अहवा दो पंचपएसिया खंधा भवंति।

तीन भाग स्यूं ८ विकल्प—

११९. तीने भागे करतां थकां, इक पास परमाणु ह्वै दोय जी।
इक पासे अष्ट प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी॥

१२०. अथवा एक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी॥

१२१. अथवा इक पास परमाणुओ, त्रिप्रदेशिक इक पास जी।
एक पासे सप्त प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी॥

१२२. अथवा इक पास परमाणुओ, चिउं प्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी॥

१२३. अथवा एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिया खंध दोय जी।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध हुवै अछै सोय जी॥

१२४. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध तास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो पंच प्रदेशिक इक पास जी॥

१२५. अथवा वलि एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय जी।
इक पासे च्यार प्रदेशिया खंध होवै अछै दोय जी॥

१२६. अथवा वलि एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध दोय जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै सोय जी॥

११९. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ।

१२०. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ।

१२१. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ।

१२२. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ चउप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

१२३. अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ।

१२४. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

१२५. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति।

१२६. अहवा एगयओ दो तिपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

च्यार भाग स्यूं ८ विकल्प—

१२७. च्यारे भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ तीन जी।
इक पासे सप्त प्रदेशियो खंध ह्वै तास आकीन जी॥

१२८. अथवा इक पास परमाणु दो, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी॥

१२९. अथवा इक पास परमाणुआ, दोय होवै अछै तास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो, पंच प्रदेशिक इक पास जी॥

१३०. अथवा वलि एक पासे तसु, दोय परमाणुआ होय जी।
इक पासे च्यार प्रदेशिया खंध पिण ह्वै तसु दोय जी॥

१३१. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास जी।
इक पासे तीन प्रदेशियो, चिउं प्रदेशिक इम तास जी॥

१३२. अथवा वलि एक पासे तसु, परमाणु-पुद्गल चीन जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया खंध होवै तसु तीन जी॥

१३३. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध तीन जी।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध ह्वै तास आकीन जी॥

१३४. अथवा वलि एक पासे हुवै, द्विप्रदेशिक खंध दोय जी।
इक पासे तीन प्रदेशिया, ते पिण खंध बे होय जी॥

१२७. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ।

१२८. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खधे भवइ।

१२९. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।

१३०. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति।

१३१. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

१३२. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति।

१३३. अहवा एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ।

१३४. अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पांच भाग स्यूं ७ विकल्प—

१३५. पांचे भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ च्यार जी ।
एक पासे छह प्रदेशियो खंध हुवै तास उदार जी ।।

१३५. पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ ।

१३६. अथवा इक पास परमाणुआ, तीन होवै अछै तास जी ।
इक पासे दोय प्रदेशियो, पंच प्रदेशिक इक पास जी ।।

१३६. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

१३७. अथवा इक पास परमाणुआ, तीन होवै अछै तास जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो, चिउं प्रदेशिक इक पास जी ।।

१३७. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

१३८. अथवा इक पास परमाणु दो, एक पासे वलि तास जी ।
दोय प्रदेशिया खंध बे, चिउं प्रदेशिक इक पास जी ।।

१३८. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

१३९. अथवा इक पास परमाणु दो, द्विप्रदेशिक इक पास जी ।
इक पासे तीन प्रदेशिया, बे खंध हुवै छै तास जी ।।

१३९. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति ।

१४०. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे वलि तास जी ।
द्विप्रदेशिक खंध त्रिण, त्रिप्रदेशिक इक पास जी ।।

१४०. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

१४१. अथवा तसु दोय प्रदेशिया खंध हुवै अछै पंच जी ।
पांचे भागे हुवै तेहनां, विकल्प सात ए संच जी ।।

१४१. अहवा पंच दुपएसिया खंधा भवंति ।

छह भाग स्यूं ५ विकल्प—

१४२. भाग षट तास करतां छतां, इक पास परमाणुआ पंच जी ।
इक पासे पंच प्रदेशियो खंध होवै अछै संच जी ।।

१४२. छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ ।

१४३. अथवा इक पास परमाणुआ, च्यार होवै अछै तास जी ।
इक पासे दोय प्रदेशियो, चिउं प्रदेशिक इक पास जी ।।

१४.३ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

१४४. अथवा इक पास परमाणुआ, च्यार होवै अछै सोय जी ।
इक पासे तीन प्रदेशिया खंध होवै अछै दोय जी ।।

१४४. अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति ।

१४५. अथवा इक पास परमाणु त्रिण, एक पासे वलि तास जी ।
दोय प्रदेशिया खंध बे, त्रिप्रदेशिक इक पास जी ।।

१४५. अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

१४६. अथवा इक पास परमाणु बे, द्विप्रदेशिक च्यार इक पास जी ।
छए भागे हुवै तेहनां, विकल्प पंच विमास जी ।।

१४६. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति ।

सात भाग स्यूं ३ विकल्प—

१४७. साते भागे करतां थकां, छह परमाणु इक पास जी ।
इक पासे च्यार प्रदेशियो खंध होवै अछै तास जी ।।

१४७. सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

१४८. अथवा इक पास परमाणुआ, पंच होवै अछै तास जी ।
इक पासे दोय प्रदेशियो, त्रिप्रदेशिक इक पास जी ।।

१४८. अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

१४९. अथवा इक पास परमाणुआ, च्यार हुवै तास आकीन जी ।
एक पासे दोय प्रदेशिया खंध होवै अछै तीन जी ।।

१४९. अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति ।

आठ भाग स्यूं २ विकल्प—

१५०. आठ भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ सात जी ।
इक पासे तीन प्रदेशियो खंध होवै छै विख्यात जी ।।

१५०. अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ ।

१५१. अथवा इक पास परमाणु षट, एक पासे वलि सोय जी ।
दोय प्रदेशिया खंध पिण, तास होवै अछै दोय जी ।।

१५१. अहवा एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नौ भाग स्यूं १ विकल्प—

१५२. अथवा इक पास परमाणुआ, अष्ट हुवै सुविशेखजी।
इक पासे दोय प्रदेशियो खंध होवै तसु एक जी॥

१५३. तास दस भाग करतां थकां, दश परमाणुआ दीस जी।
दश प्रदेशिया खंध नां, विकल्प एह चालीस जी॥

१५२. नवहा कज्जमाणे एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ।

१५३. दसहा कज्जमाणे दस परमाणुपोग्गला भवंति।
(श० १२।७७)

दश प्रदेशिया नीं स्थापना

१	१।९	२१	२।२।३।३
२	२।८	२२	१।१।१।१।६
३	३।७	२३	१।१।१।२।५
४	४।६	२४	१।१।१।३।४
५	५।५	२५	१।१।२।२।४
६	१।१।८	२६	१।१।२।३।३
७	१।२।७	२७	१।२।२।२।३
८	१।३।६	२८	२।२।२।२।२
९	१।४।५	२९	१।१।१।१।१।५
१०	२।२।६	३०	१।१।१।१।२।४
११	२।३।५	३१	१।१।१।१।३।३
१२	२।४।४	३२	१।१।१।२।२।३
१३	३।३।४	३३	१।१।२।२।२।२
१४	१।१।१।७	३४	१।१।१।१।१।१।४
१५	१।१।२।६	३५	१।१।१।१।१।२।३
१६	१।१।३।५	३६	१।१।१।१।२।२।२
१७	१।१।४।४	३७	१।१।१।१।१।१।१।३
१८	१।२।३।४	३८	१।१।१।१।१।१।२।२
१९	१।३।३।३	३९	१।१।१।१।१।१।१।१।२
२०	२।२।२।४	४०	१।१।१।१।१।१।१।१।१।१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५४. बारमा शतक विषे कह्या, चउथ उद्देशे ए भाव जो
चउथो उद्देशो बाकी रह्यो, आगल छै वलि न्याव जो ।।
१५५. दोयसौ नैं चउपनमीं, आखो ए ढाल उदार जो।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' हरष अपार जो ।।

ढाल : २५५

दूहा

१. संख्यात परमाणु एकठा, मिल्यां थकां स्यूं होय ?
जिन कहै संख प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय ।।

१. संखेज्जा णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?
गोयमा ! संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

२. तेह खंध भेदीजतां, बे भागे पिण होय ।
यावत दश भागे करी, तेह हुवै छै सोय ।।

२. से भिज्जमाणे दुहा वि जाव दसहा वि ।

३. वले संख्याते भाग पिण, कीजे तास प्रकार ।
तास भेद हिव जूजुआ, दाखै जिन जगतार ।।

३. संखेज्जहा वि कज्जइ—

संख्यात-प्रदेशिया नां भांगा ४६०

दो भाग स्यूं ११ विकल्प—

*जय जय ज्ञान जिनेंद्र नों ।।[ध्रुपद]

४. बिहुं भागे करतां थकां, परमाणु इक पास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !
५. अथवा एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !
६. अथवा एक पासे तसु, तीन प्रदेशियो खंध हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सुसंध हो, गोतम !
७. अथवा एक पासे तसु, च्यार प्रदेशियो खंध हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै प्रबंध हो, गोतम !
८. अथवा एक पासे तसु, पंच प्रदेशिक होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !
९. अथवा एक पासे तसु, छ प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !
१०. अथवा एक पासे तसु, सप्त प्रदेशिक जास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !
११. अथवा एक पासे तसु, अष्ट प्रदेशिक एम हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै तेम हो, गोतम !
१२. अथवा एक पासे तसु, नव प्रदेशिक खंध न्हाल हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै ते संभाल हो, गोतम !

४. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
५. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
६. एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
७-१३. एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

---

*लय : तारा हो प्रत्यक्ष मोहनी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. अथवा एक पासे तसु, दश प्रदेशिक खंध देख हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै विशेख हो, गोतम !

१४. अथवा संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै तसु दोय हो, गोतम !
दोय भागे करि तेहनां, भंग इग्यारै होय हो, गोतम !

१४. अहवा दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

तीन भाग स्यूं २१ विकल्प—

१५. तीने भागे करतां थकां, एक पास परमाणुआ दोय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !

१५. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

१६. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

१६. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

१७. अथवा इक पास परमाणुओ, त्रिप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

१७. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

१८. इम यावत एक पास हुवै, परमाणु पुद्गल तास हो, गोतम !
इक पासे दश प्रदेशियो, संखेज्ज प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

१८. एवं जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

१९. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे अवलोय हो, गोतम !
संख्यात प्रदेशिया खंध ते, दोय हुवै छै सोय हो, गोतम !

१९. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

२०. अथवा एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

२०. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

२१. अथवा एक पासे तसु, त्रिप्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

२२. अथवा एक पासे तसु, चिउं प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम[1] !

२३. इम यावत एक पासे तसु, दश प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

२३. एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

२४. अथवा संख्यात प्रदेशिया खंध होवै तसु तीन हो, गोतम !
तीने भागे हुवै तेहनां, एक बीस भंग चीन हो, गोतम !

२४. अहवा तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

च्यार भाग स्यूं ३१ विकल्प—

२५. च्यारे भागे करतां थकां, इक पास परमाणुआ तीन हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशियो, इम चिहुं भाग सुचीन हो, गोतम !

२५. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

२६. तथा इक पासे दोय परमाणुआ, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास संख प्रदेशियो, ए विकल्प द्वितीय विमास हो, गोतम !

२६. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

२७. अथवा एक पासे हुवै, बे परमाणु सुविशेष हो, गोतम !
इक पासे तीन प्रदेशियो, इक पास संखेज प्रदेश हो, गोतम !

२७. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

२८. इम यावत एक पासे हुवै, परमाणु बे सुविशेष हो, गोतम !
इक पासे दश प्रदेशियो, इक पास संखेज प्रदेश हो, गोतम !

२८. एवं जाव अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।

२९. अथवा एक पासे हुवै, परमाणु पुद्गल दोय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया, तास खंध बे होय हो, गोतम !

२९. अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

---

१. २१ वीं और २२ वीं गाथाएं जिस पाठ के आधार पर लिखी गई हैं, वह पाठ अंगसुत्ताणि भाग २ में नहीं है । संभवतः जयाचार्य को उपलब्ध आदर्श में दो विकल्पों का पाठ और रहा होगा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै बे तास हो, गोतम !
३१. इम जाव इक पास परमाणुओ, दश प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध हुवै बे तास हो, गोतम !

३२. अथवा एक पासे तसु, परमाणु पुद्गल होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया खंध तीन हुवै सोय हो, गोतम !
३३. अथवा एक पासे हुवै, दोय प्रदेशिक खंध हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया, तीन खंध तसु संध हो, गोतम !
३४. इम यावत एक पासे तथा, दश प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास संख्यात प्रदेशिया, तीन खंध हुवै सोय हो, गोतम !
३५. अथवा संख्यात प्रदेशिया, खंध ह्वै च्यार जगीस हो, गोतम !
च्यारे भागे हुवै तेहनां, भंग कह्या इकतीस हो, गोतम !

पांच भाग स्यूं नौ भाग तक क्रमशः ४१, ५१, ६१, ७१ और ८१ विकल्प—

३६. इम इण अनुक्रमे करी, पंच संयोगिक पेख हो, गोतम !
एक चालीस भांगा तसु, करिवा विधि सुविशेख हो, गोतम !
३७. षट भागे हुवै तेहनां, भंग एकावन सोय हो, गोतम !
सप्त भागे हुवै जेहनां, इकसठ भांगा होय हो, गोतम !
३८. आठे भागे हुवै तसु, एकोत्तर अवधार हो, गोतम !
नव भागे हुवै तेहनां, भंग इक्यासी विचार हो, गोतम !

दस भाग स्यूं ९१ विकल्प—

३९. दश भागे हुवै तेहनां, विकल्प एकाणु थाय हो, गोतम !
ते इह रीत कहीजियै, सांभलज्यो चित ल्याय हो, गोतम !
४०. इक पासे नव परमाणुआ, फुन इक पासे पेख हो, गोतम !
खंध संख्यात प्रदेशियो, ए धुर विकल्प पेख हो, गोतम !
४१. तथा इक पासे अष्ट परमाणु, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पासे संख प्रदेशियो, विकल्प द्वितीय विमास हो, गोतम !
४२. इम इण अनुक्रमे करी, एक-एक अवलोय हो, गोतम !
पूरवो अधिक संचारवो, करवा विचारी सोय हो, गोतम !
४३. जावत अथवा जाणवो, दश प्रदेशिक एक पास हो, गोतम !
एक पासे संख आखिया, खंध कह्या नव तास हो, गोतम !
४४. अथवा दशूं ही लीजियै, संख प्रदेशिक खंध हो, गोतम !
दश भागे करै तेहनां, भांगो एकाणुमो संध हो, गोतम !
४५. दश भागे हुवै तेहनां कह्या, भंग एकाणु एह हो, गोतम !
संख्याते भागे तसु, भांगो एकज लेह हो, गोतम !
४६. संख्यात प्रदेशिक खंध नां, च्यार सौ साठ ए भंग हो, गोतम !
छेहलो भांगो तेहनों, करिवो एम प्रसंग हो, गोतम !
४७. भाग संख्यात करतां थकां, परमाणु संख्याता होय हो, गोतम !
संख्यात प्रदेशिया खंध नों, वर्णन आख्यो सोय हो, गोतम !

३०. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३१. जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३२. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३३. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३४. जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३५. अहवा चत्तारि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

३६-३८. एवं एएणं कमेणं पंचगसंजोगो वि भाणियव्वो जाव नवगसंजोगो।

४०. दसहा कज्जमाणे एगयओ नव परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

४१. अहवा एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

४२. एएणं कमेणं एक्केक्को पूरेयव्वो।

४३. जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ नव-संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

४४. अहवा दससंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

४५. दशधात्वे ९१ संख्यातभेदत्वे त्वेक एव विकल्पः।

४७. संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति। (श० १२।७८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संख्यात प्रदेशिया नीं स्थापना,

द्विधा—	११
त्रिधा—	२१
चतुर्धा—	३१
पंचधा—	४१
षड्ढा—	५१
सप्तधा—	६१
अष्टधा—	७१
नवधा—	८१
दशधा—	९१
संख्यातधा—	१
एवं सर्व—	४६०

संख्यातप्रदेशिकस्य द्विधाभेदे ११, त्रिधाभेदे २१, चतुर्धाभेदे ३१, पंचधाभेदे ४१, षोढात्वे ५१, सप्तधात्वे ६१, अष्टधात्वे ७१, नवधात्वे ८१, दशधात्वे ९१, संख्यातभेदत्वे त्वेक एव विकल्पः।

(वृ० प० ५६६)

असंख्यात प्रदेशिया खंध नां भांगा ५१७—

४८. हे प्रभु ! असंख परमाणुआ, मिलियां थकां स्यूं होय हो ? प्रभुजी !
असंख्यात प्रदेशिक खंध ह्वै, ए जिन उत्तर जोय हो, गोतम !

४९. ते खंध भेदीजतां छतां, बिहुं भागे हुवै सोय हो, गोतम !
यावत दश भागे हुवै संख्यात, असंख्यात जोय हो, गोतम !

४८. असंखेज्जा णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ? गोयमा ! असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

४९. से भिज्जमाणे दुहा वि जाव दसहा वि, संखेज्जहा वि, असंखेज्जहा वि कज्जइ—

दो भाग स्यूं १२ विकल्प—

५०. बिहुं भागे करतां थकां, परमाणु इक पास हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

५१. इम यावत एक पासे तथा, दश प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !

५२. अथवा एक पासे तसु, संख्यात प्रदेशियो खंध हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै संध हो, गोतम !

५३. अथवा असंख प्रदेशिया खंध होवै तसु दोय हो, गोतम !
दोय भागे हुवै तेहनां, द्वादश भांगा होय हो, गोतम !

५०. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५१. जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे भवइ, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५२. अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५३. अहवा दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

तीन भाग स्यूं २३ विकल्प—

५४. तीन भागे करतां थकां, इक पास परमाणु दोय हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !

५५. अथवा इक पास परमाणुआ, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

५६. इम यावत एक पासे तथा, परमाणु पुदगल तास हो, गोतम !
एक पास दश प्रदेशियो, असंख प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

५७. अथवा इक पास परमाणुओ, संख प्रदेशिक पास हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो खंध हुवे छै तास हो, गोतम !

५८. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पासे अवलोय हो, गोतम !
असंख्यात प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

५४. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५५. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५६. जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५७. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ।

५८. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९. अथवा इक पासे दोय प्रदेशियो, फुन इक पासे जोय हो, गोतम !
असंख प्रदेशिक खंध बे, ए तेरमों विकल्प होय हो, गोतम !
६०. इम यावत वा इक पास ही, संख्य प्रदेशिक सोय हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !
६१. अथवा असंख प्रदेशिया खंध हुवै तसु तीन हो, गोतम !
तीने भागे हुवै तेहनां, भंग तेबीस सुचीन हो, गोतम !

५९. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो असंखेज्ज-पएसिया खंधा भवंति ।
६०. एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।
६१. अहवा तिण्णि असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

च्यार भाग स्यूं ३४ विकल्प—

६२. इक पास तीन परमाणुआ, एक पासे अवलोय हो, गोतम !
असंख्यात प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !
६३. भंगा चउक्क संजोगिया, यावत दश संयोग हो, गोतम !
ए जिम संख प्रदेशिक नां कह्या, तिमहिज कहिवो प्रयोग हो, गोतम !
६४. णवरं इतरो विशेष छै, असंखेज पद एक हो, गोतम !
अधिको भणवो छै इहां, चरम भंग हिव देख हो, गोतम !
६५. यावत अथवा जाणियै, असंख प्रदेशिया खंध हो, गोतम !
दश हुवै छै तेहनां, चरम भंग ए सबंध हो, गोतम !
६६. चउतीस चउक्क संजोगिया, पंच संयोगि पैंताल हो, गोतम !
छप्पन छह संयोगिया, भांगा कहिवा भाल हो, गोतम !
६७. सतसठ सप्त संयोगिया, अठंतर अठ संयोग हो, गोतम !
निव्यासी नव संजोगिया, सौ भंग दश संजोग हो, गोतम !

६२. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
६३. एवं चउक्कगसंजोगो जाव दसगसंजोगो । एए जहेव संखेज्जपएसियस्स ।
६४. नवरं—असंखेज्जगं एगं अहिगं भाणियव्वं ।
६५. जाव अहवा दसअसंखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

संख्यात भाग स्यूं १२ विकल्प—

६८. संख्याते भागे करतां थकां, एक पास परमाणु संख्यात हो, गोतम !
एक पासे असंख प्रदेशियो खंध हुवै छै विख्यात हो, गोतम !
६९. अथवा एक पासे तसु, द्विप्रदेशिक तास हो, गोतम !
संख्याता खंध हुवै अछै, असंख प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
७०. इम यावत एक पासे तथा, दश प्रदेशिक तास हो, गोतम !
तेह संख्याता हुवै अछै, असंखप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
७१. अथवा एक पासे तसु, संख प्रदेशिक तास हो, गोतम !
संख्याता खंध हुवै अछै, असंख प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
७२. अथवा असंखप्रदेशिया खंध संख्याता होय हो, गोतम !
संख्यात भागे हुवै तेहनां, द्वादश भंग ए जोय हो, गोतम !

६८. संखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ संखेज्जा परमाणु-पोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
६९. अहवा एगयओ संखेज्जा दुपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
७०. एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा दसपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
७१. अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ ।
७२. अहवा संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

असंख्यात भाग स्यूं १ विकल्प—

७३. असंख्याते भागे करतां थकां, असंख्यात अवलोय हो, गोतम !
परमाणु पुद्गल हुवै, ए इक भंगो जोय हो, गोतम !

७३. असंखेज्जहा कज्जमाणे असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति । (श० १२।७९)

असंख्यात प्रदेशिया नीं स्थापना—

द्विधा—	१२
त्रिधा—	२३
चतुर्धा—	३४
पंचधा—	४५
षड्ढा—	५६
सप्तधा—	६७

असंख्यातप्रदेशिकस्य तु द्विधाभावे १२, त्रिधात्वे २३, चतुर्द्धात्वे ३४, पञ्चधात्वे ४५, षोढात्वे ५६, सप्तधात्वे ६७, अष्टधात्वे ७८, नवधात्वे ८९, दशभेदत्वे १००, संख्यातभेदत्वे द्वादश, असंख्यात-भेदकरणे त्वेक एव । (वृ० प० ५६६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टधा-- ७८
नवधा— ८९
दशधा— १००
संख्यातधा—१२
असंख्यातधा—१

एवं सर्व— ५१७

७४. प्रभ ! अनंत परमाणु एकठा, मिलियां थकां स्यूं संध हो, प्रभुजी !
श्री जिन भाखै गोयमा ! हुवै अनंतप्रदेशिक खंध हो, गोतम !

७४. अणंता णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ? गोयमा ! अणंतपएसिएं खंधे भवइ।

७५. ते खंध भेदीजतां थकां, बे त्रिण भागे जोय हो, गोतम !
जाव दश संख असंख ही, अनंत भागे पिण होय हो, गोतम !

७५. से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि जाव दसहा वि संखेज्जहा वि असंखेज्जहा वि अणंतहा वि कज्जइ—

दो भाग स्यूं १३ विकल्प—

७६. बिहुं भागे करतां थकां, परमाणु एक पास हो, गोतम !
इक पासे अनंत प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

७६. दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

७७. एवं जाव तथा तसु, अनंत प्रदेशिक खंध हो, गोतम !
दोय हुवै छै तेहनां, तेर भंगा इम संध हो, गोतम !

७७. जाव अहवा दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

तीन भाग स्यूं २५ विकल्प—

७८. तीने भागे करतां थकां, एक पास परमाणु दोय हो, गोतम !
इक पास अनंत प्रदेशियो खंध हुवै छै सोय हो, गोतम !

७८. तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

७९. अथवा इक पास परमाणुओ, द्विप्रदेशिक इक पास हो, गोतम !
इक पास अनंत प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

७९. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

८०. यावत एक पासे तथा, परमाणु पुद्गल तास हो, गोतम !
इक पास असंख प्रदेशियो, अनंत प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

८०. जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

८१. अथवा इक पास परमाणुओ, एक पास वलि सोय हो, गोतम !
खंध अनंत प्रदेशिया, ते पिण ह्वै तसु दोय हो, गोतम !

८१. अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

८२. अथवा एक पासे तसु, द्वि प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पासे अनंत प्रदेशिया खंध ह्वै तसु दोय हो, गोतम !

८२. अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

८३. इम यावत एक पासे तसु, दश प्रदेशिक खंध होय हो, गोतम !
इक पासे अनंत प्रदेशिया खंध ह्वै तसु दोय हो, गोतम !

८३. एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

८४. अथवा एक पासे तसु, संखेज प्रदेशिक होय हो, गोतम !
इक पास अनंत प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

८४. अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

८५. अथवा एक पासे तसु, खंध असंख प्रदेशिक होय हो, गोतम !
इक पास अनंत प्रदेशिया खंध हुवै छै दोय हो, गोतम !

८५. अहवा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति।

८६. अथवा अनंत प्रदेशिया खंध हुवै तसु तीन हो, गोतम !
तीन भागे हुवै तेहनां, पंचबीस भंग चीन हो, गोतम !

८६. अहवा तिण्णि अणंतपएसिया खंधा भवंति।

च्यार भाग स्यूं ३७ विकल्प—

८७. च्यारे भागे करतां थकां, त्रिण परमाणु इक पास हो, गोतम !
इक पास अनंत प्रदेशियो खंध हुवै छै तास हो, गोतम !

८७. चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८८. एवं चउक्क संयोगिया, जाव असंख संयोग हो, गोतम !
ए सहु जिमहिज आखिया, असंख प्रदेश नां जोग हो, गोतम !

८९. तिमहिज अनंत प्रदेश नां, विकल्प भणवा ताय हो, गोतम !
कांयक फेर छै इह विषे, आगल ते कहिवाय हो, गोतम !

९०. णवरं विशेष छै एतलो, एक अनंत पद जाण हो, गोतम !
अधिको कहिवो छै इहां, हिव भंग छेहला पिछाण हो, गोतम !

९१. यावत वा इक पास ही, संख्यात प्रदेशिया तास हो, गोतम !
संख्याता खंध हुवै अछै, अनंत प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

९२. अथवा एक पासे हुवै, संख्याता सुविमास हो, गोतम !
खंध असंख प्रदेशिया, अनंत प्रदेशि इक पास हो, गोतम !

९३. अथवा अनंत प्रदेशिया, खंध हुवै संख्यात हो, गोतम !
संख्याते भागे हुवै तेहनां, ए भंग द्वादश थात हो, गोतम !

असंख्यात भाग स्यूं १३ विकल्प—

९४. असंख्याते भागे करतां थकां, एक पासे हुवै तास हो, गोतम !
परमाणु असंख्याता तसु, अनंत प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

९५. अथवा एक पासे तसु, द्वि प्रदेशिक खंध तास हो, गोतम !
असंख्याता हुवै अछै, अनंत प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

९६. यावत एक पास तथा, असंख्याता खंध तास हो, गोतम !
संखेज प्रदेशिया हुवै, अनंत प्रदेशिक इक पास हो, गोतम !

९७. अथवा एक पासे तसु, असंख्याता सुविमास हो, गोतम !
असंख प्रदेशिक खंध ह्वै, अनंत प्रदेशिक इस पास हो, गोतम !

९८. अथवा एक पासे तसु, असंख्याता अवलोय हो, गोतम !
अनंत प्रदेशिक खंध ह्वै, ए भंग तेरमों जोय हो, गोतम !

अनन्त भाग स्यूं १ विकल्प—

९९. अनंत भाग करतां थकां, अनंत परमाणु होय हो, गोतम !
अनंत भेदे हुवै तेहनों, ए इक भंगो जोय हो, गोतम !

१००. अनंत प्रदेशिया खंध नां, बे भागे भंग तेर हो, गोतम !
त्रिण भागे करतां थका, पंचवीस भंग हेर हो, गोतम !

१०१. सैंतीस चउक्क संयोगिया, पंच भेदे गुणचास हो, गोतम !
षट भेदे इकसठ हुवै, सप्त भेदे तीहोत्तर तास हो, गोतम !

१०२. पच्यासी अष्ट भेदे हुवै, नव भेदे सत्ताणू होय हो, गोतम !
दश भेदे एकसौ नव हुवै, करिवा विचारी सोय हो, गोतम !

१०३. संख्याते भेदे बारै हुवै, असंख्याते भेदे तेर हो, गोतम !
अनंत भागे हुवै तेहनों, ए इक भंगो हेर हो, गोतम !

१०४. अनंत प्रदेशिया खंध नां, ए सहु भांगा आख्यात हा, गोतम !
पांचसौ पिचंतर कह्या, विवरा शुद्ध विख्यात हो, गोतम !

अनंत प्रदेशिया नीं स्थापना—

द्विधा—	१३
त्रिधा—	२५
चतुर्धा—	३७

८८. एवं चउक्कसंजोगो जाव असंखेज्जगसंजोगो। एते सव्वे जहेव असंखेज्जमाणं भणिया।

८९. तहेव अणंताण वि भाणियव्वं।

९०. नवरं—एक्कं अणंतगं अब्भहियं भाणितव्वं।

९१. जाव अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९२. अहवा एगयओ संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९३. अहवा संखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति।

९४. असंखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ असंखेज्जा परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९५. अहवा एगयओ असंखेज्जा दुपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९६. जाव अहवा एगयओ असंखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९७. अहवा एगयओ असंखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ।

९८. अहवा असंखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति।

९९. अणंतहा कज्जमाणे अणंता परमाणुपोग्गला भवंति। (श० १२।८०)

१००. अनन्तप्रदेशिकस्य तु द्विधात्वे १३ त्रिधात्वे २५। (वृ० प० ५६६)

१०१. चतुर्द्धात्वे ३७ पञ्चधात्वे ४९ षडविधत्वे ६१ सप्तधात्वे ७३। (वृ० प० ५६६,५६७)

१०२. अष्टधात्वे ८५ नवधात्वे ९७ दशधात्वे १०९ (वृ० प० ५६७)

१०३. संख्याततत्वे १२ असंख्याततत्वे १३ अनंतभेदकरणे त्वेक एव विकल्पः। (वृ० प० ५६७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पं .धा -- ४६
षड्धा— ६१
सप्तधा— ७३
अष्टधा— ८५
नवधा— ९७
दशधा— १०९
संख्यातधा— १२
असंख्यातधा—१३
अनंतधा— १

एवं सर्व—५७५

दश लगे—१२५
संख्याता लगे—४६०
असंख्याता लगे—५१७
अनंता लगे—५७५

एवं सर्व—१६७७ भांगा थया।

१०५. शतक बारमा नों कह्यो, चउथा उद्देशा नों देश हो, गोतम !
चउथ उद्देशो बाकी रह्यो, आगल बात कहेस हो, गोतम !

१०६. दोयसो नैं पचावनमों, आखो ढाल उदार हो, गोतम !
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जय' हरष अपार हो, गोतम !

ढाल : २५६

पुद्गल परावर्तन पद

दूहा

१. पुद्गल नों जे एकठो, मिलवूं पूर्व कहाय।
बे भागादिक करि तसु, कह्यु भेद तिण ताय।।
२. बिहुं आश्री पूछै हिवै, परमाणू नैं स्वाम।
साहन—संघातन मिलन, भेद—वियोजन पाम।।
३. ए बिहुं नो अनुपात जे, योग करीनैं ताय।
सगला पुद्गल द्रव्य छै, तसु संघात कहाय।।
४. परमाणू पुद्गल तणो, संजोगे करि थात।
तास विजोग करी वली, पुद्गल द्रव्य संघात।।

५. अनंत-अनंता ह्वै अछै, पुद्गल-परिवर्त्तन।
पुद्गल द्रव्य संघात जे, परमाणुआ मिलन ?
६. जिन कहै हंता गोयमा ! परमाणुआ विख्यात।
तास संजोग विजोग करि, पुद्गल द्रव्य संघात।।

२-४. एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं साहणणा-भेदाणुवाएणं
'साहणणाभेयाणुवाएणं' ति 'साहणण' त्ति.... ..
संहननं—संघातो भेदश्च—वियोजनं तयोरनु-पातो—योगः संहननभेदानुपातस्तेन सर्वपुद्गलद्रव्यैः सह परमाणूनां संयोगेन वियोगेन चेत्यर्थः।
(वृ० प० ५६८)

५. अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया ?

६. हंता गोयमा ! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणणा भेदाणुवाएणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. अनंत-अनंता ह्वै अछै, पुद्गल-परिवर्त्तन।
अन्य जिने पिण आखिया, तेह जाणवा मन।।
८. परावर्त्त-पुद्गल हिवै, कहियै छै इहवार।
श्रोता ! चित दे सांभलो, जिन वच अधिक उदार।।

७. अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया। (श० १२।८१)

८. अथ पुद्गलपरावर्त्तस्यैव भेदाभिधानायाह—
(वृ० प० ५६८)

सोरठा

९. पुद्गल द्रव्य कर साथ, बहु परमाणू नों मिलन।
तेह प्रते आख्यात, परावर्त्तन-पुद्गल प्रगट।।

९. 'पुग्गलपरियट्ट' त्ति पुद्गलैः पुद्गलद्रव्यैः सह परिवर्त्ताः—परमाणूनां मीलनानि पुद्गलपरिवर्त्ताः।
(वृ० प० ५६८)

*वीर जिनेंद्र कहै सुण गोयमा ! [ध्रुपदं]

१०. पुद्गल-परावर्त्त भगवंत जी ! कांइ आख्यो किते प्रकार ?
जिन कहै सप्त प्रकार परूपियो, ते सांभलज्यो विस्तार।
११. ओदारिक शरीर विषे जीव वर्त्ततां, ओदारिक तनु प्रयोग।
जे द्रव्य ते ओदारिकपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल कह्यो।।

१०. कइविहे णं भंते ! पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?
गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते तं जहा—
११. ओरालियपोग्गलपरियट्टे।
'ओरालियपोग्गलपरियट्टे' त्ति औदारिकशरीरे वर्त्तमानेन जीवेन यदौदारिकशरीरप्रायोग्यद्रव्याणामौदारिकशरीरतया सामस्त्येन ग्रहणमसावौदारिक-पुद्गलपरिवर्त्तः। (वृ० प० ५६८)

१२. वैक्रिय शरीर विषे जीव वर्त्ततां, कांइ वैक्रिय तनु प्रयोग।
जे द्रव्य ते वैक्रिय शरीरपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए पुद्गल-परावर्त्त वैक्रिय कह्यो।।

१२. वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे।

१३. तेजस शरीर विषे जीव वर्त्ततां, कांइ तेजस तनु प्रयोग।
जे द्रव्य तेजस शरीरपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए पुद्गल-परावर्त्त तेजस कह्यो।।

१३. तेयापोग्गलपरियट्टे।

१४. कार्मण शरीर विषे जीव वर्त्ततां, कांइ कार्मण तनु प्रयोग।
जे द्रव्य कार्मण शरीरपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए पुद्गल-परावर्त्त कार्मण कह्यो।।

१४. कम्मापोग्गलपरियट्टे।

१५. मन नैं जे विषे जीव वर्त्ततां थकां, कांइ मन प्रायोग्य पिछाण।
जे द्रव्य छै तेहनैं मनपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए पुद्गल-परावर्त्त मन जिन कह्यो।।

१५. मणपोग्गलपरियट्टे।

१६. वचन नैं विषे जीव वर्त्ततां थकां, कांइ वचन प्रायोग्य विशेख।
जे द्रव्य छै तेहनैं वचनपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै पेख।
ए पुद्गल-परावर्त्त वच जिन कह्यो।।

१६. वइपोग्गलपरियट्टे।

१७. आन अरु पान विषे जीव वर्त्ततां, कांइ आन रु पान प्रायोग।
जे द्रव्य आन रु पानपणैं करी, समस्तपणैं ग्रहै जोग।
ए आन रु पान पुद्गल-परावर्त्त कह्यो।।

१७. आणापाणुपोग्गलपरियट्टे। (श० १२।८२)

हिवै चउवीस दंडक आश्री पुद्गल-परावर्त्त

१८. नारक नैं किते प्रकार कह्यो, प्रभु ! पुद्गल-परावर्त्त पिछान ?
जिन कहै सप्त प्रकार परूपियो, ते सांभलजे सुविधान।
[श्री वीर जिनेंद्र कहै सुण गोयमा !]।।
१९. ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल वलि, कांइ जाव उस्सास निस्वास।
ए सप्तविध परावर्त्त-पुद्गल कह्या, इम जाव विमानिक तास।।

१८. नेरइयाणं भंते ! कतिविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?
गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते।
१९. तं जहा—ओरालियपोग्गलपरियट्टे ······ जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे। एवं जाव वेमाणियाणं।
(श० १२।८३)

*लय : वीर जिनेश्वर सुणज्यो मोरी वीनती

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

२०. नारक प्रमुख विचाल, आदि रहित संसार में।
भमता सप्त प्रकार, परावर्त्तन-पुद्गल कह्यु ।।

२१. *इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! किया गया काल रै मांय।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता ? जिन कहै अनंता थाय ।।

वा०—अतीत काल में अनंता पुद्गल-परावर्त्तन जाणवा । ते अतीत काल नैं अनादिपणां थकी अनैं जीव नैं अनादिपणां थकी । वलि अनेरा-अनेरा पुद्गल ग्रहण सरूपपणां थकी ।

२२. काल आगमिये करिस्ये केतला ? तब भाखै श्री जिनराय।
कोइक नैं परावर्त्त-पुद्गल अछै, कोइक नैं कहियै नांय ।।

सोरठा

२३. कोई एक जे जीव, दूर भव्य शिव दूर तसु।
अथवा अभव्य अतीव, जसु पुद्गल-परावर्त्त छै ।।

२४. कोइक नैं पहिछाण, परावर्त्त-पुद्गल नथी।
नरक थकी जे जाण, नीकल नर भव[1] शिव हुस्ये ।।

२५. भव संख्यात करेह, तथा असंख भवे करी।
शिव गति जास्ये तेह, तेहनैं पिण परावर्त्त नहीं ।।

२६. काल अनंतो होय, परावर्त्त-पुद्गल तणो।
तिण कारण अवलोय, भव अनंत कह्या इहां ।।

२७. *पुद्गल-परावर्त्त जेहनैं अछै, इक बे त्रिण जघन्य निहाल।
उत्कृष्ट संख असंख अनंत ही, करिस्ये आगमिये काल ।।

हिवै असुरकुमार आश्री कहै छै—

२८. इक-इक असुर तणैं भगवंत जी ! किया गया काल रै मांय।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता ! इम नरक जेम कहिवाय ।।

२९. एवं यावत वैमानिक लग सहु, कांइ काल अनागत हुंत।
जेहनैं छै इक बे त्रिण तसु जघन्य थी, उत्कृष्टसंख असंख अनंत ।।

हिवै वैक्रिय शरीर आश्री कहै छै—

३०. इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! थया गया काल रै मांहि।
वैक्रिय परावर्त्त-पुद्गल किता ? जिन कहै अनंता ताहि ।।

३१. इम जिम ओदारिक पुद्गल-परावर्त्त कह्या,
तिम वैक्रिय पिण भणवा तास।
एवं यावत वैमानिक लग सहु, इम जाव उस्सास निस्वास ।।

३२. ए नारक प्रमुख एक वचने कह्या, ओदारिकादि सप्त प्रकार।
पुद्गल विषयपणां थी ह्वै जिको, कांइ दंडक सप्त विचार ।।
चउवीस दंडक में सप्त सप्त हुवै ।।

---

*लय : वीर जिनेश्वर सुणज्यो मोरी वीनती

१. हस्तलिखित प्रति में यहां भव्य शब्द है।

२०. 'नेरइयाणं' ति नारकजीवानामनादौ संसारे संसरतां सप्तविधः पुद्गलपरावर्त्तः प्रज्ञप्तः। (वृ० प० ५६८)

२१. एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवइया ओरालिय-पोग्गलपरियट्टा अतीता ? अणंता।

वा०—'एगमेगस्सेत्यादि, अतीतानन्ता अनादित्वात् अतीतकालस्य जीवस्य चानादित्वात् अपरापरपुद्गल-ग्रहणस्वरूपत्वाच्चेति । (वृ० प० ५६८)

२२. केवइया पुरेक्खडा ?
कस्सइ अत्थि, कस्सइ नत्थि।
'पुरक्खडे' ति पुरस्कृता भविष्यन्तः। (वृ० प० ५६८)

२३. 'कस्सइ अत्थि' त्ति कस्यापि जीवस्य दूरभव्यस्या-भव्यस्य वा ते सन्ति। (वृ० प० ५६८)

२४. कस्यापि न सन्ति उद्धृत्य यो मानुषत्वमासाद्य सिद्धिं यास्यति। (वृ० प० ५६८)

२५. संख्येयैरसंख्येयैर्वा भवैर्यास्यति यः सिद्धिं तस्यापि परिवर्त्तो नास्ति। (वृ० प० ५६८)

२६. अनन्तकालपूर्यत्वात्तस्येति ; (वृ० प० ५६८)

२७. जस्सत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा।
(श० १२।८४)

२८,२९. एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा (सं. पा.) एवं चेव जाव एवं जाव वेमाणियस्स।
(श० १२।८५)

३०. एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवइया वेउव्विय-पोग्गलपरियट्टा अतीता ? अणंता।

३१. एवं जहेव ओरालियपोग्गलपरियट्टा तहेव वेउव्विय-पोग्गलपरियट्टावि भाणियव्वा। एवं जाव वेमाणियस्स। एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा।

३२. एते एगत्तिया सत्त दंडगा भवंति।
(श० १२।८६)
'एगत्तिय' त्ति एकत्विकाः—एकनारकाद्याश्रयाः

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'सत्त' त्ति औदारिकादि-सप्तविधपुद्गलविषयत्वात्सप्तदण्डकाश्चतुर्विंशतिदण्डका भवन्ति ।

(वृ० प० ५६८)

वा० — हिवै चउवीस दंडके बहु वचन आश्री कहै छै । एक वचन बहुवचन दंडक नैं विषे एतलो विशेष — एक वचन कै विषे इक-इक नेरिया प्रमुख नीं पूछा । तेहनों उत्तर प्रभु दीधो । पुद्गल-परावर्त गये काल अनंता कीधा अनैं आगमिये काले कोइ एक जीव करस्यै, कोइ एक जीव न करस्यै, एहवूं कह्यूं । अनै बहुवचने नेरिया प्रमुख नैं पुद्गल-परावर्त्त गये काल अनंता कीधा अनैं आगमिये काले अनंता करस्येज । जीव सामान्य आश्रयण थकी एहवूं भाव कहै छै —

वा० — एकत्वपृथक्त्वदण्डकानां चायं विशेषः — एकत्वदण्डकेषु पुरस्कृतपुद्गलपरावर्ताः कस्यापि न सन्त्यपि, बहुत्वदण्डकेषु तु ते सन्ति, जीवसामान्याश्रयणादिति । (वृ० प० ५६८)

३३. बहु वच नारक नैं भगवंत जी ! थया गया काल रै मांहि ।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता ? जिन कहै अनंता ताहि ।।

३४. काल आगमिये करिस्यै केतला ? जिन कहै अनंता थाय ।
एवं यावत वैमानिक लग सहु, बहु वच नारक समुदाय ।।

३५. एवं वैक्रिय पुद्गल-परावर्त्त छै, इम जाव उस्सास निस्सास ।
पुद्गल-परावर्त्त ए सातमों, कांइ वैमानिक नैं तास ।।
इम पृथक[1] सप्त चउवीस दंडका ।।

३३. नेरइयाणं भंते ! केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?
अणंता ।

३४. केवइया पुरेक्खडा ?
अणंता । एवं जाव वेमाणियाणं ।

३५. एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टावि । एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा वेमाणियाणं । एवं एए पोहत्तिया सत्त चउव्वीसतिदंडगा । (श० १२।८७)

वा० — इम ए बहु वचने औदारिकादि पुद्गल-परावर्त्त सप्त प्रकारे चउवीस दंडक नैं विषे हुवै, ते माटै चउवीस दंडका कह्या ।

३६. इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! कांइ नरकपणैं वर्त्तमान ।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता थया गया काल में जान ?

३७. जिन कहै इक पिण तिहां हुवो नहीं, कांइ नरकपणैं वर्त्तमान ।
ओदारिक पुद्गल ग्रहण करै नहीं, तेहथी इक पिण नहीं जान ।।

३८. काल अनागत करिस्यै केतला ? जिन कहै एक पिण नांय ।
आगल पिण नरकपणैं वर्त्तमान नैं, ओदारिक द्रव्य न ग्रहाय ।।

३९. इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! कांइ असुरपणैं वर्त्तमान ।
औदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता थया गया काल में जान ?

४०. जिन कहै इक पिण तिहां हुओ नहीं, वलि आगल पिण नहिं हुंत ।
यावत इम थणियकुमारपणैं तसु, जिम असुरपणैं तिम मंत ।।

४१. इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! कांइ पृथ्वीपणैं वर्त्तमान ।
औदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता थया गया काल में जान ?

४२. श्री जिन भाखै इक-इक नरक नें, कांइ पृथ्वीपणैं पिछाण ।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल थया, कांइ वार अनंती जाण ।।

४३. काल आगमिये करसी केतला ? जिन कहै कोइक नै थाय ।
कोइक नैं नहीं ह्वै ते पृथ्वीपणैं विण ऊपजियां शिव पाय ।।

४४. पुद्गल-परावर्त्त जेहनैं अछै, तसु जघन्य एक बे तीन ।
उत्कृष्ट संख असंख अनंत है, करिस्यै कर्मां वस दीन ।।

४५. इमहिज यावत मनुष्यपणैं अछै, व्यंतर जोतिषि विचार ।
वैमानिकपणैं ओदारिक केतला ? जिम असुरपणैं तिम धार ।।

३६. एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स नेरइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

३७. नत्थि एक्को वि ।
'नत्थि एक्कोवि' त्ति नारकत्वे वर्तमानस्यौदारिकपुद्गलग्रहणाभावादिति । (वृ० प० ५६८)

३८. केवतिया पुरेक्खडा ?
नत्थि एक्को वि । (श० १२।८८)

३९. एगमेगस्स णं भंते । नेरइयस्स असुरकुमारत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

४०. एवं चेव । एवं जाव थणियकुमारत्ते ।
(श० १२।८९)

४१. एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स पुढविक्काइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

४२. अणंता ।

४३. केवतिया पुरेक्खडा ?
कस्सइ अत्थि, कस्सइ नत्थि ।

४४. जस्सत्थि जहण्णेणं एक्को वा, दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा ।

४५. एवं जाव मणुस्सत्ते वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियत्ते जहा असुरकुमारत्ते । (श० १२।९०)

---

१. प्रत्येक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. इक-इक असुर जीव भगवंत जी ! कांइ नारकपणैं निहाल।
ओदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता ? कांइ गया काल में भाल ।।
४७. इम जिम नरक तणी कही वारता, तिम असुर तणी अवधार।
जाव वैमानिकपणैं विचारवो, इम यावत थणियकुमार ।।

४८. नारक असुर प्रश्न उत्तर कह्यो, तिम पृथ्वी नों पिण ईख ।
एवं यावत वैमानिक देव नों, प्रश्नोत्तर एक सरीख ।।

हिवै चौबीस दण्डके वैक्रिय शरीर नों प्रश्न—

४९. इक-इक नारक नैं भगवंत जी ! कांइ नारकपणैं अतीत।
किया वैक्रिय परावर्त्त-पुद्गल किता ? जिन कहै अनंत संगीत।।

५०. काल आगमिये करिस्यै केतला ? तब भाखै श्री भगवंत।
एगुत्तरिया जाव अनंत वा, इक बे त्रिण जाव अनंत।।

सोरठा

५१. एगुत्तरिया आम, इण वचने करि जाणवूं।
किणहिक नैं छै ताम, कोइक जीव करिस्यै नथी।।
५२. जेहनैं छै तसु जाण, एक दोय त्रिण जघन्य थी।
उत्कृष्टा पहिछाण, संख असंख अनंत वा ।।

५३. *इम यावत थणियकुमारपणैं कह्यो, कांइ इक-इक नारक तेम।
थणियकुमारपणैं वैक्रियपणों, प्रश्नोत्तर नारक जेम ।।
५४. इक-इक नारक ते पृथ्वीपणैं, जिन कहै अतीत न एक।
काल अनागत पिण करिस्यै नहीं, तिहां वैक्रिय अभाव पेख ।।

५५. इम जे दंडक में वैक्रिय तनु अछै, तिहां इक बे आदि अनंत।
वायु तिर्यंच पंचेंद्रिय मनुष्य में, वले व्यंतर आदि कहंत ।।

५६. अथवा जे दंडक में वैक्रिय नथी, कांइ ते दंडक रै मांहि।
पृथ्वीकायपणैं जिम आखियो, कांइ तिण विध कहिवूं ताहि ।।

सोरठा

५७. जिहां वैक्रिय नांहि, तेहिज दंडक नैं विषे।
वैक्रिय पुद्गल ताहि, परावर्त्त नहिं छै तिहां।।

५८. *इमहिज जाव वैमानिक देव नैं, वैमानिकपणैं कहाय।
वैक्रिय तिहां एक बे आदि है, वैक्रिय नहिं तिहां न पाय ।।
५९. तेजस अनैं कार्मण ए बिहुं, पुद्गल-परावर्त्त पिछाण।
काल अतीत अनंत थया अछै, इक-इक नरकादिक जाण ।
६०. आगल करिस्यै ते जेहनैं अछै, तेहनैं एकादि अनंत।
ए सहु नरक प्रमुख पद नैं विषे, पूरवली परे कहंत ।।

* लय : वीर जिनेश्वर सुणज्यो मोरी वीनती

४६. एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स नेरइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा ?
४७. एवं जहा नेरइयस्स वत्तव्वया भणिया, तहा असुरकुमारस्स वि भाणियव्वा जाव वेमाणियत्ते। एवं जाव थणियकुमारस्स।
४८. एवं पुढविकाइयस्स वि। एवं जाव वेमाणियस्स। सव्वेसिं एक्को गमो। (श० १२।९१)

४९. एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स नेरइयत्ते केवतिया वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?
अणंता।
५०. केवतिया पुरेक्खडा ?
एकुत्तरिया जाव अणंता वा।

५१,५२. 'एगुत्तरिया जाव अणंता व' त्ति अनेनेदं सूचितं—'कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि, जस्सत्थि तस्स जहन्नेणं एक्को वा दोन्नि वा तिन्नि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा' इति।
(वृ० प० ५६८,५६९)
५३. एवं जाव थणियकुमारत्ते। (श० १२।९२)

५४. पुढविकाइयत्ते—पुच्छा।
नत्थि एक्कोवि।
केवतिया पुरेक्खडा ?
नत्थि एक्को वि।
५५. एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं तत्थ एकुत्तरिओ।
यत्र वायुकाये मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु व्यन्तरादिषु च वैक्रियशरीरं तत्रैको वेत्यादि वाच्यमित्यर्थः।
(वृ० प० ५६९)
५६. जत्थ नत्थि तत्थ जहा पुढविकाइयत्ते तहा भाणियव्वं।

५७. यत्राप्कायादौ नास्ति वैक्रियं तत्र यथा पृथिवीकायिकत्वे तथा वाच्यं, न सन्ति वैक्रियपुद्गलपरावर्त्ता इति वाक्यमित्यर्थः। (वृ० प० ५६९)
५८. जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते।

५९. तेयापोग्गलपरियट्टा कम्मापोग्गलपरियट्टा य सव्वत्थ एकुत्तरिया भाणियव्वा।
६०. तेजसकार्म्मणपुद्गलपरावर्त्ता भविष्यन्त एकादयः सर्वेषु नारकादिजीवपदेषु पूर्ववद् वाच्याः।
(वृ० प० ५६९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

६१. 'ए बिहुं पुद्गल जंत, सर्व विषे तिण कारण।
काल अतीत अनंत, कीधा छै सहु दंडके ।।
६२. आगल करिस्यै तेह, जेहनें छै तेहनें कह्या।
इक बे प्रमुख करेह, कहिवा अनंत पर्यंत ए ।।
६३. ए बिहुं पुद्गल पेख, आगल जे करिस्यं नथी।
ते शिव गमन विशेख अल्प भवे करि सीझस्यै ।।
६४. तिण कारण कहिवाय, जेहनें छै तसु इक प्रमुख।
पिण ए दोनूं ताय, दडक चउवीसे हुवै ।।' (ज०स०)

६५. *मन पुद्गल-परावर्त्त जिन आखियो, कांइ सर्व पंचेंद्रिय मांय।
सर्व पंचेंद्रिय दंडक आसरी, गये काल अनंत कराय।।

६५,६६. मणपोग्गलपरियट्टा सव्वेसु पंचिंदिएसु एगुत्तरिया
'मणपोग्गले' त्यादि मनः - पुद्गलपरावर्त्ताः पञ्चेन्द्रियेष्वेव सन्ति भविष्यन्तश्च ते एकोत्तरिकाः पूर्ववद् वाच्याः। (वृ० प० ५६९)

६६. आगल करिस्यै ते जेहनै अछै, तेहनें एकादि अनंत।
इक-इक नारक आदि दंडक विषे, पूरवली परे कहंत।।
६७. विकलद्रिय विषे नथी जिनवर कह्यो, विकलेंद्रिय ग्रहिवो सोय।
एकेंद्रिय पिण ग्रहिवो ए न्याय छै, मन पुद्गल तास न होय ।।

६७. विगलिंदिएसु नत्थि।
'विगलिंदिएसु नत्थि' त्ति विकलेन्द्रियग्रहणेन चैकेन्द्रिया अपि ग्राह्याः तेषामपीन्द्रियाणामसम्पूर्णत्वात् मनोवृत्तेश्चाभावाद् अतस्तेष्वपि मनः-पुद्गलपरावर्त्ता न सन्ति। (वृ० प० ५६९)

६८. पुद्गल-परावर्त्त वच इमज छै, एकेंद्रिय विषे न एह।
तेजस आदि परिवर्त्तन नीं परै, नरकादिक विषे कहेह ।।

६८. वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव, नवरं—एगिंदिएसु नत्थि भाणियव्वा।
'वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव' त्ति तेजसादिपरिवर्त्तवत्सर्वनारकादिजीवपदेषु वाच्याः नवरमेकेन्द्रियेषु वचनाभावान्न सन्तीति वाच्याः। (वृ० प० ५६९)

६९. आण अरु पाण परावर्त्त-पुद्गला, कांइ गया काल रै मांहि।
नरकादिक चउवीस दंडक नैं विषे, कांइ किया अनंता ताहि ।।
७०. आगल करिस्यै ते जेहनैं अछै, तेहनैं एकादि अनंत।
यावत एम विमानक नैं विषे, वैमानिकपणें कहंत ।।

६९,७०. आणापाणुपोग्गलपरियट्टा सव्वत्थ एकुत्तरिया जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते। (श० १२।९३)

सोरठा

७१. इक वच दंडक एह, अर्थ इसी विध आखिया।
दंडक बहु वचनेह, कहियै छै हिव आगले।।

७१. 'नेरइयाण' मित्यादिना पृथक्त्वदण्डकानाह—
(वृ० प० ५६९)

७२. *बहु वच नारक नैं भगवंत जी! नारकपणें अतीत ताहि।
किया औदारिक परावर्त्त-पुद्गल किता? जिन भाखै इक पिण नांहि ।।
७३. काल आगमिये करिस्यै केतला? जिन कहै एक पिण नांय।
यावत थणियकुमारपणां लगे, कांइ नारक जिम कहिवाय ।।

७२. नेरइयाणं भंते! नेरइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता?
नत्थि एक्कोवि।
७३. केवतिया पुरेक्खडा?
नत्थि एक्कोवि। एवं जाव थणियकुमारत्ते।
(श० १२।९४)

७४. बहु वच नारक नैं भगवंत जी! कांइ पृथ्वीपणें अतीत।
औदारिक परावर्त्त किया केतला? जिन कहै अनंत संगीत ।।
७५. काल आगमिये करिस्यै केतला? जिन कहै अनंता ताय।
यावत मनुष्यपणें इम जाणवा, तिहां औदारिक कहिवाय ।।

७४. पुढविकाइयत्ते—पुच्छा।
अणंता।
७५. केवतिया पुरेक्खडा?
अणंता। एवं जाव मणुस्सत्ते।

* **लय : वीर जिनेश्वर सुणज्यो मोरी वीनती**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६. बहु वच नारक न व्यंतरपणैं, कांइ जोतिषीपणें पिछाण।
वैमानिकपणैं जेम नारकपणैं, आख्यूं तिम कहिवूं जाण ।।

७६. वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियत्ते जहा नेरइयत्ते।

७७. जावत वैमानिक जे देव नैं, वैमानिकपणैं विचार।
एवं सातूं पिण पुद्गल-परियट्टा, कांइ भणवा जिन वच सार।।

७७. एवं जाव वेमाणियाणं वेमाणियत्ते। एवं सत्त वि पोग्गलपरियट्टा भाणियव्वा—

७८. जेहनैं छै तिहां अतीतपणैं, कांइ आगल पिण छै अनंत।
जेहनैं नहीं तिहां अतीत अनागत, ते परावर्त्त नहीं हुंत।।

७८. जत्थ अत्थि तत्थ अतीता वि पुरेक्खडा वि अणंता भाणियव्वा, जत्थ नत्थि तत्थ दोवि नत्थि भाणियव्वा।

वा०—इहां ए भावार्थ—नारकी नैं नारकीपणैं वैक्रिय शरीर छै तो वैक्रिय पुद्गल-परावर्त्त नारकपणैं अतीत अनागत बेहुं पृथक दंडक भणी अनंता कहिवा, सामान्यपणैं नारकी नां आश्रय थकी तथा नारकीपणैं औदारिक पुद्गल ग्रहिवा नां अभाव थकी औदारिक पुद्गल-परावर्त्तन अतीत तथा अनागत ए दोनूं नहीं—इम सगलै भावना करिवी।

७९. जाव वैमानिक जे देव नैं, वैमानिकपणैं विचार।
आणापाणु पोग्गल-परियट्ट किता ? जिन कहै अनंता धार ।।

७९. जाव— (श० १२।९५)
वेमाणियाणं वेमाणियत्ते केवतिया आणापाणुपोग्गलपरियट्टा अतीता ?
अणंता।

८०. काल अनागत करिस्यै केतला ? जिन कहै अनंता जेह।
पुद्गल-परावर्त्त करिस्यै जिके, ए बहु वचने करि लेह ।।

८०. केवतिया पुरेक्खडा ?
अणंता। (श० १२।९६)

८१. आख्यो ए देश बारमा तुर्य नों, बेसौ छपनमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल राय प्रसाद थी, कांइ 'जय-जश' मंगलमाल।।

ढाल : २५७

औदारिक आदि पुद्गल परावर्त्त नों स्वरूप

सोरठा

१. अथवा औदारिक आद, परावर्त्त-पुद्गल तणो।
स्वरूप प्रति संवाद, कहियै देखाडवा अरथ ।।

१. अथौदारिकादिपुद्गलपरावर्त्तानां स्वरूपमुपदर्शयितुमाह— (वृ० प० ५६९)

दूहा

२. वलि गोतम पूछै अछै, किण अर्थे कहिवाय ?
ओदारिक पुद्गल प्रभु! परावर्त्त ए ताय ।।

२. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—ओरालियपोग्गलपरियट्टे—ओरालियपोग्गलपरियट्टे ?

३. वीर प्रभू तिण अवसरे, उत्तर देवै एम।
जिन वच सरधै तेहनैं, सदा कुशल नैं खेम।।

*चित्त लगाय नैं सांभलै ।। [ध्रुपदं]

४. जीव ओदारिक तनु रह्यो, ओदारिक प्रायोग्य हो, गोतम!
ग्रहण करै सहु द्रव्य नैं, गहियाइं ग्रहै योग्य हो, गोतम !

४,५. गोयमा ! जण्णं जीवेणं ओरालियसरीरे वट्टमाणेणं ओरालियसरीरपायोग्गाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए गहियाइं, बद्धाइं,

*लय : स्वामी ! म्हारा राजा नै धर्म सुणावज्यो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. ते ओदारिक तनुपणें, ग्रह्या करचा अंगीकार हो, गोतम !
बंध्या जीव प्रदेश थी, एकमेक किया धार हो, गोतम !
६. जे माटे पहिलां फर्शिया, तनु रज जिम फर्शंत हो, गोतम !
पुट्ठाइं जे पाठ नों, प्रथम अर्थ ए हुंत हो, गोतम !

७. अथवा पुट्ठाइं पोखिया, अपर-अपर जे नाम हो, गोतम !
ग्रहण थकी ए जीवड़े, द्वितीय अर्थ ए ताम हो, गोतम !
८. पाठ कडाइं चउथो कह्यो, पूर्व परिणाम हुंत हो, गोतम !
तेह तणीज अपेक्षया, अन्य परिणाम करंत हो, गोतम !

९. ए च्यारूं पद आखिया, ओदारिक नां एह हो, गोतम !
पुद्गल ग्रहण करण विषे, जाणेवा विधि जेह हो, गोतम !
१०. पट्ठवियाइं स्थापिया, स्थिर कीधा इण जीव हो, गोतम !
निविट्ठाइं स्थाप्या तिके, गाढा कीधा अतीव हो, गोतम !

११. अभिनिविट्ठाइं तिको, अभिविध करिकै जाण हो, गोतम !
सहु पुद्गल जंतू विषे, लागा ते पहिछाण हो, गोतम !

१२. अभिसमण्णागयाइं कह्यो, अभिविधि करि सहु प्राप्य हो, गोतम!
रस अनुभव न जीवे कियो, ए रस आश्री आप्य हो, गोतम !

१३. परियादियाइं जीव रै, सहु अवयव करि संच हो, गोतम !
तसु रस ग्रहण द्वारे ग्रह्यो, स्थिति विषे पद पंच हो, गोतम !

१४. परिणामियाइं रस भणी, भोगविवै करि जेह हो, गोतम !
अन्य-अन्य परिणाम में, पहुंचाडचा छै तेह हो, गोतम !

१५. निज्जिण्णाइं पाठ छै, जे प्रदेश थी क्षीण हो, गोतम !
जीवे रस कीधा अछै, पुद्गल नां निज्जीण हो, गोतम !

१६. निसिरियाइं पाठ छै, जीव प्रदेश थी ताय हो, गोतम !
ते पुद्गल रस नीसरचा, तसु हिव आगल न्याय हो, गोतम !

१७. निसिट्ठाइं जीव जे, निज प्रदेश थी धार हो, गोतम !
तजिया दूर किया तिणे, विगम विषे पद च्यार हो, गोतम !

१८. औदारिक जे पोग्गला, ते आश्री पद तेर हो, गोतम !
अर्थ सूत्र बिहुं आखिया, चारू चित सूं हेर हो, गोतम !

१९. तिण अर्थे करि गोयमा ! म्हैं आखी इम वाय हो, गोतम !
ओदारिक पुद्गल तणां, परावर्त्त नों न्याय हो, गोतम !

'गहियाइं' ति स्वीकृतानि 'बद्धाइं' ति जीवप्रदेशै-रात्मीकरणात् । (वृ० प० ५६९)

६. पुट्ठाइं
'पुट्ठाइं' ति यतः पूर्वं स्पृष्टानि तनौ रेणुवत् ।
(वृ० प० ५६९)

७. अथवा पुष्टानि पोषितान्यपरापरग्रहणतः ।

८. कडाइं ।
'कडाइं' ति पूर्वपरिणामापेक्षया परिणामान्तरेण कृतानि । (वृ० प० ५६९)

१०. पट्ठवियाइं निविट्ठाइं
'पट्ठवियाइं' ति प्रस्थापितानि—स्थिरीकृतानि जीवेन 'निविट्ठाइं' ति यतः स्थापितानि ततो निविष्टानि जीवेन स्वयं । (वृ० प० ५६९)

११. अभिनिविट्ठाइं
'अभिनिविट्ठाइं' ति अभि—अभिविधिना निविष्टानि सर्वाण्यपि जीवे लग्नानीत्यर्थः । (वृ० प० ५६९)

१२. अभिसमण्णागयाइं
'अभिसमन्नागयाइं' ति अभिविधिना सर्वाणीत्यर्थः समन्वागतानि—सम्प्राप्तानि जीवेन रसानुभूतिं समाश्रित्य । (वृ० प० ५६९)

१३. परियादियाइं
'परियाइयाइं' ति पर्याप्तानि—जीवेन सर्वावयवैरात्तानि तद्रसादानद्वारेण । (वृ० प० ५६९)

१४. परिणामियाइं ।
'परिणामियाइं' ति रसानुभूतित एव परिणामान्तरमापादितानि । (वृ० प० ५६९)

१५. निज्जिण्णाइं
'निज्जिण्णाइं' ति क्षीणरसीकृतानि ।
(वृ० प० ५६९)

१६. निसिरियाइं
'निसिरियाइं' ति जीवप्रदेशेभ्यो निःसृतानि ।
(वृ० प० ५६९)

१७. निसिट्ठाइं भवंति ।
'निसिट्ठाइं' ति जीवेन निःसृष्टानि स्वप्रदेशेभ्यस्त्याजितानि । (वृ० प० ५६९)

१८. इहाद्यानि चत्वारि पदान्यौदारिकपुद्गलानां ग्रहणविषयाणि तदुत्तराणि तु पञ्च स्थितिविषयाणि तदुत्तराणि तु चत्वारि विगमविषयाणीति ।
(वृ० प० ५७०)

१९. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—ओरालियपोग्गलपरियट्टे-ओरालियपोग्गलपरियट्टे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० एवं वैक्रिय पुद्गल-परावर्त्त विषे पेख हो, गोतम !
तेरै पद कहिवा तिके, णवरं इतो विशेख हो, गोतम !
२१. वैक्रिय तनु रह्यो जीव जे, वैक्रिय शरीर प्रायोग्य हो, गोतम !
सहु द्रव्य ग्रहै वैक्रियपणैं, शेष तिमज सर्व योग्य हो, गोतम !

२२. एवं यावत सातमों, आणापाणु संपेख हो, गोतम !
परावर्त्त-पुद्गल लगे, णवरं इतरो विशेख हो, गोतम !
२३ रह्यो आणपाण नैं विषे, आणपाण प्रायोग्य हो, गोतम !
सहु द्रव्य आणपाणुपणैं, शेष तिमज सर्व योग्य हो, गोतम !

सोरठा

२४. हिव ओदारिकादि ताय, परावर्त्त-पुद्गल तिको।
कितै काल पूराय ? अल्प बहुत कहियै वलि ।।

औदारिक आदि पुद्गल-परावर्त कितै काल थी पूरो हुवै—

२५. *औदारिक पुद्गल प्रभु ! परावर्त्त कहिवाय हो, स्वामी !
ते कितरै काले करी, पूरो करियै ताय हो ? स्वामी !
२६. वीर कहै अवसर्प्पिणी, तेह अनंती न्हाल हो, गोतम !
अनंत वले उत्सर्प्पिणी, तेणे करिकै भाल हो, गोतम !
२७. ए इतलै काले करी, ओदारिक अवलोय हो, गोतम !
परावर्त्त पुद्गल तिको, पूरो करियै सोय हो, गोतम !

सोरठा

२८. एक जीव ग्रहणहार, पुद्गल नां अनंतपणां थकी।
अगृहीत पुद्गल धार, ग्रहितां काल अनंत ह्वै ।।

२९. काल एतलै एह, औदारिक पुद्गल परा।
पूरो करियै तेह, अनंत चउवीसी ह्वै तिहां ।।

३०. *एवं वैक्रिय पुद्गल-परावर्त्त तिण करत हो, गोतम !
एवं यावत सातमों, आणपाण परावरत हो, गोतम !
३१. ए ओदारिक पुद्गल प्रभु ! परावर्त्त नों काल हो, स्वामी !
यावत आणापाण नों, काल निवर्त्तन न्हाल हो, स्वामी !
[हूं अर्ज करूं छूं वीनती] ।

औदारिक आदि पुद्गल परावर्त की काल आश्री अल्पबहुत्व—

३२. कवण-कवण थी थोड़ो हुवै, घणो सरीखो होय हो, स्वामी !
वलि विशेषज अधिक ह्वै ? हिव जिन उत्तर जोय हो, स्वामी !
३३. सर्व थकी थोड़ो हुवै, कार्मण तणो निहाल हो, गोतम !
परावर्त्त पुद्गल तिको, निपजावा नो काल हो, गोतम !

सोरठा

३४. कार्मण पुद्गल जोय, सूक्ष्म बहु परमाणु करि।
तेह नीपना होय, एक बार पिण बहु ग्रहै ।।

---

*लय : स्वामी ! म्हारा राजा नैं धर्म सुणावज्यो

२०. एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टेवि, नवरं—

२१. वेउव्वियसरीरे वट्टमाणेणं वेउव्वियसरीरप्पायोग्गाइं दव्वाइं वेउव्वियसरीरत्ताए गहियाइं, सेसं तं चेव सव्वं ।

२२. एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे, नवरं—

२३. आणापाणुपायोग्गाइं सव्वदव्वाइं आणापाणुत्ताए गहियाइं, सेसं तं चेव । (श० १२।९७)

२४. अथ पुद्गलपरावर्त्तानां निर्वर्त्तनकालं तदल्पबहुत्वं च दर्शयन्नाह— (वृ० प० ५७०)

२५. ओरालियपोग्गलपरियट्टे णं भंते ! केवइकालस्स निव्वत्तिज्जइ ?

२६. गोयमा ! अणंताहिं ओसप्पिणीहिं उस्सप्पिणीहिं ।

२७. एवतिकालस्स निव्वत्तिज्जइ ।

२८. एकस्य जीवस्य ग्राहकत्वात् पुद्गलानां चानन्तत्वात् पूर्वगृहीतानां च ग्रहणस्यागण्यमानत्वादनन्ता अवसर्प्पिण्य इत्यादि सुष्ठूक्तमिति । (वृ० प० ५७०)

३०. एवं ! वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे वि । एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टेवि । (श० १२।९८)

३१. एयस्स णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स····जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकालस्स य

३२. कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया वा ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

३३. गोयमा ! सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले ।

३४. ते हि सूक्ष्मा बहुतमपरमाणुनिष्पन्नाश्च भवन्ति, ततस्ते सकृदपि बहवो गृह्यन्ते । (वृ० प० ५७०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. चउवीस दण्डक मांहि, वर्त्तमान जे जीव नैं।
समय-समय प्रति ताहि, ग्रहणपणों पामै तसु ॥
३६. ते माटे कहिवाय, अल्प काल करि पिण तिके।
कार्मण पुद्गल ताय, सगला ग्रहण हुवै अछै॥

३५,३६. सर्वेषु च नारकादिपदेषु वर्त्तमानस्य जीवस्य तेऽनुसमयं ग्रहणमायान्तीति स्वल्पकालेनापि तत्सकल-पुद्गलग्रहणं भवतीति। (वृ० प० ५७०)

३७. *तेहथी तेजस पुद्गल-परावर्त्त नों काल हो, गोतम !
निवर्त्तन निपजावतां, अनंतगुणो ते न्हाल हो, गोतम !

३७. तेयापोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

सोरठा

३८. स्थूलपणैं करि धार, तेजस पुद्गल अल्प नों।
ग्रहण हुवै इक वार, अल्प प्रदेश निष्पन्नपणैं॥
३९. ते माटे इम न्हाल, कार्मण पुदगल काल थी।
तेजस पुद्गल काल, अनंतगुणो इम आखियो॥

३८,३९. यतः स्थूलत्वेन तैजसपुद्गलानामल्पानामेकदा ग्रहणं, एकग्रहणे चाल्पप्रदेशनिष्पन्नत्वेन तेषामल्पानामेव तदणूनां ग्रहणं भवत्यतोऽनन्तगुणोऽसाविति। (वृ० प० ५७०)

४०. *तेहथी ओदारिक तणो, पुद्गल-परावर्त्त जोय हो, गोतम !
निवर्त्तन निपजावतां, अनंतगुणो काल होय हो, गोतम !

४०. ओरालियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

सोरठा

४१. ओदारिक नां जाण, पुद्गल अतिही स्थूल छै।
स्थूल तणो पहिछाण, अल्पईज ग्रहै एकदा॥
४२. वलि प्रदेश पिण तास, अतिही अल्प अछै तसु।
ग्रहिवे थके विमास, ग्रहै अल्प अणु एकदा॥
४३. कार्मण तेजस धार, तसुं पुदगल जिम ए नथी।
तेहनों ग्रहण विचार, दंडक चउवीसे हुवै॥
४४. मनुष्य अनै तिर्यंच, तेहनैं इज तेहनों ग्रहण।
बहु काले करि संच, ते माटे तसु ग्रहण ह्वै॥

४१. यत औदारिकपुद्गला अतिस्थूराः, स्थूराणां चाल्पानामेवैकदा ग्रहणं भवति। (वृ० प० ५७०)
४२. अल्पतरप्रदेशाश्च ते ततस्तद्ग्रहणेऽप्येकदाऽल्पा एवाणवो गृह्यन्ते। (वृ० प० ५७०)
४३. न च कार्म्मणतैजसपुद्गलवत्तेषां सर्वपदेषु ग्रहणमस्ति। (वृ० प० ५७०)
४४. औदारिकशरीरिणामेव तद्ग्रहणाद्, अतो बृहतैव कालेन तेषां ग्रहणमिति। (वृ० प० ५७०)

४५. *तेहथी आणापाणु जे, पुद्गल-परावर्त्त काल हो, गोतम ?
निवर्त्तन निपजावतां, काल अनंतगुणो न्हाल हो, गोतम !

४५. आणापाणुपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

सोरठा

४६. औदारिक थी जास, आणपाण सूक्षम अणु।
वलि बहु प्रदेश तास, अल्प काल करि ग्रहै तसु॥

४६. यद्यपि हि औदारिकपुद्गलेभ्य आनप्राणपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशिकाश्चेति तेषामल्पकालेन ग्रहणं संभवति। (वृ० प० ५७०)

४७. तो पिण अपज्जत्त, तेह अवस्था नैं विषे।
ग्रहण नथी छै तत्थ, आणपाण पुद्गल तणां॥
४८. तथा पर्याप्त पेख, औदारिक तनु पेक्षया।
आणपाण नां देख, ग्रहण अछै थोड़ाज नां॥
४९. पुद्गल आण रु पाण, ग्रहण न शीघ्र उतावलो।
ते माटे पहिछाण, औदारिक थी अनंतगुण॥

४७-४९. तथाऽप्यपर्याप्तकावस्थायां तेषामग्रहणात्पर्याप्तकावस्थायामप्यौदारिकशरीरपुद्गलापेक्षया तेषामल्पीयसामेव ग्रहणान्न शीघ्रं तद्ग्रहणमित्यौदारिकपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालादनन्तगुणताऽऽनप्राणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालस्येति। (वृ० प० ५७०)

५०. *तेह थकी मन पुद्गल-परावर्त्त नो काल हो, गोतम !
निवर्त्तन निपजावतां, अनंतगुणो अद्धा न्हाल हो, गोतम !

५०. मणपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

***लय : स्वामी ! मोरा राजा नैं धर्म सुणावज्यो**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

५१. यद्यपि आण रु पाण, तसु पुद्गल थी मन तणां।
सूक्षम पुद्गल जाण, प्रदेश पिण बहु तेहनां।।
५२. ते माटे अवलोय, अल्प काले पिण तेहनो।
ग्रहण हुवै छै सोय, अनंतगुणो किम आखियो?
५३. एकेंद्रियादि कहाय, कायस्थिति नां वश थकी।
बहु काले पिण ताय, मन नों लाभ हुवै अछै।।

५१,५२. कथम्? यद्यप्यानप्राणपुद्गलेभ्यो मनःपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशाश्चेत्यल्पकालेन तेषां ग्रहणं भवति।
(वृ० प० ५७०)

५३. तथाऽप्येकेन्द्रियादिकायस्थितिवशान्मनसश्चिरेणलाभान्मानसपुद्गलपरिवर्त्तो बहुकालसाध्य इत्यनन्तगुण उक्तः। (वृ० प० ५७०)

५४. *तेह थकी पिण वचन नां, पुद्गल-परिवर्त्त न्हाल हो, गोतम!
निवर्त्तन निपजावतां, अनंतगुणो है काल हो, गोतम!

५४. वइपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।

सोरठा

५५. मन पुद्गल थी सोय, भाषा अतिही शीघ्र है।
वली बेंद्रियादिक में होय, अधिक कह्यो किम न्याय हिव।।

५५. कथम्? यद्यपि मनसः सकाशाद् भाषा शीघ्रतरं लभ्यते द्वीन्द्रियाद्यवस्थायां च भवति।
(वृ० प० ५७०)

५६. मनो द्रव्य थी जाण, भाषा अतिही स्थूल है।
थोड़ा नोंज पिछाण, ग्रहण हुवै इम एकदा।।
५७. ते माटे ए थाय, मन परिवर्त्तन काल थी।
अनंतगुणो अधिकाय, अद्धा वच पुद्गल-परा[1]।।

५६,५७. मनोद्रव्येभ्यो, भाषाद्रव्याणामतिस्थूलतया स्तोकानामेवैकदा ग्रहणात्ततोऽनन्तगुणो वाक्पुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकाल इति। (वृ० प० ५७०)

५८. *तेहथी वैक्रिय पुद्गल-परावर्त्त नों काल हो, गोतम!
निवर्त्तन निपजावतां, अनंतगुणो अद्धा न्हाल हो, गोतम!

५८. वेउव्वियपोग्गलपरियट्टनिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे।
(श० १२।९९)

सोरठा

५९. वैक्रिय शरीर सोय, लाभे अति बहु काल ते।
तिण सूं वच थी जोय, अनंतगुणो वैक्रिय अद्धा।।

५९. वैक्रियशरीरस्यातिबहुकाललभ्यत्वादिति।
(वृ० प० ५७०)

हिवै पुद्गल-परावर्त नों इज अल्पबहुत्व—

६० *ए प्रभु! ओदारिक तणां, पोग्गल-परियट्टा पेख हो, स्वामी!
यावत आणापाण नां, पोग्गल-परियट्टा देख हो, स्वामी!
६१ कवण-कवण थी अल्प है, बहुत्व सरिखा तेह हो, स्वामी!
अधिक विशेष कह्या प्रभु! हिव जिन उत्तर देह हो, स्वामी!
६२. सर्व थकी थोड़ा वैक्रिय पुद्गल-परिवर्त्त जोय हो, गोतम!
अति बहु काले ए नीपजै, तिणसूं अल्पज होय हो, गोतम!

६०. एएसि णं भंते! ओरालियपोग्गलपरियट्टाणं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टाण य
६१. कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा? बहुया वा? तुल्ला वा? विसेसाहिया वा?
६२. गोयमा! सव्वत्थोवा वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा। सर्वस्तोका वैक्रियपुद्गलपरिवर्त्ता बहुतमकालनिर्वर्त्तनीयत्वात्तेषाम्। (वृ० प० ५७०)

६३. तेहथी वच पुद्गल-परा, अनंतगुणा आख्यात हो, गोतम!
तेहथी मन पुद्गल-परावर्त्त, अनंतगुणा थात हो, गोतम!
६४. आणापाणु परियट्टा, अनंतगुणा कहिवाय हो, गोतम!
ओदारिक पुद्गल-परा, अनंतगुणा अधिकाय हो, गोतम!
६५. तेजस पुद्गल-परियट्टा, अनंतगुणा आख्यात हो, गोतम!
कार्मण पुद्गल-परियट्टा, अनंतगुणा अवदात हो, गोतम!

६३. वइपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, मणपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा।
६४. आणापाणुपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, ओरालियपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा।
६५. तेयापोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा, कम्मगपोग्गलपरियट्टा अणंतगुणा। (श० १२/१००)

***लय : स्वामी! म्हारा राजा नै धर्म सुणावज्यो**

१. परावर्त्त

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

६६. 'पूर्वे कही प्रतीत, अल्प बहु अद्धा तणु।
तेहथी ए विपरीत, अंतिम थकी पिछाणियै।।

६७. जेहनो थोड़े काल, हुवै निवर्त्तन तेहनां।
पोग्गल-परियट्ट न्हाल, घणां हुवै छै ते सही।।

६८. कार्मण पुद्गल सोय, परावर्त्त निवर्त्तना।
तास काल अवलोय, सर्व थकी थोड़ो कह्यो।।

६९. इतरे थोड़ो काल, पूरो ह्वै छै कार्मण।
तो सर्व थकी बहु न्हाल, कम्मा पोग्गल-परियट्टा।।

७०. वैक्रिय पुद्गल देख, परिवर्त्तन नों काल जे।
सर्व थकी संपेख, बहु काले करि नीपजै।।

७१. तेहवा पुद्गल ताम, परावर्त्त वैक्रिय तणां।
न्याय विचारो आम, सर्व थकी थोड़ा कह्या।।

७२. जेहनों बहुलो काल, ते पुद्गल थोड़ा कह्या।
अल्प अद्धा जसु न्हाल, ते पुद्गल-परिवर्त्त बहु।।' (ज.स.)

७३. *सेवं भंते ! इम कही, जाव गोयम विचरंत हो, भवियण !
द्वादशमा ए शतक नों, तुर्य उद्देशो तंत हो, भवियण !

७४. ढाल दोयसौ ऊपरे सत्तावनमी देख हो, भवियण !
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी,
'जय-जश' हरष विशेष हो, भवियण !

७३. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं जाव विहरइ।
(श० १२/१०१)

द्वादशशते चतुर्थोद्देशकार्थः ।।१२।४।।

ढाल : २५८

वर्णादि की अपेक्षा से द्रव्यमीमांसा पद

दूहा

१. पूर्व उद्देशे पुद्गला, कह्या तास प्रस्ताव।
पुद्गल कर्म स्वरूप नां, पंचमुदेशे भाव।।

१. अनन्तरोद्देशके पुद्गला उक्तास्तत्प्रस्तावात्कर्मपुद्गल-स्वरूपाभिधानाय पञ्चमोद्देशकमाह—
(वृ० प० ५७१)

२. नगर राजगृह नें विषे, यावत भाखै एम।
गौतम वंदी वीर नें, प्रश्न करै धर प्रेम।।

२. रायगिहे जाव एवं वयासी—

३. †अथ प्रभु ! प्राणातिपात पापठाणो आख्यात, आछेलाल।
तसु उदय थी जीव हिंसा करै।।

४. ए चारित्र मोहनी जोय, उपचार थी अवलोय।
प्राणातिपातज उच्चरै।।

३,४. अह भंते ? पाणाइवाए
'पाणाइवाए' त्ति प्राणातिपातजनितं तज्जनकं वा चारित्रमोहनीयं कर्मोपचारात् प्राणातिपात एव।
(वृ० प० ५७२)

*लय : स्वामी ! म्हारा राजा नै धर्म सुणावज्यो

†लय : आछेलाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. आगल पिण इह रीत, कहिवो वचन प्रतीत।
मृषावाद विषे सही ।।
६. एम अदत्तादान, मिथुन परिग्रह मान।
ए पांचूंइ पापठाणा मही ।।
७. वर्ण केता हुवै तास? केतला गंध रस फास?
हिव जिन कहै गोतम सुणै ।।
८. पंच वर्ण गंध दोय, वलि पंच रस अवलोय।
च्यार फर्श इम जिन थुणै ।।

वा०—पंच रस, पंच वर्ण करिकै परिणत, द्विविध गंध, च्यार फर्श । सिद्धां थकी अनंतगुण हीण, अनंतप्रदेशिक एहवा द्रव्य कहियै ।

५. एवमुत्तरत्रापि (वृ० प० ५७२)
मुसावाए
६. अदिण्णादाणे, मेहुणे, परिग्गहे—

७,८. एस णं कतिवण्णे कतिगंधे कतिरसे कतिफासे पण्णत्ते ?
गोयमा ! पंचवण्णे दुगंधे पंचरसे चउफासे पण्णत्ते ।
(श० १२/१०२)

वा०—पंचरसपंचवन्नेहिं परिणयं दुविहगंधचउफासं ।
दवियमणंतपएसं सिद्धेहिं अणंतगुणहीणं ।।
(वृ० प० ५७२)

सोरठा

९. स्निग्ध लूखो ताम, शीत उष्ण ए चिहुं फरस।
जे सूक्षम परिणाम, ते पुद्गल में ए चिहुं ।।
१०. कर्म सूक्ष्म परिणाम, फर्श च्यार तिणमें हुवै।
रूपी अजीव ताम, कर्म भणी कहियै अछै।

९,१०. 'चउफासे' त्ति स्निग्धरूक्षशीतोष्णाख्याश्चत्वारः स्पर्शाः सूक्ष्मपरिणामपरिणतपुद्गलानां भवंति, सूक्ष्मपरिणामं च कर्मेति । (वृ० प० ५७२)

क्रोध के दस नाम

११. *अथ हिव भगवंत ! क्रोध, नाम सामान्य ए बोध।
कोपादि नाम विशेष छै ।।

११. अह भंते ! कोहे कोवे
क्रोध इति सामान्यं नाम, कोपादयस्तु तद्विशेषाः ।
(वृ० प० ५७२)

१२. क्रोध तणां परिणाम, उपार्जणहारो ताम ।।
तिण कर्म नैं क्रोध कह्यो अछै ।।
१३. क्रोध नुं उदय स्वभाव, तेह थकी प्रगट प्रभाव।
जाज्वलमानज कोप है ।।
१४. क्रोध नो इज अनुबंध, रोस नाम ए संध।
क्रोध तणोज आटोप है ।।
१५. दोस ते चउथो नाम, आतम पर नैं ताम।
दुख उपजावै अधिक ही[1] ।।
१६. अथवा दोष जे द्वेष, अप्रीतिभाव विशेष।
जे कर्म उदय थी ए सही ।।
१७. अक्षमा पंचम नाम, पेला रो कीधो ताम ।।
अपराध नांहि सहीजियै ।।
१८. छठो संजलण नाम, क्रोध अग्नि करि ताम।
वारंवार दहीजियै ।।
१९. कलह सातमो नाम, मोटा शब्द करि ताम।
भूंडा वचन वदै जिको ।।

१२. तत्र 'कोहे' त्ति क्रोधपरिणामजनकं कर्म्म ।
(वृ० प० ५७२)
१३. तत्र कोपः क्रोधोदयात्स्वभावाच्चलनमात्रं ।
(वृ० प० ५७२)
१४. रोसे
रोषः—क्रोधस्यैवानुबन्धः । (वृ० प० ५७२)
१५. दोसे
दोषः—आत्मनः परस्य वा दूषणं । (वृ० प० ५७२)
१६. द्वेषो वाऽप्रीतिमात्रम् । (वृ० प० ५७२)
१७. अखमा
अक्षमा—परकृतापराधस्यासहनं । (वृ० प० ५७२)
१८. संजलणे
सञ्ज्वलनो—मुहुर्मुहुः क्रोधाग्निना ज्वलनं ।
(वृ० प० ५७२)
१९. कलहे
कलहो—महता शब्देनान्योऽन्यमसमञ्जसभाषणं ।

*लय : आछेलाल

१. वृत्तिकार ने दोष का अर्थ किया है—'आत्मनः परस्य वा दूषणं' । दूषण दुःख का निमित्त बनता है । इस दृष्टि से जोड़ में जयाचार्य ने इसका अनुवाद किया है—'दुख उपजावै अधिक ही ।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. चंडिक्के अष्टम नाम, क्रोध करीनें ताम।
रौद्र आकार करै तिको ॥

२०. चंडिक्के
चाण्डिक्यं—रौद्राकारकरणं ।

२१. भंडणे नवमों नाम, दंडादिक करि ताम।
युद्ध करै तामस धरी ॥

२१. भंडणे
भण्डनं—दण्डादिभिर्युद्धं ।

२२. विवादे दशमों नाम, अविनय वचन निकाम।
बोलै कर्म उदय करी ॥

२२. विवादे
विवादो—विप्रतिपत्तिसमुत्थवचनानि ।

२३. कलहादिक अभिधान, कार्य क्रोध नां जान।
एकार्थ क्रोध विषे सहु ॥

२३. क्रोधैकार्था वैते शब्दाः ।

२४. जेह कर्म थी जाम, बिगड़ै जीव परिणाम।
तेहनां नाम अछै बहु ॥

२५. क्रोध तणां दश नाम, जे कर्म उदय थी पाम।
ते कर्म नां नाम दशूं कह्या ॥

२६. द्रव्य क्रोध ए देख, पापठाणो संपेख।
पुद्गल परिणामे रह्या ॥

२७. वर्ण किता त्यां मांय, जाव फर्श के पाय।
गोतम प्रश्न इसो करै ॥

२७. एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?

२८. पंच वर्ण रस पंच, दोय गंध इम संच।
च्यार फर्श जिन वागरै ॥

२८. गोयमा ! पंचवण्णे दुगंधे पंचरसे चउफासे पण्णत्ते ।

सोरठा

२९. कह्या क्रोध दश नाम, हिव कहियै छै मान नां।
द्वादश नाम तमाम, तास प्रश्न गोयम करै ॥

मान के बारह नाम

३०. अथ हिव भगवंत ! मान, नाम सामान्य पिछान।
मदादि नाम विशेष ही ॥

३१. मान तणां परिणाम, उपार्जणहारो ताम।
ते कर्म नें मान कह्यो सही ॥

३०,३१. अह भंते ! माणे
'माणे' त्ति मानपरिणामजनकं कर्म्म, तत्र मान इति सामान्यं नाम मदादयस्तु तद्विशेषाः । (वृ० प० ५७२)

३२. मद प्रमुख हिव ताम, कहूं विशेषज नाम।
हरष मात्र तसु मद कह्यो ॥

३२. मदे
तत्र मदो—हर्षमात्रं । (वृ० प० ५७२)

३३. दर्प ए तीजो नाम, दृप्तपणों दिल पाम।
आंट विषेइज ते रह्यो ॥

३३. दप्पे
दर्पो—दृप्तता । (वृ० प० ५७२)

३४. थंभ ए चउथो नाम, अनमवापणुं ताम।
गर्व नाम सूरापणुं ॥

३४. थंभे गव्वे
स्तम्भः—अनम्रता गर्वं—शौण्डीर्यं । (वृ० प० ५७२)

३५. आतम उत्कर्ष नाम, निज आतम नां ताम।
पर पास करावै गुण घणुं ॥

३५. अत्तुक्कोसे ।
'अत्तुक्कोसे' त्ति आत्मनः परेभ्यः सकाशाद्गुणैरुत्कर्षणम्—उत्कृष्टताऽभिधानं । (वृ० प० ५७२)

३६. परपरिवाद अगाध, पर नां अवर्णवाद।
राग द्वेष वस भावतो ॥

३६. परपरिवाए
परपरिवादः—परेषामपवदनं । (वृ० प० ५७२)

वा०—अथवा गुण थी हेठो पाडवो ते परिपात ।

वा०—परिपातो वा गुणेभ्यः परिपातनमिति । (वृ० प० ५७२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७. उक्कोसे अष्टम नाम, पोता नीं ऋद्धि पाम।
मान वसेज बतावतो ।।
३८. अथवा पोता नैं पेख, फुन पर नैं सुविशेख।
मान अहंकार थकी वली ।।
३९. ईषत क्रिया कर जेह, उत्कृष्टपणुं करेह।
मद कर मानैं रंगरली ।।
४०. अपकर्षण ए नाम, आतम पर नैं ताम।
कषाय में प्रवर्त्ताविही ।।

वा०—अवक्कोसेत्ति अपकर्षण अथवा अवकर्षण ते अभिमान थकी आपणी आत्मा नैं वा पर नैं क्रिया नां आरंभ थकी किणही कारण थकी पिण प्रवर्त्तयिवो अथवा अप्रकाश ते अभिमान थकीज ।

४१. उण्णए ऊंचो भाव, नमण उच्छिन्न कहाव।
मान थकीज नमैं नहीं ।।

वा०—'उण्णए'त्ति अभिमान थकी पहिलां नमैं नहीं ते उन्नत कहियै । अथवा न्याय नुं छेदवूं ते अभिमान थकी न्याय नुं अभाव ते उन्नय ।

४२. उण्णामे न्यारम एह, जे कोई आय नमेह।
तेहनैं गर्व चढावही ।।
४३. दुण्णामे दुष्टपणेह, नमण करै छै जेह।
मद अभिमानपणैं सही ।।
४४. थंभादिक ए नाम, मान नां कारज ताम।
मान वाचक ए शब्द ही ।।
४५. जे कर्म थी ए परिणाम, ते कर्म तणां ए नाम।
वर्णादि यांमें किता कह्या ?
४६. वीर कहै वर्ण पंच, क्रोध कह्यो तिम संच।
पुद्गल द्रव्य मांहे रह्या ।।
४७. बारम शत सुविशेष, पंचमुद्देशक देश।
बेसौ अठावनमीं ढाल है ।।
४८. भिक्षु भारीमाल ऋषिराय, आनंद तास पसाय।
'जय-जश' हरष विशाल है ।।

३७-३९. उक्कोसे
'उक्कोसे' त्ति उत्कर्षणं आत्मनः परस्य वा मनाक् क्रिययोत्कृष्टताकरणं उत्काशनं वा प्रकाशनमभिमानात्स्वकीयसमृद्ध्यादेः । (वृ० प० ५७२)

४०. अवक्कोसे

वा०—'अवक्कासे'[1] त्ति अपकर्षणमवकर्षणं वा अभिमानादात्मनः परस्य वा क्रियारम्भात् कुतोऽपि व्यावर्त्तनमिति अप्रकाशो वाऽभिमानादेवेति । (वृ० प० ५७२)

४१. उण्णते

वा०—'उण्णए' त्ति उच्छिन्नं नतं—पूर्वप्रवृतं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छिन्नो वा नयो—नीतिरभिमानादेवोन्नयो नयाभाव इत्यर्थः । (वृ० प० ५७२)

४२. उण्णामे
'उण्णामे' त्ति प्रणतस्य मदानुप्रवेशादुन्नमनं । (वृ० प० ५७२)

४३. दुण्णामे
'दुन्नामे' त्ति मदाद्दुष्टं नमनं दुर्न्नाम इति । (वृ० प० ५७२)

४५. एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?

४६. गोयमा ! पंचवण्णे (सं. पा.) जहा कोहे तहेव ।

---

१. वृत्ति में अवक्कोसे स्थान पर अवक्कासे पाठ है ।

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

ढाल : २५९

दूहा

१. कह्या क्रोध अरु मान नां, नाम सामान्य विशेष।
हिव माया नैं लोभ नां, कहियै नाम अशेष।।

माया के पन्द्रह नाम

*मुनि प्यारा एतो चोकड़ी दूर तजोजै ।। (ध्रुपदं)

२. अथ माया हे प्रभु ! ताम, सामान्य नाम ए पाम।
उपधि प्रमुख विशेषज नाम रे।।

३. माया तणां परिणाम, उपार्जणहारो ताम।
तेह कर्म नों माया नाम रे।।

४. उपधि प्रमुख हिव तेह, कहूं नाम विशेषज जेह।
भेद माया तणां छै एह रे।।

५. उपधि ए बीजो हुंत, पर ठगवा निमित्त रचंत।
तसु गमन समीप करंत रे।।

६. निकृति तीजो नाम कहाय, अति आदर करि ते ताय।
पर-वंचन ठगवू कराय रे।।

७. तथा पहिली माया कीधी रूड़, तिका ढांकण अर्थे मूढ।
वलि अन्य माया करै गूढ रे।।

८. वलय चउथो नाम कहेह, जिण भावे करीनैं जेह।
वच वलय ज्यूं वक्र वदेह रे।।

९. अथवा वलय तणी पर तेह, वक्र चेष्टा में वर्त्तेह।
तेह भाव नैं वलय कहेह रे।।

१०. गहन पर ठगवा नैं न्हाल, करै वचन जाल असराल।
गहन नीं पर गहन संभाल रे।।

११. णूमे पर-वंचन नैं ताय, प्रवर्त्तै नीचो अथाय।
अथवा नीचै स्थान रहै जाय रे।।

१२. कल्क हिंसादि अघ कहिवाय, तसु कारण वंचन अभिप्राय।
तिको कल्क हीज कह्यु ताय रे।।

१३. कुरूपे खोटो रूप बणाय, अन्य प्रते विमोह पमाय।
भांड चेष्टा विशेष कराय रे।।

१४. जिम्हे पर-वंचन अभिप्राय, क्रिया विषे मंदा हुय जाय।
एहवा भाव ते जिम्ह कहाय रे।।

---

२. अह भंते ! माया उवही
'माया' त्ति सामान्यं उपध्यादयस्तद्भेदाः।
(वृ० प० ५७२)

५. 'उवहि' त्ति उपधीयते येनासावुपधिः—वञ्चनीय-समीपगमनहेतुर्भावः। (वृ० प० ५७२)

६. नियडी
'नियडि' त्ति नितरां करणं निकृतिः—आदरकरणेन परवञ्चनं (वृ० प० ५७३)

७. पूर्वकृतमायाप्रच्छादनार्थं वा मायान्तरकरणं।
(वृ० प० ५७३)

८,९. वलए
'वलए' त्ति येन भावेन वलयमिव वक्रं वचनं चेष्टा वा प्रवर्त्तते स भावो वलयं। (वृ० प० ५७६)

१०. गहणे।
'गहणे' त्ति परव्यामोहनाय यद्वचनजालं तद्गहनमिव गहनं। (वृ० प० ५७३)

११. णूमे
'णूमे' त्ति परवञ्चनाय निम्नताया निम्नस्थानस्य वाऽऽश्रयणं तन्नूमं ति। (वृ० प० ५७३)

१२. कक्के
'कक्के' त्ति कल्कं हिंसादिरूपं पापं तन्निमित्तो यो वञ्चनाभिप्रायः स कल्कमेवोच्यते। (वृ० प० ५७३)

१३. कुरुए
'कुरुए' त्ति कुत्सितं यथा भवत्येवं रूपयति—विमोहयति यत्तत्कुरूपं भाण्डादिकर्म मायाविशेष एव।
(वृ० प० ५७३)

१४. जिम्हे
'जिम्हे' त्ति येन परवञ्चनाभिप्रायेण जैह्म्यं—क्रियासु मान्द्यमालम्ब्यते स भावो जैह्म्यमेवेति।
(वृ० प० ५७३)

---

*लय : राणी भाखै सुण रे सूड़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. किब्विसे किलवेषी जान, जे माया थी पर भव स्थान।
तथा इह भव किलवेषी समान रे।।

१५. किब्बिसे
'किब्बिसे' त्ति यतो मायाविशेषाज्जन्मान्तरेऽत्रैव वा भवे किल्बिषः—किल्बषिको भवति स किल्बिष एवेति। (वृ० प० ५७३)

१६. आयरणया माया दिल धार, कांइ वस्तु करै अंगीकार।
तथा आदर करत अपार रे।।

१६. आयरणया
'आयरणय' त्ति यतो मायाविशेषादादरणं अभ्युपगमं कस्यापि वस्तुनः करोत्यसावादरणं। (वृ० प० ५७३)

१७. अथवा पर विप्रतारण जेह, विविध क्रिया आचरण करेह।
आयरणया नु दूजो अर्थ एह रे।।

१७. आचरणं वा—परप्रतारणाय विविधक्रियाणामाचरणम्। (वृ० प० ५७३)

१८. गूहणया बारमों नाम, निज रूप गोपवै ताम।
पर-वंचन नां परिणाम रे।।

१८. गूहणया
'गूढनया' गूहनं गोपायनं स्वरूपस्य। (वृ० प० ५७३)

१९. वंचणया तेरमों जान, वंचै ठगै ते पिछान।
तिण रै ठगवा तणो इज ध्यान रे।।

१९. वंचणया
'वंचणया' वञ्चनं—परस्य प्रतारणं। (वृ० प० ५७३(

२०. पलिउंचणया कहिवाय, सरलपणों पोता नों दिखाय।
करै खंडित वचन ए माय रे।।

२०. पलिउंचणया
'पलिउंचणया' प्रतिकुञ्चनं सरलतया प्रवृत्तस्य वचनस्य खण्डनं। (वृ० प० ५७३)

२१. सातियोग्य रूडा द्रव्य मांय, माडुओ द्रव्य भेलो मिलाय।
करै रूडा सरीखो ए माय रे।।

२१. सातिजोगे
'साइजोगे' त्ति अविश्रम्भसम्बन्धः सातिशयेन वा द्रव्येण निरतिशयस्य योगस्तत्प्रतिरूपकरणमित्यर्थ.। (वृ० प० ५७३)

२२. पनरै नाम माया नां जाण, शब्द एकार्थवाची पिछाण।
त्यांमें किता वर्णादिक मान रे?

२२. मायैकार्था वैते ध्वनय इति। (वृ० प० ५७३)
एस णं कतिवण्णो जाव कतिफासे पण्णत्ते?

२३. जिन कहै वर्ण पंच पाय, जिम क्रोध कह्यो तिम माय।
ए पिण पुद्गल द्रव्य में आय रे।।

२३. गोयमा! पंचवण्णे (सं० पा०) जहेव कोहे।
(श० १२।१०५)

लोभ के सोलह नाम

२४. अहो भगवंत! लोभ ए देख, कह्यो नाम सामान्य संपेख।
तसु इच्छादि नाम विशेष रे।।

२४. अह भंते! लोभे
'लोभे' त्ति सामान्यं इच्छादयस्तद्विशेषाः। (वृ० प० ५७३)

२५. प्रथम नाम लोभ कहिवाय, इच्छा अभिलाषमात्रज थाय।
मूर्च्छा ममत्त भाव थी रखाय रे।।

२५. इच्छामुच्छा
तत्रेच्छा—अभिलाषमात्रं····मूर्च्छा—संरक्षणानुबन्धः। (वृ० प० ५७३)

२६. कांक्षा अणपामी वस्तु नीं चाहि, गृद्धि प्राप्त अर्थ रै मांहि।
आसक्ति गृद्धि अति थाइ रे।।

२६. कंखा गेही
कांक्षा—अप्राप्तार्थाशंसा 'गेहि' त्ति गृद्धिः—प्राप्तार्थेष्वासक्तिः। (वृ० प० ५७३)

२७. पामी वस्तु रखे हुवै नाश, एहवी इच्छा ते तृष्णा तास।
भिज्झा विषय नों ध्यान विमास रे।।

२७. तण्हा भिज्झा
'तण्ह' त्ति तृष्णा—प्राप्तार्थानामव्ययेच्छा 'भिज्ज' त्ति अभि—व्याप्त्या विषयाणां ध्यानं—तदेकाग्रत्वम्। (वृ० प० ५७३)

२८. अभिज्झा ते भिज्झा सरीस, पिण भाव में अंतर दीस।
तिणरो आगल न्याय कहीस रे।।

२८. अभिज्झा।
'अभिज्झ' त्ति न भिध्या अभिध्या भिध्यासदृशं भावान्तरं। (वृ० प० ५७३)

२९. भिज्झा स्थिर दृढ़पणं कहाय, ध्यान लक्षणपणुं ए पाय।
ध्यान एकाग्र विषय रै मांय रे।।

२९. तत्र दृढाभिनिवेशो भिध्या ध्यानलक्षणत्वात्तस्याः। (वृ० प० ५७३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. अभिज्झा अदृढ़पणेह, चित्त लक्षणपणें गिणेह।
ध्यान चित्त नों अर्थ सुणेह रे ।।
३१. स्थिर अध्यवसाय ते ध्यान, चित्त कहियै छै चल अध्यवसान।
कही वृत्तिकार इम वान रे ।।
३२. आसासणया आसीस कहायो, म्हारा सुत नैं वा शिष्य नैं ताह्यो।
अमकडी-अमकडी वरतु थायो रे ।।

३३ पत्थणया प्रार्थना कहाय, अर्थ वांछित पर प्रति ताय।
जाचै मांगै लोभ मन ल्याय रे ।।

३४. लालप्पणया करी लाल पाल, अति बोली नैं वचन विशाल।
मांगै लोभ करिनें न्हाल रे ।।

३५. कामासा शब्द रूप नीं आस, भोगासा गंध रस वलि फास।
यांरी आसाए विषय विमास रे ।।

३६. जीवियासा जीतव्य बहुमाण, तिणरी वांछा करै लोभ आण।
ए असंजम जीतव्य जाण रे ।।

३७. मरणासा किण ही अवस्थाय, लोभ अर्थे मरवूं वंछै ताय।
किणहिक परत में ए न दिखाय रे ।।

३८. नंदिरागे समृद्धिज पाय, आणै राग हरष अधिकाय।
सहु एकार्थ नाम कहाय रे ।।

३९. इम किता वर्णादिक हुंत ? जिन कहै पंच वर्ण पावंत।
जिम क्रोध तेम भावंत रे ।।
४०. दश बार पनर नैं सोल, इम तेपन नामज घोल।
प्रकृति मोह कर्म नीं चोल रे ।।
४१. चोकड़ी रा ए तेपन नाम, किण ही परत में बावन पाम।
द्रव्य पुद्गल रूपी तमाम रे ।।
४२. प्रभु ! पेज दोस राग द्वेष, कलह जाव मिथ्यादर्शन पेख।
किता वर्णादि यांमें सुलेख रे ।।

सोरठा

४३. पेज्ज प्रेम कहिवाय, स्नेह सुतादिक नैं विषे।
दोष द्वेष अधिकाय, भाव अप्रीति जाणवूं ।।
४४. प्रेम हासादिक पेख, तेहथी उपनां युद्ध नैं।
कहियै कलह विशेख, वृत्ति थकी ए आखियो ।।

४५. *जिम क्रोध विषे तिम कहियै, जाव च्यार फर्श यांमे लहियै।
रूपी पुद्गल द्रव्य में रहियै रे ।।

*लय : राणी भाखै सुण रे सूडा

३०. अदृढाभिनिवेशस्त्वभिध्या चित्तलक्षणत्वात्तस्याः ध्यानचित्तयोस्त्वयं विशेषः। (वृ० प० ५७३)

३१. "जं थिरमज्झवसाणं तं झाणं जं चलं तयं चित्तं" ति। (वृ० प० ५७३)

३२. आसासणया
'आसासणय' त्ति आशंसनं—मम पुत्रस्य शिष्यस्य वा इदमिदं च भूयादित्यादिरूपा आशीः। (वृ० प० ५७३)

३३. पत्थणया
'पत्थणय' त्ति प्रार्थनं—परं प्रतीष्टार्थयाञ्चा। (वृ० प० ५७३)

३४। लालप्पणया
'लालप्पणय' त्ति प्रार्थनमेव भृशं लपनतः। (वृ० प० ५७३)

३५. कामासा भोगासा
'कामास' त्ति शब्दरूपप्राप्तिसंभावना, 'भोगास' त्ति गंधादिप्राप्तिसंभावना। (वृ० प० ५७३)

३६. जीवियासा
'जीवितास' त्ति जीवितव्यप्राप्तिसंभावना। (वृ० प० ५७३)

३७. मरणासा
'मरणास' त्ति कस्याञ्चिदवस्थायां मरणप्राप्ति-सम्भावना। इदं च क्वचिन्न दृश्यते। (वृ० प० ५७३)

३८. नंदिरागे
'नंदिरागे' त्ति समृद्धौ सत्यां रागो—हर्षो नन्दिरागः। (वृ० प० ५७३)

३९. एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?
(सं० पा०) जहेव कोहे (श० १२।१०६)

४२. अह भंते ! पेज्जे दोसे कलहे जाव (सं० पा०) मिच्छादंसणसल्ले एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?

४३. 'पेज्जे' त्ति प्रेम-पुत्रादिविषयः स्नेहः 'दोसे' त्ति अप्रीतिः। (वृ० प० ५७३)

४४. कलहः—इह प्रेमहासादिप्रभवं युद्धं। (वृ० प० ५७३)

४५. गोयमा ! जहेव कोहे तहेव (सं० पा०) चउफासे पण्णत्ते ? (श० १२।१०७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

४६. 'आख्या पाप अठार, पाप पदारथ एह छै।
चौफर्शी अवधार, तिण सूं पुद्गल द्रव्य ए।।
४७. केई पाप नें ताय, जीव अजीव बिहुं तणी।
कहै तास पर्याय, मिथ्या वच है तेहनों।।
४८. दूजे ठाणे देख, रास दोय जिनवर कही।
जीव अजीव संपेख, तीजी रास कही नथी।।
४९. जे कहै तीजी रास, तिरासियो निन्हव तिको।
तसु केडायत तास, पर्याय कहै बेहुं तणी।।
५०. पाप अठारै मांहि, वर्णादिक जिन आखिया।
तिणसूं पुद्गल मांहि, प्रत्यक्ष देखो पाठ में।।
५१. वर्ण गंध रस फास, पुद्गल नां लक्षण कह्या।
उत्तराध्येन[1] विमास, अध्येन अठावीस में।।
५२. पुद्गल द्रव्य नों ताय, जीव अजीव बिहुं तणी।
किम कहियै पर्याय, अंतर न्याय आलोचियै।।' (ज० स०)
५३. *अथ हे प्रभु! प्राणातिपात, तेहथी विरमण निव्रत ख्यात।
टालै जीव हिंसा नें सुजात रे।।
५४. जाव परिग्रहवेरमण पेख, क्रोध-विवेग जाव विशेख।
मिथ्यादर्शनसल्य-विवेक रे।
५५. यांमें वर्ण किता जाव फास? जिन भाखै वरण न विमास।
गंध रस फर्श नहीं तास रे।।

सोरठा

५६. छांडे पाप अठार, त्याग तिको संवर अछै।
नहिं वर्णादिक च्यार, जीव तणी पर्याय ए।।
५७. वधादि-विरमण सार, जीव तणो उपयोग छै।
अमूर्त्तपणें उदार, वृत्तिकार इम आखियो।।

वा०—'अवन्ने' इत्यादि वधादि-विरमण जीव-उपयोग सरूप छै। अनै जीव-उपयोग ते अमूर्त्त। अमूर्त्तपणां थकी वधादि-वेरमण नें पिण अमूर्त्त कहियै। ते कारण थकी अवर्णादिपणो।

५८. 'पंचाश्रव नां त्याग, संवर कहियै तेहनें।
तेह अरूपी माग, तिणसूं संवर जीव द्रव्य।।
५९. जीव क्रिया बे भेद, सम्यक्त्व क्रिया धुर कही।
मिथ्या किरिया वेद, दूजे ठाणे देखलो।।
६०. त्याग सहित सुविचार, सम्यक्त्व शुद्ध श्रद्धा तिका।
क्रिया जीव व्यापार, संवर कहियै एहनें।।
६१. मिथ्याती विपरीत, सरधै ते मिथ्या क्रिया।
जीव परिणाम अनीत, धुर आश्रव मिथ्यात्व ए।।

४८. दो रासी पण्णत्ता, तं जहा—
जीवरासी चेव, अजीवरासी चेव। (ठाणं २।३९२)

५१. सद्दंधयारउज्जोओ पहा छायातवे इ वा।
वण्णरसगंधफासा पुग्गलाणं तु लक्खणं।।
(उत्तर० २८।१२)

५३. अह भंते! पाणाइवायवेरमणं

५४. जाव परिग्गहवेरमणं कोहविवेगे जाव मिच्छादंसण-सल्लविवेगे।

५५. एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते?
गोयमा! अवण्णे अगंधे अरसे अफासे पण्णत्ते।
(श० १२।१०८)

वा०—'अवन्ने' त्ति वधादिविरमणानि जीवोपयोगस्वरूपाणि जीवोपयोगश्चामूर्तोऽमूर्तत्वाच्च तस्य वधादिविरमणानाममूर्तत्वं तस्माच्चावर्णादित्वमिति।
(वृ० प० ५७३)

५९. जीवकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—
सम्मत्तकिरिया चेव मिच्छत्तकिरिया चेव।
(ठाणं २।३)

*लय : राणी भाखै सुण रे सूड़ा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६२. सम्यक्त्व नैं मिथ्यात, जीव क्रिया जिनवर कही।
तिणसूं ए अवदात, संवर आश्रव जीव छै॥
६३. अजीव किरिया दोय, संपराय इरियावही।
ते अजीव में होय, जीव क्रिया तिम जीव द्रव्य॥' (ज० स०)
६४. *शतक बारमें पंचमुद्देश, रह्यो पंचमुदेशो शेष।
ढाल बेसौ गुणसठमीं कहेस रे॥
६५. भिक्षु भारीमाल ऋषिराय, वारू गण-वृद्धि तास पसाय।
सुख 'जय-जश' हरष सवाय रे॥

ढाल : २६०

दूहा

१. जीव तणांज स्वरूप नैं, पूर्वे कह्यु प्रकार।
हिव तिणसूं लगतो कहूं, जीव तणोंज विचार॥

१. जीवस्वरूपविशेषमेवाधिकृत्याह— (वृ. प. ५७)

बुद्धि के चार प्रकार

*सुणो भव्य प्राणी रे,
वीर जिनेंद्र दयाल तणी वर वाणी रे॥ [ध्रुपदं]

२. अथ प्रभु ! बुद्धि उत्पत्तिया रे, विनयकी कर्मजा तास।
परिणामिया मांहै किता रे, वर्ण गंध रस फास ?

२. अह भंते ! उप्पत्तिया, वेणइया, कम्मया, पारिणामिया—एस णं कतिवण्णा जाव कतिफासा पण्णत्ता ?

दूहा

३. उत्पत्तीज प्रयोजनं, जेह बुद्धि नैं होय।
औत्पत्तिकी बुद्धि ते, शब्दारथ ए जोय॥

३. उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्याः सा औत्पत्तिकी। (वृ. प. ५७३)

४. प्रेरक पूछै स्वाम जी ! जे क्षयोपशम भाव।
अछै प्रयोजन एहनैं, उत्पत्ती केम कहाव ?

४. ननु क्षयोपशमः प्रयोजनमस्याः ? (वृ. प. ५७३)

५. गुरु भाखै ते सत्य कह्यु, भाव क्षयोपशम तेह।
अंतरंग सहु बुद्धि में, साधारण निश्चेह॥
६. इण हेतू थी एहनैं, वंछयो नहिं इहवार।
उत्पत्तीज प्रयोजनं, दाख्यो तास विचार॥

५,६. सत्यं, स खल्वन्तरंगत्वात्सर्वबुद्धिसाधारण इति न विवक्ष्यते। (वृ. प. ५७३)

७. शास्त्र कर्म अभ्यास जे, प्रमुख अन्य व्यापार।
तेह अपेक्षा नहिं इहां, उत्पत्तीज विचार॥

७. न चान्यच्छास्त्रकर्माभ्यासादिकमपेक्षत इति। (वृ. प. ५७३)

८. विनय सुश्रूषा गुरु तणी, ते कारण तसु होय।
अथवा विनय प्रधान तसु, ते वैनयकी जोय॥

८. विनयो—गुरुशुश्रूषा स कारणमस्यास्तत्प्रधाना वा वैनयिकी। (वृ. प. ५७३)

९. सीख्यो आचारज विना, तेह कर्म अवलोय।
आचारज पे धारियो, शिल्प कहीजै सोय॥

९. अनाचार्यकं कर्म्म साचार्यकं शिल्पं। (वृ. प. ५७३)

***लय : राजा राणी रंग थी रे**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. तथा कदाचित कर्म है, शिल्प नित्य व्यापार।
कर्म—कार्य थी ऊपनी, तेह कर्मजा धार ।।
११. परि ते सर्व प्रकार थी, नमन तेह परिणाम।
हिव कारण कहियै तसु, सुणो राख चित ठाम ।।
१२. अतिही दीर्घज काल नां, पूर्वापरार्थ परम।
अवलोकन आदिक थकी, उपनो आतम धरम ।।
१३. ते कारण जे बुद्धि नो, पारिणामिकी नाम।
बुद्धि च्यार प्रकार नीं, आखी त्रिभुवन स्वाम ।।

१४. *जिन भाखै तिमहीज छै रे, जाव फर्श नहिं पाय।
जीव धर्म कह्यो वृत्ति में रे, तिणसूं अमूर्त्त कहाय ।।

मति के चार प्रकार

सोरठा

१५. जीव धर्म विस्तार, आख्यो तेहथी हिव वली।
अवग्रहादि अधिकार, वलि उट्ठाणादिक कहूं ।।

१६. *अथ प्रभु ! जे अवग्रह जिको रे, ग्रहै सामान्यपणेह।
ईहा करै विचारणा रे, छता अर्थ री जेह ।।
१७. अवाय ते छता अर्थ नो रे, निश्चय करिवो विशेख।
धारणा ते वीसरै नहीं रे, यांमें किता वर्णादि लेख ?
१८. जिन भाखै इमहीज छै रे, जाव अफर्श संपेख।
चिउं बुद्धि नै मति चिउं कही रे, निर्जरा उज्जल लेख ।।

उत्थान आदि का स्वरूप

१९. अथ भगवंत ! उट्ठाण ते रे, ऊभो थायवो ताय।
कर्म ते गमनादिक क्रिया रे, बल तनु नीं समर्थाय ।।
२०. वीर्य उत्साह जीव नों रे, पुरुषाकार अभिमान।
पराक्रम तसु साधना रे, कार्य निपावै जान ।।
२१. वर्णादि एह विषे किता रे ? तिमहिज जाव अफास।
जीव धर्म तिण कारणैं रे, जीव राशि में विमास ।।

सोरठा

२२. 'कह्या अरूपी धार, उट्ठाण कर्मादिक भणी।
भाव जोग व्यापार, जीव राशि मांहे अछै ।।
२३. दशमां ठाणां मांय, जीव परिणामी भेद दश।
गति इंद्रिय कषाय, लेस जोग उपयोग वलि ।।
२४. ज्ञान दर्शण चारित्त, वेद परिणामी ए दशूं।
जीव राशि में थित्त, जीव तणां परिणाम है ।।
२५. गति-परिणामि धुर एह, भाव गती है जीव है।
नाम कर्म प्रकृति जेह, ते द्रव्य गति न गिणी इहां ।।

---

*लय : राजा राणी रंग थी रे

१०. कादाचित्कं वा कर्म शिल्पं तु नित्यव्यापारः ततश्च कर्म्मणो जाता कर्म्मजा। (वृ. प. ५७३)

११. परि—समन्तान्नमनं परिणामः। (वृ. प. ५७३)

१२,१३. सुदीर्घकालपूर्वापरार्थावलोकनादिजन्य आत्मधर्मः स कारणं यस्याः सा पारिणामिकी बुद्धिरिति वाक्यशेषः। (वृ. प. ५७३)

१४. गोयमा ! तं चेव जाव (सं. पा.) अफासा पण्णत्ता। (श. १२।१०९)
इयमपि वर्णादिरहिता जीवधर्म्मत्वेनामूर्त्तत्वात्। (वृ. प. ५७३)

१५. जीवधर्माधिकारादवग्रहादिसूत्रं कर्म्मादिसूत्रं। (वृ. प. ५७३)

१६. अह भंते ! ओग्गहे, ईहा

१७. अवाए, धारणा—एस णं कतिवण्णा जाव कतिफासा पण्णत्ता ?

१८. एवं चेव जाव (सं. पा.) अफासा पण्णत्ता। (श. १२।११०)

१९. अह भंते ! उट्ठाणे, कम्मे, बले।

२०. वीरिए, पुरिसक्कार-परक्कमे।

२१. एस णं कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?
तं चेव जाव (सं. पा.) अफासे पण्णत्ते। (श. १२।१११)

२३,२४. दसविधे जीवपरिणामे पण्णत्ते, तं जहा—
गतिपरिणामे, इंदियपरिणामे, कसायपरिणामे, लेसापरिणामे, जोगपरिणामे, उवओगपरिणामे णाणपरिणामे दंसणपरिणामे चरित्तपरिणामे वेयपरिणामे। (ठाणं १०।१८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. वलि इंद्रिय-परिणाम, भावे इंद्रिय जीव ए।
द्रव्य इंद्रिय ताम, अजीव ते न गिणी इहां।।
२७. वलि कषाय-परिणाम, भावे कषाय जीव ए।
द्रव्य कषाय तमाम, पाप प्रकृति न गिणी इहां।।
२८. लेश-परिणामी नाम, भावे लेस्या जीव ए।
पिण द्रव्य लेस्या ताम, पुद्गल ते न गिणी इहां।।
२९. आख्यो जोग-परिणाम, भाव जोग ए जीव है।
द्रव्य जोग जे ताम, रूपी ते न गिण्यो इहां।।
३०. उपयोग दर्शन ज्ञान, चारित ए गुण जीव नां।
जीव-परिणामी जान, जीव राशि मांहे अछै।।
३१. वेद-परिणामी देख, वेद भाव ए जीव है।
द्रव्य वेद संपेख, मोह प्रकृति न गिणी इहां।।
३२. ज्ञान-परिणामी जीव, तिम बीजा पिण जीव है।
पुद्गल द्रव्य अजीव, जीव-परिणामी में नथी।।
३३. तिण सूं जोग-परिणाम, भाव जोग ए जीव है।
उट्ठाण प्रमुखज ताम, इण न्याय अरूपी जिन कह्या।।
३४. पंचम आश्रव जोग, भावे जोग भणो कह्यो।
कर्म ग्रहै सुप्रयोग, जीव-परिणामी मांहि छै।।
३५. उट्ठाण प्रमुखज देख, ए पिण आश्रव जोग है।
भाव जोग संपेख, अशुभ जोग शुभ जोग बिहुं।।
३६. अशुभ जोग अवधार, सावज जीव व्यापार ए।
कहियै आश्रव द्वार, तेहथी पाप बंधै अछै।।
३७. वलि शुभ जोग उदार, निरवद जोग व्यापार छै।
निर्जरा कहियै सार, वलि आश्रव कहियै तसु।।
३८. शुभ जोगे पुन्य बंध, तिणसूं आश्रव पंचमो।
कर्म कटै तिण संध, करणी निर्जरा नीं कही।।
३९. जीव-परिणामी मांय, कषाय-परिणामी कह्यो।
भावे एह कषाय, कषाय आश्रव जीव इम।।
४०. जीव राशि में आय, जीव-परिणामी भेद दश।
अजीव राशि रै मांय, भेद अजीव-परिणामि दश।।
४१. बंधण गति संठाण, भेद वर्ण गंध रस फरस।
अगुरुलघु शब्द जाण, दश अजीव-परिणामि ए।।

४१. दसविधे अजीवपरिणामे पण्णत्ते, तं जहा—
बंधणपरिणामे, गतिपरिणामे, संठाणपरिणामे, भेद-परिणामे, वण्णपरिणामे, रसपरिणामे, गंधपरिणामे, फासपरिणामे, अगुरुलघुपरिणामे, सद्दपरिणामे।
(ठाणं १०।१९)

४२. 'अजीव राशि विमास, न्याय दृष्टि करि देखियै।
वर्ण गंध रस फास, ए जीव तिम अन्य पिण।।
४३. जीव राशि में थित्त, जीव-परिणामिक भेद दश।
ज्ञान दर्शन चारित्त, एह जीव तिम अन्य पिण।।
४४. तिणसूं भावे जोग, जीव-परिणामिक में कह्या।
उट्ठाण आदि प्रयोग, तास अरूपी जिन कह्या।।' [ज०स०]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अवकाशान्तर आदि में वर्णादिक की पृच्छा

वा०—हिवै ७ आकास ७ तनुवाय ७ घनवाय ७ घनोदधि ७ पृथ्वी—ए पंच प्रश्न करै छै। पहिलो अवकाशांतर पहिली अनै बीजी नरक पृथ्वी नै बीच कहियै। तेहनी अपेक्षाए सातमों अवकाशांतर सातमी पृथ्वी नीचै छै। तेहनै ऊपर सातमों तनुवाय। ते ऊपर सातमों घनवाय। ते ऊपर सातमों घनोदधि। ते ऊपर सातमीं पृथ्वी। इम ऊपरली पृथ्वी पिण अनुक्रम जाणवो। प्रथम सातमा अवकाशांतर नों प्रश्न कहै छै—

वा०—'सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे' त्ति प्रथमद्वितीयपृथिव्योर्यदन्तराले आकाशखण्डं तत्प्रथमं तदपेक्षया सप्तमं सप्तम्या अधस्तात्तस्योपरिष्टात् सप्तमस्तनुवातस्तस्योपरि सप्तमो घनवातस्तस्याप्युपरि सप्तमो घनोदधिस्तस्याप्युपरि सप्तमी पृथिवी।. (वृ. प. ५७४)

४५. *सातमा आकाश नैं विषे रे, प्रभु ! किता वर्णादि विमास ?
जिन भाखै इमहीज छै रे, यावत नहिं छै फास ।।

४५. सत्तमे णं भंते ! ओवासंतरे कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?
एवं चेव जाव (सं. पा.) अफासे पण्णत्ते । (श. १२।११२)

४६. प्रभु ! सप्तम तनुवाय में रे, किता वर्णादि विमास ?
जिन कहै प्राणातिपात ज्यूं रे, णवरं लहै अठ फास ।।

४६. सत्तमे णं भंते ! तणुवाए कतिवण्णे जाव कतिफासे पण्णत्ते ?
जहा पाणाइवाए नवरं (सं. पा.) अट्ठफासे पण्णत्ते ।

सोरठा

४७. तनुवायादिक तेह, अठफर्शी पुद्गलपणैं ।
बादर परिणत एह, सूक्षम प्राणातिपात है ।।

४७. तनुवातादीनां च पञ्चवर्णादित्वं पौद्गलिकत्वेन मूर्त्तत्वात् अष्टस्पर्शत्वं च बादरपरिणामत्वात् । (वृ. प. ५७४)

४८. *जिम सप्तम तनुवाय छै रे, तिम सप्तम घनवाय ।
घनोदधि इम सातमों रे, इम सप्तम पृथ्वी कहाय ।।

४८. एवं जहा सत्तमे तणुवाए तहा सत्तमे घणवाए घणोदधी पुढवी ।

४९. छठा अवकाशांतर नैं विषे रे, सप्तमी छठी रै बीच ।
वर्णादिक तिणमें नहीं रे, ए अजीव द्रव्य समीच ।।

४९. छट्ठे ओवासंतरे अवण्णे ।

५०. छठा तनुवाय नैं विषे रे, फुन छट्ठो घनवाय ।
घनोदधी छठी पृथ्वी रे, अष्ट फर्श तिण मांय ।।

५०. तणुवाए जाव छट्ठी पुढवी—एयाइं अट्ठफासाइं ।

५१. सप्तम पृथ्वी नीं कही रे, वक्तव्यता जिम जाण ।
इम जावप्रथम पृथ्वी लगे रे, कहिवूं सर्व पिछाण ।।

५१. एवं जहा सत्तमाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया तहा जाव पढमाए पुढवीए भाणियव्वं ।

सोरठा

५२. 'अवकाशांतर सात, वर्ण गंध रस फर्श नहीं।
अमूर्त्तपणैं विख्यात, स्थान जूजुआ ते कहूं ।।
५३. पहिली पृथ्वी हेठ, दूजी पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बीचज नेठ, आकाशांतर प्रथम है ।।
५४. दूजी पृथ्वी हेठ, तीजी पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बिच में नेठ, आकाशांतर द्वितीय छै ।।
५५. तीजी पृथ्वी हेठ, चउथो पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बिच में नेठ, आकाशांतर तृतीय छै ।।
५६. चउथी पृथ्वी हेठ, पंचम पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बिच में नेठ, आकाशांतर चतुर्थो ।।
५७. पंचम पृथ्वी हेठ, छठी पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बिच में नेठ, आकाशांतर पंचमो ।।
५८. छठी पृथ्वी हेठ, सप्तम पृथ्वी ऊपरे ।
ए बिहुं बिच में नेठ, आकाशांतर ए छठो ।।

*लय : राजा राणी रंग थी रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९. हिव सप्तम अवकाश, सप्तम पृथ्वी हेठ है।
पछै अलोक विमास, न्याय करी पहिछाणियै।।
६०. आकाशांतर ख्यात, ते ऊपर तनुवाय छै।
ते ऊपर घनवात, घनोदधि ते ऊपरे।।
६१. ते ऊपर पहिछाण, पृथ्वी सातूंई कही।
इण न्याये करि जाण, बिहुं बिच कह्यो आकाश नैं।।
६२. अवर्ण सप्त आकाश, तनु घनवाय घनोदधि।
पृथ्वी सप्त विमास, आठ फर्श त्यां में कह्या।।
६३. आकाशांतर सात, तेहनैं आधारे अछै।
कहियै जे तनुवात, आठ फर्श छै तेह में।।
६४. तनुवाय आधार विचार, अठफर्शी घनवाय छै।
घनवाय तणैं आधार, घनोदधि में फर्श अठ।।
६५. घनोदधी आधार, अठफर्शी सातूं पृथ्वी।
इण रीते सुविचार, आकाशादिक जाणज्यो।।'[ज०स०]

जंबूद्वीप आदि में वर्णादिक की पृच्छा

६६. *जंबूद्वीप नामा द्वीप में रे, यावत वलि कहिवाय।
सयंभूरमण समुद्र में रे, सौधर्म कल्प रै मांय।।
६७. जाव इसीपभारा पृथी रे, नरक नां नरकावास।
जाव वासा वैमानिक तणां रे, ए सहु में अठ फास।।

वा०—'जाव वेमाणियावासा' इहां यावत करण थकी असुरकुमारावासादि ग्रहवा, ते असुरकुमार नां भवन, वाणव्यंतर नां नगर, ज्योतिषी नां विमान तिरछा लोक नैं विषे। वलि ते ज्योतिषी नी नगरी राजधानी पिण तिरछा लोक में छै।

२४ दंडकों में वर्णादिक की पृच्छा

६८. हे प्रभु! नारक नैं विषे रे, वर्ण केतला पाय?
गंध रस फर्श केतला रे? उत्तर दे जिनराय।।
६९. वैक्रिय तेजस आसरी रे, पंच वर्ण गंध दोय।
पंच रसा अठ फर्श छै रे, बादर परिणत सोय।।

७०. कर्म कार्मण आसरी रे, पंच वर्ण गंध दोय।
पंच रसा चिउं फर्श छै रे, सूक्षम परिणत सोय।।

७१. जीव पडुच्च अवर्ण छै रे, यावत फर्श न पाय।
इम जाव थणियकुमार में रे, नारक जेम कहिवाय।।
७२. पूछा पृथ्वीकाय नीं रे, तब जिन भाखै तास।
ओदारिक तेजस आसरी रे, पंच वर्ण जाव अठ फास।।

७३. कार्मण आसरी जिम नेरिया रे, जीव आसरी तिमहीज।
इमज जाव चउरिंद्रिया रे, णवरं विशेष कहीज।।

***लय : राजा राणी रंग थी रे**

६६. जंबुद्दीवे दीवे जाव सयंभुरमणे समुद्दे, सोहम्मे कप्पे
६७. जाव ईसिपब्भारा पुढवी, नेरइयावासा जाव वेमाणियावासा—एयाणि सव्वाणि अट्ठफासाणि।
(श. १२।११३)

वा०—यावत्करणादसुरकुमारावासादिपरिग्रहः, ते च भवनानि नगराणि विमानानि तिर्यग्लोके तन्नगर्यश्चेति। (वृ. प. ५७४)

६८. नेरइयाणं भंते! कतिवण्णा जाव कतिफासा पण्णत्ता?
६९. गोयमा! वेउव्विय-तेयाइं पडुच्च पंचवण्णा दुगंधा पंचरसा अट्ठफासा पण्णत्ता।
वैक्रियतेजसशरीरे हि बादरपरिणामपुद्गलरूपे ततो बादरत्वात्तयोर्नारकाणामष्टस्पर्शत्वं। (वृ. प. ५७४)
७०. कम्मगं पडुच्च पंचवण्णा दुगंधा पंचरसा चउफासा पण्णत्ता।
कार्मणं हि सूक्ष्मपरिणामपुद्गलरूपमतश्चतुःस्पर्शं।
(वृ. प. २७४)
७१. जीवं पडुच्च अवण्णा जाव अफासा पण्णत्ता। एवं जाव थणियकुमारा। (श. १२।११४)
७२. पुढविकाइयाणं पुच्छा।
गोयमा! ओरालियतेयगाइं पडुच्च पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता।
७३. कम्मगं पडुच्च जहा नेरइयाणं। जीवं पडुच्च तहेव। एवं जाव चउरिंदिया, नवरं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४. वाउ विषे ओदारिक नें रे, वैक्रिय तेजस तास ।
ए तीनूं आश्री पंच वर्ण छै रे, जाव लहै अठ फास ।।
७५. शेष नरक जिम जाणज्यो रे, ते इहविध कहिवाय ।
फर्श च्यार कार्मण मझे रे, वर्णादि जीव में नांय ।।
७६. पंचेंद्रिय तिरखजोणिया रे, वाउकाय जिम जाण ।
मनुष्य तणी पूछा कियां रे, उत्तर दे जगभाण ।।

७७. धुर चिउं तनु आश्री कह्या रे, पंच वर्ण जाव अठ फास ।
च्यार फर्श कार्मण मझे रे, जीव अरूपी तास ।।

७८. व्यंतर नें वलि जोतिषी रे, वैमानिक वलि जोय ।
कहिवूं नारक नीं परै रे, सहु विरतंतज सोय ।।
७९. शत बारम देश पंचम तणो रे, बेसौ साठमीं ढाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

७४. वाउक्काइया ओरालिय-वेउव्विय-तेयगाइं पडुच्च पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता ।
७५. सेसं जहा नेरइयाणं ।

७६. पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा वाउक्काइया ।
(श. १२।११५)
मणुस्साणं—पुच्छा ।
७७. ओरालिय-वेउव्विय-आहारग-तेयगाइं पडुच्च पंच-वण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता । कम्मगं जीवं च पडुच्च जहा नेरइयाणं
७८. वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा नेरइया ।

ढाल : २६१

धर्मास्तिकाय आदि में वर्णादिक की पृच्छा

दूहा

१. वलि धर्मास्तीकाय में, जाव पोग्गल-परिवत्त[1] ।
ए सगला में वर्ण नहिं, जाव फर्श नहि तत्थ ।।

सोरठा

२. जाव शब्द थी ताय, अधर्मास्ति आगासत्थि ।
वलि पुद्गलास्तिकाय, अद्धा समयो आवलिका ।।
३. मुहूर्त्त इत्यादेह, परावर्त्त-पुद्गल लगे ।
अमूर्त्तपणैंज एह, वर्णादिक यांमें नथी ।।

दूहा

४. णवरं इतो विशेष छै, पुद्गलास्ति में तास ।
पंच वर्ण बे गंध छै, पंच रस अठ फास ।।

१. धम्मत्थिकाए जाव पोग्गलत्थिकाए—एए सव्वे अवण्णा ।

२,३. इह यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए अद्धासमए आवलिया मुहुत्ते' इत्यादि । (वृ. प. ५७४)

४. नवरं—पोग्गलत्थिकाए पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे पण्णत्ते ।

१. अंगसुत्ताणि (भाग २) में 'धम्मत्थिकाए जाव पोग्गलत्थिकाए' पाठ है। वृत्तिकार ने जाव की पूर्ति में पोग्गलत्थिकाए के बाद 'अद्धासमए आवलिया मुहुत्ते इत्यादि' लिखा है। इत्यादि शब्द सूचना देता है कि कुछ शब्द और हैं। जयाचार्य ने इसी शब्द के आधार पर काल के अन्तिम भेद 'पोग्गल-परिवत्त' तक का ग्रहण कर लिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कर्म, लेश्या और दृष्टि में वर्णादिक की पृच्छा

*हो प्रभुजी ! आप तणी बलिहारी ।। [ध्रुपदं]

५. ज्ञानावरणी ताय, कांइ यावत वलि अंतराय ।
आठ कर्म में तास, कांइ जाव लहै चिहुं फास ।।

५. नाणावरणिज्जे जाव अंतराइए—एयाणि चउफासाणि । (श १२।११६)

६. कृष्ण लेश्या नीं पृच्छा, हिवै जिन कहै सुण धर इच्छा ।
द्रव्य लेश्या में तास, पंच वर्ण जाव अठ फास ।।

६. कण्हलेसा णं भंते ! कतिवण्णा जाव कतिफासा पण्णत्ता ?
दव्वलेसं पडुच्च पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता ।

७. भाव लेश्या अंतर परिणाम, कांइ ते आश्रयी नें ताम ।
नहीं वर्ण गंध रस फास, इम जाव शुक्ल पिण तास ।।

७. भावलेसं पडुच्च अवण्णा अगंधा अरसा अफासा पण्णत्ता । एवं जाव सुक्कलेस्सा ।
भावलेश्या—आन्तरः परिणामः । (वृ. प. ५७४)

८. सम्यगदृष्टि मझार, कांइ मिथ्यादृष्टि विचार ।
सम्यगमिथ्या दृष्ट, ए तीन दृष्टि में इष्ट ।।

८. सम्मदिट्ठी मिच्छदिट्ठी सम्मामिच्छदिट्ठी ।

९. चक्षु अचक्षु दर्शण ताहि, अवधि केवल दर्शण मांहि ।
पांच ज्ञान नें तीन अज्ञान, वलि च्यार संज्ञा में जान ।।

९. चक्खुदंसणे, अचक्खुदंसणे, ओहिदंसणे, केवलदंसणे आभिणिबोहियनाणे जाव विब्भंगनाणे, आहारसण्णा जाव परिग्गहसण्णा—

१०. यां सगलां में तास, नहिं वर्ण गंध रस फास ।
कह्या वृत्ति में जीव-परिणाम, तिण सूं वर्णादिक नहिं ताम ।।

१०. एयाणि अवण्णाणि अगंधाणि अरसाणि अफासाणि ।

सोरठा

११. इहां कृष्ण लेश्यादि, परिग्रह संज्ञा अंत लग ।
अवर्णादि संवादि, जीव-परिणामपणां थकी ।।

११. इह च कृष्णलेश्यादीनि परिग्रहसंज्ञाऽवसानानि अवर्णादीनि जीवपरिणामत्वात् । (वृ. प. ५७४)

उदयभाव जीव-अजीव

१२. 'तीन दृष्टि रै मांय, वर्णादिक कह्या नथी ।
सम्यग-दृष्टि सुहाय, त्याग सहित संवर अछै ।।

१३. मिथ्यादृष्टि कहाय, भाव क्षयोपशम उदय वलि ।
ए बिहुं भावे थाय, देखो अनुयोगद्वार में ।।

१३. से किं तं खओवसमनिप्फण्णे ?……खओवसमिया मिच्छादंसणलद्धी…… (अणु. सू० २८५)
से किं तं जीवोदयनिप्फण्णे ?……मिच्छदिट्ठी । (अणु. सू० २७५)

१४. क्षयोपशम-निपन्न मांहि, दाखी मिथ्यादृष्टि नें ।
मिथ्याती री ताहि, भली-भली श्रद्धा तिका ।।

१५. मिथ्याती रै ताम, केइक बोल समा अछै ।
भाजन लारै नाम, मिथ्यादृष्टि कही तसु ।।

१६. क्षयोपशम निर्मल भाव, ते कारण ए निर्जरा ।
उज्जल लेख कहाव, जीव-परिणाम अमूर्त्त ए ।।

१७. उदय भेद बे जन्न, जीव-उदय-निप्पन प्रथम ।
अजीव-उदय-निष्पन्न, देखो अनुयोगद्वार में ।।

१७. से किं तं उदयनिप्फण्णे ? उदयनिप्फण्णे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—
जीवोदयनिप्फण्णे य अजीवोदयनिप्फण्णे य । (अणु. सू० २७४)

१८. जीव-उदय-निष्पन्न, कर्म तणांज उदा थकी ।
जीवपणेंज प्रपन्न, बोल तेतीस कह्या तिहां ।।

---

*लय : स्वामीजी थांरै दर्शन की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९. च्यार गति षट काय, वलि षट लेश कषाय चिउं।
तीन वेद कहिवाय, मिथ्यादृष्टि अविरती।।
२०. असन्नी नैं अन्नाण, आहारत्था संसारथा।
असिद्ध अकेवली जाण, छद्मस्थ सजोगी वली।।
२१. यां बोलां में जाण, मिथ्यादृष्टि कही तिका।
छै ऊंधी श्रद्धान, उदय भाव इण कारणे।।
२२. जीव तणां परिणाम, तिणसूं वर्णादिक नथी।
मिथ्यात आश्रव ताम, उदय भाव मिथ्यादृष्टि।।
२३. तेतीस बोलां मांय, च्यार गति भावे अछै।
भावे लेश कहाय, भाव कषाय रु वेद वलि।।
२४. भावे च्यार कषाय, कषाय आश्रव तेह छै।
मिथ्यादृष्टी ताय, मिथ्यात आश्रव में कह्यो।।
२५. सजोगी भावे जोग, आश्रव जोग कहीजियै।
अविरति अधिक अयोग, अविरत आश्रव तसु कह्यो।।
२६. अजीव-उदय-निष्पन्न, तेहनां भेदज तीस है।
पंच शरीर प्रपन्न, तनु-प्रयोग-परिणत पंच द्रव्य।।
२७. पंच वर्ण गंध दोय, फर्श अष्ट रस पंच वलि।
कर्म उदय थी जोय, अजीवपणैंज ऊपनां।।
२८. अजीव-उदय-निष्पन्न, अजीव राशि मांहे अछै।
तिम जीव-उदय-निष्पन्न, जीव राशि में जाणज्यो।।' [ज० स०]

शरीर, जोग और उपयोग में वर्णादिक की पृच्छा

२९. *ओदारिक तनु जाणी, वैक्रिय आहारक पिछाणी।
वलि तेजस में अठ फास, बादर परिणत सुविमास।।

२९. ओरालियसरीरे जाव तेयगसरीरे—एयाणि अट्ठफासाणि
औदारिकादीनि चत्वारि शरीराणि पञ्चवर्णादिविशेषणानि अष्टस्पर्शानि च बादर-परिणामपुद्गलरूपत्वात्। (वृ. प. ५७४)

३०. कर्म कार्मण ताहि, कांइ च्यार फर्श तिण मांहि।
ए सूक्षम परिणाम, पुद्गल रूपी छै ताम।।

३०. कम्मगसरीरे चउफासे।

३१. मनो योग वच योग, तिणमें च्यार फर्श सुप्रयोग।
सूक्षम परिणत सोय, कांइ द्रव्य जोग ए होय।।

३१. मणजोगे वइजोगे य चउफासे।

३२. काय जोग अठ फास, बादर परिणाम विमास।
पुद्गल रूपी जाणो, ए पिण द्रव्य जोग पिछाणो।।

३२. कायजोगे अट्ठफासे।

३३. साकार नैं अनाकार, ए बे उपयोग विचार।
नहि वर्णादिक त्यां मांय, ए तो जीव लक्षण कहिवाय।।

३३. सागारोवओगे अणागारोवओगे य अवण्णे। (श० १२।११७)

३४. च्यार फर्श जिण मांय, सूक्ष्म पुद्गल कहिवाय।
आठ फर्श जे होय, बादर पुद्गल द्रव्य सोय।।

३४. सर्वत्र च चतुःस्पर्शत्वे सूक्ष्मपरिणामः कारणं अष्ट-स्पर्शत्वे च बादरपरिणामः कारणं वाच्यमिति। (वृ. प. ५७४)

सब द्रव्यों में वर्णादिक की पृच्छा

३५. सर्व द्रव्य भगवान! धर्मास्तिकायादिक जान।
किता वर्णादिक पाय? हिव उत्तर दै जिनराय।।

३५. सव्वदव्वा णं भंते! कतिवण्णा जाव कतिफासा पण्णत्ता?
'सव्वदव्व' त्ति सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि। (वृ. प. ५७४)

*लय : स्वामीजी थांरै दर्शन की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. सर्व द्रव्य रे मांहि, कितलायक सहु द्रव्य ताहि।
पंच वर्ण जाव अठ फास, बादर पुद्गल द्रव्य राश ।।

३७. वलि सर्व द्रव्य में जाणी, कितलायक सहु द्रव्याणी।
पंच वर्ण जाव चिउं फास, सूक्षम परिणाम विमास।

३८. केइक सहु द्रव्य सोय, इक वर्ण एक गंध होय।
इक रस नैं बे फास, परमाणु आश्रयी तास ।।

सोरठा

३९. सूक्षम संबंधि सोय, च्यार फर्श ते मांहिला।
अविरुद्ध पावै दोय, ते देखाड़ै छै हिवै ।।

४०. स्निग्ध उष्ण उदार, अथवा स्निग्ध शीत वलि।
रूक्ष शीत सुविचार, तथा रूक्ष वलि उष्ण ह्वै ।।

४१. *केइक सर्व द्रव्य तास, नहिं वर्ण जाव नहिं फास।
धर्माधर्म आकाश, अद्धा जीवास्ति विमास ।।

सोरठा

४२. रह्या द्रव्य रे मांहि, प्रदेश नैं पर्याय फुन।
द्रव्य सूत्र कही ताहि, ए बिहुं सूत्र कहै हिवै ।।

४३. द्रव्य तणो जे जोय, निर्विभाग जे अंश है।
ते प्रदेश अवलोय, पर्यव धर्मज द्रव्य नुं ।।

४४. *सर्व प्रदेश पिण एम, वलि सहु पजवा पिण तेम।
सहु द्रव्य कह्या तिण रीत, कहिवा प्रदेश पजवा धर प्रीत ।।

४५. रूपी द्रव्य नां रूपी प्रदेश, रूपी पजवा सुविशेष।
अरूपी द्रव्य नां ताय, अरूपी छै प्रदेश पर्याय ।।

४६. अतीत काल में तास, नहिं वर्ण गंध रस फास।
एम अनागत काल, सर्व अद्धा पिण इम न्हाल ।।

सोरठा

४७. वर्णादिक विख्यात, ते अधिकार थकी हिवै।
आगल जे अवदात, तेहिज कहियै छै सुणो ।।

गर्भोत्पत्ति काल में वर्णादिक की पृच्छा

४८. *जीव गर्भ विषे भगवान! ऊपजतो छतो पिछान।
के वर्ण गंध रस फास, परिणाम परिणमै तास ।।

सोरठा

४९. परिणाम परिणमै जेह, स्वरूप प्रते जाए तिको।
कति वर्णादिरूपेह? परिणमै इम पूछ्युं अरथ ।।

*लय : स्वामीजी थांरे दर्शन की

---

३६. गोयमा! अत्थेगतिया सव्वदव्वा पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता।
बादरपुद्गलद्रव्याणि प्रतीत्योक्तं सर्वद्रव्याणां मध्ये कानिचित्पंचवर्णादीनीति भावार्थः। (वृ. प. ५७४)

३७. अत्थेगतिया सव्वदव्वा पंचवण्णा जाव चउफासा पण्णत्ता
'चउफासा' इत्येतच्च पुद्गलद्रव्याण्येव सूक्ष्माणि प्रतीत्योक्तम्। (वृ. प. ५७४)

३८. अत्थेगतिया सव्वदव्वा एगवण्णा एगगंधा एगरसा दुफासा पण्णत्ता।
'एगगंधे' त्यादि च परमाण्वादिद्रव्याणि प्रतीत्योक्तम्। (वृ. प. ५७४)

३९. स्पर्शद्वयं च सूक्ष्मसम्बन्धिनां चतुर्णां स्पर्शानामन्यतरदविरुद्धं भवति। तथाहि— (वृ. प. ५७४)

४०. स्निग्धोष्णलक्षणं स्निग्धशीतलक्षणं वा रूक्षशीतलक्षणं रूक्षोष्णलक्षणं वेति। (वृ. प. ५७४)

४१. अत्थेगतिया सव्वदव्वा अवण्णा जाव अफासा पण्णत्ता।
'अवण्णे' त्यादि च धर्मास्तिकायादिद्रव्याण्याश्रित्योक्तं। (वृ. प. ५७४)

४२. द्रव्याश्रितत्वात्प्रदेशपर्यवाणां द्रव्यसूत्रानन्तरं तत्सूत्रं। (वृ. प. ५७४)

४३. तत्र च प्रदेशा—द्रव्यस्य निर्विभागा अंशाःपर्यवास्तु धर्माः। (वृ. प. ५७४)

४४. एवं सव्वपएसा वि सव्वपज्जवा वि।

४५. इह च मूर्त्तद्रव्याणां प्रदेशाः पर्यवाश्च मूर्त्तद्रव्यवत्पञ्चवर्णादयः अमूर्त्तद्रव्याणां चामूर्त्तद्रव्यवदवर्णादय इति। (वृ. प. ५७४)

४६. तीयद्धा अवण्णा जाव अफासा। एवं अणागयद्धा वि सव्वद्धा वि। (श. १२।११८)

४७. वर्णाद्यधिकारादेवेदमाह— (वृ. प. ५७४)

४८. जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे कतिवण्णं कतिगंधं कतिरसं कतिफासं परिणामं परिणमइ?

४९. परिणामं परिणमइ' त्ति स्वरूपं गच्छति कतिवर्णादिना रूपेण परिणमतीत्यर्थः। (वृ. प. ५७५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५०. *जिन कहै वर्ण रस पंच, बे गंध फर्श अठ संच।
गर्भ में उत्पत्ति काल, परिणाम परिणमै न्हाल ।।

वा०—गर्भ में ऊपजवा नैं काले जीव शरीर नैं पांच वर्णादिकपणां थकी गर्भ उपजवण काल नैं विषे जीव परिणाम नैं पांच वर्णादिपणो जाणवो। ते माटे पंच वर्ण, दोय गंध, पंच रस, आठ फरस परिणामे परिणमै।

५०. गोयमा! पंचवण्णं, पंचरसं अट्ठफासं परिणामं परिणमइ। (श. १२।११९)

वा०—'पंचवन्नं' ति गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवशरीरस्य पञ्चवर्णादित्वात् गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवपरिणामस्य पञ्चवर्णादित्वमवसेयमिति। (वृ. प. ५७५)

सोरठा

५१. गर्भ उपजतो जीव, वर्ण गंध रस फर्श करि।
विचित्रपणैं अतीव, परिणाम परिणमै इम कह्यो ।।
५२. जे विचित्र परिणाम, जीव तणें उपजै अछै।
तिण कारण थी ताम, ते देखाड़ै छै हिवै ।।

५१. अनन्तरं गर्भं व्युत्क्रामन् जीवो वर्णादिभिर्विचित्रं परिणामं परिणमतीत्युक्तम्।
५२. अथ विचित्रपरिणाम एव जीवस्य यतो भवति तद्दर्शयितुमाह—

कर्म विभक्ति पद

५३. *कर्म थकी प्रभु! जीव, पिण कर्म बिना न अतीव।
विभक्तिभाव कहिवावै, विभाग रूप जे भावै ।।
५४. नारक तिरि मनु देव, जे भव नैं विषे स्वयमेव।
नानारूप परिणाम, परिणमैं प्राप्ति हुवै ताम ।।
५५. तथा तिण प्रकार करेह, 'कम्मओ णं जए' पाठ कहेह।
कर्म थकी जे जाणी, जगत—जीव-समूह पहिछाणी ।।
५६. ते ते नारकादि भाव प्रतेह, जाये ते भाव परिणमेह।
पिण कर्म बिना नहिं ताहि, विभाग भाव परिणमैं नांहि ।।
५७. जिन कहै हंता जेह, कर्म थी तिमज जाव परिणमेह।
पिण कर्म बिना जे ताहि, विभाग परिणमैं नांहि ।।

वा०—कम्मओ णं जीवे ए प्रथम पाठ में समचै जीव नीं पूछा कीधी। अनैं 'कम्मओ णं जए' द्वितीय पाठ में जीव द्रव्य नों हीज विशेष जंगम अभिधान ते जीव त्रस नीं पूछा, एहवूं जणाय छै।

५८. सेवं भंते! जाणी, प्रभु! सत्य तुम्हारी वाणी।
शतक बारमा नों जाण, अर्थ पंचमुद्देशक वाण ।।
५९. ढाल बेसौ इकसठमीं ताय, भिक्षु भारीमाल ऋषिराय।
तास प्रसादे जोय, 'जय-जश' सुख संपति होय ।।

द्वादशशते पंचमोद्देशकार्थः ।।१२।५।।

५३. कम्मओ णं भंते! जीवे नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ?
'विभत्तिभावं' विभागरूपं भावं। (वृ. प. ५७५)
५४. नारकतिर्यग्मनुष्यामरभवेषु नानारूपं परिणाममित्यर्थः परिणमति गच्छति। (वृ. प. ५७५)
५५,५६. कम्मओ णं जए नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ?
'कम्मओ णं जए' त्ति गच्छति तांस्तान्नारकादिभावानिति 'जगत्' जीवसमूहः। (वृ. प. ५७५)
५७. हंता गोयमा! कम्मओ णं तं चेव जाव (सं. पा.) परिणमइ। (श. १२।१२०)

वा०—जीवद्रव्यस्यैव वा विशेषो जंगमाभिधानो जगन्ति जंगमान्याहुरिति वचनादिति। (वृ. प. ५७५)

५८. सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति। (श. १२।१२१)

ढाल : २६२

दूहा

१. पूर्व उद्देशक अंत में, जीव विभक्तीभाव।
चिउं गति में नानापणो, पामै कर्म प्रभाव ।।
२. ते राहु ग्रसते समय, चंद्र तणो पिण थाय।
ए आशंका टालवा, षष्ठमुदेशे वाय ।।

१. जगतो विभक्तिभावः कर्म्मत इति पञ्चमोद्देशकान्ते उक्तम्। (वृ. प. ५७५)
२. स च राहुग्रसने चन्द्रस्यापि स्यादिति शंकानिरासाय षष्ठोद्देशकमाह— (वृ. प. ५७५)

*लय : स्वामीजी थांरे दर्शन की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंद्रसूर्य ग्रहण पद

*जय जय जय जय ज्ञान जिनेंद्र नों ।। (ध्रुपदं)

३. नगर राजगृह जाव गोतम कहै,
प्रभु ! बहु जन मांहोमांय हो, जिनेश्वर ।
इम कहै जाव परूपै इहविधे,
ते आगल कहिवाय हो, जिनेश्वर ।।

४. इम निश्चै राहु चंद्र प्रति ग्रहै, ते किणविध ए ताय हो ?
जिन कहै बहु जन अण्णमन्न इम कहै, यावत मिथ्या वाय हो ।।

सोरठा

५. इहां मिथ्या अप्रमाण, वलि कुत्सित प्रवचन तणां ।
संस्कार थी जाण, तसु उपनीतपणां थकी ।

६. राहु तणो विमान, चंद्र विमान प्रते ग्रसै ।
पिण सुर नों न ग्रसान, ते तो विमान में अछै ।।

७. ग्रासक राहु देव, चंद्र देव ग्रसनीय इम ।
इम संभव न कहेव, आश्रयमात्रपणां थकी ।।

८. मनुष्य-भवन जिम न्हाल, एणे इण घर नें ग्रस्यो ।
इम को कहै संभाल, एहवो दृष्ट ववहार सत्य ।।

९. ते निश्चै आच्छाद्य-आच्छादक भावे थकां ।
वर्त्तै ए संवाद्य, पिण ते न हुवै अन्यथा ।।

१०. आच्छादनभावेन, ग्रास विवक्षा नैं विषे ।
इण अभिप्राय कथेन, तो पिण विरुधपणो नथी ।।

राहू का वर्णन

११. *हूं पिण गोतम !इम आखूं अछूं, जाव परूपूं एम हो, मुनीश्वर ।
इम निश्चै करि राहु देवता, महर्द्धिकजाव सुप्रेम हो, मुनीश्वर ।।

१२. महेसक्खे ते महाईश्वर कह्यु, वर वत्थधारक जेह हो ।
धरणहार बलि प्रधान माल्य नां, वर गंधधारक एह हो ।।

१३. वर आभरण तणो धारी तिको, राहु नां नव नाम हो ।
श्रृंघाटक ए पहिलो नाम छै, जटिल क्षत्रक अभिराम हो ।।

१४. खरक दद्दुर नें मगर छठो कह्यो, मछ अरु कच्छप जान हो ।
कृष्णसर्प ए नवमों नाम छै, वर पुन्याईवान हो ।।

१५. विमान पंच वर्ण राहु तणां, कृष्ण नील कहिवाय हो ।
लोहित वर्ण अनें हालिद्द वली, शुक्ल वर्ण सुखदाय हो ।।

१६. कृष्ण वर्ण जे राहु विमान छै, दीवा नो जे लोय हो ।
तेहनां मल नों वर्ण तिसी कह्यो, आभा कांती होय हो ।
[खंजन वर्णाभे कहियै तसु] ।।

१७. नील वर्ण जे राहु विमान छै, काचो तुंबो तेह हो ।
तेहनां वर्ण सरीखी कांति छै, लाउय वर्णाभे जेह हो ।।

*लय : पूजजी पधारो हो नगरी सेविया

---

३. रायगिहे जाव एवं वयासी—बहुजणे णं भंते !
अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ

४. एवं खलु राहू चंदं गेण्हति, एवं खलु राहू चंदं गेण्हति । (श. १२।१२२)
से कहमेयं भंते ! एवं ? गोयमा ! जण्णं से बहुजणे अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहंसु ।

५. इह तद्वचनमिथ्यात्वमप्रमाणकत्वात् कुप्रवचन-संस्कारोपनीतत्वाच्च । (वृ. प. ५७६)

६,७. ग्रहणं हि राहुचन्द्रयोर्विमानापेक्षं, न च विमानयो-र्ग्रसिकग्रसनीयसम्भवोऽस्ति आश्रयमात्रत्वात् । (वृ. प. ५७६)

८. नरभवनानामिव अथेदं गृहमनेन ग्रस्तमिति दृष्टस्तद्-व्यवहार: ? सत्यम् ।

९. स खल्वाच्छाद्यादकभावे सति नान्यथा ।

१०. आच्छादनभावेन च ग्रासविवक्षायामिहापि न विरोध इति । (वृ. प. ५७६)

११. अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवं परूवेमि —एवं खलु राहू देवे महिड्ढीए जाव

१२. महेसक्खे वरवत्थधरे वरमल्लधरे वरगंधधरे ।

१३. वराभरणधारी
राहुस्स णं देवस्स नव नामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा —सिंघाडए जडिलए खतए

१४. खरए दद्दुरे मगरे मच्छे कच्छभे कण्हसप्पे ।

१५. राहुस्स णं देवस्स विमाणा पंचवण्णा पण्णत्ता, तं जहा—किण्हा नीला लोहिया हालिद्दा सुक्किला ।

१६. अत्थि कालए राहुविमाणे खंजणवण्णाभे पण्णत्ते । 'खंजणवन्नाभे' त्ति खञ्जनं—दीपमल्लिकामलस्तस्य यो वर्णस्तद्वदाभा यस्य तत्तथा । (वृ. प. ५७६)

१७. अत्थि नीलए राहुविमाणे लाउयवण्णाभे पण्णत्ते । 'लाउयं' ति तुम्बिका तच्चेहापक्वावस्थ ग्राह्यमिति । (वृ. प. ५७६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. रक्त वर्ण जे राहु विमान छै, मजीठ वर्ण समान हो।
तेहनीं आभा कांति अछै तसु, मजीठ वर्णाभे जान हो ।।
१९. पीत वर्ण जे राहु विमान छै, हालिद्द वर्ण समान हो।
छै तसु आभा कांति जेहनीं, हालिद्द वर्णाभ पिछान हो ।।
२०. शुक्ल वर्ण जे राहु विमान छै, भसम छार नीं राश हो।
उज्जल राख सरीखी जेहनीं, आभा कांति उजास हो।
[भसम राख वर्णाभ कह्यो तसु ।।]

२१. राहुदेव जिवारे जायनें, अतिचारे करि आम हो।
दाख्यो एह विशेषण गति तणो, पाछो वलतो ताम हो ।।
[कृष्ण वर्णादि विमान बेसी करी]।

२२. चार स्वभाव गती करि जावतो, ए बिहुं पद करि ताय हो।
गति स्वाभाविक कही राहु तणी, हिव अन्य गति कहिवाय हो ।।

२३. वलि राहु वैक्रिय करतो थको, वलि परिचारण करंत हो।
ए बिहुं पद करि अतिही उतावलो, प्रवर्त्तमान जद हुंत हो ।।
२४. अधिक स्थूल चेष्टा करिनें तदा, निज विमान प्रति जाणहो।
चलावतो ते असमंजसपणें, राहू देव पिछाण हो ।।
२५. ए बिहुं पद करि अस्वाभाविकपणैं, विमान नीं गति हुंत हो।
पूर्व दिशि चंद्र-लेश्या ढांक नें, पश्चिम दिशि जावंत हो ।।

सोरठा

२६. निज विमाण करेह, शशि-विमान आवरण छै।
वली चंद्र नीं जेह, दीप्ति आच्छादन भाव थी ।।
२७. *तिण अवसर राहु नीं अपेक्षया, पूर्व दिशि पहिछाण हो।
चंद्र आतम प्रति देखाडै अछै, दीसै चंद्र विमाण हो ।।
२८. चंद्र तणीज अपेक्षाए करी, पश्चिम दिशि पहिछाण हो।
राहु आतम प्रति देखाड़तो, दीसै राहु विमाण हो ।।

सोरठा

२९. राहु विमान जिवार, पूर्व चंद्र विमान प्रति।
ढांकी नें तिण वार, जाये पश्चिम दिशि विषे ।।
३०. पूरव दिशे तिवार, चंद्र विमाण दीसै अछै।
पश्चिम दिशि अवधार, राहू विमाण दीसतो ।।
३१. एक आलावो एह, इम सगली दिशि जाणवो।
संक्षेपे करि तेह, कहियै छै ते सांभलो ।।

३२. *राहु जिवारे अतिचारे करी, जई पाछो आवंत हो।
अथवा स्वभाव गति करि जावतो, वली वैक्रिय करंत हो ।।
३३. परिचारण ते काम-क्रीडा प्रते, करतो गमन करंत हो।
चंद्रलेश्या पश्चिम दिशि आवरी, पूरव दिशि जावंत हो ।।

*लय : पूजजी पधारो हो नगरी सेविया

१८. अत्थि लोहिए राहुविमाणे मंजिट्ठवण्णाभे पण्णत्ते।

१९. अत्थि पीतए राहुविमाणे हालिद्दवण्णाभे पण्णत्ते।

२०. अत्थि सुक्किलए राहुविमाणे भासरासिवण्णाभे पण्णत्ते।
'भासरासिवण्णाभे' त्ति भस्मराशिवर्णाभं।
(वृ. प. ५७६)

२१. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा।
'आगच्छमाणे व' त्ति गत्वाऽतिचारेण ततः प्रतिनिवर्त्तमानः कृष्णवर्णादिना विमानेनेति शेषः।
(वृ. प. ५७६)

२२. गच्छमाणे वा।
'गच्छमाणे व' त्ति स्वभावचारेण चरन्, एतेन च पदद्वयेन स्वाभाविकी गतिरुक्ता। (वृ. प. ५७६)

२३. विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा।

२४. विसंस्थुलचेष्टया स्वविमानमसमञ्जसं वलयति।
(वृ. प. ५७६)

२५. एतच्च द्वयमस्वाभाविकविमानगतिग्रहणायोक्तमिति।
(वृ. प. ५७६)
चंदलेस्सं पुरत्थिमेणं आवरेत्ता णं पच्चत्थिमेणं वीतीवयइ।

२६. स्वविमानेन चन्द्रविमानावरणे चन्द्रदीप्तेरावृत्तत्वाच्चन्द्रलेश्यां पुरस्तादावृत्य (वृ. प. ५७६)

२७,२८. तदा णं पुरत्थिमेणं चंदे उवदंसेति पच्चत्थिमेणं राहू
राह्वापेक्षया पूर्वस्यां दिशि चन्द्र आत्मानमुपदर्शयति चन्द्रापेक्षया च पश्चिमायां राहुरात्मानमुपदर्शयतीत्यर्थः।

३२,३३. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पच्चत्थिमेणं आवरेत्ता णं पुरत्थिमेणं वीतीवयइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. तिण अवसर पश्चिम दिशि चंद्रमा, स्वविमान देखावंत हो।
पूर्व दिशि राहु दीसै अछै, द्वितीय आलावो हुंत हो।।

३४. तदा णं पच्चत्थिमेणं चंदे उवदंसेति पुरत्थिमेणं राहू।

३५. इम जिम पूर्व पश्चिम नों कह्यो, प्रथम आलावो पेख हो।
अथवा पश्चिम पूर्व करि कह्यो, द्वितीय आलावो विशेख हो।

३५. एवं जहा पुरत्थिमेणं पच्चत्थिमेण य दो आलावगा भणिया।

३६. जिम ए दोय आलावा आखिया, तिमहिज कहिवा ताम हो।
दक्षिण उत्तर दिशि संघात ही, दोय आलावा आम हो।।

३६. एवं दाहिणेणं उत्तरेण य दो आलावगा भाणियव्वा।

सोरठा

३७. दक्षिण उत्तर साथ, तृतीय आलावो जाणवो।
उत्तर दक्षिण संघात, आलावो चउथो अछै।।

३८. *इमहिज कूण ईशाण अनैं वली, नैरुतकूण संघात हो।
भणवा दोय आलावा विधि करी, वारू रीत विख्यात हो।।

३८. एवं उत्तरपुरत्थिमेणं दाहिणपच्चत्थिमेण य दो आलावगा भाणियव्वा।

सोरठा

३९. ईशाण नैरुत जाण, ते साथ आलावो पंचमो।
नैरुत नै ईशाण, छट्ठो आलावो अछै।।

४०. *इमहिज आग्नेयकूण अनैं वली, वायव्यकूण संघात हो।
कहिवा दोय आलावा विधि करि, पूरव रीत विख्यात हो।।

४०. एवं दाहिणपुरत्थिमेणं उत्तरपच्चत्थिमेण य दो आलावगा भाणियव्वा।

सोरठा

४१. आग्नेय वायव्य आम, तेह संघाते सातमों।
वायव्य उत्तर ताम, ते साथ आलावो आठमों।।

४२. हिव अष्टम आलाव, कहियै छै इण रीत सूं।
निसुणो निर्मल न्याव, वारू जिन वच विमल छै।।

४३. *जाव तिवारे वायव्यकूण नी, चंद्र लेश्या प्रति ताय हो।
ढांकी नैं जे राहु विमाण ते, अग्निकूण में जाय हो।।

४४. तिण अवसर ते वायव्यकूण में, दीसै चंद्र विमाण हो।
अग्निकूण में राहू दीसतो, अष्टम आलावो जाण हो।।

४४. एवं चेव जाव तदा णं उत्तरपच्चत्थिमेणं चंदे उवदंसेति दाहिणपुरत्थिमेणं राहू।

सोरठा

४५. इह विध गमन करंत, राहू चंद्र विमाण नैं।
जे हुवै तेह कहंत, चित्त लगाई सांभलो।।

४५. एवंविधस्वभावतायां च राहोश्चन्द्रस्य यद्भवति तदाह— (वृ. प. ५७६)

४६. *राहु जिवारे जई नैं आवतो, अथवा जातो जेह हो।
वैक्रिय परिचारण करतो वलि, चंद्र लेश्या ढांकेह हो।।

४६. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं आवरेमाणे-आवरेमाणे चिट्ठइ।

वा०—'आवरेमाणे-आवरेमाणे चिट्ठइ' त्ति। इहां द्विवचन कह्यु, ते चिट्ठइ इण क्रिया नां विशेषणपणां थकी।

वा० 'आवरेमाणे' इत्यत्र द्विर्वचनं तिष्ठतीति क्रियाविशेषणत्वात्। (वृ. प. ५७६)

४७. मनुष्य लोक में मनुष्य कहै तदा, इम निश्चै करि एह हो।
राहु महाग्रह चंद्र प्रतै ग्रहै, इम जन वाण वदेह हो।।

४७. तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति—एवं खलु राहू चंदं गेण्हति, एवं खलु राहू चंदं गेण्हति।

४८. राहु जिवारे आतो जावतो, वैक्रिय क्रीड करंत हो।
चंद्र विमान तणी लेश्या प्रते, ढांकी पास गछंत हो।।

४८. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं आवरेत्ता णं पासेणं वीतीवयइ।

---

*लय : पूजजी पधारो हो नगरी सेविया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४९. मनुष्य लोक में मनुष्य कहै तदा, इम निश्चै करि एह हो।
चंद्र राहु नीं कुक्षि भेदी अछै, इम जन वाण वदेह हो।

४९. तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति -एवं खलु चंदेणं राहुस्स कुच्छी भिन्ना, एवं खलु चंदेणं राहुस्स कुच्छी भिन्ना।

सोरठा

५०. राहु अंश में चंद, पइट्ठो इम कह्यु जोइजै।
जन कहै चंद सुरिंद, भेदी कुक्षि राहू तणी।।

५०. राहोरंशस्य मध्येन चन्द्रो गत इति वाच्यं, चन्द्रेण राहो कुक्षिभिन्न इति व्यपदिशन्तीति।
(वृ. प. ५७६)

५१. *राहु जिवारे आवत-जावतो, वैक्रिय क्रीड करंत हो।
चंद्र लेश्या प्रति ढांकी आवरी, जब ते पाछो वलंत हो।।

५१. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा, गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं आवरेत्ता णं पच्चोसक्कइ।

५२. मनुष्य लोक में मनुष्य वदै तदा, इम निश्चै करि एह हो।
राहु चंद्र प्रते छोड्यो अछै, इम जन वाण वदेह हो।।

५२. तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति—एवं खलु राहुणा चंदे वंते, एवं खलु राहुणा चंदे वंते।
'वंते' त्ति 'वान्तः' परित्यक्तः। (वृ. प. ५७६)

५३. राहु जिवारे आवत-जावतो, वैक्रिय क्रीड़ करंत हो।
नीचे चिउं दिशि वलि चिउं विदिशि में,
चद लेश्या ढांकी रहंत हो।।

५३. जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं अहे सपक्खि सपडिदिसिं आवरेत्ता णं चिट्ठइ।
'सपक्खि सपडिदिसं' ति सपक्षं—समानदिग् यथा भवति सप्रतिदिक्—समानविदिक् च यथा भवति।
(वृ. प. ५७६)

५४. मनुष्य लोक में मनुष्य वदै तदा, इम निश्चै करि एह हो।
राहु चंद्र प्रते ग्रस्यो ग्रह्यो, इम जन वाण वदेह हो।।

५४. तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति—एवं खलु राहुणा चंदे घत्थे, एवं खलु राहुणा चंदे घत्थे।
(श. १२।१२३)

सोरठा

५५. आवरण मात्रज एह, स्वाभाविक जे चंद नो।
राहु ग्रसन कहेह, पिण ग्रसन क्रिया निष्पन्न नथी।।

५५. अत आवरणमात्रमेवेदं वैस्रसिकं चन्द्रस्य राहुणा ग्रसनं न तु कार्मणमिति। (वृ. प. ५७६)

५६. *बारम शतक देश छठो कह्यो, दोयसौ बासठमीं ढाल हो।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' मंगलमाल हो।।

ढाल २६३

दूहा

१. राहू करिकै चंद्र नों, पूर्वे ग्रसन कहेह।
हिव राहू नों भेद वलि, कहियै निसुणो जेह।।

१. अथ राहोर्भेदमाह— (वृ. प. ५७६)

राहू के भेद

२. किते प्रकारे हे प्रभु! राहु परूप्यो स्वाम!
जिन कहै दोय प्रकार जे, राहू कह्योज ताम।।

२. कतिविहे णं भंते! राहू पण्णत्ते?
गोयमा! दुविहे राहू पण्णत्ते, तं जहा—

*लय : पूजजी! पधारो हो नगरी सेविया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. प्रथम ध्रुव-राहू कह्यो, चंद्र समीपे जेह।
सदा काल जे संचरै, ते ध्रुव-राहु कहेह ।।

४. तथा अमावस पूर्णिमा, पर्व दिवस पहिछाण।
चंद्र सूर्य नो ग्रहण ह्वै, पर्व-राहु ते जाण ।।

५. *ध्रुव-राहू तिहां जे कह्यु, बिद पख नी जे पडिवा
ते दिन थी प्रारंभी, हो लाल।
राहू पोता नैं पनर भागे करी, पनर भाग तन लेश्या
आवरतो दिन-दिन अंभी, हो लाल ।।

६. जे पहिली तिथि नैं विषे, प्रथम भाग आवरतो
वलि बीजी तिथि रै मांह्यो, हो लाल ।।
बीजो भागज आवरै, तीजी तिथि आवरतो
कांइ तीजो भाग कहायो, हो लाल।

७. जाव पनरमा दिन विषे, भाग पनरमों ढांकी
कांइ राहु रहै तिवारे, हो लाल।
चरम समय चंद्र रक्त ह्वै, सर्व थकी आच्छादित
कांइ हुवै अमावस सारे, हो लाल ।।

८. अवशेष थाकता समय में, पडिवा थी चवदश लग
रक्त विरक्तज चंदो, हो लाल।
कांयक चंद इम ढांकियो, कांयक ते अणढाक्यो
रक्त विरक्त कथंदो, हो लाल ।।

९. तेहिज चंद्र लेस्या प्रते, शुक्ल पक्ष पडिवा थी
प्रारंभी राहू तेही, हो लाल।
पाछो ऊसरवा थकी, पंच रु दश भागे करि
कांइ चंद्र देखोड़तो जेही, हो लाल ।।

१०. जे पहिली तिथि नैं विषे, पहिलो भाग उघाड़ै
कांइ बीजी तिथि में बीजो, हो लाल।
जाव पूनम दिन पनरमे, भाग पनरमों प्रगटै
ए अंतिम भाग कहीजो, हो लाल ।।

११. शुक्ल पक्ष पूनम विषे, चंद्र विरक्त हुवै छै
कांइ सर्व थकीज उघाड़ो, हो लाल।
अवशेष समय में चंद्रमा, अणाच्छादित आच्छादित
कांइ रक्त विरक्त तिवारो, हो लाल।

सोरठा

१२. इहां भावार्थ एह, शशधर नां मंडल तणां।
सोलै भाग करेह, एक उघाड़ो नित रहै ।।
१३. अलपपणां थी जाण, तास विवक्षा नहिं करी।
पनर भाग पहिछाण, ते माटे इहां आखिया ।।
१४. कृष्ण पक्ष में राहु, इक-इक भागज आवरै।
शुक्ल पक्ष अधिकाहु, इक-इक भागज ऊघड़ै ।।

* लय : पातक छानो नहीं रहै

३. धुवराहू य।
यश्चन्द्रस्य सदैव संनिहितः संचरति स ध्रुवराहुः।
(वृ. प. ५७६)

४. पव्वराहू य।
यस्तु पर्व्वणि—पौर्णमास्यामावास्ययोश्चन्द्रादित्य-योरुपरागं करोति स पर्वराहुरिति। (वृ. प. ५७७)

५. तत्थ णं जे से धुवराहू से णं बहुलपक्खस्स पाडिवए पन्नरसतिभागेणं पन्नरसतिभागं चंदलेस्सं आवरेमाणे-आवरेमाणे चिट्ठइ।

६. पढमाए पढमं भागं बितियाए बितियं भागं।
'पढमाए' त्ति प्रथमतिथौ। (वृ. प. ५७७)

७. जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं। चरिमसमये चंदे रत्ते भवइ
सर्वथाऽप्याच्छादित इत्यर्थः। (वृ. प. ५७७)

८. अवसेसे समये चंदे रत्ते वा विरत्ते वा भवइ।
अवशेषे समये प्रतिपदादिकाले चन्द्रो...... आच्छा-दितानाच्छादित इत्यर्थः। (वृ. प. ५७७)

९. तमेव सुक्कपक्खस्स उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे चिट्ठइ।
'तमेव' त्ति तमेव चन्द्रलेश्यापंचदशभागं शुक्लपक्षस्य प्रतिपदादिष्विति गम्यते 'उपदर्शयन् उपदर्शयन्' पञ्चदशभागेन स्वयमपसरणतः प्रकटयन् प्रकटयं-स्तिष्ठति। (वृ. प. ५७७)

१०. पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं।

११. चरिमसमये चंदे विरत्ते भवइ, अवसेसे समये चंदे रत्ते वा विरत्ते वा भवइ
'चरिमसमये' त्ति पौर्णमास्यां चन्द्रो विरक्तो भवति सर्वथैव शुक्लीभवतीत्यर्थः सर्वथाऽनाच्छादितत्वादिति।
(वृ. प. ५७७)

१२. इह चायं भावार्थः षोडशभागीकृतस्य चन्द्रस्य षोडशो भागोऽवस्थित एवास्ते। (वृ. प. ५७७)

१४. ये चान्ये भागास्तान् राहुः प्रतितिथ्येकैकं भागं कृष्णपक्षे आवृणोति शुक्ले तु विमुञ्चतीति।
(वृ. प. ५७७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. 'ज्योतिष्करंडक' पेख, तेहमें पिण इम आखियो।
सोल भाग सुविशेख, कीजै चंद्र विमान नां।।
१६. इक योजन नां जाण, इकसठ भागज कीजियै।
छप्पन भाग पिछाण, चंद्र विमाण कह्यो अछै।।
१७. राहू तणो विमान, ग्रह विमानपणें करी।
जोजन अर्द्ध प्रमाण, ते किम ढाकै सर्वथा।।
१८. मोटो चंद्र विमान, राहू लघु विमान ते।
दिवस पनरमे जाण, किम सहु ढांके न्याय हिव।।
१९. योजन अर्द्ध विमान, ते प्रमाण बाहुल्यपणें।
राहु ग्रह नों जाण, अधिक प्रमाण जणाय छै।।

२०. अन्य गणि आखै एम, लघु पिण विमाण राहु नों।
महा अतितमिश्र तेम, तसु किरणसमूह करि आवरै।।
२१. केइक दिन लग धार, ध्रुव-राहु विमान ते।
दीसै वृत आकार, ग्रहण विषे पर्व-राहु जिम।।
२२. केयक दिन लग सोय, राहु वृत्त न दीसतो।
स्यूं कारण इहां होय? उत्तर कहियै छै तसु।।
२३. जे दिन विषे सुजान, अतिही तम कर व्याप्त शशी।
ते दिन राहु विमान, वृत्त आकारे दीसतो।।
२४. जे दिन राहू जान, अति तम कर नहिं व्याप्त शशि।
चंद्र विशुद्ध पिछान, ते दिन वृत्त न दीसतो।।
२५. ए सगलो विस्तार, आख्यो म्हैं टीका थकी।
वदै केवली सार, तेहिज सत्य पिछाणज्यो।।
२६. *पर्व-राहु तिहां चंद्र नों, जघन्य हुवै षट मासे
उत्कृष्टो मास बयांली, हो लाल।
इमहिज सूर्य नों अछै, पिण णवरं उत्कृष्टो
कांइ कह्यो वर्ष अडताली, हो लाल।।

शशि-आदित्य-पद

२७. किण अर्थे भगवंत जी! चंद्र प्रतै इम चारू
शशि नामैं किम कहियै, हो लाल।
जिन भाखै सुण गोयमा! चंद्र ज्योतिषि इंद्रज
कांइ ज्योतिषिराय सलहियै, हो लाल।।
२८. मृग चिह्न छै जेहनैं, तेह मृगांक विमाने
शशि रहियै तास आधारे, हो लाल।
कंता मनहर देव छै, मनहर छै चिउं देव्यां
कांइ सोल सहस्र परिवारे, हो लाल।।

१५. उक्तञ्च ज्योतिष्करण्डके—सोलसभागे काऊण। (वृ. प. ५७७)

१६-१८. ननु चन्द्रविमानस्य पञ्चैकषष्टिभागन्यूनयोजनप्रमाणत्वाद् राहुविमानस्य च ग्रहविमानत्वेनार्द्धयोजनप्रमाणत्वात्कथं पञ्चदशे दिने चन्द्रविमानस्य महत्त्वेनेतरस्य च लघुत्वेन सर्वावरणं स्यात् इति। (वृ. प. ५७७)

१९. यदिदं ग्रहविमानानामर्द्धयोजनमिति प्रमाणं तत्प्रायिकं, ततश्च राहोर्ग्रहस्योक्ताधिकप्रमाणमपि विमानं संभाव्यते। (वृ. प. ५७७)

२०. अन्ये पुनराहुः—लघीयसोऽपि राहुविमानस्य महता तमिस्ररश्मिजालेन तदावियत इति। (वृ. प. ५७७)

२१,२२. ननु कतिपयान् दिवसान् यावद् ध्रुवराहुविमानं वृत्तमुपलभ्यते ग्रहण इव कतिपयांश्च न तथैति किमत्र कारणं? अत्रोच्यते। (वृ. प. ५७७)

२३. येषु दिवसेष्वत्यर्थं तमसाऽभिभूयते शशी तेषु तद्विमानं वृत्तमाभाति। (वृ. प. ५७७)

२४. येषु पुनर्नाभिभूयतेऽसौ विशुद्धचमानत्वात् तेषु न वृत्तमाभाति। (वृ. प. ५७७)

२६. तत्थ णं जे से पव्वराहू से जहण्णेणं छण्हं मासाणं उक्कोसेणं बायालीसाए मासाणं चंदस्स अडयालीसाए संवच्छराणं सूरस्स। (श. १२।१२४)
सूरस्याप्येवं नवरमुत्कृष्टतयाऽष्टचत्वारिंशता संवत्सराणामिति। (वृ. प. ५७७)

२७. से केणट्ठणं भंते! एवं वुच्चइ—चंदे ससी, चंदे ससी?
गोयमा! चंदस्स णं जोइसिंदस्स जोइसरण्णो

२८. मियंके विमाणे कंता देवा, कंताओ देवीओ

---

*लय: पातक छानो नहीं रहै

१. गाथा १११

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. मनहर आसन शयन छै, थंभ भंड अरु मात्रज
उपगरण मनोहर जाणी, हो लाल ।
पोतै पिण चंद्र इंद्र ते, सोम्य अरुद्र आकारे
अथवा नीरोग पिछाणी, हो लाल ।।

२९. कंताइं आसण-सयण-खंभ-भंडमत्तोवगरणाइं अप्पणा वि य णं चंदे जोइसिंदे जोइसराया सोमे

३०. कांति सोभाग सहीत छै, तिणसूं ए बहु जन नै
कांइ वल्लभ अतिही लागै, हो लाल ।
दर्शण प्रेमकारी अछै, स्यां माटे ? तसु उत्तर
कांइ सुंदर रूपज सागै, हो लाल ।।

३०. कंते सुभए पियदंसणे सुरूवे

३१. तिण अर्थे करि चंद्र नैं, श्री सोभा करि सहितज
वर्त्तै ते शशि कह्यु छै, हो लाल ।
कांति सहित निज सुर सुरी, नाम तास गुणनिप्पन
कांइ शब्दे करि लह्यु छै, हो लाल ।।

३१. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—चंदे ससी, चंदे ससी । (श. १२।१२५)

३२. किण अर्थे भगवंत जी ! द्वितीय नाम सूर्य नो
कांइ आदित्य तास कहीजै, हो लाल ।
जिन भाखै सुण गोयमा ! समय आवलिकादिक नीं
कांइ सूर्य आदि लहीजै, हो लाल ।।

३२. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—सूरे आदिच्चे, सूरे आदिच्चे ?
गोयमा ! सूरादिया णं समया इ वा आवलिया इ वा

सोरठा

३३. दिवस निशादिक जाण, काल तणां जे भेद नों ।
निर्विभाग पहिछाण, तेह अंश ए समय छै ।।
३४. तिण प्रकार कर तेह, सूर्य उदय अवधे करी ।
दिवस रात्रि नों जेह, प्रारंभ कर्त्ता समय छै ।।

३५. *यावत अवसर्पिणी तणी, वलि उत्सर्प्पिणी केरी
कांइ आदि प्रथम रवि लहियै, हो लाल ।
तिण अर्थे करी जाव ही, सूर तणो आदित्यज
कांइ अपर नाम इम कहियै, हो लाल ।।

३५. जाव ओसप्पिणी इ वा उस्सप्पिणी इ वा । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—सूरे आदिच्चे, सूरे आदिच्चे । (श. १२।१२६)

३६. हे प्रभु ! इंद्र जोतिषी तणो, ज्योतिषी नों ए राजा
कांइ चंद्र महासुखदाई, हो लाल ।
अग्रमहिषी तसु केतली ? दशम शत पंचमुदेशे
दाख्यूं तिम इहां कहाई, हो लाल ।।

३६. चंदस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो कति अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?
जहा दसमसए (भ० १०।९०)

३७. यावत ते निश्चै करी, सभा सुधर्मा मांही
मिथुन न सेवै न्हाली, हो लाल ।
तिहां पाठ कहिवो इतला लगे, सूरज नें पिण तिमहिज
कांइ कहिवो सर्व संभाली, हो लाल ।।

३७. जाव नो चेव णं मेहुणवत्तियं । सूरस्स वि तहेव । (श. १२।१२७)

३८. देश बारम छट्ठा तणो, ढाल दोयसौ ऊपर
कांइ त्रेसठमीं ए आखी, हो लाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' सरस संपदा
कांइ निर्मल रूड़ी राखी, हो लाल ।।

*लय : पातक छानो नहीं रहै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल २६४

दूहा

१. पूर्वे अग्रमहेषिओ, चंद सूर्य नीं सार।
आखी हिव तसु सुख तणो, कहियै छै अधिकार।।

चन्द्रसूर्य-कामभोगपद

*जिनदेव अनुग्रह कीजे, लाल स्वामजी ! (ध्रुपदं)

२. चंद सूर्य ए जाणी, लाल स्वामजी !
ज्योतिषी नां इंद्र पिछाणी जी।

३. काम भोग किसा कहिवाया, लाल स्वामजी !
भोगवता विचरै राया जी ?

४. जिन भाखै सुण धर खंतो, लाल गोयमा !
हूं दाखूं दे दृष्टंतो जी।
[सुविनीत शिष्य सुण वाणी, लाल गोयमा !]

५. कोइ एक पुरुष पुन्यवंतो, लाल स्वामजी !
ते केहवो छै बलवंतो जी।।

६. वय जोवन प्रथम बखाणी, लाल गोयमा !
तेहनैंज उदय पहिछाणी जी।।

७. बल प्राण तत्र जे तिष्ठे, लाल गोयमा !
तत्काल जवानी इष्टे जी।।

८. सुंदर एहवीज संघाते, लाल गोयमा !
पाणिग्रहण कियो रलियाते जी।।

९. विवाह कियां नैं न्हालो, लाल गोयमा !
त्यां नैं हुवो थोड़ोइज कालो जी।।

१०. चित द्रव्य कमावण धरियो, लाल गोयमा !
प्रदेश विषे संचरियो जी।।

११. वर्ष सोल लग वसियो, लाल गोयमा !
ते द्रव्य तणो अति तिसियो जी।।

१२. तिहां द्रव्य अर्थ बहु पायो, लाल गोयमा !
हिय बाध्यो हरष सवायो जी।।

१३. सहु कारज करिवा सोई, लाल गोयमा !
अति समर्थ ते अवलोई जी।।

१४. सहु द्रव्य साथ लै ताह्यो, लाल गोयमा !
निज घर आवण ऊम्ह्यायो जी।।

१५. घर शीघ्रपणें आवंतो, लाल गोयमा !
मन पूर्ण मोद पावंतो जी।।

१६. निर्विघ्नपणें घर आयो, लाल गोयमा !
मारग में नहिं लूंटायो जी।।

२,३. चंदिम-सूरिया णं भंते ! जोइसिंदा जोइसरायाणो केरिसए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?

४,५. गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे

६,७. पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे।
'पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे' त्ति 'प्रथमयौवनोत्थाने' प्रथमयौवनोद्गमे यद्बलं—प्राणस्तत्र यस्तिष्ठिति स तथा। (वृ. प. ५७९)

८,९. पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थाए भारियाए सद्धिं अचिरवत्त-विवाहकज्जे।

१०,११. अत्थगवेसणयाए सोलसवासविप्पवासिए।

१२. से णं तओ लद्धट्ठे

१३. कयकज्जे

१४-१६. अणहसमग्गे पुणरवि नियगं गिहं हव्वमागए।

*लय : सुखपाल सिंघासण लायज्यो राज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. वलि स्नान वलिकर्म कीधा, लाल गोयमा !
कोतुक तिलकादि प्रसीधा जी ।।
१८. दधि अक्षत द्रोबज धारी, लाल गोयमा !
वलि सरसव आदि विचारी जी ।।
१९. मंगलीक अर्थ ए साजे, लाल गोयमा !
दुःस्वप्न हरण नैं काजे जी ।।
२०. सहु अलंकार करि अंगो, लाल गोयमा !
तनु थयो विभूषित चंगो जी ।।
२१. पछै भोजन-मंडप आयो, लाल गोयमा !
ते भोजन महासुखदायो जी ।।
२२. मनगमतो भोजन जाणी, लाल गोयमा !
ते थालीपाक पिछाणी जी ।।
२३. रूड़ी पर तेह पचायो, लाल स्वामजी !
ते सिद्ध अन्न कहिवायो जी ।।
२४. व्यंजन दश अष्ट प्रकारो, लाल गोयमा !
तिण करी सहित उदारो जी ।।
२५. भोजन एहवो पहिछाणी, लाल गोयमा !
भोगविये छतेज जाणी जी ।।
२६. वसिवा नैं घर ते आयो, लाल गोयमा !
तसुं वर्णन अधिक कहायो जी ।।
२७. महाबल उद्देशे जाण्यो, लाल गोयमा !
तेहवो घर इहां बखाण्यो जी ।।
२८. यावत सेज्या सुखदाई, लाल गोयमा !
उपचार सहित अधिकाई जी ।।
२९. ते सेज्या विषे सुपीतो, लाल गोयमा !
तेहवी जे रमण सहीतो जी ।।
३०. शृंगार तणो घर नारी, लाल गोयमा !
रूड़ो आकार विचारी जी ।।
३१. तसु वेष मनोहर चारू, लाल गोयमा !
सुंदर अति निपुण उदारू जी ।।
३२. जाव कलित सहित कहिवायो, लाल गोयमा !
इहां जाव शब्द रै मांह्यो जी ।।
३३. हसवा नीं जाणज डाही, लाल गोयमा !
चेष्टा करि रमण सुहाई जी ।।
३४. सुंदर मंजुल मृदु वाणी, लाल गोयमा !
बोलण नैं अधिक सयाणी जी ।।
३५. वलि नेत्र विकार विलासो, लाल गोयमा !
जाणै सुंदर सुखवासो जी ।।
३६. बोलिवूं परस्पर जाणैं, लाल गोयमा !
वलि मर्म वचन पहिछाणै जी ।।
३७. अति निपुण युक्ति अधिकाई, लाल गोयमा !
उपचार काम नीं डाही जी ।।

१७-१९. ण्हाए कयबलिकम्मे-कयकोउय-मंगल-पायच्छित्ते

२०. सव्वालंकारविभूसिए

२२,२३. मणुण्णं थालिपागसुद्धं

२४,२५. अट्ठारसवंजणाकुलं भोयणं भुत्ते समाणे

२६,२७. तंसि तारिसगंसि वासघरंसि वण्णओ महब्बले कुमारे (भ. ११।१५७)

२८. जाव (सं. पा.) सयणोवयारकलिए।

२९. ताए तारिसियाए भारियाए

३०,३१. सिंगारागारचारूवेसाए

३२. जाव (सं. पा.) कलियाए

३३-३७. संगय-गय-हसिय-भणिय-चेट्ठिय-विलास-सललिय-संलाव-निउणजुत्तोवयारकुसलाए ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. तसु युगल पयोधर आछा, लाल गोयमा !
घन पीवर पुष्ट सुजाचा जी ।।
३९. वर जघन गुह्य प्रदेशो, लाल गोयमा !
ते पिण सुंदर सुविशेषो जी ।।
४०. मुख वदन हस्त पग जासो, लाल गोयमा !
वलि नेत्र मनोहर तासो जी ।।
४१. लावण्य रूप अधिकाई, लाल गोयमा !
वय जोवणपणैं सुहाई जी ।।
४२. विलास कलित ते सहितं, लाल गोयमा !
ए जाव शब्द में लहितं जी ।।
४३. जंबूद्वीपपन्नत्ति[1] प्रकास्यो, लाल गोयमा !
तेहथी ए मुझनैं भास्यो जी ।।
४४. अनुरागवंत ते नारी, लाल गोयमा !
प्रीतम सूं प्रेम अपारी जी ।।
४५. भरतार प्रीत जो तोड़ै, लाल गोयमा !
तो पिण आ अधिकी जोड़ै जी ।।
४६. जो विविध प्रकारे छेड़ै, लाल गोयमा !
चालै पति नां मन केड़ै जी ।।
४७. ते एहवी नार संघातो, लाल गोयमा !
सुख विलसै हरष धरातो जी ।।
४८. मनगमता शब्द विलासो, लाल गोयमा !
वर रूप गंध रस फासो जी ।।
४९. मनुष्य संबंधी सारो, लाल गोयमा !
काम भोग पंच प्रकारो जी ।।
५०. भोगवतो विचरै तेही, लाल गोयमा !
ते रमण संग रतगेही जी ।।
५१. हे गोतम ! ते नर न्हालो, लाल गोयमा !
पुंवेद नुं उपशमकालो जी ।।
५२. ए शुक्र क्षरण प्रस्तावे, लाल गोयमा !
साता सुख किसो इक पावे जी ?
५३. इम पूछ्यो भगवंत धामी, लाल गोयमा !
हिव बोलै गोतम स्वामी जी ।।
५४. मोटो सुख साता पावै, लाल स्वामजी !
गोतम ए उत्तर भावै जी ।।
५५. तब बोल्या वलि भगवंतो, लाल गोयमा !
हे श्रमण आउखावंतो जी ।।
५६. तेह पुरुष नां जाणी, लाल गोयमा !
काम भोग थकी पहिछाणी जी ।।
५७. काम भोग व्यंतर नां इष्टो, लाल गोयमा !
एत्तो अनंतगुणां सुविशिष्टो जी ।।

१. ३।१५

३८-४२. सुंदरथण-जघण-वयण-कर-चरण-नयण-लावण्ण-रूव-जोव्वण-विलासकलियाए

४४. अणुरत्तए

४५,४६. अविरत्ताए मणाणुकूलाए सद्धिं
'अविरत्ताए' त्ति विप्रियकरणेऽप्यविरक्तया 'मणाणुकूलाए' त्ति पतिमनसोऽनुकूलवृत्तिकया । (वृ. प. ५७९)

४८-५०. इट्ठे सद्दे फरिसे रसे रूवे गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरेज्जा ।

५१,५२. से णं गोयमा ! पुरिसे विउसमणकालसमयंसि केरिसयं सायासोक्खं पच्चणुब्भवमाणे विहरइ ?
'विउसमणकालसमयंसि' त्ति व्यवशमनं—पुंवेद-विकारोपशमस्तस्य यः कालसमयः स तथा तत्र रतावसान इत्यर्थः । (वृ. प. ५७९)

५४. ओरालं समणाउसो !

५५-५७. तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो वाणमंतराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

५८. एत्तो कहितां जाण, कह्यो स्वरूपज पुरुष नों।
तसु काम भोग थी माण, व्यंतर नां अनंतगुण विशिष्ट ।।

५९. एत्तो शब्द आख्यात, किणहिक पुस्तक मेंज छै।
वृत्ति थकी विख्यात, आखी छै ए वारता ।।

६०. *ते वाणव्यंतर नां न्हाली, लाल गोयमा !
काम भोग थकी सुविशाली जी ।।

६१. असुरिंदज वर्जी ताह्यो, लाल गोयमा !
सुर भवनपति नां कहिवायो जी ।।

६२. तसु काम भोग छै इष्टो, लाल गोयमा !
एत्तो अनंतगुणां सुविशिष्टो जी ।।

६३. असुरिंद वर्ज भवनपति, लाल गोयमा !
तसु काम भोग थी छै अति जी ।।

६४. काम भोग असुर नां इष्टो, लाल गोयमा !
एत्तो अनंतगुणां सुविशिष्टो जी ।।

६५. जे असुर देव सुविचारी, लाल गोयमा !
तसु काम भोग थी धारी जी ।।

६६. ग्रहगण नक्षत्र बखाणी, लाल गोयमा !
तारारूप जोतिषी जाणी जी ।।

६७. तसु काम भोग अति इष्टो, लाल गोयमा !
एत्तो अनंतगुणां सुविशिष्टो जी ।।

६८. ग्रहगण नक्षत्र यावत, लाल गोयमा !
तसु काम भोग थी पावत जी ।।

६९. चंद्र सूर्य ज्योतिषीराया, लाल गोयमा !
ज्योतिषी ना इंद कहाया जी ।।

७०. तसु काम भोग अति इष्टो, लाल गोयमा !
एत्तो अनंतगुणां सुविशिष्टो जी ।।

७१. इंद चंद सूर्य अधिकारी, लाल गोयमा !
ज्योतिषी नां राजा भारी जी ।।

७२. एहवा काम भोग सुखकंदा, लाल गोयमा !
भोगवता विचरै इंदा जी ।।

७३. सेवं भंते ! सुखदाणी, लाल गोयमा !
प्रभु ! सत्य तुम्हारी वाणी जी ।।

७४. एम कही शिर नामी, लाल गोयमा !
जाव विचरै गौतम स्वामी जी ।।

७५. द्वादशम शतक नों दाख्यो, लाल गोयमा !
अर्थ छठे उद्देशे आख्यो जी ।।

७६. बे सय चौसठमी सारं, लाल सुगुण जी !
आ तो आखी ढाल उदारं जी ।।

५८. 'एत्तो' त्ति शब्दो योज्यते ततश्चैतेभ्य उक्तस्वरूपेभ्यो व्यन्तराणां देवानामनन्तगुणविशिष्टतया चैव कामभोगा भवन्तीति । (वृ. प. ५७९)

५९. क्वचित्तु एत्तो शब्दो नाभिधीयते । (वृ. प. ५७९)

६०-६२. वाणमंतराणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा ।

६३,६४. असुरिंदवज्जियाणं भवणवासियाणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरकुमाराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा ।

६५-६७. असुरकुमाराणं देवाणं कामभोगेहिंतो गहगणनक्खत्त-तारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा ।

६८-७०. गहगणनक्खत्त जाव (सं. पा.) कामभोगेहिंतो चंदिम-सूरियाणं जोतिसियाणं जोतिसराईणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा ।

७१,७२. चंदिम-सूरिया णं गोयमा ! जोतिसिंदा जोतिसरायाणो एरिसे कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति । (श. १२।१२८)

७३. सेवं भंते ! सेवं भंते !

७४. त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं, वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जाव (सं. पा.) विहरइ । (श. १२।१२९)

---

*लय : सुखपाल सिंहासन लायज्यो राज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७. भिक्षु भारीमाल ऋषिराया, लाल सुगुणजी !
'जय-जश' सुख हरष सवाया जी ।।

द्वादशशते षष्ठोद्देशकार्थः ।।१२।६।।

ढाल : २६५

दूहा

१. छठे उदेशे अंत में, चंद्रादिक नां जाण।
अतिशय करिनै सुख कह्या, वारू अधिक वखाण ।।

२. चंद्रादिक तो लोक नां, अंश विषे अवलोय।
लोक अंश में जीव नों, जनम मरण पिण होय ।।

३. ते जनम मरण री वारता, जीव तणो पहिछाण।
सप्तमुद्देशक नैं विषे, कहियै तेह विनाण ।।

४. तिण काले नै तिण समय, यावत गोतम स्वाम।
वीर प्रभू नै इम कहै, कर जोड़ी शिर नाम ।।

जीवों का जन्म-मृत्यु पद

*वीर प्रभु वागरै इम जीव भम्यो भव मांहि ।। (ध्रुपदं)

५. प्रभु! लोक मोटो कह्यो केतलो जो ? तब भाखै भगवान।
महामोटो लोक परूपियो जी, बहु वस्तू नों स्थान ।।

६. जे पूरव दिशि नैं विषे जी, असंख्याता कोड़ाकोड़।
जोजन लगै ए लोक छै जी, इमहिज दक्षिण जोड़ ।।

७. इमहिज पश्चिम दिशि विषे जी, उत्तर दिशि पिण एम।
इमहिज ऊंची दिशि विषे जी, कहिवो पूरव जेम ।।

८. इम नीची दिशि नैं विषे जी, असंख्याता कोड़ाकोड़।
जोजन लांबपणैं अछै जी, चोड़पणैं पिण जोड़ ।।

९. एवड़ा महामोटा लोक में जी, परमाणु परिमित पिण प्रदेश-
एहवो छै, जिहां ए जीवड़ो जी, भव भमतो सुविशेष ।।

१०. जनम मूल पाम्यो नहीं जी, अथवा मूओ पिण नांय ?
कृपा करो मुझ ऊपरे जी, उत्तर द्यो जिनराय !

११. जिन भाखै सुण गोयमाजी ! अर्थ समर्थ नहिं एह।
किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो जी ? हिव जिन उत्तर देह ।।

१२. प्रभु दृष्टांत देई कहै जी, कोई पुरुष सुविशेख।
सय अजा अर्थे करै जी, मोटो वाड़ो एक ।।

---

१. अनन्तरोद्देशके चन्द्रादीनामतिशयसौख्यमुक्तम्। (वृ. प. ५७९)

२,३. ते च लोकस्यांशे भवन्तीति लोकांशे जीवस्य जन्ममरणवक्तव्यताप्ररूपणार्थः सप्तमोद्देशक उच्यते। (वृ. प. ५७९)

४. तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी—

५. के महालए णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?
गोयमा ! महतिमहालए लोए पण्णत्ते—

६. पुरत्थिमेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ, दाहिणेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ।

७. एवं पच्चत्थिमेण वि, एवं उत्तरेण वि, एवं उड्ढं पि।

८. अहे असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खंभेणं। (श. १२।१३०)

९,१०. एयंसि णं भंते ! एमहालगंसि लोगंसि अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा, न मए वा वि ?

११. गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। (श. १२।१३१)
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—

१२. गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे अया-सयस्स एगं महं अया-वयं करेज्जा।
'अयावयं' ति अजाव्रजम् अजावाटकमित्यर्थः। (वृ. प. ५८०)

---

*लय : जम्बू कह्यो मान लै रे जाया !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. छाली घालै ते वाड़ा मझे जी, जघन्य एक दोय तीन।
उत्कृष्ट सहस्र अजा भणी जी, करै प्रक्षेप संकीन।।

१३. से णं तत्थ जहण्णेणं एक्कं वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं अया-सहस्सं पक्खिवेज्जा।
यदिहाजाशतप्रायोग्ये वाटके उत्कर्षेणाजासहस्रप्रक्षेपण-मभिहितं तत्तासामतिसंकीर्णतयाऽवस्थानख्यापनार्थ-मिति। (वृ. प. ५८०)

१४. प्रचुर घास पाणी तिहां जी, इण वचने अवलोय।
प्रचुर लघु बड़ी नीत नों जी, संभव कहियै सोय।।

१४. ताओ णं तत्थ पउरगोयराओ पउरपाणियाओ
'पउरगोयराओ पउरपाणीयाओ' त्ति प्रचुरचरणभूमयः प्रचुरपानीयाश्च, अनेन च तासां प्रचुरमूत्रपुरीष-सम्भवः। (वृ. प. ५८०)

वा०—वली क्षुधा तृषा नें अविरहे सुखे रहिवापणै करी चिरजीविपणुं कह्यु।

वा०—बुभुक्षापिपासाविरहेण सुस्थतया चिरंजीवित्वं चोक्तम्। (वृ. प. ५८०)

१५. एक दोय तीन दिन लगे जी, जघन्य थकी रहै जेह।
षट मास लगे उत्कृष्ट थी जी, बाड़ा में अजा वसेह।।

१५. जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा, उक्कोसेणं छम्मासे परिवसेज्जा।

१६. वीर कहै सुण गोयमाजी! छाली नां बाड़ा मांय।
परमाणु-पुद्गल मात्र पिण, कोइ विन फर्श्यां रहिवाय।।
१७. ते अजा नें बड़ी नीते करी जी, लघु नीते करि जोय।
खेल संघाण वमन करी जी, विण फर्श्यां रहै सोय।।
१८. पित्त राध शुक्रे करी जी, रुधिर चाम करि ताय।
रोम सींग खुर नख करीजी, विण फर्श्यां रहै काय?
१९. गोतम कहै ए अर्थ नें जी, समर्थ नहीं जिनराय!
विण फर्श्ये किणविध रहै जी, लौकिक पक्ष रै न्याय।।

१६-१८. अत्थि णं गोयमा! तस्स अया-वयस्स केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा पासवणेण वा खेलेण वा सिंघाणेण वा वंतेण वा पित्तेण वा पूएण वा सुक्केण वा सोणिएण वा चम्मेहिं वा रोमेहिं वा सिंगेहिं वा खुरेहिं वा नहेहिं वा अणोक्कंतपुव्वे भवइ?

१९. णो इणट्ठे समट्ठे।

२०. जिन कहै होवै पिण गोयमाजी! छाली रा बाड़ा मांय।
परमाणु मात्र प्रदेश पिण जे, विण फर्श्ये रहिवाय।।
२१. ते अजा नें बड़ी नीते करी जी, जाव खुराग्रज नक्ख।
तिण करिनें विण फर्शियां जी, परमाणु मात्र प्रतक्ख।।

२०,२१. होज्जा वि णं गोयमा! तस्स अया-वयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा जाव नहेहिं वा अणोक्कंतपुव्वे।
'नहेहि व' त्ति नखाः—खुराग्रभागास्तैः। (वृ. प. ५८०)

२२. पिण निश्चै करिनें नहीं जी, ए महालोक रै मांहि।
परमाणु मात्र प्रदेश में जी, जिहां जनम मरण थयुं नांहि।।

२२. नो चेव णं एयंसि एमहालगंसि लोगंसि
'अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे' इत्यादिना पूर्वोक्ताभिलापेन सम्बन्धः। (वृ. प. ५८०)

सोरठा

२३. अति मोटो ए लोय, जनम मरण किम पूरियो?
इसी आशंका होय, ते टालण कहियै हिवै।।

२३. महत्त्वाल्लोकस्य, कथमिदमिति चेदत आह—
(वृ. प. ५८०)

२४. *लोक नां शाश्वत भाव नें जी, आश्रयी नें कहिवाय।
लोक नो नाश हुवै नहीं जी, तिण सूं लोक शाश्वत कह्यु ताय।।

२४. लोगस्स य सासयं भावं,
लोकस्य शाश्वतभावं प्रतीत्येति योगः।
(वृ. प. ५८०)

यतनी

२५. शाश्वतपणुं छते पिण सोय, ए लोक संसार नें जोय।
आदि सहितपणां रै मांहि, इतरा जन्म मरण करै नांहि।।

२५. शाश्वतत्वेऽपि लोकस्य संसारस्य सादित्वे नैवं स्यात्।
(वृ. प. ५८०)

२६. *तिण कारण ए जाणवूं जी, अनादि भाव संसार।
ते प्रति आश्रयी लोक नै जी, भर्यो जन्म मरण कर धार।।

२६. संसारस्स य अणादिभावं,
इत्यनादित्वं तस्योक्तम्। (वृ. प. ५८०)

*लय : जम्बू कह्यो मान लै रे जाया!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यतनी

२७. अनादि संसार में पिण ताय, नाना जीव तणी अपेक्षाय ।
विवक्षित जीव नैं जेह, अनित्यपणुं हुवै तेह ।।
२८. अनित्य विषे ए उदंत, लोक छाली बाड़ा नैं दृष्टंत ।
जन्म मरण करीनैं पूराय, तिण सूं आगल नित्य कहाय ।।

२७,२८. नानाजीवापेक्षया संसारस्यानादित्वेऽपि विवक्षित-जीवस्यानित्यत्वे नोक्तार्ऽर्थः स्याद् (वृ. प. ५८०)

२९ *तिणसूं जीव तणां नित्य भावनैं जी, ते प्रति आश्रयी जोय।
जनम मरण कर पूरियो जी, सर्व लोक नैं सोय ।।

२९. जीवस्स य णिच्चभावं

यतनी

३०. जीव नित्यपणैं पिण जाण, कर्म अल्पपणां विषे माण ।
पूर्व कह्यो ते भ्रमण न थाय, तिणसूं कर्म-बहुल हिवै आय ।।

३०. नित्यत्वेऽपि जीवस्य कर्माल्पत्वे तथाविधसंसरणा-भावान्नोक्तं वस्तु स्यादतः कर्म्मबाहुल्यमुक्तम् । (वृ. प. ५७०)

३१. *बहुलपणुं वलि कर्म नुं जी, ते प्रति आश्रयी जंत ।
भ्रमण कियो इम लोक में जी, छाली बाड़ा नैं दृष्टंत ।।

३१. कम्मबहुत्तं

यतनी

३२. कर्म-बहुलपणैं पिण जेह, अल्प जन्मादिपणां विषेह ।
उक्त अर्थ भ्रमण हुवै नांय, तिणसूं जन्मादि बहु हिवआय ।।

३२. कर्म्मबाहुल्येऽपि जन्मादेरल्पत्वे नोक्तोऽर्थः स्यादिति जन्मादिबाहुल्यमुक्तमिति । (वृ. प. ५८०)

३३. *जनम नैं मरण बहुलपणुं जी, ते प्रति आश्रयी ख्यात ।
दृष्टंत अज बाड़े करी जी, लोक भर्‍यो सुविख्यात ।।
३४. एह सर्व ही लोक में जी, कोइ नहीं' छै तेह ।
परमाणु-पुद्गल मात्र ही जी, जेह प्रदेश विषेह ।।

३३. जम्मण-मरणबाहुल्लं च पडुच्च

३४. अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे ।
जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा न मए वा वि । से तेणट्ठेणं गोयमा !

३५. ए जीव जिहां जन्म्यो नहीं जी, अथवा न मूओ जेथ ।
तिण अर्थे करि तिमज ही जी, जाव मूओ नहीं पिण तेथ ।।
[वीर प्रभु वागरै] ।।

३५. जाव (सं. पा.) न मए वा वि । (श. १२।१३२)

सोरठा

३६. हिव एहिज अधिकार, लोक विषे वस्तू तणो ।
कहियै छै विस्तार, गोतम पूछ्यां जिन कहै ।।

३६. एतदेव प्रपञ्चयन्नाह— (वृ. प. ५८०)

अनेक अथवा अनन्त वार उपपाद पद

३७. *पृथ्वी कही प्रभु ! केतली जी ? जिन कहै पृथ्वी सात ।
धुर शत पंचमुद्देशके जी, आख्यो तिम अवदात ।।

३७. कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?
गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, जहा पढमसए (भ. १।२११-२५५) पंचमउद्देसए ।

३८. तिमज आवासज स्थापवा जी, रत्नप्रभा रै मांय ।
नरकावासा लक्ष तीस छै जी, इत्यादि सर्व कहाय ।।

३८. तहेव आवासा ठावेयव्वा ।

---

*लय : जम्बू कह्यो मान लै रे जाया !

१. पाठ में 'नत्थि' पद प्राप्त होता है । किन्तु प्रस्तुत वाक्य के प्रारम्भ में 'नो चेव णं' पाठ है । इस कारण नत्थि पद की संगति नहीं बैठती । वृत्ति में पाठ ठीक है । यहां उसे ही स्वीकृत किया गया है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. जाव विमान अनुत्तरे जी, जाव अपराजित जाण।
वलि सर्वार्थसिद्ध लगे जी, कहिवूं सर्व पिछाण।।
४०. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, रत्नप्रभा नां जोय।
नरकावासा आखिया जी, तीस लाख अवलोय।।
४१. इक-इक नरकावास में जी, पृथ्वीकायपणैं पेख।
यावत वनस्पतिपणैं जी, जीव एह सुविशेख।
४२. 'नरगत्ताए' इण पाठ नों जी, अर्थ कियो इह रीत।
नरकावास पृथ्वीपणैं जी, आख्यो ते आश्रीत।।

४३. नेरइयापणैं पूर्व ऊपनों जी ? जिन कहै गोतम ! हंत।
वार अनेकज ऊपनों जी, अथवा वार अनंत।।

४४. सर्व जीव पिण हे प्रभूजी ! रत्नप्रभा नां तास।
लक्ष तीस नरकावास में जी, इक-इक नरकावास।।
४५. सर्व जीव प्रभु ! ऊपनां जी, तिमहिज यावत धार।
वार अनेकज ऊपनां जी, अथवा अनंती वार।।
४६. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, सक्करप्रभा नां सोय।
नरकावासा आखिया जी, लक्ष पचीस सुजोय।।
४७. जिम कह्या रत्नप्रभा विषे जी, एक जीव आश्रीत।
अथवा सर्व जीव आसरी जी, दोय आलाव संगीत।
४८. तेम इहां पिण जाणवा जी, दोय आलावा देख।
यावत धूमप्रभा लगे जी, कहिवूं इम संपेख।।
४९. प्रभु ! ए जीव तमा तणां जी, पंच ऊण लक्ष नरकावास।
इक-इक नरकावास में जी, शेष पूर्ववत तास।।

५०. हे प्रभुजो ! ए जीवड़ो जी, अधो सप्तमी पृथ्वी विषेह।
उत्कृष्ट पंच मोटा घणां जी, महानरकावासेह।।
५१. इक-इक नरकावासा विषे जी, शेष सर्व विस्तार।
रत्नप्रभा पृथ्वी नीं परे जी, कहिवूं इहां अधिकार।।
५२. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, असुरकुंवार नां तास।
चौसठ लक्ष आवास में जी, एक-एक आवास।।
५३. पृथ्वीकायपणैं ऊपनों जी, जाव वनस्पति जेह।
देवपणैं देवीपणैं जी, आसन शयनपणेह।।
५४. भंड मात्र उपकरणपणैं जी, पूर्व ऊपनों धार ?
जिन कहै हंता गोयमा जी ! जाव अनंती बार।
५५. सर्व जीव पिण ऊपनां जी, इमज अनंती वार।
इम जाव थणियकुंवार नैं जी, भेद आवास मझार।।
५६. पूर्वे आवास कह्या अछै जी, असुर नां चौसठ लाख।
लक्ष चउरासी नाग नां जी, इत्यादिक अभिलाख।।
५७. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, पृथ्वीकाय नां तास।
लक्ष असंख आवास छै जी, इक-इक तास आवास।।

३९. जाव अणुत्तरविमाणेत्ति जाव अपराजिए सव्वट्ठसिद्धे।
(श. १२।१३३)

४०. अयण्णं भंते ! जीवे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु

४१. एगमेगंसि निरयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए।

४२. नरगत्ताए
'नरगत्ताए' त्ति नरकावासपृथिवीकायिकतयेत्यर्थः।
(वृ. प. ५८१)

४३. नेरइयत्ताए उववन्नपुव्वे ?
हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।
(श. १२।१३४)
'असइं' ति असकृद् – अनेकशः। (वृ. प. ५८१)

४४,४५. सव्वजीवा वि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु तं चेव जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो। (श. १२।१३५)

४६. अयण्णं भंते ! जीवे सक्करप्पभाए पुढवीए पणुवीसाए निरयावाससयसहस्सेसु।

४७,४८. एवं जहा रयणप्पभाए तहेव दो आलावगा भाणियव्वा। एवं जाव धूमप्पभाए।
(श. १२।१३६)

४९. अयण्णं भंते ! जीवे तमाए पुढवीए पंचूणे निरयावाससयसहस्से एगमेगंसि निरयावासंसि ? सेसं तं चेव। (श. १२।१३७)

५०,५१. अयण्णं भंते ! जीवे अहेसत्तमाए पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महानिरएसु एगमेगंसि निरयावासंसि ? सेसं जहा रयणप्पभाए।
(श. १२।१३८)

५२. अयण्णं भंते ! जीवे चउसट्ठीए असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि

५३,५४. पुढविक्काइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए देवत्ताए देवित्ताए आसणसयण-भंडमत्तोवगरणत्ताए उववन्नपुव्वे ?
हंता गोयमा ! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो।

५५. सव्वजीवा वि णं भंते ! एवं चेव। एवं जाव थणियकुमारेसु। नाणत्तं आवासेसु।

५६. आवासा पुव्वभणिया। (श. १२।१३९)

५७. अयण्णं भंते ! जीवे असंखेज्जेसु पुढविक्काइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविक्काइयावासंसि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—इहां पृथ्वीकाय नां असंख्याता आवास कहियैंहीज ए अर्थ सिद्ध हुवै। जे असंख्याता लक्ष ग्रहण कर्युं ते पृथ्वीकाय नां आवास नुं अति बहुपणो जणावा नैं अर्थे।

५८. पांच स्थावरपणैं ऊपनों जी? जिन कह् हंता तेम।
यावत वार अनंत ही जी, सर्व जीव पिण एम।।

५९. इम जाव वणस्सइकाय में जी, लक्ष असंख आवास।
बे आलावे करि ऊपनों जी, पूरववत सुप्रकाश।।

६०. हे प्रभुजी! ए जीवड़ो जी, बेंद्रिय विषे विमास।
लक्ष असंख आवास में जी, इक-इक तास आवास।।

६१. पांच स्थावरपणैं ऊपनों जी, बेंद्रियपणैंज तेम।
जिन कहै जाव अनंत ही जी, सर्व जीव पिण एम।।

६२. एवं जाव मनुष्य विषे जी, णवरं तेंद्री आलाव।
पांच थावरपणैं ऊपनों जी, तेंद्रियपणैं कहाव।।

६३. चउरिंद्री नां आलावा विषे जी, पंच स्थावरपणैं पेख।
चउरिंद्रीपणैं ऊपनों जी, इम कहिवो सुविशेख।।

६४. पंचेंद्री त्रिण आलावा विषे जी, पंच स्थावरपणैं तेम।
तिर्यंच पंचेंद्रियपणैं जी, ऊपनों कहिवो एम।।

६५. मनुष्य तणां आलावा विषे जी, पंच स्थावरपणैं तेम।
मनुष्यपणैं पूर्व ऊपनो जी, शेष बेइंद्रिय जेम।।

६६. व्यंतर ज्योतिषी नै विषे जी, सौधर्म नैं ईशाण।
एह विषे पूर्व ऊपनो जी, असुर तणी पर जाण।।

६७. हे प्रभुजी! ए जीवड़ो जी, सनतकुमार उदार।
द्वादश लक्ष विमान में जी, इक-इक वास मझार।।

६८. पृथ्वीकायपणैं ऊपनों जी, शेष असुर जिम ताहि।
यावत वार अनंतही जी, पिण निश्चै देवीपणैं नांहि।।

सोरठा

६९. देवी तणो उपपात, बीजा कल्प लगेज छै।
ते माटे आख्यात, सुरीपणैं आगे नथी।।

७०. *सर्व जीव पिण इह विधेजी, एवं यावत तेम।
आणत पाणत नै विषे जी, आरण अच्युत एम।।

७१. हे प्रभुजी! ए जीवड़ो जी, तीनसौ अधिक अठार।
ग्रैवेयक विमान आवास में जी, इमहिज कहिवो विचार।।

७२. हे प्रभुजी! ए जीवड़ो जी, पंच अनुत्तर विमान।
इक-इक तास विमान में जी, पृथ्वीपणैं तिमज जान।।

७३. जाव अनंत वार ऊपनों जी, नहि सुरपणैं वार अनंत।
देवीपणैं नहीं सर्वथा जी, इम सर्व जीव पिण मंत।।

वा०—इहासंख्यातेषु पृथिवीकायिकावासेषु एतावतैव सिद्धेयंच्छतसहस्रग्रहणं तत्तेषामतिबहुत्वख्यापनार्थं। (वृ. प. ५८१)

५८. पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए उववन्नपुव्वे?
हंता गोयमा! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो। एवं सव्वजीवा वि।

५९. एवं जाव वणस्सइकाइएसु। (श. १२।१४०)

६०. अयण्णं भंते! जीवे असंखेज्जेसु बेइंदियावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि बेइंदियावासंसि

६१. पुढविक्काइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए बेइंदियत्ताए उववन्नपुव्वे?
हंता गोयमा! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो। सव्वजीवा वि णं एवं चेव।

६२. एवं जाव मणुस्सेसु, नवरं—तेइंदिएसु जाव वणस्सइकाइयत्ताए तेइंदियत्ताए।

६३. चउरिंदिएसु चउरिंदियत्ताए।

६४. पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्ताए।

६५. मणुस्सेसु मणुस्सत्ताए, सेसं जहा बेइंदियाणं।

६६. वाणमंतर-जोइसिय-सोहम्मीसाणेसु य जहा असुरकुमाराणं। (श. १२।१४१)

६७. अयण्णं भंते! जीवे सणंकुमारे कप्पे बारससु विमाणावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि वेमाणियावासंसि।

६८. पुढविकाइयत्ताए सेसं जहा असुरकुमाराणं जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो नो चेव णं देवित्ताए।

६९. ईशानान्तेष्वेव देवस्थानेषु देव्य उत्पद्यन्ते सनत्कुमारादिषु पुनर्नेतिकृत्वा। (वृ. प. ५८१)

७०. एवं सव्वजीवा वि। एवं जाव आणयपाणएसु एवं आरणच्चुएसु वि। (श. १२।१४२)

७१. अयण्णं भंते! जीवे तिसु वि अट्ठारसुत्तरेसु गेविज्जविमाणावाससयेसु एवं चेव। (श. १२।१४३)

७२,७३. अयण्णं भंते! जीवे पंचसु अणुत्तरविमाणेसु एगमेगंसि अणुत्तरविमाणंसि पुढविकाइयत्ताए?
तहेव जाव असइं अदुवा अणंतखुत्तो, नो चेव णं देवत्ताए वा देवित्ताए वा। एवं सव्वजीवा वि।
(श. १२।१४४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, सर्व जीवां नों सोय।
मातापणैं नैं पितापणैं जी, ऊपनों जे अवलोय ?

७५. भाईपणैं भगनीपणैं जी, भार्यापणैं सुविचार।
पुत्रपणैं बेटीपणैं जी, ऊपनों ए अवधार ?

७६. पुत्र नीं स्त्रीपणैं ऊपनों जी, पूरव काल मझार ?
जिन कहै हंता गोयमा जी ! जाव अनंती बार ।।

७७. सर्व जीव पिण हे प्रभुजी ! एहि जीव नां हुंत।
मातापणैं जाव ऊपनां जी ? जिन कहै जाव अनंत ।।

७८. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, सर्व जीव नों जोय।
सामान्य अरिपणैं थयो जी, दीर्घ काल वैरीपणैं होय ।।

७९. 'घायगत्ताए' घातकृत जी, 'वहयत्ताए' होय।
तास अर्थ ताड़कपणैं जी, पूर्वे ऊपनों सोय ।।

८०. प्रत्यनीकपणैं ऊपनों जी, कार्योपघातक कहाय।
'पच्चामित्तत्ताए' वली जी, अमित्र नैं दे सहाय ?

८१. जिन कहै हंता गोयमा जी ! जाव अनंती वार।
सर्व जीव पिण एहनां जी, अरि प्रमुख इम धार ।।

८२. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, सर्व जीव नों ताम।
राजापणैं ए ऊपनों जी, युवराजापणैं आम ?

८३. यावत सार्थवाहपणैं जी, पूर्व ऊपनों धार ?
जिन कहै हंता गोयमा जी ! जाव अनंती वार ।।

८४. सर्व जीव पिण ऊपनां जी, एह जीव नां जाण।
राजापणैं प्रमुख सहु जी, तिमहिज कहिवो पिछाण ।।

८५. हे प्रभुजी ! ए जीवड़ो जी, सर्व जीव नों सोय।
घर नी दासी नां पुत्रपणैं जी, ऊपनों ए अवलोय।

८६. पेस आदेशकारीपणैं जी, भृतक दुकालादि मांय।
आवी वस्यो छै तेहनैं जी, पोषितपणों कराय ।।

८७. करषणादिक नां लाभ नों जी, भाग नां ग्राहक जेह।
भाइल्लगपणैं तसु कह्यो जी, ऊपनों पूरव एह ।।

८८. भोग पुरुषपणैं ऊपनो जी, अन्य उपार्जित धन्न।
भोगवै तेह पुरुषपणैं जी, पूरव एह उपन्न ।।

७४. अयण्णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं माइत्ताए पितित्ताए।

७५. भाइत्ताए भगिणित्ताए भज्जत्ताए पुत्तत्ताए धूयत्ताए।

७६. सुण्हत्ताए उववन्नपुव्वे ?
हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो।
(श. १२।१४५)

७७. सव्वजीवा वि णं भंते ! इमस्स जीवस्स माइत्ताए जाव (सं. पा.) उववन्नपुव्वा ? हंता गोयमा ! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो। (श. १२।१४६)

७८. अयण्णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं अरित्ताए वेरियत्ताए
'अरित्ताए' त्ति सामान्यतः शत्रुभावेन, 'वेरियत्ताए' त्ति वैरिकः—शत्रुभावानुबन्धयुक्तस्तत्तया।
(वृ. प. ५८१)

७९. घातगत्ताए, वहगत्ताए।
'घायगत्ताए' त्ति मारकतया 'वहगत्ताए' त्ति व्यधकतया ताडकतयेत्यर्थः। (वृ. प. ५८१)

८०. पडिणीयत्ताए, पच्चामित्तत्ताए उववन्नपुव्वे ?
'पडिणीयत्ताए' त्ति प्रत्यनीकतया—कार्योपघातकतया 'पच्चामित्तत्ताए' त्ति अमित्रसहायतया।
(वृ. प. ५८१)

८१. हंता गोयमा ! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो।
(श. १२।१४७)
सव्वजीवा वि णं भंते ! इमस्स जीवस्स अरित्ताए....
(श. १२।१४८)

८२. अयण्णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं रायत्ताए जुवरायत्ताए

८३. जाव (सं. पा.) सत्थवाहत्ताए उववन्नपुव्वे ?
हंता गोयमा ! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो।
(श. १२।१४९)

८४. सव्वजीवा वि णं भंते ! इमस्स जीवस्स रायत्ताए....
(श. १२।१५०)

८५. अयण्णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं दासत्ताए
'दासत्ताए' त्ति गृहदासीपुत्रतया। (वृ. प. ५८१)

८६. पेसत्ताए भयगत्ताए
'पेसत्ताए' त्ति प्रेष्यतया—आदेश्यतया 'भयगत्ताए' त्ति भृतकतया दुष्कालादौ पोषिततया। (वृ. प. ५८१)

८७. भाइल्लत्ताए
'भाइल्लगत्ताए' त्ति कृष्यादिलाभस्य भागग्राहकत्वेन।
(वृ. प. ५८१)

८८. भोगपुरिसत्ताए
'भोगपुरिसत्ताए' त्ति अन्यैरुपार्जितार्थानां भोगकारिनरतया। (वृ. प. ५८१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८९. शीसपणैं पूर्व ऊपनों जी, द्वेष्यपणैं वलि धार ?
जिन कहै हंता गोयमा जी ! जाव अनंती वार ।।

८९. सीसत्ताए वेसत्ताए उववन्नपुव्वे ?
हंता गोयमा ! जाव (सं. पा.) अणंतखुत्तो ।
(श. १२।१५१)
'सीसत्ताए' त्ति शिक्षणीयतया 'वेसत्ताए' त्ति द्वेष्यतयेति । (वृ. प. ५८१)

९०. सर्व जीव पिण एहनां जी, एम अनंती वार ।
सेवं भंते ! गोतम कही जी, यावत विचरै सार ।

९०. एवं सव्वजीवा वि (सं. पा.) अणंतखुत्तो ।
(श. १२।१५२)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ।
(श. १२।१५३)

९१. शत बारमुद्देशक सातमों जी, दोयसौ पैंसठमी ढाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी जी, 'जय-जश' हरष विशाल ।।

द्वादशशते सप्तमोद्देशकार्थः ।।१२।७।।

ढाल : २६६

दूहा

१. सप्तमुद्देशे जीव नीं, उत्पत्ति नों अधिकार ।
अष्टमुद्देशक पिण तिमज, भंगांतरे विचार ।।
२. तिण काले नें तिण समय, यावत गोतम स्वाम ।
इम बोल्या प्रभुजी प्रते, विनय करी शिर नाम ।।

१. सप्तमे जीवानामुत्पत्तिश्चिन्तिता, अष्टमेऽपि सैव भंग्यन्तरेण चिन्त्यते । (वृ. प. ५८१)
२. तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी—

देवों का द्विशरीर-उपपाद पद

*गोयम प्रश्न सुहामणा । (ध्रुपदं)

३. मर्हद्धिक सुर भगवंत जी, जाव महाईश्वर धाम । प्रभुजी !
अंतर रहित चवी करी, तनु छोड़ी नैं ताम ।। प्रभुजी !
४. बे शरीरी नाग में ऊपजै, नाग कहतां गजराज । प्रभुजी !
अथवा नाग ते सर्प है, ए बिहुं अर्थ समाज ।। प्रभुजी !
५. नाग शरीर प्रथम तजी, द्वितीय मनुष्य तनु लेह । प्रभुजी !
शिव पद मांहि सिधावस्ये, बे शरीरी नाग जेह ।। प्रभुजी !
६. ते नाग विषे सुर ऊपजै ? जिन कहै हां उपजंत । गोयमजी !
ते तिहां नाग जनम विषे, तथा उत्पत्ति खेत अर्च्चंत ।। प्रभुजी!

३. देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महेसक्खे अणंतरं चयं चइत्ता
४. बिसरीरेसु नागेसु उववज्जेज्जा ?
'नागेसु' त्ति सर्प्पेषु हस्तिषु वा । (वृ. प. ५८२)
५. ये हि नागशरीरं त्यक्त्वा मनुष्यशरीरमवाप्य सेत्स्यन्ति ते द्विशरीरा इति । (वृ. प. ५८२)
६. हंता उववज्जेज्जा । (श. १२।१५४)
से णं तत्थ
'तत्थ त्ति' नागजन्मनि यत्र वा क्षेत्रे जातः ।
(वृ. प. ५८२)

७. अर्च्यो चंदनादिक करी, वंदित स्तुति विशेख । प्रभुजी !
पुष्पादिक करि पूजियो, नाग भणी जन पेख ।। प्रभुजी !

७. अच्चिय-वंदिय-पूइय
तत्र चार्चितश्चन्दनादिना वन्दितः स्तुत्या पूजितः पुष्पादिना । (वृ. प. ५८२)

८. वस्त्रादिके सत्कारियो, वलि सनमान्यो जेह । प्रभुजी !
एह विशेषण सेव नों, नाग भणी धर नेह ।। प्रभुजी !
९. दिव्य प्रधान साचो तिको, स्वप्नादिक करि सोय । प्रभुजी !
ते कह्यो भूठ हुवै नहीं, सत्य हुवै अवलोय ।। प्रभुजी !

८. सक्कारिय-सम्माणिय
सत्कारितो —वस्त्रादिना । (वृ. प. ५८२)
९. दिव्वे सच्चे ।
'दिव्वे' त्ति प्रधानः 'सच्चे' त्ति स्वप्नादिप्रकारेण तदुपदिष्टस्यावितथत्वात् । (वृ. प. ५८२)

---
*लय : शिवपुर नगर सुहामणो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. सफल सेव हुवै जेहनीं, देव अधिष्ठित सार । प्रभुजी !
पूर्व मित्रादिक सुर निकट, कीधो कर्म प्रतिहार ।। प्रभुजी !

११. एहवा नाग विषे अमर जे, उपजै छै भगवान ? प्रभुजी !
जिन कहै हंता गोयमा ! अमर ऊपजै आन ।। गोयमजी !

१२. अंतर रहित तिहां थकी, निकल तेह सीझंत ? प्रभुजी !
जिन कहै हंता सीझै तिको, जाव करै दुख अंत ।। गोयमजी !

१३. महर्द्धिक सुर भगवंत जी ! इमज चवी नें एह । प्रभुजी !
दोय शरीरी मणि विषे, पृथ्वीपणें उपजेह ।। प्रभुजी !

१४. इम निश्चै करि आखियो, नाग भणी जिम न्हाल । प्रभुजी !
कहिवो तिणहिज रीत सूं, रत्न मणि नों विशाल ।। गोयमजी !

१५. सुर प्रभु ! महर्द्धिक जाव ही, बे शरीरी तरुमें उपजंत ? प्रभुजी!
जिन कहै हंता ऊपजै, एवं चेव उदंत ।। गोयमजी !

१६. णवरं इमं नाणत्तं, जाव अधिष्ठित देव । गोयमजी !
छगणादिक करि भूमिका, मृदु कीधी ए भेव ।। गोयमजी !

१७. खड़ी प्रमुख करि भींत नें, धवलै जन धर राग । गोयमजी !
एह बिहुं करि पूजियो, वृक्ष चोतरो माग ।। गोयमजी !

१८. वृक्ष नीं पीठ अपेक्षया, कह्या विशेषण एह । गोयमजी !
तिमहिज शेष कहीजियै, यावत अंत करेह ।। गोयमजी !

वा०—ए विशेषण वृक्ष नीं पीठ नीं अपेक्षाए कह्या । विशिष्ट वृक्ष जे हुवै, ते बद्धपीठ हीज हुवै ।

पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनि उपपाद पद

१९. अथ हिव हे भगवंत जी ! गोलांगूल—वानर रै मांय । प्रभुजी !
मोटो जेह वानर अछै, ते गोलांगूल वृषभ कहिवाय ।। प्रभुजी !

वा०—अथवा तेहिज मोटो वानर विदग्ध, विदग्ध पर्यायपणां थकी वृषभ शब्द कह्यो ।

२०. कुर्कुट-वृषभ कुर्कुट मझे, मोटो बलवंत एह । प्रभुजी !
मंडुक-वृषभ मंडुक मझे, ए पिण जबर कहेह ।। प्रभुजी !

२१. शील समाधि रहीत ए, अणुव्रत गुणव्रत रहीत । प्रभुजी !
मर्याद पचखाण रहीत ए, नहि पोसह उपवास सहीत ।।प्रभुजी!

१०. सच्चोवाए सन्निहियपाडिहेरे ।
'सच्चोवाए' त्ति सत्यावपातः सफलसेव इत्यर्थः, कुत एतत् ? इत्याह—'सन्निहियपाडिहेरे' त्ति सन्निहितं—अदूरवर्त्ति प्रातिहार्यं—पूर्व संगतिकादिदेवताकृतं प्रतिहारकर्म यस्य स तथा ।
(वृ. प. ५८२)

११. यावि भवेज्जा ?
हंता भवेज्जा । (श. १२।१५५)

१२. से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उवट्टित्ता सिज्झेज्जा····
हंता सिज्झेज्जा जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेज्जा ।
(श. १२।१५६)

१३. देवे णं भंते ! महिड्ढीए एवं चेव जाव (सं. पा.) बिसरीरेसु मणीसु उववज्जेज्जा ?
'मणीसु' त्ति पृथिवीकायविकारेषु । (वृ. प. ५८२)

१४. हंता उववज्जेज्जा । एवं चेव जहा नागाणं ।
(श. १२।१५७)

१५. देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव (सं. पा.) बिसरीरेसु रुक्खेसु उववज्जेज्जा ? हंता उववज्जेज्जा । एवं चेव ।

१६,१७. नवरं—इमं नाणत्तं जाव सन्निहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिए यावि भवेज्जा ?
'लाउल्लोइयमहिए' त्ति 'लाइयं' ति छगणादिना भूमिकायाः संमृष्टीकरणं 'उल्लोइयं' ति सेटिकादिना कुड्यानां धवलनं एतेनैव द्वयेन महितो यः स तथा ।
(वृ. प. ५८२)

१८. हंता भवेज्जा । सेसं तं चेव जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेज्जा । (श. १२।१५८)

वा०—एतच्च विशेषणं वृक्षस्य पीठापेक्षया, विशिष्टवृक्षा हि बद्धपीठा भवन्तीति । (वृ. प. ५८२)

१९. अह भंते ! गोनंगूलवसभे ।
'गोलंगूलवसभे' त्ति गोलांगूलानां—वानराणां मध्ये महान् । (वृ. प. ५८२)

वा०—स एव वा विदग्धो विदग्धपर्यायत्वाद्वृषभशब्दस्य ।
(वृ. प. ५८२)

२०. कुक्कुडवसभे, मंडुकवसभे ।

२१. एए णं निस्सीला निव्वया निग्गुणा निम्मेरा निपच्चक्खाण-पोसहोववासा
'निस्सील' त्ति समाधानरहिताः 'निव्वय' त्ति अणुव्रतरहिताः 'निग्गुण' त्ति गुणव्रतैः····रहिताः ।
(वृ. प. ५८२)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. काल करो काल अवसरे, रत्नप्रभा पृथ्वी एह । प्रभुजी !
उत्कृष्ट सागर आउखे, ऊपजै नरक में नारकपणेह ।। प्रभुजी !

२३. श्रमण भगवंत महावीर जो, वागरै इहविध वाण । गोयमजी !
उपजवा लागा तसु, ऊपनां कहियै पिछाण । गोयमजी !

सोरठा

२४. 'जेह समय छै सोय, वानर कुर्कट मींडको ।
तेह समय में जोय, नारक भव कहियै नथी ।।
२५. इण कारण अवलोय, किम कहियै नारकपणैं ।
निरणय वच तसु जोय, वीर प्रभू इम वागरयो ।।
२६. ऊपजवा लागो न्हाल, कहियै तेहनैं ऊपनो ।
किरिया निष्ठा काल, ए बिहुं तणां अभेद थी ।।
२७. ऊपजवा लागो जेह, क्रिया कार्य समय ते ।
तिण समय ऊपनों तेह, निष्ठा कालज समय इक ।
२८. किरिया निष्ठा जाण, ए बेहुं नो समय इक ।
ते माटे जिन वाण, उववज्जमाणे ऊपनों ।। (ज० स०)

वा०—'नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा' ? इति प्रश्न । इहां 'उववज्जेज्जा' ए एहनों उत्तर । ते ए असम्भव छै, एहवी आशंका करी नैं एहनों उत्तर आपै छै—'समणे' इत्यादि ।

असम्भवता केम ? जेणे समय गोलांगूल आदिक तेणे समय नारक नथी तो ते नारकपणैं उत्पन्न थया, ए किम कहियै ? समाधान—श्रमण भगवान महावीर, जमालि आदि नहीं, एम कहै छै के जे वानरादिक नारकपणैं उपजतां छतां नैं नरके उपनांज कहियै, क्रियाकाल निष्ठाकाल बेहूं नां अभेद थी । जे माटे वानर आदिक नारकपणैं उत्पन्न होणारा नारकहीज कहिवाय अनै नारक नारकपणैं उत्पन्न थाय, ए सत्य छै ।

बीजी दृष्टीए वानर प्रमुख नों भव छोड़ी नरक नां भव नों पहिलो समय—ऊपजवा लागो बाटे बहै छै, ते क्रियाकाल अनै तेणेज समये ऊपनो ए निष्ठाकाल । ए क्रियाकाल अनैं निष्ठाकाल नो समय एक छै—क्रियाकाल नों जे समय तेहिज समय निष्ठाकाल नो छै । इण न्याय पिण बिहुं काल नां अभेद थकी ऊपजवा लागो तेहनैं ऊपनो कहियै ।

२९. *सींह बाघ हिव हे प्रभु ! जिम अवसर्प्पिणी उद्देश । प्रभुजी !
सप्तम शतक छठा मझे, जाव पाराशर शेष ।। प्रभुजी !
३०. ए शील रहित पूरवली परे, जाव शब्द थी जाण । प्रभुजी !
ऊपजवा लागा तसु, ऊपनां कहियै पिछाण ।। गोयमजी !

३१. अथ हिव हे भगवंत जी ! ढंक कंक अवलोय । प्रभुजी !
बिलए[1] मंडुक मोरियो, शील-रहित ए सोय ।। प्रभुजी !

२२. कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसं सागरोवमट्ठितीयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा ?
२३. समणे भगवं महावीरे वागरेइ—उववज्जमाणे उववन्ने त्ति वत्तव्वं सिया ।
(श० १२।१५९)

वा०—'नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा' इति प्रश्नः, इह च 'उववज्जेज्जा' इत्येतदुत्तरं तस्य चासंभवमाशंकमानस्तत्परिहारमाह—'समणे' इत्यादि ।
असंभवश्चैवं—यत्र समये गोलांगूलादयो न तत्र समये नारकास्ते अतः कथं ते नारकतयोत्पद्यन्ते इति वक्तव्यं स्याद् ? अत्रोच्यते—श्रमणो भगवान् महावीरो न तु जमाल्यादिः एवं व्याकरोति—यदुत उत्पद्यमानमुत्पन्नमिति वक्तव्यं स्यात्, क्रियाकालनिष्ठाकालयोरभेदाद, अतस्ते गोलांगूलप्रभृतयो नारकतयोत्पत्तुकामा नारका एवेतिकृत्वा सुष्ठूच्यते ।
(वृ० प० ५८२)

२९. अह भंते ! सीहे वग्घे जहा ओसप्पिणी उद्देसए जाव (सं० पा०) परस्सरे । (भ० ७।१२२)
३०. एए णं निस्सीला एवं चेव जाव (सं० पा०) वत्तव्वं समणे भगवं महावीरे वागरेइ—उववज्जमाणे उववन्ने त्ति वत्तव्वं सिया । (श० १२/१६०)
३१. अह भंते ! ढंके कंके विलए मद्दुए सिखी—एए णं निस्सीला ।

---

*लय : शिवपुर नगर सुहामणो

१. बगुला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२. शेष तिमज जाव भाखवुं, सेवं भंते ! सुविशेष। प्रभुजी !
यावत गोतम विचरता, शत बारम अष्टमुद्देस ।। सुगणजी !

३३. दोयसौ नैं छासठमीं, आखी ढाल उदार। सुगणजी !
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी,
'जय-जश' हरष अपार ।। सुगणजी !

द्वादशशते अष्टमोद्देशकार्थः ।।१२।८।।

३२. सेसं तं चेव जाव (सं० पा०) वत्तव्वं सिया।
(श० १२/१६१)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।
(श० १२/१६२)

ढाल २६७

दूहा

१. अष्टमुद्देशक देव नीं, नागादिक उत्पत्त।
नवमें देवतणीज हिव, परूपणा अवितत्थ ।।

१. अष्टमोद्देशके देवस्य नागादिषूत्पत्तिरुक्ता नवमे तु देवा एव प्ररूप्यन्ते। (वृ० प० ५८३)

पंचविध देव पद

*वाणी थांरी मन वसी साहिब जी। (ध्रुपदं)

२. कितै प्रकार परूपिया साहिबजी !
बहु वचने करि देव हो। जशधारी !
जिन कहै पंच प्रकार नां गोयमजी !
देव कह्या स्वयमेव हो ।। जशधारी !

२. कतिविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?
गोयमा ! पंचविहा देवा पण्णत्ता।

३. भव्य-द्रव्यदेवा कह्या गोयमजी !
भव अंतर सुर थाय हो। जशधारी !
देव तणां गुण शून्य छै गोयमजी !
तिणसूं द्रव्यदेव कहिवाय हो ।। जशधारी !

३. भवियदव्वदेवा।

वा०—दीव्यन्ति—क्रीडन्ति क्रीडा करै ते देव। अथवा दीव्यन्ते—स्तूयन्ते आराध्यपणैं करी जेहनी स्तुति कीजियै ते देव।

हिवै भविय-द्रव्यदेव नों अर्थ कहै छै—द्रव्य भूत जे देव ते द्रव्यदेव। द्रव्यपणो ते अप्रधानपणां थकी, भूतभावपणां थकी अनैं भावी भावपणां थकी। तेहमां अप्रधानपणां थकी देवता नां गुणे करी शून्य जे देव ते द्रव्य-देव। जिम गुणे करी रहित साधु नैं वेषे, ते द्रव्य-साधु।

जे देवता नां भाव प्रति भोगवी भाव देवपणां थकी चवी अनेरी गति नैं विषे ऊपनो ते भूतभाव द्रव्यदेव कहियै। अनैं देवता थावा जोग्य छै पिण हजे देव थया नथी—मनुष्य, तिर्यंच नीं गति में वर्त्तै छै, तेहनैं भावी भावदेव कहियै। ते भावी भाव द्रव्यदेव नो पक्ष इहां ग्रहण कीधुं।

वा०—दीव्यन्ति—क्रीडां कुर्वन्ति दीव्यन्ते वा—स्तूयन्ते वाऽऽराध्यतयेति देवाः।
'भवियदव्वदेव' त्ति द्रव्यभूता देवा द्रव्यदेवाः द्रव्यता चाप्राधान्याद्भूतभावित्वाद्भाविभावत्वाद् वा, तत्राप्राधान्याद्देवगुणशून्या देवा द्रव्यदेवा यथा साध्वाभासा द्रव्यसाधवः।
भूतभावपक्षे तु भूतस्य देवत्वपर्यायस्य प्रतिपन्नकारणा भावदेवत्वाच्च्युता द्रव्यदेवाः, भाविभावपक्षे तु भाविनो देवत्वपर्यायस्य योग्या देवतयोत्पत्स्यमाना द्रव्यदेवाः तत्र भाविभावपक्षपरिग्रहार्थमाह—
(वृ० प० ५८५)

*लय : शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. नरदेव ते देव नरां मझे गोयमजी !
जन आराधै तास हो । जशधारी !
तथा क्रीड़ा कांत्यादिक युक्त छै गोयमजी !
ए चक्री पुन्य-राश हो ।। जशधारी !

५. धर्मदेव कह्या तीसरा गोयमजी !
श्रुत चारित्र रूप धर्म हो । जशधारी !
तेणे करीनें सहित छै गोयमजी !
ए मुनिवर गुण पर्म हो ।। जशधारी !

६. देवातिदेव चौथा कह्या गोयमजी !
अतिक्रम्या सुर शेष हो । जशधारी !
ते भावे तीर्थंकरू गोयमजी !
केवल सहित संपेख हो ।। जशधारी !

वा०—देवातिदेव कहितां शेष देव प्रते अतिक्रम्यां । परम अधिक देवपणां योग्य जे देव ते देवातिदेव ।

७. देवाधिदेव दीसै किहां गोयमजी !
अधिक अछै सुर मांहि हो । जशधारी !
पारमार्थिक देवत्व थी गोयम जी !
भावे तीर्थंकर ताहि हो ।। जशधारी !

वा०—देवाहिदेव किहाइक पाठ दीसै । तेहनों अर्थ—देवता मांहि अधिक, परमार्थिक देवपणां नां योग थकी देवाधिदेव कहियै ।

८. भावदेव चिहुं जाति नां गोयमजी !
देवगत्यादि कर्म सोय हो । जशधारी !
तास उदय परियाये करी गोयमजी !
भवनपत्यादिक जोय हो ।। जशधारी !

९. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो गोयमजी !
भविय-द्रव्यदेवा ताम हो ? जशधारी !
जिन कहै तिर्यंच पंचेंद्रिया गोयमजी !
अथवा मनुष्य अभिराम हो ।। जशधारी !

१०. ऊपजवा जोग सुर विषे गोयमजी !
भविय-द्रव्यदेव एह हो । जशधारी !
तिण अर्थे म्है इम कह्यो गोयमजी !
भविय-द्रव्यदेव तेह हो ।। जशधारी !

११. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्या साहिबजी !
जे नरदेव पिछाण हो ? जशधारी !
जिन कहै भरतादि मही तणां गोयमजी !
स्वामी नराधिप जाण हो ।। जशधारी !

१२. स्वामी भरत एरवतादिक तणां गोयमजी !
तिण सू चाउरंत कहिवाय हो । जशधारी !
वासुदेवादिक टालिया गोयम जी !
एम कह्यो वृत्ति मांय हो ।। जशधारी !

४. नरदेवा
'नरदेव' त्ति नराणां मध्ये देवा—आराध्याः क्रीडाकान्त्यादियुक्ता वा नराश्च ते देवाश्चेति वा नरदेवाः । (वृ० प० ५८५)

५. धम्मदेवा
'धम्मदेव' त्ति धर्मेण—श्रुतादिना देवा धर्मप्रधाना वा देवा धर्मदेवाः । (वृ० प० ५८५)

६. देवातिदेवा

वा०—'देवाइदेव' त्ति देवान् शेषानतिक्रांताः पारमार्थिकदेवत्वयोगाद्देवा देवातिदेवाः । (वृ० प० ५८५)

७. 'देवाहिदेव' त्ति क्वचिद्दृश्यते तत्र च देवानामधिकाः पारमार्थिकदेवत्वयोगाद् देवा देवाधिदेवाः । (वृ० प० ५८५)

८. भावदेवा । (श० १२/१६३)
'भावदेव' त्ति भावेन देवगत्यादिकर्मोदयजातपर्यायेण देवा भावदेवाः । (वृ० प० ५८५)

९,१०. से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—भवियदव्वदेवा-भवियदव्वदेवा ? गोयमा ! जे भविए पंचिंदिय-तिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवेसु उववज्जित्तए । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—भवियदव्वदेवा-भवियदव्वदेवा । (श० १२/१६४)

११. से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ—नरदेवा-नरदेवा ? गोयमा ! जे इमे रायाणो

१२,१३. चाउरंतचक्कवट्टी
'चाउरंतचक्कवट्टि' त्ति चतुरन्ताया भरतादिपृथिव्या एते स्वामिन इति चातुरन्ताः चक्रेण वर्त्तनशीलत्वाच्चक्रवर्त्तिनः·········चतुरन्तग्रहणेन च वासुदेवादीनां व्युदासः । (वृ० प० ५८५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. वर्त्तनशील चक्रे करी साहिबजी !
चक्रवर्त्ती कहिवाय हो । जशधारी !
चक्र पंथ देखाड़तां साहिबजी !
खट खंड साधै ताय हो ।। जशधारी !

१४. समस्त रत्न समुप्पना गोयमजी !
जिणमें चक्र प्रधान हो । जशधारी !
नव निधान नों अधिपति गोयमजी !
समृद्ध कोष पिछाण हो ।। जशधारी !

१४. उप्पण्णसमत्तचक्करयणप्पहाणा नवनिहिपइणो समिद्धकोसा ।

१५. बतीस सहस्र राजेश्वर गोयमजी !
सेवै केडै जाय हो । जशधारी !
समुद्र हीज जसु मेखला गोयमजी !
ते पृथ्वी नां अधिपति राय हो ।। जशधारी !

वा०—सागर ही है श्रेष्ठ मेखला—कांची, कटिप्रदेश नों गहणो—कंदोरो जेहनैं ते पृथ्वी, तेहनां अधिपति ।

१५. बत्तीसरायवरसहस्साणुयातमग्गा सागरवरमेहलाहिवइणो ।
'सागरवरमेहलाहिवइणो' त्ति सागर एव वरा मेखला काञ्ची यस्याः सा सागरवरमेखला—पृथ्वी तस्या अधिपतयो ये ते तथा । (वृ० प० ५८५)

१६. मनुष्य नां इंद्र मनोहरू गोयमजी !
तिण अर्थे करि ताय हो । जशधारी !
यावत नरदेवा कह्या गोयमजी !
षट खंडाधिप राय हो ।। जशधारी !

१६. मणुस्सिदा । से तेणट्ठेणं जाव (सं० पा०) नरदेवा-नरदेवा । (श० १२/१६५)

१७. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो गोयमजी !
धर्मदेव गुणवंत हो ? जशधारी !
जिन कहै ए अनगार छै गोयमजी !
ज्ञानवंत भगवंत हो ।। जशधारी !

१७. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—धम्मदेवा-धम्मदेवा ?
गोयमा ! जे इमे अणगारा भगवंतो

१८. ईर्या सुमति सहीत छै गोयमजी !
जाव गुप्ति ब्रह्मचार हो । जशधारी !
तिण अर्थे जावत कह्या गोयमजी !
धर्मदेव मुनि सार हो ।। जशधारी !

१८. रियासमिया जाव गुत्तबंभयारी । से तेणट्ठेणं जाव (सं० पा०) धम्मदेवा-धम्मदेवा । (श० १२/१६६)

१९. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो साहिबजी !
देवाधिदेव उदार हो ? जशधारी !
जिन कहै ए अरिहंत छै गोयमजी !
भगवंत ज्ञान भंडार हो ।। जशधारी !

१९. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—देवातिदेवा-देवातिदेवा ?
गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंतो

२०. उत्पन्न ज्ञानदर्शणधरा गोयमजी !
जाव सर्वदर्शेंद्र हो, जशधारी !
तिण अर्थे जावत कह्यो गोयमजी !
देवाधिदेव जिनेन्द्र हो, जशधारी !

२०. उप्पण्णनाण-दंसणधरा जाव (सं० पा०) सव्वदरिसी । से तेणट्ठेणं जाव (सं० पा०)देवातिदेवा-देवातिदेवा । (श० १२/१६७)

२१. प्रभु ! किण अर्थे भाव देवता साहिबजी !
जिन भाखै तहतीक हो, जशधारी !
भवनपति नैं व्यंतरा गोयमजी !
ज्योतिषी नैं वैमानीक हो, जशधारी !

२१. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—भावदेवा-भावदेवा ?
गोयमा! जे इमे भवणवइ-वाणमंतर-जोइस-वेमाणिया देवा

२२. देवगती नाम गोत्र जे साहिबजी !
कर्म प्रते वेदंत हो, जशधारी !
तिण अर्थे जावत कह्या गोयमजी !
भावदेव चिहुं मंत हो, जशधारी !

२२. देवगतिनामगोयाइं कम्माइं वेदेंति । से तेणट्ठेणं जाव (सं० पा०) भावदेवा-भावदेवा । (श० १२/१६८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पचविध देवों का उपपाद पद

२३. भविय-द्रव्य जे देवता साहिबजी !
किहां थकी आवंत हो, जशधारी !
स्यूं नारक थकी तिरि मनुष्य थी साहिबजी !
देव थकी उपजंत हो ? जशधारी !

२४. जिन भाखै सुण गोयमा ! गोयमजी !
नारक थी उपजंत हो, जशधारी !
तिरि मनु देव थकी वली गोयमजी !
ऊपजवूं तसु मंत हो, जशधारी !

२५. भेद पन्नवणा में जिम कह्या साहिबजी !
षष्ठ पदे सुविख्यात हो, जशधारी !
सर्व थकी उपजायवो साहिबजी !
जाव अनुत्तरोपपात हो, जशधारी !

२६. णवरं असंख वर्षायु ते साहिबजी !
कर्मभूमिज कहिवाय हो, जशधारी !
तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य ते साहिबजी !
भव्य-द्रव्यसुर नहिं थाय हो, जशधारी !

वा०—इहां 'असंखेज्जवासाउय' पाठ कह्यु अनै कर्मभूमिजा नों नाम नथी खोल्यो, पिण ते असंख्यात वर्षायुष्क नै विषे भरत, एरवत नां कर्मभूमिजा पंचेन्द्रिय तिर्यंच मनुष्य युगलिया ग्रहिवा अनै अकर्मभूमिजादिक नु पाठ साक्षात-पणैंहीज कह्यु छै।

२७. वलि अकर्मभूमिजा साहिबजी !
नर पंचेन्द्रिय तिर्यंच हो, जशधारी !
ए मर भव्य-द्रव्य न हुवै साहिबजी !
अंतरद्वीप इम संच हो, जशधारी !

२८. ए सगलाई युगलिया साहिबजी !
भावदेव में जाय हो, जशधारी !
तिण कारण इहां इम कह्यो साहिबजी !
भव्य-द्रव्यसुर नहिं थाय हो, जशधारी !

२९. तथा सर्वार्थसिद्ध थी साहिबजी !
मनुष्य थई सिद्ध थाय हो, जशधारी !
भव्य-द्रव्यदेव हुवै नहीं साहिबजी !
ए पिण वरजवा ताय हो, जशधारी !

३०. जावत अपराजित थकी साहिबजी !
अमर चवी उपजेह हो, जशधारी !
भव्य-द्रव्यदेव हुवै सहू साहिबजी !
सव्वट्ठ युगल वरजेह हो, जशधारी !

३१. नरदेवा भगवंतजी ! साहिबजी !
किहां थकी उपजंत हो ? जशधारी !
नरक थकी स्यूं ऊपजै ? साहिबजी !
चिहुं गति पूछा हुंत हो, जशधारी !

---

२३. भवियदव्वदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति—किं नेरइएहिंतो उववज्जंति ? तिरिक्ख-मणुस्स-देवेहिंतो उववज्जंति ?

२४. गोयमा ! नेरइएहिंतो उववज्जंति, तिरिक्ख-मणुस्स-देवेहिंतो वि उववज्जंति।

२५. भेदो जहा वक्कंतीए (प० ६/८७-९२) सव्वेसु उववाएयव्वा जाव अणुत्तरोववाइय त्ति।

२६. नवरं असंखेज्जवासाउय
'असंखेज्जवासाउय' त्ति असंख्यातवर्षायुष्काः कर्म्म-भूमिजाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याः……भव्यद्रव्य-देवा न भवंति। (वृ० प० ५८५,५८६)

२७. अकम्मभूमगअंतरदीवग

२८. भावदेवेष्वेव तेषामुत्पादात्। (वृ० प० ५८६)

२९. सव्वट्ठसिद्धवज्जं

३०. जाव अपराजियदेवेहिंतो वि उववज्जंति।
(श० १२/१६९)

३१. नरदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति—किं नेरइएहिंतो—पुच्छा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३२. जिन भाखै नारक थकी गोयमजी !
नीकलनैं उपजंत हो, जशधारी !
तिरिक्ख मनुष्य मरि नहिं हुवै गोयमजो !
देव थकी पिण हुंत हो, जशधारी !

३२. गोयमा ! नेरइएहिंतो उववज्जंति, नो तिरिक्खजोणिएहिंतो, नो मणुस्सेहिंतो, देवेहिंतो वि उववज्जंति। (भ० श० १२/१७०)

३३. नरक थकी जो ऊपजै साहिबजी !
स्यूं रत्नप्रभा थी हुंत हो, जशधारी !
यावत सप्तम नरक थी साहिबजी !
ह्वै नरदेव महंत हो ? जशधारी !

३३. जइ नेरइएहिंतो उववज्जंति—किं रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति जाव अहेसत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति ?

३४. जिन कहै रत्नप्रभा थकी गोयमजी !
नीकल नरदेव होय हो, जशधारी !
सकर जाव सप्तम थकी साहिबजी !
नीकल नहिं हुवै सोय हो, जशधारी !

३४. गोयमा ! रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति, नो सक्करप्पभापुढविनेरइएहिंतो जाव नो अहेसत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति। (श० १२/१७१)

३५. जो देव थकी प्रभु ! ऊपजै साहिबजी !
स्यूं भवनपति थी होय हो ? जशधारी !
व्यंतर नैं ज्योतिषी थकी साहिबजी !
वैमानिक थी जोय हो ? जशधारी !

३५. जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति ?
वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियदेवेहिंतो उववज्जंति ?

३६. जिन कहै भवनपति थकी गोयमजी !
व्यंतर थी पिण होय हो, जशधारी !
ज्योतिषी वैमानिक थकी गोयमजी !
ह्वै नरदेवज सोय हो, जशधारी !

३६. गोयमा ! भवणवासिदेवेहिंतो वि उववज्जंति, वाणमंतरदेवेहिंतो, एवं सव्वदेवेसु उववाएयव्वा।

३७. भेद पन्नवणा पद छठे साहिबजी !
तिण भेदे करि ताय हो, जशधारी !
जाव सर्वार्थसिद्ध थकी गोयमजी !
पद नरदेवज पाय हो, जशधारी !

३७. वक्कंतीए (प० ६/९२) भेदेणं जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति। (श० १२/१७२)

३८. धर्मदेव भगवंतजी ! साहिबजी !
किहां थकी उपजंत हो ? जशधारी !
नरक थकी स्यूं ऊपजै ? साहिबजी !
तिरि मनु सुर थी हुंत हो ? जशधारी !

३८. धम्मदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति—किं नेरइएहिंतो उववज्जंति—पुच्छा।

३९. पन्नवण पद छट्ठे कह्यो गोयमजी !
तिण भेदे करि हुंत हो, जशधारी !
सर्व थको उपजायवो गोयमजी !
जाव सव्वट्ठसिद्ध अंत हो, जशधारी !

३९. एवं वक्कंतीभेदेणं (प० ६/९१,९२) सव्वेसु उववाएयव्वा जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति।

४०. णवरं तम अहेसप्तमी गोयमजी !
तेऊ वाऊ ताय हो, जशधारी !
वले सगलाई जुगलिया गोयमजी !
धर्मदेव नहिं थाय हो, जशधारी !

४०. नवरं—तम-अहेसत्तम-तेउ-वाउ- असंखेज्जवासाउयअकम्मभूमगअन्तरदीवगवज्जेसु। (श० १२/१७३)

यतनी

४१. तम थी नीकल चारित्र न पाय, सप्तमी-पृथ्वी तेऊ वाय।
सहु युगल ते मनुष्य न थाय, तिण सूं धर्मदेव हुवै नांय।।

४१. 'तम' त्ति षष्ठपृथिवी तत उद्वृत्तानां चारित्रं नास्ति, तथाऽधःसप्तम्यास्तेजसो वायोरसंख्येयवर्षायुष्ककर्मभूमिजेभ्योऽकर्मभूमिजेभ्योऽन्तरद्वीपजेभ्यश्चोद्वृत्तानां मानुषत्वाभावान्न चारित्रं, ततश्च न धर्म्मदेवत्वमिति। (वृ० प० ५८६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. *देवाधिदेव भगवंतजी ! साहिबजी !
किहां थकी उपजंत हो ? जशधारी !
नरक थकी स्यूं ऊपजै ? साहिबजी !
तिरि मनु सुर थी हुंत हो ? जशधारी !

४२ देवातिदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति—किं नेरइएहिंतो उववज्जंति—पुच्छा।

४३. जिन कहै नरक थकी हुवै गोयमजी !
तिर्यंच मनुष्य थी नांहि हो, जशधारी !
देव थकी जे ऊपजै गोयमजी !
देवाधिदेव रै मांहि हो, जशधारी !

४३. गोयमा ! नेरइएहिंतो उववज्जंति, नो तिरिक्खजोणिएहिंतो, नो मणुस्सेहिंतो, देवेहिंतो वि उववज्जंति। (श० १२/१७४)

४४. नारक थी जो ऊपजै गोयमजी !
धुर तीन पृथ्वी थी जोय हो, जशधारी !
शेष च्यार पृथ्वी थकी गोयमजी !
देवाधिदेव न होय हो, जशधारी !

४४. जइ नेरइएहिंतो ? एवं तिसु पुढवीसु उववज्जंति, सेसाओ खोडेयव्वाओ। (श० १२/१७५)
'सेसाओ खोडेयव्वाओ' त्ति शेषाः पृथिव्यो निषेधयितव्या इत्यर्थः। (वृ० प० ५८६)

४५. देव थकी जो ऊपजै गोयमजी ! इत्यादिक प्रश्नेह हो, जशधारी !
सर्व वैमानिक सुर थकी गोयमजी !
पद तीर्थंकर लेह हो, जशधारी !

४५. जइ देवेहिंतो ? वेमाणिएसु सव्वेसु उववज्जंति।

४६. जाव सर्वार्थसिद्ध थकी साहिबजी !
हुवै तीर्थंकर सोय हो, जशधारी !
शेष तीन सुरकाय थी गोयमजी !
देवाधिदेव न होय हो, जशधारी !

४६. जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति सेसा खोडेयव्वा। (श० १२/१७६)

४७. भावदेव भगवंतजी ! साहिबजी !
किहां थकी उपजंत हो ? जशधारी !
स्यूं नारक थी ऊपजै ? साहिबजी !
तिरि मनु सुर थी हुंत हो ? जशधारी !

४७. भावदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

४८. जेम पन्नवणा पद छट्ठे गोयमजी !
भवनपति में जान हो, जशधारी !
ऊपजवो आख्यो तिहां गोयमजी !
तेम इहां पिण आन हो, जशधारी !

४८. एवं जहा वक्कंतीए (प० ६/८१, ९३-९८) भवणवासीणं उववाओ तहा भाणियव्वो। (श० १२/१७७)

पंचविध देवों का स्थिति पद

४९. हे प्रभु ! भव्य-द्रव्यदेव नीं साहिबजी !
स्थिती केतली इष्ट हो ? जशधारी !
अंतर्मुहूर्त्त जघन्य थी गोयमजी !
तीन पल्य उत्कृष्ट हो, जशधारी !

४९. भवियदव्वदेवाणं भंते ! केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?
गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं। (श० १२/१७८)

सोरठा

५०. पंचेन्द्रिय तिर्यंच, अंतर्मुहूर्त्त स्थितिक नर।
सुर में ऊपजै संच, जघन्य स्थितिक भव्य-द्रव्यसुर॥

५०. अन्तर्मुहूर्त्तायुषः पञ्चेन्द्रियतिरश्चो देवेषूत्पादाद्भव्यद्रव्यदेवस्य जघन्याऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिः। (वृ० प० ५८६)

५१. अरु उत्तरकुरु आद, मनुष्य अनैं तिर्यंच जे।
देव विषे उत्पाद, ज्येष्ठ[1] स्थितिक भव्य-द्रव्यसुर॥

५१. उत्तरकुर्वादिमनुजादीनां देवेष्वेवोत्पादात् ते च भव्यद्रव्यदेवाः तेषां चोत्कर्षतो यथोक्ता स्थितिरिति। (वृ० प० ५८६)

---

*लय : शीतल जिन शिवदायका

१. उत्कृष्ट।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२. *नरदेव नीं स्थिति पूछियां साहिबजी !
जघन्य सातसौ वास[1] हो, जशधारी !
चउरासी-लख[2] पूर्व नीं गोयमजी !
उत्कृष्टि स्थिति तास हो, जशधारी !

५३. धर्मदेव नीं स्थिति किती साहिबजी !
जघन्य अंतर्मुहूर्त्त जाण हो, जशधारी !
कोड़ पूर्व उत्कृष्ट हो गोयमजी !
देश ऊण पहिछाण हो, जशधारी !

५२. नरदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं सत्त वाससयाइं, उक्कोसेणं चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं।
(श० १२/१७९)

५३. धम्मदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी। (श० १२/१८०)

सोरठा

५४. अंतर्मुहूर्त्त शेष, आयु छतेज चरण ले।
तास अपेक्षा देख, अंतर्मुहूर्त्त जघन्य स्थिति।।

५५. स्थिति पुव्वकोडी तेह, साधिक अष्टज वर्ष में।
चारित्र ग्रहण करेह, तास अपेक्षा ज्येष्ठ स्थिति।।

५४. धर्मदेवानां 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं' ति योऽन्तर्मुहूर्त्तावशेषायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिदं।(वृ० प० ५८६)

५५. 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी' ति तु यो देशोनपूर्वकोट्यायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिति, ऊनता च पूर्वकोटया अष्टाभिर्वर्षैः अष्टवर्षस्यैव प्रव्रज्यार्हत्वात्।
(वृ० प० ५८६)

५६. *देवाधिदेव नीं स्थिति किती ? साहिबजी !
जघन्य बोहित्तर[3] वास हो, जशधारी !
चउरासी[4] लख पूर्व ही गोयमजी !
स्थिति उत्कृष्टी तास हो, जशधारी !

५७. भावदेव नीं स्थिति किती ? साहिबजी !
जिन कहै जघन्य जगीस हो, जशधारी !
दश हजारज वर्ष नीं गोयमजी !
उत्कृष्ट सागर तेतीस हो, जशधारी !

५६. देवातिदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं बावत्तरिं वासाइं, उक्कोसेणं चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं। (श० १२/१८१)

५७. भावदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं। (श० १२/१८२)

पंचविध देवों का विकुर्वणा पद

५८. भव्य-द्रव्यदेव हे प्रभु ! साहिबजी !
ते सन्नी मनुष्य तिर्यंच हो, जशधारी !
समर्थ इक रूप विकुर्विवा साहिबजी !
कै नाना रूप करिवा संच हो ? जशधारी !

५८. भवियदव्वदेवा णं भंते ! किं एगत्तं पभू विउव्वित्तए ? पुहत्तं पभू विउव्वित्तए ?
भव्यद्रव्यदेवो मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग् वा वैक्रियलब्धिसम्पन्नः 'एकत्वम्' एकरूपं 'प्रभुः' समर्थो विकुर्वयितुं 'पुहुत्तं' ति नानारूपाणि।
(वृ० प० ५८६)

५९. जिन भाखै इक रूप ही गोयमजी !
वैक्रिय करण समर्थ हो, जशधारी !
रूप नाना पिण वैक्रिय गोयमजी !
करिवा समर्थज तत्थ हो, जशधारी !

५९. गोयमा ! एगत्तं पि पभू विउव्वित्तए, पुहत्तं वि पभू विउव्वित्तए।

***लय : शीतल जिन शिवदायका**

१. ब्रह्मदत्त की तरह।
२. भरत की तरह।
३. भगवान् महावीर की तरह।
४. भगवान् ऋषभ की तरह।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०. एक रूप विकुर्वतो गोयमजी !
रूप एकेन्द्रिय एक हो, जशधारी !
जाव पंचेन्द्रिय रूप प्रते गोयमजी !
वैक्रिय समर्थ पेख हो, जशधारी !

६०. एगत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवं वा जाव पंचिंदियरूवं वा।

६१. रूप नाना करतो थको गोयमजी !
एकेन्द्री नां बहु जाण हो, जशधारी !
यावत पंचेन्द्रिय तणां गोयमजी !
रूप घणां पहिछाण हो, जशधारी !

६१. पुहत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवाणि वा जाव पंचिंदियरूवाणि वा।

६२. संख्याता रूप करै तिको गोयमजी !
अथवा रूप असंख्यात हो, जशधारी !
समर्थ आश्री ए जाणियै गोयमजी !
शक्ति इति अवदात हो, जशधारी !

६२. ताइं संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा।

६३. संबद्धा ते मांहोमां मिल्या गोयमजी !
अणमिल्या ते असंबद्ध हो, जशधारी !
सारिखा नैं अणसारिखा गोयमजी !
समर्थ वैक्रिय लद्ध हो, जशधारी !

६३. संबद्धाणि वा असंबद्धाणि वा, सरिसाणि वा असरिसाणि वा विउव्वंति।

६४. विकुर्वणा करनैं पछै गोयमजी !
निज वंछित कार्य करंत हो, जशधारी !
इमज कहिवा नरदेव नै गोयमजी !
धर्मदेव इम हुंत हो, जशधारी !

६४. विउव्वित्ता तओ पच्छा जहिच्छियाइं कज्जाइं करेंति। एवं नरदेवा वि, एवं धम्मदेवा वि।
(श० १२/१८३)

६५. देवाधिदेव नों पूछियां साहिबजी !
भाखै जिन गुणगेह हो, जशधारी !
एक अनेकज रूप नैं गोयमजी !
विकुर्वण समर्थ तेह हो, जशधारी !

६५. देवातिदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! एगत्तं पि पभू विउव्वित्तए, पुहत्तं पि पभू विउव्वित्तए।

६६. पिण न करै निश्चै करि गोयमजी !
विकुर्वण त्रिहुं काल हो, जशधारी !
वैक्रिय रूप किया नहीं गोयमजी !
न करै न करस्यै न्हाल हो, जशधारी !

६६. नो चेव णं संपत्तीए विउव्विसु वा, विउव्वंति वा, विउव्विस्संति वा।

सोरठा

६७. भाव तीर्थंकर देव, औत्सुक्य-वर्जित सर्वथा।
शक्ति छते पिण हेव, वैक्रिय रूप करै नहीं॥

वा०—संपत्तीए कहितां यथोक्तार्थसंपादनेन—वैक्रिय रूप करिवै करी विकुर्वणपणां थकी वैक्रिय रूप कियो नहीं, करै नहीं, करस्यै नहीं। ते वैक्रिय नीं लब्धिमात्र नैं विद्यमानपणां थकी।

६७. देवातिदेवास्तु सर्वथा औत्सुक्यवर्जितत्वान्न विकुर्वते शक्तिसद्भावेऽपि। (वृ० प० ५८६)

वा०—'संपत्तीए' त्ति वैक्रियरूपसम्पादनेन, विकुर्वणशक्तिस्तु विद्यते, तल्लब्धिमात्रस्य विद्यमानत्वात्। (वृ० प० ५८६)

६८. *भावदेव चिहुं जात नां गोयमजी !
भव्य-द्रव्यदेव जेम हो, जशधारी !
कहिवुं सर्व विचार नैं गोयमजी !
पूर्वे भाख्यो तेम हो, जशधारी !

६८. भावदेवा जहा भवियदव्वदेवा।
(श० १२/१८४)

*लय : शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचविध देवों का उद्वर्तना पद

६९. भव्य-द्रव्यसुर हे प्रभु ! साहिबजी !
अंतर-रहितज तेह हो, जशधारी !
नीकल किण गति संचरै साहिबजी !
किण स्थानक उपजेह हो ? जशधारी !

६९. भवियदव्वदेवा ण भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति ? कहिं उववज्जंति ।

७०. स्यूं नरक जाव सुर में ऊपजै ? साहिबजी,
जिन कहै नरके न जाय हो, जशधारी !
तिरि मनु में नहिं ऊपजै साहिबजी !
उपजै सुर गति मांय हो, जशधारी !

७०. किं नेरइएसु उववज्जंति जाव देवेसु उववज्जंति ? गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जंति नो तिरिक्ख-जोणिएसु, नो मणुस्सेसु, देवेसु उववज्जंति ।

७१. सर्व देव में ऊपजै गोयमजी !
जाव सर्वार्थसिद्ध हो, जशधारी !
भव्य-द्रव्यसुर ते भणी गोयमजी !
सहु सुर उत्पत्ति लिद्ध हो, जशधारी !

७१. जइ देवेसु उववज्जंति····जाव (सं० पा०) सव्वट्ठ-सिद्धत्ति । (श० १२।१८५)

७२. नरदेव अंतर-रहित ही साहिबजी !
निकली किण गति जंत हो ? जशधारी !
जिन कहै नरके ऊपजै गोयमजी,
तिरि मनुष्य देव न हुंत हो, जशधारी !

७२ नरदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता—पुच्छा । गोयमा ! नेरइएसु उववज्जंति, नो तिरिक्खजोणिएसु, नो मणुस्सेसु, नो देवेसु उववज्जंति ।

सोरठा

७३. काम भोग अत्यक्त, नरदेवा नरकेज ह्वै ।
तिरि मनु सुर गति व्यक्त, ए त्रिहुं में नहिं ऊपजै ।।
७४. के चक्री महाभाग, सुर गति मांहे ऊपजै ।
नरदेवपणां नैं त्याग, धर्मदेव पाम्ये छते ।।

७३. अत्यक्तकामभोगा नरदेवा नैरयिकेषूत्पद्यन्ते शेषत्रये तु तन्निषेधः । (वृ० प० ५८६)
७४. तत्र च यद्यपि केचिच्चक्रवर्त्तिनो देवेषूत्पद्यन्ते तथाऽपि ते नरदेवत्वत्यागेन धर्म्मदेवत्वप्राप्ताविति न दोषः । (वृ० प० ५८६)

७५. *नरदेव नरके ऊपजै साहिबजी !
तो किसी नरक उपजंत हो ? जशधारी !
जिन कहै सातूंइ नरक में गोयमजी !
उपजी दुःख सहंत हो, जशधारी !

७५. जइ नेरइएसु उववज्जंति ? सत्तसु वि पुढवीसु उववज्जंति । (श० १२।१८६)

७६. धर्मदेव किहां ऊपजै ? साहिबजी !
तब भाखै भगवंत हो, जशधारी !
त्रिहुं गति में नहिं ऊपजै गोयमजी !
सुर गति में उपजंत हो, जशधारी !

७६. धम्मदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता—पुच्छा । गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जंति, नो तिरिक्ख-जोणिएसु, नो मणुस्सेसु, देवेसु उववज्जंति । (श० १२।१८७)

७७. देव विषे जो ऊपजै साहिबजी !
तो किसी जाति में जाय हो, जशधारी !
जिन कहै धुर त्रिहुं जाति में गोयमजी !
धर्मदेव नहिं थाय हो, जशधारी !

७७. जइ देवेसु उववज्जंति किं भवणवासि—पुच्छा । गोयमा ! नो भवणवासिदेवेसु उववज्जंति, नो वाणमंतरदेवेसु उववज्जंति, नो जोइसियदेवेसु उववज्जंति,

७८. वैमानिक विषे ऊपजै गोयमजी !
सर्व वैमानिक मांय हो, जशधारी !
जाव सर्वार्थसिद्ध विषे गोयमजी !
ऊपजवो कहिवाय हो, जशधारी !

७८. वेमाणियदेवेसु उववज्जंति । सव्वेसु वेमाणिएसु उवव-ज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयवेमाणियदेवेसु उववज्जंति ।

---

*लय : शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

७९. कल्प रु कल्पातीत, भेद तास भाख्या विषे।
उपजै एह वदीत, नहिं किलवेषी प्रमुख में।।

८०. *धर्मदेव केइ महामुनि गोयमजी !
सीझै बुझै चित संत हो, जशधारी !
जाव करै अंत दुख तणो गोयमजी !
चर्मशरीरी तंत हो, जशधारी !

८१. देवाधिदेव तीर्थंकरू साहिबजी !
किण गति मे उपजंत हो, जशधारी !
जिन कहै ते सीझै सही गोयमजी !
जाव सर्व दुख अंत हो, जशधारी !

८२. भावदेव किहां ऊपजै साहिबजी !
पद छट्ठे पन्नवण मांय हो, जशधारी !
असुर निकल जिहां ऊपजै गोयमजी !
तिम इहां पिण कहिवाय हो, जशधारी !

पंचविध देवों का संचिट्ठुणा पद

८३. भव्य-द्रव्यदेव हे प्रभु ! साहिबजी !
रहै भव्य-द्रव्यसुर कितो काल हो, जशधारी !
जघन्य अंतर्मुहूर्त्त जिन कहै गोयमजी !
उत्कृष्ट त्रिण पल्य न्हाल हो, जशधारी !

८४. जिम भव-स्थिति पूर्वे कही गोयमजी !
तेहिज संचिट्ठुण काल हो, जशधारी !
जाव भावदेव जाणज्यो गोयमजी !
णवरं विशेषज न्हाल हो, जशधारी !

८५. धर्मदेव नें जघन्य ही गोयमजी !
एक समय अवधार हो, जशधारी !
कोड़ पूर्व उत्कृष्ट ही गोयमजी !
देश ऊण सुविचार हो, जशधारी !

सोरठा

८६. 'जघन्य समय इक न्हाल, धर्मदेव संचिट्ठुणा।
ते किण रीत संभाल ?, तास न्याय इम संभवै।।
८७. शंका पड़ियां ताय, छट्ठा गुणठाणां थकी।
प्रथम गुणठाणे आय, सम्यक्त्व चरण बिहुं गयां।।
८८. शंका मिटियां तेह, चारित्त सम्यक्त्व बिहुं वली।
तुरत तास आवेह, समय एक रहीनें मरै।।
८९. इम संचिट्ठुणकाल, जघन्य समय इक संभवै।
उत्कृष्टो सुविशाल, पूर्व कोड़ देसूण ही।।' (ज० स०)

८०. अत्थेगतिया सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेंति।
(श० १२।१८८)

८१. देवातिदेवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति ? कहिं उववज्जंति ? गोयमा ! सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेंति। (श० १२।१८९)

८२. भावदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टिता—पुच्छा। जहा वक्कंतीए (प० ६।१०१,१०२) असुरकुमाराणं उव्वट्टणा तहा भाणियव्वा। (श० १२।१९०)

८३. भवियदव्वदेवे णं भंते ! भवियदव्वदेवे त्ति कालओ केवच्चिरं होई ?
गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं।

८४. एवं जच्चेव ठिई सच्चेव संचिट्ठणा वि जाव भावदेवस्स, नवरं—

८५. धम्मदेवस्स जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी। (श० १२।१९१)

*लय : शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचविध देवों का अन्तर पद

९०. *अंतर भव्य-द्रव्यदेव नों साहिबजी !
भव्य-द्रव्यसुर मर सोय हो, जशधारी !
काल केतलै ह्वै वली साहिबजी !
भव्य-द्रव्यसुर जोय हो ? जशधारी !

९०. भवियदव्वदेवस्स णं भंते ! केवतियं कालं अंतरं होइ ?

९१. श्री जिन भाखै जघन्य थी गोयमजी !
वर्ष सहस्र दश देख हो, जशधारी !
अंतर्मुहूर्त्त अधिक ही गोयमजी !
तास न्याय संपेख हो, जशधारी !

९१. गोयमा ! जहण्णेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्त-मब्भहियाइं ;

सोरठा

९२. वृत्ति विषे इम वाय, भव्य-द्रव्यदेव ते मरी।
व्यंतर में उपजाय, शुभ पृथ्व्यादिक में जई।।
९३. अंतर्मुहूर्त्त स्थित्त, मरी वलि भव्य-द्रव्यसुर हुवै।
एहवो न्याय प्रवृत्त, मत ए टीकाकार नों।।
९४. अन्य आचार्य कहै एम, बद्धायु भव्य-द्रव्यसुर।
इहां वंछचो धर प्रेम, जिम जघन्य स्थितिए देव थइ।।
९५. त्यांथी चवी सुभेव, अंतर्मुहूर्त्त स्थितिक फुन।
थयो भव्य-द्रव्यदेव, तृतीय भाग में आयु बंध।।

९२,९३. भव्यद्रव्यदेवो भूत्वा दशवर्षसहस्रस्थितिषु व्यन्तरादिषूत्पद्य च्युत्वा शुभपृथिव्यादौ गत्वाऽन्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनर्भव्यद्रव्यदेव एवोपजायत इत्येवं एतच्च टीकामुपजीव्य व्याख्यातं। (वृ० प० ५८७)

९४,९५. अन्ये पुनराहुः—इह बद्धायुरेव भव्यद्रव्यदेवोऽभिप्रेतस्तेन जघन्यस्थितिकाद्देवत्वाच्च्युत्वाऽन्तर्मुहूर्त्त-स्थितिकभव्यद्रव्यदेवत्वेनोत्पन्नस्यान्तर्मुहूर्त्तोपरि देवायुषो बन्धनाद् यथोक्तमन्तरं भवतीति। (वृ० प० ५८७)

वा०—जिम दश हजार वर्ष नो जघन्य देवायु भोगवी पछै अंतर्मुहूर्त्त नां आउखे सन्नी तिर्यंच में ऊपनों। तिहां वलि अंतर्मुहूर्त्त नों तीजो भाग ते पिण अंतर्मुहूर्त्त कहियै। तिण में देवायु बंध्यो। तिवारे तेहनैं भविय-द्रव्यदेव कहियै। इम दश हजार वर्ष अंतर्मुहूर्त्त अधिक अन्तर जाणवो।

९६. तथा भव्य-द्रव्यदेव, अंतर्मुहूर्त्त आउखो।
तास जन्म थी हेव, मरण अवंतर जाणवूं।।
९७. ते भव्य-द्रव्यसुर थाय, यथोक्त अंतर इह विधे।
ए सगलोई न्याय, टीका मांहि कह्यो अछै।।

९६,९७. अथवा भव्यद्रव्यदेवस्य जन्मनोर्मरणयोर्वाऽन्तरस्य ग्रहणाद् यथोक्तमन्तरमिति। (वृ० प० ५८७)

९८. *भव्य-द्रव्यसुर नों आंतरो गोयमजी !
उत्कृष्टो कहिवाय हो, जशधारी !
काल अनंतो आखियो गोयमजी !
वनस्पति रै न्याय हो, जशधारी !

९८. उक्कोसेणं अणंतं कालं—वणस्सइकालो। (श० १२।१९२)

सोरठा

९९. भव्य-द्रव्यसुर न्हाल, सुर थई वनस्पति हुवै।
रही अनंतो काल, भव्य-द्रव्यसुर ह्वै वली।।

१००. *प्रभु ! अंतर कितो नरदेव नो साहिबजी !
जिन कहै जघन्य थी ताय हो, जशधारी !
सागर एक जाझो कह्यो गोयमजी !
निसुणो तेहनों न्याय हो, जशधारी !

१००. नरदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं सातिरेगं सागरोवमं।
'जहण्णेणं साइरेगं सागरोवमं' ति कथम्। (वृ० प० ५८७)

*लय : शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

१०१. भोग तज्यां विण जेह, चक्री जे नारक विषे।
उपजै कर्म वसेह, ते स्थिति उत्कृष्टीज लहै।।

१०२. ते कारण थी ताय, चक्री रत्नप्रभा विषे।
स्थिति इक सागर पाय, भोगव बलि नरदेव ह्वै।।

१०३. इम सागर इक सोय, भव बीजे नरदेव नैं।
चक्र न उपनो जोय, ते प्रथम काल ए अधिक है।।

१०४. *उत्कृष्ट अंतर नरदेव नों साहिबजी!
काल अनंत कहिवाय हो, जशधारी!
देसोन अर्द्ध पुद्गल परा गोयमजी!
तेहनों पिण इम न्याय हो, जशधारी!

सोरठा

१०५. चक्रीपणो विचार, समदृष्टीज उपार्जै।
तसु उत्कृष्टो काल, देश ऊण पुद्गल परा।।

१०६. अंत भवे कोइ तास, चक्रीपणो लही करी।
चरण ग्रही शिव वास, अनंत काल इम आंतरो।।

१०७. *अंतर कितो धर्मदेव नों साहिबजी!
भाखै श्री जगभाण हो, जशधारी!
पृथक्त्व पल्योपम तणो गोयमजी!
जघन्य थकी ए जाण हो, जशधारी!

सोरठा

१०८. चरणवंत करि काल, सुधर्म स्वर्गे सुर हुवै।
पृथक्त्व पल्य स्थिति न्हाल, नरभव पामी चरण लै।।

१०९. नर भवपणैं निहाल, चारित्र विण अद्धा अछै।
अधिक अछै ते काल, पृथक्त्व पल्य रै मांहि ते।।

११०. *धर्मदेव नों आंतरो साहिबजी!
उत्कृष्ट काल अनंत हो, जशधारी!
जाव अर्द्ध पुद्गल परा साहिबजी,
देश ऊण दाखंत हो, जशधारी!

सोरठा

१११. मुनी विराधक होय, पुद्गल अर्द्ध परावरत।
देश ऊण अवलोय, भ्रमण करी वलि मुनि हुवै।।

११२. *देवाधिदेव नों आंतरो साहिबजी!
जिन कहै अंतर नांय हो, जशधारी!
एक वार हिज ते हुवै गोयमजी!
जिनेंद्र शिव पद पाय हो, जशधारी!

*लय : शीतल जिन शिवदायका

---

१०१. अपरित्यक्तसंगाश्चक्रवर्त्तिनो नरकपृथिवीषूत्पद्यन्ते, तासु च यथास्वमुत्कृष्टस्थितयो भवन्ति। (वृ० प० ५८७)

१०२. ततश्च नरदेवो मृतः प्रथमपृथिव्यामुत्पन्नस्तत्र चोत्कृष्टां स्थितिं सागरोपमप्रमाणामनुभूय नरदेवो जातः इत्येवं सागरोपमं। (वृ० प० ५८७)

१०३. सातिरेकत्वं च नरदेवभवे चक्ररत्नोत्पत्तेरर्वाचीनकालेन द्रष्टव्यं। (वृ० प० ५८७)

१०४. उक्कोसेणं अणंतं कालं—अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं। (श० १२।१९३)
उत्कृष्टतस्तु देशोनं पुद्गलपरावर्त्तार्द्धं कथम्? (वृ० प० ५८६)

१०५. चक्रवर्त्तित्वं हि सम्यग्दृष्टय एव निर्वर्त्तयन्ति, तेषां च देशोनापार्द्धपुद्गलपरावर्त्त एव संसारो भवति।

१०६. तदन्त्यभवे च कश्चिन्नरदेवत्वं लभत इत्येवमिति। (वृ० प० ५८७)

१०७. धम्मदेवस्स णं—पुच्छा।
गोयमा! जहण्णेणं पलिओवमपुहत्तं।

१०८. चारित्रवान् कश्चित् सौधर्मे पल्योपमपृथक्त्वायुष्केषूत्पद्य ततश्च्युतो धर्मदेवत्वं लभत इत्येवमिति। (वृ० प० ५८७)

१०९. यच्च मनुजत्वे उत्पन्नश्चारित्रं विनाऽऽस्ते तदधिकमपि सत् पल्योपमपृथक्त्वेऽन्तर्भावितमिति। (वृ० प० ५८७)

११०. उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं। (श० १२।१९४)

११२. देवातिदेवाणं—पुच्छा।
गोयमा! नत्थि अंतरं। (श० १२।१९५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११३. कितो भावदेव नों आंतरो साहिबजी !
उत्तर दे जिनराय हो, जशधारी !
अंतरमुहूर्त्त जघन्य थी गोयमजी !
निसुणो तेहनों न्याय हो, जशधारी !

११३. भावदेवस्स णं —पुच्छा।
गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं।
'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं' ति कथम् ? (वृ० प० ५८७)

सोरठा

११४. सुर चवि तिर्यंच थाय, अंतर्मुहूर्त्त स्थिति लही।
तसु शुभ अध्यवसाय, देवपणैं बलि ऊपजै।।

११४. भावदेवश्च्युतोऽन्तर्मुहूर्त्तमन्यत्र स्थित्वा पुनरपि भावदेवो जात इत्येवं जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति।
(वृ० प० ५८७)

११५. *भावदेव नों आंतरो साहिबजी !
उत्कृष्ट काल अनंत हो, जशधारी !
वनस्पती मांहे भमी गोयमजी !
पंचेंद्रिय थइ सुर अंत हो, जशधारी !

११५. उक्कोसेणं अणंतं कालं—वणस्सइकालो।
(श० १२।१९६)

पंचविध देवों का अल्पबहुत्व पद

११६. ए प्रभु ! भव्य-द्रव्यदेव नैं साहिबजी !
जाव भावसुर पेख हो, जशधारी !
कवण-कवण थी थोड़ा हुवै साहिबजी !
यावत अधिक विशेख हो, जशधारी !

११६. एएसि णं भंते ! भवियदव्वदेवाणं, नरदेवाणं जाव (सं० पा०) भावदेवाण य कयरे कयरेहिंतो जाव (सं० पा०) विसेसाहिया वा ?

११७. जिन कहै थोड़ा सर्व थी गोयमजी !
चक्री जे नरदेव हो, जशधारी !
जंबूद्वीपपन्नती थकी गोयमजी !
कहियै छै हिव भेव हो, जशधारी !

११७. गोयमा ! सव्वत्थोवा नरदेवा।

११८. एक अवसर्प्पिणी नैं विषे गोयमजी !
एक उत्सर्प्पिणी मांय हो, जशधारी !
द्वादश-द्वादश ह्वै चक्री गोयमजी !
नव बल[1] वासू[2] थाय हो, जशधारी !

११९. इक-इक विदेहखेत्र विषे गोयमजी !
चिहुं-चिहुं चक्री थाय हो, जशधारी !
पंच महाविदेह नैं विषे गोयमजी !
जघन्य वीस इण न्याय हो, जशधारी !

सोरठा

१२०. अठवीस विजय रै मांय, वासुदेवज ऊपजै।
पिण चक्री नहिं थाय, किण इक काल जंबू विषे।।

वा०—हे भगवन् ! जंबूद्वीप नामा द्वीप नैं विषे जघन्य पदे अथवा उत्कृष्टपदे केतला चक्रवर्त्ती हुवै ? हे गोतम ! जघन्यपदे च्यार चक्रवर्त्ती हुवै महाविदेह क्षेत्र नैं विषे। उत्कृष्टपणैं तीस चक्रवर्त्ती हुवै। ते किम ? उत्कृष्टपणैं महाविदेह नी २८ विजय में चक्रवर्त्ती हुवै अनैं ४ विजय में वासुदेव हुवै ते भणी। महाविदेहे २८, भरते १, ऐरवते १—इम ३० चक्रवर्त्ती हुवै। बलदेव पिण तेतलाज

वा०—जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे जहण्णपए वा उक्कोसपए वा केवइया चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पण्णत्ता ? गोयमा ! जहण्णपए चत्तारि, उक्कोसपए तीसं चक्कवट्टी सव्वग्गेणं पण्णत्ता।
बलदेवा तत्तिया चेव जत्तिया चक्कवट्टी, वासुदेवावि तत्तिया चेव। (जंबु० ७।१९९,२००)

लय : शीतल जिन शिववायका

१. बलदेव। २. वासुदेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जघन्य पदे ४, उत्कृष्ट पदे ३०, जेतला चक्रवर्त्ती हुवै। वासुदेव पिण तेतलाजहुवै। ते किम? जिवारै उत्कृष्टा ३० चक्रवर्त्ती हुवै तिवारै जघन्य ४ वासुदेव-बलदेव हुवै अनैं जिवारै उत्कृष्टा ३० वासुदेव-बलदेव हुवै तिवारै ४ चक्रवर्त्ती हुवै।

१२१. *संख्यातगुणां नरदेव थी गोयमजी!
देवाधिदेव कहाय हो, जशधारी!
इक-इक भरत ऐरावते गोयमजी!
चउवीस-चउवीस थाय हो, जशधारी!

१२२. इक-इक विदेह जिनेंद्र ह्वै गोयमजी!
जघन्य थकी च्यार-च्यार हो, जशधारी!
उत्कृष्ट पंच विदेह में गोयमजी!
इकसौ साठ उदार हो, जशधारी!

१२१. देवातिदेवा संखेज्जगुणा।

सोरठा

१२३. एक विदेह जगीस, वासुदेव चिहुं जघन्य थी।
उत्कृष्ट ह्वै अठवीस, त्यां पिण तीर्थंकर हुवै॥

१२३. विजयेषु च वासुदेवोपेतेष्वप्युत्पत्तेरिति। (वृ० प० ५८७)

१२४. *संख्यातगुणां धर्मदेव ह्वै गोयमजी!
जाझा बे सहस्र कोड़ हो, जशधारी!
जघन्य थकी ए जाणवा गोयमजी!
चरण करण धर जोड़ हो, जशधारी!

१२४. धम्मदेवा संखेज्जगुणा।
धम्मदेवा संखेज्जगुण' त्ति साधूनामेकदाऽपि कोटीसहस्रपृथक्त्वसद्भावादिति। (वृ० प० ५८७)

१२५. भवियद्रव्यदेव तेहथी गोयमजी!
असंख्यातगुणां होय हो, जशधारी!
श्रावक प्रमुख अछै घणां गोयमजी!
सुर गति गामी सोय हो, जशधारी!

१२५. भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुणा।
भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुण त्ति देशविरतादीनां देवगतिगामिनामसंख्यातत्वात्। (वृ० प० ५८७)

१२६. भावे सुर वर जेह थी गोयमजी!
असंखगुणां आख्यात हो, जशधारी!
च्यार जाति नां देवता गोयमजी!
अति बहु तेह विख्यात हो, जशधारी!

१२६. भावदेवा असंखेज्जगुणा। (श० १२।१९७)
'भावदेवा असंखेज्जगुण' त्ति स्वरूपेणैव तेषामतिबहुत्वादिति। (वृ० प० ५८७)

सोरठा

१२७. भवनपत्यादिक जाण, भावदेव छै तेहनीं।
अल्पबहुत्व पिछाण, कहियै छै हिव आगलै॥

१२७. अथ भावदेवविशेषाणां भवनपत्यादीनामल्पबहुत्वप्ररूपणायाह— (वृ० प० ५८७)

१२८. *भावदेव भगवंतजी! साहिबजी!
भवनपति नैं भाल हो, जशधारी!
व्यंतर नैं वले ज्योतिषी साहिबजी!
वैमानिक सुविशाल हो, जशधारी!

१२८. एएसि णं भंते! भावदेवाणं भवणवासीणं, वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाणं।

१२९. सुधर्मा जाव अच्युत लगे साहिबजी!
नव ग्रैवेयक पेख हो, जशधारी!
अनुत्तर विमाण नां सुर वलि साहिबजी!
कुण-कुण थी जाव विशेख हो? जशधारी!

१२९ सोहम्मगाणं जाव अच्चुयगाणं गेवेज्जगाणं अणुत्तरोववाइयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव (सं०पा०) विसेसाहिया वा?

*लय: शीतल जिन शिवदायका

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३०. जिन कहै थोड़ा सर्व थी गोयमजी !
देव अनुत्तर देख हो, जशधारी !
ऊपरली त्रिक नां सुरा गोयमजी !
संखेजगुणां संपेख हो, जशधारी !

१३०. गोयमा ! सव्वत्थोवा अणुत्तरोववाइया भावदेवा, उवरिमगेवेज्जा भावदेवा संखेज्जगुणा।

१३१. संखेजगुणां मज्झिम त्रिक तणां गोयमजी !
हेठिम त्रिक नां संखेज हो, जशधारी !
संखेज्जगुणां अच्युत सुरा गोयमजी !
जाव आणत सुर मेंज हो, जशधारी !

१३१. मज्झिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा, हेट्ठिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा, अच्चुए कप्पे देवा संखेज्जगुणा जाव आणयकप्पे देवा संखेज्जगुणा।

१३२. इम जिम जीवाभिगम में गोयमजी !
त्रिविध जीव अधिकार हो, जशधारी !
तिहां तीन प्रकारे पुरुष कह्या गोयमजी !
देव मनुष्य तिरि धार हो, जशधारी !

१३२. एवं जहा जीवाभिगमे तिविहे।
'तिविहे' त्ति त्रिविधजीवाधिकार इत्यर्थः।
से किं तं पुरिसा ? पुरिसा तिविहा पण्णत्ता, तंजहा— तिरिक्खजोणियपुरिसा, मणुस्सपुरिसा, देवपुरिसा।
(जीवाजीवा० २।७५)

१३३. तिहां देव पुरुष नों दाखियो गोयमजी !
अल्पबहुत्व विचार हो, जशधारी !
तिम समुच्चय सुर कहिवा इहां गोयमजी !
जाव असंखगुणां सहस्सार हो, जशधारी !

१३३. देवपुरिसे अप्पाबहुयं।

वा०—जीवाभिगम में देवपुरुष नों अल्पबहुत्व कहो। इहां भाव देव नों अधिकार माटे समुच्चय देव शब्द कही अल्पबहुत्व कहिवी। पिण पुरुष शब्द न कहिवो। ते इम—सहस्सारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणां। इम आगल महाशुक्र थी लेई सर्व ठिकाणे देवा कहिवा।

वा०—देवपुरुषाणामल्पबहुत्वमुक्तं तथेहापि वाच्यं, तच्चैवं—सहस्सारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा ....

१३४. सुर असंखगुणा महाशुक्र नां गोयमजी !
लंतक सुर असंख्यात हो, जशधारी !
पंचम ब्रह्म सुरलोक नां गोयमजी !
असंखगुणां आख्यात हो, जशधारी !

१३४. महासुक्के कप्पे देवा असंखेज्जगुणा, लंतए कप्पे देवा असंखेज्जगुणा, बंभलोए कप्पे देवा असंखेज्जगुणा,

१३५. असंखगुणां चउथा कल्प नां गोयमजी !
असंखेज्ज सनंतकुमार हो, जशधारी !
असंख्यातगुणां ईशाण नां गोयमजी !
सुधर्म नां संख धार हो, जशधारी !

१३५. माहिंदे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा, सणंकुमारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा, ईसाणे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा, सोहम्मे कप्पे देवा संखेज्जगुणा।

१३६. सुर भवनपति नां असंखगुणां गोयमजी !
असंखगुणां व्यंतरीक हो, जशधारी !
संख्यातगुणां ज्योतिषी गोयमजी !
ए जाव शब्द में सधीक हो, जशधारी !

१३६. भवणवासिदेवा असंखेज्जगुणा, वाणमंतरा देवा असंखेज्जगुणा, जोतिसिया भावदेवा संखेज्जगुणा।
(श० १२।१९८)

१३७. सेवं भंते ! गोयम कहै साहिबजी !
बारमा शतक नों सार हो, जशधारी !
अर्थ उद्देशक नवम नों साहिबजी !
पंच देव अधिकार हो, जशधारी !

१३७. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १२।१९९)

१३८. दोयसौ नें सतसट्ठमीं साहिबजी !
आखी ढाल उदार हो, जशधारी !
भिखु भारीमाल ऋषिराय थी साहिबजी !
'जय-जश' जय-जयकार हो, जशधारी !

द्वादशशते नवमोद्देशकार्थः ॥१२।९॥

---

१. जीवाजीवाभिगमे २।९६।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २६८

दूहा

१. नवम उदेशक नैं विषे, देव तणो विस्तार।
ते तो आतमवंत ह्वै, हिव आतम अधिकार।।

२. अपर-अपर पर्याय निज, जेह निरंतर जाण।
पोंहचे जावै प्राप्त ह्वै, आत्मा तेह पिछाण।।

या०—अथवा अत धातु गमनार्थ—ज्ञानार्थपणां थकी। अतति कहितां निरंतर जाणैं उपयोग लक्षणपणां थकी, इति आत्मा। प्राकृतपणां थकी सूत्र नैं विषे स्त्रीलिंग निर्देश कियो। आत्मा नैं उपयोग लक्षणपणां थकी सामान्य करिकै एकविध-पणैं, पिण उपाधि भेद नैं अंगीकारपणां थी अष्टविध।

आत्मापद

३. किती प्रकार आत्मा प्रभु! जिन कहै अष्ट प्रकार।
द्रव्यात्मा प्रथम कही, सर्व जीव में सार।।

वा०—द्रव्य त्रिकाल अनुगामी उपसर्जनीकृतकषायादि पर्याय छै। एतलै कषायादिक ७ आत्मा, ते द्रव्य नां लक्षण छै। तेहनैं द्रव्य आत्मा न कहियैं तेहनैं भाव जीव कहियै। अनैं द्रव्य जीव ते तीनूं काल में असंख्यात प्रदेशरूप एक सरीखो जीवपणुं छै। ते छेद्यो छेदाय नहीं, भेद्यो भेदाय नहीं, वधै नहीं, घटै नहीं, सावद्य नहीं, निरवद्य नहीं, तेहनैं द्रव्य आत्मा कहियै।

४. कषाय आत्मा दशम लग, तीजी आत्मा जोग।
ते कहियै तेरम लगे, सर्व विषे उपयोग।।

५. धुर तीजा गुणठाण विण, कहियै आत्मा ज्ञान।
दर्शण आत्मा सर्व में, शुद्ध अशुध सरधान।।

६. चारित्र ते छट्ठा थकी, चवदम लगै विचार।
वीर्य आतमा सिद्ध विण, सर्व जीव संसार।।

७. कषाय आत्मा इहां कही, भाव कषायज च्यार।
जोग आत्मा पिण इहां, भाव जोग व्यापार।।

८. अनाकार साकार ए, उपयोग आत्मा जेह।
ज्ञान आतमा ज्ञान पंच, ज्ञानी विषे कहेह।।

९. सम्यग-दर्शण आदि त्रिण, दर्शण आत्मा ताहि।
चारित्र आत्मा चरित्त पंच, सर्व थकी मुनि मांहि।।

१०. वीर्य आत्मा वीर्य त्रिण, शक्ति रूप कहिवाय।
पुद्गल नां संयोग थी, सर्व संसारी मांय।।

११. ए आठे आत्मा कही, हिव ए मांहोमांय।
जेहनैं ह्वै तेहनों कथन, कहियै निसुणो न्याय।।

१. नवमोद्देशके देवा उक्तास्ते चात्मन इत्यात्म-स्वरूपस्य। (वृ० प० ५८८)

२. 'आय' त्ति अतति—सन्ततं गच्छति अपरापरान् स्वपरपर्यायानित्यात्मा। (वृ० प० ५८९)

वा०—अथवा अतधातोगमनार्थत्वेन ज्ञानार्थत्वादतति—सन्ततमवगच्छति उपयोगलक्षणत्वादित्यात्मा, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे स्त्रीलिंगनिर्देशः तस्य चोपयोगलक्षण-त्वात्सामान्येनैकविधत्वेऽप्युपाधिभेदादष्टधात्वम्। (वृ० प० ५८९)

३. कतिविहा णं भंते! आया पण्णत्ता?
गोयमा! अट्ठविहा आया पण्णत्ता तं जहा—
दवियाया सर्वेषां जीवानाम्। (वृ० प० ५८९)

वा०—तत्र 'दवियाय' त्ति द्रव्यं—त्रिकालानुगाम्युपसर्जनी-कृतकषायादिपर्यायं तद्रूप आत्मा द्रव्यात्मा। (वृ० प० ५८९)

४. कसायाया, जोगाया उवओगाया।

५. नाणाया, दंसणाया।

६. चरित्ताया, वीरियाया। (श० १२।२००)

७. 'कसायाय' त्ति क्रोधादिकषायविशिष्ट आत्मा कषायात्मा⋯'जोगाय' त्ति योगा—मनः-प्रभृति-व्यापारास्तत्प्रधान आत्मा योगात्मा। (वृ० प० ५८९)

८. 'उवओगाय' त्ति उपयोगः—साकारानाकारभेद-स्तत्प्रधान आत्मा उपयोगात्मा⋯'नाणाय' त्ति ज्ञानविशेषितः। (वृ० प० ५८९)

९. चारित्रात्मा विरतानाम्। (वृ० प० ५८९)

१०. वीर्यं उत्थानादि तदात्मा सर्वसंसारिणाम्। (वृ० प० ५८९)

११. एवमष्टधात्मानं प्ररूप्याथ यस्यात्मभेदस्य यदन्य-दात्मभेदान्तरं युज्यते च न युज्यते च तस्य तद्दर्शयितु-माह— (वृ० प० ५८९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य आत्मा का शेष सात आत्मा के साथ अस्तित्व

*रूड़े स्वाम उचारै रे, आतमा प्रश्न उदारं ।। [ध्रुपदं]

१२. द्रव्य आत्मा जेहनें छै प्रभुजी ! कषाय आत्मा छै तेहनें।
जेहनें कषाय आत्मा छै प्रभुजी ! द्रव्य आत्मा छै तेहनें ?

१३. जिन कहै जेहनें द्रव्य आत्मा छै, तास कषाय नीं भयणा।
हुवै कदाच न हुवै किवारै, वारू न्याय सुवयणा ।।

१२. जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स कसायाया ? जस्स कसायाया तस्स दवियाया ?

१३. गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि।
'स्यादस्ति' कदाचिदस्ति सकषायावस्थायां 'स्यान्नास्ति' कदाचिन्नास्ति क्षीणोपशान्तकषायावस्थायां। (वृ० प० ५८९)

सोरठा

१४. द्रव्य सर्व में पाय, धुर गुण[1] थी सिद्धां लगै।
दशमां लगै कषाय, आगल नहिं भजनाज इम ।।

१५. *कषाय आतम छै जेह जीव नें, द्रव्य आतम जे तासं।
निश्चैई करिनें छै जेहनें, ए नियमा सुविमासं ।।

१५. जस्स पुण कसायाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि। (श० १२।२०१)

सोरठा

१६. दशमां लगे कषाय, द्रव्य सर्व जीवां मझे।
नियमा इम कहिवाय, कषाय त्यां निश्चेज द्रव्य ।।

१७. *हे प्रभु ! जेहनें द्रव्य आतम छै, जोग आतम तसु होय।
जेहनें जोग आतम छै तेहनें, द्रव्य आतम छै सोय ?

१८. जिन कहै द्रव्य आतम छै जेहनें, जोग नीं भजना जाणी।
जेहनें जोग आतम तसु द्रव्य नीं, नियमा निश्चै माणी ।।

१७. जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स जोगाया ? जस्स जोगाया तस्स दवियाया ?

१८. गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स जोगाया सिय अत्थि सिय नत्थि, जस्स पुण जोगाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि। (श० १२।२०२)

सोरठा

१९. द्रव्य सर्व में पाय, जोग तेरम गुणठाण लग।
तिण कारण कहिवाय, द्रव्य त्यां भजना जोग नीं ।।

२०. जोग तेरम लग होय, द्रव्य सिद्ध संसारी मझै।
जोग तिहां इम जोय, नियमा द्रव्य तणी कही ।।

२१. *हे प्रभु ! जेहनें द्रव्य आतम छै, उपयोग आतमज तासं ?
सर्व पदे इम प्रश्न मांहोमां, जिन उत्तर दै जासं ।।

२२. जेहनें द्रव्य तास उपयोग नीं नियमा निश्चै कहियै।
जसु उपयोग आतम तसु द्रव्य नीं, ए पिण नियमा लहियै ।।

२१. जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स उवओगाया ? .... एवं सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा।

२२. गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स उवओगाया नियमं अत्थि।
जस्स वि उवओगाया तस्स वि दवियाया नियमं अत्थि।

सोरठा

२३. संसारी सर्व जीव, वलि सिद्धां में पामियै।
आतम द्रव्य सदीव, उपयोग दर्शण पिण लहै ।।

२४. *जेहनें द्रव्य तास ज्ञानातमज, भजनाए करि भणवो।
ज्ञान आतम छै तास द्रव्य नीं नियमा निश्चै गुणवो ।।

२४. जस्स दवियाया तस्स नाणाया भयणाए। जस्स पुण नाणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि।

---

*लय : रूडै चन्द निहालै रे

१. गुणस्थान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

२५. द्रव्य सर्व में जाण, धुर तीजा गुणठाण विण ।
ज्ञानातमा पहिछाण, भजना नियमा ते भणी ।।

२६. *जेहनैं द्रव्य तास दर्शन नीं, नियमा निश्चै होय ।
जेहनैं दर्शण तास द्रव्य नीं, ए पिण नियमा जोय ।।

सोरठा

२७. 'द्रव्य सर्व में होय, सम्यक मिथ्या मिश्र ए ।
त्रिहुं दर्शन अवलोय, दर्शण आतमा सर्व में ।।
२८. चक्षू दर्शण आद, तसु दर्शण आतमा कही ।
वृत्ति विषे ए वाद, तेह बात मिलती नथी ।।
२९. शतक पचीसम जोग, आख्यो सप्तमुद्देशके ।
अनाकार उपयोग, दशमें गुणठाणे नथी ।।
३०. दर्शण आतमा जान, ते तो सगला जीव में ।
तिण कारण श्रद्धान, तसु दर्शण आतमा कही ।।
३१. तेरम पद में ताम, जोग परिणामिक भेद दश ।
त्यां उपयोग परिणाम, ज्ञान दर्शण चारित्र कह्या ।।
३२. दर्शण तीन प्रकार, सम्मद्दंसण मिथ्या वलि ।
सम्यकमिथ्या धार, ए तीनूं श्रद्धान है ।।
३३. जे कषाय परिणाम, कहियै कषाय आतमा ।
जोग परिणामिक ताम, तस जोगातम कहीजियै ।।
३४. जे उपयोग परिणाम, कहियै उपयोग आतमा ।
चरित्त परिणामिक ताम, चारित्र आतम कही तसु ।।
३५. तिम दर्शन परिणाम, दर्शन आतम कहीजियै ।
ते श्रद्धान तमाम, शुद्ध अशुद्ध बिहूं अछै ।।
३६. तिणसूं नियमा न्हाल, द्रव्य तिहां दर्शण तणी ।
दर्शण तिहां संभाल, द्रव्य तणी नियमा अछै ।।' (ज०स०)

३७. *जेहनैं द्रव्य तास चारित्र नीं, भजना विध सूं भणियै ।
जेहनैं चारित्त तास द्रव्य नीं, नियमा निश्चै थुणियै ।।

सोरठा

३८. द्रव्य सर्व में होय, चारित्त छठा गुण थकी ।
चवदम लग अवलोय, भजना नियमा ते भणी ।।

३९. *जेहनैं द्रव्य तास वीर्य नीं, भजना वीर वखाणी ।
जेहनैं वीर्य तास द्रव्य नीं, नियमा निश्चै जाणी ।।

सोरठा

४०. द्रव्य सर्व में जाण, वीर्य सिद्ध विण सर्व में ।
धुर भजना इम छाण, नियमा दूजो प्रश्न ह्वै ।।

---

२६. जस्स दवियाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि, जस्स वि दंसणाया तस्स वि दवियाया नियमं अत्थि ।

२८. यथा चक्षुर्दर्शनादिदर्शनवतां जीवत्वमिति ।
(वृ० प० ५८९,५९०)

२९. भगवई २५।४९८

३७. जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए, जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया नियमं अत्थि ।

३९. जस्स दवियाया तस्स वीरियाया भयणाए, जस्स पुण वीरियाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि ।
(श० १२।२०३)

---

*लय : रूड़े चन्द निहालै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कषाय आत्मा का शेष छह आत्मा के साथ अस्तित्व

४१. *जेहनैं प्रभुजी ! कषाय आत्मा, जोग आत्मा छै जासं ।
जेहनैं जोग आत्मा आखी, कषाय आत्मा तासं ।।

४१. जस्स णं भंते ! कसायाया तस्स जोगाया—पुच्छा ।

४२. जिन कहै जेहनैं कषाय आतमा, जोग नीं नियमा गुणियै ।
जोग आतम जिहां कषायआतमा, भजनाए करि भणियै ।।

४२. गोयमा ! जस्स कसायाया तस्स जोगाया नियमं अत्थि, जस्स पुण जोगाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि ।

सोरठा

४३. दशमा लगे कषाय, जोगातमा तेरम लगै ।
तिण कारण कहिवाय, धुर नियमा भजना पछिम ।।

४४. *जास कषाय तास उपयोग नीं, नियमा निश्चै धारी ।
उपयोग आतम जिहां कषाय नीं, भजना ए सुविचारी ।।

४४. एवं उवओगायावि समं कसायाया नेयव्वा ।

सोरठा

४५. दशमा लगै कषाय, सर्व विषे उपयोग है ।
इण कारण ए न्याय, धुर नियमा भजना पछिम ।।

४६. *जास कषाय तास ज्ञानातमज, ज्ञान तिहांज कषाय ।
बिहु परस्पर भजना भणवी, तास विचारो न्याय ।।

४६. कसायाया य नाणाया य परोप्परं दो वि भइयव्वाओ ।

सोरठा

४७. दशमा लगे कषाय, प्रथम तृतीय गुणठाण विण ।
ज्ञान अन्य गुण पाय, तिण सुं धुर भजना कही ।।

४८. किणहिक ज्ञानी मांहि, कहियै कषाय आतमा ।
किण ज्ञानी में नांहि, ते माटै भजना पछिम ।।

४९. *जास कषाय तास दर्शण नीं, नियमा श्री जिन आखै ।
दर्शण तिहां कषायातमा नीं, भजना भगवंत भाखै ।।

४९. जहा कसायाया य, उवओगाया य तहा कसायाया य दंसणाया य ।

सोरठा

५०. दशमा लगै कषाय, दर्शण आतम सर्व में ।
धुर नियमा इण न्याय, पश्चिम भजना पेखियै ।।

५१. *जास कषाय तास चारित्त नीं, चारित्त तिहां कषाय ।
बिहुं परस्पर भजना भणवी, विमल विचारी न्याय ।।

५१. कसायाया य चरित्ताया य दो वि परोप्परं भइयव्वाओ ।

सोरठा

५२. दशमा लगे कषाय, चारित्त छठा ठाण थी ।
चवदम लगे कहाय, ते माटे भजना बिहुं ।।

५३. *जास कषाय तास वीर्यात्मा, नियमा निश्चै कहियै ।
वीर्यातमा साथे कषाय नीं, भजनाविध सुलहियै ।।

५३. जहा कसायाया य जोगाया य तहा कसायाया य वीरियाया य भाणियव्वाओ ।

***लय : रूडै चन्द निहालै रे**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

५४. दशमा लगे कषाय, वीर्य सहु संसारिका।
धुर नियमा इण न्याय, भजना पश्चिम जाणवी ।।

योग आत्मा का शेष पांच आत्मा के साथ अस्तित्व

५५. *जिम कषाय संघात उपरला, पद आख्या सुप्रतीत।
जोग संघात तिमज उपरला, कहिवा पद इह रीत ।।

५६. जोग तिहां उपयोग नीं नियमा, जोग तेरम लग ताय।
उपयोग आतमा सब जीवां में, नियमा छै इण न्याय ।।

५७. उपयोग तिहां जोग नीं भजना, उपयोग सर्व जीवां में।
जोग तेरम गुणठाण लगै छै, ए भजना इम पामे ।।

५८. जोगात्मा तिहां ज्ञान नीं भजना, जोग तेरम लग जाणी।
ज्ञानात्मा पहिला तीजा विण, इम भजना पहिछाणी ।।

५९. ज्ञानात्मा तिहां जोग नीं भजना, प्रथम तृतीय विण नाण।
जोगात्मा नहिं चवदम सिद्धे, इम भजना पहिछाण ।।

६०. जोग तिहां दर्शण नीं नियमा, जोग तेरम लग जोय।
दर्शण आतमा सब जीवां में, इम नियमा अवलोय ।।

६१. दर्शण तिहां जोग नीं भजना, दर्शण सिद्ध संसारी।
जोग तेरम लग पिण नहिं आगे, तिणसूं भजना धारी ।।

६२. जोग तिहां चारित्त नीं भजना, जोग तेरम लग कहियै।
चारित्त छठा थी चवदम लग, तिणसूं भजना लहियै ।।

६३. चारित्त तिहां जोग नीं भजना, छठा थी चवदम चरणं।
जोग नहीं चवदम गुणठाणे, इम भजना तसु वरणं ।।

६४. जोग तिहां वीर्य नीं नियमा, जोग त्रयोदश ठाणं।
वीर्य आतमा चवदम लग है, ए नियमा इम जाणं ।।

६५. वीरज तिहां जोग नीं भजना, वीरज चवदम तांई।
जोग तेरम लग पिण नहिं चवदम, इम भजना है ज्यांही ।।

उपयोग आत्मा का शेष चार आत्मा के साथ अस्तित्व

६६. द्रव्य संघात ज्ञान प्रमुख कही, तिम उपयोग संघात।
ऊपरली आतम प्रति कहियै, तास सुणो अवदात ।।

६७. उपयोग तिहां ज्ञान नीं भजना, उपयोग सर्व जीवां में।
ज्ञान पहिलै तीजै नहिं पावै, इम भजना कहि त्यां में ।।

६८. ज्ञान तिहां उपयोग नीं नियमा, प्रथम तृतीय विण नाणं।
उपयोग आतमा सब जीवां में, तिणसूं नियमा जाणं ।।

६९. उपयोग तिहां दर्शण नीं नियमा, दर्शण तिहां उपयोग।
ए पिण नियमा निश्चै कहिवी, सब में बिहुं संयोग ।।

---

*लय : रूडै चन्द निहालै रे

५५. एवं जहा कसायायाए वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाए वि उवरिमाहिं भाणियव्वाओ ।

५६. यस्य योगात्मा तस्योपयोगात्मा नियमाद् यथा संयोगानाम् (वृ० प० ५९०)

५७ यस्य पुनरुपयोगात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति यथा संयोगानां स्यान्नास्ति यथाऽयोगिनां सिद्धानां चेति । (वृ० प० ५९०)

५८. यस्य योगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टीनामिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृष्टीनामिव । (वृ० प० ५९०)

५९. यस्य ज्ञानात्मा तस्यापि योगात्मा स्यादस्ति सयोगिनामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति । (वृ० प० ५९०)

६०. यस्य योगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव योगिनामिव । (वृ० प० ५९०)

६१ यस्य च दर्शनात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति योगवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिव । (वृ० प० ५९०)

६२. यस्य योगात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति विरतानामिव स्यान्नास्त्यविरतानामिव । (वृ० प० ५९०)

६३. यस्यापि चारित्रात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति सयोगचारित्रवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति । (वृ० प० ५९०)

६४. यस्य योगात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव योगसद्भावे वीर्यस्यावश्यम्भावात् । (वृ० प० ५९१)

६५. यस्य तु वीर्यात्मा तस्य योगात्मा भजनया यतो वीर्यविशेषवान् सयोग्यपि स्याद् यथा सयोगकेवल्यादिः अयोग्यपि स्याद् यथाऽयोगिकेवलीति । (वृ० प० ५९१)

६६. जहा दवियायाए वत्तव्वया भणिया तहा उवओगायाए वि उवरिल्लाहिं समं भाणियव्वा ।

६७. यस्योपयोगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृशां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृशाम् । (वृ० प० ५९१)

६८. यस्य च ज्ञानात्मा तस्यावश्यमुपयोगात्मा सिद्धानामिवेति । (वृ० प० ५९१)

६९. यस्योपयोगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव यस्यापि दर्शनात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येव यथा सिद्धादीनामिवेति । (वृ० प० ५९१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. उपयोग तिहां चारित्र नीं भजना, उपयोग सर्व ठिकाणं।
चारित्त छठा थी चवदम लग, तिणसूं भजना जाणं ।।
७१. चारित्त तिहां उपयोग नीं नियमा, छठा थी चवदम चरणं।
उपयोग आतमा सर्व विषे है, तिणसूं नियमा वरणं ।।
७२. उपयोग तिहां वीर्य नीं भजना, उपयोग सिद्ध संसारी।
वीर्य आतमा चवदम लग है, तिणसूं भजना विचारी ।।
७३. वीर्य तिहां उपयोग नीं नियमा, वीर्य सर्व संसारी।
उपयोग संसारी सिद्ध विषे छै, तिणसूं नियमा धारी ।।

७०. *यस्योपयोगात्मा तस्य* चारित्रात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति यथा संयतानामसंयतानां च। (वृ० प० ५९१)
७१. यस्य तु चारित्रात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येवेति यथा संयतानाम्। (वृ० प० ५९१)
७२. यस्योपयोगात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव। (वृ० प० ५९१)
७३. यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति। (वृ० प० ५९१)

ज्ञान आत्मा का शेष तीन आत्मा के साथ अस्तित्व

७४. ज्ञान तिहां दर्शण नीं नियमा, प्रथम तृतीय विण ज्ञानं।
दर्शण आतमा सर्व विषे है, तिणसूं नियमा जानं ।।
७५. दर्शण तिहां ज्ञान नीं भजना, दर्शण सब जीवां में।
ज्ञानात्मा पहिलै तीजै नहिं, तिणसूं भजना पामे ।।
७६. ज्ञान तिहां चारित्त नीं भजना, प्रथम तृतीय विण नाणं।
चारित्त छट्ठा थी चवदम लग, तिणसूं भजना जाणं।
७७. चारित्त तिहां ज्ञान नीं नियमा, छट्ठा थी चवदम चरणं।।
ज्ञान प्रथम तीजा विण सहु में, तिणसूं नियमा वरणं।
७८. ज्ञान तिहां वीर्य नीं भजना, प्रथम तृतीय विण नाणं।
वीर्य चवदम पिण नहीं सिद्ध में, तिणसूं भजना जाणं ।।
७९. वीर्य तिहां ज्ञान नीं भजना, वीर्य चवदमै तांई।
ज्ञानात्मा पहिलै तीजै नहिं, तिणसूं भजना ज्यांही ।।

७४. जस्स नाणाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि।
७५. जस्स पुण दंसणाया तस्स नाणाया भयणाए।
७६. जस्स नाणाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय नत्थि।
७७. जस्स पुण चरित्ताया तस्स नाणाया नियमं अत्थि।
७८,७९. नाणाया वीरियाया दो वि परोप्परं भयणाए।
यस्य ज्ञानात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति केवल्यादीनामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्यापि वीर्यात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टेरिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृश इवेति। (वृ० प० ५९१)

दर्शन आत्मा का शेष दो आत्मा के साथ अस्तित्व

८०. दर्शण तिहां चारित्र नीं भजनां, दर्शण सिद्ध संसारी।
चारित्त सिद्धां में नहिं पावै, तिणसूं भजना विचारी ।।
८१. चारित्त तिहां दर्शण नीं नियमा, छठा थी चवदम चरितं।
दर्शण सिद्ध संसारिक सहु में, तिणसूं नियमा कथितं ।।
८२. दर्शण तिहां वीर्य नीं भजना, दर्शण सिद्ध संसारी।
वीर्य संसारिक पिण नहीं सिद्ध में, तिणसूं भजना धारी ।।
८३. वीर्य तिहां दर्शण नीं नियमा, वीर्य चवदमै तांई।
दर्शण संसारिक सिद्धां में, तिणसूं नियमा ज्यांही ।।

८०-८३. जस्स दंसणाया तस्स उवरिमाओ दो वि भयणाए, जस्स पुण ताओ तस्स दंसणाया नियमं अत्थि।
यस्य दर्शनात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति संयतानामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिव, यस्य च चारित्रात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव साधूनामिवेति। तथा यस्य दर्शनात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्य च वीर्यात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति। (वृ० प० ५९१)

चारित्र आत्मा का एक वीर्य आत्मा के साथ अस्तित्व

८४. चारित्र तिहां वीर्य नीं नियमा, छट्ठा थी चवदम चरणं।
वीर्य धुर गुण थी चवदम लग, तिणसूं नियमा वरणं।।
८५. वीर्य तिहां चारित्र नीं भजना, वीर्य सर्व संसारी।
चारित्र धुर गुण पंच न पावै, तिणसूं भजना धारी ।।

८४. जस्स पुण चरित्ताया तस्स वीरियाया नियमं अत्थि।
यस्य चारित्रात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव, वीर्यं विना चारित्रस्याभावात्। (वृ० प० ५९१)
८५. जस्स पुण वीरियाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय नत्थि। (श० १२।२०४)
यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति साधूनामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिव। (वृ० प० ५९१)

सोरठा

८६. अष्ट आतम नीं जाण, कही मांहोमां योजना।
अल्पबहुत्व पिछाण, हिव कहियै ते सांभलो।।

८६. अधुनैषामेवात्मनामल्पबहुत्वमुच्यते। (वृ० प० ५९१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आठ आतमा का अल्पबहुत्व पद

८७. *हे भगवंत ! आठ आतमा में, कवण-कवण थी कहियै।
अल्प बहु तुल्य विशेष अधिका ? हिव जिन उत्तर दइयै।।

८८. सर्व थी थोड़ा चरित्त आतम नां, वृत्ति में कह्या संख्यात।
तिण कारण ए पंच चारित्रिया, सर्वविरत आख्यात।।

सोरठा

८९. 'जीव परिणामिक मांय, तेरम पद दश भेद त्यां।
चरित्त परिणाम कहाय, चारित्त पंच कह्या तिहां।।

९०. वलि अनुयोगदुवार, चारित्र पंच थकी जुदो।
चरित्ताचरित्त उदार, क्षयोपशम-निप्पन कह्यो।।

९१. अष्टम शतक मझार, द्वितीय उद्देशक भगवती।
चरित्ताचरित्त उदार, चारित्र पंच थकी जुदो।।

९२. ते थी इहां चरित्त, देश थकी नों कथन नहीं।
सर्व चरित्त आश्रित्त, संख्याता आख्या वृतौ।।' (ज०स०)

९३. *तेहथी अनंतगुणां ज्ञानातमा, सिद्ध प्रमुख समदृष्टी।
चारितिया थी अनंतगुणां है, ज्ञानी ते गुण इष्टी।।

सोरठा

९४. अनंतगुणां रै न्याय, सिद्धां में चारित्र नथी।
खायक भाव शोभाय, पिण पंच चारित्र पावै नहीं।।

९५. *तेहथी अनंतगुणां कषायातमा, सिद्ध थकी अति ज्यांही।
धुर गुणठाणा थी दशमा तांइ, कषाय उदयवंत त्यांही।।

९६. तेहथी विसेसाहिया जोगातमा, अकषाई पिण एह।
ग्यारम बारम तेरम गुण नां, जोगवंत छै जेह।।

९७. तेहथी विशेषाधिक वीर्यातमा, अजोगी वीर्यवंत।
एह विशेष अधिक जिन आख्या, पंच अक्षर स्थिति संत।।

९८. द्रव्य उपयोग दर्शण तिहुं तुल्ला, तेहथी विशेषाधिक कहियै।
सिद्ध राशि करि अधिक हुवै छै, ए सिद्ध विषे पिण लहियै।।

९९. बारम शतक दशम नुं देश, बेसौ अडसठमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे, 'जय-जश' मंगलमाल।।

८७. एयासि णं भंते ! दवियायाणं कसायायाणं जाव वीरियायाण य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया वा ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

८८. गोयमा ! सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ।
'सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ' त्ति चारित्रिणां संख्या-तत्वात् (वृ० प० ५९१)

८९. पण्ण० । १३।२,१२

९०. अणु० सू० २८५

९१. भगवई ८।१६३

९३. नाणायाओ अणंतगुणाओ।
'णाणायाओ अणंतगुणाओ' त्ति सिद्धादीनां सम्यग्दृशां चारित्रिभ्योऽनन्तगुणत्वात्। (वृ० प० ५९१)

९५. कसायायाओ अणंतगुणाओ।
'कसायाओ अणंतगुणाओ' त्ति सिद्धेभ्यः कषायो-दयवतामनन्तगुणत्वात्। (वृ० प० ५९१)

९६. जोगायाओ विसेसाहियाओ।
'जोगायाओ विसेसाहियाओ' त्ति अपगतकषायोदयै-र्योगवद्भिरधिका इत्यर्थः। (वृ० प० ५९१)

९७. वीरियायाओ विसेसाहियाओ।
'वीरियायाओ विसेसाहियाओ' त्ति अयोगिभिरधिका इत्यर्थः, अयोगिनां वीर्यवत्त्वादिति। (वृ० प० ५९१)

९८. उवओग-दविय-दंसणायाओ तिण्णि वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ। (श० १२।२०५)
ते च वीर्यात्मभ्यः सिद्धराशिनाऽधिका भवन्तीति।
(वृ० प० ५९१,५९२)

*लय : रूडे चन्द निहालै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २६९

दूहा

१. सरूप आतमा नोंज हिव, कहूं निरूपण अर्थ।
गोतम प्रश्न तणो दियै, उत्तर वीर तदर्थ ॥

आत्मा के साथ ज्ञान दर्शन का भेदाभेद

*सुणज्यो आतम नो अधिकार,
गोयम पूछयां कहै जगतार ॥ [ध्रुपदं]

२. आतमा ही प्रभु ! ज्ञान प्रधानं, अथवा हुवै अनेरो ज्ञानं ?
जिन कहै आतमा ज्ञान कदाचित, ते समदृष्टी छते सुवाचित ॥

३. कदाचित अज्ञान पिछाण, मिथ्याती रै मति प्रमुख अनाण।
ज्ञान वली निश्चै करि जेह, आतमाहीज कहीजै तेह ॥

४. हे प्रभु ! आतम नारक नैं ज्ञान, कै आतम थकी अन्य ज्ञान पिछान ?
जिन कहै नारक नैं कदा आतम ज्ञान, कदाचित अज्ञान पिछान ॥

५. समदृष्टी रै कहियै ज्ञान, मिथ्याती रै अज्ञान पिछान।
ज्ञान वली नारक नैं जास, निश्चै आतम कहीजै तास ॥

६. जावत थणियकुमार नैं एम, भणवूं नारक नैं कह्यूं तेम।
प्रभु ! पृथ्वी रै आतम अज्ञान, कै आतम थी अन्य अज्ञान पिछान ?

७. जिन कहै पृथ्वी नैं निश्चै आतम अज्ञान,
अज्ञान पिण नियमा आतम सुजान।
जावत वनस्पति नैं एम,
आख्युं पृथ्वी नैं कह्युं तेम ॥

८. बे[1] ते[2] जावत वैमानिक सार, नारक नैं कह्यु जिम अवधार।
आतम प्रभुजी ! दर्शण पिछाण, आतम थकी अन्य दर्शण जाण?

९. जिन कहै आतम निश्चै दर्शण ही, दर्शन पिण निश्चै आतम ही।
आतम नारक नैं दर्शन भगवन! कै आतम थी अन्य नारक नैं दर्शन ?

---

*लय : सोहि सयाणा अवसर साधै

१. द्वीन्द्रिय

२. त्रीन्द्रिय

---

१. अथात्मन एव स्वरूपनिरूपणायाह—(वृ० प० ५९२)

२. आया भंते ! नाणे ? अण्णे नाणे ? गोयमा ! आया सिय नाणे
आत्मा स्याज्ज्ञानं सम्यक्त्वे सति मत्यादि-ज्ञानस्वभावत्वात्तस्य। (वृ० प० ५९२)

३. सिय अण्णाणे, नाणे पुण नियमं आया। (श० १२।२०६)
स्यादज्ञानं मिथ्यात्वे सति तस्य मत्यज्ञानादि-स्वभावत्वात्, ज्ञानं पुनर्नियमादात्मा आत्मधर्मत्वा-ज्ज्ञानस्य। (वृ० प० ५९२)

४. आया भंते ! नेरइयाणं नाणे ? अण्णे नेरइयाणं नाणे ?
गोयमा ! आया नेरइयाणं सिय नाणे, सिय अण्णाणे।

५. नाणे पुण से नियमं आया।
आत्मा नारकाणां स्याज्ज्ञानं सम्यग्दर्शनभावात् स्यादज्ञानं मिथ्यादर्शनभावात्। (वृ० प० ५९२)

६. एवं जाव थणियकुमाराणं। (श० १२।२०७)
आया भंते ! पुढविकाइयाणं अण्णाणे ? अण्णे पुढवि-काइयाणं अण्णाणे ?

७. गोयमा ! आया पुढविकाइयाणं नियमं अण्णाणे, अण्णाणे वि नियमं आया। एवं जाव वणस्सइ-काइयाणं।

८. बेइंदिय-तेइंदियाणं जाव वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं। (श० १२।२०८)
आया भंते ! दंसणे ? अण्णे दंसणे ?

९. गोयमा ! आया नियमं दंसणे, दंसणे वि नियमं आया। (श० १२।२०९)
आया भंते ! नेरइयाणं दंसणे ? अण्णे नेरइयाणं दंसणे ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. जिन भाखै नारक नैं जाण, आतमा निश्चै दर्शन छाण।
दर्शण शुद्ध अशुद्ध सरधेह, निश्चैइ आतमा कहियै तेह ।।

१० गोयमा ! आया नेरइयाणं नियमं दंसणे, दंसणे वि से नियमं आया।
सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्ट्योर्दर्शनस्याविशिष्टत्वादात्मा दर्शनं दर्शनमप्यात्मैवेति वाच्यं। (वृ० प० ५९२)

११. इम जाव वैमानिक नैं अवधार, अंतर-रहित दंडक सुविचार।
जीवात्मा नों कह्यो विस्तार, बुद्धिवंत लीज्यो न्याय विचार।।

११. एवं जाव वेमाणियाणं निरंतरं दंडओ। (श० १२।२१०)

सोरठा

१२. आतमा तणो स्वरूप, आख्यो तिण अधिकार थी।
रत्नप्रभादि सद्रूप, आतमा—छतापणो ह्विवै ।।
१३. तेह-तेह पर्याय, पामै जेह निरंतरे।
आतमा नाम कहाय, सद्रूपा अस्तिपणो ।।

१२. आत्माधिकाराद्रत्नप्रभादिभावानात्मत्वादिभावेन चिन्तयन्नाह— (वृ० प० ५९५)
१३. अतति—सततं गच्छति तांस्तान् पर्यायानित्यात्मा ततश्चात्मा—सद्रूपा रत्नप्रभा पृथिवी। (वृ० प० ५९५)

रत्नप्रभा आदि पृथ्वी आतमा या नोआतमा ?

१४. *रत्नप्रभा पृथ्वी भगवंत ! आतम तथा तसु अन्य कहंत ?
जिन कहै रत्नप्रभा ए किवार, कहियै आतम तास सुविचार ।।

१४. आया भंते ! रयणप्पभा पुढवी ? अण्णा रयणप्पभा पुढवी ?
गोयमा ! रयणप्पभा पुढवी सिय आया।

१५. कदाचित नोआतम कहाय, तास न्याय आगल छै ताय।
अवक्तव्य किणवार कहाय, आतम नोआतम बिहुं कहि सकै नांय।।

१५. सिय नोआया, सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२११)
'सिय अवत्तव्वं' त्ति आत्मत्वेनानात्मत्वेन च व्यपदेष्टुमशक्यं वस्त्विति भावः। (वृ० प० ५९५)

१६. किण अर्थे प्रभु ! एम कहाय, रत्नप्रभा पृथ्वी ए ताय।
कदाचित आतम अवलोय, कदाचित नोआतम सुजोय ?
१७. कदाचित अवक्तव्य एह, आतम नोआतम कहि न सकेह।
ए तीनूंइ प्रश्न नो न्याय, पूछ्यो गोतम गणधर ताय ।।
१८. जिन कहै रत्नप्रभा छै ताय, स्वपर्याइं आतम कहाय।
पोता नां वर्णादिक पर्याय, आतम कहीजै तसु अपेक्षाय ।।

१६,१७. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—रयणप्पभा पुढवी सिय आया, सिय नोआया, सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य ?

१८. गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया।
'अप्पणो आइट्ठे' त्ति आत्मनः—स्वस्य रत्नप्रभाया एव वर्णादिपर्यायैः 'आदिष्टे' आदेशे सति तैर्व्यपदिष्टा सतीत्यर्थः आत्मा भवति, स्वपर्यायापेक्षया सतीत्यर्थः (वृ० प० ५९४)

१९. अन्य पृथ्वी नां वर्णादिक नांय, तेह अपेक्षा नोआतम कहाय।
बिहुं नां वर्णादिक पर्याय, तास अपेक्षा अवक्तव्य ताय।।
२०. आतम नोआतम बिहुं कहि सकै नांहि, तेह अवक्तव्य कहियै ताहि।
रत्नप्रभा तिण अर्थे कहाय, आतम नोआतम अवक्तव्य ताय।।

१९,२०. परस्स आदिट्ठे नोआया, तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं—रयणप्पभा पुढवी आयाति य नोआयाति य। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—रयणप्पभा पुढवी सिय आया, सिय नोआया, सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२१२)
'परस्स आइट्ठे'···पररूपापेक्षयाऽसतीत्यर्थः,····
'अवक्तव्यम्' अवाच्यं वस्तु स्यात्, तथाहि—न ह्यसौ आत्मेति वक्तुं शक्या, परपर्यायापेक्षयाऽनात्मत्वात्तस्याः नाप्यनात्मेति वक्तुं शक्या, स्वपर्यायापेक्षया तस्या आत्मत्वादिति। (वृ० प० ५९५)

२१. सक्करप्रभा प्रभु ! आतम कहाय ? रत्नप्रभा जिम कहियै ताय।
जाव सप्तमी पृथ्वी एम, आतम नोआतम अवक्तव्य तेम ।।

२१. आया भंते ! सक्करप्पभा पुढवी ?
जहा रयणप्पभा पुढवी तहा सक्करप्पभावि। एवं जाव अहेसत्तमा। (श० १२।२१३)

---

*लय : सोहि सयाणा अवसर साधै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. निज पर्याय सर्व रे मांय, ते माटै ते आत्म कहाय।
पर पर्याय नहीं सहु मांहि, तिणसुं नोआत्म कहीजै ताहि ।।
२३. बिहुं पर्याय तणी अपेक्षाय, अवक्तव्य कहियै इण न्याय।
आत्म पिण तसु कहि सकै नांय, नोआत्म पिण कहिय न जाय।।
२४. तिणसूं अवक्तव्य कहियै ताय, बिहुं पर्याय तणी अपेक्षाय।
प्रथम कल्प नीं पूछा कीध, श्री जिन उत्तर दियै प्रसीध ।।

२४. आया भंते ! सोहम्मे कप्पे—पुच्छा।

सौधर्म आदि स्वर्ग आत्मा या नोआत्मा ?

२५. सौधर्म कदा आत्म कहिवाय, कदा नोआत्म कहीजै ताय।
कदा अवक्तव्य कहीजै जेह, आत्म नोआत्म बिहुं कहि न सकेह ।।

२५. गोयमा ! सोहम्मे कप्पे सिय आया सिय नोआया सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।
(श० १२।२१४)

२६. किण अर्थे ? तब जिन कहै वाय, आतम निज पर्याय पेक्षाय।
नोआतम पर पर्याय पेक्षाय, उभय अपेक्षा अवक्तव्य थाय ।।
तिण अर्थे तीनूं अवलोय, जाव अच्युतकल्प इम जोय ।।

२६. से केणट्ठेणं भंते ! जाव आयाति य नोआयाति य ? गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया, परस्स आइट्ठे नोआया, तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। से तेणट्ठेणं तं चेव जाव आयाति य नोआयाति य। एवं जाव अच्चुए कप्पे।
(श० १२।२१५)

२७. प्रश्न ग्रैवेयक विमाण नों जान, स्वपर्याइं आत्म पिछान।
पर पर्याय नहीं तिण मांहि, तिणसूं नोआत्म कहीजै ताहि ।।
२८. उभय पर्याय तणी पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय।
रत्नप्रभा जिम ए अवधार, एवं अनुत्तर ईसिप्पभार ।।
२९. बारम शतक दशम नुं देश, बेसो गुणंतरमीं ढाल विशेष।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय पसाय, 'जय-जश' आनंद हरष सवाय ।।

२७,२८. आया भंते ! गेवेज्जविमाणे ? अण्णे गेवेज्जविमाणे ?
एवं जहा रयणप्पभा तहेव। एवं अणुत्तरविमाणा वि। एवं ईसिपब्भारा वि। (श० १२।२१६)

ढाल : २७०

दूहा

१. हिव परमाणू आदि नों, गोयम प्रश्न करंत।
उत्तर प्रभुजी वागरै, ते सुणज्यो धर खंत ।।

परमाणु स्कन्ध आदि आत्मा या नोआत्मा ?

२. *आतम प्रभु ! परमाणु कहाय, अथवा अनेरो कहियै ताय ?
सौधर्मकल्प कह्यो छै जेम, परमाणु पिण कहिवो तेम ।।

२. आया भंते ! परमाणुपोग्गले ? अण्णे परमाणुपोग्गले ?
एवं जहा सोहम्मे तहा परमाणुपोग्गले वि भाणियव्वे। (श० २।२१७)

३. आतम प्रभु ! बे प्रदेशिक खंध, अथवा अन्य दुप्रदेशिक बंध ?
भाखै षट भांगा जिनराय, आतम कदाचित ए कहिवाय ।।

३. आया भंते ! दुपएसिए खंधे ? अण्णे दुपएसिए खंधे ?
गोयमा ! दुपएसिए खंधे सिय आया।
द्विप्रदेशिकसूत्रे षड्भंगाः। (वृ० प० ५९५)

४. कदाचित नोआत्म कहाय, अवक्तव्य कदाचित थाय।
सकल खंध पेक्षा भंग तीन, देश अपेक्षा हिव त्रिहुं चीन ।।

४. सिय नोआया सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।
तत्राद्यास्त्रयः सकलस्कन्धापेक्षाः पूर्वोक्ता एव तदन्ये तु त्रयो देशापेक्षाः। (वृ० प० ५९५)

---

*लय : इण पुर कंबल कोय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. कदा आतम नोआतम किवार, ए चोथो भांगो अवधार।
कदा आतम अवक्तव्य जेह, आतम नोआतम बिहुं कहि न सकेह ॥
६. कदा नोआतम अवक्तव्य जेह, आतम नोआतम बिहुं कहि न सकेह।
किण अर्थे प्रभु ! ए षट भंग, हिव जिन न्याय कहै तसु चंग ॥

सकल खंध आश्री प्रथम तीन भांगा

७. आतम पोता नीं पर्याय पेक्षाय, पर अपेक्षाय नोआतम कहाय।
निज पर बिहुं नीं पर्याय पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय ॥

८. कह्या सकल खंध आश्री भंग तीन, देश आश्री हिवै तीन सुचीन।
आतम नोआतम बिहुं कहिवाय, भंग चोथा नो हिव कहूं न्याय ॥
९. एक देश नां निज पर्यव पेक्षाय, ते देश नैं आतम कहीजै न्याय।
दूजा देश नां पर पर्यव पेक्षाय, ते देश भणी नोआतम कहाय ॥
१०. दोय प्रदेशिक खंध नैं उमंग, आतम नोआतम ए चोथो भंग।
आतम अवक्तव्य पंचम भंग, तास न्याय सुणियै चित चंग ॥
११. एक देश आश्री निज पर्यव पेक्षाय, ते देश नैं आतम कहीजै ताय।
दूजा देश आश्री बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय ॥
१२. दोय प्रदेशिया खंध में चंग, आतम अवक्तव्य पंचम भंग।
नोआतम अवक्तव्य षष्ठम भंग, तास न्याय सुणियै चित चंग ॥
१३. एक देश आश्री पर पर्यव पेक्षाय, ते देश नोआतम कहीजै न्याय।
दूजा देश आश्री बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय॥
१४. दोय प्रदेशिया खंध रै मांय, ए छट्ठो भांगो इम पाय।
तिण अर्थे आख्यो म्हैं एम, दोय प्रदेशिक षट भंग तेम ॥

वा०—द्विप्रदेशिक खंध पोता नीं पर्याय करिकै आदिष्ट—अंगीकार कीधे छते आत्मा हुवै १। इम पर पर्याय करिकै अंगीकार कीधे छते नोआत्मा कहियै २। आत्म-पर बिहुं पर्याय अंगीकार कियै छते ए द्विप्रदेशिक खंध अवक्तव्य वस्तु हुवै, ते किम ? निकेवल-आत्मा निकेवल अनात्मा ए बिहुं कहि न सकै ३। एतो सकल खंध आश्री तीन भांगा कह्या।

हिवै देश आश्री तीन भांगा कहै छै—द्विप्रदेशिक खंध नैं प्रथम एक देश नैं सद्भाव पर्यव—स्व पर्याय आश्रयी आत्मा कहियै। अनैं बीजा देश नैं असद्भाव पज्जव ते प्रथम देश नां पर्यव नीं अपेक्षाय अथवा अन्य वस्तु नां पर्यव नीं अपेक्षाय इम पर पर्याय अपेक्षाये करी नोआत्मा कहियै। इम आत्मा नोआत्मा बिहुं कहियै, ए चोथो भांगो ४।

तथा ते द्विप्रदेशिक नैं प्रथम एक देश नैं स्व पर्याय नीं अपेक्षाय करी आत्मा कहियै अनैं बीजा एक देश नैं स्व पर्याय अनैं पर पर्याय ए बिहुं पर्याय नीं अपेक्षाये करी अवक्तव्य कहियै। इम आत्मा अनैं अवक्तव्य ए पांचमो भांगो हुवै ५।

तथा द्विप्रदेशिक नां प्रथम एक देश नैं पर पर्याय नीं अपेक्षाय करिकै नोआत्मा कहियै अनैं बीजा एक देश नैं स्व-पर ए बिहुं नां पर्यव नीं अपेक्षाय करिकै अवक्तव्य कहियै। इम नोआत्मा अनैं अवक्तव्य ए छठो भांगो हुवै ६।

आत्मा अनैं नोआत्मा अनैं अवक्तव्य एह सातमों भांगो न हुवै, द्विप्रदेशिक

*लय : इण पुर कंबल कोय न लेसी

५. सिय आया य नोआया य, सिय आया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

६. सिय नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२१८)
से केणट्ठेणं भंते ! एवं तं चेव जाव नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य ?

७. गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया परस्स आदिट्ठे नोआया, तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं दुपएसिए खंधे—आयाति य नोआयाति य।

९,१०. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे दुप्पएसिए खंधे आया य नोआया य।

११,१२. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

१३,१४. देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नोआया य अवत्तव्वं आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२१९)

वा०—'अप्पणो' त्ति स्वस्य पर्यायैः 'आदिट्ठेत्ति आदिष्टे—आदेशे सति आदिष्ट इत्यर्थः द्विप्रदेशिकस्कन्ध आत्मा भवति, एवं परस्य पर्यायैरादिष्टोऽनात्मा तदुभयस्य—द्विप्रदेशिकस्कन्धतदन्यस्कन्धलक्षणस्य पर्यायैरादिष्टोऽसाववक्तव्यं वस्तु स्यात्, कथम् ? आत्मेति चानात्मेति चेति।
तथा द्विप्रदेशत्वात्तस्य देश एक आदिष्टः, सद्भावप्रधानाः—सत्तानुगताः पर्यवा यस्मिन् स सद्भावपर्यवः ····द्वितीयस्तु देश आदिष्टः असद्भावपर्यवः परपर्यायैरित्यर्थः, परपर्यवाश्च तदीयद्वितीयदेशसम्बन्धिनो वस्त्वन्तरसम्बन्धिनो वेति।
ततश्चासौ द्विप्रदेशिकः स्कन्धः क्रमेणात्मा चेति नोआत्मा चेति, तथा तस्य देश आदिष्टः सद्भावपर्यवो देशश्चोभयपर्यवस्ततोऽसावात्मा चावक्तव्यं चेति।
तथा तस्यैव देश आदिष्टोऽसद्भावपर्यवो देशस्तूभयपर्यवस्ततोऽसौ नोआत्मा चावक्तव्यं च स्यादिति।
सप्तमः पुनरात्मा च नोआत्मा चावक्तव्यं चेत्येवंरूपो न भवति द्विप्रदेशिके द्व्यंशत्वादस्य त्रिप्रदेशिकादौ तु स्यादिति सप्तभंगी। (वृ० प० ५९५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नां दोय अंश छै ते माटै। अनै त्रिप्रदेशिकादिक नैं विषे ए भांगो हुवै इम सप्तभंगी।

द्विप्रदेशी खंध नां ६ भांगा नीं स्थापना

आत्मा	नोआत्मा	अवक्तव्य
१	१	१
आत्मा नोआत्मा	आत्मा अवक्तव्य	नोआत्मा अवक्तव्य
१	१	१

ए छह भांगा हुवै, पिण सातमों भांगो आत्मा च नोआत्मा च अवक्तव्य च इम न हुवै, द्विप्रदेशिक नां दोय अंश ते भणी। त्रिप्रदेशिकादिक नैं विषे तो हुवै इम सप्तभंगी।

१५. तीन प्रदेशिया खंध नीं जाण, हिव पूछा उत्तर पहिछाण।
तीन प्रदेशिक खंध भगवान ! आतम तथा तेहथी अन्य जान।।

तीन प्रदेशी खंध आश्री १३ भांगा। तिणमें सकल खंध आश्री ३ भांगा तथा बाकी रा द्विकसंजोगिक रा ९ भांगा में देश आश्री ३ भांगा आत्म नोआत्म संघाते जाणवा—

१६. उत्तर देवै श्री जिन हेर, तेहनां भांगा कहियै तेर।
तीन प्रदेशिक आतम किवार, कदाचित नोआतम विचार।।

१७. कदाचित अवक्तव्य एह, आतम नोआतम बिहुं कहि न सकेह।
कदाचित आतमा नोआतम कहाय, तुर्य भंग इक वच बिहुं पाय।।

१८. कदा आतम इक वच कहिवाय, बहु वचने नोआतमज पाय।
कदाचित आतम बहु वचनेह, इक वचने नोआतम कहेह।।

सातमों आठमों नवमों ए तीन भांगा आतम अवक्तव्य संघाते जाणवा—

१९. सप्तम भंग कदाचित तेह, इक वचने करि आतम कहेह।
अवक्तव्य पिण इक वचनेह, आतम नोआतम कहि न सकेह।।

२० अष्टम भंग कदाचित ताय, इक वचने करि आतम कहाय।
अवक्तव्य बहु वचने तेह, आतम नोआतम कहि न सकेह।।

२१. नवमे भंग कदाचित धार, बहु वचने करि आतम विचार।
अवक्तव्य इक वचने एह, आतम नोआतम कहि न सकेह।।

दशमो इग्यारमों बारमों ए तीन भांगा नोआतम अवक्तव्य संघाते जाणवा—

२२. दशमों भंग कदाचित तास, इक वचने नोआतम विमास।
अवक्तव्य पिण इक वच एह, आतम नोआतम कहि न सकेह।।

२३. एकादशमें भंग किवार, इक वचने नोआतम विचार।
अवक्तव्य बहु वचने जेह, आतम नोआतम कहि न सकेह।।

२४. बारम भंग कदाचित सोय, बहु वचने नोआतमज होय।
अवक्तव्य इक वचन कहाय, आतम नोआतम बिहुं कहि सकै नांय।।

त्रिकसंयोगिक एक तेरमों भांगो आतम नोआतम अवक्तव्य संघाते जाणवो—

२५. तेरमें भंग कदाचित कहाय, एक वचन करि त्रिहुं पद थाय।
आतम अनैं नोआतम कहेह, अवक्तव्य बिहुं कहि न सकेह।।

---

१५. आया भंते तिपएसिए खंधे ? अण्णे तिपएसिए खंधे ?

१६. गोयमा ! तिपएसिए खंधे, सिय आया सिय नोआया
त्रिप्रदेशिकस्कन्धे तु त्रयोदश भंगाः। (वृ० प० ५९५)

१७. सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य, सिय आया य नोआया य।

१८. सिय आया य नोआयाओ य, सिय आयाओ य नोआया य।

१९. सिय आया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

२०. सिय आया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

२१. सिय आयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

२२. सिय नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

२३. सिय नोआया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

२४. सिय नोआयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

२५. सिय आया य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२२०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सकल खंध आश्री ३ भांगा नों न्याय—

२६. किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात, त्रिप्रदेशिक खंध कदा आतम थात।
इमज उच्चरिवूं जावत जाण, तेरम भंग लगै पहिछाण ?

२७. श्री जिन भाखै गोतम ! जेह, तीन प्रदेशिक खंध छै तेह।
सकल खंध निज पर्यव पेक्षाय, आतम तास कहियै इण न्याय ।।

२८. पर वस्तु नां पर्यव पेक्षाय, तास नोआतम कहीजै ताय।
निज पर पर्यव तणी अपेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय ।।

बाकी रा भांगा तेहनां देश आश्री छै। तिणमें चोथो, पांचमों, छठो ए तीन भांगा आतम नोआतम संघाते, तेहनों न्याय—

२९. इक वच आतम नोआतम कहाय, तुर्य भांगा नो निसुणो न्याय।
इक देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, इक वचने आतम कहीजै ताय ।।

३०. दूजा देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, इक वचने नोआतम कहाय।
तीन प्रदेशिक खंध इण न्याय, इक वच आतम नोआतम कहाय ।।

सोरठा

३१. एक आकाश प्रदेश, दोय प्रदेश रह्या छता।
तसु इक वचन कहेस, जुदा रह्या बहु वचन है ।।

३२. *इक देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, इक वच आतम कहीजै ताय।
बहु देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, बहु वचने नोआतम कहाय ।।

३३. आतम शब्द इक वचने जाण, बहु वचने नोआतम पिछाण।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, पंचम भंग कह्यो इण न्याय ।।

३४. बहु देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, बहु वचने करि आतम कहाय।
इक देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, इक वचने नोआतम कहाय ।।

३५. आतम शब्द बहु वचने जाण, इक वचने नोआतम पिछाण।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, षष्टम भंग कह्यो इण न्याय ।।

आतम अवक्तव्य संघाते तीन भांगा नों न्याय—

३६. एक देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, इक वचने तसु आतम कहाय।
दूजा देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय ।।

३७. आतम एक वचने करि एह, अवक्तव्य पिण इक वचनेह।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, सप्तम भंग कह्यो इण न्याय ।।

३८. एक देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, इक वचने करि आतम कहाय।
बहु देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य बिहुं कहि सकै नांय ।।

३९. आतम इक वचने करि जोय, अवक्तव्य बहु वचने होय।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, अष्टम भंग कह्यो इण न्याय ।।

४०. बहु देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, बहु वचने करि आतम कहाय।
इक देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य इक वचने पाय ।।

४१. आतम बहु वचने करि जेह, अवक्तव्य इक वचने एह।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, नवमो भंग कह्यो इण न्याय ।।

लय : इण पुर कंबल कोय न लेसी

२६. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—तिपएसिए खंधे सिय आया—एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव सिय आया य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य ?

२७. गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया।

२८. परस्स आदिट्ठे नो आया, तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य

२९,३०. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे, देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नोआया य।

३१. यच्चेह प्रदेशद्वयेऽप्येकवचनं क्वचित्तत्तस्य प्रदेशद्वयस्यैकप्रदेशावगाढत्वादिहेतुनैकत्वविवक्षणात्, भेदविवक्षायां च बहुवचनमिति। (वृ० प० ५९५)

३२,३३. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य नोआयाओ य।

३४,३५. देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य नोआया य।

३६,३७. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

३८,३९. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

४०,४१. देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. सप्तम अष्टम नवमों भंग, कह्या आतम अवक्तव्य साथ सुचंग।
हिव नोआतम अवक्तव्य साथ, भांगा तीन तणी कहूं बात ।।
४३. इक देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, इक वचने नोआतम कहाय।
दूजा देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य इक वचने थाय ।।
४४. इक वचने नोआतम पिछाण, अवक्तव्य पिण इक वच जाण।
तीन प्रदेशिक खंध रै मांय, दशम भंग नों आख्यो न्याय ।।

४३,४४. देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

४५. इक देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, तास नोआतम कहीजै न्याय।
बहु देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य बहु वचने पाय ।।
४६. इक वचने नोआतम अवेख, अवक्तव्य बहु वचने पेख।
तीन प्रदेशिया खंध रै मांय, एकादशम भंग नों न्याय ।।

४५,४६. देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे नोआया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

४७. बहु देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, बहु वचने नोआतम कहाय।
इक देश भणी बिहुं पर्यव पेक्षाय, अवक्तव्य इक वच कहिवाय ।।
४८. बहु वचने नोआतम विचार, अवक्तव्य इक वचने उचार।
तीन प्रदेशिक खंध रै मांय, भंग द्वादशम तणुं ए न्याय ।।

४७,४८. देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नोआयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

आतम-नोआतम-अवक्तव्य संघाते त्रिक संयोगिक १ तेरम भांगा नों न्याय—

४९. इक देश भणी निज पर्यव पेक्षाय, तास आतम कहीजै इण न्याय।
दूजा देश भणी पर पर्यव पेक्षाय, तास नोआतम कहीजै न्याय ।।
५०. तीजा देश भणी अवक्तव्य कहाय, निज पर पर्यव तणी अपेक्षाय।
आतम नोआतम अवक्तव्य एह, त्रिहुं इक वच भंग तेरसमेह ।।

४९,५०. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

५१. तिण अर्थे आख्यो इम हेर, तीन प्रदेशिक खंध भंग तेर।
बारम शतक दशम नुं देश, आगल बात सुणो वलि शेष ।।

५१. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—तिपएसिए खंधे सिय आया तं चेव जाव नो नोआयाति य।
(श० १२।२२१)

त्रिप्रदेशिया खंध नां १३ भांगा नीं स्थापना—

आ०	नो०	अव०
१	१	१

आ०	नो०
१	१
१	२
२	१

आ०	अव०
१	१
१	२
२	१

नो०	अव०
१	१
१	२
२	१

आ०	नो	अव
१	१	१

५२. दोयसौ नैं सितरमीं ढाल, भिक्षु भारीमाल ऋषिराय विशाल।
संवत उगणीसै बावीस, 'जय-जश' संपति हरष जगीस ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २७१

दूहा

१. च्यार प्रदेशिक खंध प्रभु ! स्यूं आतम कहिवाय।
कै आतम थी अन्य है ? उत्तर दे जिनराय।।

२. च्यार प्रदेशिक खंध नां, भांगा एगुणवीस।
आखै श्री जिन जूजुआ, सांभलज्यो सुजगीस।।

*रे गोतम सांभलजे भंग-जाल।। (ध्रुपदं)

३. च्यार प्रदेशिक खंध कदाचित, आतम कहीजै ताय।
कदाचित नोआतम कहीजै, कदा अवक्तव्य पाय।।

ए तीन भांगा सकल खंध आश्री कह्या।
बाकी रा द्विकसंयोगिक १२ भांगा देश आश्रयी। तिण में चोथो, पांचमों, छठो, सातमों ए च्यार भांगा आतम नोआतम संघाते जोड़ै छै—

४. इक वच आतम नोआतम कदाचित, तुर्य भंग छै एह।
कदाचि आतम एक वचने करि, नोआतम बहु वचनेह।।

५. कदाच आतम बहु वचने करि, नोआतम एक वचनेह।
कदाच आतम बहु वचने करि, नोआतम बहु वच जेह।।

आत्म-अवक्तव्य संघाते च्यार भांगा—

६. कदाचि आतम इक वचने करि, अवक्तव्य इक वच जोय।
कदाचि आतम इक वचने करि, अवक्तव्य बहु वच होय।।

७. कदाचि आतम बहु वचने करि, अवक्तव्य इक वच जाण।
कदाचि आतम बहु वचने करि, अवक्तव्य बहु वच आण।।

नोआत्म-अवक्तव्य संघाते च्यार भांगा—

८. कदा नोआतम इक वचने करि, अवक्तव्य इक वच पेख।
कदा नोआतम इक वचने करि, अवक्तव्य बहु वच देख।।

९. कदा नोआतम बहु वचने करि, अवक्तव्य इक वच थाय।
कदा नोआतम बहु वचने करि, अवक्तव्य बहु वच पाय।।

आत्म-नोआत्म-अवक्तव्य संघाते त्रिकसंयोगिक च्यार भांगा—

१०. कदा आतम नोआतम अवक्तव्य, ए त्रिहुं इक वचनेह।
कदा आतम नोआतम वचन इक, अवक्तव्य बहु वच जेह।।

११. कदाचि आतम इक वचने करि नोआतम बहुवचनेह।
अवक्तव्य इक वचने कहियै, भंग अठारमों एह।।

१२. कदाचि आतम बहु वचने करि, नोआतम एक वचनेह।
अवक्तव्य पिण इक वचने करि, उगणीसम भंग लेह।।

सकल खंध आश्री ३ भांगा नों न्याय—

१३. किण अर्थे करि एम कह्यो प्रभु ! च्यार प्रदेशिक खंध।
उगणीस भांगा जूजुआ आख्या ? हिव जिन भाखै प्रबन्ध।।

*लय : आधाकर्मी थानक

---

१. आया भंते ! चउप्पएसिए खंधे ? अण्णे चउप्पएसिए खंधे ?

२. चतुष्प्रदेशिकेऽप्येवं नवरमेकोनविंशतिर्भंगाः।
(वृ० प० ५९५)

३. गोयमा ! चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय नोआया सिय अवत्तव्वं —आयाति य नोआयाति य।

४,५. सिय आया य नोआया य।

६,७. सिय आया य अवत्तव्वं।

८,९. सिय नोआया य अवत्तव्वं।

१०. सिय आया य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य, सिय आया य नोआया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

११. सिय आया य नोआयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

१२. सिय आयाओ य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य। (श० १२।२२२)

१३. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—चउप्पएसिए खंधे सिय आया य नोआया य अवत्तव्वं—तं चेव अट्ठे पडिउच्चारेयव्वं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. सकल खंध भणी आतम कहीजै, निज पर्यव पेक्षाय।
पर पर्यव अपेक्षाय ते खंध नैं, नोआतम कहियै ताय ।।
१५. अवक्तव्य कहियै ते खंध नैं, निज पर पर्यव पेक्षाय।
आतम नोआतम बिहुं कहि न सकियै, खंध आश्री भांगा त्रिहुं पाय ।।

देश आश्री द्विकसंयोगिक १२ भांगा छै। तिणमें आत्म-नोआत्म आश्री च्यार भांगा नों न्याय—

१६. इक वचने करि आतम नोआतमहि, तुर्य भंग नो न्याय।
एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव पेक्षाय ।।
१७. दूजा देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव पेक्षाय।
प्रदेश तथा पर वस्तु अपेक्षा, इक-इक प्रदेश मांय ।।
१८. इक वच आतम नोआतम बहु वच, पंचम भांगा मांय।
च्यार प्रदेशिया खंध विषे ए, कहियै हिव तसु न्याय ।।
१९. एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
घणां देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव अपेक्षाय ।।
२०. आतम बहु वच नोआतम इक वच, षष्टम भंग कहाय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे ए, आखूं तेहनों न्याय ।।
२१. घणां देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
दूजो देश इक कहियै नोआतमहि, पर पर्यव अपेक्षाय ।।
२२. आतम नोआतम बिहुं बहु वचने, रह्या च्यार प्रदेश रै मांय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे कहूं, सप्तम भंग रो न्याय ।।
२३. घणां देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
अन्य देश बहु कहियै नोआतम, पर पर्यव पेक्षाय ।।

आतम अवक्तव्य संघाते च्यार भांगा नों न्याय—

२४. आतम अवक्तव्य बिहुं इक वचने, रह्या इक-इक प्रदेश मांय।
च्यार प्रदेशिया खंध विषे कहूं, अष्टम भंग नों न्याय ।।
२५. एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
दूजा देश नैं अवक्तव्य कहीजै, निज पर पर्यव पेक्षाय ।।
२६. इक वच आतम अवक्तव्य बहु वच, नवम भंग कहिवाय।
च्यार प्रदेशिया खंध त्रिषे हिव, कहीजै तेहनों न्याय ।।
२७. एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव रै न्याय।
दूजा देश बहु कह्या अवक्तव्य, निज पर पर्यव पेक्षाय ।।
२८. बहु वच आतम अवक्तव्य इक वच, दशम भंग कहिवाय।
च्यार प्रदेशिया खंध विषे हिव, कहियै तेहनों न्याय ।।
२९. घणां देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
दूजो देश इक कहियै अवक्तव्य, निज पर पर्यव पेक्षाय ।।
३०. आतम अवक्तव्य बिहुं बहु वचने, एकादशम कहाय।
च्यार आकाश प्रदेश विषे ए, रह्या तास कहुं न्याय ।।
३१. घणां देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांय।
दूजा देश बहु कहियै अवक्तव्य, निज पर पर्यव पेक्षाय ।।

नोआतम अवक्तव्य संघाते च्यार भांगा नों न्याय—

३२. कदा नोआतम अवक्तव्य इक वच, रह्या इक प्रदेश मांय।
ए बारमा भंग तणो हिव, कहियै आगल न्याय ।।

१४,१५. गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया, परस्स आदिट्ठे नोआया तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

१६-२३. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे चउभंगो।

२४-३१. सब्भावेणं तदुभयेण य चउभंगो।

३२-३९. असब्भावेणं तदुभयेण य चउभंगो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३. एक देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय।
दूजा देश नैं अवक्तव्य कहीजै, निज पर पर्यव पेक्षाय ।।
३४. कदा नोआतम इक वचने करी, अवक्तव्य बहु वच पाय।
एक देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय।
३५. घणां देश नैं अवक्तव्य कहियै, उभय पर्यव अपेक्षाय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे कह्यु, तेरम भंग नो न्याय ।।
३६. कदा नोआतम बहु वचने करि, अवक्तव्य इक वच पाय।
घणां देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय ।।
३७. एक देश नै अवक्तव्य कहीजै, स्व पर पर्यव पेक्षाय।
च्यार प्रदेशिया खंध विषे कह्यु, चवदम भंग नो न्याय ।।
३८. कदा नोआतम अवक्तव्य दोनूं, बहु वचने कहिवाय।
रह्या ए च्यार आकाश-प्रदेशिक, कहियै तेहनों न्याय ।।
३९. घणां देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय।
घणां देश नैं अवक्तव्य कहीजै, उभय पर्यव अपेक्षाय ।।

आतम नोआतम अवक्तव्य संघाते त्रिक संयोगिक च्यार भांगा नों न्याय—

४०. कदा आतम नोआतम अवक्तव्य, त्रिहुं इक वचन विशेष।
च्यार प्रदेशिक खंध अछै ते, रह्यो तीन आकाश प्रदेश ।।
४१. एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव ते मांहि।
दूजा देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताहि ।।
४२. तीजा देश नैं अवक्तव्य कहीजे, उभय पर्यव अपेक्षाय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे कह्य, सोलम भंग रो न्याय ।।

४०-४२. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

४३. आतम नोआतम बिहु इक वचने, अवक्तव्य बहु वच ताय।
च्यार आकाश प्रदेश रह्या इम, निसुणो तेहनों न्याय ।।
४४. देश एक नैं आतम कहीजै, स्व पर्यव आश्री ताय।
दूजा देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव अपेक्षाय ।।
४५. बाकी घणां देश नैं अवक्तव्य कहीजै, उभय पर्यव अपेक्षाय।
च्यार प्रदेशिया खंध विषे ए, सतरम भंग नों न्याय ।।

४३-४५. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा चउप्पएसिए खंधे आया य नोआया य अवत्तव्वाइं—आयाओ य नोआयाओ य।

४६. कदा इक वच आतम नोआतम बहु वच, अवक्तव्य इक वच ताय।
च्यार आकाश प्रदेश विषे ए, कहियै तेहनों न्याय ।।
४७. एक देश नैं आतम कहीजै, निज पर्यव अपेक्षाय।
घणां देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय ।।
४८. एक देश नैं अवक्तव्य कहियै, उभय पर्यव अपेक्षाय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे कह्यु, अठारम भंग नों न्याय ।।

४६-४८. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नोआयाओ य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

४९. कदा आतम बहु वच नोआतम इक वच, अवक्तव्य वच एक।
च्यार आकाश प्रदेश विषे रह्या, कहियै न्याय विशेष ।।
५०. घणां देश नैं आतम कहीजै, स्व पर्याय अपेक्षाय।
दूजा देश नैं नोआतम कहीजै, पर पर्यव आश्री ताय ।।
५१. तीजा देश नैं अवक्तव्य कहियै, उभय पर्यव अपेक्षाय।
च्यार प्रदेशिक खंध विषे, उगणीसम भंग नु न्याय।।

४९-५१. देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आयाओ य नोआया य अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य।

५२. तिण अर्थे करिनैं इम आख्यो, च्यार प्रदेशिक खंध।
कदा आतम कदा नोआतम कहियै, कदा अवक्तव्य संध ।।

५२,५३. से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय नोआया सिय अवत्तव्वं—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५३. सर्व भांगा वली जूजुआ भणवा, कहिये तेह निक्खेव।
एहीज भांगा उच्चारवा जावत, नोआत्म उगणीसमुं कहेव ।।

निक्खेवे ते चेव भंगा उच्चारेयव्वा जाव आयाति य नोआयाति य । (श० १२।२२३)

चउप्रदेशी खंध नां १९ भांगा नीं स्थापना—

आ०	नो०	अव०
१	१	१

आ०	नो०
१	१
१	२
२	१
२	२

आ०	अव०
१	१
१	२
२	१
२	२

नो०	अव०
१	१
१	२
२	१
२	२

त्रिक संजोगिया भांगा ४		
आ०	नो०	अव०
१	१	१
१	१	२
१	२	१
२	१	१

पंच प्रदेशी खंध आश्री २२ भांगा । तिण में सकल खंध आश्री ३ भांगा तथा द्विकसंजोगिक नां १२ भांगा जाणवा—

५४. पंच प्रदेशिक खंध आत्म प्रभु ! कै आत्म थी अन्य कहाय ?
जिन कहै आत्म कदा नोआत्महि, कदा अवक्तव्य पाय ।।

५४. आया भंते ! पंचपएसिए खंधे ? अण्णे पंचपएसिए खंधे ?
गोयमा ! पंचपएसिए खंधे सिय आया सिय नोआया सिय अवत्तव्वं—आयाति य नोआयाति य ।

५५. कदा आत्म नोआत्म एक वच, ए चोथो भांगो जाण ।
कदा आत्म एक वच नोआत्म बहु वच, पंचम भंग पिछाण ।।
५६. कदा आत्म बहु वच नोआत्म इक वच, छठो भांगो एह ।
कदा आत्म नोआत्म बिहुं बहु वचने, सप्तम भंग कहेह ।।

५५,५६. सिय आया य नोआया य ।

५७. आत्म नोआत्म संघाते आख्या, भांगा च्यार सुरीत ।
तिमहिज आतम अवक्तव्य साथे, भांगा च्यार संगीत ।।

५७. सिय आया य अवत्तव्वं ।

५८. इमज नोआत्म अवक्तव्य साथे, भांगा च्यार सुवट्ट ।
पनरे भांगा इह विध आख्या, हिवै त्रिकसंयोगिक अट्ठ ।।

५८. नोआया य अवत्तव्वेण य ।

त्रिकसंयोगिक अष्ट भांगा हुवै । तिहां पंचप्रदेशिक खंध में भांगा सातईज ग्रहिवा अनें आठमों भांगो घणां देश आत्म, घणां देश नोआत्म, घणां देश अवक्तव्य—ए न हुवै ते माटे सप्त भांगा जाणवा—

५९. कदा आत्म नोआत्म अवक्तव्य इक वच, सोलमो भांगो एह ।
कदा आत्म नोआत्म बिहुं इक वचने, अवक्तव्य बहुवचनेह ।।

५९. सिय आया य नोआया य अवत्तव्वं, सिय आया य नोआया य अवत्तव्वाइं ।

६०. कदा आत्म एक वच नोआत्म बहु वच, अवक्तव्य वच एक ।
कदा आत्म एक वच नोआत्म बहुवच, अवक्तव्य बहु वच पेख ।।

६०. सिय आया य नोआयाओ य अवत्तव्वं, सिय आया य नोआयाओ य अवत्तव्वाइं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१. कदा आत्म बहु वच नोआत्म इक वच, अवक्तव्य वच एक ।
कदा आत्म बहु वच नोआत्म इक वच, अवक्तव्य बहु वचदेख ।।

६१. सिय आयाओ य नोआया य अवत्तव्वं, सिय आयाओ य नोआया य अवत्तव्वाइं ।

६२. कदा आत्म नोआत्म दोनूंइ, बहु वचने करि जाण ।
अवक्तव्य इक वचने कहियै, ए भंग बावीसमों माण ।।

६२. सिय आयाओ य नोआयाओ य अवत्तव्वं ।
(श० १२।२२४)

६३. त्रिकसंयोगिक सप्त भांगा ए, हुवै पंचप्रदेशिक मांय ।
पिण आत्म नोआत्म अवक्तव्य बहु वच, ए अष्टम भंग न पाय ।

६३. तत्र त्रिकसंयोगे किलाष्टौ भंगका भवन्ति, तेषु च सप्तैवेह ग्राह्या एकस्तु तेषु न पतत्यसम्भवात् ।
(वृ० प० ५९६)

६४. किण अर्थे प्रभु ! पंच प्रदेशिक, दोय बीस भंग दाख्या ।
श्री जिन भाखै सकल खंध आश्री, आदि भंग त्रिहुं आख्या ।।

६४. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—पंचपएसिए खंधे सिय आया जाव सिय आयाओ य नोआयाओ य अवत्तव्वं ?

आदि नां ३ भांगा नो न्याय—

६५. पंचप्रदेशिक आत्म कहीजै, निज पर्यव आश्री ताय ।।
पर पर्यव आश्री नोआत्म कहीजै, अवक्तव्य बिहुं अपेक्षाय ।।

६५. गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया परस्स आदिट्ठे नोआया तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं ।

द्विकसंयोगिया १२ भांगा नों न्याय—

६६. एक देश नें आत्म कहीजै, स्व पर्यव आश्री ताय ।
दूजो देश इक कहियै नोआत्महि, पर पर्यव अपेक्षाय ।।
[रे गोतम ! इक वच बिहुं तुर्य भंग] ।

६६. देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे ।

६७. इम द्विकसंयोगिक भांगा बारै, सर्व पड़ै छै सोय ।
त्रिकसंयोगिक सप्त भंग ह्वै, अष्टम भंग न होय ।।

६७. एवं दुयगसंजोगे सव्वे पडंति, तियसंजोगे एक्को न पडइ ।

६८. आत्म नोआत्म अवक्तव्य तीनूं, बहु वच अष्टम भंग ।
पंच प्रदेशिक खंध में नहीं ह्वै, पेखो न्याय सुचंग ।।

६९. षट प्रदेशिक में सहु पाव, असंयोगिक त्रिहुं दृष्ट ।
द्विकसंयोगिक द्वादश भांगा, त्रिकसंयोगिक अष्ट ।।

६९. छप्पएसिए सव्वे पडंति ।
षट्प्रदेशिके त्रयोविंशतिरिति । (वृ० प० ५९६)

पंच प्रदेशी खंध नां २२ भांगा नीं स्थापना—

आ०	नो०	अव०
१	१	१

आ०	नो०	आ०	अव०
१	१	१	१
१	२	१	२
२	१	२	१
२	२	२	२

नो०	अव०
१	१
१	२
२	१
२	२

त्रिकसंजोगिया भांगा ७		
आ०	नोआ०	अव०
१	१	१
१	१	२
१	२	१
१	२	२
२	१	१
२	१	२
२	२	१

७०. षटप्रदेशिक में जिम आख्या, भंग तेवीस जगीस ।
जाव अनंतप्रदेशिक में इम, भणवा भंग तेवीस ।।

वा०—षट प्रदेशिक खंध नां २३ भांगा हुवै । आदि नां ३ सकल खंध आश्री, द्विक संयोगी १२, त्रिक संयोगी ८, एवं २३ । इम आगे सात, आठ, नव, दश, संख्याता, असंख्याता, अनंत प्रदेशी लगै भांगा २३ हीज हुवै, ते विचारी करवा ।

७०. जहा छप्पएसिए एवं जाव अणंतपएसिए ।
(श० १२।२२५)

७१. सेवं भंते ! सेवं भंते ! सत्य तुम्हारी वानी ।
एम कहीनैं गोतम विचरै, ध्यान सुधा रस ठानी ।।

७१. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ।
(श० १२।२२६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२. शतक बारम नु अर्थ संपूरण, दोयसौ इकोतरमीं ढाल।
भिक्खु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

गीतक छंद

१. गंभीर शब्दज रूप जे महाउदधि शत द्वादशम ही।
निज प्रकृति करि जे गमन करिवा अशक्तिवंत छतो सही ।।
२. तसु परम सुगुरु प्रसाद-रूपज पोत पार पूगावही।
भिक्षू अनै दीर्घमाल नृपशशि स्हाज जोड़ सुरचित ही ।।

द्वादशशते दशमोद्देशकार्थः ।।१२।१०।।

१,२. गंभीररूपस्य महोदधेर्यत्
पोतः परं पारमुपैति मंक्षु। गतावशक्तोऽपि निज-
प्रकृत्या,
कस्याप्यदृष्टस्य विजृम्भितं तत् ।। (वृ० प० ५९६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रयोदश शतक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रयोदश शतक

ढाल : २७२

दूहा

१. बारम शतक अनेकधा, कह्या जीवादिक भाव।
तेरम शतके पिण तेहिज, भंगंतरे कहाय ।।
२. तास उदेशक दश विषे, संग्रह गाथा अथ।
पुढवी देव मणंतर, इत्यादिकज तदर्थ ।।
३. नारकपृथ्वी विषय नों, प्रथम उदेशक पेख।
देव परूपण अर्थ नों, द्वितीय उदेशक देख ।।

४. नरक अनंतर आहारगा, इत्यादिक अधिकार।
पृथ्वीगत जे वारता-प्रतिबद्ध तुर्य विचार ।।

५. पंचम नारक प्रमुख नों, आहार परूपण अर्थ।
नारकादि उपपात नों, षष्ठमुद्देश तदर्थ ।।

६. सप्तम भाषा अर्थ है, कर्म प्रकृति अधिकार।
तास परूपण अर्थ नों, अष्टमुद्देशक सार ।।
७. लब्धि सामर्थ्य थकी मुनि, रजुबद्ध घटिका हस्त।
गगन गमन इत्यादि जे, नवम उदेशक वस्त।

८. समुद्घात नों दशम है, दश उद्देशक एह।
प्रथम उदेशक नों हिवै, सखरो अर्थ सुणेह ।।

१,२ व्याख्यातं द्वादशं शतं, तत्र चानेकधा जीवादयः पदार्था उक्ताः, त्रयोदशशतेऽपि त एव भंग्यन्तरेणोच्यन्त इत्येवं सम्बन्धमिदं व्याख्यायते, तत्र पुनरियमुद्देशक-संग्रहगाथा— (वृ. प. ५९६)

३. पुढवी देव
'पुढवी' त्यादि, 'पुढवी' त्ति नरकपृथिवीविषयः प्रथमः 'देव' त्ति देवप्ररूपणार्थो द्वितीयः (वृ. प. ५९०)

४. अणंतर पुढवी
'अणंतर' त्ति अनन्तराहारा नारका इत्याद्यर्थः प्रतिपादनपरस्तृतीयः 'पुढवी' त्ति पृथिवीगतवक्तव्यता-प्रतिबद्धश्चतुर्थः (वृ. प. ५९९)

५. आहारमेव उववाए
'आहारे' त्ति नारकाद्याहारप्ररूणार्थः पञ्चमः 'उववाए' त्ति नारकाद्युपपातार्थः षष्ठः (वृ. प. ५९९)

६-७ भासा कम्मणगारे केयाघडिया
'भास' त्ति भाषार्थः सप्तमः 'कम्म' त्ति कर्म्मप्रकृति-प्ररूपणार्थोऽष्टमः 'अणगारे केयाघडिय' त्ति अनगारो भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात् 'केयाघडिय' त्ति रज्जुबद्धघटिकाहस्तः सन् विहायसि व्रजेदित्याद्यर्थ-प्रतिपादनार्थो नवमः। (वृ० प० ५९९)

८. समुग्घाए
'समुग्घाए' त्ति समुद्घातप्रतिपादनार्थो दशम इति। तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते— (वृ० प० ५९९)

नरक-उपपाद-पद

*गोयम गुणसागरू, पूछै प्रश्न उदारू रे।
प्रभु सुखआगरू, देवै उत्तर वारू रे।। (ध्रुपदं)

९. राजगृह जाव गोतम वदै इम, पृथ्वी किती कही स्वाम ?
जिन कहै सप्त रयणप्पभा जी, जाव तमतमा ताम ।।

१०. ए रत्नप्रभा पृथ्वी विषे प्रभु ! नरकावासा के लाख ?
जिन भाखै सुण गोयमा जी ! तीस लक्ष नीं साख ।।

९. रायगिहे जाव एवं वयासी—कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ? गोयमा ! सत्त पुढवीओ, तं जहा—रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा। (श० १३।१)

१०. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?
गोयमा ! तीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

*लय : अभड भड रावणा इंदा स्यूं अड़ियो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. हे प्रभु ! नरकावासा तिके स्यूं, संख योजन विस्तार।
कै असंख योजन विस्तार छै जी ? जिन कहै दोनूं विचार।।

१२. हे प्रभु ! एह प्रत्यक्ष छै जी, रत्नप्रभा पृथ्वी जाण।
नरकावासा तेहनां जी, तीस लाख परिमाण।।

१३. संख्यात विस्तार नां जिके जी, नरकावास विषेह।
एक समय में केतला जी, नारक ऊपजै तेह ?

१४. कापोतलेशी किता ऊपजै जी, कृष्णपक्षी किता होय ?
शुक्लपक्षी किता ऊपजै जी ? तास लक्षण अवलोय।।

सोरठा

१५. पुद्गल अर्द्धज मांय, संसरवो छै जेहनैं।
शुक्लपक्षि कहिवाय, अधिक भमैं ते कृष्णपक्षि।।

१६. *संज्ञी जीव किता ऊपजै जी, किता असंज्ञी कहाय ?
भव्यसिद्धिक किता ऊपजै जी, किता अभव्यज थाय ?

१७. मतिज्ञानी किता ऊपजै जी, के श्रुतज्ञानी संध ?
अवधिज्ञानी किता ऊपजै जी, पूर्व आउखो बंध ?

१८. मति अज्ञानी किता ऊपजै जी, केतला श्रुत अन्नाण ?
विभंग अज्ञानी जीवड़ा जी, केतला ऊपजै आण ?

१९. केतला चक्षूदर्शणी जी, अचक्षुदर्शणी केय ?
अवधिदर्शनी जीवड़ा जी, केतला त्यां उपजेय ?

२०. आहार संज्ञाए वर्त्तता जी, भय संज्ञा वर्त्तंत ?
मिथुन परिग्रह जे संज्ञा जी, वर्त्तता के उपजंत ?

२१. ऊपजै के स्त्री-वेदगा जी, पुरुष नपुंसक वेद ?
क्रोध कषायवंत केतला जी, जाव लोभवंत खेद ?

२२. सोतिंदियोवउत्ता किता जी, जाव फर्श उपयुक्त ?
नोइंदियोवउत्ता किता जी ? ए भावे मन युक्त।।

२३. किता मनजोगी ऊपजै जी, वचन काय जोगवंत ?
साकार नैं अनाकार नां जी, उपयोगी किता उपजंत ?

२४. प्रश्न गुणचालीस पूछिया जी, उत्पत्ति समयो एह।
मनुष्य तिरि भव छांडनैं जी, ऋजु गति जे उपजेह।।

२५. जिन कहै रत्नप्रभा तणां जी, नरकावासा लक्ष तीस।
संखिज्ज विस्तारवंत नैं जी, नरकावासे जगीस।।

११. ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा ? असंखेज्ज-वित्थडा ? गोयमा ! संखेज्जवित्थडा वि, असंखेज्ज-वित्थडा वि। (श० १३/२)

१२. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु

१३. संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति ?

१३. केवतिया काउलेस्सा उववज्जंति ? केवतिया कण्हपक्खिया उववज्जंति ? केवतिया सुक्कपक्खिया उववज्जंति ?

१५. जेसिमवड्ढो पोग्गलपरियट्टो सेसओ उ संसारो।
ते सुक्कपक्खिया खलु अहिगे पुण कण्हपक्खीया।
(वृ० प० ५९९)

१६. केवतिया सण्णी उववज्जंति ? केवतिया असण्णी उववज्जंति ? केवतिया भवसिद्धिया उववज्जंति ? केवतिया अभवसिद्धिया उववज्जंति ?

१७. केवतिया आभिणिबोहियनाणी उववज्जंति ? केवतिया सुयनाणी उववज्जंति ? केवतिया ओहिनाणी उववज्जंति ?

१८. केवतिया मइअण्णाणी उववज्जंति ? केवतिया सुय-अण्णाणी उववज्जंति ? केवतिया विब्भंगनाणी उववज्जंति ?

१९. केवतिया चक्खुदंसणी उववज्जंति ? केवतिया अचक्खुदंसणी उववज्जंति ? केवतिया ओहिदंसणी उववज्जंति ?

२०. केवतिया आहारसण्णोवउत्ता उववज्जंति ? केवतिया भयसण्णोवउत्ता उववज्जंति ? केवतिया मेहुणसण्णोव-उत्ता उववज्जंति ? केवतिया परिग्गहसण्णोवउत्ता उववज्जंति ?

२१. केवतिया इत्थिवेदगा उववज्जंति ? केवतिया पुरिस-वेदगा उववज्जंति ? केवतिया नपुंसगवेदगा उववज्जंति ? केवतिया कोहकसाई उववज्जंति जाव केवतिया लोभकसाइ उववज्जंति ?

२२. केवतिया सोइंदियोवउत्ता उववज्जंति जाव केवतिया फासिंदियोवउत्ता उववज्जंति ? केवतिया नोइंदियो-वउत्ता उववज्जंति ?

१३. केवतिया मणजोगी उववज्जंति ? केवतिया वइजोगी उववज्जंति ? केवतिया कायजोगी उववज्जंति ? केवतिया सागारोवउत्ता उववज्जंति ? केवतिया अणागारोवउत्ता उववज्जंति ?

२५. गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निर-यावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. जघन्य थकी इक ऊपजै जी, अथवा बे तथा तीन।
उत्कृष्ट संखेज्जा नेरइया जी, ऊपजै छै अति दीन।।

२६. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उववज्जंति।

सोरठा

२७. नरकावासो एह, संख्याता योजन तणो।
ते माटे उपजेह, संख्याताईज नेरइया।।

२८. *इक बे तीन वलि जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संख्यात।
कापोतलेशी ऊपजै जी, धुर नरके ए थात।।

२९. इक बे तीन वलि जघन्य थी जी, संख्याता उत्कृष्ट।
कृष्णपक्षी जे ऊपजै जी, शुक्लपक्षी इम दृष्ट।।

३०. संज्ञी कहिवा इह विधे जी, एम असंज्ञी ताम।
विभंग ज्यां लग नावियो जी, इतरे असंज्ञी नाम।।

२८. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा काउलेस्सा उववज्जंति।

२९. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा कण्हपक्खिया उववज्जंति। एवं सुक्कपक्खिया वि,

३०. एवं सण्णी, एवं असण्णी,

सोरठा

३१. 'प्रथम नरक रै मांहि, जेह असंज्ञी ऊपजै।
अंतर्मुहूर्त्त ताहि, विभंग अनाण लहै नहीं।।

३२. कह्यो असंज्ञी तास, भेद जीव नों तेरमो।
असंज्ञी तणो विमास, भेद जीव रो त्यां नथी'।।

३३. भवनपती रै मांय, व्यंतर में पिण ऊपजै।
जीव असंज्ञी जाय, कह्या असंज्ञी तास पिण।।

३४. ए पिण तेरम भेद, पिण असन्नी नो भेद नहि।
स्त्री अथवा पुं-वेद, वेद नपुंसक नहिं सुरे।।

३५. असन्नी नो कहै भेद, तिणरै लेखै देव में।
कहियै नपुंस-वेद, सुर नपुंस निश्चै नथी।।

३६. द्वादश असन्नी भेद, निश्चै तेह नपुंसका।
ते माटे तज खेद, पेखो ए सुर में नथी।।

३७. नारक नें सुर मांहि, असन्नी सूत्रे आखिया।
पिण असन्नी नो ताहि, भेद तिहां पावै नहीं।।

३८. दशवैकालिक मांहि, आख्या अध्येन आठमें।
सूक्षम आठज ताहि, पिण सूक्षम नों भेद नहिं।।

३८. सिणेहं पुप्फसुहुमं च पाणुत्तिगं तहेव य
पणगं बीयहरियं च अंडसुहुमं च अट्ठमं
(दसवे ८/१५)

३९. जीवाभिगमे जोय, तेऊ वाऊ त्रस कह्या।
ते गति आश्री सोय, त्रस नों भेद तिहां नथी।।

३९. से किं तं तसा ?
तसा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा—तेउक्काइया वाउक्काइया ओराला तसा। (जीवा० १/७५)

४०. पनरम पद रै मांय, त्रिशिष्ट अवधी रहित नर।
असन्नीभूत कहाय, पिण असन्नी नो भेद नहीं।।

४०. मणूसा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—सण्णिभूया य असण्णिभूया य।....... (पण्ण. १५/४८)

४१. समुच्छिम मनुष्य पर्याप्त, आख्यो अनुयोगद्वार में।
कांइक पर्याप्ति आप्त, पिण पर्याप्त रो भेद नहीं[2]।।

***लय : अभड भड रावणा इंदा स्यूं अडियो**

१. असंज्ञी पंचेन्द्रिय के दो भेद—११ वां और १२ वां

२. संमूर्च्छिम मनुष्य पर्याप्त होता है या अपर्याप्त ? इस सम्बन्ध में अनुयोगद्वार में कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है। मनुष्य की अवगाहना के प्रसंग में संमूर्च्छिम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. जीवाभिगमे वयण, असंघयणी नरक सुर।
पद बीजे दिव्य संघयण, पिण नहिं छै षट मांहिलो ।।

४२. तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरा किंसंघयणी पण्णत्ता ?
गोयमा ! छण्हं संघयणाणं असंघयणी
(जीवा० १/९५)
से किं तं देवा ?... ....छण्हं संघयणाणं असंघयणी
(जीवा० १/१३५)
कहिं णं भंते ?·······दिव्वेणं संघयणेणं·······
(पण्ण० २/३०)

४३. संघयण जिसा उदार, पुद्गल छै तेहनैं कह्या।
संघयण नाम विचार, तिम असन्नी सुर नारकी ।।
४४. दर्शन अवधि विभंग, ते पाम्यो नहिं ज्यां लगे।
असन्नी जिसोज अंग, तिण सूं असन्नी जिन कह्या ।।
४५. बांध्यां जे पर्याय[1], भेद हुसी ए चवदमों।
तिण कारण कहिवाय, अपर्याप्तो सन्नी तणों ।।
४६. अपर्याप्त धुर भेद, प्रज्या बांध्यां द्वितीय ह्वै।
तृतीय भेद संवेद, पर्याय बांध्यां चतुर्थो ।।
४७. पंचम भेद पिछाण, पर्याय बांध्यां ह्वै छठो।
सप्तम भेद सुजाण, पर्याय बांध्यां अष्टमो ।।
४८. नवमों भेद निहाल, पर्याय बांध्यां दशम ह्वै।
एकादशमों भाल, पर्याय बांध्यां बारमो ।।
४९. तेरम भेदज ताम, पर्याय बांध्यां चवदमों।
पिण इग्यारमा नों आम, चवदम भेद हुवै नहीं ।।
५०. सन्नी असन्नी सोय, नरक विषे बिहुं ऊपनां।
अंतर्मुहूर्त्त जोय, अपर्याप्त बिहुं रहै ।।
५१. बिहुं बांध्यां पर्याय, होसी भेदज चवदमों।
अपर्याप्त कहिवाय, भेद चवदमा नां बिहुं ।।
५२. ते माटे बिहुं मांय, कहियै भेदज तेरमों।
पिण ग्यारम नहिं पाय, न्याय दृष्टि करि देखियै ।।
५३. सम्यग प्रकारे सोय, विभंग अन्नाण नावियो।
असन्नी सरिखो जोय, तिणसु असन्नी तसु कह्यो ।।
५४. पिण ए तेरम भेद, भेद नहीं असन्नी तणो।
तिण कारण संवेद, नारक नें असन्नी कह्यो ।।' (ज० स०)
५५. *एक दोय तीन जघन्य थी रे, उत्कृष्टा संख्यात।
उपजै छै भवसिद्धिया जी, एम अभव्य आख्यात ।।

५५. एवं भवसिद्धिया अभवसिद्धिया,

और गर्भज— दोनों प्रकार के मनुष्यों की अवगाहना दी गई है। वहां गर्भज मनुष्य के पर्याप्त और अपर्याप्त ये दो भेद किए हैं। पर संमूर्च्छिम का कोई भेद नहीं है (अनु० सूत्र ४०५ का पाद टिप्पण, पृ० ३६६)। इसके आधार पर निष्कर्ष यह निकलता है कि संमूर्च्छिम मनुष्य के भी कुछ पर्याप्तियां होती हैं। इस दृष्टि से उसे पर्याप्त मान लिया गया है।

१. आगम साहित्य में पर्याप्ति के स्थान पर 'पज्जत्ति' शब्द आता है। पज्जत्ति से पज्जा, पर्या, प्रज्या आदि शब्द बनते गए। इन्हीं शब्दों का एक रूप बन गया पर्याय। यह शब्द पर्याय अर्थ का नहीं, पर्याप्ति अर्थ का वाचक है।

***लय : अभड भड रावणा इंदा स्यूं अडियो**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. इम मति-श्रुत-ज्ञानी वली जी, अवधिज्ञानी पिण एम।
इम मति श्रुत अज्ञान नें जी, विभंग अनाणी तेम ।।
५७. चक्षुदर्शने न ऊपजै जो, जघन्य एक दोय तीन।
उत्कृष्ट संख्याता ऊपजै जी, अचक्षुदर्शणी चीन ।।

५६. आभिणिबोहियनाणी, सुयनाणी, ओहिनाणी, मइ-अण्णाणी, सुयअण्णाणी, विभंगनाणी।
५७. चक्खुदंसणी न उववज्जंति। जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा अचक्खुदंसणी उववज्जंति,

सोरठा

५८. उत्पत्ति समयो जाण द्रव्य इंद्रिय तजवे करी।
ऊपजवो पहिछाण, नहिं इम चक्षूदर्शणी ।।
५९. तो दर्शणी अचक्षु, तसुं ऊपजवो किम कह्यं ?
उत्तर तास विवक्षु, कहियै छै ते सांभलो ।।
६०. अचक्षुदर्शन जाण, इंद्रिय नें अनाश्रित्य ह्वै।
सामान्य उपयोग माण, उत्पत्ति समय पिण हुवै ।।

५८. 'चक्खुदंसणी न उववज्जंति' त्ति इन्द्रियत्यागेन तत्रोत्पत्तेरिति। (वृ. प. ५९९)
५९. 'तर्हि अचक्षुर्दर्शनिनः कथमुत्पद्यन्ते ?उच्यते।
(वृ. प. ५९९)
६०. इन्द्रियानाश्रितस्य सामान्योपयोगमात्रस्याचक्षुर्दर्शन-शब्दाभिधेयस्योत्पादसमयेऽपि भावादचक्षुर्दर्शनिन उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति। (वृ. प. ५९९)

६१. *अवधिदर्शणी इहविधे जी, आहार संज्ञा उपयुक्त।
जाव चौथी परिग्रह तणी जो, संज्ञाए करि युक्त ।।
६२. इत्थीवेदगा न ऊपजै जी, पुरुषवेदगा न होय।
भव प्रत्ययपणां थी नरक में जी, ए बिहुं वेद न कोय ।।

६१. एवं ओहिदंसणी वि। आहारसण्णोवउत्ता वि जाव परिग्गहसण्णोवउत्ता वि।
६२. इत्थीवेयगा न उववज्जंति, पुरिसवेयगा न उववज्जंति।
'इत्थीवेयगे' त्यादि, स्त्रीपुरुषवेदा नोत्पद्यन्ते भव-प्रत्ययान्नपुंसकवेदत्वात्तेषां। (वृ. प. ५९९)

६३. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संखेज।
वेद नपुंसका ऊपजै जी, नरक नपुंस कहेज ।।
६४. इम क्रोध कषाये वर्त्तताजी, जावत लोभ कहेज।
एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संखेज ।।
६५. सोइंदियोवउत्ता तिके जी, उत्पत्ति समय न पाय।
जाव फासिंदिय इह विधेजो, ए द्रव्य इंद्रिय नांय ।।

६३. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा नपुंसगवेयगा उववज्जंति।
६४. एवं कोहकसाई जाव लोभकसाई।
६५. सोइंदियोवउत्ता न उववज्जंति एवं जाव फासिंदि-ओवउत्ता न उववज्जंति।
'सोइंदिओवउत्ता' इत्यादि श्रोत्राद्युपयुक्ता नोत्पद्यन्ते इन्द्रियाणां तदानीमभावात्। (वृ. प. ५९९)

६६. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संखेज।
नोइंदियोवउत्ता हुवै जी, ए मन भाव कहेज ।।

६६. जहण्णेणं एक्को वा, दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति।

सोरठा

६७. वृत्ति विषे इम वाय, यद्यपि मन पर्याप्ति जे।
तास अभावे ताय, तिहां द्रव्य मन तो नथो ।।
६८. तथापि भावे मन्न, चैतन्य रूप हुवै अछै।
तिण करि सहित प्रपन्न, नोइंदियोवउत्ता कह्या ।।

वा०—ए नारकी सन्नी पंचेंद्रिय अपर्याप्तो छै। तिहां द्रव्य मन तो नथी पिण ज्ञानावरणी कर्म नां क्षयोपक्षम रूप भाव मन नुं चेतनपणुं तिहां छै।

६७,६८. 'नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति' त्ति नोइन्द्रियं—मनस्तत्र च यद्यपि मनः-पर्याप्त्यभावे द्रव्यमनो नास्ति तथाऽपि भावमनसश्चैतन्यरूपस्य सदा भावात्तेनोप-युक्तानामुत्पत्ते र्नोइन्द्रियोपयुक्ता उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति, (वृ. प. ५९९)

६९. *मनयोगी नहिं ऊपजै जी, ए द्रव्य मन न होय।
वचनयोगी नहिं ऊपजै जो, उत्पत्ति समये सोय ।।

६९. मणजोगी न उववज्जंति, एवं वइजोगी वि।
'मणजोगी' त्यादि मनोयोगिनो वाग्योगिनश्च नोत्पद्यन्ते, उत्पत्तिसमयेऽपर्याप्तकत्वेन मनोवाचोर-भावादिति। (वृ. प. ५९९)

*लय : अभड भड रावणा इंदा स्यूं अडयो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संख्यात ।
काययोगी तिहां ऊपजै जी, तेह सहित नरक जात ।।
७१. सागारोवउत्ता इह विधे जी, इम कहियै अनाकार ।
एह उपजवा आसरी जी, ए जिन उत्तर सार ।।

सोरठा

७२. उत्पत्ति समय विचार, प्रश्नोत्तर तेहनों कह्यो ।
कहियै हिव अधिकार, उद्वर्त्तन समयाश्रयी ।।

नरक उद्ववर्तना पद

७३. *ए रत्नप्रभा पृथ्वी विषे प्रभु ! नरकावासा लक्ष तीस ।
योजन संख्याता तणां जी, नरकावासे जगीस ।।
७४. एक समय में नेरइया जी, किता नीकलै धार ?
काउलेशी किता नीकलै जी, जाव किता अनाकार ?

७५. जिन कहै ए रत्नप्रभा विषे जो, नरकावासा तीस लक्ष।
संख योजन विस्तार नों जी, नरकावास विवक्ष ।।
७६. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संख्यात ।
एक समय में नेरइयाजी, नीकलै छै तिहां साथ ।।

सोरठा

७७. नीकलवा नों जाण, समयो ते परभव तणो ।
प्रथम समय पहिछाण, पिण नहिं नारक भव समय ।।

७८. *एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्टा संख्यात ।
कापोतलेशी नीकलै जी, जाव सन्नी इम आत ।।
७९. असन्नी तो नहिं नीकलै जी, पर भव समय ए आद ।
नारक मरि असन्नीपणें जी, नहिं ह्वै इह विधवाद ।।

८०. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्ट संखेज पिछाण ।
भव्यसिद्धिका नीकलै, इम जावत श्रुत अनाण ।।

८१. विभंगनाणी न नीकलै जी, समय नीकलवा नैं ताहि ।
विभंग अज्ञान हुवै नहीं जी, चक्षुदर्शन पिण नांहि ।।
८२. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्ट संखेज कहाय ।
अचक्षुदर्शणी नीकलै, इम जावत लोभ कषाय ।।

८३. सोइंदिय सहित न नीकलै, इम जावत इंद्रिय फास ।
नीकलवा नां समय में जी, द्रव्य इंद्री नहिं तास ।।
८४. एक दोय तीन जघन्य थी, उत्कृष्ट संख्याता सोय ।
नोइंदियोवउत्ता नीकलै, ते भावे मन अवलोय ।।
८५. नीकलवा नां समय में जी, मनयोगी न कहाय ।
इमहिज वचयोगी नहीं जी, विमल विचारो न्याय ।।

***लय : अभड भड रावणा इंदा स्यूं अड़ियो**

७०. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उववज्जंति ।
७१ एवं सागारोवउत्ता वि, एवं अणागारोवउत्ता वि ।
(श. १३।३)

७२. अथ रत्नप्रभानारकाणामेवोद्वर्त्तनामभिधातुमाह—
(वृ. प. ५९९)

७३. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु
७४. एगसमएणं केवतिया नेरइया उव्वट्टंति ? केवतिया काउलेस्सा उव्वट्टंति जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उव्वट्टंति ?
७५. गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु
७६. एगसमएणं जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उव्वट्टंति ।

७८. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा काउलेस्सा उव्वट्टंति । एवं जाव सण्णी ।
७९. असण्णी न उव्वट्टंति ।
'असन्नी न उव्वट्टंति' त्ति उद्वर्त्तना हि परभवप्रथमसमये स्यात् न च नारका असञ्ज्ञिषूत्पद्यन्तेऽतस्तेऽसञ्ज्ञिनः सन्तो नोद्वर्त्तन्त इत्युच्यते(वृ. प. ५९९,६००)
८०. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा भवसिद्धिया उव्वट्टंति । एवं जाव सुयअण्णाणी ।
८१. विभंगनाणी न उव्वट्टंति, चक्खुदंसणी न उव्वट्टंति।

८२. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा अचक्खुदंसणी उव्वट्टंति । एवं जाव लोभकसाई ।
८३. सोइंदियोवउत्ता न उव्वट्टंति, एवं जाव फासिंदियोवउत्ता न उव्वट्टंति ।
८४. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदियोवउत्ता उव्वट्टंति ।
८५. मणजोगी न उव्वट्टंति, एवं वइजोगी वि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८६. एक दोय तीन जघन्य थी जी, उत्कृष्ट संख्याता धार।
कायजोगी जे नीकलै जी, इम साकार नैं अनाकार।।

८७. शत तेरम देश प्रथम तणो, दोयसौ बोहितरमी ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिरायथी जी, 'जय-जश' हरष विशाल।।

८६. जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उव्वट्टंति। एवं सागारोवउत्ता, अणागारोवउत्ता। (श. १३।४)

ढाल : २७३

दूहा

१. कह्यूं रत्नप्रभा विषे, उत्पत्ति उद्वर्त्तन।
हिव सत्ता तेहनैं विषे, कहियै तेह वचन।।

१. अनन्तरं रत्नप्रभानारकाणामुत्पादे उद्वर्त्तनायां च परिमाणमुक्तमथ तेषामेव सत्तायां तदाह— (वृ. प. ६००)

नरक-सत्ता पद

*नरक विषे ए सत्ता जाणियै रे।।[ध्रुपदं]

२. ए प्रभु! रत्नप्रभा पृथ्वी विषे रे, तीस लाख नरकावासा मांहि।
योजन संख्याता विस्तार नैं रे, नरकावासे ताहि।।

३. कितला नारक सत्ताए कह्या रे, कापोतलेशी जगीस?
जाव अनागारोवउत्ता किता रे? प्रश्न ए गुणचालीस।।

४. प्रथम समय उपनां ते केतला रे, सत्ताए कहिवाय?
तसु अनंतरोववन्नगा कह्या रे, एक समय जसु थाय।।

५. ऊपजवा नां समय नीं अपेक्षया रे, बे आदि समय वर्त्तमान।
तेह परंपरोववन्नगा किता रे? घणां समय नां जान।।

६. प्रथम समय अवगाह्या खेत्र नां रे, तेह किता कहिवाय?
अनंतरोवगाढा तेहनैं कह्या रे, वंछित खेत्रे ताय।।

७. वंछित खेत्र भणी अवगाहिया रे, थया समय बे आदि।
तेह परंपरोवगाढा किता रे? सत्ताए करि लाधि।।

८. आहार लियां नैं प्रथम समय थयो रे, अणंतर-आहारा धार?
आहार लियां द्वितीयादि समय थयां रे, तेह परंपराहार?

९. प्रथम समय थयो पर्याप्त थयां रे, अणंतर-पज्जत्ता तेह?
समय थया द्वितीयादि पर्याप्त नैं रे, परंपर-पज्जत्ता जेह?

१०. चरम अछै भव तेहिज नरक नों रे, अथवा नारक मांय।
चरम समय वर्त्तै छै जेहनों रे, चरम किता कहिवाय?

२. इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु

३. केवतिया नेरइया पण्णत्ता? केवतिया काउलेस्सा जाव केवतिया अणागारोवउत्ता पण्णत्ता?

४. केवतिया अणंतरोववण्णगा पण्णत्ता?
'केवइया अणंतरोववन्नग' त्ति कियन्तः प्रथमसमयोत्पन्नाः? इत्यर्थः। (वृ० प० ६००)

५. केवतिया परंपरोववण्णगा पण्णत्ता?
'परंपरोववन्नग' त्ति उत्पत्तिसमयापेक्षया द्वयादिसमयेषु वर्त्तमानाः। (वृ. प. ६००)

६. केवतिया अणंतरोवगाढा पण्णत्ता?
'अणंतरावगाढ' त्ति विवक्षितक्षेत्रे प्रथमसमयावगाढाः। (वृ० प० ६००)

७. केवतिया परंपरोवगाढा पण्णत्ता?
'परंपरोगाढ' त्ति विवक्षितक्षेत्रे द्वितीयादिकः समयोऽवगाढे येषां ते परम्परावगाढाः। (वृ० प० ६००)

८. केवतिया अणंतराहारा पण्णत्ता? केवतिया परंपराहारा पण्णत्ता?

९. केवतिया अणंतरपज्जत्ता पण्णत्ता? केवतिया परंपरपज्जत्ता पण्णत्ता?

१०,११. केवतिया चरिमा पण्णत्ता? केवतिया अचरिमा पण्णत्ता?
'केवइया चरिम' त्ति चरमो नारकभवेषु स एव

*लय : साधुजी नगरी आया सदा भला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. पूर्वे चरम तणो लक्षण कह्यो रे, तेह थकी विपरीत।
अचरम सत्ताए प्रभु केतला रे? ए दश प्रश्न संगीत।।
१२. जिन कहै रतनप्रभा पृथ्वी विषे रे, तीस लख नरकावासा मांय।
संख योजन विस्तर जे नरक छै रे, तेह विषे कहिवाय।।
१३. छै विद्यमान संख्याता नारकी रे, काउलेस्सा संखेज।
एवं संख्याता सन्नी अछै रे, ए सत्ताए कहेज।।
१४. असन्नी मरि जे नरके ऊपनां रे, अपर्याप्त अवस्थाय।
भूत-भावत्व न्याय असन्नी कह्या रे, ते थोड़ा कहिवाय।।

१५. तेह कदाच हुवै कब नां हुवै रे, जो ह्वै तो इम थात।
एक दोय तोन पावै जघन्य थी रे, उत्कृष्टा संख्यात।।

१६. संख्याता भवसिद्धिक आखिया रे, एवं जाव कहंत।
परिग्रहसंज्ञाए उपयुक्त छै रे, संख्याता पावंत।।
१७. इत्थी वेदगपणें तिहां नथी रे, पुरुष वेद पिण नांय।
वेद नपुंसक संख्याता कह्या रे, एवं क्रोधकषाय।।
१८. मानकषाई जिम असन्नी कह्या रे, मान विषे वर्त्तमान।
तेह कदाचित ह्वै कब नां हुवै रे, ह्वै तो असन्नी ज्यूं जान।।
१९. इम जावत लोभकषाई इहविधे रे, नारक क्रोध अथाय।
तेहथी तेहनों विरह कह्यो नथी रे, विरहो शेष कषाय।।
२०. संख्याता श्रोतेंद्रिय सहित छै रे, एवं जाव कहाय।
फर्शेंद्रिय करीनें सहित छै रे, ए द्रव्य इंद्री पाय।।
२१. नोइंदिय उपयुक्त अछै तिके रे, असन्नी जिम कहिवाय।
केवल भावे मन सहित छै रे, पिण द्रव्य इंद्रिय नांय।।
२२. संख्याता मनयोगी आखिया रे, यावत इम अणागार।
उत्तर ए गुणचालीस प्रश्न नों रे, हिव दश प्रश्न विचार।।
२३. नारक प्रथम समय नां ऊपनां रे, कदा हुवै कदा नांय?
जो ह्वै तो असन्नी जिम जाणवा रे, जघन्य उत्कृष्ट कहाय।।
२४. संख्याताज परंपरोववन्नगा रे, बे आदि समय वर्त्तमान।
शेष रह्या ते अष्ट बोलां तणां रे, उत्तर सुणो सुजान।।
२५. जिम अनंतरोववन्नगा कह्या रे, अनंतरोवगाढा तेम।
अनंतर-आहार अनंतर-पज्जत्तगा रे, ए पिण कहिवा एम।।
२६. परंपरोवगाढा यावत वली रे, अचरम लगे विचार।
जेम परंपरोववन्नगा कह्या रे, तिम ए सर्व उचार।।

वा०—इहां वृत्तिकार कह्युं—अनंतरोपपन्नका, अनंतर-अवगाढका, अनंतर-आहारका, अनंतर-पर्याप्तका नै कदाचित्कपणां थकी सिय अत्थि इत्यादिक कहिवूं। अनै शेष नै बहुपणां थकी संख्याता इम कहिवूं।

इति संख्यात योजन विस्तार नरकावासा नां उत्पत्ति, उद्वर्त्तन, सत्ता—ए तीन गमा कह्या।

भवो येषां ते चरमाः, नारकभवस्य वा चरमसमये वर्त्तमानाश्चरमाः, अचरमास्त्वितरे। (वृ. प. ६००)

१२. गोयमा! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु

१३ संखेज्जा नेरइया पण्णत्ता, संखेज्जा काउलेस्सा पण्णत्ता, एवं जाव संखेज्जा सण्णी पण्णत्ता।

१४. असञ्ज्ञिभ्य उद्वृत्य ये नारकत्वेनोत्पन्नास्तेऽपर्याप्त-कावस्थायामसञ्ज्ञिनो भूतभावत्वात्ते चाल्पा इति कृत्वा (वृ० प० ६००)

१५. असण्णी सिय अत्थि, सिय नत्थि। जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा पण्णत्ता।

१६. संखेज्जा भवसिद्धिया पण्णत्ता। एवं जाव संखेज्जा परिग्गहसण्णोवउत्ता पण्णत्ता।

१७. इत्थिवेदगा नत्थि, पुरिसवेदगा नत्थि, संखेज्जा नपुंसगवेदगा पण्णत्ता। एवं कोहकसाई वि।

१८. माणकसाई जहा असण्णी।

१९. एवं जाव लोभकसाई।

२०. संखेज्जा सोइंदियोवउत्ता पण्णत्ता, एवं जाव फासिंदियोवउत्ता।

२१. नोइंदियोवउत्ता जहा असण्णी।

२२. संखेज्जा मणजोगी पण्णत्ता। एवं जाव अणागारोवउत्ता।

२३. अणंतरोववण्णगा सिय अत्थि, सिय नत्थि। जइ अत्थि जहा असण्णी।

२४. संखेज्जा परंपरोववण्णगा पण्णत्ता।

२५. एवं जहा अणंतरोववण्णगा तहा अणंतरोवगाढगा, अणंतराहारगा, अणंतरपज्जत्तगा।

२६. परंपरोवगाढगा जाव अचरिमा जहा परंपरो-ववण्णगा। (श० १३।५)

वा०—अनन्तरोपपन्नानामनन्तरावगाढानामनन्त-राहारकाणामनन्तरपर्याप्तकानां च कादाचित्कत्वात् 'सिय अत्थि' इत्यादि वाच्यं, शेषाणां तु बहुत्वात्-संख्याता इति वाच्यमिति। (वृ० प० ६००)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असंख योजन विस्तार नरकावासा नां ३ भांगा

सोरठा

२७. संख योजन विस्तार, नरकावासा नों कह्यो।
हिव असंख अवधार, वक्तव्यता कहियै तसु ।।

२७. अनन्तरं संख्यातविस्तृतनरकावासनारकवक्तव्यतोक्ता, अथ तद्विपर्ययवक्तव्यतामभिधातुमाह—
(वृ० प० ६००)

रत्नप्रभा का विस्तार

२८. *ए प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी तणां रे, नरकावासा तीस लक्ष।
योजन असंख्यात विस्तार नों रे, नरकावासे प्रत्यक्ष ।।

२९. एक समय में केता नारकी रे, उपजै छै जगदीस ?
जाव अनागारोवउत्ता किता रे, उत्पत्ति समय जगीस ?

३०. जिन कहै रत्नप्रभा ए मही तणां रे, नरकावास लक्ष तीस।
योजन असंख्यात विस्तार नैं रे, नरकावासे दीस ।।

३१. एक समय में नारक ऊपजै रे, जघन्य एक बे तीन।
असंख्यात उपजै उत्कृष्ट थी रे, उत्पत्ति समये चीन ।।

३२. जिम योजन संखिज्ज विस्तार नां रे, नरकावासा मांहि।
ऊपजवो नीकलवो नैं सत्ता रे, कह्या तीन आलावा ताहि ।।

३३. तेम असंख्याता विस्तार नां रे, नरकावासा मांय।
ऊपजवो नीकलवो नैं सत्ता रे, तीन आलाव कहाय ।।

३४. णवरं असंख्यात भणवा इहां रे, शेष सर्व तिमहीज।
जाव असंख्याता अचरम कह्या रे, इतरा लगे कहीज ।।

३५. णवरं संख असंख विस्तार में रे, दर्शन ज्ञान अवधि अबाध।
संख्याताहिज ते नीकालिवा रे, शेष पूर्ववत लाध ।।

२८. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु नरएसु

२९. एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उववज्जंति ?

३० गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु नरएसु

३१. एगसमएणं जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं असंखेज्जा नेरइया उववज्जंति।

३२. एवं जहेव संखेज्जवित्थडेसु तिण्णि गमगा।
'तिन्नि गमग' त्ति 'उववज्जंति उव्वट्टंति पन्नत्त' त्ति एते त्रयो गमाः। (वृ० प० ६००)

३३. तहा असंखेज्जवित्थडेसु वि तिण्णि गमगा भाणियव्वा।

३४. नवरं—असंखेज्जा भाणियव्वा, सेसं तं चेव जाव असंखेज्जा अचरिमा पण्णत्ता।

३५. नवरं—संखेज्जवित्थडेसु असंखेज्जवित्थडेसु वि ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्वा। सेसं तं चेव। (श. १३।६)

सोरठा

३६. वृत्ति विषे इम वाण, अवधिज्ञानी अवधिदर्शनी।
तीर्थंकरादिक जाण, संख्याताइज नीकलै ।।

३६. 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्व' त्ति, कथं ? ते हि तीर्थङ्करादय एव भवन्ति, ते च स्तोकाः स्तोकत्वाच्च संख्याता एवेति।
(वृ. प. ६००)

सक्कर प्रभा का विस्तार

३७. *सक्करप्रभा पृथ्वी विषे किता रे, नरकावास भदंत ?
जिन कहै पंच बीस लक्ष आखिया रे, वलि गोतम पूछंत ।।

३८. प्रभु ! नरकावासा ते सक्कर नां रे, स्यूं योजन संख्यात।
अथवा असंख्यात योजन तणां रे, विस्तारे अवदात ?

३९. इम जिम रत्नप्रभा नैं विषे कह्यं रे, सक्कर तेम कहीज।
णवरं असन्नी त्रिहुं गमे नथी रे, शेष सर्व तिमहीज ।।

३७. सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?
गोयमा ! पणुवीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

३८. ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा ? असंखेज्जवित्थडा ?

३९. एवं जहा रयणप्पभाए तहा सक्करप्पभाए वि, नवरं—असण्णी तिसु वि गमएसु न भण्णति, सेसं तं चेव। (श० १३।७)

*लय : साधूजी नगरी आया सदा भल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

४०. ऊपजवा नों एक, नीकलवा नो दूसरो।
सत्ता नों सुविशेख, ए त्रिहुं आलावा विषे ॥
४१. असन्नी कहिवो नांय, ते तो धुर पृथ्वी विषे।
उपजै आगम न्याय, षट नरके नहि ऊपजै ॥

४०,४१. 'नवरं असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नति' कस्मात् ?, उच्यते—असञ्ज्ञिनः प्रथमायामेवोत्पद्यन्ते 'असन्नी खलु पढमं' इति वचनादिति। (वृ० प० ६००)

वालुकप्रभा का विस्तार

४२. *वालुकप्रभा नी फुन पूछा कियां रे, नरकावासे तेम।
जिन कहै पनरै लक्ष परूपिया रे, शेष सक्करप्रभ जेम ॥

४३. नानापणुंज लेश्या नैं विषे रे, लेश प्रथम शत जेम।
संग्रह गाथा कहियै छै तिका रे, सांभलज्यो धर प्रेम ॥

वा०—इहां बे आदि पृथ्वी नीं अपेक्षा करिकै तीजी आदि पृथ्वी नैं विषे लेश्या में नानापणुं ह्वै। तिका लेश्या जिम प्रथम शतक नैं विषे कही तिम कहिवुं—

४२. वालुयप्पभाए णं—पुच्छा।
गोयमा ! पन्नरस निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, सेसं जहा सक्करप्पभाए।
४३. नाणत्तं लेसासु, लेसाओ जहा पढमसए। (श० १३।८)

वा०—इहाद्यपृथिवीद्वयापेक्षया तृतीयादिपृथिवीषु नानात्वं लेश्यासु भवति, ताश्च यथा प्रथमशते तथाऽध्येयाः, तत्र च संग्रहगाथेयं— (वृ० प० ६००)

सोरठा

४४. पहिली दूजी मांय, लेश्या कापोत कहीजियै।
तीजी मिश्र कहाय, कापोत नैं वलि नील ए ॥
४५. नील चतुर्थी मांय, नील कृष्ण बे पंचमी।
छट्ठी कृष्ण कहाय, परम कृष्ण है सप्तमी ॥

४४,४५. काऊ दोसु तइयाइ मीसिया नीलिया-चउत्थीए।
पंचमियाए मीसा कण्हा तत्तो परमकण्हा ॥ (वृ० प० ६००)

पंकप्रभा का विस्तार

४६. *पंकप्रभा नीं फुन पूछा कियां रे, जिन भाखै दश लाख।
इम जिम सक्करप्रभा नैं कह्युं रे, तिम कहिवुं सुत्त साख ॥

४७. णवरं अवधिज्ञानी अवधिदर्शनी रे, नीकलवो नहिं होय।
शेष सर्व तिमहीज कहीजिये रे, वारू विधि अवलोय ॥

४६. पंकप्पभाए णं—पुच्छा।
गोयमा ! दस निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, एव जहा सक्करप्पभाए।
४७. नवरं—ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति, सेसं तं चेव। (श० १३।९)

सोरठा

४८. अवधि ज्ञान दर्शन, बहुलपणैं करिनैं तिके।
तीर्थंकर जे प्रपन्न, धुर तीनां सूं नीकल्या ॥
४९. चउथी प्रमुख जे सोय, तेहथी नीकलिया छता।
तीर्थंकर नहि होय, तिण सूं वरज्यो अवधि नैं ॥

४८,४९. 'नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उववज्जंति' त्ति, कस्मात् ?, उच्यते, ते हि प्रायस्तीर्थंकरा एव, ते च चतुर्थ्या उद्वृत्ता नोत्पद्यन्त इति। (वृ० प० ६००)

धूमप्रभा का विस्तार

५०. *धूमप्रभा नीं फुन पूछा कियां रे, जिन भाखै त्रिण लाख।
इम जिम पंकप्रभा नैं आखियो रे, तेम सर्व ही भाख ॥

५०. धूमप्पभाए णं—पुच्छा।
गोयमा ! तिण्णि निरयावाससयसहस्सा, एवं जहा पंकप्पभाए। (श० १३।१०)

तमा का विस्तार

५१. प्रश्न तमा नों पूछ्यां जिन कहै रे, पंच ऊण इक लाख।
शेष सर्व जिम पंकप्रभा विषे रे, आख्यो तिम ए भाख ॥

५१. तमाए णं भंते ! पुढवीए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?
गोयमा ! एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पण्णत्ते। सेसं जहा पंकप्पभाए। (श० १३।११)

---

*लय : साधूजी नगरी आया सदा भला

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तमतमा का विस्तार

५२. अधो सप्तमी पृथ्वी में किता रे, अणुत्तर सर्वोत्कृष्ट।
मोटा अति मोट विस्तार सूं रे, महानरकावासा दृष्ट ?
५३. श्री जिन भाखै पंच संख्या करी रे, अणुत्तर सर्वोत्कृष्ट।
जाव अप्पइट्ठाणो ए पंचमो रे, अतिवेदन संक्लिष्ट ।।

५२. अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए कति अणुत्तरा महति-महालया महानिरया पण्णत्ता ?
५३. गोयमा ! पंच अणुत्तरा जाव (सं. पा.) अपइट्ठाणे।

सोरठा

५४. काल अनैं महाकाल, रोरुए महारोरुए।
ए जाव शब्द में न्हाल, मोटा अति मोटा चिहुं ।।

५४. 'जाव अपइट्ठाणे' त्ति इह यावत्करणात् 'काले महाकाले रोरुए महारोरुए' त्ति दृश्यम्। (वृ० प० ६००)

५५. *ते प्रभु ! स्यूं संखिज्ज विस्तार में रे, कै असंख विस्तार ?
जिन कहै इक अपइट्ठाणो तिको रे, संख[1] योजन विस्तार ।।
५६. च्यार असंख्याता विस्तार में रे, वलि गोतम पूछेह।
अधो सप्तमी पृथ्वी नें विषे रे, प्रभु पंच संख्या करि जेह ।।
५७. अनुत्तर सर्वोत्कृष्ट मोटा जिके रे, जावत महानरकेह।
संख योजन विस्तार नरकवासा विषे रे, एक समै किता उपजेह ?
५८. इम जिम पंकप्रभा नें विषे कह्यूं रे, णवरं इतो विशेष।
मति श्रुत अवधिज्ञानी नहिं ऊपजै रे, नीकलवो नहिं लेश ।।

५५-५७. ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा ? असंखेज्ज-वित्थडा ? गोयमा ! संखेज्जवित्थडे य असंखेज्ज-वित्थडा य। (श० १३।१२)
अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महानिरएसु संखेज्जवित्थडे नरए एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति ?
५८. एवं जहा पंकप्पभाए नवरं—तिसु नाणेसु न उववज्जंति न उव्वट्टंति।

सोरठा

५९. पंकप्रभा में जाण, संख्याता विस्तार नैं।
नरकावास पिछाण, आख्यो तिम कहिवो इहां ।।
६०. *सम्यक्त्व रहित तिहां उपजै सही रे, निकलै सम्यक्त्व खोय।
सत्ताए त्रिण ज्ञान सहीत छै रे, सम्यग दर्शन होय ।।

६०. पण्णत्तएसु तहेव अत्थि।
सम्यक्त्वभ्रष्टानामेव तत्रोत्पादात् तत उद्वर्त्तनाच्चाद्येषु त्रिषु ज्ञानेषु नोत्पद्यन्ते नापि चोद्वर्त्तन्त इति 'पन्नत्ताएसु तहेव अत्थि' त्ति ···इत्यत्र तृतीयगमे तथैव —प्रथमादिपृथिवीष्विव सन्ति, तत्रोत्पन्नानां सम्यग्दर्शनलाभे आभिनिबोधिकादिज्ञानत्रयभावादिति। (वृ० प० ६००)

६१. एम असंख्याता विस्तार नां रे, नरकावासा मांय।
णवरं इतो विशेष इहां अछै रे, असंखेज्ज कहिवाय ।।
६२. शत तेरम नैं देश प्रथम तणो रे, बेसौ तिहोतरमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

६१. एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि, नवरं—असंखेज्जा भाणियव्वा। (श० १३।१३)

१. लाख योजन
***लय : साधूजी नगरी आया सदा भला**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २७४

दूहा

नरक में सम्यक् दृष्टि आदि की पृच्छा

१. अथ त्रिहुं दृष्टि तणो हिवै, रत्नप्रभादिक मांय।
वक्तव्यता तसुं वारता, प्रश्नोत्तर कहिवाय।।

१. अथ रत्नप्रभादिनारकवक्तव्यतामेव सम्यग्दृष्ट्यादीना-भित्याह— (वृ० प० ६००)

*चतुर नर वारू अर्थ विचार ।। [ध्रुपदं]

२. प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी विषे रे, तीस लाख नरकावासा मांय।
संख्याता योजन तणां रे, नरकावासे ताय।।

२. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु

३. स्यूं समदृष्टी ऊपजै रे, कै मिथ्यादृष्टि उपजंत।
कै समामिथ्यादृष्टि नेरइया रे, उपजै छै भगवंत !

३. किं सम्मद्दिट्ठी नेरइया उववज्जंति ? मिच्छद्दिट्ठी नेरइया उववज्जंति ? सम्मामिच्छदिट्ठी नेइरया उववज्जंति ?

४. जिन कहै समदृष्टि ऊपजै रे, मिथ्यादृष्टि उपजंत।
समामिथ्यादृष्टि नहिं ऊपजै रे, मिश्रदृष्टि थको न मरंत ।।

४. गोयमा ! सम्मदिट्ठी वि नेरइया उववज्जंति, मिच्छ-दिट्ठी वि नेरइया उववज्जंति, नो सम्मामिच्छदिट्ठी नेरइया उववज्जंति। (श० १३।१४)
'न सम्ममिच्छो कुणइ काल' मिति वचनात् मिश्र-दृष्टयो न म्रियन्ते। (वृ० प० ६००)

सोरठा

५. नारक भव नो इष्ट, ए पहिलो समयो अछै।
सम्मामिथ्यादिष्ट, अपर्याप्त में नहिं हुवै ।।

६. *प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी विषे रे, नरकावासा तीस लक्ष।
संख्याता योजन तणां रे, नरकावासे प्रत्यक्ष।।

६. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु

७. स्यूं समदृष्टी नीकलै रे, कै मिथ्यादृष्टि निकलंत।
कै समामिथ्यादृष्टि थको रे, निकलै छै भगवंत ?

८. जिन कहै समदृष्टी नीकलै रे, मिथ्यादृष्टि निकलंत।
समामिथ्यादृष्टि नहिं नीकलै रे, मिश्रदृष्टि थको न मरंत ।।

७,८. किं सम्मदिट्ठी नेरइया उव्वट्टंति ?
एवं चेव। (श० १३।१५)

सोरठा

९. नारक उपजै आण, सन्नी मनुष्य तिर्यंच में।
ते बिहुं गति नों जाण, ए पहिलो समयो अछै।।

१०. *प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी विषे रे, तीस लाख नरकावासा मांहि।
संख योजन विस्तार नैं रे, नरकावासे ताहि।।

१०. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडा नरगा

११. स्यूं समदृष्टि नारक करी रे, विरह-रहित कहिवाय।
मिथ्यादृष्टि नारक करी रे, विरह-रहित त्यां पाय ?

११. किं सम्मद्दिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया ? मिच्छ-दिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया ?

१२. कै मिश्रदृष्टि नारक करी रे, विरह-रहित अवधार ?
ए सत्ता आश्री त्रिहुं रे, पूछा—प्रश्न प्रकार।।

१२. सम्मामिच्छदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया ?

१३. जिन कहै समदृष्टी तिहां रे, नारक विरह-रहीत।
मिथ्यादृष्टी नारकी रे, विरह-रहित संगीत।।

१३. गोयमा ! सम्मद्दिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया, मिच्छ-दिट्ठीहिं वि नेरइएहिं अविरहिया।

१४. मिश्रदृष्टी नारकी रे, कदाचित ते पाय।
कदाचित पावै नहीं रे, विरह अविरह कहाय।।

१४. सम्मामिच्छदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया विरहिया वा।
कादाचित्कत्वेन तेषां विरहसम्भवादिति।
(वृ० प० ६००)

---

*लय : राम पूछै सुग्रीव नै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. एम असंख विस्तार नैं रे, भणवा तीन आलाव।
ऊपजवा चववा तणो रे, वलि सत्ता नों भाव।।
१६. सक्करप्रभा नैं विषे रे, एवं तीन आलाव।
एवं जाव तमा विषे रे, तीन आलावा न्याव।।
१७. प्रभु ! सातमी नरक में रे, पंच अणुत्तर ताहि।
जाव संख योजन तणो रे, अप्पइट्ठाणा मांहि।।
१८. स्यूं समदृष्टी नारकी रे, उपजै छै भगवंत !
कै मिथ्यादृष्टी ऊपजै रे, कै मिश्रदृष्टी जंत ?
१९. जिन कहै समदृष्टी तिकै रे, नारक नहिं उपजंत।
मिथ्यादृष्टी ऊपजै रे, मिश्रदृष्टि नहिं जंत।।

२०. इमहिज नीकलवो अछै रे, मिच्छदिट्ठि निकलंत।
समदृष्टी मिश्रदृष्टि में रे, नीकलवो नहिं हुंत।।

सोरठा

२१. नरक सातमीं मांहि, सम्यक्त थको न ऊपजै।
नीकलवो पिण नांहि, मिश्र थको पिण इम कह्यो।।

२२. *सत्ता आश्री सात नीं रे, विरह-रहित आलाव।
जिम कह्यं रत्नप्रभा विषे रे, तिणहिज रीत कहाव।।
२३. इम असंख योजन तणां रे, नरकावासा च्यार।
तीन आलावा तिण विषे रे, दृष्टि तीन सुविचार।।

सोरठा

२४. नारक दृष्टि प्रकार, वक्तव्यता तेहनीं कही।
हिव तेहनूंज विचार, भंगांतरे कहीजियै।।

नरक में लेश्या की पृच्छा

२५. *इम निश्चै भगवंत जी ! रे, कृष्णलेशी अवलोय।
नील लेश्यावंत थई रे, जाव शुक्ल लेश्यावंत होय।।
२६. कृष्ण लेश्यावंत नैं विषे रे, उपजै नारकपणेह ?
जिन कहै हंता गोयमा ! रे, कृष्णलेस्से जाव उपजेह।।

२७. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यं रे, लेश्या कृष्ण कहेह।
जाव शुक्लवंत ते थई रे, कृष्ण विषे उपजेह ?
२८. जिन कहै लेश-स्थानक विषे रे, अविशुद्ध विषे वर्त्तंत।
अविशुद्ध विषे वलि जावतो रे, कृष्ण परिणमैं अंत[1]।।
२९. कृष्णलेस्या प्रति परिणमी रे, करि तिहां थी काल।
कृष्ण लेस्यावंत नरक में रे, उपजै तेहिज बाल।।
३०. तिण अर्थे इम आखियो रे, कृष्णलेश्या छै तेह।
अन्य लेश्यावंत ते थई रे, कृष्ण विषे उपजेह।।

१५. एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि तिण्णि गमगा भाणियव्वा।
१६. एवं सक्करप्पभाए वि, एवं जाव तमाए वि।
(श० १३।१६)
१७. अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु जाव संखेज्जवित्थडे नरए
१८. किं सम्मदिट्ठी नेरइया—पुच्छा।

१९. गोयमा ! सम्मदिट्ठी नेरइया न उववज्जंति, मिच्छ-दिट्ठी नेरइया उववज्जंति, सम्मामिच्छदिट्ठी नेरइया न उववज्जंति :
२०. एवं उव्वटंति वि।

२२. अविरहिए जहेव रयणप्पभाए।

२३. एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि तिण्णि गमगा।
(श० १३।१७)

२४. अथ नारकवक्तव्यतामेव भंग्यन्तरेणाह—
(वृ० प० ६००)

२५. से नूणं भंते ! कण्हलेस्से, नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता
२६. कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ?
हंता गोयमा ! कण्हलेस्से जाव उववज्जंति।
(श० १३।१८)
२७. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—कण्हलेस्से जाव उववज्जंति ?
२८. गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु-संकिलिस्स-माणेसु कण्हलेसं परिणमइ,
२९. परिणमित्ता कण्हलेसेसु नेरइएसु उववज्जंति।

३०. से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति। (श० १३।१९)

***लय : राम पूछै सुग्रीव नै रे**

१. कृष्णलेश्यावंत विशुद्ध परिणामे शुक्ल मे जावै वलि अविशुद्ध परिणामे करी अविशुद्ध लेश्या विषे वर्ततो कृष्णपणैं परिणमै।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

३१. 'इहां एहवो अभिप्राय, लेश तणां बहु भेद में।
सहु लेश्या रै मांय, कृष्णलेश अविशुद्ध है।।
३२. नील प्रमुख जे लेश, कृष्ण अपेक्षा विशुद्ध है।
ते माटै सुविशेष, कृष्ण इहां अविशुद्ध कही।।
३३. ते कृष्ण अविशुद्ध मांय, नील प्रमुख जे आवतो।
अंत कृष्ण परिणमाय, कृष्णलेशी नारक हुवै।।' [ज०स०]

३४. *हे निश्चै भगवत जी ! रे, कृष्णलेश्या अवलोय।
नीललेस्यावंत ते थई रे, जाव शुक्लवंत होय।।
३५. नीललेस्या नारक विषे रे, ऊपजै छै भगवान ?
जिन कहै हंता गोयमा ! रे, जावत उपजै जाण।।
३६. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो रे, कृष्णलेस्यावंत जेह।
जाव शुक्लवंत ते थई रे, नील नारक उपजेह।।
३७. जिन कहै स्थानक बहु लेश नां रे, संक्लिश्य विषे जावंत।
तथा विशुद्ध में जावतो र, नील लेश परिणमंत।।
३८. नील लेश्या प्रति परिणमी रे, काल करीनें तेह।
नीललेश्या नारक विषे रे, उपजै निःसंदेह।।

सोरठा

३९. 'इहां पाठ बे हुंत, संक्लिश्य में जातो थको।
तथा विशुद्ध में जंत, नील परिणमी नैं मरै।।
४०. लेश्या कृष्ण पिछाण, नील तणी अपेक्षाय जे।
संक्लिश्य अप्रशस्त जाण, तसु स्थाने जातो थको।।
४१. ते कृष्ण तणी अपेक्षाय, लेश्या नील विशुद्ध है।
ते अंत परिणमी ताय, नीललेश नारक हुवै।।
४२. तथा कापोतज आद, नील तणी अपेक्षाय जे।
प्रशस्त लेश संवाद, तसु स्थाने जातो थको।।
४३. ते काउ आदि पेक्षाय, संक्लिश्य अविशुद्ध नील है।
ते अंत परिणमी ताय, नील लेश नारक हुवै।।
४४. एहवूं न्याय जणाय, तिणसूं पाठ जे बे कह्या।
वृत्तिकार अभिप्राय, बहुश्रुति तेह विचारज्यो।।
४५. पूछै कोइयक एम, नील लेश तो अशुभ छै।
विशुद्ध कही इहां केम, तसु उत्तर निसुणो हिवै।।
४६. नवमें शतक निहाल, इकतीसम उद्देश में।
तप आतापन बाल, करतां विभंग ऊपजै।।

४७. विभंग ऊपनें तेह, जीव अजीव नैं जाणिया।
वलि अन्यतीर्थी जेह, त्यां नैं पिण जाणे लिया।।
४८. आरंभ परिग्रहवान, जे पाखंड मांहे रह्या।
जाण्या संक्लिश्यमान, विशुद्धमान पिण जाणिया।।

३४,३५. से नूणं भंते ! कण्हलेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ?
हंता गोयमा ! जाव उववज्जंति। (श० १३।२०)

३६. से केणट्ठेणं जाव उववज्जंति ?

३७. गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु वा नीललेस्सं परिणमइ,
३८. परिणमित्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति।

४६. तस्स णं छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं······
····ईहापोहमग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे नामं अण्णाणे समुप्पज्जइ। (भ. श. ९।३३)

*लय : राम पूछै सुग्रीव नै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४९. संक्लिश तणी अपेक्षाय, विशुद्ध इहां पिण आखिया।
टल्या अशुद्ध अधिकाय, विशुद्ध नाम इण कारणे ।।

५०. दोय भेद पहिछाण, दशमा गुणठाणां तणां।
संक्लिश्य विशुद्धमान, शत पणवीसम सप्तमें ।।

५०. सुहुमसंपरायसंजए—पुच्छा।
गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—संकिलिस्समाणए य, विसुज्झमाणए य। (भ. श. २५।४५७)

५१. शुक्ल ध्यान सुखदाय, शुक्ल लेश दशमें अछै।
संक्लिश्यमान किण न्याय, ए पिण वचन अपेक्षया ।।

५२. क्षायक श्रेण चढंत, विशुद्धमान दशमें अछै।
उपशम श्रेण पडंत, आख्यो संक्लिश्यमान ए ।।

५३. इम क्षपक तणी अपेक्षाय, पडतां उपशम श्रण जे।
संक्लिश्यमान कहाय, पिण अशुद्ध ध्यान लेस्या नथी ।।

५४. धुर शत प्रथम उद्देश, अणारंभि अप्रमत्त कह्या।
प्रमत्त पिण सुविशेष, अणारंभि शुभ जोग में।।

५४. तत्थ णं जे ते अप्पमत्तसंजया, ते णं नो आयारंभा, नो परारंभा, नो तदुभयारंभा।
तत्थ णं जे ते पमत्तसंजया, ते सुहं जोगं पडुच्च नो आयारंभा, नो परारंभा, नो तदुभयारंभा, अणारंभा।
(भ. श. १।३४)

५५. तिणसूं दशमें ठाण, अशुभ जोग नहिं सर्वथा।
शुभजोगी पहिछाण, तिहां अध्यवसाय अशुभ नथी ।।

५६. तिणसूं दशम गुणेण, क्षपक-श्रेण नीं पेक्षया।
पडतां उपशम-श्रेण, संक्लिश्यमान कह्या तसु ।।

५७. धुर शत प्रथम उद्देश, पूर्व ऊपनां नारक तनु।
विशुद्ध वर्ण कहेस, बहु कर्म घस्या तिण कारणें ।।

५८. पछै ऊपनां जास, कर्म घणां खपिया नथी।
अल्प काल हुओ तास, नारक अविशुद्ध वर्ण तसु ।।

५७,५८. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइया नो सव्वे समवण्णा ?
गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पुव्वोववन्नगा य, पच्छोववन्नगा य। तत्थं णं जे ते पुव्वोववन्नगा ते णं विसुद्धवण्णतरागा। तत्थ णं जे ते पच्छोववन्नगा ते णं अविसुद्धवण्णतरागा।
(भ. श. १।६५)

५९. तेम इहां पिण जाण, कृष्ण तणीज अपेक्षया।
विशुद्ध नील पिछाण, एहवूं न्याय जणाय छै।।'[ज०स०]

६०. *तिण अर्थे करि आखियो रे, कृष्ण लेश्यावंत तेह।
जाव नील परिणमी करी रे, नील नारक ऊपजेह ।।

६०. से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव उववज्जंति।
(श. १३।२१)

६१. ते निश्चै भगवंत जी ! रे, कृष्णलेश्यावंत सोय।
नीललेस्यावंत ते थई रे, जाव शुक्लवंत होय ।।

६१. से नूणं भंते ! कण्हलेस्से, नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता

६२. कापोतलेश्यावंत जे रे, नारक में ऊपजेह।
नील लेश्या विषे जिम कह्यो रे, तिम कापोत कहेह ।।

६२. काउलेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ?
एवं जहा नीललेस्साए तहा काउलेस्साए वि भाणियव्वा।

६३. यावत तिण अर्थे कह्यो रे, जाव कापोतजवंत।
नारक में ते ऊपजै रे, सेवं भंते ! सेवं भंते !

६३. जाव से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति।
(श. १३।२२)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श. १३।२३)

६४. प्रथम उद्देश तेरम तणो रे, बेसौ चोमंतरमीं ढाल।
भिक्ष भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' हरष विशाल ।।

त्रयोदशशते प्रथमोद्देशकार्थः ।।१३।१।।

---

*लय : राम पूछै सुग्रीव नै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २७५

दूहा

१. प्रथम उद्देशे नारका, आख्या द्वितीय मझार।
उपपातिक साधर्म्य थी, हिवै देव अधिकार।।

१. प्रथमोद्देशके नारका उक्ताः द्वितीये त्वौपपातिकत्व-साधर्म्याद्देवा उच्यन्ते। (वृ. प. ६०१)

देवों के प्रकार

२. देव प्रभुजी! कतिविधा? जिन कहै चिउंविध ठीक।
भवनपति व्यंतर वली, ज्योतिषी वैमानीक।।

२. कतिविहा णं भंते! देवा पण्णत्ता?
गोयमा! चउव्विहा देवा पण्णत्ता, तं जहा—
भवणवासी, वाणमंतरा, जोइसिया, वेमाणिया।
(श. १३।२४)

३. भवनपति प्रभु! कतिविधा? जिन कहै दशविध देख।
असुरकुमारा आदि इम, भणवा भेद अशेख।।

३. भवणवासी णं भंते! देवा कतिविहा पण्णत्ता?
गोयमा! दसविहा पण्णत्ता, तं जहा—असुरकुमारा —एवं भेओ।

४. द्वितीय शतक मांहे कह्यो, देव उद्देश समृद्ध।
सर्व इहां कहिवो तिमज, जाव सर्वार्थसिद्ध।।

४. जहा बितियसए देवुद्देसए (२।११७) जाव अपराजिया, सव्वट्ठसिद्धगा। (श. १३।२५)

असुरकुमार आदि देवों की पृच्छा

*ऋषिरायजी हो, गोतम प्रश्न अमंदो रे।
सुखदायजी हो, उत्तर दै जिनचंदो रे।। [ध्रुपदं]

५. हे प्रभु! असुरकुमार नां, के लक्ष छै आवासा रे?
जिन कहै आवासा तसु रे, चउसठ लक्ष उजासा रे।।

५. केवतिया णं भंते! असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता?
गोयमा! चोयट्ठि असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

६. ते प्रभु! स्यूं योजन संख नां रे, कै असंख योजन विस्तारो रे?
जिन कहै संख योजन तणां रे, असंख योजन पिण सारो रे।।

६. ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा? असंखेज्ज-वित्थडा?
गोयमा! सखेज्जवित्थडा वि, असंखेज्जवित्थडा वि।
(श. १३।२६)

सोरठा

७. जंबूद्वीप सम सार, जघन्य थकी लघु भवन ह्वै।
मज्झिम संख विस्तार, उत्कृष्ट असंख योजन तणां।।

७. जंबुद्दीवसमा खलु भवणा जे हुंति सव्वखुड्डागा।
संखेज्जवित्थडा मज्झिमा उ सेसा असंखेज्जा।।
(वृ. प. ६०२,६०३)

८. *लक्ष चउसठ असुर आवास में रे,
संख विस्तर असुर आवासे रे।
एक समय प्रभु! केतला रे, उपजै असुर सुखरासे रे?

८. चोयट्ठीए णं भंते! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु एगसमएणं केवतिया असुरकुमारा उववज्जंति?

९. तेजुलेशी किता ऊपजै रे, किता कृष्णपक्षी उपजंतो रे?
इम जिम रत्नप्रभा विषे रे, प्रश्न गुणचालीस पूछंतो रे।।

९. जाव केवतिया तेउलेस्सा उववज्जंति? केवतिया कण्हपक्खिया उववज्जंति? एवं जहा रयणप्पभाए तहेव पुच्छा।

१०. उत्तर प्रभु तिमहिज दियो रे, णवरं विशेष कहंतो रे।
इत्थि-वेद पिण ऊपजै रे, पुरिस-वेद उपजंतो रे।।

१०. तहेव वागरणं, नवरं—दोहिं वेदेहिं उववज्जंति।
'दोहिवि वेदेहिं उववज्जंति' त्ति द्वयोरपि स्त्री-पुंवेदयोरुत्पद्यन्ते, तयोरेव तेषु भावात्।
(वृ. प. ६०३)

---

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. नपुंसक-वेद न ऊपजै रे, शेष सर्व तिमहीजो रे।
नीकलवो पिण तेहनों रे, तिणहिज रीत कहीजो रे।।
१२. णवरं असन्नी नीकलै रे, एकेंद्रिय में आयो रे।
असुर थी लेइ ईशाण नों रे, चव एकेंद्रिय थायो रे।।

११. नपुंसगवेयगा न उववज्जंति, सेसं तं चेव। उव्वट्टंतगा वि तहेव।

१२. नवरं—असण्णी उव्वट्टंति।
'असण्णी उव्वट्टंति' त्ति असुरादीशानान्तदेवानामसञ्ज्ञिष्वपि पृथिव्यादिषूत्पादात्। (वृ. प. ६०३)

१३. अवधिज्ञानी अवधिदर्शनी रे, ए पिण निकलै नांही रे।
असुर थी न हुवै तीर्थकरा रे, शेष सर्व तिम थाई रे।।

१३. ओहिनाणी ओहिदंसणी य ण उव्वट्टंति, सेसं तं चेव।
'ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति' त्ति असुराद्युद्वृत्तानां तीर्थकरादित्वालाभात् तीर्थकरादीनामेवावधिमतामुद्वृत्तेः। (वृ. प. ६०३)

१४. सत्ता असुरकुमार में रे, जिम कह्यो प्रथम उद्देशो रे।
तिणहिज विध कहिवो सहू रे, णवरं इतरो विशेषो रे।।

१४. पण्णत्तएसु तहेव, नवरं—
'पण्णत्तएसु तहेव' त्ति 'प्रज्ञप्तकेषु' प्रज्ञप्तपदोपलक्षितगमाधीतेष्वसुरकुमारेषु तथैव यथा प्रथमोद्देशके। (वृ. प. ६०३)

१५. संख्याता योजन नां छै ते भणी रे, इत्थीवेदगा संख्यातो रे।
संख्याता पुंवेद छै रे, वेद नपुंस न पातो रे।।
१६. क्रोधकषाई हुवै कदा रे, उदय किवार न होयो रे।
जो होवै तो जघन्य थी रे, एक दोय तीन जोयो रे।।

१५. संखेज्जगा इत्थिवेदगा पण्णत्ता, एवं पुरिसवेदगा वि, नपुंसगवेदगा नत्थि।

१६. कोहकसाई सिय अत्थि सिय नत्थि। जइ अत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा।
'कोहकसाई' इत्यादि, क्रोधमानमायाकषायोदयवन्तो देवेषु कादाचित्का अत उक्तं 'सिय अत्थी' त्यादि। (वृ. प. ६०३)

१७. उत्कृष्ट संख्याता कह्या रे, इमहिज मान रु मायो रे।
प्रबल उदय में वर्त्तता रे, ते आश्री कहिवायो रे।।
१८. लोभकषाई संख्याता कह्या रे, सर्व देवता मांह्यो रे।
प्रबल लोभ वर्त्तता घणां रे, शेष तिमज कहिवायो रे।।

१७. उक्कोसेणं संखेज्जा पण्णत्ता। एवं माणकसाई, मायकसाई।

१८. संखेज्जा लोभकसाई पण्णत्ता, सेसं तं चेव।
लोभकषायोदयवन्तस्तु सार्वदिका अत उक्तं 'संखेज्जा लोभकसाई पन्नत्त' त्ति। (वृ. प. ६०३)

१९. उत्पत्ति निकलवो सत्ता विषे रे, त्रिहुं गमे अवदातो रे।
कृष्णादिक नैं आदि दे रे, चिउंलेशी संख्यातो रे।।

१९. तिसु वि गमएसु चत्तारि लेस्साओ भाणियव्वाओ।
'उववज्जंति उव्वट्टंति पन्नत्ता' इत्येवं लक्षणेषु त्रिष्वपि गमेषु चतस्रो लेश्यास्तेजोलेश्यान्ता भणितव्याः, एता एव हि असुरकुमारादीनां भवन्तीति। (वृ. प. ६०३)

२०. इम असंख्याता योजन तणो रे, विस्तारवंत मझारो रे।
संखेज्ज योजन नैं विषे कह्यो रे, तिमहिज कहिवो विचारो रे।।
२१. णवरं तीनूं आलावा विषे रे, असंख्याता कहिवायो रे।
जाव असंख्याता कह्या रे, अचरम त्रिहुं गमे ताह्यो रे।।
२२. हे प्रभु! नागकुमार नां रे, कितला लक्ष आवासा रे?
इम जाव थणियकुमार नां रे, तीन आलावा उजासा रे।।
२३. णवरं इतरो विशेष छै रे, जेह निकाय रै मांह्यो रे।
जेतला लक्ष भवन कह्या रे, तेह आवास कहिवायो रे।।

२०. एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि।

२१. नवरं—तिसु वि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा जाव असंखेज्जा अचरिमा पण्णत्ता। (श. १३।२७)

२२. केवतिया णं भंते! नागकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता? एवं जाव थणियकुमारा।

२३. नवरं—जत्थ जत्तिया भवणा। (श. १३।२८)
'जत्थ जत्तिया भवण' त्ति यत्र निकाये यावन्ति भवनलक्षाणि तत्र तावन्त्युच्चारणीयानि। (वृ. प. ६०३)

सोरठा

२४. असुर तणैं अवधार, भवन लक्ष चौसठ कह्या।
लक्ष चउरासी सार, नागकुमार तणैं अछै।।

२४,२५. चउसट्ठीअ सुराणं नागकुमाराण होइ चुलसीई।
बावत्तरि कणगाणं वाउकुमाराण छन्नउई।। (वृ. प. ६०३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. वर बोहितर लाख, सुवर्णकुमार नैं कह्या।
वायू तणैं सुशाख, भवन लक्ष छिन्नूं अछै।।
२६. द्वीप रु दिशाकुमार, उदधी विज्जू अग्नि फुन।
थणित बिहुं मिल धार, लक्ष छीहंतर जाणवा।।

२६. दीवदिसाउदहीणं विज्जुकुमारिंदथणियमग्गीणं।
जुयलाणं पत्तेयं छावत्तरिमो सयसहस्सा।।
(वृ. प. ६०३)

व्यन्तर देवों की पृच्छा—

२७. *हे प्रभु! वाणव्यंतर तणां रे, केतला लक्ष आवासा रे?
श्री जिन भाखै गोयमा! रे, लक्ष असंख प्रकासा रे।।

२७. केवतिया णं भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सा पण्णत्ता?
गोयमा! असंखेज्जा वाणमंतरावाससयसहस्सा पण्णत्ता

२८. ते प्रभु! स्यूं संख्यात नां रे, योजन विस्तारवंतो रे।
अथवा असंख योजन तणां रे? भाखै तब भगवंतो रे।।
२९. संख्याता योजन तणां रे, विस्तारवंत विमासो रे।
असंख्याता योजन नहीं रे, नगर तिकेज आवासो रे।।

२८. ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा? असंखेज्ज-वित्थडा?
२९. गोयमा! संखेज्जवित्थडा, नो असंखेज्जवित्थडा।
(श. १३।२९)

सोरठा

३०. जंबूद्वीप प्रमाण, नगर कह्या उत्कृष्ट थी।
जघन्य भरत सम जाण, मज्झिम विदेह समान छै।।

३०. जंबुद्दीवसमा खलु उक्कोसेणं हवंति ते नगरा।
खुड्डा खेत्तसमा खलु विदेहसमगा उ मज्झिमगा।।
(वृ. प. ६०३)

वा०—संखेज्जेसु णं भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सेसु एगसमएणं केवतिया वाणमंतरा उववज्जंति? इहां घणां लाख आवासा कह्या। ते असंख्याता लाख जाणवा, पूव असंख्याता लाख कह्या छै ते माटै।

३१. *प्रभु! संख्याता योजन तणैं रे, बहु लक्ष व्यंतर आवासे रे।
एक समय किता व्यंतरा रे, उपजै? स्वाम प्रकासे रे।।
३२. इम जिम असुर तणां जिके रे, संख योजन विस्तारो रे।
तीन गमा तेहनां कह्या रे,
तिम त्रिण गमा व्यंतर नां धारो रे।।

३१. संखेज्जेसु णं भंते! वाणमंतरावाससयसहस्सेसु एगसमएणं केवतिया वाणमंतरा उववज्जंति?
३२. एवं जहा असुरकुमाराणं संखेज्जवित्थडेसु तिण्णि गमगा तहेव भाणियव्वा वाणमंतराण वि तिण्णि गमगा। (श. १३।३०)

ज्योतिषी देवों की पृच्छा—

३३. केतला प्रभु! ज्योतिषी तणां रे, विमाणावासज लक्षो रे?
जिन कहै असंख विमाण छै रे, ए आवास लक्ष प्रत्यक्षो रे।।

३३. केवतिया णं भंते! जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता?
गोयमा! असंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

३४. स्यूं प्रभु! तेह विमाण छै रे, संख विस्तारज चीनो रे।
जिम व्यंतर नां तीन गमा कह्या रे,
तिम जोतिषी नां गमा तीनो रे।।

३४. ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा?
एवं जहा वाणमंतराणं तहा जोइसियाण वि तिण्णि गमगा भाणियव्वा।

वा०—एक जोजन नां ६१ भाग कीजै। ते मांहिला ५६ भाग चंद्रमा रो विमाण। ४८ भाग सूर्य रो विमाण इत्यादिक ग्रन्थ करिकै प्रमाण जाणवो।

वा०—'एगसट्ठिभागं काऊण जोयण' मित्यादिनां ग्रन्थेन प्रमातव्याः। (वृ. प. ६०३)

३५. णवरं ऊपजवा नैं विषे रे, व्यंतर नैं चिउं लेशो रे।
इहां तेजुलेशी ऊपजै रे, ए उत्पत्ति समय विशेषो रे।।
३६. वलि उपजवा नैं सत्ता विषे रे, असन्नी तणो निखेदो रे।
शेष विस्तार कहिवो सहू रे, व्यंतर जेम संवेदो रे।।

३५. नवरं—एगा तेउलेस्सा।
'नवरं एगा तेउलेस्स' त्ति व्यन्तरेषु लेश्याचतुष्टय-मुक्तमेतेषु तु तेजोलेश्यैवैका वाच्या। (वृ. प. ६०३)
३६. उववज्जंतेसु पण्णत्तेसु य असण्णी नत्थि, सेसं तं चेव।
(श. १३।३१)

*लय: राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

३७. 'पन्नवण छट्ठे जान, जोतिषी वैमानीक नैं।
उद्वर्त्तन नैं स्थान, चवन शब्द कहिवूं कह्यो ।।
३८. इहां ए आख्यो नांहि, पिण पन्नवण थी जाणज्यो।
चवन जोतिषी मांहि, उद्वर्त्तन नैं स्थान छै ।।' [ज.स.]

३७. एवं जहा उववाओ ...जोइसिय-वेमाणियाणं चयणेणं अभिलावो कातव्वो। (पण्ण. ६।६९)

वैमानिक देवों की पृच्छा—

३९. *हे प्रभु! सौधर्म कल्प में रे, कितरा लक्ष विमाणो रे?
जिन कहै लक्ष बत्तीस छै रे, तेह आवासा जाणो रे ।।

३९. सोहम्मे णं भंते ! कप्पे केवतिया विमाणावाससय-सहस्सा पण्णत्ता ?
गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

४०. ते प्रभु ! जोजन संख्यात नां रे, कै असंख योजन विस्तारो रे?
जिन कहै योजन संखेज्ज नां रे, असंख जोजन पिण सारो रे ।।

४०. ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा ? असंखेज्ज-वित्थडा ?
गोयमा ! संखेज्जवित्थडा वि, असंखेज्जवित्थडा वि। (श. १३।३२)

४१. हे प्रभु ! सौधर्म कल्प में रे, लक्ष बतीस विमाणो रे।
संख योजन नां विमाण में रे, एक समय में जाणो रे ।।
४२. एक समय प्रभु ! केतला रे, सौधर्म सुर उपजंतो रे?
तेजूलेशी केता ऊपजै रे? इत्यादिक सुवृतंतो रे ।।
४३. इम जिम जोतिषी नैं विषे रे, कह्या आलावा तीनो रे।
तिम इहां तीन आलावगा रे, भणवा सखर सुचीनो रे ।।
४४. णवरं तीनूइं गमा विषे रे, भणवा छै संख्यातो रे।
अवधिज्ञानी अवधिदर्शनी रे, चवायवा विख्यातो रे ।।

४१. सोहम्मे णं भंते ! कप्पे बत्तीसाए विमाणावाससय-सहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु विमाणेसु एगसमएणं
४२. केवतिया सोहम्मा देवा उववज्जंति ? केवतिया तेउलेस्सा उववज्जंति ?
४३. एवं जहा जोइसियाणं तिण्णि गमगा तहेव तिण्णि गमगा भाणियव्वा।
४४. नवरं—तिसु वि संखेज्जा भाणियव्वा, ओहिनाणी ओहिदंसणी य चयावेयव्वा।

सोरठा

४५. सौधर्म थकी सुहाय, तीर्थंकरादिक ह्वै चवी।
ते संख्याता थाय, अवधिज्ञानी अवधिदर्शणी ।।
४६. संख्याता इज सोय, तीर्थंकरादिक ऊपजै।
अवधि युगल अवलोय, वृत्ति विषे इम आखियो ।।

४५,४६. सौधर्मसूत्रे 'ओहिनाणी' ततश्च्युता यतस्तीर्थ-करादयो भवन्त्यतोऽवधिज्ञानादयश्च्यावयितव्याः 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा चयंति' त्ति संख्यातानामेव तीर्थंकरादित्वेनोत्पादादिति। (वृ. प. ६०३)

४७. *शेष सर्व तिमहीज छै रे, ज्योतिषी जेम वदेवो रे।
ज्योतिषी थी न तीर्थंकरा रे,
तिणसूं अवधि युगल न चवेवो रे ।।
४८. असंख्यात विस्तार में रे, तीन गमा इमहीजो रे।
णवरं तीनूंइ गमा विषे रे, बोल असंख्याता कहीजो रे ।।
४९. अवधिज्ञानी अवधिदर्शणी रे, तेह चवै संख्यातो रे।
तीर्थंकरादिक ऊपजै रे, संख्याताज विख्यातो रे ।।
५०. शेष सर्व तिमहीज छै रे, सौधर्म बारता आखी रे।
तेम ईशाण कल्प विषे रे, आलावा षट साखी रे ।।

४७. सेसं तं चेव।
४८. असंखेज्जवित्थडेसु एवं चेव तिण्णि गमगा नवरं—तिसु वि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा।
४९. ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा चयंति।
५०. सेसं तं चेव। एवं जहा सोहम्मे वत्तव्वया भणिया तहा ईसाणे वि छ गमगा भाणियव्वा।

सोरठा

५१. संख्याता नां तीन, तीन असंख्याता तणां।
ए षट गमा सुचीन, सौधर्म तिम ईशाण नां ।।

५१. 'छ गमग' त्ति उत्पादादयस्त्रयः संख्यातविस्तृतानाश्रित्य अत एव च त्रयोऽसंख्यातविस्तृतानाश्रित्य एवं षड् गमाः। (वृ. प. ६०३)

---

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५२. *इमहिज सनतकुमार में रे, णवरं विशेष कहाई रे।
स्त्री वेदे नहिं ऊपजै रे, सत्ताए पिण नांही रे।।

५२. सणंकुमारे एवं चेव, नवरं- इत्थीवेयगा उववज्जंतेसु पण्णत्तेसु य न भण्णंति।

सोरठा

५३. सनत्कुमार थकीज, चवन तणां समया विषे।
इत्थी-वेद कहीज, उत्पत्ति सत्ताए नथी।।

५३. 'नवरं इत्थिवेयगे' त्यादि, स्त्रियः सनत्कुमारादिषु नोत्पद्यन्ते न च सन्ति उद्वृत्तौ तु स्युः।
(वृ. प. ६०३)

५४. *असन्नो तीनूंई गमे नथी रे, सनतकुमार नां देवो रे।
एकेंद्री में नहिं ऊपजै रे, शेष तिमज सहु भेवो रे।।

५४. असण्णी तिसु वि गमएसु न भण्णंति, सेसं तं चेव।

वा०—सर्व देवता थकी नीकली एकेंद्रिय बिना असन्नी हुवैज नथी। अनैं भवनपति, व्यंतर, जोतिषी, प्रथम-दूजा देवलोक नां देवता चवी असन्नी में ऊपजै ते एकेंद्रिय में हीज ऊपजै। तेह थकी नीकली असन्नी हुवै, इम कह्यो। सनतकुमारादिक थी चवी एकेंद्रिय पिण न हुवै ते भणी असन्नी न हुवै, इम कह्यूं।

वा०—'असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नइ' त्ति सनत्कुमारादिदेवानां सञ्ज्ञिभ्य एवोत्पादेन च्युतानां च सञ्ज्ञिष्वेव गमनेन गमत्रयेष्वसञ्ज्ञित्वस्याभावादिति।
(वृ. प. ६०३)

५५. एवं जाव सहस्सार नैं रे, तिर्यंच उत्पत्ति होयो रे।
तीनूं असंख गमा विषे रे, असंख्याता इम जोयो रे।।

५५. एवं जाव सहस्सारे,
'एवं जाव सहस्सारे' त्ति सहस्रारान्तेषु तिरश्चामुत्पादेनासंख्यातानां त्रिष्वपि गमेषु भावादिति।
(वृ० प० ६०३)

५६. कल्प विमान लेश्या विषे रे, नानापणो सलहीजो रे।
लेश्या विमान छै जूजुआ रे, शेष सर्व तिमहीजो रे।।

५६. नाणत्तं विमाणेसु लेस्सासु य, सेसं तं चेव।
(श० १३।३३)

सोरठा

५७. बत्तीस अट्ठावीस, आदि विमाने भेद जे।
ग्रंथे करी कहीस, लेश्या में पिण भेद इम।।

५७. 'बत्तीसअट्ठवीसे' त्यादिना ग्रन्थेन समवसेयं, लेश्यासु पुनरिदं— (वृ० प० ६०३)

५८. तेजू सुधर्म ईशाण, तृतीय तुर्य पंचम पदम।
आगल शुक्ल पिछाण, सूत्र विषे ए वारता।।

५८. वेमाणियाणं पुच्छा' गोयमा! तिण्णि, तं जहा— तेउलेस्सा पम्हलेस्सा सुक्कलेस्सा। (पण्ण० १७।५४)

५९. वृत्ति विषे इम वाय, सुधर्म नैं ईशाण में।
तेजू लेश्या पाय, तृतीय कल्प तेजू पदम।।

६०. पद्म तुर्य कल्पेह, पद्म शुक्ल पंचम कलप।
छट्ठे शुक्ल कहेह, परम शुक्ल महाशुक्र थी।।

५९,६०. तेऊ तेऊ तहा तेउ-पम्ह पम्हा य पम्हसुक्का य।
सुक्का य परमसुक्का सुक्काइविमाणवासीणं।।
(वृ० प० ६०३)

वा०—उत्तराध्ययने चउतीसमें अज्झयणे (३४।४१-४७) नारकी, तिर्यंच, मनुष्य नी लेश्या नीं स्थिति कही। हिवै भवनपति प्रमुख देवों नीं लेश्या स्थिति कहै छै—कृष्ण लेश्या नीं स्थिति जघन्य १० हजार वर्ष, उत्कृष्ट पल्य नों असंख्यातमो भाग।

वा० —दसवाससहस्साइं किण्हाए ठिई जहन्निया होइ।
पलियमसंखिज्जइमो उक्कोसा होइ किण्हाए।।
(उत्त० ३४।४८)

नील लेश्या नीं जघन्य स्थिति—उत्कृष्ट कृष्ण नीं स्थिति थकी एक समय अधिक अनैं उत्कृष्ट स्थिति पल्य नों असंख्यातमों भाग।

जा किण्हाए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं नीलाए पलियमसंखं तु उक्कोसा।।
(उत्त० ३४।४९)

कापोत नीं जघन्य स्थिति उत्कृष्ट नील नीं स्थिति ऊपर एक समय अधिक अनैं उत्कृष्ट स्थिति पल्य नों असंख्यातमों भाग।

जा नीलाए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं काऊए पलियमसंखं च उक्कोसा।।
(उत्त० ३४.५०)

तेजू लेश्या नीं जघन्य स्थिति दश हजार वर्ष नीं, उत्कृष्ट दोय सागर नैं पल्य नों असंख्यातमों भाग अधिक।

दसवाससहस्साइं तेऊए ठिई जहन्निया होई।
दुण्णुदही पलिओवम असंखभागं च उक्कोसा।।
(उत्त० ३४।५३)

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद्म लेश्या नीं जघन्य स्थिति तेजू नीं उत्कृष्ट स्थिति थी एक समय अधिक अनैं उत्कृष्ट दश सागर नैं मुहूर्त्त अधिक।

शुक्ल लेश्या नीं जघन्य स्थिति पद्म नीं उत्कृष्ट स्थिति थी एक समय अधिक अनै उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागर ऊपरैं मुहूर्त्त अधिक। ए उत्तराध्येन में कह्यं।

पन्नवणा पद चोथे देव स्थिति कही—तिहां भवनपति नीं जघन्य स्थिति दश हजार वर्ष अनै उत्कृष्ट साधिक एक सागर।

व्यंतर नीं स्थिति जघन्य दश हजार वर्ष अनै उत्कृष्ट एक पल्योपम।

ज्योतिषी नीं स्थिति जघन्य पल्य नों आठमों भाग अनै उत्कृष्ट एक पल्य नैं लाख वर्ष अधिक।

हिवै वैमानिक में प्रथम कल्पे जघन्य एक पल्य, उत्कृष्ट बे सागर।

द्वितीय कल्पे जघन्य एक पल्य जाझी, उत्कृष्ट बे सागर जाझी।

तृतीय कल्पे जघन्य बे सागर, उत्कृष्ट सात सागर।

चोथै कल्पे जघन्य दो सागर जाझी, उत्कृष्ट सात सागर जाझी।

पंचम कल्पे जघन्य सात सागर, उत्कृष्ट दस सागर।

इम अनुक्रमे सर्वार्थसिद्ध में अजघन्योत्कृष्ट तेतीस सागर स्थिति।

अनै उत्तराध्ययने तेजु नीं उत्कृष्ट स्थिति दोय सागर नै पल्य नों असंख्यातमों भाग अधिक कही अनैं दूजे देवलोके साधिक बे सागर नों आउखो छै तिहां तेजुलेश्या कही छै। तेहथी एक समय अधिक जघन्य पद्म नीं स्थिति जोइये, इण वचने तीजे देवलोके जघन्य बे सागर नीं स्थिति, तिहां तेजु सम्भवै। अनै सूत्रे पद्म कही, ते बहुलपणां नीं अपेक्षाय जणाय छै। एहवूं न्याय विचारी वृत्ति में तीजे देवलोके तेजु-लेश्या प्राचीन गाथा में कही अनैं ते गाथा में पंचमें देवलोके पद्म, शुक्ल कही अनै सूत्र नैं विषे पद्महीज कही। उत्तराध्ययने अज्झयण ३४ में पद्म नीं उत्कृष्टि स्थिति दश सागर मुहूर्त्त अधिक कही अनैं पंचमें देवलोके उत्कृष्ट दश सागर नीं स्थिति कही ते माटै पंचम कल्पे पद्म हुवै। अनैं वृत्ति में शुक्ल पिण गाथा में कही, तेहनीं विचारणा तेहिज जाणै। सूत्र सूं मिलै ते सत्य अनैं न मिलै ते विरुद्ध।

इहां शिष्य पूछै—स्वामीनाथ! पन्नवणा पद १७ उद्देशे ३ में कह्यो—नारकी, देवता जे लेश्या में ऊपजै, ते लेश्या में हीज नीकलै। अनै इहां उत्तराध्ययने (३४।४८,५३) कृष्ण नीं तथा तेजु नीं जघन्य स्थिति दश हजार वर्ष नीं कही। पूर्व उत्तर भव नां बे अंतर्मुहूर्त्त किम प्रमाण? तेहिज लेश्या हुवै तो ए बे अंतर मुहूर्त्त अधिक किम न कह्या? गुरु कहै—तिहां उत्तराध्ययने (३४।४७) एहवुं कह्यो छै—नारक, तिर्यंच, मनुष्य नीं लेश्या नीं स्थिति तो कही। हिवै भवनपत्यादिक देवलेश्या

जा तेऊए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं पम्हाए दस उ मुहुत्तहियाइं च उक्कोसा॥
(उत्त० ३४।५४)

जा पम्हाए ठिई खलु उक्कोसा सा उ समयमब्भहिया।
जहन्नेणं सुक्काए तेत्तीसमुहुत्तमब्भहिया॥
(उत्त० ३४।५५)

भवणवासीणं भंते! .... जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं सातिरेगं सागरोवमं। (पण्ण० ४।३१)

वाणमंतराणं भंते! .... जहण्णेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं पलिओवमं। (पण्ण० ४।१६५)

जोइसियाणं भंते! .... जहण्णेणं पलिओवमट्ठभागो, उक्कोसेणं पलिओवमं वाससतसहस्समब्भहियं।
(पण्ण० ४।१७१)

सोहम्मे णं भंते! .... जहण्णेणं पलिओवमं, उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं। (पण्ण० ४।२१३)

ईसाणे .... जहण्णेणं सातिरेगं पलिओवमं, उक्कोसेणं सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं। (पण्ण० ४।२२५)

सणंकुमारे .... जहण्णेणं दो सागरोवमाइं, उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं। (पण्ण० ४।२३७)

माहिंदे .... जहण्णेणं सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं, उक्कोसेणं सत्त साहियाइं सागरोवमाइं,।
(पण्ण० ४।२४०)

बंभलोए .... जहण्णेणं सत्त सागरोवमाइं, उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं। (पण्ण० ४।२४३)

.... सव्वट्ठसिद्धगदेवाणं भंते! .... अजहण्ण-मणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता।
(पण्ण० ४।२९७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नीं स्थिति कही छै—ते माटै तिहां कृष्ण तथा तेजु नीं जघन्य दश हजार वर्ष जे देवपणैं वर्त्तैं, तेहिज लेखवी। पिण पूर्व उत्तर भव नीं लेश्या न लेखवी।

तब वलि शिष्य पूछै— जो इम छै तो पद्म नीं उत्कृष्ट स्थिति दश सागर मुहूर्त्त अधिक किम कही? गुरु कहै—ए पूर्व उत्तर भव नां बे अंतर्मुहूर्त्त नो मुहूर्त्त काल देव सम्बन्धिनी लेश्या में हीज लेखव्यो छै।

तब शिष्य पूछै—भगवान! जे पूर्व उत्तर भव नैं विषे लेश्या आवै ते देव संबंधिनी किम लेखवियै? तेहनों उत्तर—अनुयोगद्वारे जाणग-शरीर-भविय-शरीर-व्यतिरक्त त्रिविध द्रव्य शंख कह्या—एकभविक द्रव्य शंख, बद्धायुष्क शंख और अभिमुखनामगोत्र शंख। तिहां नैगम, संग्रह और व्यवहार नय नैं मते तीनूं इहां शंख छै। ऋजुसूत्र नय नैं मते बद्धायुष्क अनैं अभिमुखनामगोत्र ए शंख वंछै। त्रिण शब्द नय नैं मते जे शंख में ऊपजवा सन्मुख थयो ते अंतर्मुहूर्त्त काल प्रमाण अभिमुखनामगोत्र शंख कहियै, तेहनैं वंछै। तिम मनुष्य अनैं तिर्यंच पंचमें देवलोके ऊपजतां छेहड़ै अंतर्मुहूर्त्त काल प्रमाण तेहनैं अभिमुखनामगोत्र देव कहियै। तेहनी पद्म लेश्या ते देवसम्बंधिनी लेश्या कहियै। इम पंचमां देवलोक थकी चवी मनुष्य तिर्यंच में ऊपजै तेहनैं अन्तर्मुहूर्त्त काल प्रमाण पद्म लेश्या हुवै। ते पिण देव लेश्या देवसम्बंधिनी जाणवी। इण न्याय पद्म नीं स्थिति दस सागर मुहूर्त्त अधिक कही।

पन्नवणा पद २३ में दूजे उद्देशे सू० ७८ में नारकी नां आउखा-कर्म नीं स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष नैं अंतर्मुहूर्त्त अधिक कही। ते अंतर्मुहूर्त्त थाकते पूर्व भव नैं विषे आउखो बांध्यो, ते लेखव्यो। तिम इहां पद्म लेश्या नीं स्थिति दस सागर मुहूर्त्त अधिक कही, ते पूर्व उत्तर भव नां बे अन्तर्मुहूर्त्त में पद्म लेश्या आवै ते लेखवी।

(ज० स०)

जाणगसरीर - भवियसरीर - वतिरित्ता दव्वसंखा तिविहा पण्णत्ता, तंजहा—एगभविए बद्धाउए अभिमुहनामगोत्ते य ....इयाणि को नओ कं संखं इच्छइ? नेगम-संगह-ववहारा तिविहं संखं इच्छंति, तं जहा—एगभवियं बद्धाउयं अभिमुहनामगोत्तं च। उज्जुसुओ दुविहं संखं इच्छइ, तं जहा—बद्धाउयं च अभिमुहनामगोत्तं च।
तिण्णि सद्दनया अभिमुहनामगोत्तं संखं इच्छंति।

(अणु० सू० ५६८)

६१. *आणत पाणत कल्प में रे, किता सैकडां विमाणो रे?
श्री जिन भाखै च्यार सौ रे, तेह आवासा जाणो रे।।

६२. ते प्रभु! संख योजन तणां रे, कै असंख योजन विस्तारो रे?
जिन कहै योजन सख नां रे, असंख योजन पिण सारो रे।।

६३. संख्याता विस्तार में रे, तीन गमा अवदातो रे।
जिम सहस्सार विषे कह्या रे, कहिवा तिम संख्यातो रे।।

६४. असंख विस्तार विषे वली रे, संख्याता उपजंतो रे।
संख्याताज चवै अछै रे, तसु न्याय सुणो धर खंतो रे।।

६१. आणय-पाणएसु णं भंते! कप्पेसु केवतिया विमाणावाससया पण्णत्ता?
गोयमा! चत्तारि विमाणावाससया पण्णत्ता।

६२. ते णं भंते! किं संखेज्जवित्थडा? असंखेज्जवित्थडा?
गोयमा! संखेज्जवित्थडा वि, असंखेज्जवित्थडा वि।

६३. एवं संखेज्जवित्थडेसु तिण्णि गमगा जहा सहस्सारे,

६४. असंखेज्जवित्थडेसु उववज्जंतेसु चयंतेसु य एवं चेव संखेज्जा भाणियव्वा,

सोरठा

६५. आणत प्रमुख रै मांय, सन्नी मनुष्यज ऊपजै।
चव्या सन्नी मनु थाय, तिण सूं संख्याता कह्या।।

६६. इण कारण थी जोय, समय करी संख्यात नों।
ऊपजवो तसु होय, चववो पिण संख्यात नों।।

६५,६६. आनतादिसूत्रे 'संखेज्जवित्थडेसु' इत्यादि, उत्पादेऽवस्थाने च्यवने च संख्यातविस्तृतत्वाद्-विमानानां संख्याता एव भवन्तीति भावः, असंख्यात-विस्तृतेषु पुनरुत्पादच्यवनयोः संख्याता एव, यतो गर्भजमनुष्येभ्य एवानतादिषूत्पद्यन्ते ते च संख्याता एव, तथाऽऽनतादिभ्यश्च्युता गर्भजमनुष्येष्वेवो-त्पद्यन्तेऽतः समयेन संख्यातानामेवोत्पादच्यवनसम्भवः,

(वृ० प० ६०३,६०४)

---

*लय: राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६७. *सत्ता आश्री तेहनें विषे रे, असंख्याता इम हुंतो रे।
इक सुर जीवित काल में रे, असंख देव उपजंतो रे।।

६७. पण्णत्तेसु असंखेज्जा,
अवस्थितिस्त्वसंख्यातानामपि स्यादसंख्यातजीवितत्वेनैकदैव जीवितकालेऽसंख्यातानामुत्पादादिति।
(वृ० प० ६०४)

६८. णवरं इतरो विशेष छै रे, नोइंदियोवउत्ता संगीतो रे।
द्रव्य इंद्रिय तेहनें नहीं रे, भावे मन सहीतो रे।।

६८. नवरं—नोइंदियोवउत्ता।

६९. एक समय थयो ऊपनां रे, अनंतरोववन्नगा तेहो रे।
क्षेत्र अवगाह्यां एक समय थयो रे, अनंतरोवगाढा जेहो रे।।

६९. अणंतरोववण्णगा अणंतरोवगाढगा

७०. आहार लियां नें एकसमय थयो रे, तेह अनंतर-आहारा रे।
पर्याय बांध्यां नें एक समय थयो रे,
अनंतर-पज्जत्त विचारा रे।।

७०. अणंतराहारगा अणंतरपज्जत्तगा य

७१. ए पांचू पद नें विषे रे, जघन्य एक बे तीनो रे।
उत्कृष्ट संख्याता ऊपजै रे, एक समय में सुचीनो रे।।

७१. एएसि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा पण्णत्ता;

सोरठा

७२. संख्याता इज सोय, सन्नी नर तिहां ऊपजै।
उत्पत्ति अवसर जोय, संख्याता इज पंच ए।।

७३. *शेष बोल पांचूं विना रे, सत्ता विषे असंख्याता रे।
ए आवासा असंख विस्तार नां रे,
तिण सूं असंख आख्याता रे।।

७३. सेसा असंखेज्जा भाणियव्वा।

७४. इमज आरण अच्चु नें विषे रे, आणत पाणत जेमो रे।
विमाण विषे नानापणो रे, ग्रैवेयक पिण एमो रे।।

७४. आरण-अच्चुएसु' एवं चेव जहा आणय-पाणएसु,
नाणत्तं विमाणेसु। एवं गेवेज्जगा वि।
(श० १३।३४)

अनुत्तर विमान के देवों की पृच्छा

७५. प्रभु ! अणुत्तर विमाण किता कह्या रे?
जिन कहै पंच उदारा रे।
स्यूं संख्यात योजन तणां रे, तथा असंख विस्तारा रे?

७५. कति णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पण्णत्ता?
गोयमा ! पंच अणुत्तरविमाणा पण्णत्ता।
ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा ? असंखेज्जवित्थडा ?

७६. जिन कहै संख विस्तार में रे, बिचलो एक विमाणो रे।
सर्वार्थसिद्ध नाम छै रे, योजन लक्ष प्रमाणो रे।।

७६. गोयमा ! संखेज्जवित्थडे य
'पंच अणुत्तरोववाइय' त्ति तत्र मध्यमं संख्यातविस्तृतं योजनलक्षप्रमाणत्वादिति। (वृ० प० ६०४)

७७. विजयादिक च्यारूं कह्या रे, असंख योजन विस्तारो रे।
सर्वार्थसिद्ध नों हिवै रे, गोयम प्रश्न उदारो रे।।

७७. असंखेज्जवित्थडा य। (श० १३।३५)

७८. एक समय किता ऊपजै रे, सर्वार्थसिद्ध में देवा रे?
शुक्ललेसी किता ऊपजै रे ? पूछा तिमज करेवा रे।।

७८. पंचसु णं भंते ! अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे विमाणे एगसमएणं केवतिया अणुत्तरोववाइया उववज्जंति ?
केवतिया सुक्कलेस्सा उववज्जंति—पुच्छा तहेव।

७९. जिन कहै संख विस्तार में रे, जघन्य एक बे तीनो रे।
संख्याता उत्कृष्ट थी रे, उपजै देव सुचीनो रे।।

७९. गोयमा ! पंचसु णं अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे अणुत्तरविमाणे एगसमएणं जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा अणुत्तरोववाइया उववज्जंति,

८०. जिम ग्रैवेयक विमाण में रे, संख विस्तार मझारो रे।
आख्यो तिम कहिवूं इहां रे, णवरं विशेष विचारो रे।।

८०. एवं जहा गेवेज्जविमाणेसु संखेज्जवित्थडेसु, नवरं—

---

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८१. कृष्णपक्षी अभवसिद्धिया रे, तीन अज्ञान रै मांही रे।
न ऊपजै नैं चवै नहीं रे, सत्ताए पिण नांही रे ।।
८२. अचरिमा पिण छोड़वा रे, ए पिण त्रिहुं गमे नांही रे।
जाव संख्याता चरम छै रे, शेष तिमज कहिवाई रे ।।

वा०—जेहनैं चरम—छेहलो तेहिज अनुत्तर देव नों भव छै ते चरम। तेहथी अनेरो ते अचरम। ते अचरम सर्वार्थसिद्ध में नथी। जिण कारण थकी चरमहीज मध्यम विमान नैं विषे ऊपजै।

८१. किण्हपक्खिया, अभवसिद्धिया, तिसु अण्णाणेसु एए न उववज्जंति, न चयंति, न वि पण्णत्तएसु भाणियव्वा
८२. अचरिमा वि खोडिज्जंति जाव संखेज्जा चरिमा पण्णत्ता, सेसं तं चेव।

वा०—'अचरिमावि खोडिज्जंति' त्ति येषां चरमोऽनुत्तरदेवभव. स एव ते चरमास्तदितरे त्वचरमास्ते च निषेधनीयाः, यतश्चरमा एव मध्यमे विमाने उत्पद्यन्त इति। (वृ० प० ६०४)

८३. असंख्याता विस्तार में रे, च्यार अनुत्तर जोयो रे।
ए पाछै बोल कह्या तिके रे, त्रिहुं गमे नहिं होयो रे ।।
८४. णवरं अचरमा पिण अछै रे, च्यार विमान में जाई रे।
सौधर्मादिक भव करै रे, कह्यो पनरम पद[1] मांही रे ।।

८३. असंखेज्जवित्थडेसु वि एए न भण्णंति,

८४. नवरं—अचरिमा अत्थि,
'नवरं अचरिमा अत्थि' त्ति यतो बाह्यविमानेषु पुनरुत्पद्यन्त इति (वृ० प० ६०४)

८५. शेष ग्रैवेयक विषे कह्यो रे, असंख योजन अवदातो रे।
आख्यो तिम कहिवो इहां रे, जाव अचरिम असंख्यातो रे ।।

८५. सेसं जहा गेवेज्जएसु असंखेज्जवित्थडेसु जाव असंखेज्जा अचरिमा पण्णत्ता। (श० १३।३६)

देवों में सम्यग्दृष्टि आदि की पृच्छा

८६. हे प्रभु ! असुरकुमार नां रे, चौसठ लक्ष आवासो रे।
संख योजन विस्तार में रे, असुर आवासे तासो रे ।।
८७. स्यूं असुर समदृष्टि ऊपजै रे, कै मिथ्यादृष्टि उपजंतो रे।
इम जिम रत्नप्रभा विषे रे, कह्यो तीन आलावा वृतंतो रे ।।

८६. चोयटठीए णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु
८७. किं सम्मद्दिट्ठी असुरकुमारा उववज्जंति ? मिच्छदिट्ठी असुरकुमारा उववज्जंति ? एवं जहा रयणप्पभाए तिण्णि आलावगा भणिया तहा भाणियव्वा।

८८. इम तीन आलावा असुर नां रे, समदृष्टि नुं धुर आलावो रे।
मिथ्यादृष्टि नों दूसरो रे, तीजो मिश्रदृष्टिनों भावो रे ।।
८९. असंख योजन विस्तार में रे, तीन गमा इम धारी रे।
जाव ग्रैवेयक विमाण में रे, इमहिज कहिवो विचारी रे ।।

८८. 'तिन्नि आलावग' त्ति सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिविषया इति। (वृ० प० ६०४)
८९. एवं असंखेज्जवित्थडेसु वि तिण्णि गमगा, एवं जाव गेवेज्जविमाणे,

सोरठा

९०. 'असुरादिक रै मांहि, तीन दृष्टि आखी सत्ता।
इम जाव ग्रैवेयक ताहि, तीन दृष्टि इण न्याय त्यां ।।
९१. पिण जीवाभिगमेह, ग्रैवेयक में दृष्टि बे[2]।
मिश्रदृष्टि वरजेह, दोय दृष्टि इण न्याय ह्वै।
९२. खंधक-चरित कथित्त, जीव तणां पजवा विषे।
ज्ञान दर्शन चारित्त, पज्जव अगुरुलघु गुरुलघु ।।
९३. च्यार शरीर सहीत, जीव तणां पर्याय छै।
ते गुरुलघु सहीत, एहवो न्याय तिहां वृत्तौ ।।

९२. (भ० श. २।४६)

९३. अनन्ता गुरुलघुपर्याया औदारिकादिशरीराण्याश्रित्य। (भ. वृ० प० ११९)

१. पण्ण० प. १५ सू० ११२
२. जयाचार्य ने जीवाभिगम सूत्र के आधार पर ग्रैवेयक देवों में दो दृष्टि बताई है। पर जैन विश्वभारती द्वारा मुद्रित जीवाजीवाभिगम में ग्रैवेयक देवों में तीनों दृष्टियां स्वीकार की हैं (३।११०५)। सम्भव है जयाचार्य को कोई ऐसा आदर्श उपलब्ध हुआ था, जिसमें दो दृष्टियों का उल्लेख रहा हो। उसके आधार पर कुछ थोकड़ों में भी ग्रैवेयक देवों में दो दृष्टियां मानी गई हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९४. सिद्धां नां पर्याय, आख्या तास विषे कह्यो।
अनंत ज्ञान पजवाय, जाव अनंता अगुरुलघु।।
९५. जाव शब्द रै मांहि, गुरुलघु पजवा आखिया।
ते सिद्धां में नांहि, पिण लाभै ते लीजियै।।
९६. संलग्न पाठ मझार, अथवा यावत शब्द में।
आख्या पाठ उदार, लाभै ते लीजै जिहां।।
९७. तेम इहां पिण ताय, मिश्रदृष्टि जाव शब्द में।
ग्रैवेयक में पाय, पिण लाभै ते लीजियै।।
९८. तथा समामिच्छादिष्ट, नव ग्रैवेयक नें विषे।
बहुलपणैं नहि इष्ट, जीवाभिगम सिद्धांत में।।
९९. किणहिक वेला थाय, जाव शब्द में ते गिणी।
हुवै इसो पिण न्याय, ते पिण जाणै केवली।।' [ज० स०]

१००. *इमज अनुत्तर विमाण में रे, णवरं तीन आलावे रे।
मिश्र मिथ्या भणवो नथो रे, शेषं तं चेव कहावे रे।।

१००. अणुत्तरविमाणेसु एवं चेव, नवरं—तिसु वि आलावएसु मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी य न भण्णंति, सेसं तं चेव। (श०१३/३७)

देवों में लेश्या की पृच्छा

१०१. हे भगवंत ! निश्चे करी रे, कृष्णलेशी अवलोई रे।
नील लेश्यावंत ते थई रे, जाव शुक्ल लेश्यावंत होई रे।।
१०२. कृष्णलेशी सुर नें विषे रे, उपजै छै ते जीवो रे ?
जिन कहै हंता गोयमा ! रे, इमहिज कहिवूं अतीवो रे।।
१०३. इम जिम नारक नें विषे रे, प्रथम उद्देशे आख्यो रे।
भणवो तिणहिज रीत सूं रे, ए द्रव्य लेश अभिलाख्यो रे।।
१०४. नील लेश्या विषे ऊपजै रे, जिम नरके उपजंतो रे।
नील लेस्या नें विषे कह्यो रे, तिम कहिवूं तज भ्रंतो रे।।
१०५. जिम नील लेश्या में ऊपजवूं कह्यो रे, एवं यावत जाणी रे।
पद्म लेस्या विषे ऊपजै रे, इमहिज कहिवूं पिछाणी रे।।
१०६. इमज शुक्ल लेस्या विषे रे, ऊपजै ते संपेखो रे।
णवरं इतरो विशेष छै रे, लेस स्थानक बहु देखो रे।।
१०७. विशुद्ध स्थानक जातो थको रे, विशुद्ध स्थानक में जायो रे।
शुक्ल लेश्या परिणमी करी रे, शुक्ललेशी सुर थायो रे।।
१०८. तिण अर्थे इम म्है कह्यो रे, यावत उपजै जेहो रे।
सेवं भंते ! गोयम कहै रे, सेवं भंते ! तेहो रे।।

१०१. से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता
१०२. कण्हलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति ?
हंता गोयमा !
१०३. एवं जहेव नेरइएसु पढमे उद्देसए तहेव भाणियव्वं।
१०४. नीललेस्साए वि जहेव नेरइयाणं,
१०५. जहा नीललेस्साए एवं जाव पम्हलेस्सेसु,
१०६. सुक्कलेस्सेसु एवं चेव, नवरं—लेस्सट्ठाणेसु
१०७. विसुज्झमाणेसु-विसुज्झमाणेसु सुक्कलेस्सं परिणमंति, परिणमित्ता सुक्कलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति।
१०८. से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति।
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श. १३/३९)

सोरठा

१०९. 'अन्य स्थानके अंक, नरकावासादिक जिके।
योजन संख असंख, संख्या देखी तिम कहुं।।
११०. षट पंच त्रिण बे लक्ष, नरकावासा रत्न थी।
पंकप्रभा लग वक्ष, संख्याता जोजन तणां।।
१११. साठ सहस्र महि धूम, वीस सहस्र तमा विषे।।
एक तमतमा भूम, संख्याता जोजन तणां।।

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११२. चतुरबीस न बीस, द्वादश अठ लक्ष क्रम।
रत्न थकी सुजगीस, असंख्यात जोजन तणां।।
११३. धूमा बे लख धार, सहस्र चालीसज ऊपरै।
छट्ठी असी हजार, च्यार तमतमा असंख जो०[1]।।
११४. छट्ठी नारक मांहि, पंच ऊण इक लक्ष है।
संख असंख में ताहि, ऊणा ते ज्ञानी वदै।।
११५. आख्या नरकावास, जोजन संख असंख में।
हिवै असुरादि विमास, दक्षिण दिश नां धुर कहूं।।
११६. सप्तबीस लख सार, बीस सहस्र फुन संख जो।
षट लख असी हजार, असंख्यात दक्षिण असुर।।
११७. पंच तीस लक्ष धार, बीस सहस्र संख्यात जो।
अठ लख असी हजार, असंखेज दक्षिण अहि[2]।।
११८. तीस लक्ष सुविचार, सहस्र चालीस संखेज जो।
सप्त लख साठ हजार, असंख्यात जोजन सुवन्न।।
११९. लख बत्तीसं ख्यात, अष्ट लख जोजन असंख।
विद्युत अग्नि विख्यात, द्वीप उदधि नैं फुन दिशा।।
१२०. लख चालीस विचार, संखेज जोजन तणां।
दश लख अधिक उदार, असंख्यात दक्षिण पवन।।
१२१. लख बत्तीस सुजोय, संख्याता जोजन तणां।
अष्ट लख अवलोय, असंखेज दक्षिण थणी[3]।।
१२२. दक्षिण दिश नां देख, भवनपति दश ए कह्या।
उत्तर नां सुविशेख, कहियै छै ते सांभलो।।
१२३. च्यार बीस लख सार, संख्यात जोजन तणां।
वर षट लक्ष उदार, असंखेज जोजन वलि।।
१२४. लख बतीस उदार, संख्यात जोजन तणां।
असंख जोजन नां सार, अष्ट लख उत्तर अहि।।
१२५. सप्त बीस लख सार, बीस सहस्र संख्यात जो।
षट लख असी हजार, असंखेज उत्तर सुवन्न।।
१२६. अष्टबीस लख ख्यात, असी सहस्र संख्यात जो।
बीस सहस्र लख सात, असंखेज विद्युतादि पंच।।
१२७. लख बत्तीस विचार, असी सहस्र संख्यात जो।
नव लख बीस हजार, असंखेज जोजन पवन।।
१२८. अठबीस लक्ष उदार, असी सहस्र संखेज जो।
सप्त लख बीस हजार, असंख्यात जोजन थणिय।।
१२९. उत्तर दिश नां एह, भवनपति नां भवन जे।
आगल कहियै एह, विमाण वैमानिक तणां।।
१३०. पवर लख पणबीस, साठ सहस्र संख्यात जो।
षट लख सहस्र चालीस, असंखेज जो धुर कलप।।
१३१. लख बावीस उदार, सहस्र चालीस संखेज जो।
पंच लख साठ हजार, असंख्यात ईसाण में।।

---

१. योजन २. नागकुमार ३. स्तनितकुमार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३२. जोजन संख जगीस, नव लख साठ हजार ही।
बे लाख सहस्र चालीस, असंख्यात जो तृतीय में।।
१३३. सखर लाख षट सार, सहस्र चालीस संखेज जो।
इक लख साठ हजार, असंख्यात माहिंद में।।
१३४. त्रि लख बीस हजार, संखेज जोजन तणां।
असी सहस्र अवधार, असंख्यात जो० ब्रह्म में।।
१३५. सखर सहस्र चालीस, जोजन संख्याते कह्या।
वर दश सहस्र जगीस, असंख्यात जो० लंतके।।
१३६. वर बत्तीस हजार, विमान जोजन संख नां।
अष्ट सहस्र अवधार, असंखेज महाशुक्र में।।
१३७. च्यार सहस्र सुखकार, फुन अठ सय संखेज जो०।
द्वादश सय अवधार, असंख्यात जो० अष्टमे।।
१३८. त्रिण सय बीस संख्यात, असी विमान असंख जो०।
आणत पाणते ख्यात, उभय विषे ए च्यार सौ।।
१३९. आरण अच्युत मांय, बे सय चालीस संख जो।
साठ विमान सुहाय, असंख्यात जोजन तणां।।
१४०. ए सगलो अवदात, सूत्र विषे तो छे नथी।
अन्य स्थान थी ख्यात, प्रभू सिकारै सत्य ते।।' (ज० स०)

१४१. *शत तेरम उद्देशे दूसरे रे, दोयसौ पिचंतरमीं ढालो रे।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' मंगलमालो रे।।

त्रयोदशशते द्वितीयोद्देशकार्थः ।।१३।२।।

ढाल २७६

२४ दण्डकों में आहार यावत् परिचारणा

दूहा

१. द्वितीय उद्देशे देव नीं, कही वारता तंत।
प्राये बहुलपणैं हुवै, सुर परिचारणवंत।।
२. ते माटै परिचारणा, तेह निरूपण अर्थ।
कहियै तृतीय उद्देस हिव, वारू वयण तदर्थ।।
३. हे भगवंत! जे नारकी, उत्पत्ति क्षेत्रज पाय।
प्रथम समय जे आहार लै, पाछै तनु निपजाय।।

४. पन्नवण पद चउतीस में, परिचारण अभिधान।
कहिवो इहां समस्त ही, ते इहविध पहिछाण।।

१-२ अनन्तरोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, देवाश्च प्रायः परिचारणावन्तः इति परिचारणानिरूपणार्थं तृतीयोद्देशकमाह— (वृ० प० ६०४)

३. नेरइया णं भंते! अणंतराहारा, ततो निव्वत्तणया,
'अणंतराहार' त्ति उपपातक्षेत्रप्राप्तिसमय एवाहारयन्तीत्यर्थः 'तओ निव्वत्तणय' त्ति ततः शरीरनिर्वृत्तिः, (वृ० प० ६०४)

४. एवं परियारणापदं निरवसेसं भाणियव्वं।
(श० १३/४०)
'एवं परियारणे' त्यादि, परिचारणापदं—प्रज्ञापनायां चतुस्त्रिंशत्तमं, तच्चैवम् (वृ० प० ६०४)

---

*लय : राज पामियो रे करकंडु कंचनपुर तणो रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. नरक समय धुर आहार लै, पाछै तनु निपजाय।
अंग प्रत्यंग करी पछै, रोम आहार लै ताय।।

५. तओ परियाइयणया
'तओ परियाइयणय' त्ति ततः पर्यापानम्—अंगप्रत्यंगैः समन्तादापानमित्यर्थः (वृ० प० ६०४)

६. पुद्गल ग्रहण किया तिकै, पछै परिणमावंत।
इंद्रिय प्रमुखपणैं तिहां, परिणत ताम करंत।।

६. तओ परिणामणया
'तओ परिणामणय' त्ति तत आपीतस्य—उपात्तस्य परिणतिरिन्द्रियादिविभागेन (वृ० प० ६०४)

७. पछै करै परिचारणा, शब्दादिक नीं जाण।
विषय प्रतै ते अनुभवै, यथाजोग पहिछाण।।

७. तओ परियारणया
'तओ परियारणय' त्ति ततः शब्दादिविषयोपभोग इत्यर्थः (वृ० प० ६०४)

८. तठा पछै वैक्रिय करै ? जिन कहै गोयम ! हंत।
प्रथम आहार यावत पछै, वैक्रिय रूप करंत।।

८. तओ पच्छा विउव्वणया ? हंता गोयमा इत्यादि। (वृ० प० ६०४)

९. असुर आहार लै धुर समय, पाछै तनु निपजाय।
अंग प्रत्यंग करी पछै, रोम आहार लै ताय।।
१०. पछै इंद्रियादिकपणैं, परिणमावै ते धार।
पाछै करै विकुर्वणा, पछै करी परिचार ?
११. जिन कहै हंता गोयमा ! उत्पत्ति समये आहार।
जाव करै परिचारणा, इम सहु देव विचार।।

९-११ असुरकुमारा णं भंते ! अणंतराहारा तओ णिव्वत्तणया तओ परियाइयणया तओ परिणामतया तओ विउव्वणया तओ पच्छा परियारणया ? हंता गोयमा ! असुरकुमारा अणंतराहारा तओ णिव्वत्तणया जाव तओ पच्छा परियारणया। एवं जाव थणियकुमारा। (पण्ण० ३४/२)

१२. वाऊ वरजी नैं चिउं, त्रिहुं विकलेन्द्रिय ताहि।
कहिवूं नारक जेम ए, पिण निश्चै वैक्रिय नांहि।।
१३. वाऊ तिरि पंचेंद्रिय, सन्नी मनुष्य कहिवाय।
कहिवूं नारक जेम ए, वैक्रिय छै जे मांय।।

१२,१३. पुढविक्काइया णं भंते ! अणंतराहारा तओ णिव्वत्तणया तओ परियाइयणया तओ परिणामणया तओ परियारणया तओ विउव्वणया ? हंता गोयमा ! तं चेव जाव परियारणया, णो चेव णं विउव्वणया। एवं जाव चउरिंदिया, णवरं—वाउक्काइया पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य जहा णेरइया। (पण्ण० ३४/३)

१४. वाणव्यंतर नैं जोतिषी, वलि वैमानिक देव।
कहिवा असुर तणी परै, ए पन्नवण थी भेव।।

१४. वाणमंतर-जोतिसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा। (पण्ण० ३४/४)

१५. इत्यादिक त्यां आखियो, समस्त कहिवो जेह।
सेवं भंते ! सत्य वच, तृतीय उद्देशक एह।।

१५. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १३/४१)

त्रयोदशशते तृतीयोद्देशकार्थः ।।१३।३।।

१६. पूर्वे कही परिचारणा, नरक प्रमुख नैं होय।
ते माटै नरकादि नां, अर्थ कहूं हिव सोय।।

१६. अनन्तरोद्देशके परिचारणोक्ता, सा च नारकादीनां भवतीति नारकाद्यर्थप्रतिपादनार्थं चतुर्थोद्देशकमाह— (वृ० प० ६०४)

नरक और नैरयिक-अल्पमहत् पद

१७. कही पृथ्वी प्रभु ! केतली, श्री जिन भाखै सात।
रत्नप्रभा यावत वली, अधो सप्तमी ख्यात[1]।।

१७. कति णं भंते। पुढवीओ पण्णत्ताओ ?
गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा। (श० १३/४२)

---

१. इस प्रसंग में कुछ प्रतियों में निम्नलिखित दो द्वारगाथाएं उपलब्ध हैं—
१. नेरइय फास पणिही, निरयंते चेव लोयमज्झे य।
दिसिविदिसाण य पवहा, पवत्तणं अत्थिकाएहिं।।
२. अत्थी पएसफुसणा, ओगाहणया य जीवमोगाढा।
अत्थि पएसनिसीयण बहुस्समे लोगसंठाणे।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*गोयम प्रश्न वीर नां उत्तर, सुणियै भविक सुजाण ।। (ध्रुपदं)

१८. हे भगवंत ! सातमीं पृथ्वी, सर्वोत्कृष्ट पिछाण ।
महामोटा नरकावासा छै, यावत अपइट्ठाण ।।

१८. अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पच अणुत्तरा महति-महालया जाव (सं. पा.) अपइट्ठाणे ।

१९. छट्ठी नां नरकावासा थी, नरक सातमीं मांय ।
नरकावासा लांबपणें करि, अति मोटा कहिवाय ।।

१९. ते णं नरगा छट्ठीए तमाए पुढवीए नरएहिंतो महत्तरा चेव,
'महंततरा चेव' त्ति आयामतः (वृ० प० ६०५)

२०. महाविच्छिन्नतरा निश्चै फुन, अति मोटो विस्तार ।
चोड़पणे करिनें ए कहिवा, द्वितीय बोल ए धार ।।

२०. महाविच्छिण्णतरा चेव,
'विच्छिन्नतरा चेव' त्ति विष्कम्भतः (वृ० प० ६०५)

२१. महाअवकाशतरा फुन निश्चै, वंछित द्रव्य बहु जाण ।
तेहनें रहिवा योग्य क्षेत्र छै, ते अवकाश पिछाण ।।

२२. महा अवकाशज जेह विषे ते, महाअवकाश कहाय ।
अतिशय कर महा अवकाशा ते, महाअवकाशतराय ।।

२१,२२ महोगासतरा चेव,
'महावासतरा चेव' त्ति अवकाशो—बहूनां विवक्षित-द्रव्याणामवस्थानयोग्यं क्षेत्रं महानवकाशो येषु ते महावकाशाः अतिशयेन महावकाशा महावकाशतराः,
(वृ० प० ६०५)

सोरठा

२३. फुन ते महा अवकाश, महाजन संकीर्ण पिण हुवै ।
इण कारण थी जास, पद चोथो कहियै हिवै ।।

२३. ते च महाजनसंकीर्णा अपि भवन्तीत्यत उच्यते
(वृ० प० ६०५)

२४. *महापतिरिक्कतरा फुन, बहु जन रहित ही स्थान ।
इतलै स्थानक शुन्य बहु, त्यां नहिं बहु नारक जान ।।

२४. महापइरिक्कतरा चेव,
'महापइरिक्कतरा चेव' त्ति महत्प्रतिरिक्तं—विजन-मतिशयेन येषु ते तथा, (वृ० प० ६०५)

२५. जिम छट्ठी में घणां जीव नैं, हुवै प्रवेश विशेष ।
एम सातमीं नारक मांहै, नहिं बहु जीव प्रवेश ।।

२५. नो तहा महप्पवेसणतरा चेव,
'नो तहा महापवेसणतरा चेव' त्ति 'नो' नैव 'तथा' तेन प्रकारेण यथा षष्ठपृथिवीनरका अतिशयेन महत्-प्रवेशनं—गत्यन्तरान्नरकगतौ जीवानां प्रवेशो येषु ते तथा, (वृ० प० ६०५)

सोरठा

२६. तमा अपेक्षाय चीन, सप्तम पृथ्वी नैं विषे ।
असंख्यात गुण हीन, प्रवेश नारक नों तिहां ।।

२६. षष्ठपृथिव्यपेक्षयाऽसंख्यगुणहीनत्वात्तन्नारकाणामिति,
(वृ० प० ६०५)

२७. *वलि छट्ठी थी अति आकीर्ण, व्याप्त नारक करि नांहि ।
कार्य करिवै नहिं अति आकुल, अति संकीर्ण न ताहि ।।

२७. आइण्णतरा चेव, आउलतरा चेव, अणोमाणतरा चेव ।
'नो आइन्नतरा चेव, त्ति नात्यन्तमाकीर्णाः—संकीर्णा नारकैः 'नो आउलतरा चेव, त्ति इतिकर्त्त-व्यतया ये आकुला नारकलोकास्तेषामतिशयेन योगादाकुलतरास्ततो नोशब्दयोगः, किमुक्तं भवति ? —'अणोमाणतरा चेव' त्ति अतिशयेनासंकीर्णा इत्यर्थः
(वृ० प० ६०५)

वा०—नो तहा महाप्पवेसणतरा चेव आइण्णतरा चेव, आउलतरा चेव, अणोमाणतरा चेव । इहां प्रथम पद नैं विषे नो शब्द ते दूजा-तिजा पद विषे पिण जोड़वो । किहांयक वली चौथा पद नैं स्थानके ए इम दीसै छै—अणोयणतरा चेव—तेहनैं विषे अनोदनतरा व्याकुल जन नां अभाव थी अतिशय करिकै परस्पर नोदन-वर्जिता इत्यर्थः ।

वा.—नोशब्द उत्तरपदद्वयेऽपि सम्बन्धनीयः, यत एव नो महाप्रवेशनतरा अत एव '''क्वचित्पुनरिदमेवं दृश्यते—'अणोयणतरा चेव'—त्ति तत्र चानोदनतराः व्याकुल-जनाभावादतिशयेन परस्परं नोदनवर्जिता इत्यर्थः
(वृ० प० ६०५)

२८. नरक सातमीं ना चिउं आख्या, एहवा नरकावास ।
छठी पृथ्वी थकीज मोटा, वर्णन पूर्व प्रकास ।।

*लय : उस रघुपति के धर्म सुराजे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. तेह सातमीं विषे नारकी, नारक तम थी बाध।
महाकर्म तेहनै अति कहियै, आयुवेदनी आद।।

३०. महाक्रिया कायिकादिक नीं, नरक तणां भव मांय।
काया मोटी छै तिण कारण, महाक्रिया कहिवाय।।

३१. महाआश्रव ते पूर्व भव में, महाआरंभी हुंत।
तिण कारण ते नारकी भव में, महावेदनावंत।।

३२. ए चिउं पद विपरीतपणैं हिव, नो शब्द च्यारूंइ मांय।
नहिं तसु अल्प-कर्म अल्प-क्रिया, छट्ठी नीं अपेक्षाय।।

३३. वलि छट्ठी नारक नीं पेक्षा, आश्रव अल्पज नांहि।
छट्ठी नीं पर नहिं अल्प वेदन, नरक सातमीं मांहि।।

३४. अवधि आदि ऋद्धि थोड़ी जेहनैं, अल्प दीप्ति छै ताहि।
अल्प शब्द ए अभाववाची, एम कह्यूं वृत्ति मांहि।।

३५. नहि महाऋद्धि अवध्यादिक नीं, तमा नारक जिम तेह।
तेहनीं पर महादीप्तवंत नहीं, नरक तमतमा जेह।।

३६. छठी तमा पृथ्वी नां आख्या, पंच ऊण पहिछाण।
एक लक्ष छै नरकावासा, हिव तसु वर्णन जाण।।

३७. ते नरकावासा छट्ठी नां, नरक सातमी जेह।
तेह थकी नहिं कहियै मोटा, लांबा चउड़पणेह।।

३८. नहिं महा अवकाशांतर तेहनों, नहिं बहु जन करि रहित।
नरक सातमीं थकी तमा ते, घणा नेरइया सहित।।

३९. अतिही घणो प्रवेश जिहां छै, अति आकीर्ण कहाय।
अतिही आकुल अति संकीर्ण, छठी नरक रै मांय।।

४०. नरक सातमीं नां नारक थी, छट्ठी नां जे जाण।
अल्पकर्मतर थोड़ा कर्मज, थोड़ी क्रिया पिछाण।।

४१. आश्रव थोडो तेहनैं कहियै, अल्प वेदनावंत।
नरक सातमीं थी छट्ठी में, कहियै स्यूं भगवंत ?

४२. नरक सातमीं तणी अपेक्षा, नहिं महा अतिही कर्म।
नहिं महाक्रिया नहीं महाआश्रव, नहिं महावेदन धर्म।।

४३. अवध्यादिक करि महर्द्धिक अतिही, महाद्युति कांति कहाय।
नहीं सप्तमीं जिसा अल्प ऋद्धि, अल्प दीप्ति पिण नांय।।

४४. तमप्रभा छठी नां नरकावासा, पंचम धूमप्रभा नां पिछाण।
नरकावासा थी अतिही मोटा, लांबपणै ए जाण।।

४५. चोड़पणै पिण अतिही मोटा, अतिही बहु अवकाश।
अतिही महाप्रतिरिक्त ते जन विण, शून्य क्षेत्र बहु तास।।

४६. महाप्रवेश पंचमी मांहै, तिम नहिं छट्ठी मांहि।
नहिं अत्यन्त आकीर्ण नायक, अति आकुल पिण नांहि।।

२९. तेसु णं नरएसु नेरइया छट्ठीए तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो महाकम्मतरा चेव,
'महाकम्मतर' त्ति आयुष्कवेदनीयादिकर्म्मणां महत्त्वात्
(वृ० प० ६०५)

३०. महाकिरियतरा चेव,
'महाकिरियतर' त्ति कायिक्यादिक्रियाणां महत्त्वात् तत्काले कायमहत्त्वात्
(वृ० प० ६०५)

३१. महासवतरा चेव, महावेदणतरा चेव,
पूर्वकाले च महारम्भादित्वाद् अत एव महाश्रवतरा इति
(वृ० प० ६०५)

३२. नो तहा अप्पकम्मतरा चेव, अप्पकिरियतरा चेव,
नो शब्दश्चेह प्रत्येकं सम्बन्धनीयः पदचतुष्टय इति,
(वृ० प० ६०५)

३३. अप्पासवतरा चेव, अप्पवेदणतरा चेव,

३४. अप्पिड्ढियतरा चेव, अप्पजुतियतरा चेव,
'अप्पड्ढियतर' त्ति अवध्यादिऋद्धेरल्पत्वात् 'अप्पज्जुइयतर' त्ति दीप्तेरभावात्, (वृ० प० ६०५,६०६)

३५. नो तहा महिड्ढियतरा चेव, महज्जुतियतरा चेव।

३६. छट्ठीए णं तमाए पुढवीए एगे पंचूणे निरयावास-सयसहस्से पण्णत्ते।

३७. ते णं नरगा अहेसत्तमाए पुढवीए नरएहिंतो नो तहा महत्तरा चेव, महावित्थिण्णतरा चेव,

३८. महोगासतरा चेव, महापइरिक्कतरा चेव,

३९. महप्पवेसणतरा चेव, आइण्णतरा चेव, आउलतरा चेव, अणोमाणतरा चेव।

४०. तेसु णं नरएसु नेरइया अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो अप्पकम्मतरा चेव, अप्पकिरियतरा चेव,

४१. अप्पासवतरा चेव, अप्पवेदणतरा चेव;

४२. नो तहा महाकम्मतरा चेव, महाकिरियतरा चेव, महासवतरा चेव, महावेदणतरा चेव,

४३. महिड्ढियतरा चेव, महज्जुइयतरा चेव; नो 'तहा अप्पिड्ढियतरा' चेव, अप्पजुइयतरा चेव,

४४. छट्ठीए णं तमाए पुढवीए नरगा पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए नरएहिंतो महत्तरा चेव,

४५. महाविच्छिण्णतरा चेव, महोगासतरा चेव, महापइरिक्कतरा चेव;

४६. नो तहा महप्पवेसणतरा चेव, आइण्णतरा चेव, आउलतरा चेव,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७. नहिं अत्यंत संकीर्ण सांकड़ी, नरक पंचमी जेम।
छट्ठी पृथ्वी तमा तणी जे, वक्तव्यता सहु तेम ।।
४८. धूमप्रभा थी छट्ठी नरके, महाकर्मी कहिवाय।
महाक्रिया नैं वलि महाआश्रव, महावेदन अधिकाय ।।

४९. धूम प्रभा नां नारक नीं परि, अल्पकर्म नहिं तास।
नहिं तसु अल्पक्रिया आश्रव नहिं, अल्प वेदना जास ।।
५०. नरक पंचमी तणी अपेक्षा, अल्पऋद्धि अवध्याद।
अल्प दीप्ति द्युति कांति कहीजै, तमा विषे ए लाध ।।
५१. धूमप्रभा नां नारक नीं परि, नहि महा अति ऋद्धिवान।
नहिं महादीप्ति कांति पिण तेहनीं, छट्ठी विषे पिछाण ।।
५२. धूम्रप्रभा में नरकावासा, तीन लाख कहिवाय।
पंकप्रभा थी छै अति मोटा, लांबा चोड़ा ताय ।।
५३. इम जिम तमा विषेज कह्यो जिम, इम सातूंई जाण।
परस्परे कहिवूं विधि पूर्वक, जाव रत्नप्रभ आण ।।
५४. यावत सक्करप्रभा नारकि जिम, अल्पऋद्धितर नांहि।
अतिही अल्प कांति द्युति नहिं तसु, रत्नप्रभा रै मांहि ।।
५५. प्रथम द्वार नारक नों आख्यो, हिव कहूं स्पर्श द्वार।
गोयम वीर तणां प्रश्नोत्तर, सांभलजो धर प्यार ।।

नैरयिक स्पर्शानुभव पद

५६. रत्नप्रभा नां नारक भगवंत ! पृथ्वी तणो पिछाण।
किसो फर्श भोगवता विचरै ? उत्तर दै जगभाण ।।
५७. अनिष्ट यावत अतिही मन में, अणगमतो है फास।
एवं यावत अधोसप्तमो, पृथ्वी फर्श विमास ।।
५८. एवं आऊ जाव वणस्सइ-फास अनुभव तास।
वृत्तिकार इहां न्याय बखाण्यो, सुणजो आण हुलास ।।

सोरठा

५९. इहां जाव शब्द रै मांय, तेऊ वाऊकाय नों।
फर्श सूत्र कहिवाय, उत्तर आगल आखियै ।।

६०. तिहां कोई कहै एम, सातूंई पृथ्वी विषे।
तेऊ वर्जी तेम, पृथिव्यादिक नो फर्श ह्वै ।।
६१. तेऊ वर्जी तेह, पृथिव्यादिक नो फर्श जे।
सातूं मही विषेह, विद्यमान छै ते भणी ।।
६२. बादर तेऊकाय, समयक्षेत्र में ईज छै।
सूक्षम तेऊ ताय, नरक विषे सद्भाव पिण ।।
६३. पिण जे सूक्षम तेज, फर्शेन्द्रिय अविषय थी।
तसु फर्श केम कहेज, किणही तरक करी इसी ।।
६४. तेऊकाय सरीस, परमाधार्मिक विकुर्वी।
अग्नि सरीखी दीस, वस्तु तणोज स्पर्श छै ।।

४७. अणोमाणतरा चेव।

४८. तेसु णं नरएसु नेरइया पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए नेरइएहिंतो महाकम्मतरा चेव, महाकिरियतरा चेव, महासवतरा चेव, महावेदणतरा चेव,
४९. नो तहा अप्पकम्मतरा चेव, अप्पकिरियतरा चेव, अप्पासवतरा चेव, अप्पवेदणतरा चेव,
५०. अप्पिड्ढियतरा चेव, अप्पजुतियतरा चेव;

५१. नो तहा महड्ढियतरा चेव, महज्जुतियतरा चेव।

५२. पंचमाए णं धूमप्पभाए पुढवीए तिण्णि निरयावास-सयसहस्सा पण्णत्ता।
५३. एवं जहा छट्ठीए भणिया एवं सत्त वि पुढवीओ परोप्परं भण्णंति जाव रयणप्पभंति
५४. जाव नो तहा महड्ढियतरा चेव, अप्पजुतियतरा चेव। (श. १३/४३)

५६. रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं पुढविफासं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?
५७. गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं। एवं जाव अहेसत्तमपुढविनेरइया।
५८. एवं आउफासं, एवं जाव वणस्सइफासं। (श. १३।४४)

५९. 'एवं जाव वणस्सइफासं' त्ति इह यावत्करणात्तेजस्कायिकस्पर्शसूत्रं वायुकायिकस्पर्शसूत्रं च सूचितं। (वृ. प. ६०६)
६०,६१. तत्र च कश्चिदाह—ननु सप्तस्वपि पृथिवीषु तेजस्कायिकवर्जपृथिवीकायिकादिस्पर्शो नारकाणां युक्तः येषां तासु विद्यमानत्वात्। (वृ. प. ६०६)

६२,६३. बादरतेजसां तु समयक्षेत्र एव सद्भावात् सूक्ष्म-तेजसां पुनस्तत्र सद्भावेऽपि स्पर्शनेन्द्रियाविषयत्वादिति। (वृ. प. ६०७)

६४,६५. अत्रोच्यते, इह तेजस्कायिकस्येव परमाधार्मिक-विनिर्मितज्वलनसदृशवस्तुनः स्पर्शः तेजस्कायिकस्पर्श-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५. तिण कारण इम ख्यात, स्पर्श तेऊकाय नों।
पिण तेऊ साक्षात, नहि छै बादर तेज ए।।
६६. तथा पूर्व भव पेख, तेऊ नो पर्याय जिण।
भोगवियो सुविशेख, ते एहवो पृथ्वी प्रमुख।।
६७. तास फर्श अपेक्षाय, स्पर्श तेऊकाय नों।
नारक नैं कहिवाय, वृत्ति विषे ए वारता।।

इति व्याख्येयं न तु साक्षात्तेजस्कायिकस्यैव असंभवात् । (वृ. प. ६०७)
६६,६७. अथवा भवांतरानुभूततेजस्कायिकपर्यायपृथिवीकायिकादिजीवस्पर्शापेक्षयेदं व्याख्येयमिति । (वृ. प. ६०७)

नरक-बाहल्यक्षुद्रत्व पद

६८. *आ प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी ते, द्वितीय पृथ्वी अपेक्षाय।
जाडपणें करि मोटी तेहनैं, सर्व थकी कहिवाय।।
६९. इक लक्ष असो सहस्र जोजन, जाडी धुर पृथ्वी दीस।
सक्करप्रभा जाडी इक लक्ष रु, योजन सहस्र बतीस।।

६८. इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी दोच्चं सक्करप्पभं पुढविं पणिहाय सव्वमहंतिया बाहल्लेणं
६९. 'सव्वमहंतिय' त्ति सर्वथा महती अशीतिसहस्राधिकयोजनलक्षप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभाबाहल्यस्य शर्कराप्रभाबाहल्यस्य च द्वात्रिंशत्सहस्राधिकयोजनलक्षमानत्वात् । (वृ. प. ६०७)

७०. रत्नप्रभा सर्वथा नान्ही, चिउं दिशि अंते एह।
पूर्व पच्छिम दक्षिण उत्तर, एह विभाग विषेह।।
७१. लांबपणैं नै चोड़पणैं कर, रज्जू प्रमाण थकीज।
रत्नप्रभा ए सक्करप्रभा थी, नान्ही एम कहीज।।

७०. सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु । (श. १३।४५)
'सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु' त्ति सर्वथा लघ्वी 'सर्वान्तेषु' पूर्वापरदक्षिणोत्तरविभागेषु । (वृ. प. ६०७)
७१. आयामविष्कम्भाभ्यां रज्जुप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभायास्ततो महत्तरत्वात् शर्कराप्रभायाः । (वृ० प० ६०७)

सोरठा

७२. एक अढाइ जाण, च्यार पंच षट साढषट।
सप्त रज्जु क्रम माण, अन्य स्थानके उक्त ए।।
७३. *इम जिम जीवाभिगमे[1] आख्यो, बीजे नरक उद्देस।
तेम इहां पिण कहिवो सगलो, वारू रीत विशेष।।

नरक परिसामन्त पद

७४. ए प्रभु ! रत्नप्रभा पृथ्वी नां, नरकावासा पास।
पृथ्वी प्रमुख जाव वणस्सइ, बहुकर्म बहुदुख तास।।
७५. इम जिम जीवाभिगम संबंधी, नरक उद्देशे जाण।
आख्यो तेम इहां कहिवूं छै, जाव सप्तमी आण।।

७४. इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए निरयपरिसामंतेसु जे पुढविक्काइया जाव वणस्सइकाइया ते णं जीवा महाकम्मतरा चेव,....महावेदणतरा चेव ?
७५. एवं जहा नेरइयउद्देसए (सं० पा०) जावअहेसत्तमा। (श० १३।४६)
'जहा नेरइयउद्देसए' (जीवा० ३।१२६) त्ति जीवाभिगमसम्बन्धिनि । (वृ० प० ६०७)

लोक मध्य पद

७६. किहां प्रभुजी ! लोक तणो जे, मध्य आयाम कहाय।
जिन कहै रत्नप्रभा पृथ्वीतल, आकाशांतर मांय।।
७७. असंख्यातमो भाग उलंघी, जइयै तिहां पिछाण।
लोक तणो आयाम मध्य इम, आखै श्री जगभाण।।
७८. किहां प्रभुजी ! अधोलोक नों, मध्य आयाम कहाय ?
जिन कहै चौथी पंकप्रभा तल, आकाशांतर मांय।।

७६. कहि णं भंते ! लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?
गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए ओवासंतरस्स
७७. असंखेज्जइभागं ओगाहेत्ता, एत्थ णं लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते । (श० १३।४७)
७८. कहि णं भंते ! अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए ओवासंतरस्स

---

१. ३।१२५
लय : उस रघुपति के धर्म सुराजे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७९. आधो जाभेरो लंघी नैं, जइयै तिहां सुजाण।
अधोलोक नो मध्य आयाम परूप्यो पूरण-नाण ॥

७९. सातिरेगं अद्धं ओगाहेत्ता, एत्थ णं अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते। (श० १३।४८)

सोरठा

८०. रुचक थकी अवलोय, नवसौ योजन थी तलै।
अधोलोक छै सोय, तसु मध्य पंकाकाश में ॥

८०. 'चउत्थीए पंकप्पभाए' इत्यादि, रुचकस्याधो नवयोजनशतान्यतिक्रम्याधोलोको भवति लोकान्तं यावत्। (वृ० प० ६०७)

८१. चौथी पंचमी बीच, आकाशांतर तेहनों।
जाभो अर्द्ध समीच, लांघी जइयै अर्द्ध त्यां ॥

८१. स च सातिरेकाः सप्त रज्जवस्तन्मध्यभागः चतुर्थ्याः पञ्चम्याश्च पृथिव्या यदवकाशान्तरं तस्य सातिरेकमर्द्धमतिवाह्य भवतीति। (वृ० प० ६०७)

८२. *किहां प्रभुजी ! ऊर्द्धलोक नों, मध्य आयाम विचार ?
जिन कहै धुर चिउं कल्प ऊपरै, पंचम कल्प मभार ॥

८२. कहि णं भंते ! उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?
गोयमा ! उप्पिं सणंकुमार-माहिंदाणं कप्पाणं हेट्ठिं बंभलोए कप्पे

८३. तीजै परतर रिष्ट विमाणज, तेहनैं पासे ताम।
लोकांतिक सुर तणां विमानज, ऊर्द्ध लोक मध्य ठाम ॥

८३. रिट्ठविमाणे पत्थडे, एत्थ णं उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते। (श० १३।४९)

सोरठा

८४. रुचक ऊपरै जाण, नवसौ योजन अतिक्रमी।
तस ऊपर पहिछाण, ऊर्द्धलोक कहियै अछै ॥

८४. तथा रुचकस्योपरि नवयोजनशतान्यतिक्रम्योर्द्धलोको व्यपदिश्यते लोकान्तमेव यावत्। (वृ० प० ६०७)

८५. उर्द्धलोक छै जेह, कांइक ऊणो सप्त रजु।
तसु मध्य भाग कहेह, रिष्ट विमानज परतरे ॥

८५. स च सप्त रज्जवः किञ्चिन्न्यूनास्तस्य च मध्यभागप्रतिपादनायाह— (वृ० प० ६०७)

८६. *क्यां प्रभु ! तिरछा लोक तणो जे, मध्य आयाम कहाय।
जिन कहै जंबू मंदरगिरि मध्य, देश भाग रै मांय ॥

८६. कहि णं भंते ! तिरियलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?
गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स बहुमज्झदेसभाए

८७. ए रत्नप्रभा नां रत्नकांड में, सर्व थकी लघु जोय।
एहवा दोय प्रतर छै तेहथी, ऊर्द्ध अधो वृद्धि होय ॥

८७. इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डगपयरेसु, उवरिमहिट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु' त्ति लोकस्य वज्रमध्यत्वाद्रत्नप्रभाया रत्नकाण्डे सर्वक्षुल्लकं प्रतरद्वयमस्ति। (वृ० प० ६०७)

८८. ते ऊपरला प्रतर थकी जे, लोक तणी पहिछाण।
ऊर्द्धमुखे जे वृद्धि जाणवी, समझै चतुर सुजाण ॥

८८. तयोश्चोपरिमो यत आरभ्य लोकस्योपरिमुखा वृद्धिः। (वृ० प० ६०७)

८९. तेह हेठला प्रतर थकी जे, लोक तणी सुविधान।
अधोमुखे जे वृद्धि जाणवी, लोकांत लगै पिछाण ॥

८९. 'हेट्ठिल्ले' त्ति अधस्तनो यत आरभ्य लोकस्याधोमुखा वृद्धिः तयोरुपरिमाधस्तनयोः। (वृ० प० ६०७)

९०. उवरिम हेठिल्ल ए दोनूंई, लघु प्रतर तिण ठाम।
तिर्यक लोक तणो मध्य आख्यो, पूरणज्ञानी स्वाम ॥

९०. 'खुड्डागपयरेसु' त्ति क्षुल्लकप्रतरयोः सर्वलघुप्रदेशप्रतरयोः। (वृ० प० ६०७)

९१. तिरछा लोक तणैं मध्य भागे, अष्ट प्रदेशिक तेह।
रुचक कह्यो ते सामर्थ्यपणां थी, तिर्यक लोक मध्य एह ॥

९१. एत्थ णं तिरियलोगमज्झे अट्ठपएसिए रुयए पण्णत्ते।

९२. अष्टप्रदेशिक रुचक किसो छै ? तेह रुचक थी जाण।
दश दिशि चाली पूरव पहिली, अग्निकूण पहिछाण ॥

९२. किम्भूतोऽसावष्टप्रदेशिको रुचकः ? (वृ० प० ६०७)
जओ णं इमाओ दस दिसाओ पवहंति, तं जहा—पुरत्थिमा पुरत्थिमदाहिणा।

९३. इम जिम दशमा शतक तणो जे, प्रथम उद्देशक मांहि।
आख्यो तिम इहां कहिवो यावत, नामधेय लग ताहि ॥

९३. एवं जहा दसमसए (श० १०।१-७)
जाव (सं० पा०) नामधेज्जे त्ति। (श० १३।५०,५१)

***लय : उस रघुपति के धर्म सुराजे**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९४. लोक मध्य ए द्वार पंचमो, आख्यो तसु विस्तार ;
तेरम शतक उद्देश तुर्य नों, कह्यो देश अधिकार ।।
९५. दोयसौ नें छींहतरमीं, आखी ढाल विशाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

ढाल : २७७

दिशि विदिशि प्रवह पद

दूहा

१. ऐंद्री पूरवदिशि प्रभु ! कवण आदि छै तास ।
किहां थी चाली प्रवर्त्ती, द्वितीय प्रश्न सुविलास ।।

१. इंदा णं भंते ! दिसा किमादीया, किंपवहा,

२. जेहनें आदि प्रदेश के, के प्रदेश वृद्धि जान ।
किता प्रदेशिक अंत किहां, अछै किसैं संस्थान ?

२. कतिपदेसादीया, कतिपदेसुत्तरा, कतिपदेसिया, किंपज्जवसिया, किंसंठिया पण्णत्ता ?

३. ए सातूंइ प्रश्न नां, उत्तर दै अरिहंत ।
श्रोता चित दे सांभलो, स्वाम वचन शोभंत ।।

*जय-जय ज्ञान जिनेंद्र नों जशधारी । (ध्रुपदं)

४. ऐंद्री पूर्व दिशि तेहनें जशधारी,
रुचक आदि सुविशेष रे ! गोयम गणधार !
रुचक थकी चाली अछै गुणधारी,
आदि छै दोय प्रदेश रे गोयम गणधार !

४. गोयमा ! इंदा णं दिसा रुयगादीया, रुयगप्पवहा, दुपएसादीया,

५. आगल दोय प्रदेश नी जशधारी, उत्तरोत्तर वृद्धि होय रे गो० ।
इम बे-बे प्रदेश नीं गुणधारी, थेट तांई वृद्धि जोय रे गो० ।।

५. दुपएसुत्तरा,

स्थापना रुचक थकी दिश चाली तेहनों यंत्र—

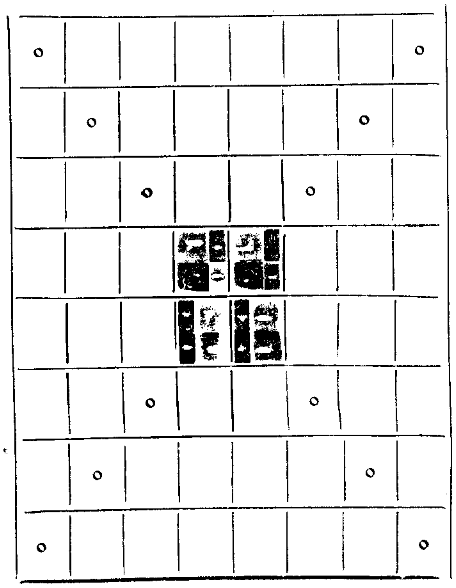

*लय : हूं तुझ आगल सी कहूं कनइया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. तास असंख प्रदेश छै जशधारी, लोक आश्री सुविशेष रे गो० ।
तेह अलोकज आश्रयी गुणधारी, छै तसु अनंत प्रदेश रे गो० ।।
७. लोक आश्री ते सादिया जशधारी, छै वलि अंत-सहीत रे गो० ।
अलोक आश्री सादिया गुणधारी, कहियै अंतर-रहीत रे गो० ।।

सोरठा

८. पूर्व रुचकज पास, आदि तास अवलोकियै ।
लोकज छेहड़ै तास, अंत अछै इण न्याय सूं ।।

९. *दिशि पूर्व अलोकज आश्री जशधारी,
आदि-सहित कहिवाय रे गो० ।।
अंत-रहित तसु आखियै गुणधारी,
निसुणो तेहनों न्याय रे गो० ।।

सोरठा

१०. लोक पास तसु आद, नहिं छै अंत अलोक नों ।
ते माटै इम लाध, अंत नहीं छै दिशि तणो ।।

११. *मुरज संठाण लोक आश्री जशधारी,
ते आभरण आकार विचार रे गो० ।
वलि अलोकज आश्री गुणधारी, गाडा नीं ओधि आकार रे गो० ।।

सोरठा

१२. लोक अंत नो जाण, परिमंडल आकार छै ।
मुरज तणैं संस्थान, पूर्व दिशि आखो प्रभु ।।
१३. लोकांत आश्री एह, मुरज संस्थानपणैं कह्यु ।
आगल न्याय कहेह, हिवै अलोक नैं आश्रयी ।।
१४. शकट ओधि आकार, अलोक नों जिन आखियो ।
धुर संकीरण धार, विस्तीर्ण उत्तरोत्तरे ।।
१५. रुचक विषे सुविचार, मस्तक नीं कर कल्पना ।
तिण कारण धुर धार, संकीरण पाछै वृद्धी ।।

१६. *आग्नेयि दिशि भगवंत जी ! हूं वारी,
कवण अछै तसु आदि रे जयवंता स्वाम !
किहां थकी चालो अछै हूं वारी,
तेह प्रवर्त्ती लाधि रे जयवंता स्वाम !
१७. आदि प्रदेश तसु केतला हूं वारी, विस्तीर्ण कितरा प्रदेश रे जय० ।
के प्रदेशिक कुण अंत छै हूं वारी, किसै संठाण कहेस रे ? जय० ।।
१८. जिन भाखै सुण गोयमा ! जशधारी,
दिशि आग्नेयि कहीज रे गो० ।
रुचक आदि छै जेहनें गुणधारी, चाली रुचक थकीज रे गो० ।।
१९. एक प्रदेश जसु आदि छै जशधारी, विस्तीर्ण एक प्रदेश रे गो० ।
आगल पिण ते विदिशि नों गुणधारी, वृद्धि नथी लवलेस रे गो० ।।

६. लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसिया, अलोगं पडुच्च अणंतपएसिया,
७. लोगं पडुच्च सादीया सपज्जवसिया, अलोगं पडुच्च सादीया अपज्जवसिया,

११. लोगं पडुच्च मुरवसंठिया, अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिया पण्णत्ता । (श० १३।५२)

१२,१३. लोकान्तस्य परिमंडलाकारत्वेन मुरजसंस्थानता दिशः स्यात्ततश्च लोकान्तं प्रतीत्य मुरजसंस्थितेत्युक्तं । (वृ० प० ६०७)

१४,१५. 'अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिय' त्ति रुचके तु तुण्डं कल्पनीयं आदौ संकीर्णत्वात् तत उत्तरोत्तरं विस्तीर्णत्वादिति । (वृ० प० ६०८)

१६. अग्गेयी णं भंते ! दिसा किमादीया, किंपवहा,

१७. कतिपएसादीया, कतिपएसवित्थिण्णा, कतिपएसिया, किंपज्जवसिया, किंसंठिया पण्णत्ता ?
१८. गोयमा ! अग्गेयी णं दिसा रुयगादीया, रुयगप्पवहा,

१९. एगपएसादीया, एगपएसवित्थिण्णा—अणुत्तरा,

*लय : हूं तुझ आगल सी कहूं कनइया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. विदिशि तिका लोक आश्रयो गुणधारी, असंख्यात प्रदेश रे गो० ।
वलि अलोकज आश्रयी गुणधारी, अनंत प्रदेश कहेस रे गो० ।।
२१. लोक आश्रयी आदि सहित छै जशधारी,
अंत-सहित छै सोय रे गो० ।
अलोक आश्रयी सादि छै गुणधारी, अंत-रहित अवलोय रे गो० ।।
२२. छेद्यो हार मोत्यां तणो जशधारी, ते संस्थान विचार रे गो० ।
एतलै लड़ मोती तणी गुणधारी, आखी तसु आकार रे गो० ।।
२३. जम्मा दक्षिण दिशि कही जशधारी, पूर्व दिशि जम पेख रे गो० ।
कहिवो नैरुत कूण नैं गुणधारी, आग्नेयि जिम अशेख रे गो० ।।
२४. इम जिम पूर्व दिशि कही जशधारी,
तिम कहिवी दिशि च्यार रे गो० ।
जिम आग्नेय विदिश कही गुणधारी,
तिम चिउं विदिशि प्रकार रे गो० ।।
२५. विमला ऊर्द्ध दिशि हे प्रभु ! वारी,
कवण आदि इत्यादि रे जयवंता स्वाम !
जिम आग्नेय नीं पूछा करी हूं वारी,
तिमहिज प्रश्न संवादि रे जयवंता स्वाम ।।
२६. जिन कहै विमला दिश तिका जशधारी,
रुचक आदि जसु जोय रे गो० ।
रुचक थकी विमला वली गुणधारी, चाली प्रवर्त्ती सोय रे गो० ।।
२७. च्यार प्रदेश छै आदि में जशधारी, विस्तीर्ण दोय प्रदेश रे गो० ।
कहियै तसु चोड़ापणुं गुणधारी, हिव तसु न्याय कहेस रे गो० ।।

सोरठा

२८. रुचक ऊपजै जोय, च्यार-च्यार प्रदेश इम ।
करता जइयै सोय, एम ऊर्द्ध दिशि नीकली ।।
२९. जिहां जोइयै तेथ बे प्रदेश विस्तीर्ण छै ।
आदि अंत पिण एथ, वृद्धि नथीज प्रदेश नीं ।।

३० *लोक पडुच्च इत्यादि जे गुणधारी,
आग्नेयी जिम छै शेख रे गो० ।
णवरं रुचक संठाणे कही जशधारी,
इमज तमा पिण पेख रे गो० ।।
३१. एम अधोदिशि जाणवी जशधारी, ऊर्द्ध दिशा जिम एह रे गो० ।
द्वार छठो ए दाखियो जशधारी, हिव सप्तम द्वार कहेह रे गो० ।।

लोक पद

३२. ए स्यूं प्रभु ! लोक कहियै इसो हूं वारी,
तब भाखै जिनराय रे गो० ।
पंचास्तिकायज एतलो जशधारी, लोक इसो कहिवाय रे गो० ।।
३३. धुर धर्मास्तिकाय छै जशधारी, अधर्मास्तिकाय रे गो० ।
आगासत्थि जीवास्ति जशधारी, पुद्गलास्ति कहिवाय रे गो० ।।

२०. लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसिया, अलोगं पडुच्च अणंतपएसिया,
२१. लोगं पडुच्च सादीया सपज्जवसिया, अलोगं पडुच्च सादीया अपज्जवसिया,
२२. छिण्णमुत्तावलिसंठिया पण्णत्ता ।
२३. जमा जहा इंदा, नेरई जहा अग्गेयी ।
२४. एवं जहा इंदा तहा दिसाओ चत्तारि, जहा अग्गेई तहा चत्तारि विदिसाओ । (श० १३।५३)
२५. विमला णं भंते ! दिसा किमादीया । पुच्छा जहा अग्गेयीए (सं० पा०)
२६. गोयमा ! विमला णं दिसा रुयगादीया, रुयगप्पवहा,
२७. चउप्पएसादीया, दुपएसवित्थिण्णा—अणुत्तरा,
३०. लोगं पडुच्च सेसं जहा अग्गेयीए नवरं (सं० पा०) रुयगसंठिया पण्णत्ता । एवं तमा वि । (श. १३।५४)
३२. किमियं भंते ! लोएत्ति पवुच्चइ ? गोयमा ! पंचत्थिकाया, एस णं एवतिए लोएत्ति पवुच्चइ तं जहा—
३३. धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए । (श. १३।५५)

लय : हूं तुझ आगल सी कहूं कनइया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. हे प्रभु ! काय धर्मास्ति हूं वारी,
बहु जीवां रै एह रे जयवंता स्वा० ।
स्यूं प्रवर्त्तै छै तिका ? हूं वारी,
हिव जिन उत्तर देह रे जयवंता स्वा० ।।

३४. धम्मत्थिकाएणं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?

३५. धर्मास्तिकाय करि जीव नैं गुणधारी, गमना-गमन विशेख रे गो० ।
प्रगट वचन ते भाषा कही जशधारी, नेत्र व्यापार संपेख रे गो० ।।

३५. गोयमा ! धम्मत्थिकाएणं जीवाणं आगमण-गमण भासुम्मेस
भाषा—व्यक्तवचनं ····उन्मेषः—अक्षिव्यापारविशेषः । (वृ० प० ६०८)

३६. योग मन वचन काया तणां जशधारी, वले अनेरा जाण रे गो० ।
आगमनादिक सारिखा गुणधारी, चलण स्वभाव पिछाण रे गो० ।।

३६. मणजोग-वइजोग-कायजोगा, जे यावण्णे तहप्पगारा चला भावा ।

सोरठा

३७. आख्या मन जोगादि, ते सामान्यज रूप छै ।
फुन जे आगमनादि, जोग तणोज विशेष छै ।।
३८. इम भेदे करख्यात, सामान्य ग्रहणे पिण वलि ।
विशेष ग्रहण संजात, तास सरूप देखाड़िवा ।।

३७,३८. इह च मनोयोगादयः सामान्यरूपाः आगमनादयस्तु तद्विशेषा इति भेदेनोपात्ताः, भवति च सामान्यग्रहणेऽपि विशेषग्रहणं तत्स्वरूपोपदर्शनार्थमिति । (वृ० प० ६०८)

३९. *धर्मास्तिकाय छते प्रवर्त्तै जशधारी, ते सगला व्यापार रे गो० ।
गति लक्षण धर्मास्ति गुणधारी, ते माटै सुविचार रे गो० ।।

३९. सव्वे ते धम्मत्थिकाए पवत्तंति । गइलक्खणे णं धम्मत्थिकाए। (श० १३।५६)

४०. अधर्मास्तिकाय जीवां तणैं जशधारी,
स्यूं प्रभुजी ! प्रवर्त्तंत रे जय० ।
जिन भाखै सुण गोयमा ! गुणधारी, आखूं तास वृतंत रे गो० ।।

४०. अधम्मत्थिकाएणं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?
गोयमा !

४१. अधर्मास्ति काये करी जशधारी, जीवां नैं कायोत्सर्ग हुंत रे गो० ।
बेसवूं नैं वली सूयवूं गुणधारी, तेहनां सहाय्य थी मंत रे गो० ।।

४१. अधम्मत्थिकाएणं जीवाणं ठाण-निसीयण-तुयट्टण,
ठाणनिसीयणतुयट्टण' त्ति कायोत्सर्गासनशयनानि । (वृ० प० ६०८)

४२. अनेकपणैं मन तेहनैं जशधारी, एकत्व थायवूं ताय रे गो० ।
तेह तणुं करिवूं जिको गुणधारी, सहाय्य अधर्मास्तिकाय रे गो० ।।

४२. मणस्स य एगत्तीभावकरणता,
तथा मनसश्चानेकत्वस्यैकत्वस्य भवनमेकत्वीभावस्तस्य यत्करणं तत्तथा । (वृ० प० ६०८)

४३. जे अन्य वलि एह सारिखा गुणधारी,
स्थिर स्वभाव सहु तेह रे गो० ।
अधर्मास्ति करि प्रवर्त्तै जशधारी, लक्षण स्थान कहेह रे गो० ।।

४३. जे यावण्णे तहप्पगारा थिरा भावा सव्वे ते अधम्मत्थिकाए पवत्तंति । ठाणलक्खणे णं अधम्मत्थिकाए । (श० १३।५७)

४४. हे प्रभु ! काय आगासत्थि हूं वारी, जीव अजीव नैं जाण रे गो० ।
स्यूं प्रवर्त्तै छै सही ? हूं वारी, हिव भाखै जगभाण रे गो० ।।

४४. आगासत्थिकाएणं भंते ! जीवाणं अजीवाण य किं पवत्तति ?

४५. जीव अजीवज द्रव्य नों जशधारी, भाजन कहितां ठाम रे गो० ।
तेह सरीखी छै सही गुणधारी, ए आगासत्थि ताम रे गो० ।।

४५. गोयमा ! आगासत्थिकाए णं जीवदव्वाण य अजीवदव्वाण य भायणभूए—

४६. आकाशास्ति काय नों जशधारी, भाजन भाव पिछाण रे गो० ।
तेहिज हिव देखाड़ियै गुणधारी, सुणजो चतुर सुजाण रे गो० ।।

४७. जे एक प्रदेश आकाश नो जशधारी, इक परमाणु करेह रे गो० ।
पूरण कहितां ते भर्यूं गुणधारी, वलि कहियै छै एह रे गो० ।।

४७. एगेण वि से पुण्णे,
'एगेणवी' त्यादि, एकेन—परमाण्वादिना 'से' त्ति असौ आकाशास्तिकायप्रदेश इति गम्यते 'पूर्णः' भृतः । (वृ० प० ६०८)

४८. बिहुं परमाणु करि वलि जशधारी, पूरण भरियो ताय रे गो० ।
तेह पूरण भरिया विषे गुणधारी, परमाणु सौ पिण मांय रे गो० ।।

४८. दोहि वि पुण्णे सयं पि माएज्जा ।
तथा द्वाभ्यामपि ताभ्यामसौ पूर्णः । (वृ० प० ६०८)

*लय : हूं तुझ आगल सी कहूं कनइया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४९. सौकोड़ पूर्ण भरिया विषे जशधारी, कोड सहस्र पिण माय रे गो० ।
परिणमवा नां भेद थी जशधारी, दृष्टांत वृत्ति में कहाय रे गो० ।।
५०. जिम एक ओरा नां आकाश में जशधारी,
कीधे दीपक एक रे गो० ।
तसु तेजे करि ओरड़ो गुणधारी, ताम भराय अशेख रे गो० ।।
५१. द्वितीय दीपक कीधे छते जशधारी, तास तेज पिण जाण रे गो० ।
तिहां समावै छै सही गुणधारी, प्रत्यक्ष ही पहिछाण रे गो० ।।
५२. इम शत सहस्र दीवा तणो जशधारी, तेज तिहांज समाय रे गो० ।
पिण फूटी बार न नीसरै गुणधारी,
वलि दूजो दृष्टांत कहाय रे गो० ।।
५३. ओषधि विधि नां विशेष थी जशधारी,
टाल्यो पारा नो परिणाम रे गो० ।
एक सोनइया भर एहवा गुणधारी, तेह पारा विषे ताम रे गो० ।।
५४. सुवर्ण सौ सोनइया जितो गुणधारी, करै तेह पारा में प्रवेश रे गो० ।
लोक कहै सुवर्ण भणी जशधारी, खाधो पारै अशेष रे गो० ।।
५५. पारो एक सोनइया जितो जशधारी,
पिण ओषधि सामर्थ्य थी ताम रे गो० ।
सोनइया सौ ह्वै तसु गुणधारी,
विचित्र पुद्गल-परिणाम रे गो० ।।
५६. इण दृष्टांते जाणवो जशधारी, एह आगासत्थिकाय रे गो० ।
अवगाहन आश्रयपणो गुणधारी, तास लक्षण कहिवाय रे गो० ।।
५७. जीवास्तिकायपणैं करी प्रभुजी ! जीव नैं स्यूं प्रवर्त्तंत रे जय० ।
भाव प्रत्यय अंतरभूत छै प्रभुजी ! इम वृत्तिकार कहंत रे जय० ।
५८. जिन कहै जीवास्तिकाये करी जशधारी,
जीव विषे कहिवाय रे गो० ।
आभिनिबोधिक ज्ञान नां गुणधारी, प्रवर अनंत पर्याय रे गो० ।।
५९. अनंत पर्यव श्रुत-ज्ञान नां गुणधारी, जिम बीजे शतकेह रे गो० ।
अस्तिकाय उद्देश में जशधारी, आख्यो तेम कहेह रे गो० ।।
६०. जाव उपयोग प्रतै तिको गुणधारी, जाय प्राप्त हुवै ताय रे गो० ।
उपयोग-लक्षण जीव छै जशधारी, ते माटै कहिवाय रे गो० ।।
६१. प्रश्न पुद्गलास्तिकाय नो गुणधारी, उत्तर दै जगभाण रे गो० ।
जे पुद्गलास्तिकाय नों गुणधारी, बहु जीवां नैं जाण रे गो० ।।
६२. औदारिक नैं वैक्रिय जशधारी, आहारक तेजस चीन रे गो० ।
कार्मण द्रव्य पांचूं इन्द्रिय गुणधारी, द्रव्य जोग वलि तीन रे गो० ।।
६३. वलि उस्सास निस्सास नों जशधारी, ए पुद्गल नों ताय रे गो० ।
ग्रहण प्रवर्त्तै छै तसु गुणधारी,
ग्रहण-लक्षण पुद्गलास्तिकाय रे गो० ।।
६४. देश तेरम नां चोथा तणो गुणधारी,
बेसौ सतंतरमी ढाल रे श्री देव दयाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी जशधारी,
'जय-जश' मंगलमाल रे श्री देव दयाल ।।

४९. कोडिसएण वि पुण्णे, कोडिसहस्सं पि माएज्जा ।।
परिणामभेदात् । (वृ० प० ६०८)
५०. यथाऽपवरकाकाशमेकप्रदीपप्रभापटलेनापि पूर्यते ।
(वृ० प० ६०८)
५१. द्वितीयमपि तत्तत्र माति । (वृ० प० ६०८)
५२. यावच्छतमपि तेषां तत्र माति । (वृ० प० ६०८)
५३,५४. तथौषधिविशेषापादितपरिणामादेकत्र पारदकर्षे सुवर्णकर्षशतं प्रविशति । (वृ० प० ६०९)
५५. पारदकर्षीभूतं च सदौषधिसामर्थ्यात् पुनः पारदस्य कर्षः सुवर्णस्य च कर्षशतं भवति विचित्रत्वात्पुद्गल-परिणामस्येति । (वृ० प० ६०९)
५६. अवगाहणालक्खणे णं आगासत्थिकाए। (श० १३।५८)
५७. जीवत्थिकाए णं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?
'जीवत्थिकाएण' मित्यादि, जीवास्तिकायेनेति भन्त-र्भूतभावप्रत्ययत्वाज्जीवास्तिकायत्वेन जीवतयेत्यर्थः ।
(वृ० प० ६०९)
५८. गोयमा ! जीवत्थिकाएणं जीवे अणंताणं आभिणि-बोहियनाणपज्जवाणं
५९,६०. अणंताणं सुयनाणपज्जवाणं एवं जहा बितियसए (२।१३७) अत्थिकायउद्देसए जाव (सं० पा०) उवयोगं गच्छति । उवयोगलक्खणे णं जीवे ।
(श० १३।५९)
६१-६३. पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?
गोयमा ! पोग्गलत्थिकाएणं जीवाणं ओरालिय-वेउव्विय-आहार-तेया कम्मा-सोइंदिय-चक्खिंदिय-घाणिंदिय-जिब्भिंदिय-फासिंदिय-मणजोग - वइजोग-कायजोग-आणापाणूणं च गहणं पवत्तति । गहण-लक्खणे णं पोग्गलत्थिकाए । (श० १३।६०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २७८

धर्मास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना

दूहा

१. प्रभु ! धर्मास्तिकाय नों, एक प्रदेशज तेह।
किता धर्मास्तिकाय नां, प्रदेश करि फर्शेह ?
२. जिन कहै जघन्यपदे करी, तीन करी फर्शंत।
उत्कृष्ट षट प्रदेश करि, तास फर्शवो हुंत ।।
३. जघन्य तीन ते किम इहां ? लोक तणें जे अंत।
निष्कुट खूणां रूप ज्यां, अल्प फर्शना हुंत ।।
४. जिम भूमि तणेंज नजीक छै, ओरा तणांज ताय।
खूणां नों जे देश छै, प्राये तिम कहिवाय ।।
५. ऊपर एक प्रदेश करि, बे प्रदेश बिहुं पास।
त्रिण प्रदेश करि फर्शणा, वांछित प्रदेश तास ।।
६. उत्कृष्ट षट प्रदेश करि, चिउं दिशि नां जे च्यार।
इक ऊपर इक अधस्तन, इम षट करि अवधार ।।

१. एगे भंते ! धम्मत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?
२. गोयमा ! जहण्णपदे तिहिं उक्कोसपदे छहिं।
३,४. 'जहन्नपए तिहिं' ति जघन्यपदं लोकान्तनिष्कुटरूपं यत्रैकस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशस्यातिस्तोकैरन्यैः स्पर्शना भवति तच्च भूम्यासन्नापवरककोणदेशप्रायं। (वृ० प० ६१०)
५. इहोपरितनेनैकेन द्वाभ्यां च पार्श्वत एको विवक्षितः प्रदेशः स्पृष्टः। (वृ० प० ६१०)
६. 'उक्कोसपए छहिं' ति विवक्षितस्यैक उपर्येकोऽधस्तनश्चत्वारो दिक्षु इत्येवं षड्भिः। (वृ० प० ६१०)

*सुगण नर ! वारू जिन वच हीर, सरध्यां रे भवदधि तीर। [ध्रुपदं]

७. इक प्रदेश धर्मास्तिकाय नों, अधर्मास्तिकाय नां जाण।
केतलै प्रदेशै करी, फर्शे रे ? ए प्रश्न पिछाण ।।
८. श्री जिन भाखै जघन्य जी, चिउं प्रदेश करि हुंत।
वलि उत्कृष्टपदे करी, सप्त प्रदेशज रे करि फर्शंत ।।

७. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?
८. जहण्णपदे चउहिं उक्कोसपदे सत्तहिं।

सोरठा

९. तीन पूर्ववत जान, चोथो धर्मास्तिकाय नो।
प्रदेश छै ते स्थान, प्रदेश अधर्मास्ती तणों ।।
१०. षट दिशि नां षट जान, सप्तम धर्मास्ती तणो।
प्रदेश छै ते स्थान, अधर्मास्ति नों प्रदेश छै।।
११. *इक प्रदेश धर्मास्तिकाय नो, आगासत्थि नों तास।
फर्शै किते प्रदेशे करी ? जिन भाखै रे सप्त करि फास ।।

९. तथैव त्रयः, चतुर्थस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थानस्थित एवेति। (वृ० प० ६१०)
१०. षड् दिक्षट्के, सप्तमस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थ एवेति (वृ० प० ६१०)
११. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? सत्तहिं।

सोरठा

१२. लोकांते पिण ख्यात, फर्शै अलोक प्रदेश करि।
ते माटै कह्या सात, जघन्य उत्कृष्ट कह्या नथी।।
१३. *इक प्रदेश धर्मास्तिकाय नों, जीवास्तिकाय नां ख्यात।
फर्शै किते प्रदेशे करी ? जिन भाखै रे अनंत संघात ।।

१२. आकाशप्रदेशैः सप्तभिरेव, लोकान्तेऽप्यलोकाकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वात् (वृ० प० ६१०)
१३. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? अणंतेहिं।

सोरठा

१४. लोकांते पिण तेह, तीन प्रमुख दिशि नैं विषे।
अनंत जीव नां जेह, फर्शै अनंत प्रदेश करि।।

१४. 'अणंतेहिं' ति अनन्तैरनन्तजीवसम्बन्धिनामनन्तानां प्रदेशानां तत्रैकधर्मास्तिकायप्रदेशे पार्श्वतश्च दिक्त्रयादौ विद्यमानत्वादिति (वृ० प० ६१०)

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. *इक प्रदेश धर्मास्तिकाय नों, पुद्गलास्ति नों ख्यात।
फर्शै किते प्रदेशे करी ? जिन भाखै रे अनंत संघात ।।

१५. केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? अणंतेहिं ।

सोरठा

१६. जीवास्ती नों जाण, न्याय कह्यो तेहनीं परै।
पुद्गल नों पहिछाण, कहिवो आलोची करी ।।

१६. एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि (वृ० प० ६१०)

१७. *इक प्रदेश धर्मास्तिकाय नों, अद्धा समय अवदात।
तसु कितलै समये करी, फर्शै रे हिव भाखै नाथ ।।

१७. केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ?

१८. कदाचित फर्शै अछै, द्वीप अढाई मांय।
कदाचित फर्शै नहीं, अढी द्वीप नैं रे बारै न फर्शाय ।।

१८. सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे,
अद्धासमयः समयक्षेत्र एव न परतोऽतः स्यात्स्पृष्टः स्यान्नेति, (वृ० प० ६१०)

१९. जो फर्शै तो निश्चै करी, अनंत समय फर्शंत।
अनादि अद्धा समय छै, अनंत समय करि रे इण न्याय कहंत।।

१९. जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं। (श० १३/६१)
'जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं' ति अनादित्वादद्धासमयानां (वृ० प० ६१०)

२०. तथा समय वर्तमान जे, द्रव्य अनंत ऊपर वर्तंत।
तिणसूं एकण नैं अनंता कह्या, अनंत समय करि रे इम फर्शंत।।

२०. अथवा वर्त्तमानसमयालिगितान्यनन्तानि द्रव्याण्यनन्ता एव समया इत्यनन्तैस्तैः स्पृष्ट इत्युच्यत इति (वृ० प० ६१०)

अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना

२१. प्रभु ! अधर्मास्तिकाय नों, इक प्रदेश छै तेह।
कितै धर्मास्तिकाय नैं, प्रदेश करिकै रे फर्शै जेह ।।

२१. एगे भंते ! अधम्मत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?

२२. श्री जिन भाखै जघन्य थी, च्यार करी फर्शंत।
सप्त प्रदेश करी वली, ऊत्कृष्ट रे फर्शणा हुंत ।।

२२. गोयमा ! जहण्णपदे चउहिं, उक्कोसपदे सत्तहिं ।

सोरठा

२३. जिम इक धर्म-प्रदेश, अधर्म नां प्रदेश करि।
फर्शै न्याय अशेष, तिम ए लोकांत लोक मध्य ।।

२३. अधर्मास्तिकायप्रदेशस्य शेषाणां प्रदेशैः स्पर्शना धर्मास्तिकायप्रदेशस्पर्शनाऽनुसारेणावसेया। (वृ० प० ६१०)

२४. *एक प्रदेश अधर्मास्तिकाय नों, अधर्मास्तिकाय नैं जाण।
केतले प्रदेशे करी, फर्शै रे भाखो भगवान !

२४. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?

२५. जिन कहै जघन्यपदे करि, तीन करी फर्शंत।
उत्कृष्ट षट प्रदेशे करी, तेहनों रे फर्शवो हुंत ।।

२५. जहण्णपदे तिहिं, उक्कोसपदे छहिं,

सोरठा

२६. जिम इक धर्म-प्रदेश, फर्शै धर्म-प्रदेश करि।
लोक अंत मध्य देश, ए पिण तिमहिज न्याय छै ।।

२७. *शेष जेम धर्मास्तिकाय विषे आख्यात।
तेम अधर्मास्तिकाय विषे, कहिवो रे सर्व अवदात ।।

२७. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। (श० १३/६२)

आकाशास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना

२८. एक प्रदेश आकाश नों, धर्मास्ती नैं जाण।
केतले प्रदेशे करी, फर्शै रे ? भाखो जगभाण !

२८. एगे भंते ? आगासत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. जिन भाखै फर्शै कदा, लोक आश्रयी ताय।
कदाचित फर्शै नहीं, अलोक आश्रयी रे ते कहिवाय ।।

३०. जो फर्शै तो जघन्य थी, इक बे तीन संघात।
उत्कृष्ट धर्मास्तिकाय नैं, सप्त प्रदेशे रे करि फर्शात ।।

वा०—एक आगासत्थिकाय नों प्रदेश धर्मास्तिकाय नां एक-बे प्रदेशे करी फर्शै, तेहनों न्याय कहै छै—कोई एक एहवोज लोकांतवर्त्ती धर्मास्तिकाय प्रदेश शेष धर्मास्तिकाय प्रदेश थकी नीकल्यो, तिणैं धर्मास्तिकाय-प्रदेशे करी एक अग्रभाग-वर्त्ती अलोकाकाश-प्रदेश स्पर्श्यो तथा वक्रगत तेहिज आकाश-प्रदेश ते दो धर्मास्ति-काय-प्रदेश संघाते फर्श्यो। जेह अलोकाकाश दंतक प्रदेश नैं आगै तथा नीचै तथा ऊपर धर्मास्तिकाय नां प्रदेश छै, ते आकाशास्तिकाय-प्रदेश तीन धर्मास्तिकाय-प्रदेशे करी फर्श्यो।

उक्कोसपदे सत्तहिं—उत्कृष्टपदे एक आकाशास्तिकाय-प्रदेश सात धर्मास्ति-काय नैं प्रदेशे फर्शै, ते किम ?

जेह लोकांत कोणगत आकाश-प्रदेश, ते एक धर्मास्तिकाय-प्रदेश अवगाही रह्यो छै, ते संघाते स्पर्शै। अनेरो एक धर्मास्तिकाय-प्रदेश ऊपरवर्त्ती अथवा अधोवर्त्ती, ते मांहि एक संघाते बिहुं दिशि नैं विषे धर्मास्तिकाय-प्रदेश छै, ते संघाते स्पर्शै—इम एक आकाशास्तिकाय नैं च्यार धर्मास्तिकाय-प्रदेश संघाते स्पर्शना हुवै।

तथा जे आकाशास्ति-प्रदेश धर्मास्तिकाय नां प्रदेश संघाते ऊपर १, नीचै १, बिहुं दिशि २ स्पर्शै, तेहनैं पंच प्रदेश नीं स्पर्शना हुवै।

तथा जे वलि ऊपर-नीचै २ तथा तीनूंई दिशि नैं विषे वर्त्तमान धर्मास्तिकाय-प्रदेशे करी स्पर्शै, तेहनैं छह प्रदेश नी फर्शना हुवै।

हिवै उत्कृष्टपदे साते प्रदेश करि फर्शै ते इम—जे आकाश-प्रदेश नीचै १, ऊपर १, चिउं दिशि ४, एक अवगाही रह्यो—इम उत्कृष्टपदे आकाशास्तिकाय नैं धर्मास्तिकाये स्पर्शना थयां सात प्रदेशे करी फर्श्यो।

सोरठा

३१. 'किहां लोकांत कहाय, प्रदेश धर्मास्तिकाय नों।
शेष प्रदेश थी ताय, एक प्रदेशज नीकल्यो ।।
३२. ते धर्म-प्रदेश करि पेख, अलोक नां आकाश नों।
अग्र भाग जे एक, प्रदेश नैं फर्श्यो अछै ।।
३३. गत वक्र आकाश प्रदेश, ए दोय धर्मास्तिकाय नैं।
प्रदेश करि सुविशेष, फर्श्यो एक आकाश नैं ।।
३४. वलि जे लोकाकाश, दंडक जेह प्रदेश नैं।
आगल अधो विमास, वलि ऊपर धर्म-प्रदेश छै ।।
३५. इम इक आकाश-प्रदेश, तीन धर्म-प्रदेश करि।
फर्शै छै सुविशेष, ए न्याय तीन प्रदेश नों ।।
३६. लोकांत कोणगत जेह, एक आकाश-प्रदेश जे।
इक धर्म-प्रदेश कहेह, अवगाह रह्यो तसु फर्शणा ।।
३७. तथा अन्य वलि एक, धर्म-प्रदेश ऊपर रह्यो।
तथा अधस्तन पेख, ए बिहुं में इक फर्शणा ।।

२९. गोयमा ! सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे,
'सिय पुट्ठे' त्ति लोकमाश्रित्य 'सिय नो पुट्ठे' त्ति अलोकमाश्रित्य (वृ० प० ६११)

३०. जइ पुट्ठे जहण्णपदे एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा, उक्कोसपदे सत्तहिं।

वा.—एवंविधलोकान्तवर्तिना धर्मास्तिकायैकप्रदेशेन शेषधर्मा-स्तिकायप्रदेशेभ्यो निर्गतेनैकोऽग्रभागवर्त्यलोकाका-शप्रदेशः स्पृष्टो वक्रगतस्त्वसौ द्वाभ्यां यस्य चालोका-काशप्रदेशस्याग्रतोऽधस्तादुपरि च धर्मास्तिकाय-प्रदेशाः सन्ति स त्रिभिर्धर्मास्तिकायप्रदेशैः स्पष्टः,

यस्त्वेवं लोकान्ते कोणगतो व्योमप्रदेशोऽसावेकेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन तदवगाढेनान्येन चोपरिवर्तिना-ऽधोवर्तिना वा द्वाभ्यां च दिग्द्वयावस्थिताभ्यां स्पृष्ट इत्येवं चतुर्भिः

यश्चाध उपरि च तथा दिग्द्वये तत्रैव वर्त्तमाने धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स पञ्चभिः

यः पुनरध उपरि च तथा दिक्त्रये तत्रैव च प्रव-र्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स षड्भिः

यश्चाध उपरि च तथा दिक्चतुष्टये तत्रैव च वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स सप्तभि-र्धर्म्मास्तिकायप्रदेशैः स्पृष्टो भवतीति (वृ० प० ६११)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. वलि बिहुं दिशि रै मांय, रह्या धर्म-प्रदेश बे।
ते साथे फर्शाय, इम चिउं प्रदेश करि फर्शणा।।
३९. लोकांत कोणगत जेह, एक आकाश-प्रदेश जे।
इक धर्म-प्रदेश कहेह, अवगाह्यो तसु फर्शणा।।
४०. तथा अन्य वलि एक, धर्म-प्रदेश ऊपर रह्यो।
तथा अधस्तन पेख, ए बेहुं नीं फर्शणा।।
४१. वलि बिहुं दिशि रै मांय, रह्या धर्म-प्रदेश बे।
ते साथे फर्शाय, पंच प्रदेश संघात इम।।
४२. वलि एक आकाश-प्रदेश, त्यां रह्यो धर्म-प्रदेश इक।
ऊपर एक विशेष, एक अधस्तन जाणवो।।
४३. त्रिहुं दिशि मांहे तीन, इम षट धर्म-प्रदेश करि।
फर्शै एम सुचीन, एक आगास-प्रदेश ते।।
४४. उत्कृष्ट सप्त संघात, एक आगास प्रदेश त्यां।
धर्म-प्रदेश विख्यात, अवगाह रह्यो तसु फर्शणा।।
४५. इक तल ऊपर एक, चिउं दिशि तणां प्रदेश चिउं।
धर्म-प्रदेश विशेख, फर्शै सप्त संघात इम'।। (ज० स०)

४६. *एक प्रदेश आकाशास्तिकाय नों, अधर्मास्तिकाय नैं जाण।
प्रदेश करीनैं फर्शवो, इणहीज रे रीत पिछाण।।

४६. एवं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं वि।

४७. एक प्रदेश आगासत्थिकाय नों, आगासत्थिकाय नैं ख्यात।
फर्शै किते प्रदेशे करी? जिन भाखै रे षट संघात।।

४७. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे? छहिं।

सोरठा

४८. इक प्रदेश लोकाकाश, तथा अलोकाकाश नों।
रह्या छहूं दिशि पास, तास संघाते फर्शवो।।

४८. 'छहिं' ति एकस्य लोकाकाशप्रदेशस्यालोकाकाशप्रदेशस्य वा षड्दिग्व्यवस्थितैरेव स्पर्शनात् षड्भिरित्युक्तम् (वृ० प० ६११)

४९. *इक प्रदेश आकाशास्तिकाय नों, जीवास्तिकाय नैं जाण।
फर्शै किते प्रदेशे करी? तब भाखै रे श्री जगभाण।।

४९. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे?

५०. कदाचित फर्शै अछै, ए लोकाकाश-प्रदेश।
तास विवक्षा—वंछना, तिण आश्री रे फर्शै विशेष।।

५०. सिय पुट्ठे
'सिय पुट्ठे' त्ति यद्यसौ लोकाकाशप्रदेशो विवक्षितस्ततः स्पृष्टः (वृ० प० ६११)

५१. कदाचित फर्शै नहीं, अलोक आकाश प्रदेश।
तास विवक्षा—वंछना, कीजै रे तो फर्शै नहिं लेश।।

५१. सिय नो पुट्ठे,
'सिय नो पुट्ठे' त्ति यद्यसावलोकाकाशप्रदेशविशेषस्तदा न स्पृष्टो जीवानां तत्राभावादिति (वृ० प० ६११)

५२. जो फर्शै तो निश्चय थकी, अनंत जीव नां जाण।
अनंते प्रदेशे करी, फर्शै रे प्रगट पहिछाण।।

५२. जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं।

५३. इक प्रदेश आगासत्थिकाय नों, पुद्गलास्तिकाय नैं ख्यात।
प्रदेश करि इम फर्शणा, इमहिज रे अद्धा समय संघात।।

५३. एवं पोग्गलत्थिकायपदेसेहिं वि, अद्धासमएहिं वि। (श० १३/६३)

जीवास्तिकाय के प्रदेशों की स्पर्शना

५४. इक प्रदेश जीवास्तिकाय नों, धर्मास्तिकाय नैं जेह।
केतले प्रदेशे करी, फर्शै रे प्रश्न करेह?

५४. एगे भंते! जीवत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकाय पदेसेहिं पुट्ठे?

---

*लय: रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५. जिन कहै च्यार जघन्यपदे, उत्कृष्ट सात संघात।
धर्मास्ती नें प्रदेशे करी, फर्शै रे तसु न्याय विख्यात।।

५५. जहण्णपदे चउहिं उक्कोसपदे सत्तहिं।

सोरठा

५६. लोकांत खूणे देख, जेह प्रदेश रह्या तिहां।
धर्म-प्रदेशज एक, अवगाह रह्यो तसु फर्शणा।।
५७. ऊपर अथवा हेठ, ए बिहुं मांहै एक है।
बिहुं पासे बे नेठ, ए चिउं जघन्यपदे करी।।
५८. एक आकाश-प्रदेश, तिहां रह्यो इक जीव नों।
एक प्रदेश विशेष, समुद्घात केवल समय।।
५९. उत्कृष्ट सप्त संघात, षट प्रदेश षट दिशि तणां।
जीव-प्रदेश विख्यात, धर्म-प्रदेश इक त्यां रह्यो।।

५६,५७. जघन्यपदे लोकान्तकोणलक्षणे सर्वाल्पत्वात्तत्र स्पर्शकप्रदेशानां चतुर्भिरिति, कथम्?, अध उपरि वा एको द्वौ च दिशोरेकस्तु यत्र जीवप्रदेश एवावगाढ इत्येवं (वृ० प० ६११)
५८. एकश्च जीवास्तिकायप्रदेश एकत्राकाशप्रदेशादौ-केवलिसमुद्घात एव लभ्यत इति, (वृ० प० ६११)
५९. 'उक्कोसपए सत्तहिं' ति पूर्ववत्, (वृ० प० ६११)

६०. *इक प्रदेश जीवास्तिकाय नों, अधर्मास्तिकाय नें ख्यात।
जघन्य च्यार प्रदेशे करी, उत्कृष्ट रे सप्त संघात।।
६१. इक प्रदेश जीवास्तिकाय नों, आकाश-प्रदेश संघात।
सप्त प्रदेश नीं फर्शणा, पूर्ववत रे न्याय विख्यात।।
६२. इक प्रदेश जीवास्तिकाय नों, जीवास्तिकाय नें जाण।
शेष धर्मास्तिकाय तणी परै, कहिवो रे सर्व पिछाण।।

६०. एवं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं वि।

६१. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे? सत्तहिं।

६२. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे? अणंतेहिं। सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। (श० १३/६४)

पुद्गलास्तिकाय के प्रदेशों को स्पर्शना

६३. इक प्रदेश पुद्गलास्तिकाय नों, धर्मास्तिकाय तणेह।
केतलै प्रदेशै करी, फर्शै रे इम प्रश्न करेह।।
६४. जिम जीवास्तिकाय नें विषे कह्यं तिम न्हाल।
कहिवूं तेह इहां सहु, वारू रे न्याय विशाल।।

६३. एगे भंते! पोग्गलत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थि-कायपदेसेहिं पुट्ठे?
६४. एवं जहेव जीवत्थिकायस्स। (श० १३/६५)

सोरठा

६५. अनंतरे प्रत्येक, एक-एक प्रदेश नें।
कही फर्शणा शेख, धर्म प्रमुख प्रदेश नीं।।
६६. हिव आगल आख्यात, दोय प्रदेशिक आदि जे।
खंध तणैं अवदात, देखाड़ै छै फर्शणा।।

६५. धर्मास्तिकायादीनां पुद्गलास्तिकायस्य चैकैकप्रदेशस्य स्पर्शनोक्ता, (वृ० प० ६११)
६६. अथ तस्यैव द्विप्रदेशादिस्कन्धानां तां दर्शयन्नाह— (वृ० प० ६११)

६७. *बे प्रदेश पुद्गलास्तिकाय नां, धर्मास्तिकाय तणेह।
केतले प्रदेशे करी, फर्शै रे इम प्रश्न करेह?
६८. जिन कहै जघन्यपदे करी, षट प्रदेश संघात।
वलि उत्कृष्टपदे करी, द्वादश रे प्रदेश फर्शात।।

६७. दो भंते! पोग्गलत्थिकायपदेसा केवतिएहिं धम्मत्थि-कायपदेसेहिं पुट्ठा?
६८. गोयमा! जहण्णपदे छहिं, उक्कोसपदे बारसहिं

सोरठा

६९. षट प्रदेश संघात, जघन्यपदे तसु न्याय इम।
चूर्णिकार आख्यात, जे लोकांत विषे अछै।।
७०. दोय प्रदेशिक खंध, एक प्रदेश विषे रह्यो।
तेह-प्रदेश[1] प्रबंध, प्रति द्रव्य अवगाहक कह्यो।।
७१. इण नय मत अनुसार, अवगाहक प्रदेश इक।
भिन्नपणां थी धार, फर्शै दोय संघात ते।।

६९,७० 'दो भंते!' इत्यादि, इह चूर्णिकारव्याख्यानमिदं —लोकान्ते द्विप्रदेशिकः स्कन्ध एकप्रदेशसमवगाढः स च प्रतिद्रव्यावगाहं प्रदेशः (वृ० प० ६११)

७१. इति नयमताश्रयणेनावगाहप्रदेशस्यैकस्यापि भिन्नत्वाद द्वाभ्यां स्पृष्टः, (वृ० प० ६११)

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय
१. आकाशास्ति नो प्रदेश।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२. ऊपर अथवा हेठ, ग्रहिवो इक बिहुं मांहिलो।
तेहनैं[१] पिण जे नेठ, बे प्रदेश फर्शवै करी।।
७३. नय मत थकीज जोय, भिन्नपणां करिकै तसु।
वंछचो थकीज सोय, फर्शै बे प्रदेश करि।।

७२,७३. तथा यस्तस्योपर्यधस्ताद्वा प्रदेशस्तस्यापि पुद्गलद्वयस्पर्शनेन नयमतादेव भेदाद् द्वाभ्यां,
(वृ० प० ६११)

७४. अथवा जे बिहुं पास, बे[२] प्रदेश छै तेह पिण।
इक-इक अणु[३] प्रतिफास, मांहोमांहि व्यवहितपणैं।।
७५. जघन्यपदे इम जाण, धर्म-प्रदेशज षट करी।
द्वि प्रदेश खंध माण, फर्शै छै इह रीत सूं।।

७४,७५. तथा पार्श्वप्रदेशावेकैकमणुं स्पृशतः परस्पर-व्यवहितत्वाद् इत्येवं जघन्यपदे षड्भिर्धर्मास्तिकाय-प्रदेशैर्द्व्यणुकस्कन्धः स्पृश्यते, (वृ० प० ६११)

७६. ए नय मत अवलोय, अंगीकार जो नहिं करै।
तदा जघन्य थी जोय, च्यार प्रदेशिक फर्शणा।।
७७. ऊपर तल वा एक, बिहुं पासे बे मध्य इक।
ए विउं फर्शण पेख, लोकांते ए जाणवो।।

७६. नयमतानङ्गीकरणे तु चतुर्भिरेव द्व्यणुकस्य जघन्यतः स्पर्शना स्यादिति (वृ० प० ६११)

७८. इम धर्म-प्रदेशज च्यार, तास संघाते फर्शणा।
इम कह्यो चूर्णिकार, हिव वृत्तिकार निज मत कह्यूं।।

७८. वृत्तिकृता त्वेवमुक्तम्— (वृ० प० ६११)

७९. बे परमाणू पेख, दोय प्रदेश कह्या तसु।
उरै रह्या संग एक, परै रह्या संग एक फुन।।

७९. इह यद्बिन्दुद्वयं तत्परमाणुद्वयमिति मन्तव्यं तत्र चार्वाचीनः परमाणुर्धर्मास्तिकायप्रदेशेनार्वाक्स्थितेन स्पृष्टः, परभागवर्ती च परतः स्थितेन एवं द्वौ,
(वृ० प० ६११)

८०. तथा बे प्रदेश रै मांहि, थाप्या बे परमाणुआ।
तास आगला ताहि, फर्शै धर्म-प्रदेश बे।।
८१. एक संघाते एक, बीजो द्वितीय संघात जे।
इम च्यारूं संपेख, धर्म-प्रदेशज फर्शता।।
८२. अनैं परमाणु दोय, दोय धर्म-प्रदेश नैं।
रह्या अवगाही सोय, तास संघाते फर्शणा।।
८३. कह्यो वृत्ति रै मांय, द्व्यणुक खंध इम जघन्य थी।
षट धर्मास्तिकाय-प्रदेश साथे फर्शणा।।

८०. तथा ययोः प्रदेशयोर्मध्ये परमाणू स्थाप्येते तयोरग्रेतनाभ्यां प्रदेशाभ्यां तौ स्पृष्टौ (वृ० प० ६११)
८१. एकेनैको द्वितीयेन च द्वितीय इति चत्वारः
(वृ० प० ६११)
८२,८३. द्वौ चावगाढत्वादेव स्पृष्टावित्येवं षट्।
(वृ० प० ६११)

वा०—अनैं वृत्तिकार तो इम कह्यो—तत्र उरै वर्त्तमान परमाणुओ उरै रह्या प्रदेश संघाते फर्शै अनैं पेलै पासे रह्यो परमाणुओ पेलै कानी रह्या प्रदेश नैं फर्शै। इम बिहुं पासे बे तथा बे प्रदेश नैं मध्ये परमाणु दोय स्थाप्या। तेहनां आगला दोय प्रदेश करि बिहुं फर्श्यो—एक संघाते एक, बीजो बीजा संघाते। इम च्यार अनैं दोय परमाणुआ बे प्रदेश अवगाही रह्या छै। इम द्व्यणुक स्कंध जघन्यपदे छह धर्मास्तिकाय-प्रदेश फर्शै।

एहनीं स्थापना

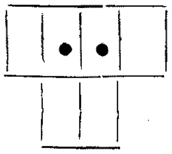

८४. उत्कृष्टपदे विशेष, दोय प्रदेशी खंध ते।
द्वादश धर्म-प्रदेश, तेह संघाते फर्शणा।।

८४. 'उक्कोसपए बारसहिं' ति, कथं?
(वृ० प० ६११)

१. ते आकाशास्ति नां प्रदेश नै।
२. दोय प्रदेश खंध नो इक-इक प्रदेश प्रति।
३. आकाशास्ति रा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८५. बे प्रदेश अवगाह्य, रह्या दोय परमाणुआ।
तास संघात कहाय, फर्श्या धर्म-प्रदेश बे।।

८५. परमाणुद्वयेन द्वौ द्विप्रदेशावगाढत्वात्स्पृष्टौ। (वृ० प० ६११)

८६. दोय नीचला जोय, ऊपरला प्रदेश बे।
दोय पूर्व दिशि होय, बे पश्चिम दिशि में रह्या।।

८७. दक्षिण पासे एक, उत्तर पासे एक वलि।
इम द्वादश सुविशेख, फर्शै धर्म प्रदेश करि।।

८६,८७. द्वौ चाधस्तनौ उपरितनौ च द्वौ पूर्वापरपार्श्वयोश्च द्वौ दक्षिणोत्तरपार्श्वयोश्चैकैक इत्येवमेते द्वादशेति (वृ० प० ६११)

दो परमाणुआ द्वादश प्रदेश फर्शै तेहनीं स्थापना—

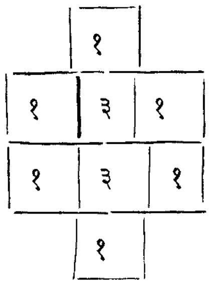

८८. *बे प्रदेश पुद्गल तणां, अधर्म-प्रदेश साथ।
फर्शै षट इम जघन्य थी, उत्कृष्टा रे बार संघात।।

८८. एवं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं वि।

८९. पूछा आकास्तिकाय नीं? जिन कहै बार संघात।
पूरवली पर जाणवो, नहि कहिवी रे जघन्योत्कृष्ट बात।।

८९. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा? बारसहिं 'बारसहिं' ति इह जघन्यपदं नास्ति। (वृ० प० ६११)

सोरठा

९०. लोकांते पिण जोय, जे आकाश-प्रदेश नां।
विद्यमान थी सोय, तिणसूं द्वादश फर्शणा।।

९०. लोकान्तेऽप्याकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वादिति द्वादशभिरित्युक्तं (वृ० प० ६११)

९१. *शेष जेम धर्मास्ति कह्यो, धर्मास्तिकाय संघात।
कहिवो तिणहिज रीत सूं, तेहनूं रे इम अर्थ आख्यात।।

९१. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। (श० १३/६६)

९२. बे प्रदेश पुद्गल तणां, जीवास्तिकाय नैं ख्यात।
किते प्रदेश करि फर्शणा? जिन भाखै रे अनंत संघात।।

९२. दो भंते! पोग्गलत्थिकायप्पएसा केवतिएहिं जीवत्थिकायप्पएसेहिं पुट्ठा? गोयमा! अणंतेहिं। (वृ० प० ६११)

९३. इम बे प्रदेश पुद्गल तणां, पुद्गलास्तिकाय नैं जेह।
अनंते प्रदेशे करी, फर्शै रे इम कहिवूं तेह।।

९३. एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि (वृ० प० ६११)

९४. वलि अद्धा समये करी, फर्शै तेह किवार।
द्वीप अढाई नैं विषे, नहि फर्शै रे समयक्षेत्र नैं बार।।

९४. अद्धासमयैः स्यात् स्पृष्टौ स्यान्न, (वृ० प० ६११)

९५. जो फर्शै तो निश्चय करी, समय अनंत संघात।
पूर्व पाठ भलावियो, तेहनों रे ए अर्थ आख्यात।।

९५. यदि स्पृष्टौ तदा नियमादनन्तैरिति (वृ० प० ६११)

९६. प्रभु! पुद्गलास्तिकाय नां, तीन प्रदेश आख्यात।
कितै धर्मास्तिकाय नैं, फर्शै रे प्रदेश संघात?

९६. तिण्णि भंते! पोग्गलत्थिकायपदेसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा?

९७. जिन कहै जघन्यपदे करी, अष्ट प्रदेशज साथ।
वलि उत्कृष्टपदे करी, सतरै रे प्रदेश संघात।।

९७. जहण्णपदे अट्ठहिं उक्कोसपदे सत्तरसहिं।

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन पुद्गलास्तिकाय नां प्रदेश धर्मास्ति रा प्रदेश जघन्य आठ फर्शे, तेहनी स्थापना—

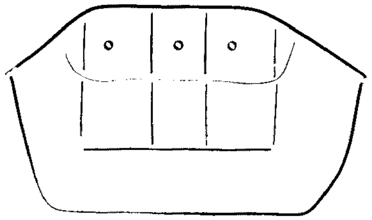

सोरठा

९८. जघन्य अष्ट करि जाण, तास न्याय इम लीजियै।
पूर्व नय मत आण, त्रिधावगाढ प्रदेश ते।।

९९. रह्या इक प्रदेश रै मांय, त्रिण प्रदेश पुद्गल तणां।
इक नैं तीन कहाय, चूर्णिकार नय मत करी।।

१००. ऊपर अथवा हेठ, बिहुं में इक नैं त्रिण कह्या।
बिहुं पासे बे नेठ, इम अठ नय मत चूर्णिकृत।।

१०१. नय मत विण इम चीन, तीन प्रदेश विषे रह्या।
पुद्गल-प्रदेश तीन, त्रिण अवगाढ प्रदेश ते।।

१०२. ऊपर तीन कहाय, तल पिण तीन कहीजियै।
बे पासे बिहुं थाय, इम अठ आख्या वृत्तिकृत।।

१०३. उत्कृष्ट सतरै संघात, नय मत विण तसु न्याय इम।
त्रिण अवगाढ विख्यात, बिहुं पासा नां बिहुं वली।।

१०४. ऊपरला जे तीन, तीन अधोदिशि नां वली।
त्रिण पूर्व दिशि लीन, पश्चिम दिशि नां तीन फुन।।

१०५. दक्षिण दिशि में एक, उत्तर दिशि में एक वली।
इम सतरै करि पेख, तीन प्रदेश विषे रह्यो।।

१०६. इम सर्व जघन्यपद मांहि, वांछित जेह प्रदेश थी।
दुगुणा कहिवा ताहि, दोय रूप अधिका वली।।

१०७. उत्कृष्टपदे विचार, वांछित जेह प्रदेश थी।
पंचगुणां अधिकाय, अधिक रूप बे फर्शियै।।

१०८. *इम अधर्मास्तिकाय नां, प्रदेश नैं संघात।
पूर्ववत जे फर्शणा, कहिवूं रे सहु अवदात।।

१०९. तीन प्रदेश पुद्गल तणां, आकास्तिकाय नैं जाण।
किते प्रदेश करि फर्शणा ? जिन भाखै रे सतरै पिछाण।।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	पुद्गल प्रदेश
४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	जघन्यपदे
७	१२	१७	२२	२७	३२	३०	४२	४७	५२	उत्कृष्टपदे

९८-१००. 'जहन्नपए अट्ठहिं' ति कथं ?
(वृ० प० ६११,६१२)

१०१,१०२. पूर्वोक्तनयमतेनावगाढप्रदेशास्त्रिधा अधस्त-नोऽप्युपरितनोऽपि वा त्रिधा द्वौ पार्श्वतः इत्येवमष्टौ,
(वृ० प० ६१२)

१०६. इह च सर्वत्र जघन्यपदे विवक्षितपरमाणुभ्यो द्विगुणा द्विरूपाधिकाश्च स्पर्शकाः प्रदेशा भवन्ति,
(वृ० प० ६१२)

१०७. उत्कृष्टपदे तु विवक्षितपरमाणुभ्यः पञ्चगुणा द्विरूपाधिकाश्च ते भवन्ति, (वृ० प० ६१२)

१०८. एवं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं वि।

१०९. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा ? सत्तर-सहिं।

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

११०. पुद्गल जे लोकंत, आगासत्थि नां प्रदेश करि।
छहुं दिशि नां फर्शंत, जघन्योत्कृष्ट न ते भणी।।

१११. *शेष सर्व विस्तार जे, जिम धर्मास्तीकाय।
तेह विषे जिम आखियो, कहिवो रे तिमहिज न्याय।।

१११. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स

११२. इम इण आलावे करी, पुद्गल नां पहिछाण।
जाव प्रदेश दशां लगै, कहिवो रे सर्व फर्शाण।।

११२. एवं एएणं गमेणं भाणियव्वा जाव दस,

११३. णवरं इतो विशेष छै, जघन्यपदे सुविशेख।
कह्या पाछिला ते विषे, अधिका रे बे रूप संपेख।।

११३. नवरं—जहण्णपदे दोण्णि पक्खिवियव्वा,

११४. वलि उत्कृष्टपणां विषे, कह्या पाछिला मांय।
पंच अधिक प्रक्षेपवा, कहिवो रे इम सगलै न्याय।।

११४. उक्कोसपदे पंच।

११५. च्यार प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्यपदे दश साथ।
उत्कृष्ट बावीसे करी, फर्शै रे प्रदेश संघात।।

११५. चत्तारि पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे दसहिं, उक्कोसपदे बावीसाए।

११६. पंच प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य बार संघात।
ते उत्कृष्टपदे करी, फर्शै रे सत्तावीस साथ।।

११६. पंच पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे बारसहिं उक्कोसपदे सत्तावीसाए।

११७. छह प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य चवदै साथ।
ते उत्कृष्टपदे करी, फर्शै रे बत्तीस संघात।।

११७. छ पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे चोद्दसहिं, उक्कोसपदे बत्तीसाए।

११८. सप्त प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य सोल रै साथ।
ते उत्कृष्टपदे करी, फर्शै रे सैंतीस संघात।।

११८. सत्त पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे सोलसहिं, उक्कोसपदे सत्ततीसाए।

११९. अष्ट प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य अठार संघात।
ते उत्कृष्टपदे करी, फर्शै रे बंयालीस साथ।।

११९. अट्ठ पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे अट्ठारसहिं, उक्कोसपदे बायालीसाए।

१२०. नव प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य बीस संघात।
ते उत्कृष्टपदे करी, फर्शै रे सैंतालीस साथ।।

१२०. नव पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे वीसाए, उक्कोसपदे सीयालीसाए।

१२१. दश प्रदेश पुद्गल तणां, जघन्य बावीस संघात।
ते उत्कृष्टपदे करि, फर्शै रे बावन साथ।।

१२१. दस पोग्गलत्थिकायस्स पदेसा जहण्णपदे बावीसाए, उक्कोसपदे बावन्नाए।

१२२. ए धर्मास्तिकाय नां, प्रदेश करि फर्शंत।
इम अधर्मास्तिकाय नां, फर्शै रे प्रदेश उदंत।।

१२३. प्रदेश आगासत्थिकाय नां, कहिवा सगलै स्थान।
उत्कृष्ट हीज कह्या तिके, आकाशज रे सगलै विद्यमान।।

१२३. आगासत्थिकायस्स सव्वत्थ उक्कोसगं भाणियव्वं। (श. १३/६७)

१२४. प्रभु! पुद्गलास्तिकाय नां, संख्याता प्रदेश।
कितै धर्म-प्रदेशे करी, फर्शै रे ए प्रश्न विशेष?

१२४. संखेज्जा भंते! पोग्गलत्थिकायपदेसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा?

१२५. जिन कहै जघन्यपदे जिको, संख्याये विचारचो खंध।
दुगुणां प्रदेश करी तसु, अधिका रे बे रूप प्रबंध।।

१२५. जहण्णपदे तेणेव संखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं,

सोरठा

१२६. इहां भावना एह, बीस प्रदेशिक खंध ते।
रह्यो लोकांते तेह, एक आकाश-प्रदेश में।।
१२७. पूर्व नय मत तेह, इक अवगाढ प्रदेश ते।
बीस प्रदेश कहेह, प्रतिद्रव्य अवगाहक थकी।।

१२६,१२७. इह भावना—विंशतिप्रदेशिकः स्कन्धो लोकान्त एकप्रदेशे स्थितः स च नयमतेन विंशत्याऽवगाढप्रदेशैः (वृ० प० ६१२)

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२८. ऊपर अथवा हेठ, बिहुं में एक प्रदेश तं।
पूर्व नय मत नेठ, कहियै बीस प्रदेश तसु ।।
१२९. थया एम चालीस, बे पासा नां बे वली।
इम ए बंयालीस, प्रदेश साथे फर्शणा ।।

१२८,१२९. विंशत्यैव च नयमतेनैवाधस्तनैरुपरितनैर्वा प्रदेशैः द्वाभ्यां च पार्श्वप्रदेशाभ्यां स्पृश्यत इति (वृ० प० ६१२)

१३०. *ते उत्कृष्टपदे जिको, संख्याये विचारचो खंध।
तेहथी पंचगुणां करी, अधिका रे बे रूप प्रबंध ।।

१३०. उक्कोसपदे तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं।

सोरठा

१३१. उत्कृष्ट पदे विशेष, बीस आकाश-प्रदेश में।
रह्या बीस प्रदेश, तिहां धर्म-प्रदेश नीं फर्शणा ।।

१३१. उत्कृष्टपदे तु विंशत्या निरुपचरितैरवगाढप्रदेशैः, (वृ० प० ६१२)

१३२. ऊपर बीस जगीस, बीस अधस्तन करि बलि।
पूर्व दिशि में बीस, पश्चिम दिशि में बीस फुन ।।
१३३. दक्षिण दिशि में एक, इक उत्तर दिशि नैं विषे।
इकसौ दोय अवेख, तास संघाते फर्शणा ।।

१३२,१३३. एवमधस्तनै २० रुपरितनै २० पूर्वापरपार्श्वयोश्च विंशत्या २० द्वाभ्यां च दक्षिणोत्तरपार्श्वस्थिताभ्यां स्पृष्टस्ततश्च विंशतिरूपः संख्याताणुकः स्कन्धः पञ्चगुणया विंशत्या प्रदेशानां प्रदेशद्वयेन च स्पृष्ट इति (वृ० प० ६१२)

१३४. *इम अधर्मास्तिकाय नैं, प्रदेश करि फर्शंत।
कही-धर्म प्रदेश नीं फर्शणा, कहिवो रे तिमज वृतंत ।।

१३४. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं ? एवं चेव।

१३५. कितै आगासत्थिकाय नैं, प्रदेश करि फर्शंत।
इहां जघन्यपद छै नहीं, तिणसूं रे उत्कृष्ट भणंत ।।

१३५. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं ?

१३६. तेही जे संख्याये करी, संख्यात-प्रदेशी खंध।
तेहथी पंच गुणां करी, अधिका रे बे रूप प्रबंध ।।

१३६. तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं।

१३७. कितै जीवास्तिकाय नैं, प्रदेश करी फर्शंत ?
जिन कहै अनंता जीव नां, फर्शै रे प्रदेश अनंत ।।

१३७. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं ? अणंतेहिं।

१३८. कितै पुद्गलास्तिकाय नैं, प्रदेश करी फर्शंत ?
जिन भाखै अनंते करी, फर्शै रे तिण में नहि भ्रंत ।।

१३८. केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपदेसेहिं ? अणंतेहिं।

१३९. कितै अद्धा समय करी ? कदाचित फर्शंत ?
कदाचित फर्शै नहीं, जे फर्शै रे ते समय अनंत ।।

१३९. केवतिएहिं अद्धासमएहिं ? सिय पुट्ठे,, सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं। (श० १३/६८)

१४०. संख्यात प्रदेश पुद्गल तणां, आख्यो तसु विरतंत।
हिवै असंख प्रदेश नां, पूछै रे गोयम गुणवंत ।।
१४१. प्रभु ! पुद्गलास्तिकाय नां, असंख्याता प्रदेश।
कितै धर्म-प्रदेशे करी, फर्शै रे ? ए प्रश्न पूछेस ।।

१४१. असंखेज्जा भंते ! पोग्गलत्थिकायपदेसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा ?

१४२. जिन कहै जघन्यपदे करी, तेहिज असंख प्रदेश।
तेहथी दुगुणा करि वली, अधिका रे बे रूप विशेष ।।

१४२. जहण्णपदे तेणेव असंखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं

१४३. ते उत्कृष्टपदे करी, तेहिज असंख प्रदेश।
तेहथी पंचगुणा करी, अधिका रे बे रूप कहेस ।।

१४३ उक्कोसपदे तेणेव असंखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं।

१४४. कहिवो शेषज थाकतो, संख्यात विषे कह्यु जेम।
जाव अनंत समय करी, फर्शै रे निश्चै तेम ।।

१४४. सेसं जहा संखेज्जाणं जाव नियमं अणंतेहिं। (श. १३/६९)

१४५. प्रभु ! पुद्गलास्तिकाय नां, जेह अनंत प्रदेश।
कितै धर्म-प्रदेशे करी, फर्शै रे ? भाखो प्रभु ! रेस ।।

१४५. अणंता भंते ! पोग्गलत्थिकायपदेसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठा ?

१४६. इम जिम असंख्याता कह्या, तिम अनंत अवलोय।
सहु विस्तार कहीजियै, सूत्रे रे आख्यो सोय ।।

१४६. एवं जहा असंखेज्जा तहा अणंता वि निरवसेसं (श. १३/७०)

***लय : रावण राय आशा अधिक अथाय**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

१४७. वृत्ति विषे इम वाण, असंखेज्ज इत्यादि जे।
षट द्रव्य सूत्र पिछाण, कहिवा तिणहिज रीत सूं।।
१४८. पिण इहां इतो विशेख, जेम जघन्यपद नैं विषे।
औपचारिका सुलेख, अवगाहका प्रदेश जे।।

वा०—पुद्गल नों जेतला प्रदेशियो खंध लोक रै अंत एक आकाशास्ति रा प्रदेश में रह्यो, ते एक आकाश-प्रदेश नैं पूर्वोक्त चूर्णिकार नय नैं मते जेतला पुद्गल खंध नां प्रदेश रह्या छै, तेतला गिणवा। अनैं तेहनैं ऊपर एक प्रदेश तथा हेठे एक प्रदेश यां दोयां मांहिला एक प्रदेश में जेतला पुद्गल खंध नां प्रदेश कह्या, तेतला गिणवा। जिम असंख्यातप्रदेशियो खंध लोकांते एक आकाश-प्रदेश नैं विषे रह्यो ते एक आकाश-प्रदेश नैं असंख्याता प्रदेश गिणवा। अनैं ऊपरलो तथा हेठलो दोयां मांहिला एक प्रदेश नैं असंख्याता गिणवा, ए औपचारिक कह्या, पिण साक्षात नहीं। तिम ही एक प्रदेश में अनंतप्रदेशी खंध रह्यो, तेहनै अनन्त पिण औपचारिक गिणवा, पिण साक्षात—वास्तविक नहीं। केम ? समूचो लोक असंख्य प्रदेशात्मक ही हुवै।

१४९. तिम ही ए अविशेष, ऊपर अथवा हेठला।
उत्कृष्टपदे अशेष, कहिवाए औपचारिका।।
१५०. निरुपचरित निःशेष, अनन्त प्रदेश हुवै नहीं।
लोकाकाश अशेष, असंख्य प्रदेशात्मक हुवै।।

१५१. वलि इह प्रकरणेह, बे गाथा वृद्ध उक्त छै।
तास न्याय हिव जेह, कह्यो वृत्ति में ते सुणो।।
१५२. धर्मास्तीकायादि, तास प्रदेशज आश्रयी।।
जघन्यपदे सुसमाधि, द्विप्रदेशादिक हुवै।।
१५३. जघन्य विषे ते लाधि, दुगुणा बे रूपाधिका।
दोय प्रदेशज आदि, तास फर्शवो किम हुवै ?
१५४. तसु उत्तर इम होय, लोकांते ह्वै जघन्य थी।
तास विषे अवलोय, लोक आश्रयी फर्शणा।।
१५५. तथा स्तंभादि पिछाण, तेहनां अग्रज भाग में।
जघन्य फर्शणा जाण, वृद्धोक्तं आख्यो वृत्तौ[1]।।

अद्धा समय के प्रदेशों की स्पर्शना

१५६. *एक अद्धा समयो प्रभु ! धर्मास्तिकाय तणेह।
कितै प्रदेशे करि फर्शणा ? जिन भाखै रे सप्त गिणेह।।

१४७. 'असंखेज्जा' इत्यादौ षट्सूत्री तथैव। 'अणंतरं भंते !' इत्यादिरपि षट्सूत्री तथैव (वृ० प० ६१२)
१४८. नवरमिह यथा जघन्यपदे औपचारिका अवगाहप्रदेशाः। (वृ० प० ६१२)

१४९. अधस्तना उपरितना वा तथोत्कृष्टपदेऽपि (वृ० प० ६१२)
१५०. नहि निरुपचरिता अनन्ता आकाशप्रदेशा अवगाहतः सन्ति, लोकस्याप्यसंख्यातप्रदेशात्मकत्वादिति। (वृ० प० ६१२)

१५१. इह च प्रकरणे इमे वृद्धोक्तगाथे भवतः (वृ० प० ६१२)
१५२,१५३. "धम्माइपएसेहिं दुपएसाई जहन्नयपयम्मि।
दुगुणदुरूवहिएणं तेणेव कहं नु हु फुसेज्जा ?।। (वृ० प० ६१२)

१५४,१५५. एत्थ पुण जहन्नपयं लोगंते तत्थ लोगमालिहिउं।
फुसणा दावेयव्वा अहवा खंभाइकोडीए।। (वृ० प० ६१२)

१५६. एगे भंते ! अद्धासमए केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? सत्तहिं।

---

१. वृत्ति में वृद्धोक्त दो गाथाओं की संस्कृत व्याख्या जयाचार्य को उपलब्ध हुई, उसे पादटिप्पण में रखा गया है—
धर्मास्तिकायादिप्रदेशानाश्रित्य जघन्यपदं द्विप्रदेशादि भवति ततश्च जघन्य पदे तेनैव द्विरूपाधिकेन द्विगुणादिप्रदेशादयः कथं नु स्पृशेयुः इति प्रश्नः।
उत्तरं—अत्र पुनः जघन्यपदं लोकांते भवति तत्र च लोकमालिख्य स्पर्शना दापयितव्या अथवा स्तंभादिकोट्यां स्तंभाद्यग्रभागे जघन्यपदस्पर्शना दापयितव्या।

*लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

१५७. इहां समय वर्त्तमान, विशिष्ट परमाणू तिको।
रह्यो अढी द्वीप मध्य जान, ग्रहिवो अद्धा समय ते ।।

१५७. इह वर्तमानसमयविशिष्टः समयक्षेत्रमध्यवर्त्ती परमाणुरद्धासमयो ग्राह्यः (वृ० प० ६१२)

१५८. अढी द्वीप रै मांय, रह्यो थको परमाणुओ।
तेहिज इहां गिणाय, समय युक्त छै ते भणी ।।

१५९. इम थाय फर्शणा सात, बीजूं[१] अद्धा समय नैं।
धर्मप्र-देश संघात, सप्त फर्शणा नहिं हुवै ।।

१५९. अन्यथा तस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः सप्तभिः स्पर्शना न स्यात्, (वृ प० ६१२)

१६०. इहां जघन्यपद नांय, द्रव्य विषे उत्कृष्टपद।
सप्त फर्शणा थाय, तेहिज सप्त कहीजियै ।।

१६१. जघन्यपदे लोकांत, तिहां काल नहिं ते भणी।
इहां जघन्य नहिं हुंत, समय अढी द्वीपेज ह्वै ।।

१६०,१६१. इह च जघन्यपदं नास्ति, मनुष्यक्षेत्रमध्यवर्त्तित्वादद्धासमयस्य, जघन्यपदस्य च लोकान्त एव सम्भवादिति, (वृ. प. ६१२)

१६२. इहां सात संघात, फर्शै ते किण रीत सूं ?
तास न्याय आख्यात, कहियै छै ते सांभलो ।।

१६२. तत्र सप्तभिरिति, कथम् ? (वृ० प० ६१२)

१६३. अढी द्वीप मध्य एस, रह्यो विशिष्ट परमाणुओ।
एक धर्म-प्रदेश, ते प्रति अवगाही रह्यो ।।

१६४. इक प्रदेश इम हुंत तेहनैं छहुं दिशि नैं विषे।
षट प्रदेश फर्शंत, सप्त करी इम फर्शणा ।।

१६३,१६४. अद्धासमयविशिष्टं परमाणुद्रव्यमेकत्र धर्मास्तिकायप्रदेशेऽवगाढमन्ये च तस्य षट्सु दिक्ष्विति सप्तेति, (वृ० प० ६१२)

१६५. *एक अद्धा समयो प्रभु ! अधर्मास्तिकाय तणेह।
कितै प्रदेश करि फर्शणा ? जिन भाखै रे सप्त गिणेह ।।

१६५. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? एवं चेव,

१६६. एक अद्धा समयो प्रभु ! आगासत्थिकाय तणेह।
कितै प्रदेश करि फर्शणा ? जिन भाखै रे सप्त गिणेह ।।

१६६. एवं आगासत्थिकाएहिं वि।

१६७. एक अद्धा समयो प्रभु ! जीवास्तिकाय तणेह।
कितै प्रदेश करि फर्शणा ? जिन भाखै रे अनंत गिणेह ।।

१६७. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ? अणंतेहिं।

सोरठा

१६८. एक प्रदेश रै मांय, जे अनंत जीवां तणां।
अनंत प्रदेशज पाय, तिणसूं अनंत फर्शणा ।।

१६८. जीवास्तिकायप्रदेशैश्चानन्तैरेकप्रदेशेऽपि तेषामनन्तत्वात्, (वृ० प० ६१२)

१६९. *एक अद्धा समयो प्रभु ! पुद्गलास्तिकाय तणेह।
कितै प्रदेश करि फर्शणा ? जिन भाखै रे अनंत गिणेह ।।

१६९. एकोऽद्धासमयोऽनन्तैः पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरद्धासमयैश्च स्पृष्ट इति, (वृ० प० ६१२)

सोरठा

१७०. अद्धा समयो एक, विशिष्ट परमाणू विषे।
वर्त्तै तेह विशेख, समय कह्यो तसु ते भणी ।।

१७०. अद्धासमयविशिष्टमणुद्रव्यमद्धासमयः, (वृ० प० ६१२)

१७१. इक पुद्गल द्रव्य स्थान, अथवा तसु पासे वली।
पुद्गल अनंत पिछाण, अनंत तणां सद्भाव थो ।।

१७१. एकद्रव्यस्य स्थाने पार्श्वतश्चानन्तानां पुद्गलानां सद्भावात् (वृ० प० ६१२)

१७२. *एक अद्धा समयो प्रभु ! कितै अद्धा समयेण।
फर्शै छै भगवंत जी ? जिन भाखै रे अनंत कहेण ।।

१७२. ....अद्धासमएहिं। (श० १३।७१)

---

१. अढाई द्वीप बाहिरलो परमाणु समय युक्त नहीं, ते भणी धर्मास्ति नां एक प्रदेश संघात पिण फर्शणा नहिं हुवै।

लय* : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

१७३. अद्धा समय कहेह, विशिष्ट अनंत अणु द्रव्य नैं।
अद्धा समयपणेह, तसु वांछितपणां थकी ।।
१७४. अद्धा समयज एक, तसु स्थाने वा पास वलि।
अनंत अणु द्रव्य पेख, तसु सद्भाव थकी वृत्तौ ।।
१७५. 'टबा विषे इम जेह, विशिष्ट अणु द्रव्य अंत नै।
अद्धा समयपणेह, वांछितपणां थकी कह्यु ।।
१७६. ते समय अनंता सोय, जे एक समय नैं ठाम छै।
अथवा पासे जोय, गयै काल अनंता वरतिया।।
१७७. तथा अनागत काल, अनंत वर्तस्यै ते भणी।
तसु सद्भाव निहाल, एहवो कह्यो टबा मझै'।। (ज० स०)
१७८. *शत तेरम देश चौथो कह्यो, दोयसौ अठंतरमी ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' रे हरष विशाल ।।

१७३,१७४. तथाऽद्धासमयैरनन्तैरसौ स्पृश्यते अद्धासमय-विशिष्टानामनन्तानामप्यणुद्रव्याणामद्धासमयत्वेन विवक्षितत्वात तेषां च तस्य स्थाने तत्पार्श्वतश्च सद्भावादिति। (वृ० प० ६१२)

ढाल : २७९

धर्मास्तिकाय आदि की परस्पर स्पर्शना

दूहा

१. धर्मास्तीकायादि नीं, प्रदेश थकी विमास।
पूर्वे आखी फर्शणा, द्रव्य थकी हिव फास।।
२. समस्त धर्मास्तिकाय प्रभु! अन्य धर्मास्तिकाय।
तास कितैज प्रदेश करि, फर्शै इम पूछाय?
३. जिन कहै एक हि साथ पिण, फर्शै नहींज लेस।
सहु धर्मास्ती पूछवै, नहिं अन्य धर्म-प्रदेश।।

४. कितै अधर्मास्तिकाय नैं, प्रदेश करि फर्शंत?
जिन कहै असंख प्रदेश करि, फर्शै एह अत्यंत।।
५. अंतर रहित रह्या अछै, धर्म-प्रदेश अशेष।
तसु मध्योज अछै सही, असंख अधर्म-प्रदेश।।

६. कितै आगासत्थिकाय नैं, प्रदेश करि फर्शेह?
जिन कहै असंख प्रदेश करि, फर्शै अछैज एह।।
७. असंखेज्ज प्रदेश छै, लोकाकाश प्रमाण।
ए धर्मास्तिकाय नैं, फर्शै छै इम जाण।।

१. धर्मास्तिकायादीनां प्रदेशतः स्पर्शनोक्ताऽथ द्रव्यतस्तामाह— (वृ० प० ६१२)
२. धम्मत्थिकाए णं भंते! केवतिएहिं धम्मत्थिकाय-पदेसेहिं पुट्ठे?
३. 'नत्थि एक्केण' वि।
'नत्थि एगेणवि' त्ति सकलस्य धर्मास्तिकायद्रव्यस्य प्रश्नितत्वात् तद्व्यतिरिक्तस्य च धर्मास्तिकायप्रदेश-स्याभावादुक्तं नास्ति। (वृ० प० ६१२,६१३)
४. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं? असंखेज्जेहिं।
५. धर्मास्तिकायप्रदेशानन्तर एव व्यवस्थितत्वादधर्मास्ति-कायसम्बन्धिनामसंख्यातानामपि प्रदेशानामिति (वृ० प० ६१३)
६. केवतिएहिं आगासत्थिकायपदेसेहिं? असंखेज्जेहिं।
७. असंख्येयप्रदेशस्वरूपलोकाकाशप्रमाणत्वाद्धर्मास्ति-कायस्य (वृ. प. ६१३)

लय : रावण राय आशा अधिक अथाय

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. कितै जीव-प्रदेश करि, फर्शै छै प्रभु ! तास ?
जिन कहै अनंत प्रदेश करि, धर्मास्ती नैं फास ।।

९. जीव अनंता तेहनां, अनंत प्रदेश कहाय।
ते धर्मास्तिकाय नैं, व्यापी रह्या ज ताय ।।

१०. कितै प्रभु ! पुद्गल तणैं, प्रदेश करि फर्शेह ?
जिन कहै अनंत प्रदेश करि, जीव तणी पर एह ।।

११. कितै अद्धा समये करी, फर्शै छै प्रभु ! ताहि !
जिन भाखै फर्शै कदा, समयक्षेत्र रै मांहि ।।

१२. कदाचित फर्शै नहीं, द्वीप अढाई बार।
जो फर्शै तो नियम थी, अनंत संघात विचार ।।

*हूं बलिहारी आप री, जयकारी तुझ ज्ञान हो, प्रभुजी !
वाण सुधारस तुम तणी, जयकारी तुझ ध्यान हो, प्रभुजी ! [ध्रुपदं]

१३. अधर्मास्तिकाय ते, कितै धर्म-प्रदेश हो, प्रभुजी !
तिण करिनैं फर्शै अछै, ? गोयमा प्रश्न विशेष हो, प्रभुजी !

१४. जिन भाखै सुण गोयमा ! असंख प्रदेश संघात हो, गोयम !
फर्शै छै तसु भावना, पूरव पर अवदात हो, गोयम !

१५. कितै अधर्मास्तिकाय नैं, प्रदेश करि फर्शात हो, प्रभुजी !
जिन कहै इक ही संघात जे, फर्शै नहि तिलमात हो, गोयम !

१६. शेष सहु विस्तार जे, धर्मास्तिकाय जेम हो, गोयम !
अधर्मास्तिकाय नां, षट आलावा एम हो, गोयम !

१७. आकाशास्तिकाय नां, षट आलावा जाण हो, गोयम !
वलि जीवास्तिकाय नां, षट आलावा पिछाण हो, गोयम !

१८. पुद्गल अथिकाय नां, आलावा षट एम हो, गोयम !
अद्धा समय तणां वली, आलावा षट तेम हो, गोयम !

१९. इम इण आलावे करी, सगलाई पहिछाण हो, गोयम !
स्व स्थानक कहिवा नहीं, इक पिण फर्शणा जाण हो, गोयम !

२०. पर स्थानक त्रिहुं आदि जे, धर्म अधर्म आकास हो, गोयम !
ए तीनूं सूत्र नैं विषे, असंख प्रदेश करि फास हो, गोयम !

२१. जीवास्ति पुद्गल अद्धा, पछला सूत्र ए तीन हो, गोयम !
तास विषे फर्शै अछै, अनंत प्रदेश ए चीन हो, गोयम !

२२. सूत्र आकाश विषे इहां, कह्यो एतलो विशेष हो, गोयम !
आख्यो अर्थ विषे तिको, कहियै न्याय अशेष हो, गोयम !

२३. आगासत्थिकाय हे प्रभु ! कितलै धर्म-प्रदेश हो, प्रभुजी !
तेह संघाते फर्शणा ? गोयम प्रश्न अशेष हो, प्रभुजी !

२४. जिन भाखै फर्शै कदा, कदाचित न फर्शात हो, गोयम !
फर्शै तो निश्चै करी, असंख प्रदेश संघात हो, गोयम !

२५. कहिवूं इणहिज रीत सूं, अधर्मास्तिकाय हो, गोयम !
यावत अद्धा समय नां, सूत्र लगै कहिवाय हो, गोयम !

८. केवतिएहिं जीवत्थिकायपदेसेहिं ? अणंतेहिं ।

९. जीवपुद्गलप्रदेशैस्तु धर्मास्तिकायोऽनन्तैः स्पृष्टः, तद्व्याप्त्या धर्मास्तिकायस्यावस्थितत्वात्तेषां चानन्तत्वात् (वृ० प० ६१३)

१०. केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपदेसेहिं ? अणंतेहिं ।

११. केवतिएहिं अद्धासमएहिं ? सिय पुट्ठे

१२. सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमा अणंतेहिं ।
(श. १३/७२)

१३. अधम्मत्थिकाए णं भंते ! केवतिएहिं धम्मत्थिकायपदेसेहिं पुट्ठे ?

१४. असंखेज्जेहिं ।

१५. केवतिएहिं अधम्मत्थिकायपदेसेहिं ? नत्थि एक्केण वि

१६-१८ सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स

१९. एवं एएणं गमएणं सव्वे वि सट्ठाणए नत्थि एक्केण वि पुट्ठा

२०. परट्ठाणए आदिल्लएहिं तिहिं असंखेज्जेहिं भाणियव्वं

२१. पच्छिल्लएसु तिसु अणंता भाणियव्वा

२२. इह चाकाशसूत्रेऽयं विशेषो द्रष्टव्यः—
(वृ० प० ६१३)

२३,२४. आकाशास्तिकायो धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः स्पृष्टश्चास्पृष्टश्च, तत्र यः स्पृष्टः सोऽसंख्येयैर्धर्माधर्मास्तिकाययोः प्रदेशैर्जीवास्तिकायादीनां त्वनन्तैरिति (वृ० प० ६१३)

२५. जाव अद्धासमयो त्ति
'जाव अद्धासमओ' त्ति अद्धासमयसूत्रं यावत् सूत्राणि वाच्यानीत्यर्थः (वृ० प० ६१३)

---

*लय : सीता ओलखावै सोकां भणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

२६. धुर पद पंच पूछेस, अद्धा समयो छै तिको।
किते धर्म-प्रदेश, कै अधर्म करि फर्शणा ?

२७. किते आकाश-प्रदेश, किते जीव-प्रदेश करि।
पुद्गल नां पूछेस, किते प्रदेश करि फर्शणा ?

२८. जाव शब्द में तास, पुद्गल लग जे सूत्र है।
किते समय करि फाश, सूत्र छठो कहियै हिवै ॥

२६-२८. 'जाव केवइएहिं' इत्यादौ यावत्करणादद्धासमय-सूत्रे आद्यं पदपञ्चकं सूचितं षष्ठं तु लिखितमेवास्ते (वृ० प० ६१३)

२९. *जाव किते अद्धा समय करि, फर्शे छै भगवान हो ? प्रभुजी !
जिन कहै इक पिण समय करि, नहीं तास फर्शाण हो, गोयम !

२९. जाव केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ? नत्थि एक्केण वि। (श० १३/७३)

सोरठा

३०. वृत्ति विषे इम न्याय, अद्धा समय तणोज जे।
उपचय नहिं छै ताय, एक समय नां भाव थी ॥

३१. समय अतीत पिछाण, ते तो विणठो सर्वथा।
समय अनागत जाण, ते अणऊपजवै करी ॥

३२. समय जिको वर्त्तमान, तेह थकी जे समय अन्य।
तास संघाते जाण, नहीं फर्शणा इम वृत्तौ ॥

३०. तत्र तु 'नत्थि एक्केणवि' त्ति निरुपचरितस्याद्धा-समयस्यैकस्यैव भावात् (वृ० प० ६१३)

३१,३२. अतीतानागतसमययोश्च विनष्टानुत्पन्नत्वे-नासत्त्वान्न समयान्तरेण स्पृष्टताऽस्तीति। (वृ० प० ६१३)

अवगाहना द्वार

३३. *प्रभु ! धर्मास्तिकाय नों, रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
किता धर्म-प्रदेश त्यां ? जिन भाखै सुविशेष हो, गोयम !

३३. जत्थ णं भंते ! एगे धम्मत्थिकायपदेसे ओगाढे, तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?

३४. जिन कहै धर्म-प्रदेश ज्यां, रह्यो एक सुविशेख हो, गोयम !
अन्य धर्मास्तिकाय नों, रह्यो प्रदेश न एक हो, गोयम !

३४. नत्थि एक्को वि

३५. किता अधर्म-प्रदेश त्यां ? जिन भाखै सुविशेष हो, गोयम !
एक धर्म-प्रदेश त्यां, एक अधर्म-प्रदेश हो, गोयम !

३५. केवतिया अधम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ? एक्को।

३६. किता आकाश-प्रदेश त्यां ? जिन भाखै सुविशेष हो, गोयम !
एक धर्म-प्रदेश त्यां, एक आकाश-प्रदेश हो, गोयम !

३६. केवतिया आगासत्थिकायपदेसा ओगाढा ? एक्को।

३७. किता जीवास्तिकाय नां, प्रदेश त्यां भगवंत हो ? प्रभुजी !
जिन कहै अनंत जीवां तणां, तिहां प्रदेश अनंत हो, गोयम !

३७. केवतिया जीवत्थिकायपदेसा ओगाढा ? अणंता।

३८. किता पुद्गलास्तिकाय नां ? जिन कहै अनंत कहेस हो, गोयम !
इक-इक धर्म-प्रदेश त्यां, पुद्गल अनंत प्रदेश हो, गोयम !

३८. केवतिया पोग्गलत्थिकायपदेसा ओगाढा ? अणंता।

३९. किता अद्धा समया तिहां ? तब भाखै जिनराय हो, गोयम !
कदाचित अवगाहिया, कदाचित नहिं अवगाय हो, गोयम !

३९. केवतिया अद्धासमया ओगाढा ? सिय ओगाढा, सिय नो ओगाढा

४०. जो अवगाह्या छै तिके, मनुष्यक्षेत्र रै मांय हो, गोयम !
अनंत समय अवगाहिया, पूरवली पर न्याय हो, गोयम !

४०. जइ ओगाढा अणंता। (श. १३/७४)
'अणंता' त्ति, अद्धासमयास्तु मनुष्यलोक एव सन्ति न परतोऽतो धर्मास्तिकायप्रदेशे तेषामवगाहोऽस्ति नास्ति च, यत्रास्ति तत्रानन्तानां भावना तु प्राग्वत्। (वृ० प० ६१४)

सोरठा

४१. इक-इक धर्म-प्रदेश, पुद्गल द्रव्य अनंत त्यां।
समय एक वर्त्तेस, कह्या अनंता एक नें ॥

*लय : सीता ओलखावै सोकां भणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. *प्रभु ! एक अधर्मास्तिकाय नों, रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ? जिन कहै एक कहेस हो, गोयम !

४३. प्रभु ! अधर्मास्तिकाय नों, रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
अन्य अधर्मास्ति तणां, किता प्रदेश कहेस हो, प्रभुजी !

४४. जिन कहै इक पिण नहिं तिहां, अधर्मास्तिकाय हो, गोयम !
इकहिज छै दूजी नथी, ते माटै न कहाय हो, गोयम !

४५. शेष थाकतो ते सहु, धर्म विषे कह्यु जेम हो, गोयम !
तेम अधर्मास्ति विषे, कहिवूं सगलूं एम हो, गोयम !

४६. प्रभु ! एक आगासत्थिकाय नुं, रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ? अवगाह्या सुविशेष हो, प्रभुजी !

४७. जिन कहै अवगाह्यु कदा, लोकाकाशे तास हो, गोयम !
कदाचित न अवगाहियो, अलोक नें आकाश हो, गोयम !

४८. जो अवगाह्यो तो तिहां, एक प्रदेश कहेस हो, गोयम !
एक आकाश-प्रदेश त्यां, इक ही धर्म-प्रदेश हो, गोयम !

४९. एम अधर्मास्ति तणो, प्रदेश कहिवूं अशेष हो, गोयम !
इक प्रदेश लोकाकाश नों, त्यां एक अधर्म-प्रदेश हो, गोयम !

५०. किता आकाश-प्रदेश त्यां ?
जिन कहै इक पिण नांय हो, गोयम !
आगासत्थिकाय एक छै, दूजी नहिं कहिवाय हो, गोयम !

५१. किता जीवास्तिकाय नां, प्रदेश त्यां अवगाहि हो, प्रभुजी !
जिन कहै अवगाह्या कदा, कदाचित रह्या नांहि हो, गोयम !

५२. जो अवगाह्या तो अनंत है, लोकाकाशे कहेस हो, गोयम !
तिहां अनंत जीवां तणां, रह्या अनंत प्रदेश हो, गोयम !

५३. इम यावत अद्धा समय जे, त्यां लग कहिवा एह हो, गोयम !
पुद्गल नें अद्धा समय जे, तिमज अनंत कहेह हो, गोयम !

५४. जीवास्तिकाय नों प्रभु ! ज्यां रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ? जिन कहै एक कहेस हो, गोयम !

५५. अधर्मास्तिकाय नों, प्रदेश इम कहिवाय हो, गोयम !
आकाशास्तिकाय नों, प्रदेश पिण इम ताय हो, गोयम !

५६. जीव-प्रदेश किता तिहां ? जिन भाखै सुण संत हो, गोयम !
ज्यां इक जीव-प्रदेश त्यां, अनंत जीवां रा अनंत हो, गोयम !

५७. शेष धर्मास्ति विषे कह्यो, कहिवो तेम उदंत हो, गोयम !
ज्यां इक जीव-प्रदेश त्यां, पुद्गल समय अनंत हो, गोयम !

५८. प्रभु ! पुद्गलास्तिकाय नों, ज्यां रह्यो एक प्रदेश हो, प्रभुजी !
त्यां धर्मास्तिकाय नां, किता प्रदेश कहेस हो ? प्रभुजी !

५९. जिम जीव-प्रदेश विषे कह्यु,
तिम पुद्गल नों अशेख हो, गोयम !
इक प्रदेश पुद्गल तणो, धर्म-प्रदेश त्यां एक हो, गोयम !

*लय : सीता ओलखावै सोकां भणी

४२. जत्थ णं भंते ! एगे अधम्मत्थिकायपदेसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
एक्को ।

४३. केवतिया अधम्मत्थिकायपदेसा ?

४४. नत्थि एक्को वि

४५. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स । (श० १३/७५)

४६. जत्थ णं भंते ! एगे आगासत्थिकायपदेसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?

४७. सिय ओगाढा, सिय नो ओगाढा
'सिय ओगाढा सिय नो ओगाढ' त्ति लोकालोकरूपत्वादाकाशस्य लोकाकाशेऽवगाढा अलोकाकाशे तु न तदभावात् । (वृ० प० ६१४)

४८. जइ ओगाढा एक्को

४९. एवं अधम्मत्थिकायपदेसा वि ।

५०. केवतिया आगासत्थिकायपदेसा ? नत्थि एक्को वि ।

५१. केवतिया जीवत्थिकायपदेसा ? सिय ओगाढा, सिय नो ओगाढा

५२. जइ ओगाढा अणंता

५३. एवं जाव अद्धासमया । (श. १३।७६)

५४. जत्थ णं भंते ! एगे जीवत्थिकायपदेसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
एक्को

५५. एवं अधम्मत्थिकायपदेसा वि, एवं आगासत्थिकायपदेसा वि ।

५६. केवतिया जीवत्थिकायपदेसा ? अणंता ।

५७. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स । (श. १३।७७)

५८. जत्थ णं भंते ! एगे पोग्गलत्थिकायपदेसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?

५९. एवं जहा जीवत्थिकायपदेसे तहेव निरवसेसं ।
(श. १३।७८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६०. एक अधर्म-प्रदेश छै, एक आकाश-प्रदेश हो, गोयम !
अनंत प्रदेश जीवां तणां, समय अनंता कहेस हो, गोयम !
६१. जिहां प्रभुजी ! पुद्गल तणां, अवगाह्या बे प्रदेश हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ? उत्तर देवै जिनेश हो, गोयम !
६२. एक धर्म-प्रदेश त्यां, कदाचित तिहां पाय हो, गोयम !
कदा धर्म-प्रदेश बे, निसुणो तेहनों न्याय हो, गोयम !

६१. जत्थ णं भंते ! दो पोग्गलत्थिकायदेसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
६२. सिय एक्को सिय दोण्णि

सोरठा

६३. रह्यो एक आकाश-प्रदेश, दोय प्रदेशिक खंध जे।
धर्म-प्रदेश विशेष, एकहीज पावै तिहां ।।
६४. रह्यो दोय आकाश प्रदेश, दोय प्रदेशिक खंध जे।
धर्म-प्रदेश विशेष, तिहां दोय कहियै तदा ।।
६५. *इम अधर्मास्तिकाय पिण, आगासत्थि पिण एम हो, गोयम !
पुद्गल नां बे प्रदेश त्यां, एक कदा बे तेम हो, गोयम !

६३. यदैकत्राकाशप्रदेशे द्व्यणुकः स्कन्धोऽवगाढः स्यात्तदा तत्र धर्मास्तिकायप्रदेश एक एव (वृ. प. ६१४)
६४. यदा तु द्वयोराकाशप्रदेशयोरसाववगाढः स्यात्तदा तत्र द्वौ धर्मप्रदेशाववगाढौ स्यातामिति (वृ. प. ६१४)
६५. एवं अधम्मत्थिकायस्स वि, एवं आगासत्थिकायस्स वि
एवमवगाहनानुसारेणाधर्मास्तिकायाकाशास्तिकाययोरपि स्यादेकः स्याद्द्वाविति भावनीयम्
(वृ. प. ६१४)

६६. जंतु[1] पुद्गल समय जे, ए तीनूं रह्या शेष हो, गोयम !
धर्म-प्रदेश विषे कह्यो, कहिवो तिम संपेख हो, गोयम !
६७. एक धर्म-प्रदेश त्यां, जीव-प्रदेश अनंत हो, गोयम !
पुद्गल नैं अद्धा समय जे, जेम अनंत कहंत हो, गोयम !
६८. तिम बे प्रदेश पुद्गल तणां, अवगाह्या जे स्थान हो, गोयम !
ते स्थानक त्रिहुं अनंत छै, जीव प्रदेशादि जान हो, गोयम !
६९. पुद्गलास्तिकाय नां प्रभु ! तीन प्रदेश पिछाण हो, प्रभुजी !
जे स्थानक अवगाहिया, त्यां धर्म-प्रदेशके जाण हो, प्रभुजी !
७०. जिन कहै एक कदा तिहां, कदाचित बे प्रदेश हो, गोयम !
तीन प्रदेश हुवै कदा, धर्मास्ति नां कहेस हो, गोयम !

६६-६८. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। (श. १३।७९)
'सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स' त्ति शेषमित्युक्तापेक्षया जीवास्तिकायपुद्गलास्तिकायाद्धासमयलक्षणं त्रयं यथा धर्मास्तिकायप्रदेशवक्तव्यतायामुक्तं तथा पुद्गलप्रदेशद्वयवक्तव्यतायामपि, पुद्गलप्रदेशद्वयस्थाने तदीया अनन्ताः प्रदेशा अवगाढा इत्यर्थः। (वृ. प. ६१४)
६९. जत्थ णं भंते ! तिण्णि पोग्गलत्थिकायपदेसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
७०. सिय एक्को, सिय दोण्णि, सिय तिण्णि।

सोरठा

७१. रह्यो एक आकाश-प्रदेश, तीन प्रदेशिक खंध जे।
धर्म-प्रदेश विशेष, एकहीज पावै तदा ।।
७२. रह्यो दोय आकास-प्रदेश, तीन प्रदेशिक खंध जे।
धर्म-प्रदेश विशेष, तिहां दोय कहियै तदा ।।
७३. रह्यो तीन आकाश-प्रदेश, तीन प्रदेशिक खंध जे।
धर्म-प्रदेश विशेष, तिहां तीन कहियै तदा ।।
७४. *इम अधर्मास्तिकाय नां, आगासत्थि पिण एम हो, गोयम !
धर्म-प्रदेश इक बे त्रिण कह्या, अधर्म आकाश तेम हो, गोयम !
७५. शेष जीव पुद्गल तणां, किता प्रदेश ते स्थान हो, प्रभुजी !
अद्धा समय किता वली ? ए त्रिहुं सूत्र पिछाण हो, प्रभुजी !
७६. जिम दोय प्रदेश पुद्गल तणां, अवगाह्या ते ठाम हो, गोयम !
पुद्गल जीव समय त्रिहुं, कह्या अनंता ताम हो, गोयम !

७१. यदा त्रयोऽप्यणव एकत्रावगाढास्तदा तत्रैको धर्मास्तिकायप्रदेशोऽवगाढः। (वृ. प. ६१५)
७२. यदा तु द्वयोस्तदा द्वाववगाढौ (वृ. प. ६१५)
७३. यदा तु त्रिषु तदा त्रय इति (वृ. प. ६१५)
७४. एवं अधम्मत्थिकायस्स वि, एवं आगासत्थिकायस्स वि।
७५,७६. सेसं जहेव दोण्हं
'सेसं जहेव दोण्हं' ति 'शेषं' जीवपुद्गलाद्धासमयाश्रितं सूत्रत्रयं यथैव द्वयोः पुद्गलप्रदेशयोरवगाहचिन्तायामधीतं तथैव पुद्गलप्रदेशत्रयचिन्तायामप्यध्येयं,
(वृ. प. ६१५)

---

*लय : सीता ओलखावै सोकां भणी

१. जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७. तिम तीन प्रदेश पुद्गल तणां,
त्यां जीव-प्रदेश अनंत हो, गोयम !
अनंता प्रदेश पुद्गल तणां, समय अनंता हुंत हो, गोयम !
७८. प्रदेश इक-इक इह विधे, बधारवो सुविशेष हो, गोयम !
आदि त्रिहुं अस्तिकाय नां, इक-इक वृद्धि प्रदेश हो, गोयम !
७९. जिम पुद्गल तीन प्रदेश त्यां, धर्म अधर्म आकास हो, गोयम !
ए त्रिहुं नां प्रदेश नीं कही, इक-इक वृद्धि विमास हो, गोयम !
८०. इम च्यार प्रदेश पुद्गल तणां,
आदि रह्या ते स्थान हो, गोयम !
एक-एक त्यां बधारवो, कहियै तेह सुजान हो, गोयम !
८१. प्रभु ! च्यार प्रदेश पुद्गल तणां, अवगाह्या ते ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म अधर्म आकास नां, किता प्रदेशज पाम हो ? प्रभुजी !

८२. जिन कहै एक हुवै कदा, कदा दोय कदा तीन हो, गोयम !
कदाचित चिउं प्रदेश ह्वै, पूरवली पर चीन हो, गोयम !
८३. शेष जीव पुद्गल तणां, किता प्रदेश ते स्थान हो, प्रभुजी !
अद्धा समय किता वली ? ए त्रिहुं सूत्र पिछान हो, प्रभुजी !
८४. जिम दोय प्रदेश पुद्गल तणां, अवगाह्या ते ठाम हो, गोयम !
पुद्गल जीव समय त्रिहुं, कह्या अनंता ताम हो, गोयम !

८५. चिउं आदि प्रदेश पुद्गल तणां,
त्यां जीव-प्रदेश अनंत हो, गोयम !
अनंत प्रदेश पुद्गल तणां, समय अनंता हुंत हो, गोयम !
८६. प्रभु ! च्यार प्रदेश पुद्गल तणां,
अवगाह्या ते ठाम हो, प्रभुजी !
त्यां जीव-प्रदेश रह्या किता ?
अनंत कहै जिन स्वाम हो, गोयम !
८७. अनंत प्रदेश पुद्गल तणां, समय अनंता पाम हो, गोयम !
कहिवा पूरवली परै, वारू विधि अभिराम हो, गोयम !
८८. यावत दश पुद्गल तणां, अवगाह्या जे प्रदेश हो, प्रभुजी !
त्यां धर्म अधर्म आकाश नां, किता प्रदेश कहेस हो, प्रभुजी !
८९. जिन कहै एक हुवै कदा, कदा दोय कदा तीन हो, गोयम !
जाव कदाचित दश हुवै, शेष अनंता चीन हो, गोयम !
९०. प्रभु ! संख प्रदेश पुद्गल तणां, अवगाह्या जे ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म अधर्म आकाश नां, किता प्रदेशज पाम हो, प्रभुजी !
९१. जिन कहै एक हुवै कदा, कदा दोय कदा तीन हो, गोयम !
जाव कदाचित दश हुवै, कदा संख्याता चीन हो, गोयम !
९२. प्रभु ! असंख प्रदेश पुद्गल तणां,
अवगाह्या जे ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म अधर्म आकाश नां, किता प्रदेशज पाम हो, प्रभुजी !
९३. जिन कहै एक हुवै कदा, कदा दोय कदा तीन हो, गोयम !
जाव कदाचित संख ह्वै, कदा असंख्याता चीन हो, गोयम !

७७. पुद्गलप्रदेशत्रयस्थानेऽनन्ता जीवप्रदेशा अवगाढा इत्येवमध्येयमित्यर्थः। (वृ. प. ६१५)

७८. एवं एक्केक्को वड्ढियव्वो पदेसो आइल्लएहिं तिहिं अत्थिकाएहिं

७९. यथा पुद्गलप्रदेशत्रयावगाहचिन्तायां धर्मास्तिकायादि-सूत्रत्रये एकैकः प्रदेशो वृद्धिं नीतः। (वृ. प. ६१५)

८०. एवं पुद्गलप्रदेशचतुष्टयाद्यवगाहचिन्तायामप्येकैक-स्तत्र वर्द्धनीयः। (वृ. प. ६१५)

८१. जत्थ णं भंते ! चत्तारि पुग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवइया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ? (वृ. प. ६१५)

८२. सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि सिय चत्तारि इत्यादि, भावना चास्य प्रागिव (वृ. प. ६१५)

८३,८४. सेसेहिं जहेव दोण्हं
'सेसेहिं जहेव दोण्हं' ति शेषेषु जीवास्तिकायादिषु त्रिषु सूत्रेषु पुद्गलप्रदेशचतुष्टयचिन्तायां तथा वाच्यं यथा तेष्वेव पुद्गलप्रदेशद्वयावगाहचिन्तायामुक्तं। (वृ. प. ६१५)

८६. जत्थ णं भंते ! चत्तारि पोग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवतिया जीवत्थिकायप्पएसा ओगाढा ? अणंता इत्यादि (वृ. प. ६१५)

८८,८९. जाव दसण्हं सिय एक्को, सिय दोण्णि, सिय तिण्णि जाव सिय दस।

९०,९१. संखेज्जाणं सिय एक्को, सिय दोण्णि जाव सिय दस, सिय संखेज्जा

९२,९३. असंखेज्जाणं सिय एक्को जाव सिय संखेज्जा, सिय असंखेज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९४. जेम असंख्याता कह्या, तेम अनंता ताम हो, गोयम !
तास भावार्थ पिछाणियै, कहियै अति अभिराम हो, गोयम !
९५. प्रभु ! अनंत प्रदेश पुद्गल तणां,
अवगाह्या जे ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म अधर्म आकास नां, किता प्रदेशज पाम हो, प्रभुजी !
९६. जिन कहै एक हुवै कदा, कदा दोय कदा तीन हो, गोयम !
जाव कदाचित संख ह्वै, कदा असंख्याता चीन हो, गोयम !
९७. इतलूं ईज कहीजियै, पिण कदा अनंत होय हो, गोयम !
एहवूं पाठ भणवूं नथी, तास न्याय इम जोय हो, गोयम !
९८. धर्म अधर्म लोकाकाश नां, असंख प्रदेशज हुंत हो, गोयम !
अनंत प्रदेश न तेहनां, तिणसूं न कह्या अनंत हो, गोयम !
९९. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ? जिन कहै एकज पाम हो, गोयम !

१००. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
किता अधर्म-प्रदेश त्यां ? जिन कहै एकज पाम हो, गोयम !
१०१. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
किता आकास-प्रदेश त्यां ? जिन कहै एकज पाम हो, गोयम !
१०२. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
जीव-प्रदेश किता तिहां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !
१०३. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
किता प्रदेश पुद्गल तणां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !
१०४. एक अद्धा समयो प्रभु ! अवगाह्यो जिण ठाम हो, प्रभुजी !
अद्धा समया किता तिहां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !

अन्य प्रकार से अवगाहना द्वार

१०५. प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाहो सुविशेष हो, प्रभुजी !
त्यां किता धर्मास्तिकाय नां, अवगाह्या छै प्रदेश हो, प्रभुजी !
१०६. श्री जिन भाखै एक ही, अवगाह्यो नहिं सोय हो, गोयम !
धर्मास्तिकाय एक है, पिण दूजी नहिं कोय हो, गोयम !
१०७. धर्मास्तिकाय शब्दे करी, धर्मास्ती नां जाम हो, गोयम !
सर्व प्रदेश संग्रह थकी, पिण दूजी नहि ताम हो, गोयम !
१०८. प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
किता अधर्म-प्रदेश त्यां ? जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !
१०९. प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
किता आकाश-प्रदेश त्यां ?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

सोरठा

११०. अधर्मास्ति नां जाण, लोकाकास्तिकाय नां।
असंख प्रदेश पिछाण, धर्मास्ती नां छै जिता ॥

९४. जहा असंखेज्जा एवं अणंता वि। (श. १३।८०)
अस्यायं भावार्थः। (वृ. प. ६१५)
९५. 'जत्थ णं भंते ! अणंता पोग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ? (वृ. प. ६१५)
९६. सिय एक्को सिय दोन्नि जाव सिय असंखेज्जा (वृ. प. ६१५)
९७. एतदेवाध्येयं न तु 'सिय अणंत' त्ति (वृ. प. ६१५)
९८. धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायलोकाकाशप्रदेशानामनन्तानामभावादिति। (वृ. प. ६१५)
९९ जत्थ णं भंते ! एगे अद्धासमए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
एक्को।
१००. केवतिया अधम्मत्थिकायपदेसा ? एक्को।
१०१. केवतिया आगासत्थिकायपदेसा ? एक्को।
१०२. केवतिया जीवत्थिकायपदेसा ? अणंता।
१०३,१०४. एवं जाव अद्धासमया। (श० १३।८१)
१०५. जत्थ णं भंते ! धम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ?
१०६. नत्थि एक्को वि।
१०८. केवतिया अधम्मत्थिकायपदेसा ? असंखेज्जा।
१०९. केवतिया आगासत्थिकायपदेसा ? असंखेज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१११. *प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
किता प्रदेश जीवां तणां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !

११२. प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
किता प्रदेश पुद्गल तणां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !

११३. प्रभु ! धर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
अद्धा समय किता तिहां ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !

११४. प्रभु ! अधर्मास्तिकाय जे, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी !
धर्म-प्रदेश किता तिहां ?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

११५. प्रभु ! अधर्मास्तिकाय जे, रही जिहां अवगाहि हो, प्रभुजी !
किता अधर्म-प्रदेश त्यां ? जिन कहै इक पिण नांहि हो, गोयम !

११६. शेष धर्मास्तिकाय नीं, अवगाहन कही तेम हो, गोयम !
कहिवी सगली स्वस्थानके, नहीं एक पिण एम हो, गोयम !

११७. पर स्थाने त्रिहुं आदि जे, धर्म अधर्म आकास हो, गोयम !
ए तीनूं नां प्रदेश ते, असंखेज्ज सुविमास हो, गोयम !

११८. त्रिहुं पछला जीव पोग्गला, अद्धा समय अनंत हो, गोयम !
जाव अद्धा समया लगै, भणवूं एह उदंत हो, गोयम !

११९. जाव अद्धा समया किता, अवगाह्या जिनराय हो ? प्रभुजी !
जिन कहै इक पिण समयही, अवगाहन तिहां नांय हो, गोयम !

सोरठा

१२०. स्व स्थाने सहु ठाम, इक ही अवगाहक नथी।
ते इकहिज छै ताम, बीजी नहिं तिण कारणैं ।।

जीवों की अवगाहना द्वार

१२१ *पृथ्वीकायिक इक प्रभु ! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी !
किता पृथ्वी अवगाहिया ?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

१२२. पृथ्वीकायिक इक प्रभु ! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी !
किता तिहां अपकायिका ? जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

१२३. पृथ्वीकायिक इक प्रभु ! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी !
किता तिहां तेउकायिका ?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

१२४. पृथ्वीकायिक इक प्रभु ! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी !
किता तिहां वाउकायिका ?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम !

१२५. पृथ्वीकायिक इक प्रभु ! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी !
वनस्पति तिहां केतला ? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम !

सोरठा

१२६. जिहां इक पृथ्वी जीव, तिहां असंखेज्ज सूक्षम मही।
इम अप तेज कहीव, सूक्षम वायु पिण असंख ।।

*लय : सीता ओलखावै सोकां भणी

१११. केवतिया जीवत्थिकायपदेसा ? अणंता।

११२,११३. एवं जाव अद्धासमया। (श. १३।८२)

११४. जत्थ णं भंते ! अधम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायपदेसा ओगाढा ? असंखेज्जा।

११५. केवतिया अधम्मत्थिकायपदेसा ? नत्थि एक्को वि।

११६. सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। एवं सव्वे—सट्ठाणे नत्थि एक्को वि भाणियव्वो

११७. परट्ठाणे आदिल्लगा तिण्णि असंखेज्जा भाणियव्वा।

११८. पच्छिल्लगा तिण्णि अणंता भाणियव्वा जाव अद्धासमयो त्ति

११९. जाव केवतिया अद्धासमया ओगाढा ? नत्थि एक्को वि। (श. १३।८३)

१२१. जत्थ णं भंते ! एगे पुढविक्काइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढविक्काइया ओगाढा ? असंखेज्जा।

१२२. केवतिया आउक्काइया ओगाढा ? असंखेज्जा।

१२३. केवतिया तेउकाइया ओगाढा ? असंखेज्जा।

१२४. केवतिया वाउकाइया ओगाढा ? असंखेज्जा।

१२५. केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा ? अणंता। (श० १३।८४)

१२६,१२७. 'जत्थ णं भते ! एगे पुढविक्काइए' इत्यादि, एकपृथिवीकायिकावगाहेऽसङ्ख्येयाः प्रत्येकं पृथिवीकायिकादयश्चत्वारः सूक्ष्मा अवगाढाः यदाह—'जत्थ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२७. जिहां इक पृथ्वीकाय, तिहां वनस्पतिकायिका।
कह्या अनंता ताय, सर्व लोकवर्त्ती सुहुम ॥

१२८. *इक अपकायिक हे प्रभु! अवगाही ते ठाम हो, प्रभुजी!
किता तिहां पृथ्वीकायिका?
जिन कहै असंखिज्ज पाम हो, गोयम!

१२९. इम जिम पृथ्वीकाय नीं, वक्तव्यता कही सोय हो, गोयम!
तिमज सहु नीं वारता, जाव वनस्पति जोय हो, गोयम!

१३०. जाव प्रभु! इक वणस्सइ, अवगाही जे ठाम हो, प्रभुजी!
त्यां किता वणस्सइकायिका? जिन कहै अनंता पाम हो, गोयम!

सोरठा

१३१. साधारण अपेक्षाय, अथवा सूक्ष्म अपेक्षया।
जिहां इक वणस्सइकाय, अनंत तिहां इम संभवै॥

अस्तिकाय प्रदेशनिषीदन द्वार

१३२. *प्रभु! धर्मास्तिकाय नैं विषे, वलि अधर्मास्तिकाय हो, प्रभुजी!
आकाशास्तिकाय जे, ए तीनूं विषे ताय हो, प्रभुजी!

१३३. समर्थ छै कोइ बैसवा, सूवा समर्थ सोय हो, प्रभुजी!
ऊभो रहिवा नैं चालवा, आडो तेडो होय हो, प्रभुजी!

१३४. जिन कहै अर्थ समर्थ नहीं, पिण जीव अनंता तेम हो, गोयम!
अवगाही नैं रह्या तिहां,
प्रभु! किण अर्थे कह्यो एम हो? प्रभुजी!

१३५. जिन दृष्टांत देई कहै, साला कूट-आकार हो, गोयम!
बाहर मांहि लीपी गुप्ति छै, गुप्त अछै तसु द्वार हो, गोयम!

१३६. जिम रायप्रश्रेणी सूत्र में, आख्यो ए दृष्टांत हो, गोयम!
यावत द्वार किमाड़ ते, साला नां ढांकंत हो, गोयम!

१३७. ते कूटाकार साला विषे, बहुविध भूमि बिचाल हो, गोयम!
एक दोय तीन जघन्य थी, दीपक को उजवाल हो, गोयम!

१३८. उत्कृष्ट सहस्र दीवा प्रतै, उजवालै नर कोय हो, गोयम!
ते निश्चै करि गोयमा! सांभल तूं अवलोय हो, गोयम!

१३९. लेश्या तेज दीवा तणो, ह्वै संबंध मांहोमांय हो, गोयम!
अण्णमण्ण फर्शै जाव ते, इक घट थइ रहवाय हो, गोयम!

१४०. हां स्वामी! गोतम कहै, तब भाखै जिनराय हो, गोयम!
समर्थ छै कांइ गोयमा! ते दीप लेश्या विषे ताय हो, गोयम!

१४१. बैसण जाव लेश्या विषे, आडो होवा तत्थ हो, गोयम!
गोतम कहै भगवंत जी! नहिं ए अर्थ समत्थ हो, प्रभुजी!

१४२. प्रभु कहै जीव अनंत ही, रह्या तिहां अवगाहि हो, गोयम!
तिण अर्थे इम आखियै, जाव ओगाढा ताहि हो, गोयम!

एगो तत्थ नियमा असंखेज्ज' त्ति, वनस्पतयस्त्वनन्ता इति। (वृ० प० ६१५)

१२८. जत्थ णं भंते! एगे आउक्काइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढविक्काइया ओगाढा? असंखेज्जा।

१२९. एवं जहेव पुढविक्काइयाणं वत्तव्वया तहेव सव्वेसिं निरवसेसं भाणियव्वं जाव वणस्सइकाइयाणं।

१३०. जाव केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा? अणंता। (श० १३।८५)

१३२,१३३. एयंसि णं भंते! धम्मत्थिकाय-अधम्मत्थिकाय-आगासत्थिकायंसि चक्किया केई आसइत्तए वा सइत्तए वा चिट्ठित्तए वा निसीयत्तए वा तुयट्टित्तए वा?

१३४. नो इणट्ठे समट्ठे, अणंता पुणत्थ जीवा ओगाढा। (श० १३।८६)
से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ?

१३५. गोयमा! से जहानामए कूडागारसाला सिया—दुहओ लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा।

१३६. जहा रायप्पसेणइज्जे (सूत्र ७५५) जाव (सं. पा.) दुवारवयणाइं पिहेइ।

१३७. तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा।

१३८. उक्कोसेणं पदीवसहस्सं पलीवेज्जा। से नूणं गोयमा!

१३९. ताओ पदीवलेस्साओ अण्णमण्णसंबद्धाओ अण्णमण्ण-पुट्ठाओ अण्णमण्णसंबद्धपुट्ठाओ अण्णमण्णघडत्ताए चिट्ठंति?

१४०. हंता चिट्ठंति।
चक्किया णं गोयमा! केई तासु पदीवलेस्सासु

१४१. आसइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा?
भगवं! नो इणट्ठे समट्ठे।

१४२. अणंता पुणत्थजीवा ओगाढा। से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव अणंता पुणत्थ जीवा ओगाढा। (श० १३।८७)

*लय: सीता ओलखावै सोकां भणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बहुसम द्वार

१४३. प्रभु ! लोक अत्यंत समो किहां,
हानि वृद्धि करि रहित हो, प्रभुजी !
किहां सर्व थी सांकड़ो, ते सर्व विग्रहिक[1] कहित हो ? प्रभुजी !

१४३. कहि णं भंते ! लोए बहुसमे, कहि णं भंते ! लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते ?

१४४. जिन कहै रत्नप्रभा पृथ्वी, तास विषे कहिवाय हो, गोयम !
ऊपरलो नें हेठलो, क्षुल्लक प्रतर विषे ताय हो, गोयम !

१४४. गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिम-हेट्ठिल्लेसु खुड्डगपयरेसु ।

१४५. ऊपरलो जे प्रतर लघु, ते प्रति अवधि करेह हो, गोयम !
ऊंची प्रतर नीं वृद्धि, प्रवृत्ता छै तेह हो, गोयम !

१४५. उपरिमो यमवधीकृत्योर्द्ध्वं प्रतरवृद्धिः प्रवृत्ता । (वृ० प० ६१६)

१४६. वली हेठलो प्रतर लघु, ते प्रति अवधि करेह हो, गोयम !
नीची प्रतर नीं वृद्धि, प्रवृत्ता छै तेह हो, गोयम !

१४६. अधस्तनश्च यमवधीकृत्याधः प्रतरप्रवृद्धिः प्रवृत्ता । (वृ० प० ६१६)

१४७. ए बिहुं प्रतर छै तिके, शेष प्रतर नीं पेक्षाय हो, गोयम !
नान्हा छै तिण कारणें, क्षुल्लक प्रतर कहिवाय हो, गोयम !

१४८. ते बिहुं प्रतर छै तिके, रज्जु प्रमाण विचार हो, गोयम !
आयाम विक्खंभपणै तिको, आख्या वृत्ति मझार हो, गोयम !

१४९. मध्यवर्त्ती तिरछा लोक नें, नवसौ योजन हेठ हो, गोयम !
नवसौ योजन उर्द्ध छै, ते तिर्यक लोक मध्य नेठ हो, गोयम !

१४७-१४९. *ततस्तयोरुपरितनाधस्तनयोः* क्षुल्लकप्रतरयोः शेषापेक्षया लघुतरयो रज्जुप्रमाणायामविष्कम्भयो-स्तिर्यग्लोकमध्यभागवर्त्तिनोः । (वृ० प० ६१६)

१५०. बहु सम लोक इहां कह्यो, वृद्धि हानि करि रहितहो, गोयम !
वक्र सर्व थी सांकड़ो, ते पिण इहां कहित हो, गोयम !

१५०. एत्थ णं लोए बहुसमे, एत्थ णं लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते । (श० १३।८८)

१५१. किहां अछै भगवंत जी ! लोक तणों अवलोय हो, प्रभुजी !
विग्रह विग्रहिक शरीर छै, वृद्धि हानि जिहां होय हो ? प्रभुजी !

१५१. कहि णं भंते ? विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते ?
'विग्गहविग्गहिए' त्ति विग्रहो—वक्रं तद्युक्तो विग्रहः—शरीरं यस्यास्ति स विग्रहविग्रहिकः । (वृ० प० ६१६)

१५२. जिन कहै विग्रहकंड ते, ब्रह्मकल्प नां पिछान हो, गोयम !
कूर्पर खूंणो छै तिहां, प्रदेश नीं वृद्धि हान हो, गोयम !

१५२. गोयमा ! विग्गहकंडए एत्थ णं विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते । (श० १३।८९)
'विग्गहकंडए' त्ति विग्रहो—वक्रं कण्डकं—अवयवो विग्रहरूपं कण्डकं—विग्रहकण्डकं तत्र ब्रह्मलोककूर्प्पर इत्यर्थः यत्र वा प्रदेशवृद्धचा हान्या वा वक्रं भवति तद्विग्रहकण्डकं । (वृ० प० ६१६)

संस्थान द्वार

१५३. प्रभू ! स्यूं संस्थाने लोक छै ? तब भाखै भगवान हो, गोयम !
सुप्रतिष्ठक संस्थिति, तास न्याय इम जान हो, गोयम !

१५३. किंसंठिए णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?
गोयमा ! सुपइट्ठियसंठिए लोए पण्णत्ते ।

सोरठा

१५४. अर्थ विषे अवदात, सराव संपुट संस्थित ।
केयक इम आख्यात, कलस ऊपरै कलस जिम ।।
१५५. केइ कहै सराव तीन, तलै सराव अधोमुखी ।
ऊपर संपुट चीन, ऊर्द्धमुखो नें अधःमुख ।।

१५६. *हेठै विस्तीर्ण कह्यो, मध्य सांकड़ो न्हाल हो, गोयम !
जेम सातमा शतक नें, प्रथम उद्देशे भाल हो, गोयम !
१५७. कह्यो सरूपज लोक नों, कहिवो तिणहिज रीत हो, गोयम !
जाव अंत करै दुख तणो, इतला लग सुवदीत हो, गोयम !

१५६,१५७. हेट्ठा विच्छिण्णे, मज्झे संखित्ते — जहा सत्तमसए पढमुद्देसे (सूत्र ३) जाव (सं० पा०) अंतं करेति । (श० १३।९०)

---

१. वक्र ।

***लय : सीता ओलखावै सोकां भणी**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५८. अधो तिर्यक ऊर्द्धलोक नैं, हे भगवंत ! संपेख हो, प्रभुजी !
कुण-कुण थी अल्पबहुत्व है, तुल्ला अधिक विशेख हो ? प्रभुजी !

१५९. जिन कहै थोड़ो सर्व थी, तिरछो लोक पिछाण हो, गोयम !
अष्टादश सौ योजन तणो, जाडो बाहल्य जाण हो, गोयम !

१६०. तेह थकी ऊर्द्धलोक ते, असंख्यातगुणो जाण हो, गोयम !
सप्त रज्जु देश ऊण छै, ते ऊंचपणैं पहिछाण हो, गोयम !

१६१. तेह थकी अधोलोक ते, आख्यो अधिक विशेख हो, गोयम !
सप्त रज्जु जाझो ऊंच थी, सेवं भंते ! संपेख हो, प्रभुजी !

१६२. तेरम शत चउथो कह्यो, बेसौ गुण्यासीमीं ढाल हो, सुगणा !
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी,
'जय-जश' मंगलमाल हो, सुगणा !

त्रयोदशशते चतुर्थोद्देशकार्थः ।।१३।४।।

१५८. एयस्स णं भंते ! अहेलोगस्स, तिरियलोगस्स, उड्ढलोगस्स य कयरे कयरेहिंतो अप्पा वा ? बहुया वा ? तुल्ला वा ? विसेसाहिया वा ?

१५९. गोयमा ! सव्वत्थोवे तिरियलोए ।
'सव्वत्थोवे तिरियलोए' त्ति अष्टादशयोजनशतायामत्वात् । (वृ० प० ६१६)

१६०. उड्ढलोए असंखेज्जगुणे ।
'उड्ढलोए असंखेज्जगुणे' त्ति किञ्चिन्न्यूनसप्तरज्जूच्छ्रितत्वात् । (वृ० प० ६१६)

१६१. अहेलोए विसेसाहिए । (श० १३।९१)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । [श० १३।९२]
'अहे लोए विसेसाहिए' त्ति किञ्चित्समधिकसप्तरज्जूच्छ्रितत्वादिति । (वृ० प० ६१६)

ढाल : २८०

नरयिक आहार पद

दूहा

१. चउथ उद्देशे आखियो, लोक स्वरूप विशाल ।
तिहां नारकादिक हुवै, विविध प्रकारे न्हाल ।।
२. ते माटै नरकादि नीं, वक्तव्यता अवदात ।
कहियै छै ते सांभलो, जे दाखी जगनाथ ।।
३. हे भगवान ! स्यूं नारकी, सचित्त आहारी धार ।
तथा अचित्त आहारी अछै, अथवा मिश्र आहार ?
४. जिन भाखै सुण गोयमा ! सचित्ताहारा नांय ।
अचित्ताहारा छै तिकै, मिश्राहार न पाय ।।
५. इहविध असुरकुमार पिण, पन्नवण पद पहिछाण ।
अट्ठावीसमां नो प्रथम, नरक उद्देशो जाण ।।

६. ते समस्त कहिवो इहां, सेवं भंते ! स्वाम ।
शतक तेरमा नों कह्यो, पंचमुद्देशो ताम ।।

त्रयोदशशते पंचमोद्देशकार्थः ।।१३।५।।

१,२. अनन्तरोद्देशके लोकस्वरूपमुक्तं तत्र च नारकादयो भवन्तीति नारकादिवक्तव्यतां पञ्चमोद्देशकेनाह— (वृ० प० ६१६)

३. नेरइया णं भंते ! किं सचित्ताहारा ? अचित्ताहारा ! मीसाहारा ?

४. गोयमा ! नो सचित्ताहारा, अचित्ताहारा, नो मीसाहारा ।

५. एवं असुरकुमारा, पढमो नेरइयउद्देसओ ।
(पण्ण० २८।१-१०५)
'पढमो नेरइयउद्देसओ' इत्यादि, अयं च प्रज्ञापनायामष्टाविंशतितमस्याहारपदस्य प्रथमः । (वृ० प० ६१६)

६. निरवसेसो भाणियव्वो । (श० १३।९३)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । (श० १३।९४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सान्तर-निरन्तर पद

*जिन वच महा जयकारी हे, सरध्यां थो शिव सारो हे। (ध्रुपदं)

७. राजगृह जाव गोतम इम बोल्या, हे प्रभु ! नारक जीवा हे।
समयादि अंतर-सहित ऊपजै, कै अंतर-रहित कहीवा हे ?

८. जिन कहै नारक अंतर-सहित पिण, उपजै छै दुखकारा हे।
अंतर-रहित पिण नारक ऊपजै, इमहिज असुरकुमारा हे।।

९. इम जिम गंगेय तिमज बे दंडक, यावत अंतर-सहीतो हे।
वेमाणिया जे देव छै, वलि चवै अंतर-रहीतो हे।।

सोरठा

१०. चवन विमानिक उक्त, ते सुर छै तिण कारणैं।
चमर आवास प्रयुक्त, सुर अधिकार थकी हिवै।।

चमर आवास पद

११. *किहां प्रभुजी ! चमर असुर नां, इंद्र तणो सुखदायो हे।
चमरचंचा नामैं आवासज ? हिव भाखै जिनरायो हे।।

१२. जंबूद्वीप नां मंदर गिरि थी, दक्षिण दिशि रै मांह्यो हे।
तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्रे, अर्णोदधि कहिवायो हे।

१३. इमहिज बीजा शतक तणो जे, सभा नाम उद्देशो हे।
वक्तव्यता कही ते सहु कहिवी, णवरं इतलो विशेषो हे।।

१४. जाव तिगिच्छकूट गिरि उत्पातज, चमरचंचा रजधानी हे।
चमरचंचा प्रासाद पर्वत नैं, अन्य बहु नो जानी हे।।

१५. शेष तिमज जाव साढा तेरै, आंगुल किंचि विशेखो हे।
परिधि एतली तेह तणी छै, ए जिन कीधो लेखो हे।।

सोरठा

१६. तीन लाख अवलोय, सोल सहस्र नैं दोयसौ।
सत्तावीस वलि जोय, योजन इता कहीजियै।।

१७. गाऊ तीन समेर, धनुष एक सौ अष्टविंश।
आंगुल साढा तेर, कांइक जाझी परिधि तसु।।

१८. *ते चमरचंचा नामैं राजधानी नैं, नैरुत कूण रै मांह्यो हे।
छह सौ पचावन कोड़ योजन वलि, पैंतीस लाख कहायो हे।।

१९. पचास सहस्र योजन अर्णोदय, समुद्रे तिरछो जइयै हे।
इहां चमर नों आवास कह्यो छै, चमरचंच नाम कहियै हे।।

२०. सहस्र चउरासी योजन नों, ते लांबो चोड़ो जाणी हे।
परिधि दोय लक्ष योजन नीं छै, पैंसठ सहस्र पिछाणी हे।।

२१. छसौ बत्तीस योजन वलि किंचित, विशेष अधिक बखाणी हे।
एक कोट पिण करि सगली दिशि, चउफेर बींटचो जाणी हे।।

७. रायगिहे जाव एवं वयासी—संतरं भंते ! नेरइया उववज्जंति ? निरंतरं नेरइया उववज्जंति ?

८. गोयमा ! संतरं पि नेरइया उववज्जंति, निरंतरं पि नेरइया उववज्जंति। एवं असुरकुमारा वि।

९. एवं जहा गंगेये (श० ९।८०-८५) तहेव दो दंडगा जाव संतरं पि वेमाणिया चयंति, निरंतरं पि वेमाणिया चयंति। (श० १३।९५)

१०. अनन्तरं वैमानिकानां च्यवनमुक्तं, ते च देवा इति देवाधिकाराच्चमराभिधानस्य देवविशेषस्यावासविशेष प्ररूपणायाह— (वृ० प० ६१७)

११. कहि णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचंचे नामं आवासे पण्णत्ते ?

१२. गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणे णं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे—

१३. एवं जहा बितियसए (सू० ११८-१२१) सभाउद्देसए वत्तव्वया सच्चेव अपरिसेसा नेयव्वा (पा० टि०) नवरं—इमं नाणत्तं।

१४. जाव तिगिच्छकूडस्स उप्पायपव्वयस्स चमरचंचाए रायहाणीए चमरचंचस्स आवासपव्वयस्स अण्णेसिं च बहूणं। (पा० टि०)

१५. सेसं तं चेव जाव तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचि विसेसाहिया परिक्खेवेणं। (पा० टि०)

१६,१७. तिण्णि जोयणसयसहस्साइं सोलस सहस्साइं दोण्णि य सत्तावीसे जोयणसए तिण्णि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस अंगुलाइं अद्धंगुलगं च किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते।
(भ० श० ६।७५)

१८. तीसे णं चमरचंचाए रायहाणीए दाहिणपच्चत्थिमे णं छक्कोडिसए पणपन्नं च कोडीओ 'पणतीसं च सयसहस्साइं'।

१९. पन्नासं च सहस्साइं अरुणोदगसमुद्दं तिरियं वीइ-वइत्ता, एत्थ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचंचे नामं आवासे पण्णत्ते—

२०. चउरासीइं जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, दो जोयणसयसहस्सा पन्नट्ठिं च सहस्साइं।

२१. छच्च बत्तीसे जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं। से णं एगेणं पागारेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते।

*लय : बलियां सूं केम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. ते प्राकार दोढसय योजन, ऊंचपणैं अधिकारी हे।
इम चमरचंचा नामैं रजधानी नीं, वक्तव्यता तिम धारी हे।।
२३. सभाविहूणा इहां सभा न भणवी, सौधर्मादि पांचोई हे।
यावत च्यार प्रासाद पंक्ति तसु, ते इहविध अवलोई हे।।

सोरठा

२४. 'मूल प्रासाद विचार, ऊर्द्ध अढी सय योजने।
तेहनैं पासे च्यार, योजन सवासौ ऊर्द्ध ते।
२५. तसु परिवारज सोल, योजन साढा बासठ जे।
तसु पासे चोसठ चोल, ऊर्द्ध सवा इकतीस जे।।

२६. तेह तणैं परिवार, बेसौ छप्पन म्हैल है।
पनरै योजन सार, पंच भाग ए ऊर्द्ध है।।
२७. त्रिण सय इकतालीस, सहु प्रासाद पंक्ती विषे।
इहां अर्थ में दीस, जाव पंक्ति चिउं पाठ में।।' [ज० स०]

२८. *चमरचंच आवास विषे प्रभु ! चमर असुर इंद जेही हे।
वास करै छै तिहां वसै छै ? अर्थ समर्थ न एही हे।।

२९. से केणं खाइं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तासो हे।
ते किसै ख्यात प्रसिद्ध अर्थ करि प्रभु !
कहियै चमरचंच आवासो हे ?
३०. जिन कहै गोयम ! यथा दृष्टांते, इण मनुष्यलोक रै मांही हे।
औपकारिक जे लयन कह्यो छै, तास अर्थ कहिवाई हे।।

सोरठा

३१. उवगारिय सुलेण, ते प्रासादादिक तणो।
पीठ सरीस कहेण, पीठ-बद्ध घर ए हुवै।।
३२. *वलि उद्यान विषे जे घर ते, जण उपकारिक जाणी हे।
अथवा नगर प्रवेश विषे घर, मनहर अधिक बखाणी हे।।
३३. वलि णिज्जाणिय लेणाति वा नगर-निगम गृह जाणी हे।
धारावारिए लेणाति वा, तास अर्थ हिव ठाणी हे।।

सोरठा

३४. धारा ईज प्रधान, वारि तोय जेह नैं विषे।
ते धारावारिक जान, तेह लयन कहियै तसु।।

३५. *तिहां बहु मनुष्य मनुष्यणी रहै छै, आसयंति अल्प कालो हे।
सयंति ते बहु काल रहै छै, प्रथम अर्थ ए न्हालो हे।।

---

*लय : बलियां सूं केम

२२. से णं पागारे दिवड्ढं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं, एवं चमरचंचाए रायहाणीए वत्तव्वया भाणियव्वा।
२३. सभाविहूणा जाव चत्तारि पासायपंतीओ। (श० १३।९६)
'सभाविहूणं' ति सुधर्माद्याः पञ्चेह सभा न वाच्याः (वृ० प० ६१७)
२४,२५. सौधर्मवैमानिकानां ...... तदन्ये चत्वारस्तत् परिवारभूताः सार्द्धे द्वे शते प्रत्येकं च तेषां चतुर्णामप्यन्ये परिवारभूताश्चत्वारः सपादशतम्। एवमन्ये तत्परिवारभूताः सार्द्धा द्विषष्टिः। एवमन्ये सपादैकत्रिंशत्। (भ० वृ० प० १४६)

२८. चमरे णं भंते ! असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचे आवासे वसहिं उवेति ? नो इणट्ठे समट्ठे। (श० १३।९७)
२९. से केणं खाइं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—चमरचंचे आवासे, चमरचंचे आवासे ?
३०. गोयमा ! से जहानामए—इहं मणुस्सलोगंसि उवगारियलेणाइ वा
३१. 'औपकारिकलयनानि' प्रासादादिपीठकल्पानि। (वृ० प० ६१७)
३२. उज्जाणियलेणाइ वा।
'उज्जाणियलेणाइ व' त्ति उद्यानगतजनानामुपकारिकगृहाणि नगरप्रदेशगृहाणि वा। (वृ० प० ६१७)
३३. णिज्जाणियलेणाइ वा। धारावारियलेणाइ वा।
'णिज्जाणियलेणाइ व'त्ति नगरनिर्गमगृहाणि।' (वृ० प० ६१७)
३४. 'धारिवारियलेणाइ व'त्ति धाराप्रधानं वारि—जलं येषु तानि धारावारिकाणि तानि च तानि लयनानि। (वृ० प० ६१७)
३५. तत्थ णं बहवे मणुस्सा य मणुस्सीओ य आसयंति सयंति।
'आसयंति' त्ति 'आश्रयन्ते' ईषद्भजन्ते 'सयंति' त्ति 'श्रयन्ते' अनीषद्भजन्ते। (वृ० प० ६१७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. अथवा आसयंति अल्प काल सूवै ते, निद्रा लेवै अल्प कालो हे।
सयंति ते बहु काल निद्रा ले, द्वितीय अर्थ संभालो हे।।
३७. जिम रायप्रसेणी में कह्यो तिम कहिवो, जावत ही पहिछानो हे।
कल्याण फल वृत्ति विशेष भोगवता, विचरै जन पुन्यवानो हे।।
३८. रामत क्रीड़ा करवा तिहां आवै, पिण न करै तिहां वासो हे।
अन्य स्थानके वास वसै छै, बहु मनुष्य मनुष्यणी तासो हे।।

वा०—जहा रायपसेणइज्जेति इण वचने करी जे कह्यु ते इम—चिट्ठंति कहितां उर्द्ध स्थान करिकै तेहनैं विषे रहै, निसीयंति कहितां बेसै, तुयट्टंति कहितां बैठा थका रहै, हसंति कहितां परिहास्य करै, रमंति कहितां पासादिक करिकै रति करै, ललंति कहितां वांछित क्रिया विशेष प्रति करै, कीलंति कहितां काम-क्रीड़ा प्रति करै, किड्डंति कहितां अंतर्भूत कारित अर्थपणां थकी अनेरा प्रति क्रीडा करावै, मोहयंति कहितां मोहन मिथुन प्रति सेवै।

पुरा पोराणाणं सुचिण्णाणं सुपरक्कंताणं सुभाणं कडाणं कम्माणं ति। एहनों व्याख्या प्रागवत्। रायप्रश्रेणी में ए पाठ कह्या ते इहां जाव शब्द में कहिवा। तेहनों ए अर्थ भगवती नी वृत्ति थी लिख्यो छै।

अनै रायप्रसेणी में देवता नां अधिकार माटै आसयंति आदि पाठ नों अर्थ तिहां वृत्तिकार कियो ते सोरठा करी कहै छै—

३६. अथवा 'आसयंति' ईषत्स्वपन्ति 'सयंति' अनीषत्स्वपन्ति। (वृ० प० ६१७)
३७. जहा रायप्पसेणइज्जे (सूत्र १८५) जाव (सं० पा०) कल्लाणफलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति।
३८. अण्णत्थ पुण वसहिं उवेंति।

वा०—जहा रायप्पसेणइज्जे' त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं—'चिट्ठंति' ऊर्द्धस्थानेन तेषु तिष्ठन्ति 'निसीयंति' उपविशन्ति 'तुयट्टंति' निषण्णा आसते 'हसंति' परिहासं कुर्वन्ति 'रमन्ते' अक्षादिना रतिं कुर्वन्ति 'ललन्ति' ईप्सितक्रियाविशेषान् कुर्वन्ति 'कीलंति' कामक्रीडां कुर्वन्ति 'किड्डंति' अन्तर्भूतकारितार्थत्वादन्यान् क्रीडयन्ति 'मोहयन्ति' मोहनं निधुवनं विदधति।
पुरा पोराणाणं·······व्याख्या चास्य प्रागवत्। (वृ० प० ६१७,१८)

सोरठा

३९. 'रायप्रश्रेणी मांय, सुर अधिकारे वृत्ति में।
आसयंति कहिवाय, अमर सुरी बेसै सुखे।।
४०. सयंति ते सूवेह, काया दीर्घ पसारवै।
पिण सुर-योनि विषेह, निद्रा तणो अभाव छै।।
४१. ऊर्द्ध स्थान कर जाण, चिट्ठंति ऊभा रहै।
निसीयंति पहिछाण, बेसै ते अमरा सुरी।।
४२. तुयट्टंति ते ताम, त्वग-वर्त्तन करतां तिहां।
दक्षिण अथवा वाम, पसवाड़ा नैं फेरता।।
४३. हसंति करता हास, रमंति कहितां रति करै।
ललंति मन नीं तास, इच्छा पूरै ते सुरा।।
४४. कीलंति ते जाण, गमन विनोद करै सुखे।
वा गीत नृत्यादिक माण, तिष्ठै तेह विनोद करि।।
४५. मोहंति अवलोय, मैथुन सेवा प्रति करै।
पूर्वभव कृत जोय, तेहिज पुराणा पुन्य जे।।
४६. करणी रूड़ी कीध, भला पराक्रम थी जिके।
बंध्या पुन्य प्रसीध, शुभ कृत कर्म फल भोगवै।।
४७. इहां रायप्रश्रेणी मांहि, सुर अधिकारे वृत्ति में।
निद्रा दाखी नांहि, देव योनि छै ते भणी।।

३९. बहवः सूर्याभविमानवासिनो देवा देव्यश्च यथासुखम् आसते। (राय० वृ० प० १९९)
४०. शेरते—दीर्घकायप्रसारणेन वर्तन्ते न तु निद्रां कुर्वन्ति तेषां देवयोनिकत्वेन निद्राया अभावात्। (राय० वृ० प० १९९,२००)
४१. तिष्ठन्ति—ऊर्ध्वस्थानेन वर्तन्ते, निषीदन्ति—उपविशन्ति। (राय० वृ० प० २००)
४२. तुयट्टंति—त्वग्वर्तनं कुर्वन्ति, वामपार्श्वतः परावृत्य दक्षिणपार्श्वेनावतिष्ठन्ति, दक्षिणपार्श्वतो वा परावृत्य वामपार्श्वेनेति भावः। (राय० वृ० प० २००)
४३. रमन्ते—रतिमाबध्नन्ति। ललन्ति मनईप्सितं यथा भवति तथा वर्तन्ते इति भावः। (राय० वृ० प० २००)
४४. क्रीडन्ति—यथासुखमितस्ततो गमनविनोदेन गीतनृत्यादिविनोदेन वा तिष्ठन्ति। (राय० वृ० प० २००)
४५. मोहन्ति—मैथुनसेवां कुर्वन्ति इत्येवं। पुरा—पूर्वं प्राग्भवे इति भावः कृतानां कर्मणामिति योग अत एव पौराणानाम्। (राय० वृ० प० २००)
४६. सुचीर्णानां— सुचरितानां .... सुपराक्रान्तानां .... कल्याणरूपं फलविपाकं प्रत्येकमनुभवन्तो विहरन्ति—आसते। (राय० वृ० प० २००)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८. वर पंचम शतकेह[1], तुर्य उद्देशक नैं विषे।
दंडक चउबीसेह, निद्रा नैं प्रचला कही ।।
४९. दर्शणावरणी तेह, उदै देव नैं ते भणी।
अथवा किंचित लेह, निश्चै जाणैं केवली ।।' [ज० स०]

५०. *इण दृष्टांते गोयम ! चमर नैं, चमरचंच आवासे हे।
केवल क्रीडा रति नैं निमतै, आवै तिहां हुलासे हे ।।

५०. एवामेव गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमार-रण्णो चमरचंचे आवासे केवलं किड्डा-रतिपत्तियं ।

सोरठा

५१. क्रीडा विषेज तास, रति आनंद क्रीडा रति।
ए तत्पुरुष समास, तेह निमत आवै तिहां ।।
५२. अथवा द्वन्द्व समास, क्रीडा नैं रति नियत त्यां।
चमरचंच आवास, आवै छै ए शेष वच ।।

५१,५२. 'किड्डारइपत्तियं' ति क्रीड़ाया रतिः—आनन्दः कीड़ारतिः अथवा क्रीड़ा च रतिश्च क्रीड़ारती सा ते वा प्रत्ययो—निमित्तं यत्र तत् क्रीडारतिप्रत्ययं तत्रागच्छतीति शेषः । (वृ० प० ६१८)

५३. *अन्य स्थान वलि वासो वसै छै, तिण अर्थे करि ताह्यो हे।
जाव आवासे नाम तास ए, चमरचंच सुखदायो हे ।।

५३. अण्णत्थ पुण वसहिं उवेति । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—चमरचंचे आवासे, चरमचंचे आवासे । (श० १३।९८)

५४. सेवं भंते ! एम कहीनैं, जाव गोयम विचरंतो हे।
तेरमा शत षष्ठमुद्देश नुं, आख्यो देश उदंतो हे ।।
५५. ढाल भली दोयसौ असीमीं, चमर-आवास नीं आखी हे।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे, 'जय-जश' संपति राखी हे ।।

५४. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ । (श० १३।९९)

ढाल : २८१

उदायन-कथा पद

दूहा

१. पूर्वे असुर तणी कही, वक्तव्यता सुविशेष।
तिहां विराधक ऊपजै, व्रत सम्यक्त नुं पेख ।।
२. ते माटै श्री वीर नां, तीरथ मेंज प्रपन्न।
जे देखायै छै तिको, असुर विषे उत्पन्न ।।

१,२. अनन्तरमसुरकुमारविशेषावासवक्तव्यतोक्ता, असुरकुमारेषु च विराधितदेशसर्वसंयमा उत्पद्यन्ते ततश्च तेषु योऽत्र तीर्थे उत्पन्नस्तद्दर्शनायोपक्रमते । (वृ० प० ६१८)

३. जयवंता जिनराज प्रभु, ज्ञानवंत गुणहीर।
श्रमण प्रभू तिण अवसरे, भगवंत श्री महावीर ।।
४ नगर राजगृह थी तदा, अन्य दिवस किणवार।
गुणसिल नामा चैत्य थी, यावत करै विहार ।।

३,४. तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता बहियाजणवयविहारं विहरइ । (श० १३।१००)

५. तिण काले नैं तिण समय, नगरी चंपा नाम।
वर्णक चैत्य अछै तिहां, पूरणभद्र सुठाम ।।

५. तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था—वण्णओ । पुण्णभद्दे चेइए—वण्णओ ।

६. तिण अवसर महावीर प्रभु, अन्य दिवस किणवार।
पूर्वानुपूर्वे मुखे, जाव विचरता सार ।।

६. तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णदा कदाइ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे

१. भ० श० ५।७५
*लय : बलियां सूं केम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. चंपा नगरी छ जिहां, पूर्णभद्र वन नाम।
त्यां आवै आवी करी, यावत विचरै स्वाम॥

*भविक ! तुम्हें सांभलो रे। [ध्रुपदं]

७. जेणेव चंपा नगरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव (सं० पा०) विहरइ। (श० १३।१०१)

८. तिण काले नैं तिण समय रे, सिंधू नदी विशेष।
तसु निकट देश सौवीर छै रे, तिण सूं सिंधू सौवीर देश॥

८. तेणं कालेणं तेणं समएणं सिंधूसोवीरेसु जणवएसु
'सिंधूसोवीरेसु' त्ति सिन्धुनद्या आसन्नाः सौवीरा—जनपदविशेषाः सिंधुसौवीरास्तेषु। (वृ० प० ६२०)

९. गया ईति नैं भय जिहां रे, नगर वीतिभय जान।
पुर बाहिर ईशाण में रे, मृगवन नाम उद्यान॥

९. वीतीभए नामं नगरे होत्था—वण्णओ। तस्स णं वीतीभयस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए, एत्थ णं मियवणे नामं उज्जाणे होत्था
'वीईभए' त्ति विगता ईतयो भयानि च यतस्तद्वीतिभयं। (वृ० प० ६२१)

१०. ते वन सर्व ऋतु विषे रे, वर्णक योग्य विमास।
पुष्प फले समृद्ध छै रे, नंदन वन सुप्रकास॥

१०. सव्वोउय-पुप्फ-फलसमिद्धे—वण्णओ।
'सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे' इत्यादीति। (वृ० प० ६२१)

११. इहां वीतिभय नगर नों रे, हुंतो उदायन राय।
मोटा हेमवंत नी परै रे, वर्णक योग्य शोभाय॥

११. तत्थ णं वीतीभए नगरे उद्दायणे नामं राया होत्था—महयाहिमवंत वण्णओ।

१२. तेह उदायन राय नैं रे, पद्मावती विशाल।
वर्णक योग्य राणी हुंती रे, कर पग तल सुखमाल॥

१२. तस्स णं उद्दायणस्स रण्णो पउमावती नामं देवी होत्था—सुकुमालपाणिपाया—वण्णओ।

१३. वलि उदायण राय नैं रे, प्रभावती अभिधान।
रूपवंती राणी हुंती रे, वर्णक अधिक व्याख्यान॥

१३. तस्स णं उद्दायणस्स रण्णो पभावती नामं देवी होत्था—वण्णओ

१४. जाव उदायन राय थी रे, सुख विलसंती सोय।
विचरै पूर्वे संचिया रे, पुन्य भोगवती जोय॥

१४. जाव विहरइ।

१५. तेह उदायन राय नों रे, सखर पुत्र सुविचार।
अंगज प्रभावती तणो रे, अभीचि नाम कुमार॥

१५. तस्स णं उद्दायणस्स रण्णो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए अभीयी नामं कुमारे होत्था।

१६. कर पग तल सुखमाल छै रे, जिम शिवभद्र कुमार।
यावत चिंता राज नीं रे, करतो विचरै सार॥

१६. सुकुमाल जहा सिवभद्दे (श० ११।५८) जाव (सं० पा०) पच्चुवेक्खमाणे विहरइ।

१७. तेह उदायण राय नों रे, निज भाणेज निहाल।
केशी नाम कुमार थो रे, जाव स्वरूप सुखमाल॥

१७. तस्स णं उद्दायणस्स रण्णो नियए भाइणेज्जे केसी नामं कुमारे होत्था—सुकुमालपाणिपाए जाव सुरूवे।

१८. तेह उदायन नरपती रे, जनपद सिंधु सौवीर।
आदि देइ सोलै देश नों रे, राज करै गुणहीर॥

१८. से णं उद्दायणे राया सिंधूसोवीरप्पामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं

१९. नगर वीतिभय प्रमुख जे रे, फुन आगर पहिछाण।
सुवर्णादिक उत्पत्ति जिहां रे, त्रिण सय त्रेसठ जाण॥

२०. नगरसयाणं एहवो रे, क्वचित पाठ कहिवाय।
त्रिण सय त्रेसठ नगर छै रे, इहां आगर रव नांय॥

१९,२०. वीतीभयप्पामोक्खाणं तिण्हं तेसट्ठीणं नगरागरसयाणं
'नगरागरसयाणं' ति करादायकानि नगराणि सुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानान्याकरा नगराणि चाकराश्चेति नगराकरास्तेषां शतानि नगराकरशतानि तेषां 'नगरसयाणं' ति क्वचित्पाठः। (वृ० प० ६२१)

२१. महासेन नृप आदि दे रे, दश राजान सुदेख।
मुकुटबद्ध मोटा तिके रे, मानै आण अशेष॥

२२. दीधा ते राजा भणी रे, छत्र अधिक सुविशाल।
चामर रूप वालवीयणी रे, एहवा दश भूपाल॥

२१,२२. महसेणप्पामोक्खाणं दसण्हं राईणं बद्धमउडाणं विदिन्नछत्त-चामर वालवीयणाणं।
'विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं' ति वितीर्णानि छत्राणि चामररूपवालव्यजनिकाश्च येषां ते तथा तेषाम्। (वृ० प० ६२१)

२३. अपर अन्य बहु राजवी रे, ईश्वर तलवर मंत।
जाव सार्थवाह प्रमुख नों रे, अधिपतिपणों करंत॥

२३,२४. अण्णेसिं च बहूणं राईसर-तलवर जाव (सं०पा०) सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे।

---

*लय : करेलणा नी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. वलि तसु अग्रेश्वरपणों रे, जाव उदायण राय।
करावतो पालतो छतो रे, सहु नैं आण मनाय ।।
२५. श्रमणोपासक ते सही रे, जाण्या जीव अजीव।
जाव मुनि प्रतिलाभतो रे, विचरै अधिक अतीव ।।

२६. शतक त्रयोदशमा तणो रे, षष्ठमुद्देश विशेष।
तास देश ए आखियो रे, बाकी रह्यो उद्देस ।।
२७. कही दोयसौ ऊपरै रे, इक्यासीमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

२५. समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।
(श० १३।१०२)

ढाल : २८२

उदायन की धर्म जागरणा

दूहा

१. राय उदायन एकदा, छै जिहां पोसहसाल।
तिहां आवै आवी करी, पोसह कियो विशाल ।।
२. श्रमणोपासक शंख जिम, यावत विचरै जेह।
धर्म ध्यान में तिह विधे, पोसह विषे वसेह ।।

*शासणनाथ वस्या नृप मन में, ए तो त्रिभुवनतिलक तीरथगण में।
प्रभु मोरा शोभ रह्या शासन में ।।(ध्रुपदं)

३. तिण अवसर ते नृपति उदायन, मध्य निशा अद्ध-समायन में ।।
४. भाव निद्रा ते प्रमाद रहित चित, धर्म जागरिका जाग्रण में ।।
५. एहवो मन नों चिंतित यावत, उपनो महिपति नैं मन में ।।

६. आगर ग्राम नगर ते धन्य छै, धूड़कोट ते खेडन में ।।
७. कब्बड मंडप द्रोणमुख फुन पाटण, आश्रम मठ रु संबाधन में ।।
८. वलि सन्निवेस प्रमुख इह ठामे, वीर प्रभु विचरै जन[1] में ।।
९. धन्य कृतार्थ तिके अवनिपति, ईश्वर ते युवराजन में ।।
१०. तलवर तेह तलावटी कहियै, जाव सार्थवाह प्रमुखन में ।।
११. जेह श्रमण भगवंत वीर प्रति, वंदन स्तवना करत रमै ।।
१२. नमस्कार करता शिर नामी, यावत चित पर्युपासन में ।।
१३. धन्य-धन्य ग्रामादिक नां जन, नृपति आदि प्रभु नैं नमै ।।
१४. वीर नां वचन सुणी दिल सरधै, तसु पूर्व संचित कर्म गमैं ।।
१५. व्रत सम्यक्त्व अंगीकृत जिन पै, ते भव-सागर नांहि भमै ।।
१६. चउतीस अतिसय धारक प्रभु नैं, इंद्र नरिंद्र सुरिंद्र नमै ।।
१७. इंद्रशची निरखत नहि धापत, रोमराय उलसत तन में ।।

१-२. तए णं से उद्दायणे राया अण्णया कयाइ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, जहा संखे (श० १२।६) जाव····पडिजागरमाणे विहरइ। (श० १३।१०३)

३. तए णं तस्स उद्दायणस्स रण्णो पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि।

४. धम्मजागरियं जागरमाणस्स

५. अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

६-८. धन्ना णं ते गामागर-नगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासम-संबाहसण्णिवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे विहरइ।

९,१०. धन्ना णं ते राईसर-तलवर जाव (सं० पा०) सत्थवाहप्पभितयो।

११,१२. ते णं समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति जाव पज्जुवासंति।

*लय : स्वामी मोरा शोभ रह्या मुनिगण में

१. जनपद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. एहवा श्रमण तपस्वी मोटा, भगवंत ईश्वर सहु जन में ।।
१६. महावीर कर्म काटण शूरा, क्षमावंत उपसर्ग खमै ।।
२०. पूर्वानुपूर्वं चालंता प्रभुजी, ग्रामानुग्राम जाव जन[1] में ।।
२१. विचरंता प्रभुजी इहां आवै, समवसरै इह विपिनन में ।।

२२. एहिज वीतिभय नगर बाहिर जे, मृगवन नाम उद्यानन में ।।
२३. यथाजोग्य अवग्रह प्रति ग्रही नैं, आज्ञा ले प्रभु वागन में।।
२४. संजम तप कर आतम भावित, विचरै जे प्रभुजी वन में ।।
२५. तो हूं भगवंत श्रमण वीर प्रति, वंदूं वच-स्तुति तन में ।।
२६. नमस्कार करूं शिर नामी, वलि सतकृत सनमानन में ।।
२७. कल्याणकारी प्रभुजी कहियै, मंगल विघ्न-मिटावन में ।।
२८. देवयं कहितां त्रैलोक्य अधिपति, देवाधिदेव पंच देवन में ।।
२६. चित्त अहलादकारी प्रभु चैत्यं, सुप्रशस्त मन हेतु जन में ।।
३०. एहवा प्रभु नीं सेव करूं हूं, आ हूंस घणी म्हारा मन में ।।
३१. एहवी भावना भावै महिपति, पोसह ले मध्य रात्रिन में ।।
३२. शतक तेरम अर्थ अनूपम, छठो उद्देशो देशन में ।।
३३. ढाल दोयसौ ऊपर दाखी, दोय असीमीं उदायन में ।।
३४. भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे,
'जय-जश' सुख संपति गण में ।।

२०,२१. जइ णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे इहमागच्छेज्जा इह समोसरेज्जा,

२२,२३. इहेव वीतीभयस्स नगरस्स बहिया मियवणे उज्जाणे अहापडिरूवं ओग्गहं ओगिण्हित्ता

२४. संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरेज्जा,

२५-३०. तो णं अहं समणं भगवं महावीरं वंदेज्जा नमंसेज्जा जाव पज्जुवासेज्जा। (श० १३।१०४)

ढाल २८३

वीतिभय में महावीर का आगमन

दूहा

१. भगवंत श्री महावीर जी, पूरणज्ञानी देख।
राय उदायन तेहनां, जाण्या भाव विशेख ।।

२. प्रभु चंपा नगरी थकी, साथै बहु परिवार।
पूर्णभद्रज चैत्य थी, विहार कियो तिणवार ।।
३. पूर्वानुपूर्वे प्रभु! यावत विहार करंत।
ज्यां सिंधू सौवीर छै, त्यां आवै भगवंत ।।
४. जिहां वीतभय नगर छै, जिहां मृगवन उद्यान।
त्यां आवै आवी करी, यावत विचरै जान ।।

५. नगर वीतभय चंप बिच, कोस सात सय भाल।
परंपरा मांहै कहै, नदी खाल गिरि न्हाल ।।
६. गोतम स्वामी आदि बहु, वारु संघ सुवृंद।
राय उदायन तारवा, आया देव जिणंद ।।

१. तए णं समणे भगवं महावीरे उद्दायणस्स रण्णो अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव (सं० पा०) समुप्पन्नं वियाणित्ता

२. चंपाओ नगरीओ पुण्णभद्दाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ।

३,४. पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं जाव (सं० पा०) विहरमाणे जेणेव सिंधूसोवीरे जणवए जेणेव वीतीभये नगरे, जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। (श० १३।१०५)

---

१. जनपद

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. तब नगर वीतभय नैं विषे, संघाडग जन वृन्द ।
यावत आवी परषदा, वंदी सेव करंद ॥

> ७. तए णं वीतीभये नगरे सिंघाडग‥‥जाव परिसा पज्जुवासइ । (श० १३।१०६)

उदायन को दीक्षा की स्वीकृति

८. *राय उदायन ताम, कथा एहवीज सुणी ।
लाधै अर्थ अमाम, पधारचा तीर्थधणी ।
तीर्थधणीजी तसु कीर्त्ति घणी, अद्भुत संपति प्रभु वीर तणी ।
म्हैं तो जासां-जासां वंदन वीर, धीर गुण हीरमणी ॥

> ८. तए णं से उद्दायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे

९. पायो हरष संतोष, पोष नृप अति उमही ।
आज्ञाकारी पुरुष, सद्दावै तुरत सही ।
तुरत सही जी, नृप एम कही, देवानुप्रिया ! तुम्ह शीघ्र वही ।
म्हैं तो जासां-जासां वंदन वीर, करो ए कार्य लही ॥

> ९. हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया !

१०. नगर वीतभय मांय, अनै पुर बार वली ।
कचर काढ जल ल्याय, करो शुद्ध गली-गली ।
गली गली जी, पुल आज भली, जिनराज आयां थइ रंगरली ।
म्हैं तो जासां-जासां वंदन वीर, संपदा आय मिली ॥

> १०. वीयीभयं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं ।

११. सूत्र उवाई मांहि, कोणिक संबंध कह्यो ।
तेम इहां पिण ताहि, सर्व विस्तार लह्यो ।
विस्तार लह्यो जी, नृप अति उमह्यो, चतुरंग सेन ले वंदन गयो ।
म्हैं तो जासां-जासां वंदन वीर, आज दिन सफल भयो ।

> ११. जहा कूणिओ ओववाइए (सूत्र ५५-६९)

१२. जाव करै पर्युपास, तास त्रिहुं जोग सिरै ।
तन मन अति लहलीन, क्षीण अघनैंज करै ।
अघनैंज करै जी, दुख-हेतु हरै, जगनाथ दर्श करि हरष धरै ।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, नृपति वच इम उचरै ॥

> १२. जाव पज्जुवासइ ।

१३. पद्मावती प्रमुख, तिमज यावत सेवा ।
धर्म-कथा पीयूष, सरस जिन-वच मेवा ।
वच मेवा जो, भिन-भिन सेवा, प्रभु देव थकी अधिका देवा ।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, स्वाम शिव सुख लेवा ॥

> १३. पउमावती पामोक्खाओ देवीओ तहेव (ओव० सू० ७०) जाव पज्जुवासंति । धम्मकहा । (श० १३।१०७)

१४. चिउं गति कारण च्यार-च्यार भाख्या स्वामी ।
शिव-मग च्यार उदार, कह्या जिन विधि धामी ।
विधि धामी जी, नर सुख कामी, वच हियै धार साता पामी ।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, आप अंतरजामी ॥

१५. जिम भवसागर रुलै, दुकृत फल स्वाम कह्या ।
दुख संकट थी टलै, सुकृत फल तेह लह्या ।
तेह लह्याजी, गुण सुजन गह्या, जन बूझै तिम जिन भेद कह्या ।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, कृतारथ आज थया ॥

१६. राय उदायन स्वाम, वयण सुण चित धरिया ।
हरष सतोष सुपाम, आज अघ-दल हरिया ।
अघ-दल हरिया जी,
वांछित फलिया, मुझ मुंहमांग्या पासा ढलिया ।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, प्रभू पारस मिलिया ।

> १६. तए णं से उद्दायणे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे

***लय : स्वाम भिक्षु कहै एम, संजम सुख पावा वो**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. ऊठी ऊभो थाय, वीर प्रति त्रिणवारं।
जाव नमण कर एम, वदै वच हितकारं।
हितकारं जी, हे जगतारं, इमहीज तुम्हारा वच सारं।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, मिल्या प्रभु सुखकारं।।
१८. तिमहिज एह वच स्वाम, जाव ए तुम्ह वाणी।
एम करी नैं आम, जाव नवरं जाणी।
नवरं जाणी जी, प्रभु गुणखाणी, अभीचकुमर नैं रज ठाणी।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, चरण शिव नींसाणी।।
१९. तदनंतर हूं स्वाम, देवानुप्रिया पासं।
मुंड थई नैं जाव, दीक्षा लेइस जासं।
लेइस जासं जी, जिन कहै तासं, जिम सुख ह्वै तेम करो फासं।
अहो देवानुप्रियाज ! म कर प्रतिबंध पासं।।
२०. शत तेरम षष्ठमुद्देश, ढाल बेसौ उगरै।
तीन असीमीं तंत, भिक्षु गण तिलक सिरै।
गण तिलक सिरै जी,
भारीमाल वरै, ऋषिराय पसाय सुजश उचरै।
म्हारै आज दिहाड़ो धिन्न, सुजश 'जय' हरष धरै।।

१७. उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी—एवमेयं भंते !

१८. तहमेयं भंते जाव (सं० पा०) से जहेयं तुब्भे वदह त्ति कट्टु जं नवरं—देवाणुप्पिया ! अभीयिकुमारं रज्जे ठावेमि।

१९. तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि।
अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं।
(श० १३।१०८)

ढाल : २८४

केशीकुमार का राज्याभिषेक

दूहा

१. राय उदायन तिण समय, निसुणी वीर वचन्न।
हरष संतोष पायो घणो, तन मन थयो प्रसन्न।।
२. वीर प्रतै वंदन करी, नमस्कार करि सोय।
अभिषेक गज तेह प्रति, चढै चढी अवलोय।।
३. स्वाम तणाज समीप थी, मृगवन थकीज न्हाल।
नगर वीतभय छै जिहां, आवंतो भूपाल।।

४. *राय उदायन नैं तदा, विचारणा मन मांह्यो।
यावत चित में ऊपनां, एहवा अध्यवसायो।।
५. एक पुत्र ए मांहरै, अभीचि नाम कुमार।
इष्ट कांत व्हालो घणो, मनगमतो अपार।।
६. यावत दीठां हर्ष हुवै, सुणियां चित सोहरो।
ऊंबर फूल तणी परै, तसुं दर्शण दोहरो।।
७. ते माटै अभोचिकुमार नैं, राज देई वीर पास।
मुंड थई व्रत आदरूं, दिख्या लेऊं हुलास।।

*लय : प्रभवो मन में चिन्तवै या सीता सती सुत जनमिया

१. तए णं से उद्दायणे राया समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे

२. समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता तमेव आभिसेक्कं हत्थिं दुरुहइ, दुरुहित्ता

३. समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ मियवणाओ उज्जाणाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता जेणेव वीतीभये नगरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।
(श० १३।१०९)

४ तए णं तस्स उद्दायणस्स रण्णो अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

५. एवं खलु अभीयीकुमारे ममं एगे पुत्ते इट्ठे कंते पिए मणुण्णे।

६. जाव (सं० पा०) हिययनंदिजणणे उंबरपुप्फं पिव दुल्लभे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए ?

७. तं जदि णं अहं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. तो अभिचिकुमार राज नें विषे, राष्ट्र फौज सुप्रयोग।
यावत जनपद नें विषे, मनुष्य नें काम भोग।।
९. मूर्च्छित गृद्ध हुवै घणो, स्नेह-तंतु गूंथाय।
एकाग्र प्रति पाम्यो थको, भ्रमण करै अधिकाय।।
१०. आदि अंत नहिं जेहनों, दीर्घ-काल अवधार।
चिउं गति रूप अरण्य विषे, करिस्यै भ्रमण संसार।।
११. तो अभिचिकुंवर नें राज दे, श्रमण भगवंत पास।
प्रव्रज्या लेवी तिका, श्रेय नहीं मुझ तास।।

१२. केसीकुमार भाणेज छै, तेह प्रतै देइ राज।
दीक्षा लेवी वीर पै, मुझ श्रेय समाज।।

१३. एहवी करै विचारणा, नगर वीतिभय आवै।
नगर वीतिभय मध्य थई, ज्यां निज घर तिहां भावै।।
१४. उपस्थानसाला बारली, तिहां आवै नरिंद।
अभिषेक हस्ती विषे, ऊभो राखै अमंद।।
१५. अभिषेक हस्ती थकी, ऊतरै महाराय।
जिहां सिंहासण छै तिहां, आवै आवी नें ताय।।
१६. वर प्रधान सिंहासणे, पूरव स्हामों राय।
मुख करनें बेठो तिहां, सेवग पुरुष बोलाय।।
१७. सेवग पुरुष बोलायनें, महीपति वयण वदेह।
अहो तुम्है देवानुप्रिया! शीघ्र कार्य करो एह।।
१८. नगर वीतभय नें विषे, वली नगर नें बार।
कचर काढ जल छांटनै, जाव आज्ञा सूंपै सार।।

१९. एह वचन राजा तणो, सेवग करि अंगीकार।
सेवग सर्व कार्य करी, आज्ञा सूंपै तिवार।।
२०. राय उदायन तिण समय, वलि बीजो वार जगीस।
सेवग पुरुष बोलायनें, हुकम करै अवनीस।।
२१. शीघ्रहीज देवानुप्रिया! केशीकुमार नें देख।
महाअर्थे इत्यादि जे, प्रवर राज अभिषेक।।
२२. शिवभद्र नाम कुंवार नों, जिम शिवनृपति निहाल।
राज अभिषेक करावियो, तिम इहां सर्व संभाल।।
२३. जाव परम आयु पालजै, जन देवै आसीस।
इष्ट मनुष्य संग परवरचो, कीज्यो राज जगीस।।
२४. सिंधु सौवीर नें आदि दे, सोलै देश नों राज।
आप कीज्यो रूड़ी रीतसूं, रैत[1] रिख्या शुभ स्हाज।।
२५. नगर वीतिभय प्रमुख जे, तीन सय सुविशाल।
ऊपर त्रेसठ जाणजो, नगरागर नों न्हाल।।
२६. महासेन प्रमुख दश राजवी, अन्य बहु ईश्वर राय।
जाव तास अधिपतिपणों करतो छतो सुखदाय।।

---

१. प्रजा

८. तो णं अभीयीकुमारे रज्जे य रट्ठे य जाव (सं० पा०) जणवए य माणुस्सएसु य कामभोगेसु

९,१०. मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टिस्सइ।

११. तं नो खलु मे सेयं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए।

१२. सेयं खलु मे नियगं भाइणेज्जं केसिं कुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए,

१३,१४. एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता जेणेव वीयीभये नगरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वीयीभयं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गेहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आभिसेक्कं हत्थिं ठवेइ,

१५. आभिसेक्काओ हत्थीओ पच्चोरुभइ, पच्चोरुभित्ता जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

१६. सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति, निसीइत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ,

१७. सद्दावेत्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया!

१८. वीयीभयं नगरं सब्भितरबाहिरियं आसिय-समज्जिओवलित्तं जाव सुगंधवरगंधगंधियं गंधवट्टिभूयं करेह य कारवेह य, करेत्ता य कारवेत्ता य एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

१९. ते वि तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति। (श० १३।११०)

२०. तए णं से उद्दायणे राया दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—

२१. खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! केसिस्स कुमारस्स महत्थं महग्घं महरिहं विउलं एवं रायाभिसेओ

२२. जहा सिवभद्दस्स कुमारस्स तहेव भाणियव्वो

२३. जाव परमाउं पालयाहि, इट्ठजणसंपरिवुडे

२४. सिंधूसोवीरपामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं

२५. वीयीभयपामोक्खाणं तिण्णि तेसट्ठीणं नगरागरसयाणं

२६,२७. महसेणपामोक्खाणं दसण्हं राईणं, अण्णेसिं च बहूणं राईसर....कारेमाणे, पालेमाणे विहराहि त्ति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. सर्व प्रतै पालतो थको, तुम्है विचरजो स्वाम !
इम कही जय-जय शब्द नैं, प्रजुंभै जन ताम ।।
२८. हिव केसीकुंवर राजा थयो, मोटा हेमवंत जेम ।
वर्णक तेहनुं जाणवूं, यावत विचरै खेम ।।
२९. शत तेरम देश छठा तणो, बेसौ चउरासीमीं ढाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' मंगलमाल ।।

कट्टु जयजयसद्दं पउंजंति । (श० १३।१११)

२८. तए णं से केसी कुमारे राया जाए—महयाहिमवंत.... जाव रज्जं पसासेमाणे विहरइ । (श० १३।११२)

ढाल : २८५

उदायन का अभिनिष्क्रमण

दूहा

१. ताम उदायन नृपति हिव, केसी प्रति पूछंत ।
दीक्षा लेवां वांछां अम्है, मिलिया वीर महंत ।।
२. तिण अवसर केसी नृपति, सेवग पुरुष बोलाय ।
इम जिम जमाली तणैं, अधिकारे कहिवाय ।।
३. तिमहिज नगर अभ्यंतरे, बलै नगर रै बार ।
कचर काढ जल छांटनैं, शुद्ध करावी सार ।।
४. तिमहिज यावत ते सहु, दीक्षा मोच्छब देख ।
सझ करावै राजवी, आणी हरष विशेख ।।
५. तिण अवसर केशी नृपति, बहु गणनायक साथ ।
यावत परवरियो थको, मोच्छब करत विख्यात ।।
६. नृपति उदायण नैं तदा, सिंघासण बैसाण ।
मुख पूरव स्हामो करी, स्नान करावै जाण ।।

*नृप चरण-महोत्सव रंगरलिया । [ध्रुपदं]

७. एकसौ आठ सोनां नां कलशा, निर्मल जल करिनैं भरिया ।
जिम जमाली नां दीक्षा महोत्सव, तेम इहां सर्व उच्चरिया ।।
८. आठसौ चोसठ कलश जलभरिया, तिण करिनैं मज्जन करिया ।
केशी प्रमुख हजारां जनवृंद, पेखत नयन कमल ठरिया ।।

९. केशी नृपति कहै भण स्वामी ! स्यूं दीजै गुण करि भरिया ।
प्रकर्षै करिनैं स्यूं दीजै, स्यूं तुझ वांछा मन वरिया ।।
१०. किण वस्तू सूं अर्थ तुम्हारै, जे चाहवै सो कहो रलिया ।
केशी महिपत्ति अरज इसी विधि, करत ठरत तन मन मिलिया ।।
११. तिण अवसर ते नृपति उदायन, केसी प्रति इम उच्चरिया ।
बांछूं छूं देवानुप्रिया ! हूं, त्रिलक्ष सुवर्ण नां दरिया ।।

१. तए णं से उद्दायणे राया केसिं रायाणं आपुच्छइ । (श० १३।११३)
२. तए णं से केसी राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ—एवं जहा जमालिस्स (श० ९।१८०,१८१)
३,४. तहेव सब्भिंतरबाहिरियं तहेव जाव निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेंति । (श० १३।११४)

५. तए णं से केसी राया अणेगगणनायग जाव (सं० पा०) संपरिवुडे
६ उद्दायणं रायं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयावेति, निसीयावेत्ता

७,८. अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं एवं जहा जमालिस्स (श० ९।१८२) जाव महया-महया निक्खमणाभिसेगेणं अभिसिंचति, अभिसिंचित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावेति,

९. वद्धावेत्ता एवं वयासी—भण सामी ! किं देमो ? किं पयच्छामो ?
१०. किणा वा ते अट्ठो ? (श० १३।११५)

११. तए णं से उद्दायणे राया केसिं रायं एवं वयासी—इच्छामि णं देवाणुप्पिया !

---

*लय : रायकुंवर चढ्यो हय वर हरिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. देवाधिष्ठत कुत्रिकापण थो, दोय लक्ष दे संहरिया।
ल्यावो पात्र धर्मध्वज वारु, लक्ष एक नापित वरिया ।।
१३. जेम जमाली तिम सहु वर्णन, णवरं एह विशेष लिया।
अग्र केस पदमावती लेवै, प्रिय-विप्पयोग दुसह कहिया ।।

१४. तिण अवसर ते केसी महिपति, उत्तर स्हामो मुख करिया।
दूजी वार सिंघासण एहवो, ताम रचावै मन हरिया ।।
१५. राय उदायन नैं वलि राजा, सुवर्ण रूप कलश करिया।
शेष जमाली जिम यावत नृप, बैठा सिविका अंतरिया ।।

१६. इमहिज धाय अमा पिण बैठी, णवरं एह विशेष इहां।
हंस लक्षण पट्टशाट ग्रही नैं, पदमावती बैठीज जिहां ।।

१७. शेष तिमज यावत नृपनायक, सिवगा हुंती उतरिया।
श्रमण भगवंतमहावीर जिहां छै, तिहां आवंतहरष धरिया ।।

१८. श्रमण भगवंत वीर प्रभु नैं तब, प्रदक्षिणा दे त्रिण विरिया।
वंदी नमस्कार करि विधि सूं, ईशाणकूंण गमन करिया ।।
१९. अलंकार आभरण माला प्रति, पोतै उतार अलग धरिया।
कर सूं ग्रहण करै पदमावती, आंसूधारा संचरिया ।।

२०. जाव कहै हे स्वाम ! सौभागी, चरण विषे यत्ना करिया।
जाव प्रमाद न करिस्यो स्वामी ! एह अमोलक आदरिया ।।
२१. केसी नृपति अनैं पदमावती, वीर प्रतैज हरष धरिया।
नमस्कार वंदन करि विध सूं, यावत निज घर संचरिया ।।

२२. तिण अवसर ते नृपति उदायण,
निज कर सूंज उमंग बरिया।
पंचमुष्टि लोचन करि प्रभु पै, चरण अमलोक आदरिया ।।
२३. शेष ऋषभदत्त नीं पर कहिवो, जाव सर्व दुख क्षीण किया।
कलकलीभूत संसार थी छूटा, अजर अमर पद नैं वरिया ।।
२४. तेरम शत षष्ठम नों देश ए, बेसौ पच्यासीमीं ढाल इहां।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे,
'जय-जश' संपति रंगरलियां ।।

१२. कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणियं, कासवगं च सद्दावियं

१३. एवं जहा जमालिस्स (श० ९।१८४-१८९) नवरं— पउमावती अग्गकेसे पडिच्छइ पियविप्पयोगदूसहा। (श० १३।११६)

१४. तए णं से केसी राया दोच्चं पि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेति,

१५. उद्दायणं रायं सेया-पीतएहिं कलसेहिं ण्हावेति, ण्हावेत्ता सेसं जहा जमालिस्स (श० ९।१९०-१९२) जाव .... सीयं दुरुहइ, दुरुहित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सण्णिसण्णे।

१६. तहेव (श० ९।१९३,१९४) अम्मधाती, नवरं— पउमावती हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय ····उद्दायणस्स रण्णो दाहिणे पासे भद्दासणवरंसि सण्णिसण्णा।

१७. सेसं तं चेव (श० ९।१९५-२०९) जाव····पुरिस-सहस्सवाहिणीओ सीयाओ पच्चोरुभइ, पच्चोरुभित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ।

१८ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमइ।

१९. अवक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ। (श० १३।११७) तए णं सा पउमावती....अंसूणि विणिम्मुयमाणी

२०. उद्दायणं रायं एवं वयासी—जइयव्वं सामी ! नो पमादेयव्वं।

२१. केसी राया पउमावती य समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया। (श० १३।११८)

२२. तए णं से उद्दायणे राया सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ।

२३. सेसं जहा उसभदत्तस्स (श० ९।१५०,१५१) जाव सव्वदुक्खप्पहीणे। (श० १३।११९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २८६

अभीचिकुमार का आक्रोश

दूहा

१. अभिचिकुंवर तिणं अवसरे, अन्य दिवस किणवार।
मध्य-रात्रि अद्धा समय, मन में करै विचार।।

२. कुटुंब-जागरणा जागतां, ते गृह-चिंत करंत।
मन में चिंतन एहवो, जाव तास उपजंत।।

*सुणो भव्य प्राणी रे, अभिचिकुंवर विचार करै दुख आणी रे। [ध्रुपदं]

३. अभिचिकुंवर मन चिंतवै रे, हूं राय उदायन पूत।
अंगज प्रभावती तणो रे, राखण सगला सूत।।

४. राय उदायन तिण समय रे, मुझ प्रति छांडी तेह।
निज भाणेज केशी भणी रे, राज देई व्रत लेह।।

५. पुत्र छांड भाणेज नैं रे, राज दियै किण लेख।।
एहवो अकार्य तिण कियो रे, इम मन धरतो धेख।

६. मोटै अप्रीति भावे करी रे, मन नों विकार अपार।
मानसीक दुख तिण करी रे, व्याप्यो थको तिणवार।।

७. अंतेवर ले आपरो रे, निज परिवार संघात।
परवरियो थको चालियो रे, भंड मत्त उपकरण साथ।।

८. नगर वीतिभय थी तदा रे, नीकलियो दुख पाम।
पूर्वानुपूर्वे चालतो रे, ग्राम थकी बीजे ग्राम।।

९. जिहां चंपा नगरी अछै रे, छै जिहां कूणिक राय।
मासी पुत्र भाई जाणनैं रे, आवै तिहां चलाय।।

१०. वलि कुणिक नृप मोटको रे, ते पिण जाण तिवार।
अंगीकार करि विचरतो रे, चंपा नगर मझार।।

११. तिहां विस्तीर्ण भोग नीं रे, समृद्धि पामी सोय।
ते प्रति भोगवतो थको रे, विचरंतो अवलोय।।

१२. अभीचिकुंवर तिण अवसरे रे, श्रावक हुओ सुजाण।
जाण्या जीव अजीव नैं रे, पुन्य पाप पहिछाण।।

१३. जाव संत प्रतिलाभतो रे, विचरंतो अधिकाय।
उदायन राजऋषी विषे रे, वैरभाव छूटो नांय।।

१४. शत तेरम देश छठा तणो रे, बे सौ छयांसीमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' मंगलमाल।।

१. तए णं तस्स अभीयिस्स कुमारस्स अण्णदा कदाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि

२. कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

३. एवं खलु अहं उद्दायणस्स पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए,

४. तए णं से उद्दायणे राया ममं अवहाय नियगं भाइणेज्जं केसिं कुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ जाव (सं० पा) पव्वइए।

५,६. इमेणं एयारूवेणं महया अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूए समाणे
अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं 'त्ति' अप्रीतिकेन 'अप्रीतिस्वभावेन मनसो विकारो मानसिकं······· यत्तन्मनोमनसिकं तेन' (वृ० प० ६२१)

७. अंतेउरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए

८. वीतीभयाओ नयराओ निग्गच्छइ; निग्गच्छित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे

९,१०. जेणेव चंपा नयरी, जेणेव कूणिए राया, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता कूणियं रायं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ।

११. तत्थ वि णं से विउलभोगसमितिसमन्नागए यावि होत्था।

१२. तए णं से अभीयीकुमारे समणोवासए यावि होत्था— अभिगयजीवाजीवे।

१३. जाव अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, उद्दायणम्मि रायरिसिम्मि समणुबद्धवेरे यावि होत्था। (श० १३।१२०)

---

*लय : राजा राणी रंग थी रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २८७

व्रत-विराधना की परिणति

दूहा

१. तिण काले नें तिण समय, रत्नप्रभा ए नाम।
छै ते पृथ्वी नें विषे, नरक समीपे ताम।।

२. असुरकुमार तणां तिहां, चोसठ लक्ष विमास।
आख्या तसु आवास जे, अधिक मनोहर तास।।

*समता रस विरला[1]। [ध्रुपदं]

३. अभिचिकुंवर श्रावक रा व्रत पालै,
पिण निज अवगुण नहिं संभालै रे।
जीवादिक नो हुओ जाण प्रवीणो, राग-द्वेष न पाड्यो क्षीणो रे।।

४. सर्व जीव राशि खमावै तिण काले, जब राय उदाई नें टालै रे।
याद आयां उलटो द्वेष आवै,
जश कीर्त्ति पिण कांनां न सुहावै रे।।

५. सामायक पोसो जद करणो, जब राग द्वेष परहरणो रे।
पिण अभिचिकुंवर सामायक पोसा मांही,
उदाई नें खमावै नांही रे।

६. म्हारो राज हुंतो ते भाणेजा नें दीधो,
इसड़ो दगो मोसूं कीधो रे।
तिण सूं निरंतर हूं दुख पाऊं, तिणनैं हूं केम खमाऊं रे?

७. बाप तो हित बांछ्यो थो बेटा रो, पिण बेटे न कियो विचारो रे।
तिणरै राज करण री थी मन मांही,
तिणसूं संवली न सूझै कांई रे।।

८. इण रीते श्रावक नां व्रत पालै, और दोषण तो सगला टालै रे।
पिण राय उदाई सूं अंतरंग धेषो,
ते तो दिन-दिन अधिक विशेषो रे।।

९. पनरै दिन रो संथारो आयो, जद पिण नहीं खमायो रे।
ते श्री जिनधर्म विराधी नें मूओ,
ते तो मरनैं असुर देव हूओ रे।।

१०. हारयो विमानिक रा सुख भारी, ते बण गई द्वेष सूं खुवारी रे।
ऊंच पदवी सूं नीची पदवी पामी,
पड़ी अनंत सुखां री खामी रे।।

११. इण रत्नप्रभा पृथ्वी विषे तास, कह्या नरक नें पास रे।
चउसठ लक्ष आयावा पेख, असुरकुंवार नां देख रे।।

सोरठा

१२. इहां आयावा जाण, असुरकुमार तणांज जे।
भेद विशेष पिछाण, विशेष अर्थज एहनो।।

*लय : आसण रा रे जोगी

१. यह गीत आचार्य भिक्षु द्वारा विरचित है।

१. इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए निरयपरिसामंतेसु

२. चोयट्ठिं असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

८. तए णं से अभीयीकुमारे बहूइं वासाइं समणोवासग-परियागं पाउणइ

९-११ अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेएइ, छेएत्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए निरयपरिसामंतेसु चोयट्ठीए आयावाअसुरकुमारावास-सयसहस्सेसु अण्णयरंसि आयावाअसुरकुमारावासंसि आयावाअसुरकुमारदेवत्ताए उववण्णो।

१२,१३ चोयट्ठीए आयावा असुरकुमारावासेसु 'त्ति इह 'आयाव' त्ति असुरकुमारविशेषाः, विशेषतस्तु नावगम्यत इति। (वृ० प० ६२१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. नहिं मुज थकी जणाय, टीकाकार कह्यो इसो।
इक आयावे ताय, असुर आवासे ऊपनो ।।
१४. तिहां केयक पहिछाण, असुरकुमारज देव नीं।
एक पल्योपम जाण, स्थिती परूपी श्री जिने ।।
१५. एक पल्योपम जाण, आयु अभिची सुर तणो।
पायो पुन्य प्रमाण, बिण आलोयां मर गयो ।।
१६. *ते देव आउखो पूरो करि तेथ, ऊपजसी महाविदेह खेत रे।
तिहां स्थविरां री वाणी सुणे साध थासी,
करणी करे मोक्ष सिधासी रे ।।
१७. एहवा द्वेष सूं सम्यक्त व्रत खोवै, केइ अनंत-संसारी होवै रे।
इण रै कर्म थोड़ा तिणसूं ह्वैगो निकालो,
नहिं तो रुलै अनंतो कालो रे ।।
१८. इम सांभल नै उत्तम नर नारो,
किण सूं द्वेष म राखो लिगारो रे।
भूंडो भूंडैरी कमाई जासी, करसी जिसा फल पासी रे ।।
१९. श्रावक नें एहवो द्वेष न करणो, परभव सूं अहोनिशि डरणो रे।
पिण अभिचिकुमार सूं न हुओ टालो, ते कर्म तणो छै चालो रे ।।
२०. सेवं भंते ! सेवं भंते ! विशेष, शत तेरम षष्ठमुदेश रे।
बेसौ सत्यासीमीं ढाल सुहाई, 'जय-जश' संपति पाई रे ।।
त्रयोदशशते षष्ठोद्देशकार्थः ।।१३।६।।

१४. तत्थ णं अत्थेगतियाणं आयावगाणं असुरकुमाराणं देवाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता,
१५. तत्थ णं अभीयिस्स वि देवस्स एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता। (श० १३।१२१)
१६. गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव सव्व-दुक्खाणं अंतं काहिति। (श० १३।१२२)
२०. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १३।१२३)

ढाल : २८८

भाषा पद

दूहा

१. पूर्व उद्देसे अर्थ जे, भाषा कर कहिवाय।
ते माटै भाषा तणो, प्रश्नोत्तर सुखदाय ।।
२. नगर राजगृह नें विषे, जावत गोतम स्वाम।
वीर प्रतै वंदन करी, इम भाखै सिर नाम ।।

†स्वरूप भाषा नों भवियण ! ओलखो रे। [ध्रुपदं]

३. आत्मा ते जीव प्रभु ! भाषा अछै रे,
कै भाषा आत्म थी अन्य कहीव रे ?
जिन कहै आत्म जीव भाषा नहीं रे,
भाषा आत्म थी अन्य अजीव रे ।।

वा०—इहां गोतम प्रश्न पूछ्यो—आया भंते ! भासा इत्यादि। आत्मा कहितां जीव, ते भाषा छै ? एतलै भाषा जीव नों स्वभाव छै ? जे भणी जीव हीज

*लय : आसण रा रे जोगी
†लय : श्री जिणवर गणधर

१. य एतेऽनन्तरोद्देशकेऽर्था उक्तास्ते भाषयाऽता भाषाया एव निरूपणाय सप्तम उच्यते। (वृ० प० ६२१)
२. रायगिहे जाव एवं वयासी —
३. आया भंते ! भासा ? अण्णा भासा ?
गोयमा ! नो आया भासा, अण्णा भासा।

वा०—'आया भंते ! भास' त्ति आत्मा—जीवो भाषा जीवस्वभावा भाषेत्यर्थः यतो जीवेन व्यापार्यते जीवस्य च बन्धमोक्षार्थी भवति ततो जीवधर्मत्वाज्जीव इति व्यपदेशार्हा ज्ञानवदिति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते भाषा नों व्यापार करै छै अनै ते भाषा जीव नें हीज बंध मोक्ष करावनारी छै, ते भणी जीव ना धर्मपणां थकी जीव इम कहिवा जोग्य हुवै ज्ञान नीं परै।

अथवा जीव थकी अन्य भाषा, ते जीव नो स्वरूप नहीं श्रोत्रेंद्रिय नैं ग्राह्यपणैं करी, मूर्त्त—रूपीपणैं करी। जे श्रोत्रेंद्रिय नैं ग्राह्य ते रूपी छै। अनैं आत्मा ते अमूर्त्तिपणैं करी अरूपी कहियै। ते भणी भाषा आत्मा नों लक्षण नहीं, आत्मा थकी अनेरी छै। इण कारण थकी गोतम प्रश्न पूछयो। तेहनों उत्तर—ते भाषा आत्मरूप नहीं पुद्गलमय छै ते भाषा आत्मा करिकै निसृज्यमानपणां थकी, तथाविध पाषाणादिक नीं परै। जिम कोई पाषाण नैं न्हाखै तेहनीं परै जीव भाषा नैं बाहिर काढै।

अनैं दूजो हेतु—अचेतनपणां थकी आकाश नी परं। अनैं जे कह्यु—जीव व्यापार करै ते माटै भाषा जीव छै, ज्ञान नीं परै। ते पिण ऐकांतिक नहीं। जीव थकी अत्यन्त भिन्न स्वरूपवाला दातरलादिक नैं विषे पिण जीव नों व्यापार देखवा थकी।

जिम कोइ पुरुष दातरलादिक करी वनस्पति नें छेदै ते दातरलादिक नैं विषे जीव नो व्यापार दीसै, पिण ते दातरलादिक जीव नहीं। तिम भाषा जीव नां व्यापार थकी निकली, पिण ते भाषा जीव नहीं। तथा औदारिकादिक शरीर नैं विषे जीव नों व्यापार दीसै, पिण ते शरीर जीव नहीं। शरीर रूपी छै अनै जीव अरूपी छै ते माटै। तिम भाषा पिण जाणवी।

अथान्या भाषा—न जीवस्वरूपा श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वेन मूर्त्ततयाऽऽत्मनो विलक्षणत्वादिति शङ्का अतः प्रश्नः, अत्रोत्तरं—'नो आया भास' त्ति आत्मरूपा नासौ भवती, पुद्गलमयत्वादात्मना च निसृज्यमानत्वात्तथाविधलोष्ठादिवत्
अचेतनत्वाच्चाकाशवत्, यच्चोक्तं जीवेन व्यापार्यमाणत्वाज्जीवः स्याज्ज्ञानवत्तदनैकान्तिकं,
जीवव्यापारस्य जीवादत्यन्तं भिन्नस्वरूपेऽपि दात्रादौ दर्शनादिति। (वृ० प० ६२१)

४. हे प्रभु! भाषा ते रूपी अछै रे,
के भाषा अरूपी कहियै स्वाम रे?
जिन कहै भाषा तो रूपी अछै रे,
पिण भाषा अरूपी नहीं छै ताम रे।।

४. रूविं भंते! भासा? अरूविं भासा?
गोयमा! रूविं भासा, नो अरूविं भासा।

वा०—रूविं भंते भासति—हे भदंत! रूपी भाषा कान नैं अनुग्रह अनैं उपघातकारीपणां थकी। तथाविध कर्ण-आभरणादिक नीं परै। जिम कोई कान नों आभरण कान नैं सुखकारक हुवै ते कान नैं अनुग्रहकारी कहियै। अनैं कोयक कान नों आभरण कान नैं दुखदाई हुवै ते उपघातकारी हुवै, तेहनीं परै।

अथ हिवै अरूपी भाषा छै, चक्षु नैं अनुपलभ्यमानपणां थकी, चक्षु नैं दृष्टि न आवै ते भणी, धर्मास्तिकायादिक नीं परै। जिम धर्मास्तिकायादिक चक्षु नैं दृष्टि न आवै तिम भाषा पिण चक्षु नैं दृष्टि न आवै, इण कारण भाषा अरूपी छै। इसो प्रश्न पूछयो। तेहनों उत्तर—भाषा रूपी छै, अरूपी नहीं। जे चक्षु अग्राह्यपणुं ते अरूपीपणो हुवै, ते ऐकांतिक नहीं। परमाणु, वायु, पिशाचादिक चक्षु अग्राह्यपणै छै, तो पिण तेहनैं रूपी कहियै, पिण अरूपी न कहियै। जे भणी धर्मास्तिकायादिक अरूपी छै, ते पिण चक्षु नैं ग्राह्य न आवै। अनै परमाणु आदिक रूपी छै, ते पिण चक्षु नैं ग्राह्य न आवै। ते माटै चक्षु-ग्राह्य न आवै ते अरूपीज कहियै, एहवूं एकांत पक्ष नहीं।

जेहमें वर्णादिक पावै ते रूपी अनैं जेहमें वर्णादिक न पावै ते अरूपी—ए रूपी-अरूपी नों लक्षण जाणवो। अनैं भाषा पुद्गल छै। तेहनैं विषे वर्णादिक पावै छै। ते भाषा नैं रूपी कहियै, पिण अरूपी न कहियै।

वा०—'रूविं भंते! भास' त्ति रूपिणी भदन्त! भाषा श्रोत्रस्यानुग्रहोपघातकारित्वात्तथाविधकर्णाभरणादिवत्।
अथारूपिणी भाषा चक्षुषाऽनुपलभ्यत्वाद्धर्मास्तिकायादिवदिति शङ्का अतः प्रश्नः, उत्तरं तु रूपिणी भाषा, यच्च चक्षुरग्राह्यत्वमरूपित्वसाधनायोक्तं तदनैकान्तिकं, परमाणुवायुपिशाचादीनां रूपवतामपि चक्षुरग्राह्यत्वेनाभिमतत्वादिति। (वृ० प० ६२१)

५. हे प्रभु! भाषा सचित्त कहीजियै रे,
अथवा भाषा ते अचित्त कहाय रे?
जिन कहै भाषा सचित्त हुवै नहीं रे,
भाषा ते अचित्त कहीजै ताय रे।।

५. सचित्ता भंते! भासा? अचित्ता भासा?
गोयमा! नो सचित्ता भासा, अचित्ता भासा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०--अनात्मा रूप पिण ए भाषा सचित्त छै जीवत-शरीरवत। जे जीव जीवै छै, त्यां लग तेहनों शरीर सचित्त कहियै। चित्त ते चेतन—जीव। तिणे करी सहित ते शरीर सचित्त कहियै। तिम भाषा पिण सचित्त कहियै। इण कारण ए प्रश्न पूछचो, उत्तर—जीव थी नीकल्या पुद्गल समुदायरूपपणां थकी ते भाषा नैं सचित्त न कहियै, अचित्त कहियै।

वा०—अनात्मरूपाऽपि सचित्तासौ भविष्यति जीवच्छरीरवदिति पृच्छन्नाह—'सचित्ते' त्यादि, उत्तरं तु नो सचित्ता जीवनिसृष्टपुद्गलसंहतिरूपत्वात्तथाविधलेष्ठुवत्। (वृ० प० ६२२)

६. हे प्रभु! भाषा जीव कहीजियै रे,
अथवा भाषा ते अजीव होय रे?
जिन कहै भाषा जीव हुवै नहीं रे,
भाषा नैं अजीव कहियै सोय रे॥

६. जीवा भंते! भासा? अजीवा भासा?
गोयमा! नो जीवा भासा, अजीवा भासा।

वा०—जीवा भंते! भासा इत्यादि—जीवै ते जीव, प्राण धारण स्वरूप भाषा छै कै जीव लक्षण रहित अजीव भाषा छै? एहनों उत्तर—ते भाषा जीव नहीं, भाषा नैं उच्छ्वासादिक प्राण नां अभाव थकी।

वा०—'जीवा भंते!' इत्यादि, जीवतीति जीवा—प्राणधारणस्वरूपा भाषा उतैतद्विलक्षणेति प्रश्नः, अत्रोत्तरं नो जीवा, उच्छ्वासादिप्राणानां तस्या अभावादिति। (वृ० प० २२२)

७. हे प्रभु! भाषा जीवां रै अछै रे,
कै भाषा अजीवां रै कहिवाय रे।
जिन कहै भाषा जीवां रे अछै रे,
पिण भाषा अजीव तणैं नहिं थाय रे॥

७. जीवाणं भंते! भासा? अजीवाणं भासा?
गोयमा! जीवाणं भासा, नो अजीवाणं भासा।

सोरठा

८. अक्षर तणो कहेह, तालु आदि व्यापार थी।
ऊपजिया छै एह, जीवाश्रितपणां थकी॥
९. यद्यपि शब्द विमास, अजीव थी पिण ऊपजै।
तो पिण भाषा तास, कहियै नहिं तसु न्याय हिव॥
१०. जे भाषा पर्याप्ति, जीव तणैंज हुवै अछै।
अजीव रै नहिं प्राप्ति, तिण सुं जीवां रै अछै॥
११. अजीव थी उत्पन्न, शब्द तिके भाषा नथी।
अभाषापणैं प्रपन्न, तसु अभिमतपणां थकी॥

८. वर्णानां ताल्वादिव्यापारजन्यत्वात् ताल्वादिव्यापारस्य च जीवाश्रितत्वात्। (वृ० प० २२२)
९. यद्यपि चाजीवेभ्यः शब्द उत्पद्यते तथाऽपि नासौ भाषा। (वृ० प० २२२)
१०,११. भाषापर्याप्तिजन्यस्यैव शब्दस्य भाषात्वेनाभिमतत्वादिति। (वृ० प० २२२)

१२. *बोल्यां पहिली भगवंत! भाषा अछै रे,
कै बोलै तिण वेला भाषा होय रे?
कै भाषा बोल्यां नैं समय थयां पछै रे,
भाषा तिण वेला कहीजै सोय रे?

१२. पुव्विं भंते! भासा? भासिज्जमाणी भासा? भासासमयवीतिक्कंता भासा?

१३. श्री जिन भाखै गोयम! सांभलै रे,
बोल्यां पहिली भाषा नहिं होय रे।
भाषां तो बोलंती वेला अछै रे,
बोल्यां पाछै भाषा नहिं कोय रे॥

१३. गोयमा! नो पुव्विं भासा, भासिज्जमाणी भासा, नो भासासमयवीतिक्कंता भासा।

१४. बोल्यां पहिली प्रभु! भाषा भेदियै रे,
कै बोलंतां भाषा द्रव्य भेदाय रे?
भाषा समयो व्यतिक्रंत थयां पछै रे,
भाषा भेदावै छै जिनराय! रे॥

१४. पुव्विं भंते! भासा भिज्जति? भासिज्जमाणी भासा भिज्जति? भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति?

१५. जिनवर भाखै गोतम! सांभलै रे,
भाषा निसर्ग समय थी जोय रे।
पूर्वे भाषा नां द्रव्य भेदे करी रे, भाषा भेदावै नहिं छै कोय रे॥

१५. गोयमा! नो पुव्विं भासा भिज्जति।

---
*लय: श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. बोलंती वेला निसर्ग समय में रे, भाषा नां द्रव्य तिके भेदाय रे।
इतरै बोलंतां द्रव्य भाषा तणां रे,
भेद पामै छै तसु हिव न्याय रे।।

१६. भासिज्जमाणी भासा भिज्जति।
भाष्यमाणा—निसर्गावस्थायां वर्त्तमाना भाषा।
(वृ० प० ६२२)

सोरठा

१७. इहां कोइक जन जाण, वक्ता मंद प्रयत्न हुवै।
अभिन्न हीज पहिछाण, भाषा द्रव्य प्रति नीसरै।।
१८. नीकलिया रव तेह, असंख द्रव्यात्मक भाव थी।
वलि स्थूलपणां थी जेह, भाषा द्रव्य भेदाय छै।।
१९. भेदीजता द्रव्य तेह, संख्याता योजन जई।
शब्द परिणाम तजेह, मंद वदै तसु न्याय ए।।
२०. अथवा कोइक जाण, वक्ता महाप्रयत्न ह्वै।
शीघ्र उच्च स्वर वाण, ते तो निश्चै करि तदा।
२१. भाषा द्रव्य आदान, ग्रहण अनैं निसर्ग बिहुं।
प्रयत्ने करि जाण, द्रव्य भेदी नैं नीसरै।
२२. सूक्ष्मपणां थी तेह, वलि ते बहुलपणां थकी।
अनंत गुणां द्रव्य जेह, वृद्धि करी बधता थका।।
२३. ते षट दिशि रै मांय, लोक अंत पामै अछै।
वृत्ति थकी ए न्याय, आख्यो छै म्हैं इहविधे।।
२४. तिणसुं इम कहिवाय, जेह अवस्था नैं विषे।
शब्द परिणाम छै ताय, भाष्यमान नो भाव तब।।

१७. इह कश्चिन्मन्दप्रयत्नो वक्ता भवति स चाभिन्नान्येव शब्दद्रव्याणि निसृजति। (वृ० प० ६२२)
१८. तानि च निसृष्टान्यसंख्येयात्मकत्वात् परिस्थूरत्वाच्च विभिद्यन्ते। (वृ० प० ६२२)
१९. विभिद्यमानानि च संख्येयानि योजनानि गत्वा शब्दपरिणामत्यागमेव कुर्वन्ति। (वृ० प० ६२२)
२०,२१. कश्चित्तु महाप्रयत्नो भवति स खल्वादानविसर्गप्रयत्नाभ्यां भित्त्वैव विसृजति। (वृ० प० ६२२)

२२,२३. तानि च सूक्ष्मत्वाद्बहुत्वाच्चानन्तगुणवृद्धया वर्द्धमानानि षट्सु दिक्षु लोकान्तमाप्नुवन्ति।
(वृ० प० ६२२)

२४. अत्र च यस्यामवस्थायां शब्दपरिणामस्तस्यां भाष्यमाणताऽवसेयेति। (वृ० प० ६२२)

२५. *भाषा समयो जे व्यतिक्रम्यां पछै रे,
भाषा भेदावै नहिं छै कोय रे।
भाषा परिणाम तज्या तिण सर्वथा रे,
तिणसूं काल अनागत भेद न होय रे।।
२६. हे प्रभु! भाषा कितै प्रकार छै रे?
च्यार प्रकार कही जिनराय रे।
सत्या असत्या नैं सत्यामृषा रे, असत्यामृषा ववहार कहाय रे।।

२५. नो भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति।
(श० १३।१२४)
'नो भासासमयवीइक्कंते' ति परित्यक्तभाषापरिणामेत्यर्थः। (वृ० प० ६२२)
२६. कतिविहा णं भंते! भासा पण्णत्ता?
गोयमा! चउव्विहा भासा पण्णत्ता, तं जहा—
सच्चा, मोसा, सच्चामोसा, असच्चामोसा।
(श० १३।१२५)

दूहा

२७. पूर्वे भाषा नैं कही, बहुलपणैं तो तेह।
मन नैं पहिलां ह्वै अछै, तिणसुं मन कहेह।।

२७. अनन्तरं भाषा निरूपिता, सा च प्रायो मनःपूर्विका भवतीति मनोनिरूपणायाह— (वृ० प० ६२२)

मन पद

२८. *आतमा हे भगवन! मन कहियै अछै रे,
कै आतमा थी अन्यज मन कहिवाय रे?
जिन कहै गोतम! आतम मन नहीं रे,
आतम थी अन्य मन छै ताय रे।।

२८. आया भंते! मणे? अण्णे मणे?
गोयमा! नो आया मणे, अण्णे मणे।

*लय: श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. जिम भाषा कही तिम कहिवो मन भणी रे,
जाव अजीव तणै मन नांहि रे।
द्रव्य मन आश्री ए सह वारता रे,
भावे मन आश्री नहिं छै ताहि रे ।।

२९. जहा भासा तहा मणे वि जाव (सं० पा०) नो अजीवाणं मणे।

सोरठा

३०. 'द्रव्य मन पुद्गल होय, भावे मन तो जीव छै।
जिन वच वारू जोय, देखो न्याय सिद्धांत नों ।।
३१. दश जीव परिणामी मांय, जोग परिणामी जिन कह्या।
भाव जोग इण न्याय, दशमैं ठाणै[1] देखलो ।।
३२. शत बारम पंचमुद्देश[2], उट्ठाण कम्म बल वीर्य नें।
नहीं वर्णादिक लेश, पिण ए भावे जोग है ।।
३३. शत तेरम धुर उदेश[3], नोइंदिय नो अर्थ इम।
चैतन्य रूप विशेष, भाव मन ते इम वृत्तौ[4] ।।
३४. शत बारम दशम उद्देश[5], जोग आतमा जिन कही।
भाव जोग ए शेष, ज्ञान आतमा तेम ए ।।
३५. ज्ञान दर्शण चारित्त, एहनैं पिण आतमा कही।
ए जिम जीव कथित्त, जोग आतम पिण जीव तिम ।।
३६. इत्यादिक बहु ठाम, भाव जोग तो जीव छै।
पुद्गल नं परिणाम, द्रव्य जोग जिनजी कह्यो ।।' (ज०स०)

३७. *हे प्रभु ! पहिलां मन कहियै अछै रे,
कै मन ते प्रवर्त्तण लागो ताय रे।
एतलै वर्त्तमान काले तसु रे, मन नैं कहीजै छै जिनराय रे ।।

३७. पुव्विं भंते ! मणे ? मणिज्जमाणे मणे ?

३८. इम जिम भाषा नों वर्णन कियो रे,
मन नैं पिण कहिवो तिणहिज रीत रे ।
काल वर्त्तमान विषे मन नैं कह्युं रे,
अतीत अनागत नहिं संगीत रे ।।

३८. एवं जहेव भासा। (श० १३।१२६)

३९. कितरै प्रकार प्रभु ! मन दाखियो रे ?
जिन कहै मन है च्यार प्रकार रे।
सत्य असत्य अनैं सत्यमोस छै रे,
चउथो असत्यामोस ववहार रे ।।

३९. कतिविहे णं भंते ! मणे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउव्विहे मणे पण्णत्ते, तं जहा—सच्चे, मोसे, सच्चामोसे, असच्चामोसे। (श० १३।१२७)

सोरठा

४०. केवल एह कहिवाय, मनोद्रव्य समुदाय ते।
चिंतन तणोज ताय, उपगारी ते द्रव्य है ।।
४१. तथा मनः-पर्याप्त, नाम कर्म नां उदय थी।
पुद्गल तेहिज आप्त, इहविधि आख्यो वृत्ति में ।।
४२. ते मनोद्रव्य भेदाय, भाषा द्रव्य तणी परैं।
नहिं संखेज योजन जाय, षट दिश वलि लोकंत लग ।।

४०,४१. केवलमिह मनोद्रव्यसमुदयो मननोपकारी मनः-पर्याप्तिनामकर्मोदयसम्पाद्यः। (वृ० प० ६२२)

४२. भेदश्च तेषां विदलनमात्रमिति। (वृ० प० ६२२)

---

१. ठाणं १०।१८ २. श० १२।१११ ३. श० १३।३
४. भ० वृ० प० ५९९ ५. १२।२०२
***लय : श्री जिणवर गणधर**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. आख्यो मन स्वरूप, ते तो काय थकांज ह्वै।
ते माटे तद्रूप, करै निरूपण काय नों।।

४३. अनन्तरं मनो निरूपितं तच्च काये सत्येव भवतीति कायनिरूपणायाह— (वृ० प० ६२३)

काय पद

४४. *आतम भगवंत ! ते काया अछै रे,
कै आतम थी अन्य काय कहिवाय रे ?
जिन कहै आतम पिण काया अछै रे,
आतम थी अन्य काय पिण थाय रे।।

४४. आया भंते ! काये ? अण्णे काये ?
गोयमा ! आया वि काये, अण्णे वि काये।

सोरठा

४५. वृत्ति विषे इम वाय, आतम काय इण न्याय है।
किणहि प्रकारे ताय, आतम काय थी भिन्न नथी।।
४६. खीर नीर जिम जाण, तथा अग्नि लोह पिंडवत।
वलि कंचन पाषाण, तेम आतम नै काय है।।
४७. काय स्पर्शना थाय, तो आतम नैं वेदवूं।
ए नय वचने ताय, आतम प्रति काया कही।।
४८. जीव थकी अन्य काय, ते तो प्रत्यक्ष एहिज छै।
जंतू परभव जाय, काया नों रहिवूं इहां।।
४९. जो जीव काया ह्वै एक, तो तनु अंशज छेदवे।
जीव अंश नो पेख, छेद तणोज प्रसंग ह्वै।।
५०. जो तनु नो ह्वै दाह, तो आतम दाह प्रसंग ह्वै।
जंतू-दाहे ताय, परलोक अभाव प्रसंग ह्वै।।
५१. ते माटै कहिवाय, किणही प्रकारे करी।
आतम थकी अन्य काय, वृत्तिकार इम आखियो।।
५२. 'खंधक नैं अधिकार', गुरु लघु जीव भणी कह्यो।
ते धुर शरीर च्यार, तेह सहित जंतू लियो।।
५३. तेम इहां कहिवाय, काया जीव सहीत ते।
आतम कहियै ताय, नय वच ववहारे करी।।
५४. काल वर्ण अवलोय, भमर कह्यो भगवंत जिम।
नय ववहारे जोय, पंच वर्ण निश्चै नये।।'[ज० स०]

४५. आत्माऽपि कायः कथञ्चित्तदव्यतिरेकात्। (वृ० प० ६२३)
४६. क्षीरनीरवत् अग्न्ययस्पिण्डवत् काञ्चनोपलवद्वा। (वृ० प० ६२३)
४७. अत एव कायस्पर्शे सत्यात्मनः संवेदनं भवति। (वृ० प० ६२३)
४८. अत एव च कायेन कृतमात्मना भवान्तरे वेद्यते। (वृ० प० ६२३)
४९. अत्यन्ताभेदे हि शरीरांशच्छेदे जीवांशच्छेदप्रसङ्गः। (वृ० प० ६२३)
५०,५१. तथा शरीरस्य दाहे आत्मनोऽपि दाहप्रसंगेन परलोकाभावप्रसंग इत्यतः कथञ्चिदात्मनोऽन्योऽपि काय इति। (वृ० प० ६२३)

५५. *हे प्रभु ! रूपी कहिजै काय नैं रे,
अथवा अरूपी कहियै काय रे ?
जिन कहै रूपी पिण ए काय छै रे,
वलि काय अरूपी पिण कहिवाय रे।।

५५. रूविं भंते ! काये ? अरूविं काये ?
गोयमा ! रूविं पि काये, अरूविं पि काये।

सोरठा

५६. रूपी पिण ए काय, औदारिकादिक चिहुं तनु।
स्थूल रूप पेक्षाय, काय भणी रूपी कही।।
५७. कार्मण तनु जे काय, अति सूक्षम रूपी भणी।
कही अरूपी ताय, काय अरूपी इम वृत्तौ।।

५६. 'रूविं पि काए' त्ति रूप्यपि कायः औदारिकादिकायस्थूलरूपापेक्षया। (वृ० प० ६२३)
५७. अरूप्यपि कायः कार्म्मणकायस्यातिसूक्ष्मरूपित्वेनारूपित्वविवक्षणात्। (वृ० प० ६२३)

---

१. श० २।४६

*लय : श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—'जिम तेउ वाउ नैं गति आश्री त्रस कह्या, पिण तिण में त्रस जीव रो भेद नथी। तथा जिम असन्नी मरी प्रथम नरके, असुर अनैं व्यंतर में ऊपजै। तिहां विभंग अनाण न लाभै, तिहां लगै असन्नी कह्या, पिण तिणमें असन्नी जीव रो भेद नथी। तथा दशवैकालिक अध्येन आठ में अति सूक्ष्म माटै आठ सूक्ष्म कह्या। पिण तिणमें सूक्ष्म जीव रो भेद नथी। तिम कार्मण शरीर अति सूक्ष्म, ते आश्री काय अरूपी कही। पिण तिणमें अरूपी अजीव रो भेद नथी। कार्मण नैं वृत्ति में अरूपी कह्यो ते इण न्याय नय वचने करी कहै तो कहण मात्र छै। पिण कार्मण शरीर में भेद तो रूपी अजीव रो छै'। [ज० स०]

५८. हे प्रभु ! सचित्त कहिजै काय नैं रे,
कै अचित्त कहिजै छै ए काय रे ?
श्री जिन भाखै काया सचित्त रे,
वलि काया ते अचित्त पिण कहिवाय रे ।।

५८. सचित्ते भंते ! काये ? अचित्ते काये ?
गोयमा ! सचित्ते वि काये, अचित्ते वि काये।

सोरठा

५९. कहियै सचित्त काय, जीवत अवस्था नैं विषे।
सचित्त कही इण न्याय, चेतन सहितपणां थकी ।।
६०. तथा अचित्त पिण काय, मृत अवस्था नैं विषे।
अचित्त कही इण न्याय, जीव अभाव थकी वृत्तौ ।।

५९. 'सचित्ते वि काए' जीवदवस्थायां चैतन्यसमन्वितत्वात्। (वृ० प० ६२३)
६०. 'अचित्ते वि काए' मृतावस्थायां चैतन्यस्याभावात्। (वृ० प० ६२३)

६१. *हे प्रभु ! जीव कहीजै काय नैं,
अथवा अजीव कहीजै काय रे ?
जिन कहै जंतु पिण ए काय छै,
वलि काय ते अजीव पिण कहिवाय रे ।।

६१. जीवे भंते ! काये ? अजीवे काये ?
गोयमा ! जीवे वि काये, अजीवे वि काये।

सोरठा

६२. जीव सहित जे काय, जीव काय उपचार नय।
जीव रहित तनु ताय, अजीव काय प्रत्यक्ष ही ।।
६३. *हे प्रभु ! जीव तणें ए काय ह्वै,
अथवा अजीव तणें ह्वै काय रे।
जिन कहै जीव तणैं काया हुवै,
वलि काया अजीव तणैं पिण थाय रे ।।

६३. जीवाणं भंते ! काये ? अजीवाणं काये ?
गोयमा ! जीवाण वि काये, अजीवाण वि काये।

सोरठा

६४. जीव तणैं पिण काय, काया सहित जीव जे।
ते माटै ए न्याय, जीवां रै काया कही ।।
६५. अजीव नैं पिण काय, जिन प्रमुख नीं स्थापना।
काय शरीर कहाय, तनु आकारज इम वृत्तौ ।।
६६. आदि प्रमुख रै मांय, नृपति प्रमुख नीं स्थापना।
अजीव नैं कहिवाय, काय शरीर आकार जे ।।

६४-६६. 'जीवाणवि काये' त्ति जीवानां सम्बन्धी 'कायः' शरीरं भवति, 'अजीवाणवि काये' त्ति अजीवानामपि स्थापनार्हदादीनां 'कायः' शरीरं भवति शरीराकार इत्यर्थः। (वृ० प० ६२३)

६७. *काया प्रभु ! जीव थकी पहिलां हुवै रे,
कै काइज्जमाण कहीजै काय रे।
कै काय समयो व्यतिक्रंत थयां पछै रे,
काय कहीजै छै जिनराय रे ?

६७. पुव्विं भंते ! काये ? कायिज्जमाणे काये ? कायसमयवीतिक्कंते काये ?

---

*लय : श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६८. जिन कहै जीव संबंधी काय थी रे,
पहिलां पिण काय हुवै छै ताय रे।
काइज्जमाणे पिण काया हुवै रे,
काय समयो व्यतिक्रांत थयां पिण काय रे ॥

६८. गोयमा ! पुव्विं पि काये, कायिज्जमाणे वि काये, कायसमयवीतिक्कंते वि काये।

सोरठा

६९. होस्यै जीव संबंध, जिम मृत दर्दुर तनु तणौं।
तेहनीं परै प्रबंध, एह वचन लोकीक नों॥
७०. प्रथम जीव थी काय, मूंआ डेडका नों तनु॥
लोक कहै ते मांय, जंतू आवणहार छै॥
७१. वनस्पति रै मांही, कह्यो पोटपरिहार प्रभु।
फूल जीव मर ताहि, हुस्यै सप्त तिल सूंघणी॥
७२. वर्ष चउवीस विचार, गर्भ विषे काया रहै।
रही तिहां वर्ष बार, तेहिज तथा अन्य ऊपजै॥
७३. ते माटै ए वाय, जीव संबंधज काल थी।
पहिलां कहियै काय, जीव पछै तिहां ऊपजै॥
७४. काइज्जमाणे काय, जीव जिको काया प्रतै।
चिणवा लागो ताय, गर्भ अवस्था काय पिण॥
७५. जीव काय नैं ताय, काय करण लक्षण समय।
व्यतिक्रम पछैज काय, मूआ कलेवर नीं परै॥

६९,७०. 'पुव्विंपि काए' त्ति जीवसम्बन्धंकालात्पूर्वमपि कायो भवति यथा भविष्यज्जीवसम्बन्धं मृतदर्दुरशरीरं। (वृ० प० ६२३)

७४. 'काइज्जमाणेवि काए' त्ति जीवेन चीयमानोऽपि कायो भवति यथा जीवच्छरीरं। (वृ० प० ६२३)

७५. 'कायसमयवीतिक्कंतेवि काए' त्ति कायसमयो—जीवेन कायस्य कायताकरणलक्षणस्तं व्यतिक्रान्तो यः स तथा सोऽपि काय एव मृतकडेवरवत्। (वृ० प० ६२३)

७६. *प्रभु ! पहिला ए काय भेद पामै अछै रे,
काइज्जमाणे काय भेदाय रे।
कै काय समयो व्यतिक्रांत थयां पछै रे,
काया भेदावै छै जिनराय रे ?

७६. पुव्विं भंते ! काये भिज्जति ? कायिज्जमाणे काये भिज्जति ? कायसमयवीतिक्कंते काये भिज्जति ?

७७. जिन कहै पहिलां काय भेदाय छै रे,
काइज्जमाणे पिण काय भेदाय रे।
काय समयो व्यतिक्रांत थयां पछै रे,
काय भेदावै हिव तसु न्याय रे॥

७७. गोयमा ! पुव्विं पि काये भिज्जति, कायिज्जमाणे वि काये भिज्जति, कायसमयवीतिक्कंते वि काये भिज्जति। (श० १३।१२८)

सोरठा

७८. काय विषे जे जीव, उत्पत्ति समय थकी प्रथम।
पामै भेद अतीव, मधु घटादिक न्याय करि।
७९. मधु घालण रै काज, कुंभ स्थाप्यो पिण जे मधु-
घाल्यो नहीं समाज, तो पिण मधु-कुंभ जन कहै॥
८०. द्रव्य काय भेदाय, खिण-खिण प्रति पुद्गल तणो।
हाण वृद्धि पिण थाय, चय उपचय नां भाव थी॥
८१. काइज्जमाण भेदाय, जीव कायीक्रीयमाण पिण।
काय भेदियै ताय, तिण ऊपर दृष्टांत हिव॥

७८-८०. 'पुव्विं पि काए भिज्जइ' त्ति जीवेन कायतया ग्रहणसमयात्पूर्वमपि कायो मधुघटादिन्यायेन द्रव्यकायो भिद्यते प्रतिक्षणं पुद्गलचयापचयभावात्। (वृ० प० ६२३)

८१. 'काइज्जमाणेवि काए भिज्जइ' त्ति जीवेन कायीक्रियमाणोऽपि कायो भिद्यते। (वृ० प० ६२३)

---

*लय : श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२. नदी कण समूह पिछाण, तेहनी मुष्टि ग्रहणवत।
खिण-खिण पुद्गल जाण, परिसाटन नां भाव थी।।
८३. काय समय व्यतिक्रंत, कायपणों तेहनैं अछै।
भूत भाव तसु हुंत, गये काल तसु भाव थो।।
८४. घृत-कुंभ हुंतो अतीत, तो पिण घृत-कुंभ नाम तसु।
तद्वत भेद प्रतीत, पुद्गल तणां स्वभाव थी।।
८५. चूर्णिकार कहेह, केवल कायज शब्द नों।
शरीर अर्थ तजेह, अंगीकृत चय मात्र ते।।
८६. काय शब्द ए जाण, सगलाई भावां तणो।
जे सामान्य पिछाण, शरीर उपचय मात्र है।।

८७. आतम काय कहिवाय, प्रदेश नों संचय तसु।
आतम थकी अन्य काय, प्रदेश संचै तास पिण।।
८८. रूपी काय कहाय, पुद्गल खंध अपेक्षया।
अछै अरूपी काय, जंतू धर्मास्ति प्रमुख।।
८९. सचित्त काय कहाय, जोवत तनू अपेक्षया।
अछै अचित्त ही काय, पुद्गल-संचय पेक्षया।।
९०. जीव काय इण न्याय, उच्छ्वासादी युक्त जे।
अवयव-संचय थाय, अजीव काय तसु विपरजय।।
९१. जीवां नीं जे काय, बहु जीवां नीं राशि जे।
पुद्गल-राशि कहाय, काय अजीवां नी तिका।।
९२. शेष अपर पिण भाव, कहिवा रूड़ी रीत सूं।
काय तणैं प्रस्ताव, काय भेद कहियै हिवै।।
९३. हे प्रभु ! काय परूपी कतिविधै रे ?
जिन कहै सात प्रकारे काय रे।
भेद औदारिक पहिलो भाखियो रे,
औदारिकमिश्र द्वितीय कहिवाय रे।।
९४. वैक्रिय अनैं मिश्र वैक्रिय तणो रे,
आहारक अनै आहारकमोस रे।
सप्तम भेद कारमण जोग छै रे,
ए सातूं काया नां जोग कहीस रे।।

सोरठा

९५. औदारिक तनु ईज, पुद्गल खंधपणां थकी।
उपचयपणां थकीज, काया कही इण कारणैं।।
९६. पर्याप्त में पाय, एहवूं आख्युं वृत्ति में।
पिण जोतां वर न्याय, अपर्याप्त में पिण हुवै।।
९७. बांधी तनु पर्याय औदारिक कहियै तदा।
अपर्याप्तो कहाय, सहु पर्याय बंधी नथी।।
९८. औदारिक नो मीस, हुवै कारमण साथ जे।
अपर्याप्तो कहीस, तेरम गुणस्थानक वलि।

*लय : श्री जिणवर गणधर

८२. सिकताकणकलापमुष्टिग्रहणवत् पुद्गलानामनुक्षणं परिशाटनभावात्। (वृ० प० ६२३)
८३,८४. 'कायसमयवीतिक्कंतेऽवि काये भिज्जइ' त्ति कायसमयव्यतिक्रान्तस्य च कायता भूतभावतया घृतकुम्भादिन्यायेन, भेदश्च पुद्गलानां तत्स्वभावतयेति। (वृ० प० ६२३)
८५,८६. चूर्णिकारेण पुनः कायसूत्राणि कायशब्दस्य केवलशरीरार्थत्यागेन चयमात्रवाचकत्वमङ्गीकृत्य व्याख्यातानि, यदाह—'कायसद्दो सव्वभावसामन्नसरीरवाई' कायशब्दः सर्वभावानां सामान्यं यच्छरीरं चयमात्रं तद्वाचक इत्यर्थः। (वृ० प० ६२३)
८७. आत्माऽपि कायः प्रदेशसञ्चय इत्यर्थः तदन्योऽप्यर्थः कायप्रदेशसञ्चयरूपत्वादिति। (वृ० प० ६२३)
८८. रूपी कायः पुद्गलस्कन्धापेक्षया अरूपी कायो जीवधर्मास्तिकायाद्यपेक्षया। (वृ० प० ६२३)
८९. सचित्तः कायो जीवच्छरीरापेक्षया, अचित्तः कायोऽचेतनसञ्चयापेक्षया। (वृ० प० ६२३)
९०. जीवः कायः—उच्छ्वासादियुक्तावयवसञ्चयरूपः, अजीवः कायः तद्विलक्षणः। (वृ० प० ६२३)
९१. जीवानां कायो—जीवराशिः, अजीवानां कायः—परमाण्वादिराशिरिति। (वृ० प० ६२३)
९२. एवं शेषाण्यपि। अथ कायस्यैव भेदानाह—
(वृ० प० ६२३)
९३. कतिविहे णं भंते ! काये पण्णत्ते ?
गोयमा ! सत्तविहे काये पण्णत्ते, तं जहा—ओरालिए, ओरालियमीसए,
९४. वेउव्विए, वेउव्वियमीसए, आहारए, आहारगमीसए, कम्मए। (श० १३।१२९)

९५. 'ओरालिए' त्ति औदारिकशरीरमेव पुद्गलस्कन्धरूपत्वादुपचीयमानत्वात्काय औदारिककायः।
९६. अयं च पर्याप्तकस्यैवेति। (वृ० प० ६२४)

९८. 'ओरालियमीसए' त्ति औदारिकश्चासौ मिश्रश्च कार्मणेनेत्यौदारिकमिश्रः, अयं चापर्याप्तकस्य।
(वृ० प० ६२४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९९. पर्याप्त में धार, औदारिक तनु नों धणी।
वैक्रिय करै तिवार, औदारिक नों मिश्र ह्वै ।।
१००. करै आहारक ताम, पूर्ण आहारक नां हुवो।
ते वेला पिण पाम, औदारिक नों मिश्र जे ।।
१०१. वैक्रिय छै सुर मांय, तनु पर्या बांध्यां पछै।
अपर्याप्त में पाय, तसु पर्याप्त में वलि ।।
१०२. तथा पर्याप्त मांय, तिरि पंचेन्द्रिय मनुष्य में।
वलि वायू में पाय, तास वैक्रिय रूप जे ।।
१०३. वैक्रिय तणोज मीस, देव अनैं नारक तणैं।
अपर्याप्त कहीस, मिश्र कार्मण साथ जे ।।

१०४. ऊपजतां अवधार, धुर समये कार्मण करी।
आहार लियै तिण वार, मिश्र कार्मण साथ ते ।।
१०५. पर्याप्त में धार, वायु मनुष्य तिर्यंच पिण।
वैक्रिय करी तिवार, ते वैक्रिय तजतां थकां ।।
१०६. ग्रहितां औदारीक, औदारिक नैं साथ जे।
वैक्रिय मिश्र कथीक, वैक्रिय तणां प्रधान थी ।।
१०७. तथा पर्याप्त मांय, नारक नैं वलि देवता।
तसु तनु मूल कहाय, ते वैक्रिय भवधारणी ।।
१०८. उत्तर वैक्रिय रूप, करतां पूरण नां हुवै।
कहियै तदा तद्रूप, भवधारण वैक्रियमिश्र ।।
१०९. उत्तर वैक्रिय ताय, भवधारणि वैक्रिय मझै।
प्रवेश करतो पाय, उत्तर-वैक्रिय-मिश्र जे ।।
११०. आहारक रूप करेह, श्रमण प्रमादी लब्धिधर।
जघन्य समय इक जेह, उत्कृष्ट विरह छह मास नों ।।
१११. एह हस्त नीं काय, सर्वार्थसिद्ध सुर जिसो।
रूप तास कहिवाय, कह्यो आहारक जोग तनु ।।
११२. ते आहारक पहिछाण, औदारिक में पेसतां।
आहारक-मिश्रज जाण, प्रधानपणैं आहारक तणैं ।।

११३. योग कार्मण काय, वाटे वहितां ए हुवै।
वलि तेरम गुण पाय, समुद्घात केवल तदा ।।
११४. आख्यो ए विस्तार, सूत्र पन्नवणा अर्थ में।
तेह थकी सुविचार, काय जोग नों अर्थ ए ।।
११५. *शत तेरम देश कह्यो सप्तम तणो रे,
बेसौ अठ्यासीमीं ए ढाल रे।
भिक्षु गुरु भारीमाल ऋषिराय थी रे,
'जय-जश' संपति हरष विशाल रे ।।

१०१. 'वेउव्विय' त्ति वैक्रियः पर्याप्तकस्य देवादेः। (वृ० प० ६२४)

१०३. 'वेउव्वियमीसए' त्ति वैक्रियश्चासौ मिश्रश्च कार्म्मणेनेति वैक्रियमिश्रः, अयं चाप्रतिपूर्णवैक्रियशरीरस्य देवादेः। (वृ० प० ६२४)

११२. 'आहारगमीसए' त्ति आहारकपरित्यागेनौदारिकग्रहणायोद्यतस्याहारकमिश्रो भवति मिश्रता पुनरौदारिकेणेति। (वृ० प० ६२४)
११३. 'कम्मए' त्ति विग्रहगतौ केवलिसमुद्घाते वा कार्म्मणः स्यादिति। (वृ० प० ६२४)

*लय : श्री जिणवर गणधर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २८९

मरण पद

सोरठा

१. कही अनंतर काय, तेहनैं त्यागे मरण ह्वै।
ते माटै कहिवाय, मरण तणां इज भेद हिव ।।

१. अनन्तरं काय उक्तस्तत्त्यागे च मरणं भवतीति तदाह—
(वृ० प० ६२४)

दूहा

२. कितै प्रकारे मरण जे, भाख्या हे भगवंत ?
श्री जिन भाखै मरण नां, पंच प्रकार कहंत ।।

२. कतिविहे णं भंते ! मरणे पण्णत्ते ?
गोयमा ! पंचविहे मरणे पण्णत्ते ।

*सुण गोयमा रे ! (ध्रुपद)

३. प्रथम आवीचि मरण कहीव, समय-समय प्रति मरतो जीव।
तेह निरंतरपणैं मरंत, आवीचि नो हिवै अर्थ कहंत ।।

३. आवीचियमरणे

यतनी

४. आ कहितां समस्त प्रकार, वीचि किलोल नीं परै धार।
समय-समय आउखो वेदंत, तिण सुं समय-समय ए मरंत ।।

५. अपर-अपर आयू दल जाण, एहनां उदय थकी पहिछाण।
पहिलां-पहिलां आयु दल तास, च्यवन लक्षण अवस्था विमास ।।

४,५.'आवीइयमरणे' त्ति आ समन्ताद्वीचयः—प्रतिसमय-मनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्द-लिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं ।
(वृ० प० ६२५)

६. अथवा अविद्यमान जे मांय, वीचि जिहां विच्छेद न थाय।
कह्यो आवीचिक मरण, समय-समय आयु-दल क्षरण ।।

६. अथवाऽविद्यमाना वीचिः—विच्छेदो यत्र तदवीचिकं अवीचिकमेवावीचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिक-मरणं । (वृ० प० ६२५)

७. *दूजो अवधि मरण जे कहिवाय, अवधि कहितां मर्यादा पाय।
ते मर्यादा करि मरण पामंत, तास न्याय निसुणो धर खंत ।।

७. ओहिमरणे ।

८. नारकादि भवे करि जीव, आयु कर्म दलिक अतीव।
भोगवी नैं जेह मरंत, वर्त्तमान अद्धा विषे मंत ।।

९. वलि काल आगमिक मांहि, तेहि आयु कर्म दल ताहि।
भोगवी मरिस्यै नारकादि, तिको अवधि मरण संवादि[1] ।।

वा०—अवधि मर्यादा ते अवधि करिकै मरण ते अवधि-मरण। नारकादि भव निबंधनपणैं करी जे आयु कर्म दलिक भोगवी नैं मरै। वलि जे तेहिज आयु कर्म दलिक जे नारकादि भोगवी नैं अनागत काले मरिस्यै तदा ते अवधिमरण कहियै।

ते द्रव्य नीं अपेक्षा करिकै वली ते ग्रहण अवधि ज्यां लगै जीव नैं मृतपणां थकी हुवै। अनैं गृहीत उज्झित कर्म दलिक नों वलि ग्रहण करिवूं ते परिणाम नां विचित्रपणां थकी।

वा०—'ओहिमरणे' त्ति अवधिः—मर्यादा ततश्चावधिना मरणमवधिमरणं, यानि हि नारकादिभवनिबन्धन-तयाऽऽयुः-कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते, यदि पुनस्ता-न्येवानुभूय मरिष्यते तदा तदवधिमरणमुच्यते। तद्द्रव्यापेक्षया पुनस्तद्ग्रहणावधि यावज्जीवस्य मृतत्वात्, संभवति च गृहीतोज्झितानां कर्म्मदलि-कानां पुनर्ग्रहणं परिणामवैचित्र्यादिति ।
(वृ० प० ६२५)

---

*लय : खिण गई रे मेरी खिण गई

१. गाथा ७ से ९ का प्रतिपाद्य वृत्त्यनुसारी है। फिर भी इनके सामने वृत्ति का पाठ उद्धृत नहीं किया गया। इससे अगली वार्तिका के सामने उसे समग्र रूप से लिया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. आइंतिय नरकादि भवंत, आयु कर्म दल वेद मरंत।
मूओ थको नरकायू तेह, भोगव नें नहिं मरिस्यं जेह ।।

११. चोथो मरण कह्यो छै बाल, मरण अविरति नुं ए न्हाल।
पंचम पंडित मरण सुजाण, विरतिवंत नें ए पहिछाण ।।

१२. कतिविध मरण आवीचिय भदंत ? जिन कहै पंच प्रकारे हुंत।
द्रव्य आवीचिय मरण समीचि, क्षेत्र काल भव भाव आवीचि ।।

१३. प्रभु ! द्रव्य आवीचि मरण कतिविध ?
जिन कहै च्यार प्रकार प्रसिध।
नारक द्रव्य आवीचिक जाण, तिर्यंच द्रव्य आवीचि पिछाण ।।

१४. मनुष्य द्रव्य आवीचिक जोय, देव द्रव्य आवीचिक होय।
किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात, नारक द्रव्य आवीचिक घात ?

१५. श्री जिन कहै जिण हेतु थी जान, नारक जीव द्रव्य वर्त्तमान।
पामै मरण इसो जे जोग, अंत शब्द नों करिवो प्रयोग ।।

१६. नेरइया नारक आयुपणेह, द्रव्य ग्रह्या फर्शण थी एह।
बंध्या ते बंधन थी विशेष, कीधा पुष्ट प्रक्षेप प्रदेश ।।

१७. कडाइं ते कीधा कहिवाय, विशिष्ट जे अनुभाग थी पाय।
पट्ठवियाइं कहितां जाण, स्थितिकरण थी एह पिछाण ।।

१८. निविट्ठाइं कहितां जेह, स्थाप्या जीव प्रदेश विषेह।
अभिनिविट्ठाइं जीव प्रदेश, अतिहि गाढा स्थाप्या विशेष ।।

१९. अभिसमण्णागयाइं ताहि, उदय तणी आवलिका मांहि।
आया हुवै जे द्रव्य अतीव, समय-समय वेदै ते जीव ।।

२०. आवीचि मरण कह्यो छै एह, अनुसमय खिण खिण प्रति जेह।
अंतर-रहित समय मरेह, इण हेते नारक द्रव्यावीचि एह ।।

२१. तिण अर्थे गोतम ! इम ख्यात, नारक द्रव्य आवीचिक घात।
एवं जाव मरण ए जाण, देव द्रव्य आवीचि पिछाण ।।

१०. आतियंतियमरणे।
'आइंतियमरणे' त्ति अत्यन्तं भवमात्यन्तिकं तच्च तन्मरणं चेति वाक्यं, यानि हि नरकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं। (वृ० प० ६२५)

११. बालमरणे, पंडियमरणे। (श० १३।१३०)
'बालमरणे' त्ति अविरतमरणं 'पंडियमरणे' त्ति सर्वविरतमरणं। (वृ० प० ६२५)

१२. आवीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा—दव्वावीचियमरणे, खेत्तावीचियमरणे कालावीचियमरणे, भवावीचियमरणे, भावावीचियमरणे। (श० १३।१३१)

१३. दव्वावीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—नेरइयदव्वावीचियमरणे, तिरिक्खजोणियदव्वावीचियमरणे

१४. मणुस्सदव्वावीचियमरणे, देवदव्वावीचियमरणे। (श० १३।१३२)
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइयदव्वावीचियमरणे-नेरइयदव्वावीचियमरणे ?

१५. गोयमा ! जण्णं नेरइया नेरइए दव्वे वट्टमाणा
'जण्ण' मित्यादि, 'यत्' यस्माद्धेतोर्नैरयिका नारकत्वे द्रव्ये नारकजीवत्वेन वर्त्तमाना मरन्तीति योगः। (वृ० प० ६२५)

१६. जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए गहियाइं बद्धाइं पुट्ठाइं
'नेरइयाउयत्ताए' त्ति नैरयिकायुष्कतया 'गहियाइं' ति स्पर्शनतः 'बद्धाइं' ति बन्धनतः 'पुट्ठाइं' ति पोषितानि प्रदेशप्रक्षेपतः (वृ० प० ६२५)

१७. कडाइं पट्ठवियाइं।
'कडाइं' ति विशिष्टानुभागतः 'पट्ठवियाइं' ति स्थितिसम्पादनेन। (वृ० प० ६२५)

१८. 'निविट्ठाइं अभिनिविट्ठाइं'
'निविट्ठाइं' ति जीवप्रदेशेषु 'अभिनिविट्ठाइं' ति जीवप्रदेशेष्वभिव्याप्त्या निविष्टानि अतिगाढतां गतानीत्यर्थः (वृ० प० ६२५)

१९. अभिसमण्णागयाइं भवंति ताइं दव्वाइं।
'अभिसमन्नागयाइं' ति अभिसमन्वागतानि—उदयावलिकायामागतानि तानि द्रव्याणि। (वृ० प० ६२५)

२०. आवीचिमणुसमयं निरंतरं मरंति त्ति कट्टु
'अणुसमयं' ति अनुसमयं—प्रतिक्षणं····'निरंतरं मरंति' त्ति 'निरन्तरम्' अव्यवच्छेदेन सकलसमयेष्वित्यर्थः म्रियन्ते विमुञ्चन्तीत्यर्थः (वृ० प० ६२५)

२१. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—नेरइयदव्वावीचियमरणे, एवं जाव देवदव्वावीचियमरणे। (श० १३।१३३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. क्षेत्रावीचिक मरण कितै प्रकार ?
जिन कहै च्यार प्रकार उचार।
नारक क्षेत्रावीचि कुमीचि, यावत देवत क्षेत्रावीचि ॥

२३. किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात, नारक क्षेत्रावीचिक घात ?
जिन कहै जे हेतू थी जान, नारक क्षेत्र विषे वर्त्तमान ॥

२४. नारक जीव मरै इह जोग, अंतिम शब्द थकीज प्रयोग।
ग्रहण क्रिया जे द्रव्य जिवार, नारक आयूपणैं तिवार ॥

२५. इम जिम द्रव्यावीचि कुमीचि, तिमहिज कहिवो क्षेत्रावीचि।
इम यावत कहिवो अवधार, भावावीचिक मरण विचार ॥

सोरठा

२६. इम जाव शब्द थी जोय, कालभवावीचिक मरण।
तास पाठ इम होय, वृत्ति विषे इम आखियो ॥

२७. *अवधि मरण प्रभु ! कितै प्रकार? जिन कहै पंच प्रकार उचार।
द्रव्यावधि क्षेत्रावधि लद्ध, काल अनैं भव भाव अबद्ध ॥

२८. प्रभु ! द्रव्य अवधि मरण कितै प्रकार ?
जिन कहै च्यार प्रकार विचार।
नारक द्रव्य अवधि मरण ताय, जावत सुर द्रव्य अवधि कहाय ॥

२९. किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात, नारक द्रव्य अवधि मरण पात ?
जिन कहै जेह नेरइया जान, नारक द्रव्य विषे वर्त्तमान ॥

३०. जे नारक जे द्रव्य प्रति न्हाल, मरै करै क्षय सांप्रत काल।
जे नारक ते द्रव्य प्रति भाल,
वलि भोगव मरस्यै अनागत काल ॥

सोरठा

३१. जे द्रव्य सांप्रत काल, मरै करै क्षय नारकी।
वली अनागत काल, ते द्रव्य प्रति मरस्यै नरक ॥

३२. *तिण अर्थे गोतम ! इम ख्यात, नारक द्रव्य अवधि ए घात।
एम तिर्यंच मनुष्य नैं देव, द्रव्य अवधि मरण नो भेव ॥

३३. इण आलावे करिनैं एम, क्षेत्र अवधि पिण कहिवो तेम।
काल अवधि भव भाव अवधि, एह पंचविध कह्या प्रसिधि ॥

३४. प्रभु ! आत्यंतिक मरण कितै प्रकार ?
जिन कहै पंच प्रकार विचार।
द्रव्य आत्यंतिक मरण कहंति, क्षेत्र काल भव भाव आत्यंति ॥

२२. खेत्तावीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—नेरइयखेत्तावीचियमरणे जाव देवखेत्तावीचियमरणे।
(श० १३।१३४)

२३. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइयखेत्तावीचियमरणे-नेरइयखेत्तावीचियमरणे ?
गोयमा ! जण्णं नेरइया नेरइयखेत्ते वट्टमाणा

२४. जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए गहियाइं

२५. एवं जहेव दव्वावीचियमरणे तहेव खेत्तावीचियमरणे वि। एवं जाव भावावीचियमरणे।
(श० १३।१३५)

२६ इह यावत्करणात् कालावीचिकमरणं भवावीचिकमरणं च द्रष्टव्यं, तत्र चैवं पाठः। (वृ० प० ६२५)

२७. ओहिमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा—दव्वोहिमरणे खेत्तोहिमरणे, कालोहिमरणे भवोहिमरणे, भावोहिमरणे। (श० १३।१३६)

२८. दव्वोहिमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते तं जहा—नेरइयदव्वोहिमरणे जाव देवदव्वोहिमरणे।
(श० १३।१३७)

२९. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइयदव्वोहिमरणे-नेरइयदव्वोहिमरणे ?
गोयमा ! 'जे णं' नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा

३०. जाइं दव्वाइं संपयं मरंति, 'ते णं' नेरइया ताइं दव्वाइं अणागए काले पुणो वि मरिस्संति।

३१. नैरयिकद्रव्ये वर्त्तमाना ये नैरयिका यानि द्रव्याणि साम्प्रतं म्रियन्ते—त्यजन्ति तानि द्रव्याण्यनागतकाले पुनस्त इति गम्यं मरिष्यन्ते—त्यक्ष्यन्तीति यत्तन्नैरयिकद्रव्यावधिमरणमुच्यत इति शेषः। (वृ० प० ६२५)

३२. से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव दव्वोहिमरणे। एवं तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवदव्वोहिमरणे वि।

३३. एवं एएणं गमेणं खेत्तोहिमरणे वि, कालोहिमरणे वि, भवोहिमरणे वि, भावोहिमरणे वि।
(श० १३।१३८)

३४. आतियंतियमरणे णं भंते !—पुच्छा।
गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा—दव्वातियंतियमरणे खेत्तातियंतियमरणे जाव भावातियंतियमरणे।
(श० १३।१३९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. द्रव्य आत्यंतिक प्रभु ! कतिविद्ध ?
जिन कहै च्यार प्रकार प्रसिद्ध ।
नारक द्रव्य आत्यंतिक हुंत, तिरि मनु देव द्रव्य आत्यंत ।।

३६. किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात, नारक द्रव्य आत्यंतिक घात ?
जिन कहै जेह नेरइया जान, नारक द्रव्य विषे वर्त्तमान ।।

३७. जे नारक जे द्रव्य प्रति न्हाल, मरै करै क्षय सांप्रत काल ।
ते नारकते द्रव्य प्रति भाल, वलि नहिं मरिस्यै अनागत काल ।।
३८. तिण अर्थे जावत इम ख्यात, एवं तिरि मनु देव विख्यात ।
क्षेत्रात्यंतिक मृत्यु पिण एम, काल अनै भव भावज तेम ।।

३९. बाल मरण प्रभु ! कितै प्रकार ? जिन कहै द्वादशविध सुविचार ।
वलय मरण विलपात अनिष्ट, जिम खंधक जावत गृध्रपृष्ठ ।।

४०. पंडित मरण प्रभु ! कितै प्रकार ? दोय प्रकार कहै जगतार ।
पाओवगमन अचल तिष्ठंत, दूजो भतपचखाण कहंत ।।

४१. पाओवगमन प्रभु ! कितै प्रकार ?
जिन कहै दोय प्रकार उचार ।।
नीहारिम जसुं नीहरण होय, ग्रामादिक नैं विषे ए जोय ।।
४२. अनीहारिम जसु नीहरण नांहि, गिरि कंदरादिक रै मांहि ।
अप्रतिकर्म बिहुं ए न्हाल, न करै तन नीं सार संभाल ।।

४३. प्रभु ! कितै प्रकारै भतपचखाण ?
जिन कहै ए पिण द्विविध जाण ।
नीहारिम अनीहारिम हुंत, सप्रतिकर्मज सेवं भंत !

४४. तेरम शत सप्तम उद्देश, बेसय नव्यासीमीं ढाल विशेष ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय पसाय,
'जय-जश' संपति हरष सवाय ।।

त्रयोदशशते सप्तमोद्देशकार्थः ।।१३।७।।

३५. दव्वातियंतियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—नेरइयदव्वाति-
यंतियमरणे जाव देवदव्वातियंतियमरणे ।
(श० १३।१४०)

३६. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—नेरइयदव्वातियं-
तियमरणे-नेरइयदव्वातियंतियमरणे ?
गोयमा ! जे णं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा
३७. जाइं दव्वाइं संपयं मरंति, 'ते णं' नेरइया ताइं
दव्वाइं अणागए काले नो पुणो वि मरिस्संति ।
३८. से तेणट्ठेणं जाव नेरइयदव्वातियंतियमरणे । एवं
तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवदव्वातियंतियमरणे । एवं
खेत्तातियंतियमरणे वि, एवं जाव भावातियंतिय-
मरणे वि । (श० १३।१४१)
३९. बालमरणेणं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुवालसविहे पण्णत्ते, तं जहा—वलयमरणे
जहा खंदए (श०२।४९) जाव गद्धपट्ठे ।
(श० १३।१४२)

४०. पंडियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—पाओवगमणे य,
भत्तपच्चक्खाणे य । (श० १३।१४३)
४१,४२. पाओवगमणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—नीहारिमे य,
अनीहारिमे य । नियमं अपडिकम्मे ।
(श० १३।१४४)
पण्डितमरणसूत्रे 'णीहारिमे अणीहारिमे' त्ति यत्पाद-
पोपगमनमाश्रयस्यैकदेशे विधीयते तन्निर्हारिमं,
कडेवरस्य निर्हरणीयत्वात्, यच्च गिरिकन्दरादौ
विधीयते तदनिर्हारिमं, कडेवरस्यानिर्हरणीयत्वात्,
'नियमं अप्पडिकम्मे' त्ति शरीरप्रतिकर्मवर्जितमेव ।
(वृ० प० १२५, १२६)

४३. भत्तपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—नीहारिमे य
अनीहारिमे य । नियमं सपडिकम्मे । (श० १३।१४५)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । (श० १३।१४६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २९०

कर्म प्रकृति पद

दूहा

१. पूर्व उद्देशे मृत्यु कह्यूं, आयु-क्षय स्थिति रूप।
ते माटै कर्म स्थिति, अष्टमुद्देश तद्रूप ।।

२. कर्म प्रकृति प्रभु ! केतली ? तब भाखै जिनराय।
अष्ट कर्म नीं प्रकृति, पद तेवीसम मांय ।।

३. बंध स्थिति इण वचन करि, कर्म बंध तसु स्थित्त।
बंध स्थिति ते कर्म स्थिति, ते अर्थ उद्देश कथित्त ।।

४. द्वितीय उदेशा में कह्यूं, जिम सगलो विस्तार।
वाचनांतरे वृत्ति में, गाहा संगहणी धार ।।

इहां वाचनांतरे संग्रहणी गाथा

पयडीणं भेयठिई, बंधोवि य इंदियाणुवाए णं।
केरिसय जहन्नठिइं, बंधइ उक्कोसियं वावि ।।

वा०—कर्म प्रकृति नों भेद कहिवो ते इम—कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पण्णत्ताओ ? गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—णाणावरणिज्जं दरसणावरणिज्जमित्यादि तथा णाणावरणिज्जे णं भंते ! कम्मे कतिविहे पण्णत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा —आभिनिबोहियणाणावरणिज्जे सुअणाणावरणिज्जे' इत्यादि। तथा कर्म नीं स्थिति केहवी ते इम—

णाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ' इत्यादि। तथा बंधो-ज्ञानावरणियादि कर्म नैं इंद्रिय अनुपाते करी कहिवो ते इम—एकेंद्रियादि जीव कुण केतली कर्म स्थिति प्रति बांधै ? इसो कहिवो इत्यर्थ ते इम—

एगिंदिया णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधंति ? गोयमा ! जहण्णेणं सागरोवमस्स तिन्निसत्तभागे पलिओवमस्स[1] असंखेज्जेणं भागेणं ऊणए उक्कोसेणं तं चेव पडिपुन्ने बंधति इत्यादि तथा केहवो जीव जघन्य स्थिति कर्म नीं तथा उत्कृष्ट स्थिति बांधनैं ते कहिवो ते इम—णाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स जहन्नट्ठिइबंधए के ? गोयमा ! अन्नयरे सुहुमसंपराए उवसामए वा खवए वा एस णं गोयमा ! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स जहण्णट्ठिइबंधए तव्वइरित्ते अजहन्ने इत्यादि समस्त कहिवुं।

१. अनन्तरोद्देशके मरणमुक्तं, तच्चायुष्कर्मस्थितिक्षय-रूपमिति कर्म्मणां स्थितिप्रतिपादनार्थोऽष्टम उद्देशकः।
(वृ० प० ६२६)

२. कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?
गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ।

३. एवं बंधट्ठिइ-उद्देसो भाणियव्वो।
'एवं बंधठिइउद्देसओ' त्ति 'एवम्' अनेन प्रश्नोत्तर-क्रमेण बन्धस्य—कर्म्मबन्धस्य स्थितिर्बन्धस्थितिः कर्म्मस्थितिरित्यर्थः तदर्थ उद्देशको बन्धस्थित्युद्देशको भणितव्यः। (वृ० प० ६२६)

४. निरवसेसो जहा पण्णवणाए (पद २३)।
स च प्रज्ञापनायास्त्रयोविंशतितमपदस्य द्वितीयः, इह च वाचनान्तरे संग्रहणीगाथाऽस्ति, (वृ० प० ६२६)

---

१. एक सागर नां सातिया त्रिण भाग आवै ते पल्य नैं असंख्यातमें भागे ऊणा जाणवा इत्यर्थः।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. सेवं भंते ! हे प्रभु ! सत्य तुम्हारी वाण ।
शतक तेरमें अर्थ ए, अष्टमुद्देशे जाण ।।

त्रयोदशशते अष्टमोद्देशकार्थः ।।१३।८।।

भावितात्मविक्रिया पद

*स्वामी गुणरसियो, जे रे सुगुण नर-नार तेहनैं मन वसियो ।। [ध्रुपदं]

६. नगर राजगृह नैं विषे रे सुरिजन, भगवंत गोतम स्वाम ।
वीर प्रतै वंदन करी रे सुरिजन, इम भाखै शिर नाम ।।
७. यथादृष्टांत कोइ मानवी रे, डोरड़ियै करि जान ।
बांधी घटिका तेह प्रतै रे, ग्रही जाय किण स्थान ।
साधू गुणरसियो ।।
८. इण दृष्टांते जाणियै रे, लब्धिवंत अणगार ।
भावित आतम नों धणी रे, फोड़ी लब्धि तिवार ।
गुण शब्दादिक जेह, तेहनों ए तृसियो ।।
९. रासड़ी ना अंते करी रे, बांधी घटिका ताम ।
ते कार्य भाजन कर ग्रही रे, एहवो रूप करि आम ।।
१०. आपणपे आतम करी रे, ऊंचो आकाशे जाय ?
जिन कहै हंता गोयमा रे ! जाव सहू कहिवाय ।।
११. हे प्रभुजी ! अणगार ते रे, भावित आतम तदर्थ ।
केतला एहवा रूप नें रे, वैक्रिय करण समर्थ ?
१२. श्री जिन भाखै गोयमा ! रे, यथानाम दृष्टंत ।
युवान पुरुष युवती प्रतै रे, कर करि हस्त ग्रहंत ।।
१३. इम जिम तीजा शतक नां रे, पंचमुद्देशे उक्त ।
तेम इहां कहिवो सहू रे, जाव नो चेव संपत्त ।।

६. रायगिहे जाव एवं वयासी—

७. से जहानामए केइ पुरिसे केयाघडियं गहाय गच्छेज्जा
'केयाघडियं' ति रज्जुप्रान्तबद्धघटिकां । (वृ० प० ६२७)

८. एवामेव अणगारे वि भावियप्पा

९. केयाघडियाकिच्चहत्थगएणं

१०. अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?
हंता उप्पएज्जा । (श० १३।१४९)

११. अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवतियाइं पभू केया-
घडियाकिच्चहत्थगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?

१२. गोयमा ! से जहानामए जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे
गेण्हेज्जा,

१३. एवं जहा तइयसए पंचमुद्देसए (श० ३।१९६) जाव
(सं० पा०) नो चेव णं संपत्तीए ।

सोरठा

१४. जंबू भरिवा शक्त, एहवा बहु रूपे करी ।
विषय मात्र छै उक्त, पिण त्रिहुं काले न करै इता ।।

१५. *निश्चै इति संपदा करी रे, वैक्रिय रूप विशाल ।
काल अतीत करी नथी रे, न करै वर्त्तमान काल ।।
१६. काल अनागत नैं विषे रे, वैक्रिय रूप अत्यन्त ।
एता तो करिस्यै नहीं रे, पिण समर्थ छै ते संत ।।
१७. यथादृष्टांते कोइ मानवी रे, हिरण रूपादि मंजूस ।
ते प्रति ग्रही किण स्थानके रे, जाय लोभ वश लूंस ।।
१८. एणेज दृष्टांते करी रे, भावित आतम अणगार ।
रूपा तणी मंजूस नें रे, कृत्य कार्य कर धार ।।
१९. आपणी आत्माए करी रे, जावै गगन मझार ।
शेष तिमज जंबूद्वीप नैं रे, भरण शक्ति अवधार ।।
२०. एम सुवर्ण-मंजूसा प्रतै रे, रत्न-मंजूसा एम ।
वज्र-मंजूसा प्रति ग्रही रे, जावै गगने तेम ।।

१४. जंबुद्दीवं··· ·········करेत्तए···अयमेयारूवे विसए,
विसयमेत्ते बुइए ।

१५,१६. नो चेव णं संपत्तीए विउव्विसु वा विउव्वति वा
विउव्विस्सति वा । (श० १३।१५०)

१७. से जहानामए केइ पुरिसे हिरण्णपेलं गहाय गच्छेज्जा,
'हिरन्नपेडं' ति हिरण्यस्य मञ्जूषां । (वृ० प० ६२८)

१८. एवामेव अणगारे वि भावियप्पा हिरण्णपेलहत्थ-
किच्चगएणं ।

१९. अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ? सेसं तं चेव ।

२०. एवं सुवण्णपेलं एवं रयणपेलं, वइरपेलं,

*लय : पंखी गुणरसियो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. वस्त्र-मंजूसा कर ग्रही रे, आभरण-मंजूसा उक्त।
हस्त ग्रही जाय गगन में रे, जंबू भरवा शक्त ।।
२२. विदल तणो कट इह विधे रे, अर्द्धवंश कट एह ।।
सुंब—वीरण नों कट वली रे, तृण विशेष नों जेह ।।

२३. चर्म तणां कट नैं ग्रही रे, कंबल कट पहिछाण।
एह ऊनमय आखियो रे, कर ग्रही गगने जाण ।।

२४. एवं लोह नां भार नैं रे, तंब तरुआ नां भार।
शीसा नां भार प्रति ग्रही रे, हिरण रूपा नां विचार ।।
२५. सुवर्ण भार प्रतै ग्रही रे, वज्र भार ग्रही संत।
गमन करै आकाश में रे, शक्ति जंबू नीं हुंत ।।
२६. यथादृष्टांते वागुली रे, वृक्षादिक तिष्ठेह।
बिहुं पग ऊर्द्ध अधोमुखी रे, अवलंबी रहै जेह ।।
२७. एणे दृष्टांते करी रे, भावितातम अणगार।
वागुली लक्षण ए इहां रे, कृत्य कार्य अवधार ।।
२८. गति प्राप्त जेणे करी रे, ते तद्रूपपणेह।
पोता नैं आत्माए करी रे, गगने गमन करेह ।।

२९. इम जिम विप्र गला विषे रे, घाल जनोइ चलंत।
तिम मुनि पिण वैक्रिय करै रे, जाव जंबू न भरंत ।।
३०. यथादृष्टांत जलोक जे रे, उदक विषे निज काय।
प्रेरी प्रेरी चालती रे, इहविधि जे मुनिराय ।।
३१. विकुर्वै रूप जलोक नां रे, वागुलि जिम ए न्हाल।
शक्ति जंबू भरिवा तणी रे, पिण न भरै त्रिहुं काल ।।

३२. यथादृष्टांते शकुन पंखियो रे, बीजंबीजक कहिवाय।
बिहुं पग अश्व तणी परै रे, साथै उपाड़तो जाय ।।

३३. अणगार पिण इह रीत सूं रे, वैक्रिय लब्धि प्रभाव।
बीजंबीजक रूप विकुर्वै रे, शेषं तं चेव कहाव ।।
३४. यथादृष्टांते पंखियो रे, जाव विराल कहाय।
रूंख थकी अन्य रूंख नैं रे, अतिक्रमतो ते जाय ।।

३५. एणे दृष्टांते करी रे, भावितातम अणगार।
विकुर्वै रूप विराल नों रे, शेष तिमज विस्तार ।।
३६. यथादृष्टांत शकुन पंखियो रे, जीवंजीवग कहिवाय।
बिहुं पग अश्व तणी परै रे, साथै उपाड़तो जाय ।।
३७. अणगार पिण इह रीत सूं रे, वैक्रिय लब्धि प्रभाव।
जीवंजीवग रूप विकुर्वै रे, शेषं तं चेव कहाव ।।

२१. वत्थपेलं, आभरणपेलं,

२२. एवं विलयकडं, सुंबकडं
'वियलकिलं' ति विदलानां वंशार्द्धानां यः कटः स तथा तं 'सुंबकिड्डं' ति वीरणकटं। (वृ० प० ६२८)
२३. चम्मकडं, कंबलकडं,
कंबलकिड्डं' ति ऊर्णामयं कम्बलं—जीनादि।
(वृ० प० ६२८)
२४. एवं अयभारं, तंबभारं, तउयभारं, सीसगभारं, हिरण्णभारं,
२५. सुवण्णभारं, वइरभारं। (श० १३।१५१)

२६. से जहानामए वग्गुली सिया, दो वि पाए उल्लंबिया-उल्लंबिया उड्ढंपादा अहोसिरा चिट्ठेज्जा।
२७,२८. एवामेव अणगारे वि भाविअप्पा वग्गुलीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा?
'वग्गुलीकिच्चगएणं' ति वग्गुलीलक्षणं कृत्यं—कार्यं गतं—प्राप्तं येन स तथा तद्रूपतां गत इत्यर्थः।
(वृ० प० ६२८)
२९. एवं जण्णोवइयवत्तव्वया भाणियव्वा जाव विउव्विस्सति वा। (श० १३।१५२)
३०,३१. से जहानामए जलोया सिया, उदगंसि कायं उव्विहिया-उव्विहिया गच्छेज्जा, एवामेव अणगारे, सेसं जहा वग्गुलीए। (श० १३।१५३)
'उव्विहिय' त्ति उद्वूह्य-उद्वूह्य उत्प्रेर्य्य-उत्प्रेर्य्य इत्यर्थः
(वृ. प. ६८२)
३२. से जहानामए बीयंबीयगसउणे सिया, दो वि पाए समतुरंगेमाणे-समतुरंगेमाणे गच्छेज्जा।
'समतुरंगेमाणे' त्ति समौ—तुल्यौ तुरंगस्य—अश्वस्य समोत्क्षेपणं कुर्वन् समतुरंगयमाणः समकमुत्पाटयन्नित्यर्थः। (वृ० प० ६२८)
३३. एवामेव अणगारे, सेसं तं चेव। (श० १३।१५४)

३४. से जहानामए पक्खिविरालए सिया, रुक्खाओ रुक्खं डेवेमाणे-डेवेमाणे गच्छेज्जा।
'डेवेमाणे' त्ति अतिक्रामन्नित्यर्थः।
(वृ० प० ६२८)
३५. एवामेव अणगारे, सेसं तं चेव। (श० १३।१५५)

३६. से जहानामए जीवंजीवगसउणे सिया, दो वि पाए समतुरंगेमाणे-समतुरंगेमाणे गच्छेज्जा।
३७. एवामेव अणगारे, सेसं तं चेव। (श० १३।१५६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. यथादृष्टांते पंखियो रे, हंस अछै जग मांय।
तीर थकी अन्य तीर में रे, रमतो थको ते जाय॥

३८. से जहानामए हंसे सिया, तीराओ तीरं अभिरममाणे-अभिरममाणे गच्छेज्जा।

३९. अणगार पिण इह रीत सूं रे, हंस रूप करि ताय।
गमन करै आकाश में रे, शेषं तं चेव कहाय॥

३९. एवामेव अणगारे वि भाविअप्पा हंसकिच्चगएणं अप्पाणेणं, तं चेव। (श० १३।१५७)

४०. यथादृष्टांते पंखियो रे, समुदकाग कहिवाय।
कल्लोल थीज कल्लोल नैं रे, उलंघतो थको जाय॥

४०. से जहानामए समुद्दवायसए सिया, वीईओ वीइं डेवेमाणे-डेवेमाणे गच्छेज्जा।
'वीइओ वीइं' ति कल्लोलात् कल्लोलं। (वृ. प. ६२८)

४१. अणगार पिण इस रीत सूं रे, तिमहिज कहिवो ताय।
समुदकाग कृत्य गत करी रे, ऊर्द्ध आकाशे जाय॥

४१. एवामेव अणगारे, तहेव। (श० १३।१५८)

४२. यथादृष्टांत करी वली रे, पुरुष कोइक पहिछाण।
चक्र कृत्य हस्ते ग्रही रे, जावै किणहिक स्थान॥

४२. से जहानामए केइ पुरिसे चक्कं गहाय गच्छेज्जा।

४३. भावितात्म मुनि इहविधे रे, चक्र कार्य गत हस्त।
केया घटिका जिम कही रे, कहिवो तेम समस्त॥

४३. एवामेव अणगारे वि भाविअप्पा चक्कहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं, सेसं जहा केयाघडियाए।

४४. एम छत्र प्रति कर ग्रही रे, चमर प्रतैं पिण एम।
लब्धि वैक्रिय मुनि फोड़वी रे, गगन गमन करै तेम॥

४४. एवं छत्तं एवं चम्मं। (श० १३।१५९)

४५. यथादृष्टांत करी वली रे, केइ पुरुष जग मांय।
रत्न ग्रही नैं चालतो रे, शेष तिमज कहिवाय॥

४५. से जहानामए केइ पुरिसे रयणं गहाय गच्छेज्जा, एवं चेव।

४६. एवं वज्र रत्न प्रति ग्रही रे, वैडूर्य प्रति एम।
यावत रिष्ट रत्न प्रतै रे, कहिवो पूरव जेम॥

४६. एवं वइरं वेरुलियं जाव रिट्ठं।

सोरठा

४७. जाव शब्द थी जाण, लोहिताक्ष मसारगल्ल।
हंसगर्भ पहिछाण, पुलक सोगंधक जोतिरस॥

४८. अंक रु अंजन रयण, जातरूप अंजनपुलक।
फलिह जाव थी वयण, मुनि पिण ए सहु विकुर्वै॥

४७,४८. 'वेरुलियं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'लोहियक्खं मसारगल्लं हंसगब्भं पुलगं सोगंधियं जोईरसं अंकं अंजणं रयणं जायरूवं अंजणपुलगं फलिहं' ति। (वृ० प० ६२८)

४९. *इम उत्पलहस्तक प्रतै रे, पद्महस्तक पिण एम।
कुमुदहस्तक प्रति कर ग्रही रे, एवं यावत तेम॥

४९. एवं उप्पलहत्थगं, एवं पउमहत्थगं, कुमुदहत्थगं एवं जाव (सं० पा०)

सोरठा

५०. जाव शब्द थी जोय, नलिणहस्तगं जाणवो।
सुभगहस्तकं सोय, वलि सोगंधिकहस्तकं॥

५०. नलिणहत्थगं, सुभगहत्थगं, सुगंधियहत्थगं, यावत्करणादिदं दृश्यं। (वृ० प० ६२८)

५१. पुंडरीकहस्तक पेख, वलि महापुंडरीकहस्तकं।
सतपत्रहस्तक देख, जाव शब्द थी जाणवा॥

५१. पोंडरीयहत्थगं, महापोंडरीयहत्थगं,

५२. *यथादृष्टांत करी वली रे, कोइ पुरुष कहिवाय।
कमल सहस्रपत्र नैं ग्रही रे, इम पूरववत न्याय॥

५२. से जहानामए केइ पुरिसे सहस्सपत्तगं गहाय गच्छेज्जा, एवं चेव। (श० १३।१६०)

५३. यथादृष्टांत करी वली रे, कोइ पुरुष जग मांय।
बिसं मृणाल कमल प्रतै रे, तोड़ी-तोड़ी नैं जाय॥

५३. से जहानामए केइ पुरिसे भिसं अवद्दालिय-अवद्दालिय गच्छेज्जा।
'बिसं' ति बिसं—मृणालम्। (वृ० प० ६२८)

५४. अणगार पिण इह रीत सूं रे, मृणाल कृत्य गत हस्त।
आपणपै आकाश में रे, कहिवो तिमज समस्त॥

५४. एवामेव अणगारे वि भिसकिच्चगएणं अप्पाणेणं, तं चेव। (श० १३।१६१)

---

*लय : पंखी गुणरसियो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५. यथादृष्टांते कमलिनी रे, उदक विषे निज काय।
बूडारै मुख उघाड़ो करी रे, इम तिष्ठै जल मांय ।।

५५. से जहानामए मुणालिया सिया, उदगंसि कायं उम्मज्जिया-उम्मज्जिया चिट्ठेज्जा।
'मुणालियं' त्ति नलिनी कायम् 'उम्मज्जिय' त्ति कायमुन्मज्ज्य—उन्मग्नं कृत्वा। (वृ० प० ६२८)

५६. अणगार पिण इह रीत सूं रे, कमलिनी नो कर रूप।
शेष वागुली नीं परै सहु रे, तिष्ठै तेह तद्रूप ।।

५६. एवामेव, सेसं जहा वग्गुलीए। (श० १३।१६२)

५७. यथादृष्टांते करि वलि रे कृष्ण वर्ण वन खंड।
कृष्ण अंजन नीं परै तिको रे, स्वरूपे करि मंड ।।
५८. कृष्णईज अवभास छै रे, देखणवाला नें जाण।
प्रतिभासै तेहनैं कह्यं रे, अथवा कृष्णप्रभ आण ।।

५७,५८. से जहानामए वणसंडे सिया—किण्हे किण्होभासे
'किण्हे किण्होभासे' त्ति 'कृष्ण:' कृष्णवर्णोऽञ्जनवत्स्वरूपेण कृष्ण एवावभासते—द्रष्टृणां प्रतिभातीति कृष्णावभासः। (वृ० प० ६२८)

५९. जाव णिकुरंबभूए कह्यो रे, जाव शब्द थी जेह।
सूत्र उववाई[1] थी कहूं रे, सांभलजो हिव तेह ।।

५९. जाव महामेहनिकुरंबभूए।
इह यावत्करणादिदं दृश्यं। (वृ० प० ६२८)

सोरठा

६०. प्रदेश अंतर तास, नील नील अवभास है।
हरित हरित अवभास, किणइक प्रदेश नैं विषे ।।

६०. 'नीले नीलोभासे' त्ति प्रदेशान्तरे 'हरिए हरिओभासे' त्ति प्रदेशान्तर एव (वृ० प० ६२८)

६१. *तत्र नीलो मोरिया नां गला सरिखो जाणियै।
सूवटै नीं पांख सरिखो हरित-हरियो आणियै ।।
६२. हरित ते हरिताल सम प्रभ, इति वृद्धा इम भणैं।
वृत्ति थी ए वारता मैं, कही वर्णन वन तणैं ।।

६१,६२. नीलश्च मयूरगलवत् हरितस्तु शुकपिच्छवत् हरितालाभ इति च वृद्धाः। (वृ० प० ६२८)

सोरठा

६३. शीत शीत अवभास, स्पर्श शीत अपेक्षया।
वलि वृद्धा कहै तास, वल्याक्रांतपणां थकी ।।

६३. 'सीए सीओभासे' त्ति शीतः स्पर्शापेक्षया वल्याद्याक्रान्तत्वादिति च वृद्धाः। (वृ० प० ६२८)

६४. निद्ध चीकणैं तास, निद्धईज अवभास प्रभ।
तीव्र-तीव्र अवभास, गुण वर्णादिक अधिक छै ।।

६४. 'निद्धे निद्धोभासे' त्ति स्निग्धो रूक्षत्ववर्जितः 'तिव्वे तिव्वोभासे' त्ति 'तीव्रः' वर्णादिगुणप्रकर्षवान्। (वृ० प० ६२८)

६५. कृष्ण कृष्ण है छाय, कृष्णछाय नो धुर कृष्ण।
कह्यो विशेषण ताय, पिण पुनरुक्तपणैं नथी ।।

६५. 'किण्हे किण्हच्छाए' त्ति इह कृष्णशब्दः कृष्णच्छायः इत्यस्य विशेषणमिति न पुनरुक्तता। (वृ० प० ६२८)

६६. तेह विशेषण केम, वर्णे कृष्ण छतोज ते।
कृष्ण छायवत तेम, अन्य पदे पिण इमज है ।।

६६. तथाहि—कृष्णः सन कृष्णच्छायः—एवमुत्तरपदेष्वपि। (वृ० प० ६२८)

६७. घणकडिय कडिच्छाय, मांहोमांहि शाखा तणां।
मिलवा थकीज ताय, घणी निरंतर छाय छै ।।

६७. 'घणकडियकडिच्छाए' त्ति अन्योऽन्यं शाखानुप्रवेशाद्बहलं निरन्तरच्छायः इत्यर्थः। (वृ० प० ६२८)

६८. रम्मे अति रमणीक, जाव शब्द थी ए सहु।
कह्या अर्थ तहतीक, वनखंड नां वर्णन मझै ।।

६८. रम्मे (वृ० प० ६२८)

६९. †महामेघ नैं सारिखो रे, पासादनीक तद्रूप।
ते वनखंड देखण योग्य छै रे, अभिरूप प्रतिरूप ।।

६९. पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

---

१. ओववाइयं सू० ४

*लय : पूज मोटा भांजै तोटा

†लय : पंखी गुणरसियो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. एणे दृष्टांते करी रे, भावितात्म अणगार।
वनखंड कार्य गत थकी रे, जाय आकाश मझार ?

७१. शेषं तं चेव कहीजियै रे, जंबू भरिवा शक्त।
पिण इतरा तो करै नहीं रे, काल त्रिहुं में उक्त॥

७२. यथादृष्टांत करी वली रे, कमल सहित शुद्ध नीर।
पुष्करणी जे बावड़ी रे, चौखूणी सम तीर॥

७३. अनुक्रम रूड़ा नीपनां रे, जावत शब्द उन्नत्ति।
मधुर स्वरे तिहां पंखिया रे, सुक्क मयूरादि लप्पत्ति॥

सोरठा

७४. जाव शब्द थी जाण, अनुक्रम रूड़ा नीपना।
वप्र जिहां पहिछाण, गंभीर शीतल जल जिहां॥

७५. तथा इत्यादिक हुंत, शब्द उन्नतिक मधुर स्वर।
ज्यां पंखी जल्पंति, इदमेव दृश्यं वृत्तौ॥

७६. सूवा मयूर सुसाद[1], मयणसाल—मैना कही।
कोकिल टहुक संवाद, कोज्झग भिंगारिक वली॥

७७. वलि कोंडलक पेख, जीवंजीवक पंखिया।
नंदीमुख सुविशेख, मधुर स्वरे करि जंपता॥

७८. कविल पिंगल शुभ अंश, खग कारंड पंखी वलि।
चक्रवाक कलहंस, सारस बोलंता मधुर॥

७९. पंखी शकुनि अनेक, तसु गण नां जे मिथुन नां।
विरचित शब्द विशेख, जाव शब्द में जाणवो॥

८०. *तेह पोखरणी जन तणैं रे, पासादीया तद्रूप।
देखवा योग्य अछै तिका रे, अभिरूप प्रतिरूप।

८१. एणे दृष्टांते करी रे, भावितात्म अणगार।
रूप पोखरणी नों करी रे, जायै आकाश मझार ?

८२. जिन कहै हंता गोयमा ! रे, वलि गोतम पूछंत।
रूप किता पोखरणी तणां रे, करिवा समर्थ संत ?

८३. शेष तिमज कहिवूं सहु रे, जंबू भरिवा शक्त।
पिण इतरा तो करै नहीं रे, काल त्रिहुं में उक्त॥

८४. प्रभु ! माई वैक्रिय करै रे, कै अमाई वैक्रिय करंत ?
जिन कहै माई विकुर्वै रे, अमाई नहिं विकुर्वंत॥

८५. माई प्रमादी ते स्थान नैं रे, विण आलोयां मरंत।
जिम तीजा शतकनैं चोथो कह्यो रे, जाव आराधना हुंत॥

७०. एवामेव अणगारे वि भावियप्पा वणसंडकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?

७१. सेसं तं चेव। (श० १३।१६३)

७२. से जहानामए पुक्खरणी सिया—चउक्कोणा समतीरा।

७३. अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीयलजला जाव सद्दुन्नइयमहुरसरणादिया।

७४,७५. यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अणुपुव्वसुजायवप्पगंभीरसीयलजला' अनुपूर्वेण सुजाता वप्रा यत्र गम्भीरं शीतलं च जलं यत्र सा तथेत्यादि, 'सद्दुन्नइयमहुरसरनाइय' त्ति इदमेवं दृश्यं। (वृ० प० ६२८)

७६. 'सुयबरहिणमयणसालकोंचकोइलकोज्जकभिंकारक- (वृ० प० ६२८)

७७. कोंडलकजीवंजीवकनंदीमुह- (वृ० प० ६२८)

७८. कविलपिंगलखगकारंडगचक्कवायकलहंससारस- (वृ० प० ६२८)

७९. 'अणेगसउणगणमिहुणविरइयसद्दुन्नइयमहुरसरनाइय' त्ति। (वृ० प० ६२८)

८०. पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा।

८१. एवामेव अणगारे वि भावियप्पा पोक्खरणीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?

८२. हंता उप्पएज्जा। (श० १३।१६४)
अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवतियाइं पभू पोक्खरणीकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?

८३. सेसं तं चेव जाव विउव्विस्सति वा। (श० १३।१६५)

८४. से भंते ! किं मायी विउव्वति ? अमायी विउव्वति ? गोयमा ! मायी विउव्वति, नो अमायी विउव्वति।

८५. मायी णं तस्स ठाणस्स अणालोइय एवं जहा तइयसए चउत्थुद्देसए जाव (सं० पा०) अत्थि तस्स आराहणा।

---

*लय : पंखी गुणरसियो

१. सुस्वर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

८६. माई मुनि ते स्थान, विण आलोयां पडिकम्यां।
काल करै तज प्राण, नहिं छै तास आराधना ॥
८७. अमाई ते स्थान, आलोई नैं पडिकमी।
काल कियां सूं जाण, तेहनैं अछै आराधना ॥
८८. थयो दंड सन्मुख, तिणसुं अमाई कह्यो।
पूर्व वैक्रिय दुःख, आराधक आलोवियां।
८६. *सेवं भंते! विचरता रे, तेरम शत नों न्हाल।
नवम उद्देशक नों कह्यो रे, अर्थ अनोपम भाल ॥

त्रयोदशशते नवमोद्देशकार्थः ॥१३।९॥

सोरठा

छाद्मस्थिक समुद्घात पद

९०. पूर्व उद्देशे सोय, वैक्रिय कारण कह्यं तिको।
समुद्घात छते होय, ते तो ह्वै छद्मस्थ नैं ॥
९१. छाद्मस्थिक अभिधान, अर्थ दशम उद्देशके।
कहियै सखर सुजाण, निसुणो चित्त लगायनैं ॥

*साधू गुणरसियो, गुण ज्ञानादि उदार तेह तणो तिसियो।

९२. हे प्रभुजी! कितला कह्या रे, छद्मस्थ नां समुद्घात ?
जिन भाखै छद्मस्थ नां रे, छह समुद्घात आख्यात ॥
९३. समुद्घात धुर वेदना रे, छाद्मस्थिका ताहि।
समुद्घात कहिवूं इहां रे, जेम पन्नवणा[1] मांहि ॥
९४. छतीसमा पद नैं विषे रे, समुद्घात अधिकार।
जावत आहारक जाणवो रे, समुद्घात सुविचार ॥

वा०—कति णं भंते! छाउमत्थिया समुग्घाया पण्णत्ता? हे भगवन्! छद्मस्थ नां समुद्घात केतला कह्या? इति प्रश्न। उत्तर—हे गोतम! छह छद्मस्थ नां समुद्घात कह्या। छद्मस्थ कहितां ज्यां सुधी केवली नहीं थया, तेहनी समुद्घात छाद्मस्थिक। समुग्घाएत्ति—हनन ते घात, सम—एकीभाव उत्—प्रबलपणैं एतलै एकीभावे करी प्रबलपणैं करी जे घात ते समुद्घात।

हिवै किण संघाते एकीभाव ते कहियै छै—जे आत्मा वेदनादि समुद्घात प्रतै गयो तिवारे वेदनादि अनुभव परिणतहीज हुवै, वेदनादि अनुभव ज्ञान संघाते एकीभाव हुवै।

प्रबलपणैं घात किम कहियै? जे कारण थकी वेदनादि समुद्घात परिणत घणां वेदनीयादि कर्मप्रदेश कालांतरे अनुभव योग्य, तेह प्रते उदीरणा करै, करी भोगवी निर्जरै—आत्मप्रदेश संश्लिष्ट प्रते शातन करै इत्यर्थः। एतला माटै प्रबल घात कहियै। ते छह प्रकारे कह्या ते कहियै छै—

वेदणासमुग्घाए......वेदनासमुद्घात इत्यादि। एवं छाउमत्थिया समुग्घाया—इम छाद्मस्थिक समुद्घात कहिवा। जहा पन्नवणाए—जिम पन्नवणा नैं छत्रीसमा

*लय: पंखी गुणरसियो

1. प० ३६।५३

८६. पडिक्कंते कालं करेइ, नत्थि तस्स आराहणा।

८७. अमायी णं तस्स ठाणस्स आलोइय-पडिक्कंते कालं करेइ, अत्थि तस्स आराहणा। (श० १३।१६६)

८९. सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ। (श० १३।१६७)

९०,९१. अनन्तरोद्देशके वैक्रियकरणमुक्तं, तच्च समुद्घाते सति छद्मस्थस्य भवतीति छाद्मस्थिकसमुद्घाताभिधानार्थो दशमः। (वृ० प० ६२९)

९२. कति णं भंते! छाउमत्थियसमुग्घाया पण्णत्ता? गोयमा! छ छाउमत्थिया समुग्घाया पण्णत्ता।

९३,९४. वेयणासमुग्घाए, एवं छाउमत्थियसमुग्घाया नेयव्वा, जहा पण्णवणाए (३६।५३) जाव आहारगसमुग्घायेत्ति। (श० १३।१६८)

वा०—'कइ ण' मित्यादि, 'छाउमत्थिय' त्ति छद्मस्थः—अकेवली तत्र भवाश्छाद्मस्थिकाः 'समुग्घाये' ति 'हन हिंसागत्योः' हननं घातः सम्—एकीभावे उत्—प्राबल्ये ततश्चैकीभावेन प्राबल्येन च घातः समुद्घातः।

अथ केन सहैकीभावगमनम्? उच्यते यदाऽऽत्मा वेदनादिसमुद्घातं गतस्तदा वेदनाद्यनुभवज्ञानपरिणत एव भवतीति वेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहैकीभावः।

प्राबल्येन घातः कथम्?, उच्यते, यस्माद्वेदनादिसमुद्घातपरिणतो बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवनयोग्यानुदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्यानुभूय निर्जरयति—आत्मप्रदेशैः सह संश्लिष्टान् सातयतीत्यर्थः अतः प्राबल्येन घात इति अयं चेह षड्विध इति बहुवचनं,

तत्र 'वेयणासमुग्घाए' त्ति एकः, 'एवं छाउमत्थिए' इत्यादि अतिदेशः, 'जहा पन्नवणाए' त्ति इह षट्त्रिंशत्तमपद इति शेषः, ते च शेषाः पञ्चैवं—'कसायसमु-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद नैं विषे समुद्घात नों अधिकार कह्यो, तिम इहां पिण कहिवो। तेह शेष पंचहीज ते कहै छै—कसायसमुग्घाए मारणांतियसमुग्घाए वेउव्वियसमुग्घाए तेयगसमुग्घाए आहारगसमुग्घाए।

तिहां वेदना समुद्घात असातावेदनीय कर्म आश्रय। कषाय समुद्घात कषाय नामैं चारित्रमोहनीय कर्म आश्रय। मारणांतिक समुद्घात अंतर्मुहूर्त्त आयुकर्म आश्रय। वैक्रिय, तेजस अनै आहारक समुद्घात शरीर-नाम-कर्म आश्रय छै।

तिहां वेदनासमुद्घात समुद्धत आत्मा वेदनीय-कर्म-पुद्गल शातन करै। कषायसमुद्घात समुद्धत आत्मा कषाय-पुद्गल शातन करै। मारणांतिक समुद्घात समुद्धत आत्मा आयु पुद्गल शातन करै।

वैक्रिय समुद्घात समुद्धत आत्मा प्रदेशां प्रतै शरीर थकी बाहिर काढी शरीर विष्कंभ बाहुल्यमात्र आयाम थकी संखेय योजन दंड प्रतै रचै, रची नैं यथास्थूल वैक्रिय शरीर नाम कर्म-पुद्गलां प्रतै परिशातन करै, यथासूक्ष्म पुद्गलां प्रतै ग्रहै। यथोक्तं—'वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहण्णइ, समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ····अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, परिसाडेत्ता अहासुहमे पोग्गले परियायइ····।' इम तैजस, आहारक समुद्घात पिण बखाणवा।

ग्घाए मारणंतियसमुग्घाए वेउव्वियसमुग्घाए तेयगसमुग्घाए आहारगसमुग्घाए त्ति।

तत्र वेदनासमुद्घातः असद्वेद्यकर्माश्रयः कषायसमुद्घातः कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्माश्रयः मारणान्तिकसमुद्घातः अन्तर्मुहूर्त्तशेषायुष्ककर्माश्रयः वैकुर्विकतैजसाहारकसमुद्घाताः शरीरनामकर्माश्रयाः,

तत्र वेदनासमुद्घातसमुद्धत आत्मा वेदनीयकर्मपुद्गलशातं करोति, कषायसमुद्घातसमुद्धतः कषायपुद्गलशातं मारणान्तिकसमुद्घातसमुद्धत आयुष्ककर्म पुद्गलशातं

वैकुर्विकसमुद्घातसमुद्धतस्तु जीवप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निष्काश्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रमायामतश्च संख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् सातयति सूक्ष्मांश्चादत्ते, यथोक्तं····तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयाविति।

(वृ० प० ६२९)

९५. सेवं भंते! जाव विहरति रे, तेरम शतक नों आप्त।
दशम उदेशो दाखियो रे, तेरम शतक समाप्त।।

९५. सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ।
(श० १३।१६९)

९६. दोयसौ नैं नेऊमी कही रे, ढाल रसाल उदार।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे, 'जय-जश' हरष अपार।।

गीतक छंद

१. शत त्रयोदश नीं जोड़ कृत म्है पूज्य पद सुप्रसाद ही।
जिम अंधकार विषेज नर जे करै उद्यम अधिक ही।।
२. पिण जेह दीप विना जु वस्तूजात प्रति देखै नहीं।
दीपक समा मुझ सुगुरु तास प्रसाद निर्णय कृत सही।।

१,२. त्रयोदशस्यास्य शतस्य वृत्तिः,
कृता मया पूज्यपदप्रसादात्।
न ह्यन्धकारे विहितोद्यमोऽपि,
दीपं विना पश्यति वस्तुजातम्।।
(वृ० प० ६२९)

त्रयोदशशते दसमोद्देशकार्थः ।।१३।१०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दश शतक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्दश शतक

ढाल : २९१

दूहा

१. शतक तेरमा नैं विषे, कह्या विचित्रज भाव।
अर्थ विचित्रज ते हिवै, चवदम शत प्रस्ताव।।

२. धुर जे सूत्रपणां थकी, उपलक्षित चर शब्द।
प्रथम उदेशो चरम है, प्रश्न आदि प्रारब्ध।।

३. उन्मत्त अर्थज कथन थी, द्वितीय अछै उन्माद।
तनु अर्थ कहिवा थकी, तृतीय शरीर साद।।

४. पुद्गल नां कहिवा थकी, पुद्गल चउथो नाम।
अग्नी उपलक्षित थकी, अग्गि पंचमो ताम।।

५. कवण आहार इम प्रश्न नां, उपलक्षित थी जाण।
किमाहार छट्ठो कह्यो, प्रवर उदेश पिछाण।।

६. संसिट्ठोसि गोयमा! इहां शब्द संसृष्ट।
तसु उपलक्षित भाव थी, सत्तम संसृष्ट इष्ट।।

७. पृथ्वी अंतर कहिण थी, अंतर अष्टम सार।
वलि धुर पद अणगार थी, नवम अछै अणगार।।

८. केवलि धुर पद कहिण थी, दशम केवली नाम।
ए दश उद्देशा कह्या, शतक चवदमें ताम।।

९. प्रथम उदेशक नों इहां, कहियै अर्थ सुजात।
श्रोता चित दे सांभलो, म करो कचपच बात।।

लेश्यानुसारी उपपाद पद

१०. नगर राजगृह जाव इम, बोलै गोतम स्वाम।
वीर प्रतै वंदन करी, कर जोड़ी शिर नाम।।

११. *भावितात्म अणगार भदंत! देव आवास चरम व्यतिकंत।
देव आवास परम असंपात, बीच मरण थी किण गति जात?

१. व्याख्यातं विचित्रार्थं त्रयोदशं शतम्, अथ विचित्रार्थमेव क्रमायातं चतुर्दशमारभ्यते, (वृ० प० ६३०)

२. चर
तत्र 'चर' त्ति सूचामात्रत्वादस्य चरमशब्दोपलक्षितोऽपि चरमः प्रथम उद्देशकः। (वृ० प० ६३०)

३. उम्माद सरीरे
'उम्माय' त्ति उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीयः। 'सरीरे' त्ति शरीरशब्दोपलक्षितत्वाच्छरीरस्तृतीयः। (वृ० प० ६३०)

४. पोग्गल अगणी तहा
'पुग्गल' त्ति पुद्गलार्थाभिधायकत्वात्पुद्गलश्चतुर्थः। 'अगणी' त्ति अग्निशब्दोपलक्षितत्वादग्निः पञ्चमः। (वृ० प० ६३०)

५. किमाहारे।
'किमाहारे' त्ति किमाहारा इत्येवंविधप्रश्नोपलक्षितत्वात्किमाहारः षष्ठः। (वृ० प० ६३०)

६. संसिट्ठ-
'संसिट्ठ' त्ति 'चिरसंसिट्ठोऽसि गोयम' त्ति इत्यत्र पदे यः संश्लिष्टशब्दस्तदुपलक्षितत्वात् संश्लिष्टोद्देशकः सप्तमः। (वृ० प० ६३०)

७. मंतरे खलु अणगारे
'अंतरे' त्ति पृथिवीनामन्तराभिधायकत्वादन्तरोद्देशकोऽष्टमः। 'अणगारे' त्ति अणगारेति पूर्वपदत्वादनगारोद्देशको नवमः। (वृ० प० ६३०)

८. केवली चेव।।
'केवलि' त्ति केवलीति प्रथमपदत्वात्केवली दशमोद्देशक इति। (वृ० प० ६३०)

९. तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते। (वृ० प० ६३०)

१०. रायगिहे जाव एवं वयासी—

११. अणगारे णं भंते! भावियप्पा चरमं देवावासं वीतिक्कंते, परमं देवावासमसंपत्ते, एत्थ णं अतरा कालं करेज्जा, तस्स णं भंते! कहिं गती? कहिं उववाए पण्णत्ते?

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यतनी

१२. चरम ते ऊलोकानीं कथीन, सुर स्थित्यादिक करि हीन ।
सौधर्मादिक देवलोग, तेहथी अतिक्रम्यो प्रयोग ।।
१३. सौधर्मादि विषे विमास, उपपात हेतुभूत तास ।
लेश्या परिणाम नीं अपेक्षाय, उलंघ्यो ते अधिक अध्यवसाय ।।
१४. परम ते पेलीकानीं कहाय, स्थित्यादिक करि अधिकाय ।
ए तो सनतकुमारादि वास, तिहां तो नहिं पूगो तास ।।
१५. सनतकुमारादिक विषे तेह, उपपात हेतुभूत जेह ।
लेश्या परिणाम अधिक सवाय, नहि पोंहतो तेणे अध्यवसाय ।।

१२,१३. 'चरमम्' अर्वाग्भागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिः 'देवावासं' सौधर्मादिदेवलोकं 'व्यतिक्रान्तः' लंघितस्तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षया (वृ० प० ६३०)

१४,१५. 'परमं' परभागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिरेव 'देवावासं' सनत्कुमारादिदेवलोकं 'असम्प्राप्तः' तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षयैव (वृ० प० ६३०)

सोरठा

१६. प्रशस्त अध्यवसाय, तेह तणां स्थानक विषे ।
उत्तरोत्तर कहिवाय, तेह विषे जे वर्त्ततो ।।
१७. ऊलीकानीं जाण, धुर कल्पे सुर-स्थिति प्रमुख ।
बंध योग्य पहिछाण, ते प्रति अतिक्रम्यो मुनि ।।
१८. पेलीकानीं न्हाल, तृतीय कल्प सुर-स्थिति प्रमुख ।
बंध योग्य सुविशाल, तेह प्रते पोंहतो नथी ।।

१६. प्रशस्तेष्वध्यवसायस्थानेषूत्तरोत्तरेषु वर्त्तमानः (वृ० प० ६३०)

१७. आराद्भागस्थितसौधर्मादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतामतिक्रान्तः । (वृ० प० ६३०)

१८. परभागवर्त्तिसनत्कुमारादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतां चाप्राप्तः (वृ० प० ६३०)

यतनी

१९. ते अध्यवसाय विचाल, वर्त्ततो थको कर गयो काल ।
किसी गति जाववो तास, तिहां ऊपजवो तसु वास ?

१९. 'एत्थ णं अंतर' त्ति इहावसरे 'कालं करेज्ज' त्ति म्रियते यस्तस्य क्वोत्पादः ? (वृ० प० ६३०)

२०. *जिन कहै चरम परम बिहुं पास, ए दोनूं थी नजीक वास ।
सौधर्म सनतकुमार बिचाल, ईशाण कल्पे उपजै न्हाल ।।

२०. गोयमा ! जे से तत्थ परिपस्सओ
'जे से तत्थ' त्ति अथ ये तत्रेति—तयोः चरमदेवावासपरमदेवावासयोः 'परिपार्श्वतः' समीपे सौधर्मादेरासन्नाः सनत्कुमारादेर्वाऽऽसन्नास्तयोर्मध्यभागे ईशानादावित्यर्थः (वृ० प० ६३१)

२१. जे लेश्या नैं विषे वर्त्तमान, पाम्या साधु मरण प्रधान ।
जिका लेश्या जेहनैं विषे होय, ते सुरवास विषे अवलोय ।।

२१. तल्लेसा देवावासा
'तल्लेसा देवावासा' त्ति यस्यां लेश्यायां वर्त्तमानः साधुर्मृतः सा लेश्या येषु ते तल्लेश्या देवावासाः । (वृ० प० ६३१)

२२. ते अणगार तणी गति थाय, तिहां तास उपपात कहाय ।
जे लेश्या में मरण पामंत, ते लेश्या में उपजै संत ।।

२२. तहिं तस्स गती, तहिं तस्स उववाए पण्णत्ते ।
'तहिं' ति तेषु देवावासेषु तस्यानगारस्य गतिर्भवतीति, यत उच्यते—"जल्लेसे मरइ जीवे तल्लेसे चेव उववज्जइ" त्ति (वृ० प० ६३१)

२३. ते अणगार वलो तिणवार, मध्यवर्त्ती सुरवास मझार ।
गयो ऊपनो थकोज ताम, जे लेश्या परिणामै आम ।।
२४. भाव लेश्या छै ते परिणाम, तेह प्रतै विराधै ताम ।
कर्म समीप थी ते कर्म लेश, ते जीव परिणत भाव लेश कहेस ।।
२५. तेह थकी पड़ हीणो थाय, अतिहि अशुभ परिणामे जाय ।
द्रव्य लेश्या तो पड़ै नहिं कोय, ए तो रहै पूठली सोय ।।

२३-२६. से य तत्थ गए विराहेज्जा कम्मलेस्सामेव पडिपडति
'से य' त्ति स पुनरनगारस्तत्र मध्यमभागवर्तिनि देवावासे गतः 'विराहिज्ज' त्ति येन लेश्यापरिणामेन तत्रोत्पन्नस्तं परिणामं यदि विराधयेत्तदा 'कम्मलेस्सामेव' त्ति कर्मणः सकाशाद्या लेश्या—जीवपरिणतिः सा कर्मलेश्या भावलेश्येत्यर्थः 'तामेव प्रतिपतति' तस्या एव प्रतिपतति अशुभतरतां याति न तु द्रव्य-

---

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. सुर नैं द्रव्य थकी कहिवाय, अवस्थित लेश्या छै ताय।
ते माटै न पड़ै द्रव्य लेश, जो पड़ै तो भाव लेश कहेस ।।
२७. ते अणगार वली तिणवार, मध्यवर्ती सुरवास मझार।
गयो ऊपनो थकोज ताहि, ते परिणाम विराधै नांहि ।।
२८. तो तेहिज लेश प्रतैज कहेह, अंगीकार करि विचरै जेह।
तीव्र अशुभ परिणाम न थाय, हिवै कहूं छूं एहनों न्याय ।।

सोरठा

२९. 'इहां कही ए वाय, मध्यमवर्त्ती कल्प में।
गयो थको मुनिराय, भाव लेश परिणाम करि।।
३०. तास विराधै जेह, तीव्र अशुभ परिणाम में।
आवै सुरवर तेह, इम पड़ै भाव लेश्या थकी।।
३१. जो न विराधै ताम, तीव्र अशुभ आवै नहीं।
तो शुभ लेश्या परिणाम, अंगीकार करनैं रहै ।।
३२. इहां इम न्याय जणाय, सुर तत्काल समुप्पनो।
वंदै श्री जिनराय, सेव करै साचै मनै ।।
३३. चौथे ठाण कहाय, च्यार प्रकारे देव जे।
मनुष्य लोक में आय, चिहुं प्रकार आवै नहीं ।।
३४. काम-भोग गृद्ध थाय, अतिहि आसक्त जो हुवै।
तो मनुलोके नहिं आय, जिन मुनि सेवा नहिं करै ।।

३५. ए प्रथम पाठ नों न्याय, लेश्या भाव विराध नैं।
तीव्र अशुभ में जाय, ए काम-भोग में गृद्ध अति ।।
३६. जो भोगे गृद्ध न थाय, तो आवी मनु-लोक में।
जिन मुनि तपसी ताय, वंदनादिक सेवा करै ।।

३७. ए द्वितीय पाठ नों न्याय, भाव लेश विराधै नथी।
तीव्र अशुभ नहिं थाय, नहिं काम-भोग में गृद्ध अति ।।
३८. ते जिन मुनि नां पाय, वंदी नैं सेवा करै।
अधुनोत्पन्न पेक्षाय, एहवूं न्याय जणाय छै ।।
३९. सुरवर जे पर्याप्त, जिन मुनि पै आया प्रथम।
अशुभ लेश जे व्याप्त, ते न गिणी दीसै इहां ।।
४०. तीव्र अशुभ परिणाम, तेहनां नहिं छै ते भणी।
बहुलपणां थी ताम, अल्प अशुभ ते नहिं गिण्या ।।
४१. सूत्र पन्नवणा मांय, अठारमा पद में अख्यो।
दर्शण अवधि सुहाय, काल केतलो ते रहै?

४२. छासठ सागर दोय, जाझेरो अद्धा कह्यो।
बीच अवधि नहिं होय, अपर्याप्त पर्याप्त में ।।

लेश्यायाः प्रतिपतति, सा हि प्राक्तन्येवास्ते, द्रव्यतोऽवस्थितलेश्यत्वाद्देवानामिति । (वृ० प० ६३१)

२७,२८. से य तत्थ गए नो विराहेज्जा, तामेव लेस्सं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । (श. १४।१)
'से य तत्थे' त्यादि, 'स' अनगारः 'तत्र' मध्यमदेवावासे गतः सन् यदि न विराधयेत्तं परिणामं तदा तामेव च लेश्यां ययोत्पन्नः 'उपसम्पद्य' आश्रित्य 'विहरति' आस्त इति । (वृ० प० ६३१)

३३. ठाणं ४।४३३,४३४

३४. अहुणोववण्णे देवे देवलोगेसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिते गिद्धे गढिते अज्झोववण्णे, से णं माणुस्सए कामभोगे णो आढाइ, णो परियाणाति ।
(ठा० ४।४३३)

३६. अहुणोववण्णे देवे देवलोगेसु दिव्वेसु कामभोगेसु अमुच्छिते अगिद्धे अगढिते अणज्झोववण्णे तस्स णं एवं भवति—अत्थि खलु मम माणुस्सए भवे आयरिए ति वा····तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जुवासामि । (ठा० ४।४३४)

४१,४२. ओहिदंसणी णं भंते ! ओहिदंसणी ति कालओ केवचिरं होइ ? गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दो छावट्ठीओ सागरोवमाइं सातिरेगाओ ।
(पण्ण० १८।८७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. ते अल्पकाल नहिं पाय, तेहनों कथन कियो नथी।
तिम अल्प अशुभ अध्यवसाय, न गिण्या अधुनोत्पन्न तणां ।।
४४. चक्षुदर्शण ताय, रहै काल ते केतलो।
सहस्र सागर अधिकाय, ए पिण बिचै हुवै नहीं ।।

४४. चक्खुदंसणी णं भंते! चक्खुदंसणी ति कालओ केवचिरं होइ? गोयमा! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं सागरोवमसहस्सं सातिरेगं। (पण्ण० १८।८५)

४५. ते अल्प अद्धा न गिणाय, बहुलपणां नीं अपेक्षया।
ए बेहुं नों ताय, काल संचिट्ठण जिण कह्यो ।।
४६. तिम इहां पिण एम जणाय, अधुनोत्पन्न सुर अपेक्षया।
जो तीव्र अशुभ नहिं थाय, अल्प अशुभ ते नां गिण्या ।।
४७. दोय आलावा देख, अधुनोत्पन्न सुर नां कह्या।
ते आश्री संपेख, आलावा बे लेश नां ।।
४८. एहवूं न्याय जणाय, ते पिण जाणैं केवली।
वलि बहुश्रुत मुनिराय, न्याय कहै तेहिज खरूं ।।
४९. अथवा अधुनोत्पन्न, सुरलोके अवधे करी।
देखी मुनि श्री जिन, तिहां ही जाव वंदना करै ।।
५०. शुभ लेसे वर्त्तैह, अल्पकाल सुरलोक में।
ते आश्रय कह्यु एह, ते पिण जाणैं केवली ।।'[ज.स.]
५१. *सामान्य देवावास आश्रयी, ए कह्यो मुनि सुर तणुं।
वलि विशेष थकीज तेहिज, सांभलो जे हिव भणुं ।।

५१. इदं सामान्यं देवावासमाश्रित्योक्तं, अथ विशेषितं तमेवाश्रित्याह— (वृ० प० ६३१)

५२. †हे प्रभु! भावितात्म अणगार, चरम ऊलीकानीं अवधार।
असुरकुमारावास विचार, ते प्रति अतिक्रम्यां तिणवार ।।

५२. अणगारे णं भंते! भावियप्पा चरमं असुरकुमारावासं वीतिक्कंते,

५३. परम पेलीकानीं राजेह, असुरकुमारावास प्रति तेह।
अध्यवसाय बीच वर्त्तमान, एवं चेव पूर्ववत जान ।।

५३. परमं असुरकुमारावास··· एवं चेव (सं० पा०)

यतनी

५४. इहां भावितातम अणगार, किम उपजै असुर मझार?
पिण चरण विराधक हुंत, कोइ असुर विषे उपजंत ।।

५४. 'अणगारे ण' मित्यादि, ननु यो भावितात्माऽनगारः स कथमसुरकुमारेषूत्पत्स्यते विराधितसंयमानां तत्रोत्पादादिति। (वृ०प० ६३१)

५५. पूर्व काल तणी अपेक्षाय, भावितात्मपणुं कहिवाय।
अंतकाल विराधि चरित्त, कोइ असुर विषे उपपत्त ।।

५५. पूर्वकालापेक्षया भावितात्मत्वम् अन्तकाले च संयमविराधनासद्भावादसुरकुमारादितयोपपातः। (वृ० प० ६३१)

५६. तथा बाल तपस्वी देख, भावितातम कह्यो तसु लेख।
कह्यो वृत्ति थी ए अधिकार, घर रहित माटै अणगार ।।

५६. बालतपस्वी वाऽयं भावितात्मा द्रष्टव्य इति। (वृ० प० ६३१)

५७. *इम यावत थणियकुमारावासं, जोतिषि नां आवास प्रकाशं।
वैमानीक आवासज एम, यावत विचरंता सुर तेम ।।

५७. एवं जाव थणियकुमारावासं, जोइसियावासं, एवं वेमाणियावासं जाव विहरइ। (श० १४।२)

सोरठा

५८. कही पूर्वे सुर गत्त, गति अधिकार थकीज हिव।
नारक गति आश्रित्त, प्रवर प्रश्न उत्तर सुणो ।।

५८. अनन्तरं देवगतिरुक्तेति गत्यधिकारान्नारकगतिमाश्रित्याह— (वृ०प० ६३१)

***लय : पूज मोटा भांजै टोटा**
†लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक आदि का गतिविषय पद

५६. *नारक ऊपजता नें स्वाम ! किसी शीघ्र गति छै तसु ताम ।
किसी शीघ्र गति विषय निहाल, गति हेतू ते कहियै काल ?

५६. नेरइयाणं भंते ! कहं सीहा गती ? कहं सीहे गति-विसए पण्णत्ते ?
'कहं सीहे गइविसए' त्ति कथमिति कीदृशः 'सीहे' त्ति शीघ्रगतिहेतुत्वाच्छीघ्रो गतिविषयो—गतिगोचर-स्तद्धेतुत्वात्काल इत्यर्थः । (वृ० प० ६३१)

६०. श्री जिन भाखै गोयम ! जाण, यथादृष्टंत कोयक नर माण ।
तरुण बलवंत नें युगवान, जाव निपुण शिल्प शास्त्र जाण ।।

६०. गोयमा ! से जहानामए—केइपुरिसे तरुणे बलवं जुगवं जाव (सं. पा.) निउणसिप्पोवगए।

सोरठा

६१. तरुणे कहितां सोय, प्रवृद्धमानज वय जसु ।
ते दुर्बल पिण होय, ते कारण थी हिव कहै ।।
६२. बलवं कहिता तेह, शरीर नो बल छै जसु ।
काल विशेष थी जेह, विशिष्ट हुवै ते हिव कहै ।।
६३. युगवं कहितां जेह, तुर्य अरा नो जनमियो ।
प्रशस्त विशिष्ट तेह, बल नो हेतूभूत जसु ।।

६१. 'तरुणे' त्ति प्रवर्द्धमानवयाः, स च दुर्बलोऽपि स्यादत आह— (वृ०प० ६३१)
६२. 'बलवं' ति शारीरप्राणवान्, बलं च कालविशेषाद्वि-शिष्टं भवतीत्यत आह— (वृ० प० ६३१)
६३. 'जुगवं' ति युगं—सुषमदुष्षमादिः कालविशेषस्तत् प्रशस्तं विशिष्टबलहेतुभूतं यस्यास्त्यसौ युगवान् । (वृ० प० ६३१)

यतनी

६४. जाव शब्द थकी इम जान, वय-प्राप्त युवान पिछान ।
अल्प आतंक रोग रहीत, अल्प शब्द अभाव संगीत ।।

६४. यावत्करणादिदं दृश्यं—'जुवाणे' वयः प्राप्तः 'अप्पायंके' अल्पशब्दस्याभावार्थत्वादनातङ्को—नीरोगः । (वृ० प० ६३१)

६५. जेहनां स्थिर छै अग्रहस्त, सुलेखकवत प्रशस्त ।
दृढ पाणि-पाय छै जास, एहवो नर बलवंत विमास ।।
६६. बेहुं पासा पसवाड़ा जाण, वले पूठ नों अंतर पिछाण ।
उरू साथल ए सहु जन्न, पाम्या पूर्ण उत्तम संघयन्न ।।

६५,६६. 'थिरग्गहत्थे' स्थिराग्रहस्तः सुलेखकवत् 'दढपाणिपायपासपिट्ठंतरोरुपरिणए' दृढं पाणिपादं यस्य पार्श्वौ पृष्ठ्यन्तरे च उरू च परिणते—परिनिष्ठिततां गते यस्य स तथा उत्तमसंहनन इत्यर्थः (वृ० प० ६३१)

६७. सम श्रेणि रह्या तरु ताल, तिके युगल दोय सुविशाल ।
वलि अर्गला सदृस जास, दीर्घ सरल पुष्ट बाहु तास ।।

६७. 'तलजमलजुयलपरिघनिभबाहू' तलौ—तालवृक्षौ तयोर्यमलं—समश्रेणीकं यद् युगलं—द्वयं परिघश्च—अर्गला तन्निभौ—तत्सदृशौदीर्घसरलपीनत्वादिना बाहू यस्य स तथा । (वृ० प० ६३१)

६८. घन ते अतिसय करि तेह, अति निवड उपचय पाम्यो जेह ।
वलित नीं परै वलित सुसंध, वृत्त वाटला छै बिहुं खंध[1] ।।
६९. चर्मेष्ट शस्त्र विशेख, तिण शस्त्र करीनैं देख ।
वलि दुघण ते मुद्गर करेह, वलि मुष्टिके करिनैं जेह ।।
७०. समाहत नित्य करत अभ्यास, निविड़ गात्र काय छै तास ।
गात्र ते खंध उर पृष्ठ आदि, तथाविध करि देह सुसाधि ।।
७१. वले हृदय तणां बल युक्त, अंतर ओछाह वीर्य संयुक्त ।
लंघण पवण जइण व्यायाम, तेणे समर्थ छै अभिराम ।।
७२. लंघण खाड प्रमुख उलंघेह, पवण ते कूदवुं कह्यूं जेह ।
जइण अतिही शीघ्र गति ताम, परिश्रम नै कहियै व्यायाम ।।

६९,७०. 'चम्मेट्ठदुहणमुट्ठियसमाहयनिचियगायकाए' चर्मेष्टया द्रुघणेन मुष्टिकेन च समाहतानि अभ्यास-प्रवृत्तस्य निचितानि गात्राणि यत्र स तथाविधः कायो यस्य स तथा । (वृ० प० ६३१)

७१,७२. 'ओरसबलसमन्नागए' आन्तरबलयुक्तः 'लंघण-पवणजइणवायामसमत्थे' जविनशब्दः शीघ्रवचनः । (वृ०प० ६३१)

---

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

१. प्रस्तुत गाथा का आधार न तो मूल पाठ में है और न वृत्ति में है। अनुयोग-द्वार के पाठान्तर में है। देखें सूत्र ४१६ पाटि, १० ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३. ए सर्व विषेज समर्थ, छै ए प्रयोग जान तदर्थ।
तथा कला बोहितर सहीत, दक्ष कार्य विलंब रहीत ।।

७४. पत्तट्ठे करिवा लागो जे काम, परिपूर्णपणुं तसु पाम।
तथा प्रज्ञावान बुद्धिवान, कुशल करै आलोची जान ।।

७५. मेधावी ते सुण्या इक वार, ते कार्य तणो करणहार।
तथा पूर्व अपर प्रत्यक्ष, वचने संध मेलवा दक्ष।।

७६. जाव शब्द में ए सहु सीधा, सूत्र अनुयोगद्वार[1] थी लीधा।
वलि जीवाभिगम[2] में जोय, कोई पाठ प्रथम पछै होय ।।

७७. *पुरुष एहवो संकोची बांह, तेह प्रति लांबी कर त्यांह।
तथा पसारी बांह प्रति धार, संकोचै ते पुरुष तिवार।।

७८. पसारी मुट्ठि प्रति ताम, संकोचै संहरैज आम।
संकोची मुट्ठि प्रति जेह, तास पसारै खोलै तेह ।।

७९. उघाड़ी चक्षु प्रति मिचाड़ै, मींची आंख प्रतैज उघाड़ै।
एहवी उतावली गति होय, काकु-पाठ[3] थी कहै जिन सोय ।।

वा०—भवे एयारूवे ? ए काकु-पाठ थकी भगवान गोतम नां मन तणी आशंका करीनैं पूछ्यो।

८०. हे गोतम ! तूं इम मानै छै, एहवा शीघ्र गति तसु जानैं छै।
वलि तसुं शीघ्रज गति विषय छै, बाहु पसारणादिक सादृश छै ?

८१. इम प्रभु गोतम नां मन केरी, आशंका करिनैं कहै फेरी।
एह अर्थ समर्थ नहिं कोय, किसे कारण ? ते हिव कहै सोय ।।

८२. नारक एक समय कर जान, अथवा दोय समय कर मान।
अंथवा तीन समय कर हुंत, इम विग्रहगति कर उपजंत ।।

यतनी

८३. इहां छै एहवो अभिप्राय, नारक नीं गति कहिवाय।
एक समय तणी तथा दोय, तथा तीन समय नीं होय ।।

८४. बाहु पसारणादिक गत, असंख्यात समय हुवै तथ।
तिण सुं पुरुष सरीखो सोय, गति नारक नीं किम होय ।।

८५. एक समय करी उपजंत, उववज्जंतो इति जोग हुंत।
वा शब्द अछै इण ठाम, ते विकल्प अर्थे ताम ।।

८६. एक समय संघात प्रबंध, विग्रह शब्द सूं नहिं संबंध।
विग्रह एक समय नीं नांय, एक समय ऋजु गति थाय ।।

७३. 'छेए' प्रयोगज्ञः 'दक्खे' शीघ्रकारी।
(वृ० प० ६३१)

७४. 'पत्तट्ठे' अधिकृतकर्म्मणि निष्ठां गतः 'कुसले' आलोचितकारी। (वृ०प० ६३१)

७५. 'मेहावी' सकृतश्रुतदृष्टकर्म्मज्ञः। (वृ०प० ६३१)

७७. आउंटियं बाहं पसारेज्जा, पसारियं वा बाहं आउंटेज्जा
'आउंटियं'ति संकोचितं। (वृ० प० ६३१)

७८. विक्खिण्णं वा मुट्ठिं साहरेज्जा, साहरियं वा मुट्ठिं विक्खिरेज्जा
'विक्खिन्नं' ति 'विकीर्णां' प्रसारितां 'साहरेज्ज' त्ति 'साहरेत्' संकोचयेत् 'विक्खिरेज्ज' त्ति विकिरेत्—प्रसारयेत्। (वृ० प० ६३१)

७९. उम्मिसियं वा अच्छि निम्मिसेज्जा, निम्मिसियं वा अच्छि उम्मिसेज्जा भवे एयारूवे ?
'उम्मिसियं' ति 'उन्मिषितम्' उन्मीलितं 'निमिसेज्ज' त्ति निमीलयेत् 'भवेयारूवे' त्ति काक्वाऽध्येयं।
(वृ०प० ६३१)

वा०—काकुपाठे चायमर्थः स्यात् यदुतैवं।
(वृ० प० ६३१, ६३२)

८०. मन्यसे त्वं गौतम ! भवेत्तद्रूपं—भवेत्स्वभावः शीघ्रतायां नरकगतेस्तद्विषयस्य च यदुक्तं विशेषण-पुरुषबाहुप्रसारणादेरिति। (वृ०प० ६३२)

८१. एवं गौतममतमाशंक्य भगवानाह—नायमर्थः समर्थः, अथ कस्मादेवमित्याह— (वृ०प० ६३२)

८२. नेरइया णं एगसमइएण वा दुसमइएण वा तिसमइएण वा विग्गहेणं उववज्जंति।

८३,८४. 'नेरइयाण' मित्यादि, अयमभिप्रायः—नारकाणां गतिरेकद्वित्रिसमया बाहुप्रसारणादिका चासंख्येय-समयेति कथं तादृशी गतिर्भवति नारकाणामिति।
(वृ०प० ६३२)

८५,८६. तत्र च 'एगसमएण व' त्ति एकेन समयेनोपपद्यन्त इति योगः, ते च ऋजुगतावेव, वाशब्दो विकल्पे, इह च विग्रहशब्दो न सम्बन्धितः, तस्यैकसामायिक-स्याभावात्। (वृ०प० ६३२)

---

१. सूत्र ४१६
२. जी० ३ सू० ११८
३. वक्रोक्ति
***लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८७. दोय समय विग्रह करि तेम, दोय समय संघाते एम।
विग्रह शब्द सूं संबंध थाय, विग्रह ते वक्र गति इहां पाय ।।
८८. इम तीन समय विग्रहेण, वक्र गति करि गमन करेण।
पिण एक समय नीं विग्रह नांय,
तिण सुं विग्रह थी संबंध न थाय ।।

८७. 'दुसमएण व' त्ति द्वौ समयौ यत्र स द्विसमयस्तेन विग्रहेणेति योगः। (वृ०प० ६३२)

८८. एवं त्रिसमयेन वा विग्रहेण—वक्रेण। (वृ०प० ६३२)

सोरठा

८९. तिहां दोय समय विग्रहेण, भरत[1] पूर्व दिशि थी यदा।
जे ऊपजै क्रमेण, नरके पश्चिम दिशि विषे ।।
९०. एक समय रै मांहि, अधो जाय तिण अवसरे।
द्वितीय समय में ताहि, उत्पत्ति-स्थानक ऊपजै ।।
९१. तीन समय विग्रहेण, भरते अग्निकूण थी।
नारक विषे क्रमेण, वायव्य-कूणे ऊपजै ।।
९२. एक समय रै मांय, अधो जाय सम श्रेणि कर।
द्वितीय समय में जाय, तिरछो पश्चिम दिशि विषे।।
९३. तृतीय समय में जान, तिरछो वायव्य-कूण में।
उपजै उत्पत्ति स्थान, कह्यो न्याय ए वृत्ति थी ।।
९४. इणे करि गति काल, आख्यो इम कहिवा थकी।
जिसी शीघ्र गति न्हाल, तिसी शीघ्र जिनजी कही ।।
९५. *हे गोतम ! नारक नैं आखी, शीघ्र गति तसु एहवी दाखी।
कह्यो तिसो शीघ्र गति नों काल, एवं जाव वैमानिक न्हाल ।।
९६. णवरं एकेंद्री उत्कृष्ट, च्यार समय विग्रह गति दृष्ट।
तेहनुं न्याय कह्युं वृत्तिकार, कहियै छै हिव तसु अनुसार ।।

८९,९०. तत्र द्विसमयो विग्रह एवं—यदा भरतस्य पूर्वस्या दिशो नरके पश्चिमायामुत्पद्यते तदैकेन समयेनाधो याति द्वितीयेन तु तिर्यगुत्पत्तिस्थानमिति। (वृ०प० ६३२)

९१-९३. त्रिसमयविग्रहस्त्वेवं—यदा भरतस्य पूर्वदक्षिणाया दिशो नारकेऽपरोत्तरायां दिशि गत्वोत्पद्यते तदैकेन समयेनाधः समश्रेण्या याति द्वितीयेन च तिर्यक् पश्चिमायां तृतीयेन तु तिर्यगेव वायव्यां दिशि उत्पत्तिस्थानमिति। (वृ०प० ६३२)

९४. तदनेन गतिकाल उक्तः, एतदभिधानाच्च शीघ्रा गतिर्यादृशी तदुक्तमिति। (वृ०प० ६३२)

९५. नेरइयाणं गोयमा ! तहा सीहा गती, तहा सीहे गतिविसए पण्णत्ते। एवं जाव वेमाणियाणं।

९६. नवरं—एगिंदियाणं चउसमइए विग्गहे भाणियव्वे।

यतनी

९७. त्रस नाड़ि थकी जे बार, अधोलोके विदिशि थी विचार।
दिशि प्रतै समय इक जाय, सम श्रेणि गमन थी ताय ।।
९८. द्वितीय समय पेसै लोक मांय, तीजा समय में ऊंचो जाय।
त्रस नाड़ि थी नीकल जान, समय चतुर्थ उत्पत्ति स्थान ।।

९९. वृत्तिकार कही वलि वाय, बहुलपणां नीं ए अपेक्षाय।
अन्यथा पंच समय पिछान, विग्रह एकेंद्रिय तणैं जान ।।
१००. त्रस नाड़ि थकी जे बार, अधोलोके विदिशि थी विचार।
समश्रेणि करी दिश जाय, ए तो एक समय रै मांय ।।
१०१. दूजे समये पेसै लोक मांय, तीजे समये ऊंचो जाय।
चौथे समय तिरछो पूर्वादि, दिशि प्रते गमन संवादि ।।
१०२. पंचमे जाय विदिश पिछान, व्यवस्थित उत्पत्ति स्थान।
इम कही वृत्ति रै मांहि, धर्मसी पिण मान्यो नांहि ।।
१०३. 'वृत्ति में बहु बातां विरुद्ध, सूत्र थी अणमिलती अशुद्ध।
ते अशुद्ध किण रीत मानीजै, मिलती ह्वै ते अंगीकार कीजै ।।

९७. त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके विदिशो दिशं यात्येकेन, जीवानामनुश्रेणिगमनात्। (वृ०प० ६३२)

९८. द्वितीयेन तु लोकमध्ये प्रविशति तृतीयेनोर्द्ध्वं याति चतुर्थेन तु त्रसनाडीतो निर्गत्य दिग्व्यवस्थितमुत्पादस्थानं प्राप्नोतीति। (वृ०प० ६३२)

९९. एतच्च बाहुल्यमंगीकृत्योच्यते, अन्यथा पञ्चसमयोऽपि विग्रहो भवेदेकेन्द्रियाणां। (वृ०प० ६३२)

१००. त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके विदिशो दिशं यात्येकेन (वृ०प० ६३२)

१०१. द्वितीयेन लोकमध्ये तृतीयेनोर्द्ध्वलोके चतुर्थेन ततस्तिर्यक् पूर्वादिदिशो निर्गच्छति। (वृ०प० ६३२)

१०२. ततः पञ्चमेन विदिग्व्यवस्थितमुत्पत्तिस्थानं यातीति, (वृ०प० ६३२)

१. भरतक्षेत्र।

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International   For Private & Personal Use Only   www.jainelibrary.org

१०४. छद्मस्थ अणाहारि सोय, सूत्र में कह्या समया दोय।
तीन समय कह्या वृत्तिकार, ए पिण पंच समय जिम धार।।
१०५. तिणसुं अणमिलती न मनाय, विरुद्ध बात बहु वृत्ति मांय।
वर न्याय विचार वदीत, राखो सूत्र तणीज प्रतीत।।'[ज.स.]
१०६. *एकेंद्री विण दंडक उगणीस, नारक नीं पर कहिवा जगीस।
तीन समय नीं विग्रह तास, पूर्व नीं पर कहिवूं विमास।।

१०६. सेसं तं चेव। (श० १४।३)
'सेसं तं चेव' त्ति 'पुढविक्काइयाणं भंते! कहं सीहा गई?' इत्यादि सर्वं यथा नारकाणां तथा वाच्यमित्यर्थः। (वृ०प० ६३२)

दूहा

१०७. अनंतरे गति आश्रयी, नरकादिक आख्यात।
अनंतरोत्पन्न आदि हिव, द्वितीय दंडक अवदात।।

१०७. अनन्तरं गतिमाश्रित्य नारकादिदण्डक उक्तः, अथानन्तरोत्पन्नत्वादि प्रतीत्यापरं तमेवाह— (वृ०प० ६३२)

नैरयिक आदि का अनंतरोपपन्नगादि पद

१०८. *स्यूं प्रभु! नारक अनंतरोववन्ना, अथवा तिके परंपर-उत्पन्ना।
अनंतर-परंपर-उपपन्ना नांय? श्री जिन भाखै तीनूं थाय।।

१०८. नेरइया णं भंते! किं अणंतरोववन्नगा? परंपरोववन्नगा? अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा?
गोयमा! नेरइया अणंतरोववन्नगा वि, परंपरोववन्नगा वि, अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा वि। (श० १४।४)

१०९. किण अर्थे प्रभु! इम कहिवाय, जाव अणंतर-परंपर नांय?
जिन कहै गोतम! सुण अवदात, न्याय त्रिहुं नारक नों ख्यात।।

१०९. से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ जाव (सं. पा.) अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा वि?
गोयमा!

११०. प्रथम समय नां जे उपनां छै, तेह अनंतरोववण्णगा छै।
उपनां समय थयो छै एक, ते नरक अनंतर उपनां पेख।।

११०. जे णं नेरइया पढमसमयोववन्नगा ते णं नेरइया अणंतरोववन्नगा।
'अणंतरोववन्नग' त्ति न विद्यते अन्तरं—समयादिव्यवधानं उपपन्ने—उपपाते येषां ते अनन्तरोपपन्नकाः। (वृ०प० ६३३)

१११. प्रथम समय नां उपनां जाण, तेह नारक विण अन्य पिछाण।
उपनां समय थया बे आदि, तेह परंपर उपनां वादि।।

१११. जे णं नेरइया अपढमसमयोववन्नगा ते णं नेरइया परंपरोववन्नगा
'परंपरोववन्नग' त्ति परम्परा—द्वित्रादिसमयता उपपन्ने—उपपाते येषां ते परम्परोपपन्नकाः। (वृ०प० ६३३)

११२. विग्रह गति प्रति बर्तै त्यांही, ते अणंतर-परंपर उपनां नांही।
तिण अर्थे गोतम! इम कहियै, यावत अणुववण्णगा लहियै।।

११२. जे णं नेरइया विग्गहगइसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा। से तेणट्ठेणं जाव अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा वि।
एते च विग्रहगतिकाः, विग्रहगतौ हि द्विविधस्याप्युत्पादस्याविद्यमानत्वादिति। (वृ०प० ६३३)

११३. एवं अंतर-रहित विचार, जाव वैमानिक लग अवधार।
दंडक चउवीसे सुविमास, तीन-तीन विध कहियै तास।।

११३. एवं निरंतरं जाव वेमाणिया। (श० १४।५)

सोरठा

११४. हिवै अणंतर आदि, आयु बंध तीनूं तणैं।
प्रश्न तास संवादि, चित्त लगाई सांभलो।।

११४. अथानन्तरोपपन्नादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह— (वृ० प० ६३३)

११५. *प्रभु! अनंतर उपनां जास, स्यूं नरकायु बंधै तास।
तिरि मनु सुर आयु बंध होय? जिन कहै इक पिण न बंधै सोय।।

११५. अणंतरोववन्नगा णं भंते! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति? तिरिक्खमणुस्स देवाउयं पकरेंति?
गोयमा! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति। (श० १४।६)

---

*लय: इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

११६. तेह अवस्था मांहि, तेहवा अध्यवसाय नां।
स्थान अभावे ताहि, न बंधै चिहुं गति आउखो ॥

११६. तस्यामवस्थायां तथाविधाध्यवसायस्थानाभावेन सर्वजीवानामायुषो बन्धाभावात्। (वृ० प० ६३३)

११७. सुर नारक षट मास, निज भव शेषायू रहै।
आयू बंध विमास, तो प्रथम समय में बंध किम ?

११७. परम्परोपपन्नकास्तु स्वायुषः षण्मासे शेषे (वृ० प० ६३३)

११८. तिरि मनुष्य रै पेख, निज आयू छै जेहनों।
धुर बे भागे देख, पर भव आयु बंध नहीं ॥

११८. स्वायुषस्त्रिभागादौ च शेषे बन्धसद्भावात् (वृ० प० ६३३)

११९. *प्रभु ! परंपर उपनां जास, स्युं नरकायू बंधै तास।
तिरि मनु सुर आयु बंध होय ? नारक नों ए प्रश्न सुजोय ॥

११९. परंपरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति ?

१२०. जिन कहै नरकायु न बंधंत, तिर्यंच आयु नों बंध हुंत।
मनुष्यायु नों पिण बंध होय, सुर नो आयु बंधै न कोय ॥

१२०. गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति, तिरिक्खजोणियाउयं पकरेंति, मणुस्साउयं पि पकरेंति, नो देवाउयं पकरेंति। (श० १४।७)

१२१. अनंतर-परंपर उपनां नांय, तेह नारक नैं स्यूं बंध थाय ?
जिन कहै चिहुं गति आयु न बंधाय, विग्रहगतिया छै इण न्याय ॥

१२१. अणंतर-परंपर-अणुववन्नगा णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति—पुच्छा।
गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति।

१२२. एवं जाव वैमानिक संच, नवरं मनुष्य पंचेंद्री तिर्यंच।
चिहुं गति नों आयु बंध थाय, शेष पूर्वली पर कहिवाय ॥

१२२. एवं जाव वेमाणिया, नवरं—पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य परंपरोववन्नगा चत्तारि वि आउयाइं पकरेंति। सेसं तं चेव। (श० १४।८)

१२३. प्रभु ! नारक अनंतर-निर्गत सोय, अथवा परंपर-निर्गत होय।
अनंतर-परंपर-निर्गत नांय ? जिन कहै ए तीनूंइ थाय ॥

१२३. नेरइया णं भंते ! किं अणंतरनिग्गया ? परंपरनिग्गया ? अणंतर-परंपर-अनिग्गया ?
गोयमा ! नेरइया अणंतरनिग्गया वि, परंपरनिग्गया वि अणंतर-परंपरअनिग्गया वि। (श० १४।९)

१२४. किण अर्थे प्रभु ! इम आख्यात ? श्री जिन भाखै सुण अवदात।
जे नरक नैं निकल्यां समय थयो एक, तेह अणंतर-निर्गत पेख ॥

१२४. से केणट्ठेणं जाव अणंतर-परंपरअनिग्गया वि ? गोयमा ! जे णं नेरइया पढमसमयनिग्गया ते णं नेरइया अणंतरनिग्गया।

सोरठा

१२५. समय आदि कर जान, बिच व्यवधान पड्यो नथी।
ते अंतर-रहित पिछान, नरक थकी जे नीकल्या ॥

१२६. तिणहिज समय संपेख, अन्य स्थानकें ऊपनां।
प्रथम समय ए देख, तेह अनंतर-निर्गता ॥

१२५,१२६. अनन्तरं—समयादिना निर्व्यवधानं निर्गतं येषां तेऽनन्तरनिर्गतास्ते च येषां नरकादुद्वृत्तानां स्थानान्तरं प्राप्तानां प्रथमः समयो वर्त्तते। (वृ० प० ६३३)

१२७. *नीकल्यां समय थया बे आदि, तेह परंपर-निर्गत वादि।
विग्रहगति में वर्त्तै ज्यांही, अणंतर-परंपर-निर्गत नांही ॥

१२७. जे णं नेरइया *अपढमसमयनिग्गया ते णं नेरइया* परंपरनिग्गया, जे णं नेरइया विग्गहगतिसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतर-परंपरअनिग्गया।

सोरठा

१२८. जेह नारकी हुंत, नरक थकी जो नीकल्या।
विग्रहगति वर्त्तंत, उत्पत्ति-क्षेत्र न ऊपनां ॥

१२८. अनन्तरपरम्परानिर्गतास्तु ये नरकादुद्वृत्ताः सन्तो विग्रहगतौ वर्त्तन्ते न तावदुत्पादक्षेत्रमासादयन्ति। (वृ० प० ६३३)

१२९. जेह अनंतर भाव, तथा परंपर भाव कर।
उत्पत्ति-क्षेत्र न पाव, ते निश्चै नय निर्गत नथी ॥

१२९. तेषामनन्तरभावेन परम्परभावेन चोत्पादक्षेत्राप्राप्तत्वेन निश्चयेनानिर्गतत्वादिति। (वृ० प० ६३३)

---

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३०. ते नारक इण न्याय, अणंतर वलि परंपर।
अनिर्गत कहिवाय, उत्पत्ति-क्षेत्र न पामिया।।

१३१. *तिण अर्थे गोतम ! कह्यु एम, जाव अनिर्गता पिण छै तेम।
एवं जाव वैमानिक भाव, इक-इक नां त्रिण-त्रिण आलाव।।

१३१. से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अणंतर-परंपर-अनिग्गया वि। एवं जाव वेमाणिया। (श० १४।१०)

दूहा

१३२. हिवै अनंतर-निर्गता, प्रमुख तीन जे ख्यात।
ते आश्री बंध आयु नो, आगल ते अवदात।।

१३२. अथानन्तरनिर्गतादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह— (वृ० प० ६३३)

१३३. *हे भगवंत ! नारक अवलोय, जेह अनंतर-निर्गता होय।
नारक नो स्यूं आयू बांधै, जाव देव नो आयू सांधै ?

१३४. जिन कहै नरकायु न बंधंत, जाव देवायु नहिं पकरंत।
पढम समय बंध आयु न कृत, तिणसुं अबंध अणंतर-निर्गत।।

१३५. हे भगवंत ! नारक अवलोय, जेह परंपर-निर्गता होय।
नारक नो स्यूं आयू बांधै, यावत सुर आयू प्रति सांधै ?

१३६. जिन कहै नरकायू पिण बांधै, यावत सुर आयू पिण सांधै।
एह परंपर-निर्गता जोय, तिरि पंचेंद्री मनुष्य इज होय।।

१३३. अणंतरनिग्गया णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति ?

१३४. गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति। (श० १४।११)

१३५. परंपरनिग्गया णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति—पुच्छा।

१३६. गोयमा ! नेरइयाउयं पि पकरेंति जाव देवाउयं पि पकरेंति। (श० १४।१२)
इह च परम्परानिर्गता नारकाः सर्वाण्यायूंषि बध्नन्ति, यतस्ते मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च एव च भवन्ति। (वृ० प० ६३३)

१३७. ते तिर्यंच पंचेंद्री देख, अथवा जे वलि मनुष्य विशेख।
ते चिहुं गति नों आयू बांधै, तिण कारण ए चिहु गति सांधै।।

१३७. ते च सर्वायुर्बन्धका एवेति। (वृ० प० ६३३)

१३८. वैक्रिय जन्म थकी सुविमास, अथवा ओदारिक थी तास।
नीकलनैंज मनुष्य हुवै कोय, अथवा तिरि पंचेंद्री होय।।

१३९. ते चिहुं गति आयु बंध जोग्य, तिणरै चिहुं गति बंध प्रयोग्य।
चिहुं गति आयु बंध कहीव, आयु बंध योग्य जे जीव।।

१३८,१३९. एवं सर्वेऽपि परम्परनिर्गता वैक्रियजन्मानः, औदारिकजन्मानोऽप्युद्वृत्ताः केचिन्मनुष्यपञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्चो भवन्त्यतस्तेऽपि सर्वायुर्बन्धका एवेति। (वृ० प० ६३३, ६३४)

१४०. अणंतर-परंपर-निर्गत नांही, ते नारक नीं पूछा ज्यांही।
जिन कहै नारक आयु न बंधै, यावत सुर आयू नहिं संधै।।

१४०. अणंतरं-परंपर-अनिग्गया णं भंते ! नेरइया— पुच्छा।
गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति।

१४१. निर्विशेष ते विशेष रहीत, जावत वैमानिका कहीत।
तीन-तीन आलावा प्रत्येक, पूर्वली पर कहिवा पेख।।

१४१. निरवसेसं जाव वेमाणिया। (श० १४।१३)

सोरठा

१४२. कह्या निर्गता एह, ते तो ऊपजता थका।
सुखे करी उपजेह, तथा दुखे करि ऊपजै।।

१४३. दुखे करी उपजंत, ते आश्री धुर सूत्र हिव।
नारक तणोज हुंत, प्रश्नोत्तर तसु सांभलो।।

१४२,१४३. अनन्तरं निर्गता उक्तास्ते च क्वचिदुत्पद्यमानाः सुखेनोत्पद्यन्ते दुःखेन वेति दुःखोत्पन्नकानाश्रित्याह— (वृ० प० ६३४)

१४४. *हे प्रभु ! स्यूं नारक संपन्ना, कहियै अनंतर-खेद उपन्ना।
समयादि अंतर-रहित आख्यातं, दुखे करी क्षेत्रे उपपातं ?

१४४. नेरइया णं भंते ! किं अणंतरखेदोववन्नगा ?
'अनंतरखेदोववन्नग' त्ति अनन्तरं— समयाद्यव्यवहितं खेदेन—दुःखेनोपपन्नं—उत्पादक्षेत्रप्राप्तिलक्षणं येषां ते। (वृ० प० ६३४)

---

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४५. कै कहियै परंपर-खेद उपन्ना, बे आदि स मय थया जे दुख जन्ना।
कै अनंतर-परंपर दुख अणुपन्ना, विग्रहगतिया एह संपन्ना ?

१४५. परंपरखेदोववन्नगा ? अणंतर-परंपर-खेदाणुववन्नगा ?
'अणंतरपरंपरखेदाणुववन्नग' त्ति अनन्तरं परम्परं च खेदेन नास्त्युपपन्नकं येषां ते तथा विग्रहगतिवर्त्तिन इत्यर्थः। (वृ०प० ६३४)

१४६. जिन कहै हंता तोनूंइ थाय, ए अभिलापे करिनैं ताय।
इमहिज दंडक कहिवा च्यार, खेद शब्द सुविशेषित धार।।

१४६. गोयमा ! नेरइया अणंतरखेदोववन्नगा वि, परंपर-खेदोववन्नगा वि, अणंतर-परंपर-खेदाणुववन्नगा वि। एवं एएणं अभिलावेणं ते चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्वा। (श० १४।१४)
'ते चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्व' त्ति त एव पूर्वोक्ता उत्पन्नदण्डकादयः खेदशब्दविशेषिताश्चत्वारो दण्डका भणितव्याः। (वृ०प० ६३४)

यतनी

१४७. धुर खेद उपन्ना कहाय, दूजो तास आयु पूछाय।
तीजो खेद निर्गता कहियै, चतुर्थो तसु आयू लहियै।।

१४७. तत्र च प्रथमः खेदोपपन्नदण्डको द्वितीयस्तदायुष्क-दण्डकस्तृतीयः खेदनिर्गतदण्डकश्चतुर्थस्तु तदायुष्क-दण्डक इति। (वृ० प० ६३४)

१४८. *सेवं भंते ! जाव विचरंत, शतक चवदमें वर्णन तंत।
प्रथम उदेशा नों अर्थ उदार, श्री जिन वचन सूत्र अनुसार।।

१४८. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ। (श० १४।१५)

१४९. वर्ष बावीस[1] मधु[2] सुदि अष्टम न्हाल, दोयसौ नैं एकाणुमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय पसाय, 'जय-जश' संपति हरष सवाय।।

चतुर्दशशते प्रथमोद्देशकार्थः ।।१४।१।।

ढाल : २९२

दूहा

१. पूर्व उदेशे आखिया, जेह अनंतर आदि।
नारक प्रमुखज ऊपनां, वक्तव्यता संवादि।।

१. अनन्तरोद्देशकेऽनन्तरोपपन्ननैरयिकादिवक्तव्यतोक्ता। (वृ० प० ६३४)

२. तेह नारकादिक हुवै, मोहवंत असमाधि।
ते मोह तो उन्माद है, तास परूपण आदि।।

२. नैरयिकादयश्च मोहवन्तो भवन्ति, मोहश्चोन्माद इत्युन्मादप्ररूपणार्थो द्वितीय उद्देशकः। (वृ० प० ६३४)

उन्माद पद

३. †कितै प्रकारै हो प्रभु ! कह्यो उन्माद ?
विविक्त-चेतना[3]-भ्रंश उन्मत्तपणो।
जिन कहै बिहुंविध हो उन्माद अगाध,
यक्षावेश दूजो मोह उदै घणो।।

३. कतिविहे णं भंते ! उम्मादे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तं जहा—जक्खाएसे य, मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं।
'उन्मादः' उन्मत्तता विविक्तचेतनाभ्रंश इत्यर्थः। (वृ०प० ६३५)

---

*लय : इण पुर कंबल कोइय न लेसी

१. सं. १९२२ २. चैत्र मास

†लय : तोरण आयो हे सखी !

३. विवेक चेतना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

४. यक्ष देव ए जान, तेहनों जे आवेश ते।
जीव विषे अधिष्ठान, यक्ष अधिष्ठित प्रथम ए ।।

४. 'जक्खाएसे य' त्ति यक्षो—देवस्तेनावेशः—प्राणिनोऽधिष्ठानं यक्षावेशः। (वृ० प० ६३५)

५. *मोह नीं उन्माद नां, बे भेद इक मिथ्यात्व ही।
तसु उदय थी सरधैज ऊंधो, दश बोलां में एक ही ।।

५. 'मोहणिज्जस्से' त्यादि तत्र मोहनीयं—मिथ्यात्वमोहनीयं तस्योदयादुन्मादो भवति यतस्तदुदयवर्त्ती जन्तुरतत्त्वं तत्त्वं मन्यते तत्त्वमपि चातत्त्वं।
(वृ० प० ६३५)

६. द्वितीय जे चारित्र-मोहनीं, तसु उदयवर्ती छतो।
विषय विष तुल्य जाणतो, अजाण नीं परै वर्ततो ।।

६. चारित्रमोहनीयं वा यतस्तदुदये जानन्नपि विषयादीनां स्वरूपमजानन्निव वर्त्तते। (वृ० प० ६३५)

७. तथा चारित्र-मोहनीं जसु, वेद मोह विशेष है।
तसु उदय थी अतिहि उन्मत्त[1], विषयरक्त अशेष है ।।

७. अथवा चारित्रमोहनीयस्यैव विशेषो वेदाख्यो मोहनीयं यतस्तदुदयविशेषेऽप्युन्मत्त एव भवति।
(वृ० प० ६३५)

८. †बिहुं उन्मत्त में हो यक्षावेश उन्माद,
मोह जन्य उन्मत्त नीं अपेक्षया।
सुखे वेदवो हो क्लेश रहित संवाद,
सुखे मूकायवो यक्ष नीकल गयां ।।

८. तत्थ णं जे से जक्खाएसे से णं सुहवेयणतराए चेव सुहविमोयणतराए चेव।
सुखेन मोहजन्योन्मादापेक्षयाऽक्लेशेन वेदनं—अनुभवनं यस्यासौ सुखवेदनतरः। (वृ० प० ६३५)

९. हिव जे बीजो हो मोहजनित उन्माद,
यक्षावेश नी अपेक्षया जाणियै।
अति दुखे वेदवो हो दुखे विमोचन व्याध,
अधिक विस्तार टीका थी आणियै ।।

९. तत्थ णं जे से मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं से णं दुहवेयणतराए चेव दुहविमोयणतराए चेव।
(श० १४।१६)

१०. *दुखे वेदन जे अनंत संसार नां कारण हुंती।
संसार नो वलि दुःख वेदन, जन्म मरण प्रभाव थी ।।

१०. मोहजन्योन्माद इतरापेक्षया दुःखवेदनतरो भवत्यनन्तसंसारकारणत्वात्, संसारस्य च दुःखवेदनस्वभावत्वात्
(वृ० प० ६३५)

११. इतर यक्षावेश फुन तसु वेदवो सुख सुं हुवै।
इकभविक पिण ह्वै कदा इम, सुखे उपद्रव मुच्चवै ।।

११. इतरस्तु सुखवेदनतर एव, एकभविकत्वादिति।
(वृ० प० ६३५)

१२. तथा मोहनि-जनित उन्मत्त, इतरनींज अपेक्षया।
अति दुखे करि मूकवो ह्वै, तास मोह उदै थयां ।।

१२. तथा मोहजोन्माद इतरापेक्षया दुःखविमोचनतरो भवति। (वृ० प० ६३५)

१३. मंत्र विद्या सुर-अनुग्रह, वलि ए तीनूंई हुवै।
असाध्यपणां थी मोह-जनित, उन्मत्त नैं अणमुच्चवै ।।

१३. विद्यामन्त्रतन्त्रदेवानुग्रहवतामपि वार्त्तिकानां तस्यासाध्यत्वात्। (वृ० प० ६३५)

१४. यक्ष अधिष्ठित सुख विमोचन, मंत्र मात्रे पिण तसु।
निग्रहण वशकरण समरथ, सुख विमोचन इम जसु ।।

१४. इतरस्तु सुखविमोचनतर एव भवति यन्त्रमात्रेणापि तस्य निग्रहीतुं शक्यत्वादिति। (वृ० प० ६३५)

१५. मंत्रवादी केवली पिण, जसु मिथ्यात्व उदै घणुं।
तसु निग्रह करवा न समरथ, दुख विमोचन इम भणुं ।।

१५. सर्वज्ञमन्त्रवाद्यपि यस्य न सर्वस्य निग्रहे शक्तः।
मिथ्यामोहोन्मादः स केन किल कथ्यतां तुल्यः?
(वृ० प० ६३५)

---

*लय : पूज मोटा भांजै टोटा

१. उन्मत्तता के लक्षण :
चिंतेइ दट्ठुमिच्छइ दीहं नीससइ तह जरे दाहे।
भत्त अरोअग मुच्छा उम्माय न याणई मरणं ।।
(वृ. प. ६३५)

†लय : तोरण आयो हे सखी !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

१६. ए बेहूं उन्माद, दंडक चउवीसां विषे।
कहियै छै संवाद, जिन वचनामृत प्रवर है।।

१७. *कितै प्रकारै हो नारक नें उन्माद ?
जिन कहै दोय प्रकारे दाखियो।
यक्षाधिष्ठित हो मोह कर्म वश व्याध,
ते किण अर्थे प्रभु ! इम भाखियो ?

१८. जिन कहै देवा हो नेरइया रै मांहि,
पुद्गल अशुभ प्रक्षेप करै तदा।
ते पुद्गल नें हो प्रक्षेपवै ताहि,
यक्षावेश उन्माद कह्यो यदा।।

१९. मोह कर्म नें हो उदय करी अधिकाय,
मोहनी नो उन्माद कहीजियै।
तिण अर्थे कर हो इम कहियै वाय,
द्विविध उन्मत्त नरक लहीजियै।।

२०. प्रभु ! असुर नें कतिविध है उन्माद ?
इम जिम नारक नें कह्यो तिमज ही।
णवरं इतरो हो एह विशेष संवाद,
यक्ष अधिष्ठित उन्मत्त में सही।।

२१. महर्द्धिक अतिहि हो देव असुर रै मांहि,
पुद्गल अशुभ प्रक्षेप करै तदा।
ते पुद्गल नें हो प्रक्षेपवै ताहि,
यक्षावेश उन्माद कह्यो यदा।।

२२. मोह उदय नों हो शेष तिमज कहिवाय,
तिण अर्थे कह्यु जाव उदय करी।
एवं यावत हो थणियकुमार में ताय,
द्विविध उन्मत्त इम जिन उच्चरी।।

२३. पृथ्वीकाय नें हो जाव मनुष्य पर्यंत,
उन्मत्त दोय नारक जिम आखिया।
व्यंतर जोतिषी हो वैमानिक जे अंत,
उन्मत्त दोय असुर जिम दाखिया।।

सोरठा

२४. अनंतरे कह्यु एह, वेमानिक जे देव नें।
मोह उदय नों जेह, उन्मत्त क्रिया विशेष जे।।

२५. हिव जे वृष्टीकाय करण-रूप क्रिया तिका।
इंद्रादिक नें थाय, ते देखाड़तो कहियै तिको।।

१६. इदं च द्वयमपि चतुर्विंशतिदण्डके योजयन्नाह—
(वृ० प० ६३५)

१७. नेरइयाणं भंते ! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तं जहा—
जक्खाएसे य, मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं।
से केणट्ठेणं भंते ! (श० १४।१७)

१८. गोयमा ! देवे वा से असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा, से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खिवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा।

१९. मोहणिज्जस्स वा कम्मस्स उदएणं मोहणिज्जं उम्मायं पाउणेज्जा। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—
नेरइयाणं दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तं जहा—
जक्खाएसे य, मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं।
(श० १४।१८)

२०. असुरकुमाराणं भंते ! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते ?
एवं जहेव नेरइयाणं नवरं (सं० पा०)

२१. देवे वा से महिड्ढियतराए असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खिवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा।

२२. मोहणिज्जस्स वा कम्मस्स उदएणं मोहणिज्जं उम्मायं पाउणिज्जा। से तेणट्ठेणं जाव उदएणं। एवं जाव थणियकुमाराणं।

२३. पुढविक्काइयाणं जाव मणुस्साणं—एएसिं जहा नेरइयाणं, वाणमंतर-जोइस-वेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं। (श० १४।१९,२०)

२४. अनन्तरं वैमानिकदेवानां मोहनीयोन्मादलक्षणः क्रियाविशेषः उक्तः। (वृ० प० ६३५)

२५. अथ वृष्टिकायकरणरूपं तमेव देवेन्द्रादिदेवानां दर्शयन् प्रस्तावनापूर्वकमाह— (वृ० प० ६३५)

*लय : तोरण आयो हे सखी !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वृष्टिकायकरण पद

२६. *हे प्रभु ! पर्जन्य हो तिको मेघ कहिवाय,
कालवासी ते वर्षाकाल वरसतो ।
अथवा पर्जन्य हो इंद्र तिको पिण ताय,
जिन-जन्मादि काले वृष्टी पकरतो ?

२७. श्री जिन भाखै हो हंता अत्थि ताम,
घन जे वरसै ते तो प्रगट प्रसिद्ध ही ।
शक्र-प्रवर्षण हो क्रिया प्रसिद्ध न आम,
तेह प्रश्नोत्तर हिव कहियै सही ।।

२८. हे प्रभु ! शक्रज हो वृष्टिकाय कहिवाय,
उदक-समूह करण नीं इच्छा धरै ।
ते किण रीते हो वृष्टि करै जिनराय ?
उत्तर तास प्रभु इम उच्चरै ।।

२९. शक्र तिवारै हो वर्षाकामी होय,
भितर परषद सुर नैं सदावियै ।
ते भितर नां हो बोलाया छता ताम,
मध्यम परषद सुर बोलावियै ।।

३०. मध्यम परषद हो सुर बोलाया थका ताम,
बाहिर परषद सुर तेड़ावियै ।
बाहिर परषद हो सुर बोलाया छता ताम,
बाहिर-बाहिरगा बोलावियै ।।

३१. बाहिर-बाहिरगा हो सुर बोलाया थका ताम,
ते आज्ञाकारी सेवग सुर बोलावियै ।
ते सेवग देवा हो बोलाया छता ताम,
वृष्टिकायिक सुर प्रति तेड़ावियै ।।

वा०—इहां पाठ में कह्यो—तए णं ते आभिओगिया देवा सद्दावेंति तए णं ते जाव सद्दाविया समाणा—इहां जाव शब्द में 'आभियोगिया देवा' एतला अक्षर जणाय छै ते सेवग देवता बोलाया छता एहवूं जोड़ में कह्यूं, तिणसूं जाव शब्द न कह्यं ।

३२. वृष्टिकायिक हो सुर बोलाया थका ताम,
वृष्टिकाय जल-समूह प्रतै करे ।
इम निश्चै करि हो शक्र सुरिंद्र सुरराज,
वृष्टि करै जिन-जन्मादि अवसरे ।।

३३. प्रभु ! असुर पिण हो वृष्टिकाय पकरंत ?
जिन कहै हंता अत्थि इम जाणियै ।
ते किण कारण हो प्रभुजी ! भाखो उदंत,
असुर वृष्टि करै हेतु पिछाणियै ।।

३४. श्री जिन भाखै हो जे अरिहंत भगवंत तास,
जन्म नां महोत्सव अवसरे ।
दीक्षा केवल हो वलि निर्वाण नां हुंत,
असुर देव पिण वृष्टि करै जरै ।।

२६,२७. अत्थि णं भंते ! पज्जण्णे कालवासी वुट्ठिकायं पकरेति ?
हंता अत्थि । (श. १४।२१)
'कालवासि' त्ति काले—प्रावृषि वर्षतीत्येवंशीलः कालवर्षी,....इह स्थाने शक्रोऽपि तं प्रकरोतीति दृश्यं, तत्र च पर्जन्यस्य प्रवर्षणक्रियायां तत्स्वाभाव्यतालक्षणो विधिः प्रतीत एव, शक्रप्रवर्षणक्रियाविधिस्त्वप्रतीत इति । (वृ० प० ६३५)

२८. जाहे णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं काउकामे भवइ से कहमियाणिं पकरेति ?

२९. गोयमा ! ताहे चेव णं से सक्के देविंदे देवराया अब्भिंतरपरिसए देवे सद्दावेइ । तए णं ते अब्भिंतर-परिसगा देवा सद्दाविया समाणा मज्झिमपरिसए देवे सद्दावेंति ।

३०. तए णं ते मज्झिमपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरपरिसए देवे सद्दावेंति । तए णं ते बाहिर-परिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरबाहिरगे देवे सद्दावेंति ।

३१. तए णं ते बाहिरबाहिरगा देवा सद्दाविया समाणा आभिओगिए देवे सद्दावेंति । तए णं ते आभिओगिया देवा सद्दाविया समाणा वुट्ठिकाइए देवे सद्दावेंति ।

३२. तए णं ते वुट्ठिकाइया देवा सद्दाविया समाणा वुट्ठिकायं पकरेंति । एवं खलु गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं पकरेति । (श० १४।२२)

३३. अत्थि णं भंते ! असुरकुमारा वि देवा वुट्ठिकायं पकरेंति ?
हंता अत्थि । (श० १४।२३)
किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा वुट्ठिकायं पकरेंति ?

३४. गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंतो—एएसि णं जम्मणमहिमासु वा निक्खमणमहिमासु वा नाणुप्पाय-महिमासु वा परिनिव्वाणमहिमासु वा ।

*लय : तोरण आयो हे सखी !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. इम निश्चै कर हो असुरा घन वर्षावंत,
एवं नाग जाव थणियकुमार ही।
व्यंतर ज्योतिषी हो वैमानिक इम हुंत,
हिव सुर क्रियाधिकार थी अपर ही ॥

तमस्कायकरण पद

३६. प्रभु ! ईशाणज हो सुरिंद सुर नों राय,
तमसकाय करवा नीं इच्छा धरै।
ते किण रीते हो तमस्काय करै ताय ?
तास उत्तर जिनजी इम उच्चरै ॥

३७. यदा ईशानज हो देव-इंद्र सुरराय,
तमस्काय करवानीं इच्छा करै।
परषद भिंतर हो तेहनां सुर लै बोलाय,
ते भिंतर नां सुर आव्या थका तरै ॥

३८. जेम शक्र नीं हो वक्तव्यता कही तेम,
जाव सेवग सुर बोलाव्या छता।
तमस्कायिक सुर हो बोलावै धर प्रेम,
ते बोलाव्यां तमस्काय करता रता ॥

३९. इम निश्चै करि हो ईशाणेंद्र सुरराय,
तमस्काय करै वलि शिष्य पूछियै।
प्रभु ! असुरा पिण हो करै तमस्काय ताय?
हंता अत्थि इम जिन उत्तर दियै ॥

४०. प्रभु ! किण कारण हो असुर करै तमस्काय?
श्री जिन भाखै क्रीड़ा रति कारणे।
क्रीड़ खेलवूं हो रति ते काम कहाय,
अथवा क्रीड़ा रूप रति तसु धारणे ॥

४१. वलि शत्रु नैं हो विमोह करण नैं काम,
तथा गोपवण योग्य वस्तु रक्षण भणी।
तथा पोता नीं हो देह छिपाड़ण ताम,
इम खलु तमस्काय असुरा तणी ॥

वा०—इहां किणहि परत में 'जाव वेमाणिए' कह्यो ते देव दंडक आश्री जाणवो। पूर्वे कह्यो असुरादि देवता मेह वर्षावै तेहिज देवता इहां जाव शब्द में जाणवा, पिण अनेरा दंडक न जाणवा।

४२. इम वैमानिक हो, सेवं भंते ! स्वाम,
चउदम शतक उद्देशे दूसरे।
ढाल दोयसौ हो बाणूंमी अभिराम,
भिक्षु भारीमाल नृप 'जय-जश' सुख वरे ॥

चतुर्दशशते द्वितीयोद्देशकार्थः ॥१४।२॥

३५. एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा देवा वुट्ठिकायं पकरेंति। एवं नागकुमारा वि, एवं जाव थणियकुमारा। वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया एवं चेव। (श० १४।२४)
देवक्रियाऽधिकारादिदमपरमाह— (वृ० प० ६३६)

३६. जाहे णं भंते ! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं काउकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति ?

३७. गोयमा ! ताहे चेव णं से ईसाणे देविंदे देवराया अब्भितरपरिसए देवे सद्दावेति। तए णं ते अब्भितर-परिसगा देवा सद्दाविया समाणा

३८. एवं जहेव सक्कस्स जाव तए तए णं ते तमुक्काइया देवा सद्दाविया समाणा तमुक्काइए देवे सद्दावेंति। तए णं ते तमुक्काइया देवा सद्दाविया समाणा तमुक्कायं पकरेंति।

३९. एवं खलु गोयमा ! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं पकरेति। (श० १४।२५)
अत्थि णं भंते ! असुरकुमारा वि देवा तमुक्कायं पकरेंति ?
हंता अत्थि। (श. १४।२६)

४०. किंपत्तियं णं भंते ! असुरकुमारा देवा तमुक्कायं पकरेंति ?
गोयमा ! किड्डा-रतिपत्तियं वा।
'किड्डारइपत्तियं' ति क्रीडारूपा रतिः क्रीडारतिः अथवा क्रीडा च—खेलनं रतिश्च—निधुवनं क्रीडारती सैव ते एव वा प्रत्ययः—कारणं यत्र तत् क्रीडारति-प्रत्ययं। (वृ० प० ६३६)

४१. पडिनीयविमोहणट्ठयाए वा गुत्तीसारक्खणहेउं वा अप्पणो वा सरीरपच्छायणट्ठयाए, एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारा वि देवा तमुक्कायं पकरेंति।
'गुत्तीसंरक्खणहेउं व' त्ति गोपनीयद्रव्यसंरक्षण-हेतोर्वेति। (वृ० प० ६३६)

४२. एवं जाव वेमाणिया। (श० १४।२७)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।
(श. १४।२८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २९३

दूहा

१. द्वितीय उदेशे देव नों, व्यतिकर कह्यो विशेख।
तेहिज तृतीय उदेशके, सांभलजो संपेख ॥

*हूं बलिहारी हो वीर नीं, भाख्या हो प्रभु भिन-भिन भेव कै।
धन्य शिष्य प्रशन पूछिया, उत्तर दीधा जिन स्वयमेव कै ॥ (ध्रुपदं)

१. द्वितीयोद्देशके देवव्यतिकर उक्तः: तृतीयेऽपि स एवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्।
(वृ० प० ६३६)

विनयविधि पद

२. हे प्रभुजो ! जे देवता, महाकाय जसु बहु परिवार कै।
महा-शरीर छै जेहनों बृहततनु ते सुर अवधार कै।

२. देवे णं भंते ! महाकाए महासरीरे
'महाकाय' त्ति महान्—बृहन् प्रशस्तो वा कायो—निकायो यस्य स महाकायः, 'महासरीरे' त्ति बृहत्तनुः। (वृ० प० ६३६)

३. भावितात्म अणगार नें, बिचै थई नें ते सुर जाय कै?
जिन कहै कोइक जावै अछै, कोइक सुरवर जावै नांय कै ॥

३. अणगारस्स भावियप्पणो मज्भंमज्भेणं वीइवएज्जा? गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा। (श० १४।२९)

४. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो, कोइ जाय कोइक नहिं जाय कै।
श्री जिन भाखै गोयमा ! देवा दोय प्रकार कहिवाय कै ॥

४. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा? गोयमा ! दुविहा देवा पण्णत्ता,

५. मायी-मिथ्यादृष्टि ऊपनां, अमायी-समदृष्टि उत्पन्न कै।
इहां मायी-मिथ्यादृष्टि देवता, देखी भावितात्म मुनि जन्न कै ॥

५. तं जहा—मायीमिच्छादिट्ठीउववन्नगा य, अमायीसम्मदिट्ठीउववन्नगा य। तत्थ णं जं से मायीमिच्छदिट्ठीउववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ,

६. वांदै नहिं ते मुनि भणी, नमस्कार न करै सिर नाम कै।
वलि सत्कार करै नहीं, वलि सन्मान दियै नहिं ताम कै ॥

६. पासित्ता नो वंदइ, नो नमंसइ, नो सक्कारेइ, नो सम्माणेइ,

७. कल्याणकारक ते मुनि, विघ्न मिटावण मुनि मंगलीक कै।
धर्मदेव जाणी करी, यावत सेव करै न सधीक कै ॥

७. नो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासइ।

८. ते भावितात्म अणगार नें, मध्योमध्य थई नें जाय कै।
नीकलै मुनि रै बिच थई, ते देव आसातन सूं डरै नांय कै ॥

८. से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्भंमज्भेणं वीइवएज्जा।

९. अमायी-समदृष्टि ऊपनों, ते सुर मुनि प्रति देख उदार कै।
वंदै शिर नामै वलि, यावत सेव करै सुखकार कै ॥

९. तत्थ णं जे से अमायीसम्मद्दिट्ठीउववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ, पासित्ता वंदइ नमंसइ जाव (सं. पा.) पज्जुवासइ।

१०. ते भावितात्म अणगार नें, मध्ये मध्य करी नहिं जाय कै।
तिण अर्थे इम आखियो, कोइ जाय कोइ नहिं जाय ताय कै ॥

१०. से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्भंमज्भेणं नो वीइवएज्जा। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा। (श० १४।३०)

११. हे प्रभु ! असुरकुमार ते, महाकाय ते घणो परिवार कै।
महाशरीरी मुनि बिचै, एवं चेव पूर्ववत धार कै ॥

११. असुरकुमारे णं भंते ! महाकाए महासरीरे अणगारस्स भावियप्पणो मज्भंमज्भेणं वीइवएज्जा? एवं चेव।

१२. इम देव दंडक भणवो सहु, जाव वैमानिक लग कहिवाय कै।
नारक पृथव्यादिक तणैं, ए कार्य नो असंभव थाय कै।

१२. एवं देवदंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणिए। (श० १४।३१)
'एवं देवदंडओ भाणियव्वो' त्ति नारकपृथिवीकायिकादीनामधिकृतव्यतिकरस्यासम्भवाद् देवानामेव च

*लय : हूं बलिहारी हो जादवां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संभवाद्देवदण्डकोऽत्र व्यतिकरे भणितव्य इति ।
(वृ० प० ६३६,६३७)

सोरठा

१३. पूर्वे सुर नों जाण, मध्य गमन अविनय कह्यो।
हिव नरकादि पिछाण, विनय विशेष प्रतै कहै ।।

१३. प्राग् देवानाश्रित्य मध्यगमनलक्षणो दुर्विनय उक्तः, अथ नैरयिकादीनाश्रित्य विनयविशेषानाह—
(वृ. प. ६३७)

१४. *हे प्रभु ! छै नारक तणैं, मांहोमांहि करिवो सत्कार कै।
विनय योग्य नैं वंदना-प्रमुख आदर नों करवो धार कै ।।

१४. अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं सक्कारे इ वा ?
'सक्कारेइ व' त्ति सत्कारो—विनयार्हेषु वन्दनादिनाऽऽदरकरणं । (वृ. प. ६३७)

१५. अथवा प्रवर वस्त्रादि नों देवूं तेह कह्यो सत्कार कै।
सक्कारो पवर वत्थमाइहिं, इति वचनात टीका में धार कै ।।

१५. प्रवरवस्त्रादिदानं वा 'सत्कारो पवरवत्थमाईहिं' इति वचनात् । (वृ. प. ६३७)

१६. सनमान तथाविध प्रतिपत्ति, योग्य भक्ति नों करिवूं जाण कै।
कृतिकर्म ते वंदना अथवा कार्य नों करिवूं पिछाण कै ।।

१६. सम्माणे इ वा ? किइकम्मे इ वा ?
'सम्माणेइ व' त्ति सन्मानः—तथाविधप्रतिपत्तिकरणं 'किइकम्मेइ व' त्ति कृतिकर्म्म—वन्दनं कार्यकरणं वा । (वृ. प. ६३७)

१७. गौरव योग्य देखी करी, आसण नो तजिवो अब्भुट्ठाण कै।
हस्त बिहुं नो जोड़वो, अंजलिपग्गहे कहिवूं जाण कै ।।

१७. अब्भुट्ठाणे इ वा ? अंजलिपग्गहे इ वा ?
'अब्भुट्ठाणेइ व' त्ति अभ्युत्थानं—गौरवार्हदर्शने विष्टरत्यागः 'अंजलिपग्गहेइ व' त्ति अञ्जलिप्रग्रहः—अञ्जलिकरणम् । (वृ. प. ६३७)

१८. गौरव योग्यज बैसतां, पहिलां आसण आणवूं ताम कै।
बैसो इत्यादिक कहै, आसणाभिग्गहे तेहनों ताम कै ।।

१८. आसणाभिग्गहे इ वा ?
'आसणाभिग्गहेइ व' त्ति आसनाभिग्रहः—तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेति भणनं ।
(वृ. प. ६३७)

१९. गौरव योग्य नें आश्रयी, आसण नोंज अनेरै स्थान कै।
लेइ जायवो ते अछै, आसणाणुप्पदाणे अभिधान कै ।।

१९. आसणाणुप्पदाणे इ वा ?
'आसणाणुप्पयाणेइ व' त्ति आसनानुप्रदानं गौरव्यमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसञ्चारणं ।
(वृ० प० ६३७)

२०. आवता सन्मुख जायवो, एंतस्सपच्चुग्गच्छणया जेह कै।
बैठां नीं सेवा करै, ठियस्स पज्जुवासणया जेह कै ।।

२०. एंतस्स पच्चुग्गच्छणया ? ठियस्स पज्जुवासणया ?
'इंतस्स पच्चुग्गच्छणय' त्ति आगच्छतो गौरव्यस्याभिमुखगमनं 'ठियस्स पज्जुवासणय' त्ति तिष्ठतो गौरव्यस्य सेवेति । (वृ० प० ६३७)

२१. जातां नैं पहुंचाड़िवो, गच्छंतस्स पडिसंसाहणया जाण कै ?
जिन कहै अर्थ समर्थ नहीं, नारक नैं नहिं विनय विनाण कै ।।

२१. गच्छंतस्स पडिसंसाहणया ?
नो इणट्ठे समट्ठे । (श० १४।३२)
'गच्छंतस्स पडिसंसाहणय' त्ति गच्छतोऽनुव्रजनमिति, अयं च विनयो नारकाणां नास्ति, सततं दुःस्थत्वादिति । (वृ० प० ६३७)

२२. छै प्रभु ! असुरकुमार नैं, सत्कार नैं देवो सन्मान कै।
जाव जातां पहुंचाड़िवो ? जिन कहै हंता अत्थि जान कै ।।

२२. अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणं सक्कारे इ वा ? सम्माणे इ वा जाव गच्छंतस्स पडिसंसाहणया वा ?
हंता अत्थि ।

२३. इम यावत थणियकुमार नैं, पृथ्वी जा चउरिंद्री पेख कै।
नारक नीं पर सर्व नैं, कहिवुं ए विस्तार अशेख कै।

२३. एवं जाव थणियकुमाराणं । पुढविकाइयाणं जाव चउरिंदियाणं एएसिं जहा नेरइयाणं ।
(श० १४।३३)

*लय : हूं बलिहारि हो जादवां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. छै प्रभु ! पं.-तिर्यंच नैं, सत्कारादि जाव पहुंचाय कै ?
जिन भाखै हंता अत्थि, पिण दोय बोल नहिं कहिवा ताय कै ।।

२४. अत्थि णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं सक्कारे इ वा जाव गच्छंतस्स पडिसंसाहणया वा ? हंता अत्थि ।

२५. पहिला आसण नों आणवो, आसण पहुंचावै अन्य स्थान कै ।
मांहोमांहि तिर्यंच रै, दोय बोल वर्ज्या भगवान कै ।।

२५. नो चेव णं आसणाभिग्गहे इ वा, आसणाणुप्पयाणे इ वा । (श. १४।३४)

२६. मनुष्य व्यंतर नैं ज्योतिषी, वैमानीक तणैं सुविचार कै ।
असुरकुमार तणी परै, कहिवो सगलो ही विस्तार कै ।

२६. मणुस्साणं जाव वेमाणियाणं ।
हंता अत्थि । वाणमंतर-जोइस-वेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं । (श. १४।३५)

२७. अल्पर्द्धिक प्रभु ! देवता, महर्द्धिक देव बिचै थइ जाय कै ?
जिन भाखै सुण गोयमा ! एह अर्थ समर्थ नहिं थाय कै ।।

२७. अप्पिड्ढिए णं भंते ! देवे महिड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ? नो इणट्ठे समट्ठे । (श. १४।३६)

२८. समर्द्धिक प्रभु ! देवता, समर्द्धिक सुर मध्य थइ जाय कै ।
जिन कहै अर्थ समर्थ नहीं, ते देव प्रमत्त ह्वै तो जाय ताय कै ।।

२८. समिड्ढिए णं भंते ! देवे समिड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ? नो इणट्ठे समट्ठे, पमत्तं पुण वीइवएज्जा । (श. १४।३७)

२९. ते प्रभु ! स्यूं शस्त्रे करी, हणिनैं जावा समर्थ होय कै ।
कै हणियां विन समर्था ? हिव जिन उत्तर भाखै सोय कै ।।

२९. से णं भंते ! किं सत्थेणं अक्कमित्ता पभू ? अणक्कमित्ता पभू ?

३०. शस्त्र प्रहार करी तदा, जावा नैं समर्थ छै जेह कै ।
शस्त्र प्रहार कियां विना, जावा समर्थ नहीं छै तेह कै ।।

३०. गोयमा ! अक्कमित्ता पभू, नो अणक्कमित्ता पभू । (श. १४।३८)

३१. इम इण अभिलापे करी, जेम दशम शतके आख्यात कै ।
तीजा उदेशा नैं विषे, कहिवुं इमज सर्व साख्यात कै ।।

३१. एवं एएणं अभिलावेणं जहा दसमसए आइड्ढीउद्देसए तहेव निरवसेसं ।

३२. च्यार दंडक कहिवा तिहां, इक-इक में तीन-तीन आलाव कै ।
जाव महर्द्धिक विमाणिणी, अल्पर्द्धिक विमाणिणी भाव कै ।।

३२. चत्तारि दंडगा भाणियव्वा जाव महिड्ढिया वेमाणिणी अप्पिड्ढियाए वेमाणिणीए । (श. १४।३९)

सोरठा

३३. कहिवा दंडक च्यार, इक-इक दंडक नैं विषे ।
तीन-तीन अधिकार, ते आलावा छै तिहां ।।

३३. 'चत्तारि दंडगा भाणियव्व' त्ति तत्र प्रथमदण्डक उक्तालापकत्रयात्मकः । (वृ. प. ६३८)

३४. पहिलो दंडक पेख, देव अनैं वलि देव नों ।
दूजो दंडक देख, देव अनैं देवी तणो ।।

३४. देवस्य देवस्य च, द्वितीयस्त्वेवंविध एव नवरं देवस्य च देव्याश्च । (वृ० प० ६३८)

३५. तृतीय दंडक ताम, देवी नो अरु देव नों ।
चोथो दंडक पाम, देवी अरु देवी तणो ।

३५. एवं तृतीयोऽपि नवरं देव्याश्च देवस्य च, चतुर्थोऽप्येवं नवरं देव्याश्च देव्याश्चेति । (वृ० प० ६३८)

३६. अल्पर्द्धिक सुर ताहि, महर्द्धिक सुर बिच थई ।
जावा समर्थ नांहि, प्रथम आलावो जाणवो ।।

३७. समर्द्धिक सुर ताहि, समर्द्धिक सुर बिच थई ।
जावा समर्थ नांहि, तसु प्रमत्तपणां में जाय फुन ।।

३८. शस्त्र आक्रमी आम, जावा समर्थ ए अछै ।
विण आक्रम्यो ताम, जावा समर्थ ते नहीं ।।

३९. प्रथम शस्त्र हणि पेख, जावा समर्थ ते प्रभु !
पिण प्रथम जई सुविशेख, पछै शस्त्र कर नहिं हणैं ।।

४०. महर्द्धिक सुर ताय, अल्पर्द्धिक जे सुर तणैं ।
मध्य थई नैं जाय ? जिन कहै हंता जाय छै ।।

४०. महड्ढिए णं भंते ! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ? हंता वीइवएज्जा । (वृ० प० ६३७)

४१. ते शस्त्रे करि ताम, हणि जावा समर्थ प्रभु !
तथा हण्यां विण आम, जावा समर्थ देव छै ?

४१. से णं भंते ! किं सत्थेणं अक्कमित्ता पभू अणक्कमित्ता पभू ? (वृ० प० ६३७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. जिन कहै शस्त्र प्रहार करि जावा समर्थ पिण।
अणहणियै पिण धार, जावा समर्थ देव छै।।
४३. प्रथम दंडक नां एह, तीन आलावा आखिया।
इम च्यारूं दंडकेह, तीन-तीन आलाव छै।।
४४. छेहलो एह आलाव, मर्हाद्धिक सुरी विमाणिणी।
अल्पर्द्धिक बिच भाव, ते पिण वैमाणिक सुरी।।
४५. इत्यादिक कहिवाय, पूर्वोक्तज अनुसार करि।
इक-इक दंडक मांय, त्रिहुं-त्रिहुं आलावा तिके।।
४६. कह्या अनंतर देव, तास विपर्यय अति दुखी।
तेह नारकी भेव, तसु अधिकार कहूं हिवै।।

४७. *प्रभु ! रत्नप्रभा नां नेरइया, केहवा पुद्गल नां परिणाम कै।
भोगवता विचरै अछै ? श्री जिन भाखै अनिष्ट तमाम कै।।

४८. यावत अति मन नहिं गमैं, एवं जाव सप्तमी ताम क।
ए सातूं पृथ्वी नां नेरइया, भोगवै पुद्गल नुं परिणाम कै।।
४९. इम पुद्गल-परिणाम ते भोगवै,
तिमहिज सप्तम नरक नां जीव कै।
वेदनां नां परिणाम नैं, अनुभवै अणगमता अतीव कै।।
५०. इम जिम जीवाभिगम में, द्वितीय नारक उद्देशे आम कै।
बीस बोल तिहां आखिया, कहियै ते बीसां रा नाम कै[1]।।

५१. जाव सातमी नां नेरइया, केहवा परिग्रह संज्ञा परिणाम कै।
यावत भोगवता थका, विचरै छै ते भाखो स्वाम ! कै।।

५२. श्री जिन भाखै अनिष्ट छै, यावत अणगमता छै अत्यन्त कै।
कहिवो वच इतरा लगै, सेवं भंते ! सेवं भंत ! कै।।
५३. चवदम शतके तीसरो, दोयसौ तीन नेऊमीं ढाल कै।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी,
'जय-जश' संपति हरष विशाल कै।।

चतुर्दशशते तृतीयोद्देशकार्थः ।।१४।३।।

४२. गोयमा ! अक्कमित्तावि पभू अणक्कमित्तावि पभू।
(वृ० प० ६३७)

४६. अनन्तरं देववक्तव्यतोक्ता, अथैकान्तदु:खितत्वेन तद्-विपर्ययभूता नारका इति तद्वक्तव्यतामाह—
(वृ० प० ६३८)
४७. रयणप्पभपुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं पोग्गल-परिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?
गोयमा ! अणिट्ठं।
४८. जाव (सं. पा.) अमणामं। एवं जाव अहेसत्तमा-पुढविनेरइया। (श० १४।४०)
४९. एवं वेदणापरिणामं (सं.पा.)।
'एवं वेयणापरिणामं' ति पुद्गलपरिणामवत् वेदना-परिणामं प्रत्यनुभवन्ति नारकाः। (वृ० प० ६३८)
५०. एवं जहा जीवाभिगमे बितिए नेरइयउद्देसए।
जीवाभिगमोक्तानि चैतानि विंशतिः पदानि।
(वृ० प० ६३८)
५१. जाव— (श० १४।४१)
अहेसत्तमापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं परिग्गह-सण्णापरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?
५२. गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं। (श. १४।४२)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श. १४।४३)

***लय : हूं बलिहारि हो जादवां**

१. जीवा० ३।३।१२८ गाथा १,२
पोग्गलपरिणामे वेयणा य लेसा य नामगोए य।
अरइभए य सोगे खुहा पिवासा य वाही य।।
उस्सासे अणुतावे कोहे माणे य माया लोभे य।
चत्तारि य सण्णाओ नेरइयाणं तु परिणामं।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २९४

दूहा

१. तृतीय उदेशा में कह्या, पुद्गल नां परिणाम।
पुद्गल नां परिणाम वलि, तुर्य उदेशे ताम।।

पुद्गल-जीव-परिणाम पद

२. *पुद्गल हे भगवान ! रे परमाणु तिको,
अथवा खंध कह्यो नकी ए।।
काल अतीत अनंत रे अपरिमाण थी,
शाश्वत अक्षयपणां थकी ए।

३. ते काल समय रै मांय रे एक समय लगै,
फर्श थकी लूखो तिको ए।।
समय अलूखो थाय रे एक समय लगै, स्निग्धवंत हुवो जिको ए।

४. आख्या ए पद दोय रे परमाणु विषे, खंध विषे बलि संभवै ए।।
खंध विषे इज पाय रे तीजो पद तिको,
न्याय सहित कहियै हिवै ए।

५. तथा समय में रूक्ष रे अथवा निद्ध ह्वै, खंध अपेक्षाए कह्यो ए।
खंध द्वि-प्रदेशिकादि रे लूखो देश ह्वै,
देश विषे जे निद्ध रह्यो ए।।

६. ए युगपत समकाल रे रूक्ष स्निग्ध बे फर्श तणो संभव तिहां ए।
कह्यो इहां वा शब्द रे समुदायार्थ ते, जे पुद्गल एहवो इहां ए।।

७. स्यूं अनेक वर्णादि रे परिणामे करी, जेह परिणामी नें रहै ए।।
वली एक वर्णादि रे तसु परिणाम ह्वै,
ए प्रश्न पूछतो शिष्य कहै ए।।

८. इक वर्णादि परिणाम रे तेहथी प्रथम जे,
पछै दोय करणे करी ए।
प्रयोग करण पहिछाण रे वलि ए विस्रसा,
ए दोनूं करणे वली ए।।

९. वर्ण अनेक विचार रे रूप अनेक ही, तेह परिणमै छै सही ए।
वर्ण काल नीलादि रे रूप अनेक ते, गंध फर्श रस प्रति लही ए।

१०. संठाण भेद करि तेह रे परिणाम पर्याय नें,
तेह परिणमै छै जिहां ए।
काल अतीत आख्यात रे तिणसुं परिणम्यो,
एहवो शब्द अछै इहां ए।।

*लय : एक दिवस शंख राजान रे

१. तृतीयोद्देशके नारकाणां पुद्गलपरिणाम उक्त इति, चतुर्थोद्देशकेऽपि पुद्गलपरिणामविशेष एवोच्यते। (वृ. प. ६३८)

२. एस णं भंते ! पोग्गले तीतमणंतं सासयं
'पुग्गले' त्ति पुद्गलः परमाणुः स्कन्धरूपश्च 'तीतमणंतं सासयं समयं' ति विभक्तिपरिणामादतीते अनन्ते अपरिमाण त्वात् शाश्वते अक्षयत्वात्। (वृ. प. ६३८)

३. समयं लुक्खी ? समयं अलुक्खी ?
'समयं लुक्खी' ति समयमेकं यावद्रूक्षस्पर्शसद्भावाद्रूक्षी, तथा समयं अलुक्खी' त्ति समयमेकं यावदरूक्षस्पर्शसद्भावाद् 'अरूक्षी' स्निग्धस्पर्शवान् बभूव। (वृ. प. ६३८,६३९)

४. इदं च पदद्वयं परमाणौ स्कन्धे च संभवति। (वृ. प. ६३९)

५. समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा।
तथा 'समयं लुक्खी वा अलुक्खी व' त्ति समयमेव रूक्षश्चारूक्षश्च रूक्षस्निग्धलक्षणस्पर्शद्वयोपेतो बभूव, इदं च स्कन्धापेक्षं यतो द्वयणुकादिस्कन्धे देशो रूक्षो देशश्चारूक्षो भवति। (वृ. प. ६३९)

६. इत्येवं युगपद्रूक्षस्निग्धस्पर्शसम्भवः वाशब्दौ चेह समुच्चयार्थौ। (वृ. प. ६३९)

७. एवंरूपश्च सन्नसौ किमनेकवर्णादिपरिणामं परिणमति पुनश्चैकवर्णादिपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह— (वृ. प. ६३९)

८-१०. पुव्विं च णं करणेणं अणेगवण्णं अणेगरूवं परिणामं परिणमइ ?
'पूर्वं च' एकवर्णादिपरिणामात्प्रागेव 'करणेन' प्रयोगकरणेन विश्रसाकरणेन वा 'अनेकवर्णं' कालनीलादिवर्णभेदेनानेकरूपं गन्धरसस्पर्शसंस्थानभेदेन 'परिणामं' पर्यायं परिणमति अतीतकालविषयत्वादस्य परिणतवानिति द्रष्टव्यं। (वृ. प. ६३९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

११. जे परमाणू पेख, तदा समय भेदे करी।
थयो वर्णादि अनेक, एहवूं आख्यो वृत्ति में।।

११. स च यदि परमाणुस्तदा समयभेदेनानेकवर्णादित्वं परिणतवान्। (वृ. प. ६३९)

१२. एक समय रै मांय, अनेक वर्ण हुवै नहीं।
तिण कारण ए वाय, समय भेद कर परिणम्यो।।

१३. यदि खंध संपेख, ते तो युगपत काल कर।
परिणमै वर्ण अनेक, इमहिज रूप अनेक ही।।

१३. यदि च स्कन्धस्तदा यौगपद्येनापीति। (वृ. प. ६३९)

१४. *अथ ते परमाणुनांज रे अथवा खंध नां,
वर्णादि परिणाम ते ए।
क्षीण थयां तिणवार रे ह्वै इकवर्ण ते,
वलि इकरूपज पाम ते ए?

१४. अहे से परिणामे निज्जिण्णे भवइ, तओ पच्छा एगवण्णे एगरूवे सिया?

१५. जिन कहै हंता एह रे पुद्गल छै तिको,
काल अतीत विषे रह्यो ए।
तिमज जाव इकरूप रे ए पुद्गल हुवो,
प्रश्न जेम उत्तर कह्यो ए।।

१५. हंता गोयमा! एस णं पोग्गले तीतमणंतं सासयं समयं।
तं चेव जाव एगरूवे सिया। (श. १४।४४)

वा०—अथ—अनन्तर ते एक-एक परमाणु नां तथा एक-एक खंध नां अनेक वर्णादि परिणाम निर्जरै—क्षीण हुवै, अन्य परिणाम-आधायक कारण उपनिपात नां वश थकी। तिवारै ते निर्जरयां पछै एकवर्ण हुवै, अन्य वर्ण नां अभाव थी। अनै एकरूप ते वंछित गंधादिक पर्याय नीं अपेक्षा करिकै, पर पर्याय नां त्याग थी। सिया कहितां एहवो पुद्गल हुवो अतीत काल नां विषयपणां थकी। ए प्रश्न छै ते माटै सिया शब्द नो अतीत काल नो अर्थ कियो।

वा०—'अह से' त्ति 'अथ' अनन्तरं सः—एष परमाणोः स्कन्धस्य चानेकवर्णादिपरिणामो 'निर्जीर्णः' क्षीणो भवति परिणामान्तराधायककारणोपनिपातवशात् 'ततः पश्चात्' निर्जरणानन्तरम् 'एकवर्णः' अपेतवर्णान्तरत्वादेकरूपो विवक्षितगन्धादिपर्यायापेक्षयाऽपरपर्यायाणामपेतत्वात् 'सिय' त्ति बभूव अतीतकालविषयत्वादस्येति प्रश्नः। (वृ. प. ६३९)

१६. ए प्रभु! अद्धा वर्त्तमान रे शाश्वत समय में,
एवं चेव अहीजियै ए।
एम अनागत काल रे, तेह अनन्त पिण,
तिको शाश्वत समय लहीजियै ए।।

१६. एस णं भंते! पोग्गले पडुप्पन्नं सासयं समयं लुक्खी?
एवं चेव। (श. १४।४५)
एस णं भंते! पोग्गले अणागयमणंतं सासयं समयं लुक्खी? एवं चेव। (श. १४।४६)

वा०—वर्त्तमान नैं शाश्वतो कह्यो ते सदाईज ते वर्त्तमान नां भाव थी। जद पूछै जद वर्त्तमान लाधै, ते माटै। इहां समय काल नो वाचक छै तेहनैं विषे। एवं चेव—इम कहिवा थकी पूर्व सूत्र कह्यो ते ए जाणवो—समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा इत्यादि।

वा०—'प्रत्युत्पन्ने' वर्तमाने 'शाश्वते' सदैव तस्य भावात् 'समये' कालमात्रे 'एवं चेव' त्ति करणात्पूर्वसूत्रोक्तमिदं दृश्यं—समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा' इत्यादि। (वृ०प० ६३९)

सोरठा

१७. अद्धा अतीत मांय, काल अनागत में वलि।
अनंत शब्द कहाय, वर्त्तमान में नहिं कह्यो।।
१८. समय एक नों एह, वर्त्तमान अद्धाज छै।
तिण कारण थी जेह, अनंत शब्द कह्यो नथी।।

१७,१८. यच्चेहानन्तमिति नाधीतं तद्वर्त्तमानसमयस्यानन्तत्वासम्भवात्, अतीतानागतसूत्रयोस्त्वनन्तमित्यधीतं तयोरनन्तत्वसम्भवादिति। (वृ० प० ६३९)

१९. पुद्गल तणो स्वरूप, अनंतरे जे आखियो।
तसु जे खंध तद्रूप, आगल कहियै छै हिवै।।

१९. अनन्तरं पुद्गलस्वरूपं निरूपितं, पुद्गलश्च स्कन्धोऽपि भवतीति पुद्गलभेदभूतस्य स्कन्धस्य स्वरूपं निरूपयन्नाह— (वृ० प० ६३९)

---

*लय : एक दिवस शंख राजान रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. *हे भगवंत ! ए खंध रे अनंत अतीत में, एवं चेव सुजाणियै ए।
खंध पिण पुद्गल जेम रे कहिवो छै इहां,
पुद्गल खंध पिछाणियै ए।।

२०. एस णं भंते ! खंधे तीतमणंतं सासयं समयं लुक्खी ? एवं चेव खंधे वि जहा पोग्गले।
(श० १४।४७)

सोरठा

२१. पूर्वे खंधज ख्यात, स्वप्रदेश अपेक्षया।
तिको जीव पिण थात, कहियै जीव-स्वरूप हिव।।

२१. स्कन्धश्च स्वप्रदेशापेक्षया जीवोऽपि स्यादितीत्थमेव जीवस्वरूपं निरूपयन्नाह— (वृ० प० ६३९)

२२. *प्रत्यक्ष ए प्रभु ! जीव रे अनंत अतीत जे,
शाश्वत समय विषे फिरी ए।
एक समय में एह रे दुखी हुवो अछै, दुख हेतू योगे करी ए।।

२२. एस णं भंते ! जीवे तीतमणंतं सासयं समयं दुक्खी ?
एस णं भंते ! जीवे इत्यादि, एषः प्रत्यक्षो जीवोऽतीतेऽनन्ते शाश्वते समये समयमेकं दुःखी दुःखहेतुयोगात्। (वृ० प० ६३९)

२३. एक समय रै मांय रे अदुखी ए हुवो, सुख हेतू योगे करी ए।।
समय विषेज कहाय रे दुखी सुखी हुवो, बिहुं हेतू योगे वरी ए।

२३. समयं अदुक्खी ? समयं दुक्खी वा अदुक्खी वा ?
समयं चादुःखी सुखहेतुयोगाद् बभूव।····दुःखी च सुखी च तद्धेतुयोगात्। (वृ० प० ६३९)

सोरठा

२४. स्यूं अनेक भाव परिणाम, परिणत कर वलि भाव इक-
परिणत ह्वै छै स्वाम !, इम पूछंतो शिष्य कहै।।

२४. एवंरूपश्च सन्नसौ स्वहेतुतः किमनेकभावं परिणामं परिणमति पुनश्चैकभावपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह— (वृ० प० ६३९)

२५. *एक भाव परिणाम रे तेहथी प्रथम जे,
करण विशेष करी यदा ए।
शुभ अशुभ कर्म बंध रे हेतूभूत जे, क्रिया करण करी तदा ए।।

२५. पुव्विं च णं करणेणं।
'पूर्वं च' एकभावपरिणामात्प्रागेव करणेन कालस्वभावादिकारणसंवलिततया (वृ० प० ६३९)

२६. अनेक भाव पर्याय रे सुख दुख रूप जे, जेहनैं विषे अछै वही ए।
तथा तेन प्रकारेण रे जेह अनेक ही,
भाव परिणाम प्रतै सही ए।।

२६. अणेगभावं
अनेको भावः—पर्यायो दुःखित्वादिरूपो यस्मिन् स तथा तमनेकभावं परिणाममिति योगः।
(वृ० प० ६३९)

२७. अनेकभूत कहाय रे बहु भाव परिणाम थी,
निश्चै कर इहविध वही ए।
अनेक रूप परिणाम रे स्वभाव परिणमं,
ए अनेकभूत लह्यो सही ए।।

२७. अणेगभूयं परिणामं परिणमइ ?
'अणेगभूयं' ति अनेकभावत्वादेवानेकरूपं परिणामं स्वभावं। (वृ० प० ६३९)

२८. ए परिणाम स्वभाव रे जंतु परिणम्यो,
अतीत विषेपणां थकी ए।
अथ ते दुखितत्वादि रे अनेक भाव नों, हेतूभूत कर्म नकी ए।।

२८. 'परिणमइ' त्ति अतीतकालविषयत्वादस्य परिणतवान् प्राप्तवानिति। (वृ० प० ६३९)
अहे से
'अह से' त्ति अथ 'तत्' दुःखितत्वाद्यनेकभावहेतुभूतं।
(वृ० प० ६४०)

२९. ते कर्म वेदनी जाण रे उपलक्षण थकी,
शेष कर्म पिण जाणियै ए।
ज्ञान दर्शनावरण रे आदिक अघ सहु,
वृत्ति थकी पहचाणियै ए।।

२९. वेयणिज्जे
'वेयणिज्जे' त्ति वेदनीयं कर्म्म उपलक्षणत्वाच्चास्य ज्ञानावरणीयादि च। (वृ० प० ६४०)

***लय : एक दिवस शंख राजान रे**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. ते कर्म हुवै सहु क्षीण रे तदनंतर पछै,
एक भाव शिव सुख हुवै ए।
सांसारिक सुख जेह रे विपर्यय तेह थी,
आत्मिक सुख अनुभवै ए।।

३१. तेहिज छै इकभूत रे एकपणो लही, हुवै इसो शिष्य पूछवै ए ?
जिन कहै गोतम ! हंत रे ए जंतू यावत,
एकभूत शिव अनुभवै ए।।

३२. एम अद्धा वर्त्तमान रे शाश्वत समय में,
अनंत शब्द इहां नाणियै ए।।
एम अनागत काल रे अनंत शाश्वता,
समय विषे इम जाणियै ए।।

३०. णिज्जिण्णे भवइ, तओ पच्छा एगभावे।
'निर्जीर्णं' क्षीणं भवति ततः पश्चात् 'एगभावे'त्ति एको भावः सांसारिकसुखविपर्ययात् स्वाभाविकसुखरूपो यस्यासावेकभावः (वृ० प० ६४०)

३१. एगभूए सिया ? हंता गोयमा ! एस णं जीवे तीतमणंतं सासयं समयं जाव एगभूए सिया।
'एकभूतः' एकत्वं प्राप्तः। (वृ० प० ६४०)

३२. एवं पडुप्पन्नं सासयं समयं, एवं अणागयमणंतं सासयं समयं। (श० १४।४८)

सोरठा

३३. पूर्वे खंध कहाय, पुद्गल खंध नो नाश ह्वै।
इम परमाणु पिण थाय, इसी आशंका कर कहै।।

३३. पूर्वं स्कन्ध उक्तः, स च स्कन्धरूपत्यागाद्विनाशी भवति, एवं परमाणुरपि स्यान्न वा ? इत्याशङ्कायामाह— (वृ० प० ६४०)

३४. *परमाणु भगवंत ! रे पुद्गल शाश्वतो,
तथा अनित्य अशाश्वतो ए।
तब भाखै जिनराय रे कदाच शाश्वतो,
कदा अशाश्वत थावतो ए ?

३४. परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सासए ? असासए ?
गोयमा ! सिय सासए, सिय असासए।
(श० १४।४९)

३५. किण अर्थे भगवंत ! रे कदाच शाश्वतो,
कदा अशाश्वत आखियो ए।
भाखै तब भगवत रे द्रव्यार्थपणै करी,
शाश्वतपणूंज दाखियो ए।।

३५. से केणट्ठेणं भंते ? एवं वुच्चइ—सिय सासए, सिय असासए ?
गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए।

सोरठा

३६. खंध रै अंतर भाव, तो पिण परमाणूपणो।
विनष्टपणो न थाव, तसु प्रदेश लक्षण अछै।।
३७. खंध तणोज प्रदेश, तेहिज परमाणू अछै।
तिण कारण सुविशेष, द्रव्यार्थ करि शाश्वतो।।

३६,३७. तया द्रव्यार्थतया शाश्वतः स्कन्धान्तर्भावेऽपि परमाणुत्वस्याविनष्टत्वात् प्रदेशलक्षणव्यपदेशान्तरव्यपदेश्यत्वात्। (वृ० प० ६४०)

३८. *वर्ण पर्याय करेह रे यावत फर्श नां-
पर्यव करि अशाश्वतो ए।
तिण अर्थे यावत रे कदाच शाश्वतो,
कदा अशाश्वत भावतो ए।।

३८. वण्णपज्जवेहिं जाव (सं.पा.) फासपज्जवेहिं असासए।
से तेणट्ठेणं जाव (सं. पा.) सिय सासए सिय असासए। (श० १४।५०)

सोरठा

३९. परमाणू विस्तार, तसु अधिकार थकीज वलि।
कहियै तास विचार, चित्त लगाई सांभलो।।

३९. परमाण्वधिकारादेवेदमाह— (वृ० प० ६४०)

४०. *परमाणू भगवंत ! रे स्यूं ए चरम छै,
कै अचरम ए आखियो ए।
द्रव्यादेश प्रकार रे ते द्रव्य आश्रयी,
चरम नहीं अचरम कह्यो ए।।

४०. परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं चरिमे ? अचरिमे ?
गोयमा ! दव्वादेसेणं नो चरिमे अचरिमे।

*लय : एक दिवस शंख राजान रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

४१. जेह विवक्षित भाव, तेह थकीज चव्यो थको।
फुन ते भाव न आव, ते भाव अपेक्षा चरम छै।।

४१. 'चरमे'त्ति यः परमाणुर्यस्माद्विवक्षितभावाच्च्युतः सन् पुनस्तं भावं न प्राप्स्यति स तद्भावापेक्षया चरमः। (वृ० प० ६४०)

४२. तेह थकी विपरीत, अचरम तेह कहीजियै।
गोयम प्रश्न संगीत, तसु उत्तर जिनजी कह्यो।।

४२. एतद्विपरीतस्त्वचरम इति। (वृ० प० ६४०)

४३. द्रव्य आश्रयी तेह, न मिटै परमाणूपणो।
जो ह्वै खंधपणेह, चव्यो परमाणु इज हुवै।।

४३. स हि द्रव्यतः परमाणुत्वाच्च्युतः संघातमवाप्यापि ततश्च्युतः परमाणुत्वलक्षणं द्रव्यत्वमवाप्स्यतीति। (वृ० प० ६४०)

४४. *क्षेत्र आश्रयी जाण रे कदाचि चरम ह्वै,
अचरम कदा कहीजियै ए।
काल आश्रयी जाण रे कदा चरम हुवै,
अचरम कदा लहीजियै ए।।

४४. खेत्तादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे। कालादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे।

सोरठा

४५. जेह क्षेत्र में जाणु, समुद्घात गति केवली।
तिण क्षेत्रे परमाणु, जे अवगाढ रह्यो हुंतो।।

४५. यत्र क्षेत्रे केवली समुद्घातं गतस्तत्र क्षेत्रे यः परमाणुरवगाढोऽसौ। (वृ० प० ६४०)

४६. तेहिज क्षेत्रे देख, तेहिज केवली कर वलि।
समुद्घात थी पेख, कदापि नहिं अवगाहसै।।

४६. तत्र क्षेत्रे तेन केवलिना समुद्घातगतेन विशेषितो न कदाचनाप्यवगाहं लप्स्यते। (वृ० प० ६४०)

४७. तास गमन निर्वाण, तिण सूं क्षेत्र थकीज इम।
परमाणू पहिछाण, चरम कह्यो इण कारणैं।।

४७. केवलिनो निर्वाणगमनादित्येवं क्षेत्रतश्चरमोऽसाविति। (वृ० प० ६४०)

४८. केवली समुद्घात, तास विशेषित क्षेत्र थी।
अन्य क्षेत्र आख्यात, अचरम तास अपेक्षया।।

४८. निर्विशेषणक्षेत्रापेक्षया त्वचरमः। (वृ० प० ६४०)

४९. जिण काले इम ख्यात, पूर्व दिवसादिक विषे।
केवली समुद्घात, कीधो जे अद्धा विषे।।

४९. यत्र काले पूर्वाह्लादौ केवलिना समुद्घातः कृतः। (वृ० प० ६४०)

५०. तिणहिज काले थात, परमाणू नां भाव कर।
जे परमाणू जात, तेहिज काल विशेष प्रति।।

५१. केवली समुद्घात, तेह विशेषित प्रति वलि।
परमाणू नहिं पात, अद्धा आश्रयी चरम इम।।

५०,५१. तत्रैव यः परमाणुतया संवृत्तः स च तं कालविशेषं केवलिसमुद्घातविशेषितं न कदाचनापि प्राप्स्यति तस्य केवलिनः सिद्धिगमनेन पुनः समुद्घाताभावादिति तदपेक्षया कालतश्चरमोऽसाविति। (वृ० प० ६४०)

५२. जिन समुद्घात विण अन्न, काल तणीज अपेक्षया।
अचरमपणुं प्रपन्न, अचरम इम परमाणुओ।।

५२. निर्विशेषणकालापेक्षया त्वचरम इति। (वृ० प० ६४०)

५३. *भाव आश्रयी जाण रे ते परमाणुओ,
चरम हुवै क अचरम सदा ए?
भाव वर्णादि विशेष रे ते लक्षण प्रकार थी,
कदा चरम अचरम कदा ए।।

५३. भावादेसेणं सिय चरिमे, सिय अचरिमे। (श० १४।५१)

'भावाएसेणं' ति भावो—वर्णादिविशेषस्तद् विशेषलक्षणप्रकारेण 'स्याच्चरम' कथञ्चिच्चरमः। (वृ० प० ३४०)

सोरठा

५४. विवक्षित जे साधि, समुद्घात केवल तदा।
जे पुद्गल वर्णादि, परिणत भाव विशेष प्रति।।

५४. विवक्षितकेवलिसमुद्घातावसरे यः पुद्गलो वर्णादिभावविशेषं परिणतः। (वृ० प० ६४०)

५५. ते वांछित वर्णादि, समुदघात केवलि तिको।
विशेषित संवादि, वर्ण परिणत पेक्षा चरम।।

५५. स विवक्षितकेवलिसमुद्घातविशेषितवर्णपरिणामापेक्षयाः चरमः। (वृ० प० ६४०)

लय : एक दिवस शंख राजान रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. जे केवलि शिव पाम, फुन परिणत वर्णादि ते।
लहिस्यै नहिं परिणाम, भाव थकी इम चरम है।।
५७. वर्णादिक परिणाम, समुद्घात केवलि विना।
पूर्वे पाम्या ताम, वलि लहिस्यै अचरम तिको।।
५८. आख्यो ए विस्तार, चूर्णिकार नैं मत करी।
एम कह्यो वृत्तिकार, द्रव्यादिक नां न्याय ए।।
५९. परमाणू चरमादि, कह्या लक्षण परिणाम तसु।
हिव परिणाम संवादि, तास भेद अभिधान कर।।

६०. *प्रभु ! कतिविध परिणाम रे ? द्विविध जिन कहै,
प्रथम जीव परिणाम जे ए।
एवं अजीव जाण रे पद परिणाम जे,
तेरम पन्नवणा पाम जे ए।।

सोरठा

६१. परिणमवो जे पाम, अन्य अवस्था द्रव्य नीं
गमन करेवूं ताम, ते परिणाम कहीजियै।।

वा०—परिणाम ते अन्य अर्थ प्रति पहुंचवूं—सर्वथा रहिवूं नथी अनैं सर्वथा विनाश नथी, ते परिणाम।

६२. दशविध जीव परिणाम, गति इंद्रिय कषाय फुन।
लेश योग वलि ताम, फुन उपयोग परिणाम छै।।
६३. ज्ञान अनैं दर्शन, चरित्त अनैं वलि वेद फुन।
जीव परिणाम कथन, जीव राशि में जाणवा।।

६४. वलि दशविध पहिछाण, अजीव परिणामज कह्या।
बंधण गति संठाण, भेद वर्ण गंध रस फरस।।
६५. अगुरुलघू नैं शब्द, अजीव परिणामज दसुं।
अजीव राशे लब्ध, इत्यादिक कहिवुं इहां।।

६६. *सेवं भंते ! स्वाम रे गोतम इम कही,
यावत विचरै उमह्यो ए।
शत चवदम नो ताम रे आख्यो अर्थ थी,
तुर्य उदेश पूरण थयो ए।।
६७. आखी ढाल रसाल रे बैसौ ऊपरै, च्यार नेऊमो अति भली ए।
भिक्षु भारीमाल रे ऋषिराय प्रसाद थी,
'जय-जश' आनंद रंगरली ए।।

चतुर्दशशते चतुर्थोद्देशकार्थः ।।१४।४।।

*लय : एक दिवस शंख राजान रे

५६. यस्मात्तत् केवलिनिर्वाणे पुनस्तं परिणाममसौ न प्राप्स्यतीति। (वृ० प० ६४०)

५८. इदं च व्याख्यानं चूर्णिकारमतमुपजीव्य कृतमिति। (वृ० प० ६४०)

५९. अनन्तरं परमाणोश्चरमत्वाचरमत्वलक्षणः परिणामः प्रतिपादितः, अथ परिणामस्यैव भेदाभिधानायाह— (वृ० प० ६४०)

६०. कतिविहे णं भंते ! परिणामे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुविहे परिणामे पण्णत्ते, तं जहा—जीवपरिणामे य, अजीवपरिणामे य। एवं परिणामपयं निरवसेसं भाणियव्वं। (श० १४।५२)

६१. तत्र परिणमनं—द्रव्यस्यावस्थान्तरगमनं परिणामः। (वृ० प० ६४१)

वा०—परिणामो ह्यर्थान्तिरगमनं न च सर्वथा व्यवस्थानम्। न तु सर्वथा विनाशः परिणामस्तद्विदामिष्टः।

६२,६३. जीवपरिणामे णं भंते ! कइविहे पन्नत्ते ?
गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तं जहा—गइपरिणामे, इंदियपरिणामे एवं कसायलेसा जोगउवओगे नाणदंसणचरित्तवेदपरिणामे इत्यादि। (वृ० प० ६४१)

६४,६५. अजीवपरिणामे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तं जहा—बंधणपरिणामे १. गइपरिणामे २. एवं संठाण ३. भेय ४. वन्न ५. गंध ६. रस ७. फास ८. अगुरुलहुय ९. सद्दपरिणामे १०." इत्यादि। (वृ० प० ६४१)

६६. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ। (श० १४।५३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल २९५

दूहा

१. तुर्य उद्देशक नें विषे, आख्या छै परिणाम।
हिव विचित्र परिणाम जे, पंचमुद्देशे पाम[1]।।

१. चतुर्थोद्देशके परिणाम उक्त इति परिणामाधिकाराद्व्यतिव्रजनादिकं विचित्रं परिणाममधिकृत्य पञ्चमोद्देशकमाह। (वृ० प० ६४१)

अग्निकाय अतिक्रमण पद

*चित धरलै प्राणी ! वाणी जिन तणी जी। (ध्रुपदं)

२. नारक प्रभुजी ! अग्नि रै कांइ, मध्योमध्य थइ जाय ?
जिन कहै केंइक जाय छै जी, केयक जावै नांय।

२. नेरइए णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?
गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा। (श० १४।५४)

३. किण अर्थे प्रभु ! इम कह्यो कांइ, कोई नारक जाय।
केइक तो जावै नहीं जी ! हिव जिन भाखै न्याय।।

३. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ?

४. द्विविध नारक दाखिया कांइ, विग्रहगति आपन्न।
अविग्रहगतिया वली जी, उत्पत्ति क्षेत्रे जन्न।।

४. गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—विग्गहगतिसमावन्नगा य, अविग्गहगतिसमावन्नगा य।

५. तिहां विग्रहगति पाम्या जिके कांइ, अग्निकाय रै जाण।
मध्य थई नें नीकलै जी, वाटे वहितां माण।।

५. तत्थ णं जे से विग्गहगतिसमावन्नए नेरइए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा।

६. ते अग्निकाय मांहै बलै कांइ, अर्थ समर्थ न एह।
विग्रहगतिया जीव नैं जी, शस्त्र नहीं प्रणमेह।।

६. से णं तत्थ झियाएज्जा ?
नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।

सोरठा

७. विग्रहगतिया जीव, कार्मण तनुपणैं करी।
वलि सूक्ष्मपणां थकीव, अग्न्यादि शस्त्र नाक्रमै।।

७. विग्रहगतिसमापन्नो हि कार्म्मणशरीरत्वेन सूक्ष्मः, सूक्ष्मत्वाच्च तत्र 'शस्त्रम्' अग्न्यादिकं न क्रामति। (वृ० प० ६४२)

८. *तिहां अविग्रहगति नारका कांइ, अग्निकाय रै मांय।
मध्य थई नहिं नीकलै जी, तिण अर्थे ए वाय।।

८. तत्थ णं जे से अविग्गहगतिसमावन्नए नेरइए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं नो वीइवएज्जा।
से तेणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा। (श० १४।५५)

सोरठा

९. इहां अविग्रह जाण, उत्पत्ति क्षेत्रे ऊपनो।
कहियै तेह पिछाण, ते अग्नि विषे न करै गमन।।
१०. फुन ऋजुगति समापन्न, तसु अधिकार इहां नथी।
गमन करंतो मन्न, ते पिण जावै अग्नि में।।

९,१०. अविग्रहगतिसमापन्न उत्पत्तिक्षेत्रोपपन्नोऽभिधीयते न तु ऋजुगतिसमापन्नः तस्येह प्रकरणेऽनधिकृतत्वात्। (वृ० प० ६४२)

११. नारक क्षेत्रोत्पन्न, अग्नि मध्य जावै नहीं।
बादर तेऊ जन्न, नारक क्षेत्र विषे नथी।।

११. स चाग्निकायस्य मध्येन न व्यतिव्रजति, नारकक्षेत्रे बादराग्निकायस्याभावात्। (वृ० प० ६४२)

---

१. इस प्रसंग में किसी आदर्श में उद्देशकार्थ-संग्रह गाथा है। वृत्तिकार ने उसे उद्धृत किया है—
नेरइय अगणिमज्झे दस ठाणा तिरिय पोग्गले देवे।
पव्वयभित्ती उल्लंघणा य पल्लंघणा चेव।।

*लय : अब लगजा प्राणी ! चरणे साध रै जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. मनुष्य क्षेत्र रै मांय, बादर तेऊ काय नां।
स्थान कह्या जिनराय, फुन बे ऊर्द्ध कपाट में।।

१२. मनुष्यक्षेत्रे एव तद्भावात्। (वृ० प० ६४२)

१३. दग्ध हुताशन मांय, पूर्वे बार अनंत ही।
मृगापुत्र कहिवाय, उत्तराध्येन गुनीस में।।

१३. उत्तराध्ययनादिषु श्रूयते—हुयासणे जलंतंमि दड्ढपुव्वो अणेगसो। (वृ०प० ६४२)

१४. जे द्रव्य अग्नि सरीस, तेह तणीज अपेक्षया।
आखी अग्नि जगीस, पुद्गल उष्णज एह छै।।
१५. ज्वालनरूपज ताय, शक्तिवंत जे द्रव्य फुन।
अचित्त कह्या जिनराय, तेजूलेश्या द्रव्यवत।।

१४,१५. तदग्निसदृशद्रव्यान्तरापेक्षयाऽवसेयं, संभवन्ति च तथाविधशक्तिमन्ति द्रव्याणि तेजोलेश्याद्रव्यवदिति। (वृ० प० ६४२)

१६. *असुरकुमार विषे प्रभु ! कांइ, अग्नि प्रश्न पूछाय।
जिन कहै कोइक जाय छै जी, कोई मध्य न जाय।।

१६. असुरकुमारे णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?
गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा। (श० १४।५६)

१७. किण अर्थे प्रभु ! अग्नि में कांइ, जाव कोइक नहिं जाय।
जिन कहै असुरा द्विविधा जी, गति विग्रह अविग्रह ताय।।

१७. से केणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा।
गोयमा ! असुरकुमारा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—विग्गहगतिसमावन्नगा य, अविग्गहगतिसमावन्नगा य।

१८. असुरा विग्रहगतियुता कांइ, नारक जेम कहाय।
जाव शस्त्र नहिं आक्रमै जी, हिवै अविग्रह आय।।

१८. तत्थ णं जे से विग्गहगतिसमावन्नए असुरकुमारे से णं—एवं जहेव नेरइए जाव कमइ।

१९. अविग्रहगतिया जिके कांइ, केई अग्नि मध्य जाय।
केई असुर जावै नहिं जी, कहियै तेहनों न्याय।।

१९. तत्थ णं जे से अविग्गहगतिसमावन्नए असुरकुमारे से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा।

सोरठा

२०. जे मनुष्य लोक में आय, अग्नि मध्य कोइ नीकलै।
क्षेत्र मनुष्य नहिं पाय, निश्चै नहिं ते अग्नि मध्य।।

२०. अविग्रहगतिकस्तु कोऽप्यग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत् यो मनुष्यलोकमागच्छति, यस्तु न तत्रागच्छति असौ न व्यतिव्रजेत्। (वृ० प० ६४२)

२१. *जे निकलै ते त्यां दग्ध ह्वै कांइ ? अर्थ समर्थ न थाय।
निश्चै शस्त्र न आक्रमै जी, तिण अर्थे इम वाय।।

२१. जे णं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?
नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ। से तेणट्ठेणं।

सोरठा

२२. सूक्ष्मपणां थकीज, वैक्रिय दग्ध हुवै नहीं।
अथवा वली कहीज, गति नां शीघ्रपणां थकी।।

२२. यतो न खलु तत्र शस्त्रं क्रमते सूक्ष्मत्वाद्वैक्रियशरीरस्य शीघ्रत्वाच्च तद्गतेरिति। (वृ० प० ६४२)

२३. *एवं असुर तणी परै कांइ, यावत थणियकुमार।
एगिंदिया जिम नारका जी, कहिवा सर्व विचार।।

२३. एवं जाव थणियकुमारा। एगिंदिया जहा नेरइया। (श० १४।५७)

सोरठा

२४. वृत्ति विषे इम वाय, विग्रहगतिका अपि जिके।
एगिंदिया जे ताय, अग्नि मध्य कर नीकलै।।
२५. सूक्ष्मपणां थकीज, अग्नि विषे ते नहिं बलै।
आगल हिवै कहीज, अविग्रहगतिका तणो।।

२४,२५. यतो विग्रहे तेऽप्यग्निमध्येन व्यतिव्रजन्ति सूक्ष्मत्वान्न दह्यन्ते च। (वृ० प० ६४२)

*लय : अब लगजा प्राणी ! चरणे साध रै जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. अविग्रहगतिका जोय, ते पिण अग्नी मध्य थई।
गमन करै नहिं कोय, स्थावरपणां थकीज ते ।।

२६. अविग्रहगतिसमापन्नाकाश्च तेऽपि नाग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजन्ति स्थावरत्वात् । (वृ० प० ६४२)

२७. तेऊ वायू जंत, गति त्रस अग्नी मध्य कर।
गमन तास दीसंत, ते नहिं वंछचो छै इहां ।।[1]

वा०—वलि जे वायु नैं गति त्रसपणैं करि अग्नि मध्य कर जायवो दीसै छै, ते इहां न वंछचो, एहवूं जाणियै छै। स्थावर मात्रनैं हीज वंछितपणां थकी। स्थापरपणां नैं विषे किणही प्रकार करिकै तेउ वाउ नों गति अभाव छै, जे गति नां अभाव अपेक्षा करि स्थावर कहियै। अन्यथा स्थावरपणां नां व्यपदेश नों निष्प्रयोजनपणों हुवै ।

वा०—तेजोवायूनां गतित्रसतयाऽग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजनं यद् दृश्यते तदिह न विवक्षितमिति सम्भाव्यते, स्थावरत्वमात्रस्यैव विवक्षितत्वात्, स्थावरत्वे हि अस्ति कथञ्चित्तेषां गत्यभावो यदपेक्षया स्थावरास्ते व्यपदिश्यन्ते, अन्यथाऽधिकृतव्यपदेशस्य निर्निबन्धता स्यात् ।

२८. अथवा पर योगेह, पृथव्यादिक नो अग्नि मध्य।
प्रत्यक्ष गमन दीसेह, ते पिण नहिं वंछचो इहां ।।
२९. स्ववश करनैं जाय, तेहिज वंछचो छै इहां।
वृत्ति विषे ए वाय, आख्यो तिण अनुसार थी ।।

२८,२९. तथा यद्वाय्वादिपारतन्त्र्येण पृथिव्यादीनामग्निमध्येन व्यतिव्रजनं दृश्यते तदिह न विवक्षितं, स्वातन्त्र्यकृतस्यैव तस्य विवक्षणात् ।
(वृ० प० ६४२)

३०. वलि कहै चूर्णीकार, एगिंदियाणं गइ नथी।
गति एकेंद्रिय नैं नांय, तिणसूं ते जावै नथी ।।

३०. चूर्णिकारः पुनरेवमाह—'एगिंदियाण गई नत्थि' त्ति तेन गच्छन्ति । (वृ० प० ६४२)

३१. वाय प्रमुख पर ताय, तसु प्रेरणा थये छते।
अग्नि मध्य केइ जाय, तेहनी विराधना हुवै ।।

३१. 'एगे वाउक्काइया परपेरणेसु गच्छंति विराहिज्जंति य' त्ति । (वृ० प० ६४२)

३२. *बेइंदिया प्रभु ! अग्नि रै कांइ, मध्य थईनैं जाय।
जेम असुर आख्या अछै जी, तिम बेइंद्री कहाय ।।
३३. णवरं जावै अग्नि में कांइ, ते बलै अग्नि रै मांय ?
जिन कहै तेह बलै तिहां जी, शेष तिमज कहिवाय ।।
३४. इम यावत चउरिंद्री लगै कांइ, बेइंद्री जिम ख्यात।
पंचेंद्री तिर्यंच नों जी, अग्नि प्रश्न अवदात ।।

३२. बेइंदिया णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ? जहा असुरकुमारे तहा बेइंदिए वि ।
३३. नवरं—जे णं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ? हंता झियाएज्जा । सेसं तं चेव ।
३४. एवं जाव चउरिंदिए । (श० १४।५८)
पंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! अगणिकायस्स (सं० पा०) पुच्छा ।

३५. जिन कहै कोइक नीकलै कांइ, कोइ अग्नि में न जाय।
किण अर्थे ? तब प्रभु कहै जी, सांभल इणरो न्याय ।।

३५. गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ।
से केणट्ठेणं ? (श० १४।५९)

३६. तिरि पंचेंद्री द्विविधा कांइ, गति विग्रह अविग्रेह।
विग्रहगति जिम नारका जी, जाव शस्त्र नाक्रमेह ।।

३६. गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—विग्गहगतिसमावन्नगा य, अविग्गहगतिसमावन्नगा य । विग्गहगतिसमावन्नए जहेव नेरइए जाव नो खलु तत्थ सत्थं कमइ ।

३७. अविग्रहगति द्विविधा कांइ, ऋधि वैक्रिय लब्धि सहीत।
ऋद्धि प्राप्त नहिं दूसरा जी, वैक्रिय लब्धि रहीत ।।

३७. अविग्गहगतिसमावन्नगा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—इड्ढिप्पत्ता य, अणिड्ढिप्पत्ता य ।
'इड्ढिप्पत्ता य' त्ति वैक्रियलब्धिसम्पन्नाः ।
(वृ० प० ६४२)

३८. तिहां ऋद्धिप्राप्त पंचेंद्रिया कांइ, तिरिख-जोणिया ताहि।
केइ अग्नि मध्य नीकलै जी, केयक नीकलै नांहि ।।

३८. तत्थ णं जे से इड्ढिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ।

सोरठा

३९. तिरि पंचेंद्री केय, मनुष्य लोकवर्ती तिके।
वैक्रिय संपन्नेय, अग्नि मध्य के नीकलै ।।

३९. अस्त्येककः कश्चित् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिको यो मनुष्यलोकवर्ती स तत्राग्निकायसम्भवात्तन्मध्येन व्यतिव्रजेत् । (वृ० प० ६४२)

---

१. इस गाथा के सामने टीका उद्धृत नहीं की है, वह आगे वार्तिका के सामने है ।
*लय : अब लगजा प्राणी ! चरणे साध रै जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०. मनुष्य लोक थी बार, वैक्रिय संपन्न पं.-तिरि।
गति नहिं अग्नि मझार, बादर तेऊ नहिं तिहां॥
४१. मनुष्य क्षेत्र रै मांय, ते पिण केयक पं.-तिरि।
अग्नि मध्य नहिं जाय, सामग्री नां अभाव थी॥

४२. *जे नीकलै ते दग्ध ह्वै कांइ ? तब भाखै जिनराय।
एह अर्थ समर्थ नहीं जी, शस्त्र आक्रमै नांय॥
४३. ऋद्धि न पाम्या जे तिहां कांइ, तिरि पंचेंद्री जंत।
अग्नि मध्य केइ नीकलै जी, केयक नहिं निकलंत॥

४४. जे अग्नि विषे जावै तिके कांइ, तेऊ मांहि बलंत ?
जिन भाखै हंता बलै जी, बहुलपणैं वच मंत॥
४५. तिण अर्थे कर इम कह्यो कांइ, पंचेंद्री तिर्यंच।
केइ अग्नि मांहै बलै जी, केयक न बलै रंच॥
४६. एम मनुष्य पिण जाणवा कांइ, व्यंतर ज्योतिषी सोय।
वैमानिक सुर नें वली जी, जेम असुर तिम जोय॥

। इति प्रथम द्वार।

वलि दश स्थान नों बीजो द्वार

प्रत्यनुभव पद

४७. दश स्थानक प्रति नारकी कांइ, भोगवता विचरंत।
शब्द अनिष्ट अजोग्य छै जी, रूप अनिष्ट अकंत॥
४८. गंध अनिष्ट दुर्गंध छै कांइ, अनिष्ट रस अरु फास।
अप्रशस्त विहायोगति जी, लहि नाम उदय थी तास॥

४९. अनिष्ट ठिती सातमों कांइ, नरक अवस्थान रूप।
अथवा जे नारक तणो जी, आयु अनिष्ट कूप॥

५०. अनिष्ट लावण्य आठमों कांइ, तनु आकार विशेख।
अनिष्ट जश कीर्त्ति कहीजी, तास अर्थ इम पेख॥

सोरठा

५१. सर्व दिशि व्यापी ताय, तथा पराक्रम कर थयो।
तेहनैं यश कहिवाय, ए कीर्त्ति थी अधिक है॥
५२. इक दिशि व्यापी ताम, तथा दान फलभूत जे।
कीर्त्ति तेहनों नाम, अनिष्ट यश कीर्त्ते तसु॥
५३. *अनिष्ट तास उठाण छै कांइ, कम्म बल वीर्य कहीज।
पुरिसकार नें परक्कमे जी, कुत्सितपणों लहीज॥

५४. असुरा दश स्थानक प्रतै कांइ, भोगवता विचरंत।
इष्ट शब्द गमता घणां जी, गमता रूप अत्यंत॥

४०. यस्तु मनुष्यक्षेत्राद्बहिर्नासावग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत्, अग्नेरेव तत्राभावात्। (वृ० प० ६४२)
४१. तदन्यो वा तथाविधसामग्र्यभावात्,। (वृ० प० ६४२)

४२. जे णं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे। नो खलु तत्थ सत्थं कमइ।
४३. तत्थ णं जे से अणिड्ढिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा।
४४. जे णं वीइवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ? हंता झियाएज्जा।
४५. से तेणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा।

४६. एवं मणुस्से वि। वाणमंतर- जोइसिय- वेमाणिए जहा असुरकुमारे। (श० १४।६०)

४७. नेरइया दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—अणिट्ठा सद्दा, अणिट्ठा रूवा
४८. अणिट्ठा गंधा, अणिट्ठा रसा, अणिट्ठा फासा, अणिट्ठा गती 'अणिट्ठा गइ' त्ति अप्रशस्तविहायोगतिनामोदयसम्पाद्या नरकगतिरूपा वा,। (वृ० प० ६४३)
४९. अणिट्ठा ठिती 'अणिट्ठा ठिति' त्ति नरकावस्थानरूपा नरकायुष्करूपा वा। (वृ० प० ६४३)
५०. अणिट्ठे लावण्णे, अणिट्ठे जसे कित्ती, 'अणिट्ठे लावन्ने' त्ति लावण्यं—शरीराकृतिविशेषः। (वृ० प० ६४३)

५१,५२. यशसा—सर्वदिग्गामिप्रख्यातिरूपेण पराक्रमकृतेन वा सह कीर्तिः एकदिग्गामिनी प्रख्यातिर्दानफलभूता वा यशःकीर्त्तिः अनिष्टत्वं च तस्या दुष्प्रख्यातिरूपत्वात्। (वृ० प० ६४३)
५३. अणिट्ठे उट्ठाण-कम्म - बल-वीरिय - पुरिसक्कार-परक्कमे। (श० १४।६१)
अनिष्टत्वं च तेषां कुत्सितत्वादिति। (वृ प० ६४३)
५४. असुरकुमारा दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—इट्ठा सद्दा, इट्ठा रूवा

*लय : अब लगजा प्राणी ! चरणे साध रै जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५५. यावत इष्ट उठाण छै कांइ, कम्म बल वीर्य विचार।
पुरिस्कार नें परक्कमैं जी, यावत थणियकुमार।।
५६. पृथ्वी षट स्थानक प्रतै कांइ, भोगवता विचरंत।
इष्टानिष्ट फर्श नैं गती जी, इम जाव पराक्रम मंत।।

सोरठा

५७. दश मांहे चिहुं देख, शब्द रूप गंध रस तणी।
विषय नहीं संपेख, चिहुं इंद्री नहिं ते भणी।।

५८. साता और असात, ए बिहुं ना संभव थकी।
क्षेत्र शुभाशुभ जात, तसु उत्पत्ति नां भाव थी।।
५९. इष्टानिष्ट कहाय, गति दाखी षट बोल में।
स्थावर पृथ्वीकाय, स्वभाव थी नहिं गमन गति।।
६०. तथापि तेहनैं जोय, वाऊ आदि प्रयोग करि।
गति पृथ्वी नीं होय, गमनरूप गति इम हुवै।।
६१. अथवा यद्यपि जाण, पापज रूपपणां थकी।
गति तिर्यंच पिछाण, अनिष्ट ईज हुवै अछै।।
६२. तथापि सिद्धसिल तेण, अपइट्ठाणा आदि दे।
क्षेत्रोत्पत्ति द्वारेण, इष्टानिष्ट गति इम वृत्तौ।।
६३. जाव परक्कमे जाण, इण वचने करनैं तसु।
इष्टानिष्ट पिछाण, स्थिति ते अगति कहीजियै।।
६४. इष्टानिष्ट लावण्य, पाषाणादिक नैं विषे।
पृथ्वी आकृति जन्य, गमता अणगमता हुवै।।
६५. इष्टानिष्ट कहाय, यशोकीर्ती पिण तसु।
मणी प्रमुख नैं ताय, गुण अवगुणकारी कहै।।
६६. इष्टानिष्ट उठाण, जाव पराक्रम पिण कह्यं।
स्थावरत्वात पिछाण, उट्ठाणादिक नहीं तसु।।
६७. पिण पूर्वे भव पेख, उट्ठाणादिक अनुभव्यो।
इष्ट अनिष्ट विशेख, तसु संस्कार वश थी वृत्तौ।।
६८. *पृथ्वीकाय तणी परै कांइ, जाव वणस्सइकाय।
इष्ट अनिष्टज फर्श छै जी, जाव पराक्रम ताय।।
६९. सप्त स्थान बेइंदिया कांइ, भोगवता विहरेम।
इष्टानिष्ट रसा तसू जी, शेष एकेंद्री जेम।।

सोरठा

७०. गति तेहनैं त्रसत्वात, गमन रूप छै द्विविधा।
तिर्यगरूप आख्यात, तास विशेषण करि उभय।।
७१. भव गति तिर्यगरूप, उत्पत्ति स्थान विशेषणं।
तिण करिकै तद्रूप, इष्टानिष्ट इति वृत्तौ।।

५५. जाव इट्ठे उट्ठाण-कम्म-बल-वीरिय-पुरिसक्कार-परक्कमे। एवं जाव थणियकुमारा। (श० १४।६२)
५६. पुढविक्काइया छट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति तं जहा—इट्ठाणिट्ठा फासा, इट्ठाणिट्ठा गती, एवं जाव पुरिसक्कार-परक्कमे।

५७. पृथिवीकायिकानामेकेन्द्रियत्वेन पूर्वोक्तदशस्थानकमध्ये शब्दरूपगन्धरसा न विषय इति स्पर्शादीन्येव षट् ते प्रत्यनुभवन्ति। (वृ० प० ६४३)
५८. सातासातोदयसम्भवात् शुभाशुभक्षेत्रोत्पत्तिभावाच्च। (वृ० प० ६४३)
५९. 'इट्ठाणिट्ठा गइ' त्ति यद्यपि तेषां स्थावरत्वेन गमनरूपा गतिर्नास्ति स्वभावतः। (वृ० प० ६४३)
६०. तथाऽपि परप्रत्यया सा भवतीति। (वृ० प० ६४३)

६१. अथवा यद्यपि पापरूपत्वात्तिर्यग्गतिरनिष्टैव स्यात्। (वृ० प० ६४३)
६२. तथाऽपीषत्प्राग्भाराऽप्रतिष्ठानादिक्षेत्रोत्पत्तिद्वारेणेष्टानिष्टगतिस्तेषां भावनीयेति। (वृ० प० ६४३)
६३. एवं जाव परक्कमे' त्ति वचनादिदं दृश्यम्—'इट्ठाणिट्ठा ठिई' सा च गतिवद्भावनीया। (वृ० प० ६४३)
६४. 'इट्ठाणिट्ठे लावन्ने' इदं च मण्यन्धपाषाणादिषु भावनीयम्। (वृ० प० ६४३)
६५. 'इट्ठाणिट्ठे जसोकित्ती' इयं सत्प्रख्यात्यसत्प्रख्यातिरूपा मण्यादिष्वेवावसेयेति। (वृ० प० ६४३)
६६. 'इट्ठाणिट्ठे उट्ठाणजावपरक्कमे' उत्थानादि च यद्यपि तेषां स्थावरत्वान्नास्ति। (वृ० प० ६४३)
६७. तथाऽपि प्राग्भवानुभूतोत्थानादिसंस्कारवशात्तदिष्टमनिष्टं वाऽवसेयमिति। (वृ० प० ६४३)
६८. एवं जाव वणस्सइकाइया। (श० १४।६३)

६९. बेइंदिया सत्तट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—इट्ठाणिट्ठा रसा, सेसं जहा बेइंदियाणं। (श० १४।६३)

७०. गतिस्तु तेषां त्रसत्वाद्गमनरूपा द्विधाऽप्यस्ति। (वृ० प० ६४३)
७१. भवगतिस्तूप्पत्तिस्थानविशेषेणेष्टानिष्टाऽवसेयेति। (वृ० प० ६४३)

*लय : अब लगजा प्राणी ! चरणे साध रै जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२. *अष्ट स्थान तेइंदिया कांइ, भोगवता विहरेम।
इष्टानिष्ट गंधा कह्या जी, शेष बेइंद्री जेम।।

७२. तेइंदिया अट्ठट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—इट्ठाणिट्ठा गंधा, सेसं जहा बेइंदियाणं। (श० १४।६५)

७३. नव स्थानक चउरिंदिया कांइ, भोगवता विहरेम।
इष्टानिष्टज रूप छै जी, शेष तेइंदिया जेम।।

७३. चउरिंदिया नवट्ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—इट्ठाणिट्ठा रूवा, सेसं जहा तेइंदियाणं। (श० १४।६६)

७४. तिरि पं. दश स्थानक प्रतै कांइ, भोगवता विचरंत।
इष्टानिष्टज शब्द छै जी, जाव पराक्रम हुंत।।

७४. पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा—इट्ठाणिट्ठा सद्दा जाव पुरिसक्कार-परक्कमे।

७५. एम मनुष्य पिण जाणवा कांइ, व्यंतर देव विचार।
ज्योतिषि वैमानिक सुरा जी जिम छै असुरकुमार।।

७५. एवं मणुस्सा वि, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा। (श० १४।६७)

देव उल्लंघन पद

७६. मर्हद्धिक सुर भगवंत जी ! कांइ, जाव महेश्वर जेह।
भवधारण तनु थी जुदा जी, पुद्गल अणलीधेह।।

७६. देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू
'बाहिरए' त्ति भवधारणीयशरीरव्यतिरिक्तान् 'अपरियाइत्त' त्ति अपर्यादाय—अगृहीत्वा। (वृ० प० ६४३)

७७. ते तिरिछा परवत प्रतै कांइ, चालंता नैं तत्थ।
मार्ग नों रोधक तिको जी, ए तिरछो परवत्त।।

७७. तिरियपव्वयं वा,
'तिरियपव्वयं' ति तिरश्चीनं पर्वतं गच्छतो मार्गविरोधकं। (वृ० प० ६४३)

७८. अथवा तिरछी भींत नैं कांइ, ते प्राकार वरंड।
प्रमुख तणो जे भींत नै जी, अथवा पर्वत-खंड।।

७८. तिरियभित्ति वा
'तिरियं भित्ति व' त्ति तिर्यग्भित्ति—तिरश्चीनां प्राकारवरण्डिकादिभित्ति पर्वतखण्डं वेति। (वृ० प० ६४३,४४)

७९. एक बार उल्लंघिवा कांइ, वार-वार वलि ताहि।
उलंघिवा समर्थ अछै जी ? जिन कहै समर्थ नांहि।।

७९. उल्लंघेत्तए वा पल्लंघेत्तए वा ? नो इणट्ठे समट्ठे। (श० १४।६८)
'उल्लंघेत्तए' त्ति सकृदुल्लङ्घने 'पल्लंघेत्तए व' त्ति पुनः पुनर्लङ्घनेनेति। (वृ० प० ६४४)

८०. मर्हद्धिक सुर भगवंत जी ! कांइ, जाव महेश्वर जेह।
भवधारण तनु थी जुदा जी, पुद्गल ग्रही नैं तेह।।
८१. ते तिरछा पर्वत थकी कांइ, यावत वारूंवार।
उल्लंघवा समर्थ अछै जी ? जिन कहै हंता धार।।

८०,८१. देवेणं भंते ! महिड्ढीए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू तिरियपव्वयं वा तिरियभित्तिं वा उल्लंघेत्तए वा पल्लंघेत्तए वा ? हंता पभू। (श० १४।६९)

८२. सेवं भंते ! स्वाम जी कांइ, शतक चवदमें सार।
पंचमुदेशक नों भलो जी, आख्यो अर्थ उदार।।

८२. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १४।७०)

८३. ढाल दोयसौ ऊपरै कांइ, पंचाणुंमी पेख।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी जी,
'जय-जश' हरष विशेख।।

त्रयोदशशते पंचमोद्देशकार्थः ।।१४।५।।

*लय : अब लगजा प्राणी। चरणे साध ँ जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २९६

दूहा

१. पंचमुदेशक नारका प्रमुख जीव अधिकार।
छट्ठे पिण तेहिज हिवै, सांभलजो धर प्यार।।

नैरयिक आदि का आहारादि पद

२. नगर राजगृह नैं विषे, यावत गोतम स्वाम।
इम बोलै श्री वीर प्रति, कर जोड़ी शिर नाम।।

३. हे प्रभु! नेरइया तिके, आहार करै स्यूं जान?
आहार कियां किम परणमै, स्यूं तसु उत्पत्ति स्थान?

४. स्यूं स्थितिका ते स्वाम जी! स्थिती तिका कहिवाय?
अवस्थान हेतू अछै? ए चिहुं प्रश्न सुहाय।।

५. *जिन भाखै हो सुण गोतम! बात,
गोतम! बात, नारक दुःख मांहे रमै।
पुद्गल नों हो करै आ'र विख्यात,
आ'र विख्यात, पुद्गल पिण तसु परिणमै।।

६. जेह पुद्गल हो शीतादिक फास, उत्पत्ति स्थानक तेह तणुं।
शीत-योनिक हो उष्ण विमास, पुद्गलयोनिक इम भणुं।।

७. पुद्गल-ठितिया हो आयु कर्म नां जाण,
पुद्गल नीं स्थिति जेहनैं।
नारक स्थिति हो हेतुपणां थी आण,
आयु कर्म स्थिति तेहनैं।।

सोरठा

८. किण कारण थी जेह, ते पुद्गल ठितिया हुवै।
च्यार पदे करि तेह, उत्तर कहियै छै तसु।।

९. *ज्ञानावरणी हो प्रमुख कर्म हुंत, पुद्गलरूप तिणे लह्या।
बंधण द्वारे हो करिनैं पामंत, कम्मोवगा तिणसुं कह्या।।

१०. कर्म निदानं हो नारकपणैं निमित्त, तथा कर्मबंध निमित्त जेहनैं।
कर्म पुद्गल हो जेहनी तसु स्थित्त, कह्या कम्म-ठितिया तेहनैं।।

११. वलि कर्मज हो हेतूभूतेन, विपरियास अन्य पर्याय नैं।
अपर्याप्ता हो पर्याप्तादि येन, इम पुद्गल-स्थितिक पाय नैं।।

---

१. पञ्चमोद्देशके नारकादिजीववक्तव्यतोक्ता षष्ठेऽपि सैवोच्यते। (वृ० प० ६४४)

२. रायगिहे जाव एवं वयासि—

३. नेरइया णं भंते! किमाहारा, किंपरिणामा, किंजोणिया,
'किंजोणीय' त्ति का योनिः—उत्पत्तिस्थानं येषां ते कियोनिकाः, (वृ० प० ६४४)

४. किंठितीया पण्णत्ता?
स्थितिश्च अवस्थानहेतुः। (वृ० प० ६४४)

५. गोयमा! नेरइया णं पोग्गलाहारा, पोग्गल-परिणामा,

६. पोग्गलजोणिया,
'पुग्गलजोणीय' ति पुद्गलाः—शीतादिस्पर्शा योनी येषां ते तथा, नारका हि शीतयोनय उष्णयोनयश्चेति। (वृ० प० ६४४)

७. पोग्गलट्ठितीया,
'पोग्गलट्ठिइय' त्ति पुद्गला—आयुष्ककर्मपुद्गलाः स्थितिर्येषां नरके स्थितिहेतुत्वात्ते तथा (वृ० प० ६४४)

८. अथ कस्मात्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीत्यत आह— (वृ० प० ६४४)

९. कम्मोवगा;
'कम्मोवगे' त्यादि कर्म्म—ज्ञानावरणादि पुद्गलरूपमुपगच्छन्ति—बन्धनद्वारेणोपयान्तीति कर्म्मोपगाः। (वृ० प० ६४४)

१०. कम्मनियाणा कम्मट्ठितीया।
कर्म्मनिदानं—नारकत्वनिमित्तं कर्म्म बन्धनिमित्तं वा येषां ते कर्म्मनिदानाः, तथा कर्म्मणः—कर्म्मपुद्गलेभ्यः सकाशात्स्थितिर्येषां ते कर्म्मस्थितयः। (वृ० प० ६४४)

११. कम्मुणामेव विप्परियासमेंति।
कर्मणैव हेतुभूतेन मकार आगमिकः विपर्यासं—पर्यायान्तरं पर्याप्तापर्याप्तादिकमायान्ति—प्राप्नुवन्ति अतस्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीति। (वृ० प० ६४४)

---

*लय : ऋषि धन्नो रे चिन्तवै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. ओतो भाख्यो हो नारक अधिकार, एवं जाव वेमाणिया।
वलि कहियै हो आहार नोंज विचार,
ते निसुणो भवि-प्राणिया !

१३. गोयम पूछै हो प्रभु ! नारक जीव,
आहार करै वीचि-द्रव्य नों।
कै अवीची हो द्रव्य नोंज कहीव ? श्री जिन भाखै उभय नों।।

सोरठा

१४. वांछित द्रव्य विशेख, ते द्रव्य तणो अवयव वली।
परस्परे कर पेख, पृथक जुदो वीचा कह्यो।।

१५. तेह विषे अवधार, वीचि प्रधान द्रव्य जे।
एक आदि सुविचार, प्रदेश करिकै ऊण जे।।

१६. एह निषेध थकीज, द्रव्य अवीची जाणवा।
इहां ए भाव कहीज, चित्त लगाई सांभलो।।

१७. जितरा द्रव्य समुदाय, तिण कर आहारज पूरियै।
ते एकादी ताय, प्रदेशोन वीची कह्यो।।

१८. परिपूर्ण फुन धार, द्रव्य अवीची जाणवा।
इम कहै टीकाकार, चूर्णिकार नों मत हिवै।।

१९. आहार द्रव्य अधिकार, सर्वोत्कृष्टज आहार द्रव्य।
तास वर्गणा धार, कहियै तिका अवीचि द्रव्य।।

२०. जे एकादि प्रदेश हीन तिका छै वीचि द्रव्य।
आख्यो एह विशेष, चूर्णिकार तणोज मत।।

२१. *किण अर्थे हो प्रभु ! इम कहिवाय, नरक वीची द्रव्य आहरै।
वलि अवीची हो द्रव्य आहरै ताय, हिव जिन उत्तर वागरै।।

२२. जेह नारक हो ऊणो एक प्रदेश, द्रव्य प्रतै ते आहरै।
तेह नारक हो वीची द्रव्य विशेष, तेह प्रतैज आहार करै।।

२३. जे नारक हो प्रतिपूरण जान, द्रव्य प्रतै जो आहरै।
तेह नारक हो अवीची पहिछान, द्रव्य तणोज आहार करै।।

२४. तिण अर्थे हो गोतम ! इम ख्यात, नारक आहार उभय करै।
इम यावत हो वैमानिक जात, वीची अवीची आहरै।।

२५. †दंडकांत वैमानिक तणो, उभय आहार भोग पूर्वे कह्यो।
हिव काम भोगज तास कहियै, अर्थ जिन वच थी लह्यो।।

देवेन्द्र-भोग पद

२६. *प्रभु ! शक्रज हो सुर इंद्र जिवार, देव संबंधी अनुभवै।
भोगविवा हो योग्य भोग्य उदार, भोगविवा नीं वंछा हुवै।।

२७. किण रीते हो ते प्रवर्त्तै स्वाम ? जिन कहै शक्र वंछा तदा।
विकुर्वै हो इक मोटो ताम, नेमिप्रतिरूपक यदा।।

*लय : ऋषि धन्नो रे चिन्तवै

†लय : पूज मोटा भांजे तोटा

१२ एवं जाव वेमाणिया। (श० १४।७१)
आहारमेवाश्रित्याह— (वृ० प० ६४४)

१३. नेरइया णं भंते ! किं वीचीदव्वाइं आहारेंति ? अवीचीदव्वाइं आहारेंति ?
गोयमा ! नेरइया वीचीदव्वाइं पि आहारेंति, अवीचीदव्वाइं पि आहारेंति। (श० १४।७२)

१४. 'वीइदव्वाइं' ति वीचिः—विवक्षितद्रव्याणां तदवयवानां च परस्परेण पृथग्भावः।
(वृ० प० ६४४)

१५. तत्र वीचिप्रधानानि द्रव्याणि वीचिद्रव्याणि एकादिप्रदेशन्यूनानीत्यर्थः। (वृ० प० ६४४)

१६. एतन्निषेधादवीचिद्रव्याणि, अयमत्रभावः—
(वृ० प० ६४४)

१७. यावता द्रव्यसमुदायेनाहारः पूर्यते स एकादिप्रदेशोनो वीचिद्रव्याण्युच्यंते। (वृ० प० ६४४)

१८,१९. परिपूर्णस्त्ववीचिद्रव्याणीति टीकाकारः, चूर्णिकारस्त्वाहारद्रव्यवर्गणामधिकृत्येदं व्याख्यातवान् तत्र च याः सर्वोत्कृष्टाहारद्रव्यवर्गणास्ता अवीचिद्रव्याणि। (वृ० प० ६४४)

२०. यास्तु ताभ्य एकादिना प्रदेशेन हीनास्ता वीचिद्रव्याणीति। (वृ० प० ६४४)

२१. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ— नेरइया वीचीदव्वाइं पि आहारेंति अवीचीदव्वाइं पि आहारेंति ?

२२. गोयमा ! जे णं नेरइया एगपएसूणाइं पि दव्वाइं आहारेंति, ते णं नेरइया वीचीदव्वाइं आहारेंति।

२३. जे णं नेरइया पडिपुण्णाइं दव्वाइं आहारेंति, ते णं नेरइया अवीचीदव्वाइं आहारेंति।

२४. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—नेरइया वीचीदव्वाइं पि आहारेंति, अवीचीदव्वाइं पि आहारेंति।
एवं जाव वेमाणिया। (श० १४।७३)

२५. अनन्तरं दण्डकस्यान्ते वैमानिकानामाहारभोग उक्तः अथ वैमानिकविशेषस्य कामभोगोपदर्शनायाह—
(वृ० प० ६४५)

२६. जाहे णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजिउकामे भवइ।
भोगार्हा भोगा भोगभोगाः। (वृ० प० ६४५)

२७. से कहमियाणि पकरेंति ?
गोयमा ! ताहे चेव णं से सक्के देविंदे देवराया एगं महं नेमिपडिरूवगं विउव्वइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

२८. नेमि कहियै सोय, चक्र तणी धारा भणी।
तेह जोग थी जोय, कहियै नेमि चक्र पिण ।।
२९. ते प्रतिरूपक पेख, वृत्तपणें ते सारिखो।
स्थान इति पद शेख, एहवो स्थानक विकुर्वै ।।

२८,२९. नेमिः—चक्रधारा तद्योगाच्चक्रमपि नेमिः—तत्प्रतिरूपकं वृत्ततया तत्सदृशं स्थानमिति शेषः।
(वृ० प० ६४५)

३०. *लक्ष योजन हो लांबो चोड़ो पिछाण,
परिधि त्रिलक्ष योजन लही।
इम यावत हो अर्धांगुल जाण, किंचि विशेषज अधिक ही ।।

३०. एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं, तिण्णि जोयणसयसहस्साइं जाव अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं।

सोरठा

३१. जाव शब्द थी जाण, सोल सहस्र नैं दोय सौ।
सत्तावीस पिछाण, इतरा योजन आखिया ।।
३२. कोस तीन अवलोय, इक सय अठावीस धनु।
आंगुल तेरै होय, जाव शब्द मांहे कह्या ।।

३१. यावत्करणादिदं दृश्यं—'सोलस य जोयणसहस्साइं दो य सयाइं सत्तावीसाहियाइं। (वृ० प० ६४५)
३२. कोसतियं अट्ठावीसाहियं धणुसय तेरस य अंगुलाइं ति। (वृ० प० ६४५)

३३. *ते नेमि नैं हो प्रतिरूप सरीख, वाटुला स्थानक ऊपरै।
घणुं सरीखो हो भूमिभाग रमणीक, जाव फर्श मणि नां सिरै ।।

३३. तस्स णं नेमिपडिरूवगस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पण्णत्ते जाव मणीणं फासो।

३४. †सम भोम वर्णन तेहनों ते, यथादृष्टांते सही।
आलिंग-पुक्खर मुरज-मुखपट, प्रवर तदवत सम लही ।।

३४. भूमिभागवर्णकस्तावद्वाच्यो यावन्मणीनां स्पर्शवर्णक इत्यर्थः, स चायं—'से जहा नामए—आलिंगपोक्खरेइ वा मुइंगपोक्खरेइ वा' इत्यादि। (वृ० प० ६४५)

३५. फुन तथा छाया सहित ते, वलि प्रभा सहित पिछाणियै।
वर मरीचि ते उद्योत सहितज, भूमिभाग वखाणियै ।।

३५. 'सच्छाएहिं सप्पभेहिं समरीईहिं सउज्जोएहिं।
(वृ० प० ६४५)

३६. नानाविधे जे पंच वर्णे, मणी कर उपशोभितं।
शुद्ध वर्ण गंध रस फर्श, ते मणि नौंज वर्णन भाषितं ।।

३६. नाणाविहपंचवन्नेहिं मणीहिं उवसोहिए तंजहा—किण्हेहिं ५' इत्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शवर्णको मणीनां वाच्य इति। (वृ० प० ६४५)

३७. *तेह नेमि हो प्रतिरूपज ताम, बहु मध्य देश भागे सही।
एक मोटो हो प्रासाद अमाम, विकुर्वै मुकुट समान ही ।।
३८. तेह ऊंचो हो पंच सय योजन, योजन अढीसै विषम ही।
अब्भुगय हो ऊंचो तास वर्णन, जाव प्रतिरूप लग कही ।।

३७. तस्स णं नेमिपडिरूवगस्स बहुमज्झदेसभागे, एत्थ णं महं एगं पासायवडेंसगं विउव्वइ।
३८. पंच जोयणसयाइं उड्ढं, उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं, अब्भुग्गय-मूसिय-पहसियमिव वण्णओ जाव पडिरूवं।

सोरठा

३९. वर प्रासाद पिछाण, वर्णक तास बखाणियै।
ते पूरववत जाण, हिव कहियै ऊपर तलो ।।

३९. अभ्युद्गतोच्छ्रितादिः प्रासादवर्णको वाच्य इत्यर्थः, स च पूर्ववत्। (वृ० प० ६४५)

४०. *प्रासादज हो अवतंस नों रूप, उल्लोए ऊपरलो तलो।
वर पद्मज हो फुन लता तद्रूप, भांति करी विचित्रज भलो ।।

४०. तस्स णं पासायवडेंसगस्स उल्लोए पउमलया भत्ति-चित्ते।
'उल्लीए' त्ति उल्लोकः उल्लोचो वा—उपरितलं····
····भक्तिभि:—विच्छित्तिभिश्चित्रो यः स यथा।
(वृ० प० ६४६)

४१. फुन जावत हो प्रतिरूप पिछाण, जाव शब्द में जाणवो।
प्रासादनीक हो देखवा जोग्य जाण, अभिरूप पाठ आणवो ।।

४१. जाव पडिरूवे।
यावत्करणादिदं दृश्यं—'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे' त्ति। (वृ० प० ६४६)

*लय : ऋषि धन्नो रे चिंतवै
†लय : पूज मोटा भांजे तोटा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२. अवतंसक हो प्रासाद रै मांय, बहु सम रम्य भूमी विषे।
जाव मणि नां हो फर्श महा सुखदाय, मणिपीठिका तिहां अखै ।।
४३. अष्ट योजन नीं हो मणिपीठिका तेह, लांबी चोड़ी जाणियै ।
वैमानिक नीं हो संबंधिनी जेह, व्यंतरादि सम नाणियै ।।

४२. तस्स णं पासायवडेंसगस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमि-
भागे जाव माणीणं फासो।
४३. मणिपेढिया अट्ठजोयणिया जहा वेमाणियाणं।
यथा वैमानिकानां सम्बंधिनी न तु व्यन्तरादिसत्केव।
(वृ० प० ६४६)

सोरठा

४४. वृत्ति विषे इम वाय, अन्य प्रकार करी तसु।
स्वरूपपणां थी ताय, इम वैमानिक सारखी ।।
४५. ते वहु सम रमणीक, भूमि-भाग नैं मध्य बहु।
इक महा इहां सधीक, मणिपीठिका विकुर्वै ।।

४४. तस्या अन्यथास्वरूपत्वात्। (वृ० प० ६४६)

४५. 'तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्स भूमिभागस्स बहुमज्झ-
देसभाए एत्थ णं महं एगं मणिपेढियं विउव्वइ,
(वृ० प० ६४६)

४६. योजन अष्ट प्रमाण, लांबी नैं चोड़ी कही।
चिहुं योजन नीं जाण, बाहिर ते जाडी अछै ।।

४६. सा णं मणिपेढिया अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं
पन्नत्ता चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं।
(वृ० प० ६४६)

४७. सर्व रत्न रै मांय, आछी अति सुंदरपणैं।
जावत इहां कहाय, प्रतिरूप पहिछाणियै ।।

४७. सव्वरयणामई अच्छा जाव पडिरूव' त्ति।
(वृ० प० ६४६)

४८. *मणिपीठिका हो ऊपर महा एक, विकुर्वै देव-शय्या सही।
शय्या नों हो वर्णक सुविशेख, यावत प्रतिरूपे कही ।।

४८. तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं महं 'एगे देवसयणिज्जे'
विउव्वइ, सयणिज्जवण्णओ जाव पडिरूवे।

सोरठा

४९. शय्या वर्णक एव, सुर नीं शय्या नों इसो।
वर्णावास कहेव, वर्णक व्यास विस्तार इम ।।

४९. 'सयणिज्जवन्नओ' त्ति शयनीयवर्णको वाच्यः, स
चैवं—'तस्स णं देवसयणिज्जस्स इमेयारूवे वन्नावासे
पण्णत्ते' वर्णकव्यासः—वर्णकविस्तरः।
(वृ० प० ६४६)

५०. वर्ण श्लाघा जाण, यथावस्थित स्वरूप नों।
कीर्त्तन तास वखाण, वर्ण कहीजै तेहनैं ।।
५१. तसु आवास निवास, ग्रंथज पद्धति रूप जे।
वर्णावास विमास, वर्णक निवेश इम अरथ ।।
५२. नाना मणि रै मांहि, प्रतिपाया तेहनां अछै।
सुवर्ण पाया ताहि, ते शय्या नां शोभता ।।
५३. नाना मणी मझार, पागा ऊपरला मोगरा।
इत्यादिक अवधार, वर्णन शय्या नों घणो ।।

५२,५३. तं जहा—'नाणामणिमया पडिपाया सोवन्निया
पाया णाणामणिमयाइं पायसीसगाइं' इत्यादिरिति।
(वृ० प० ६४६)

५४. *तिण अवसर हो शक्र देवेंद्र राय, आठूंई अग्रमहीषियां।
ते संघाते हो प्रासाद रै मांय, स्व परिवार करी तिहां ।।
५५. बे अनीकज हो ते सेन्य सधीक, नाचणनोंज अनीक ही।
वलि गंधर्व हो गावण नों अनीक, ते संघात सुरेंद्र ही ।।

५४. तत्थ णं से सक्के देविंदे देवराया अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं
सपरिवाराहिं।
५५. दोहि य अणिएहिं—नट्टाणिएण य गंधव्वाणिएण य
सद्धिं।

सोरठा

५६. नाटक कारक जाण, अनीक ते जन समूह छै।
गंधर्व अनीक माण, इणहिज रीते जाणवो ।।

५६. 'नट्टाणीएण य' त्ति नाट्यं—नृत्यं तत्कारकमनीकं—
जनसमूहो नाट्यानीकं, एवं गन्धर्वानीकं नवरं
गन्धर्व्वं—गीतं। (वृ० प० ६४६)

*लय : ऋषि धन्नो रे चिन्तवै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७. *मोटो आहत हो नृत्य जावत सार, देव संबंधी पवर ही।
भोगविवा हो योग्य भोग उदार, भोगवतो विचरै सही।।

५७. महयाहयनट्ट जाव (सं० पा०) दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ। (श० १४।७४)

सोरठा

५८. जाव शब्द थी न्हाल, गीत अनै वाजित्र वलि।
तंती नैं तल ताल, प्रमुख वाजंत्र रव करी।।

५८. गीय-वाइय-तंती-तल-ताल-तुडिय-घणमुइंगपडुप्प-वाइयरवेणं।

५९. *ईशाणज हो देव-इंद्र जिवार, देव संबंधिया सरस ही।
जिम आख्यो हो शक्र नों अधिकार, तिमज ईशाण नों सर्व ही।।

५९. जाहे ईसाणे देविंदे देवराया दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजिउकामे भवइ से कहमियाणि पकरेति?
जहा सक्के तहा ईसाणे वि निरवसेसं।

६०. वलि कहिवो हो इम सनतकुमार, णवरं प्रासादवडंस ही।
छसौ योजन हो ऊंचपणैं अवधार, तीनसौ योजन विखंभ ही।।

६०. एवं सणंकुमारे वि, नवरं—पासायवडेंसओ छ जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, तिण्णि जोयणसयाइं विक्खंभेणं,

६१. मणीपीठिका हो तिर्महिज सुरंग, योजन अष्ट तणी हुवै।
तिण ऊपर हो इहां मोटो सुचंग, एक सिंहासण विकुर्वै।।

६१. मणिपेढिया तहेव अट्ठजोयणिया। तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं, एत्थ णं महेगं सीहासणं विउव्वइ,

सोरठा

६२. सनतकुमार सुरिंद, सिंघासण प्रति विकुर्वै।
पिण शय्या न करिंद, शक्र ईशाण तणी परै।।

६२. सनत्कुमारदेवेन्द्रः सिंहासनं विकुरुते न तु शक्रेशानाविव देवशयनीयं। (वृ० प० ६४६)

६३. स्पर्श मात्रज एह, तसु परिचारपणां थकी।
शय्या तणोज जेह, तास प्रयोजन छै नथी।।

६३. स्पर्शमात्रेण तस्य परिचारकत्वान्न शयनीयेन प्रयोजनमिति भावः। (वृ० प० ६४६)

६४. *वलि भणवो हो पोता नों परिवार,
तिहां सनतकुमार सुरिंद नैं।
सामानिक हो सुर बोहित्तर हजार,
ते सुर साथै प्रसन्नमनैं।।

६४. सपरिवारं भाणियव्वं। तत्थ णं सणंकुमारे देविंदे देवराया बावत्तरीए सामाणियसाहस्सीहिं।

६५. जाव चौगुणा हो आतमरक्षक ख्यात,
बहु तृतीय कल्पवासी सही।
वैमाणिक हो देव देवी संघात,
परिवर्यो यावत विचर ही।।

६५. जाव चउहि य बावत्तरीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं य बहूहिं सणंकुमारकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं य देवीहिं य सद्धिं संपरिवुडे महयाहयनट्ट जाव विहरइ।

६६. ओ तो आख्यो हो जिम सनतकुमार,
तिम जाव पाणत इंद ही।
वलि अच्युत हो इंद्र लग अधिकार,
णवरं एतलो विशेष ही।।

६६. एवं जहा सणंकुमारे तहा जाव पाणओ अच्चुओ, नवरं—

६७. जको भाख्यो हो जेहनों परिवार,
ते तेहनोंज कहीजियै।
पूर्वे आख्यो हो तीजा नों अधिकार,
हिव अन्य एम लहीजियै।।

६७. जो जस्स परिवारो सो तस्स भाणियव्वो।

सोरठा

६८. सामानिक सुविचार, सित्तर सहस्र माहेंद्र नैं।
आतमरक्षक सार, चतुर्गुणा चिहुं दिशि विषे।।

६८. एवं माहेन्द्रस्य तु सप्ततिः सामानिकसहस्राणि चतस्रश्चाङ्गरक्षसहस्राणां सप्ततयः। (वृ० प० ६४६)

६९. साठ सहस्र ब्रह्म सार, सहस्र पचासज लंतके।
शुक्र चालीस हजार, तीस सहस्र सहसार नैं।।

६९. ब्रह्मणः षष्टिः सामानिकसहस्राणां लान्तकस्य पञ्चाशत् शुक्रस्य चत्वारिंशत् सहस्रारस्य त्रिंशत्। (वृ० प० ६४६)

*लय : ऋषि धन्नो रे वन्तवै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७०. आणत पाणत जोय, नवमा दशमा कल्प नों।
एक इंद्र अवलोय, बीस सहस्र सामानिका ।।
७१. आरण अच्युत सार, ग्यारम बारम कल्प नों।
एक इंद्र अवधार, सामानिक दश सहस्र छै।।
७२. सामानिक ए ख्यात, आतमरक्षक चउगुणां।
सर्व विषे अवदात, अन्य स्थान थी आखियो ।।

७३. *ऊंचपणों जे हो प्रासाद नैं सोय,
निज-निज कल्प विषे जिको।
विमाण नों हो ऊंचपणो अवलोय,
तेह सरीखो ह्वै तिको।।
७४. ऊंचपणां थी हो अर्द्ध-अर्द्ध विस्तार,
ए चोड़ापणुं कहीजियै।
जाव अच्चु नों हो नवसौ योजन सार,
ऊंचपणेंज लहीजियै ।।
७५. वलि योजन हो साढा चिउंसौ विखंभ,
अच्युत देवेंद्र छै तिहां।
सामानिक हो दश सहस्र अदंभ,
यावत विचरै छै जिहां ।।

सोरठा

७६. सनत माहेंद्र जान, छसौ योजन बिहुं तणां।
ऊंचापणै विमान, प्रासाद पिण ऊंचा इता ।।
७७. ब्रह्म लंतके धार, ऊंचा योजन सप्त सय।
शुक्र अनैं सहसार, आख्या योजन अष्ट सय।।
७८. पाणत इंद नैं पेख, अच्युत इंद्र तणैं वलि।
नव सय योजन लेख, विमाण नैं प्रासाद बिहुं ।।
७९. ऊंचपणों आख्यात, चोड़ा विस्तारे करी।
अर्द्धपणैं अवदात, तेह विखंभ कहीजियै ।।
८०. इहां जे सनतकुमार, प्रमुख कल्प नां अधिप इंद।
सामानिकाज सार, निज परिवार सहीत जे।।
८१ नेमि प्रतिरूपेह, जायै तेह समक्ष पिण।
स्पर्श आदि करेह, ते अविरुद्धपणां थकी ।।
८२. शक्र अनैं ईशाण, सामानिकादिक सहित जे।
नहिं जायै ते स्थान, नेमि प्रतिरूपक विषे ।।
८३. ते समक्ष बिहुं इंद, न करै काय परिचारणा।
विरुद्धपणां थी मंद, लज्जा योग्य तेणे करी।।
८४. नृत्य गंधर्व अनीक, तेह संघात सुरिंद बे।
तनु परिचार सधीक, नेमि प्रतिरूपक विषे ।।

*लय : ऋषि धन्नो रे चिन्तवै

७०. प्राणतस्य विंशतिः (वृ० प० ६४६)

७१. अच्युतस्य तु दश सामानिकसहस्राणि।
(वृ० प० ६४६)

७२. सर्वत्रापि च सामानिकचतुर्गुणा आत्मरक्षा इति।
(वृ० प० ६४६)

७३. पासायउच्चत्तं—जं सएसु-सएसु कप्पेसु विमाणाणं उच्चत्तं।

७४. अद्धद्धं वित्थारो जाव अच्चुयस्स नवजोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं।

७५. अद्धपंचमाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं। तत्थ णं अच्चुए देविंदे देवराया दसहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव विहरइ।

७६. सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः षड् योजनशतानि प्रासादस्योच्चत्वं। (वृ० प० ६४६)

७७. ब्रह्मलान्तकयोः सप्त शुक्रसहस्रारयोरष्टौ।
(वृ० प० ६४६)

७८. प्राणतेन्द्रस्याच्युतेन्द्रस्य च नवेति। (वृ० प० ६४६)

८०,८१. इह च सनत्कुमारादयः सामानिकादिपरिवारसहितास्तत्र नेमिप्रतिरूपके गच्छन्ति, तत्समक्षमपि स्पर्शादिप्रतिचारणाया अविरुद्धत्वात्।
(वृ० प० ६४६)

८२. शक्रेशानौ तु न तथा। (वृ० प० ६४६)

८३. सामनिकादिपरिवारसमक्षं कायप्रतिचारणाया लज्जनीयत्वेन विरुद्धत्वादिति। (वृ० प० ६४६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८५. *सेसं तं चेव हो सेवं भंते ! स्वाम,
चवदमा शतक तणो कह्यो।
उद्देशो हो ओ तो छठो अमाम,
अर्थ अनूपम म्है लह्यो ।।

८५. सेस त चेव। (श० १४।७५)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति। (श० १४।७६)

८६. दोयसौ नैं हो छन्नूमीं ढाल,
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी।
सुख संपति हो 'जय-जश' सुविशाल,
गण वृद्धि तास पसाय थी ।।

चतुर्दशशते षष्ठोद्देशकार्थः ।।१४।६।।

ढाल : २९७

दूहा

१. कह्या अनंतरुद्देशके, पाणत अच्युत भोग।
किणहि प्रकारे तुल्य ते, सप्तम तुल्य प्रयोग ।।

१. षष्ठोद्देशकान्ते प्राणताच्युतेन्द्रयोर्भोगानुभूतिरुक्ता, सा च तयोः कथञ्चित्तुल्येति तुल्यताऽभिधानार्थः सप्तमोद्देशकः। (वृ० प० ६४६)

गोतम-आश्वासन पद

२. नगर राजगृह नैं विषे, यावत परषद जान।
जिन वंदी पाछी वली, पहुंची निज-निज स्थान ।।

२. रायगिहे जाव परिसा पडिगया।

३. वृत्ति विषे इहविधि कह्यो, गोतम नैं भगवान।
केवलज्ञान अप्राप्ति ते, खेद-सहित प्रभु जान ।।

४. गोतम स्वामी नैं तदा, आश्वासना निमित्त।
आमंत्री तेड़ी करी, आखै वाण उचित्त ।।

५. आपण नैं गोतम तणैं, होणहार तुल्य भाव।
कहिवा नैं अर्थे प्रभु, आखै इण प्रस्ताव ।।

३-५. तत्र किल भगवान् श्रीमन्महावीरः केवलज्ञानप्राप्त्या सखेदस्य गौतमस्वामिनः समाश्वासनायात्मनस्तस्य च भाविनीं तुल्यतां प्रतिपादयितुमिदमाह— (वृ० प० ६४७)

†जिनेश्वर भाखै जी, शीस प्रति दाखै जी,
हो जी म्हारा देव जिनेंद्र दयाल।
गोयम नीं जोड़ी जी, धर्म नां धोरी जी ।। [ध्रुपदं]

६. हे गोतम ! इहविध प्रभु कांइ, आमंत्रण करि ताय।
भगवंत श्री महावीर जी कांइ, गोतम प्रति कहै वाय ।।

६. गोयमादी ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी—

७. चिर संसिट्ठोसि मे गोयमा ! कांइ, घणां काल लग ताय।
तथा अतीत अद्धा विषे कांइ, चिर काले कहिवाय ।।

७. चिर संसिट्ठोसि मे गोयमा !
'चिरसंसिट्ठो सि' त्ति चिरं बहुकालं यावत् चिरे वा—अतीते प्रभूते काले (वृ० प० ६४७)

८. स्नेह थकी संबद्ध हुतो कांइ, मुझ सूं थारे जाण।
अथवा म्हारै तुझ थकी कांइ, स्नेह अधिक पहिछाण ।।

८. संश्लिष्टः—स्नेहात्सम्बद्धश्चिरसंश्लिष्टः 'असि' भवसि 'मे' मया मम वा त्वं हे गौतम ! (वृ० प० ६४७)

*लय : ऋषि धन्नो रे चिन्तवै
†लय : पायल वाली पदमणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. चिरसंथुये मे गोयमा ! कांइ, अद्धा घणैं अतीत ।
स्नेह थकी प्रसंसियो कांइ, तन मन सूं धर प्रीत ।।

१०. चिरपरिचिते मे गोयमा ! कांइ, घणा काल लग हित ।
पुनः पुनः दर्शन करी कांइ, मुझ सेती परिचित ।।

११. चिरजूसिए मे गोयमा ! कांइ, अद्धा घणैं अतीत ।
सेव्यो प्रतीतज पात्र छै कांइ, तुझ मुझ अधिकी प्रीत ।।

१२. चिराणुगतेसि मे गोयमा ! कांइ, घणा काल लग ख्यात ।
अनु पश्चात गमन कियो, मम अनुगतिकारित्वात ।।

१३. चिराणुवित्तिसि मे गोयमा ! कांइ, घणां काल सुविशाल ।
मम अनुवर्तन तूं कियो, अनुकूल वर्त्तवो न्हाल ।।

सोरठा

१४. ए पूर्वे आख्यात, चिर स्नेहादिक पद जिके ।
ते किण स्थानक थात, कहियै छै आगल तिको ।।

१५. *अंतर रहितज जाणवो कांइ, देवलोक रै मांय ।
अंतर रहित मनु भव विषे कांइ, तुझ मुझ प्रीति सवाय ।।

सोरठा

१६. इम निश्चै भगवान, त्रिपृष्ठ नां भव नैं विषे ।
गोतम सारथि जान, चिर स्नेहादिक सहु हुंता ।।

१७. अन्य भवे पिण एम, पद सगलाई संभवै ।
गाढपणैं करि प्रेम, स्नेह रूप मुझ साथ तुझ ।।

तुल्यता पद

१८. स्नेह प्रतापे सोय, केवलज्ञान न ऊपजै ।
स्नेह क्षये अवलोय, तुझ नैं पिण केवल हुस्यै ।।

१९. ते माटै मन मांय, अधृति प्रति म करो तुमे ।
वृत्ति विषे ए वाय, आख्यो तिण अनुसार थी ।।

२०. *किं बहुना कहियै घणुं कांइ, मरण थकी सुविचार ।
तनु नां भेद हेतू थकी कांइ, सुण आगल समाचार ।।

२१. एह मनुष्य नां भव थकी कांइ, चव नैं आपे दोय ।
हुसां सरीखा तुल्य तिहां कांइ, किंचित फेर न होय ।।

२२. क्षेत्रज एक विषे रह्या कांइ, सिद्ध-क्षेत्र पेक्षाय ।
एक प्रयोजन बिहुं तणैं कांइ, अनंत सुख नों ताय ।।

*लय : पायल वाली पदमणी

९. चिरसंथुओसि मे गोयमा !
'चिरसंथुओ'त्ति चिरं—बहुकालम् अतीतं यावत् संस्तुतः—स्नेहात्प्रशंसितश्चिरसंस्तुतः । (वृ० प० ६४७)

१०. चिरपरिचिओसि मे गोयमा !
'चिरपरिचिए' त्ति पुनः पुनर्दर्शनतः परिचितश्चिर-परिचितः । (वृ० प० ६४७)

११. चिरजुसिओसि मे गोयमा !
'चिरजुसिए'त्ति चिरसेवितश्चिरप्रीतो वा । (वृ० प० ६४७)

१२. चिराणुगओसि मे गोयमा !
'चिराणुगए'त्ति चिरमनुगतो ममानुगतिकारित्वात् । (वृ० प० ६४७)

१३. चिराणुवत्तीसि मे गोयमा !
'चिराणुवत्तीसि'त्ति चिरमनुवृत्तिः—अनुकूलवर्तिता यस्यासौ चिरानुवृत्तिः । (वृ०प० ६४७)

१४. इदं च चिरसंश्लिष्टत्वादिकं क्वासीत् ? इत्याह— (वृ० प० ६४७)

१५. अणंतरं देवलोए अणंतरं माणुस्सए भवे ।
अनन्तरं—निर्व्यवधानं । (वृ० प० ६४७)

१६. तत्र किल त्रिपृष्ठभवे भगवतो गौतमः सारथित्वेन चिरसंश्लिष्टत्वादिधर्म्मयुक्त आसीत् । (वृ० प० ६४७)

१७,१८. एवमन्येष्वपि भवेषु संभवतीति, एवं च मयि तव गाढत्वेन स्नेहस्य न केवलज्ञानमुत्पद्यते भविष्यति च तवापि स्नेहक्षये । (वृ० प० ६४७)

१९. तदित्यधृतिं मा कृथा इति गम्यते । (वृ० प० ६४७)

२०. किं परं मरणा कायस्स भेदा ।
किं बहुना 'परं'ति परतो 'मरणात्' मृत्योः, किमुक्तं भवति ? कायस्य भेदाद्धेतोः । (वृ० प० ६४७)

२१. इओ चुता दो वि तुल्ला
'इओ चुय' त्ति 'इतः' प्रत्यक्षान्मनुष्यभवाच्च्युतौ 'दोवि'त्ति द्वावप्यावां तुल्यौ भविष्याव इति योगः । तत्र तुल्यौ समानजीवद्रव्यौ । (वृ० प० ६४७)

२२. एगट्ठा ।
'एकट्ठ' त्ति 'एकार्थौ' एकप्रयोजनावनन्तसुखप्रयोजन-त्वात् एकस्थौ वा—एकक्षेत्राश्रितौ सिद्धिक्षेत्रापेक्षयेति । (वृ० प० ६४७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३. विशेष रहितज जिम हुवै कांइ, नानापणां रहीत।
हुस्यै ज्ञानादि पर्याय ते कांइ, बिहुं नां तुल्य प्रतीत।।

२३. अविसेसमणाणत्ता भविस्सामो। (श० १४।७७)
'अविसेसमणाणत्त'त्ति 'अविशेषं' निर्विशेषं यथा भवत्येवम् 'अनानात्वौ' तुल्यज्ञानदर्शनादिपर्यायाविति।
(वृ० प० ६४७)

२४. 'भगवंत श्री महावीर जी कांइ, गोतम नैं इह रीत।
दाखी बात दयाल जी कांइ, वारू अर्थ वदीत।।
२५. दशमें उत्तराध्येन में कांइ, गौतम नैं कहै वीर।
स्नेह छांड करि आतमा कांइ, शरदि कुमुद जिम नीर।।

२५. उत्तरा० १०।२८

२६. स्नेह तणां प्रताप सूं कांइ, गोतम गणधर ताम।
केवलज्ञान न पामिया कांइ, एहवो स्नेह निकाम।।
२७. स्नेह राग संसार में कांइ, मोटो माया जाल।
तिणमैं धर्म परूपियो कांइ, अंध अज्ञानी बाल।।
२८. वीर प्रभू नां तनु तणां कांइ, पुद्गल सूं जे राग।
तिणसूं केवल नां लह्या कांइ, गोतम जी महाभाग।।
२९. तो असंजती नो तनु थकी कांइ, करै राग मन मांय।
वंछै तेहनों जीवणो कांइ, तिणमें धर्म न थाय।।
३०. इम जाणी उत्तम नरां कांइ, स्नेह राग ए पाप।
दशमो जिनजी दाखियो कांइ, तिणमें धर्म न थाप।।'[ज.स.]
३१, देश चवदम सप्तम तणो, बेसौ सत्ताणूमीं ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी,
सुख 'जय-जश' हरष विशाल।।

ढाल : २९८

दूहा

१. भावि-तुल्यता आपणी, जिम छै प्रभुवर! तेह।
अन्य पिण जाणैं तो भलूं, इम गोयम पूछेह।।

१. एवं भाविन्यामात्मतुल्यतायां भगवताऽभिहितायां 'अतिप्रियमश्रद्धेय' मितिकृत्वा यद्यन्योऽप्येनमर्थं जानाति तदा साधुर्भवतीत्यनेनाभिप्रायेण गौतम एवाह—
(वृ० प० ६४७)

भावी तुल्यता-परिज्ञान-पद

*जय-जय ज्ञान जिनेंद्र नों, जयवंता वीर।[ध्रुपदं]
गोतम गणधर गुणनिला, प्रभु पास वजीर।।
२. भावि-तुल्यता आपणी, एह अर्थ भगवान।
आपां जाणां देखां अछां, वारू रीत विधान।।

२. जहा णं भंते! वयं एयमट्ठं जाणामो-पासामो।
'एतमर्थम्' आवयोर्भावितुल्यतालक्षणं।
(वृ० प० ६४७)

३. केवलज्ञान करी तुम्हे, जाणो साख्यात।
तुझ उपदेश थकी अम्हे, जाणां जगनाथ!

३. तत्र यूयं केवलज्ञानेन जानीथ वयं तु भवदुपदेशात्।
(वृ० प० ६४७)

*लय : सीता दे रे ओलुंभड़ो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. तिम अनुत्तरोपपातिका, एह अर्थ उदार।
जाणैं छै भगवंत जी! वलि देखै सार?
५. जिन कहै हंता अम्है तुम्है, जाणां देखां ए अर्थ।
तेम अनुत्तर नां सुरा, जाणैं देखै तदर्थ॥

६. किण अर्थे जाव देखता? तब भाखै स्वाम।
अनुत्तरोपपातिक तणैं, अवधिज्ञान अमाम॥
७. मनोद्रव्य नीं वर्गणा, अनंती अवधार।
विशिष्ट अवधि करी सुरा, जाणैं देखै उदार॥
८. मनोद्रव्य वर्गणा विषे, जसु विषय विख्यात।
एहवो अवधिज्ञान जेहनैं, लद्धाओ लब्धिमात॥

९. पत्ताओ ते मनोद्रव्य नैं, जाणवै करि सोय।
पामी छै प्रगटपणैं, लब्धिमात्र न कोय॥
१०. अभिसमणागयाओ तिको, मनोद्रव्य नां जेह।
गुण पर्याय नैं जाणवै, सन्मुख थइ तेह॥

सोरठा

११. यद्यपि गुण पर्याय, अभेद छै तो पिण इहां।
सहभावी गुण थाय, क्रमभावी पर्याय है॥
१२. सहभावी इक साथ, क्रमभावी अनुक्रम हुस्यै।
इण लक्षण करि ख्यात, कह्यं भेद पर्याय गुण॥

१३. *विशिष्ट अवधिज्ञाने करी, मनोद्रव्य जाणंत।
देखै अवधि दर्शण करी, तिण अर्थे ए हुंत॥

सोरठा

१४. इहां भावार्थज एह, अनुत्तर विमाण नां सुरा।
विशिष्ट अवधिज्ञानेह, जाणैं मनोद्रव्य वर्गणा॥

१५. ते मनोवर्गणा धार, आपां री अणदेखवैं॥
अयोगि अवस्था मझार, मुक्ति गमन जाणैं तदा॥
१६. तिण कारण सुर तेह, भावि तुल्यता आपणी।
जाणैं देखै जेह, एहवुं आख्यो वृत्ति में॥
१७. पूर्व तुल्यता पेख, तास प्रक्रम थकी हिवै।
तुल्यहीज सुविशेख, कहियै छै निसुणो हिवैं॥

तुल्यता पद

१८. कतिविध तुल्य कह्यो प्रभु! जिन कहै छह प्रकार।
द्रव्य तुल्य ते द्रव्य थी, तुल्य कहियै विचार॥

१९. क्षेत्र तुल्य काल तुल्य हि, भव तुल्य पिछाण।
भाव तुल्य ए पंचमो, वलि तुल्य संठाणं॥

*लय : सीता दे रे ओलुंभड़ो

४. तहा णं अणुत्तरोववाइया वि देवा एयमट्ठं जाणंति-पासंति?

५. हंता गोयमा! जहा णं वयं एयमट्ठं जाणामो-पासामो, तहा णं अणुत्तरोववाइया वि देवा एयमट्ठं जाणंति-पासंति। (श० १४।७८)

६,७. से केणट्ठेणं जाव (सं. पा.) पासंति? गोयमा! अणुत्तरोववाइयाणं अणंताओ मणोदव्व-वग्गणाओ लद्धाओ पत्ताओ अभिसमण्णागयाओ भवंति।

८. 'मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ' त्ति मनोद्रव्यवर्गणा लब्धास्तद्विषयावधिज्ञानलब्धिमात्रापेक्षया। (वृ० प० ६४८)

९. 'पत्ताओ' त्ति प्राप्तास्तद्द्रव्यपरिच्छेदतः। (वृ० प० ६४८)

१०. 'अभिसमन्नागयाओ' त्ति अभिसमन्वागताः तद्गुण-पर्यायपरिच्छेदतः। (वृ० प० ६४८)

१३. से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जाव (सं. पा.) पासंति। (श० १४।७९)

१४. अयमत्र गर्भार्थः—अनुत्तरोपपातिका देवा विशिष्टा-वधिना मनोद्रव्यवर्गणा जानन्ति पश्यन्ति च। (वृ० प० ६४८)

१५. तासां चावयोरयोग्यवस्थायामदर्शनेन निर्वाणगमनं निश्चिन्वन्ति। (वृ० प० ६४८)

१६. ततश्चावयोर्भावितुल्यतालक्षणमर्थं जानन्ति पश्यन्ति चेति व्यपदिश्यत इति। (वृ० प० ६४८)

१७. तुल्यताप्रक्रमादेवेदमाह— (वृ० प० ६४८)

१८. कतिविहे णं भंते! तुल्लए पण्णत्ते? गोयमा! छव्विहे तुल्लए पण्णत्ते, तं जहा—दव्वतुल्लए।

१९. खेत्ततुल्लए, कालतुल्लए, भवतुल्लए, भावतुल्लए संठाणतुल्लए। (श० १४।८०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. किण अर्थे भगवंत जी ! इम कहियै एह ।
द्रव्य तुल्य द्रव्य तुल्य जे ? जिन भाखै तेह ।।
२१. परमाणु पुद्गल तिको, परमाणु पुद्गल पेख ।
द्रव्य थकी सरिखो अछै, द्रव्य तुल्य ए देख ।।
२२. तथा पुद्गल परमाणुओ, परमाणु थी ताहि ।
अन्य पुद्गल द्रव्य तेहनैं, द्रव्य थी तुल्य नांहि ।।
२३. दोय प्रदेशिक खंध ते, द्विप्रदेशिक नेंज ।
द्रव्य थकी ए सारिखो, द्रव्य तुल्य कहैज ।।
२४. दोय प्रदेशिक खंध ते, द्वि प्रदेशिक थीज ।
अन्य खंध नैं द्रव्य थी, सरीखो न कहीज ।।
२५. इम यावत दश प्रदेशिया, खंध लग कहिवाय ।
सरिखो तुल्य कहीजियै, असदृश्य तुल्य नांय ।।
२६. तुल्य संख्यात प्रदेशियो, दूजो तुल्य संख्यात ।
प्रदेशिक जे खंध नैं, द्रव्य थी तुल्य थात ।।
२७. तुल्य संखेज प्रदेशियो, दूजो तुल्य संख्यात ।
तेह थकी जे अन्य में, तुल्य नहीं कहात ।।
२८. इम तुल्य असंख प्रदेशियो, इम वलि तुल्य कहंत ।
अनंत प्रदेशिक खंध नों, पूरववत वृतंत ।।
२९. तिण अर्थे करि गोयमा ! इम कहियै जगीस ।
द्रव्य तुल्य द्रव्य तुल्य ए, वलि पूछै शीस ।।
३०. किण अर्थे भगवंत जी ! इम कहियै बात ।
क्षेत्र तुल्य क्षेत्र तुल्य ए ? तब भाखै नाथ ।।
३१. एक प्रदेश अवगाहिया, पुद्गल अवलोय ।
एक प्रदेश अवगाढ नैं, क्षेत्र थी तुल्य होय ।।
३२. एक प्रदेश अवगाढ ते, दूजो एक प्रदेश ।
अवगाह्या थी अन्य नैं, क्षेत्र तुल्य न लेश ।।
३३. एवं जावत जाणियै, दश आकाश प्रदेश ।
अवगाह्या पुद्गल तिके, पूर्व रीत कहेस ।।
३४. तुल्य संख्यात आकाश नां, प्रदेश पिछाण ।
अवगाह्या पुद्गल तणो, पूर्व रीत वखाण ।।
३५. एवं तुल्य आकाश नां, असंख्यात प्रदेश ।
अवगाह्या पुद्गल अपि, कहिवा सुविशेष ।।
३६. ते तिण अर्थे जाव ही, क्षेत्र तुल्य संवेद ।
किण अर्थे कहियै तिको, काल तुल्य संभेद ।।
३७. पुद्गल एक समय स्थिति, वलि द्वितीय कहीज ।
एक समय स्थितिक तिणे, तुल्य काल थकीज ।।
३८. पुद्गल एक समय स्थिति, वलि दूजो कहाय ।
घणां समय नीं स्थितिक नैं, काल थी तुल्य नांय ।।

२०. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—दव्वतुल्लए-दव्वतुल्लए ।
२१. गोयमा ! परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वओ तुल्ले ।
२२. परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलवइरित्तस्स दव्वओ नो तुल्ले ।
२३. दुपएसिए खंधे दुपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले ।
२४. दुपएसिए खंधे दुपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ नो तुल्ले ।
२५. एवं जाव दसपएसिए ।
२६. तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वओ नो तुल्ले ।
२७. तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ नो तुल्ले ।
२८. एवं तुल्लअसंखेज्जपएसिए वि, एवं तुल्लअणंतपएसिए वि ।
२९. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—दव्वतुल्लए-दव्वतुल्लए ।
३०. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—खेत्ततुल्लए-खेत्ततुल्लए ?
३१. गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स खेत्तओ तुल्ले ।
३२. एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढवइरित्तस्स पोग्गलस्स खेत्तओ नो तुल्ले ।
३३. एवं जाव दसपएसोगाढे ।
३४. तुल्लसंखेज्जपएसोगाढे पोग्गले तुल्लसंखेज्जपएसोगाढस्स पोग्गलस्स खेत्तओ तुल्ले, तुल्लसंखेज्जपएसोगाढे पोग्गले तुल्लसंखेज्जपएसोगाढवइरित्तस्स पोग्गलस्स खेत्तओ नो तुल्ले ।
३५. एवं तुल्लअसंखेज्जपएसोगाढे वि ।
३६. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—खेत्ततुल्लए-खेत्ततुल्लए ।
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—कालतुल्लए-कालतुल्लए ?
३७. गोयमा ! एगसमयठितीए पोग्गले एगसमयठितीयस्स पोग्गलस्स कालओ तुल्ले ।
३८. एकसमयठितीए पोग्गले एगसमयठितीयवइरित्तस्स पोग्गलस्स कालओ नो तुल्ले ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. एवं जावत जाणियै, दश समय स्थितीक।
तुल्य संख्यात समय स्थिति, एवं चेव कथीक ।।
४०. तुल्य असंख समय स्थितिक, एवं चेव कहाय।
तिण अर्थे जाव काल थी, तुल्य कहियै ताय ।।
४१. किण अर्थे भगवंत जी ! भव तुल्य कहाय ?
जिन भाखै सुण गोयमा ! भव तुल्य नों न्याय ।।
४२. नेरइयो द्वितीय नारक तिणे, भवार्थे तुल्य थाय।
नेरइयो अनारक तिणे, भवार्थे तुल्य नांय ।।
४३. इमहिज तिर्यंच जोणियो, एम मनुष्य अवदात।
सुर पिण कहिवो इह विधै, तिण अर्थे आख्यात ।।

४४. किण अर्थे भगवंत जी ! भाव तुल्य कहाय ?
जिन भाखै सुण गोयमा ! भाव तुल्य नों न्याय ।।
४५. पुद्‌गल इक गुण कृष्ण जे, वलि द्वितीय कहीज।
पुद्‌गल इक गुण कृष्ण नैं, तुल्य भाव थकीज ।।
४६. पुद्‌गल इक गुण कृष्ण जे, वलि द्वितीय कहाय।
बहु गुण कृष्ण पुद्‌गल तणैं, भाव थी तुल्य नांय ।।
४७. इम जावत दश गुण कृष्ण हि, दश गुण कृष्ण साथ।
भाव तुल्य कहियै तसु, अन्य गुण थी न थात ।।
४८. तुल्य संख गुण कृष्ण ते, तुल्य संख गुण काल।
भाव तुल्य सम गुण थकी, अन्य गुण थी म न्हाल ।।
४९. तुल्य असंख गुण कृष्ण हि, तुल्य असंख गुण साथ।
भाव थी तुल्य कहीजियै, अन्य गुण थी न थात ।।
५०. तुल्य अनंत गुण कृष्ण हि, तुल्य अनंत गुण काल।
भाव तुल्य कहियै तसु, अन्य गुण थी म न्हाल ।।
५१. कृष्ण वर्ण जिम आखियो, नील लोहित एम।
पीत शुक्ल इमहीज छै, सुगंध दुर्गंध तेम ।।
५२. एवं तिक्त जाव मधुर ही, इम कर्कश फास।
इम जाव लूक्ष फर्श लगै, पूर्व रीत प्रकाश ।।
५३. उदय भाव उदय भाव नैं, भाव थी तुल्य थाय।
उदय भाव अन्य भाव नैं, भाव थी तुल्य नांय ।।

५४. इम उपशम क्षायक कह्यो, क्षयोपशम जाण।
परिणामिक ए पंचमो, पूर्व रीत पिछाण ।।
५५. सन्निपात सन्निपात नैं, इमहिज कहिवाय।
तिण अर्थे इम आखियो, भाव तुल्य नूं न्याय ।।

वा०—उदय ते कर्म नो विपाक, तेहिज क्रिया मात्र अथवा उदय करी नीपनो ते उदय भाव—नारकत्वादि पर्याय विशेष । ते औदयिक भाव नैं नारकत्वादि भाव थकी भावतुल्ले—भाव सामान्य आश्रयी नैं तुल्य—सरीखो । एवं उदइये । ओदयिक भाव ओदयिक भाव थी व्यतिरिक्त—अनेरा नैं भाव थी तुल्य नहीं ।

३९. एवं जाव दससमयठितीए, तुल्लसंखेज्जसमयट्ठितीए एवं चेव ।
४०. एवं तुल्लअसंखेज्जसमयट्ठितीए वि । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—कालतुल्लए-कालतुल्लए ।
४१. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—भवतुल्लए-भवतुल्लए ? गोयमा !
४२. नेरइए नेरइयस्स भवट्ठयाए तुल्ले, नेरइयवइरित्तस्स भवट्ठयाए नो तुल्ले ।
४३. तिरिक्खजोणिए एवं चेव, एवं मणुस्से, एवं देवे वि । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—भवतुल्लए-भवतुल्लए ।
४४. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—भावतुल्लए-भावतुल्लए ? गोयमा !
४५. एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालगस्स पोग्गलस्स भावओ तुल्ले ।
४६. एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालावइरित्तस्स पोग्गलस्स भावओ नो तुल्ले ।
४७. एवं जाव दसगुणकालए,
४८. एवं तुल्लसंखेज्जगुणकालए पोग्गले,
४९. एवं तुल्लअसंखेज्जगुणकालए वि,
५०. एवं तुल्लअणंतगुणकालए वि ।
५१. जहा कालए, एवं नीलए, लोहियए, हालिद्दए, सुक्किलए । एवं सुब्भिगंधे, एवं दुब्भिगंधे ।
५२. एवं तित्ते जाव महुरे । एवं कक्खडे जाव लुक्खे ।
५३. ओदइए भावे ओदइयस्स भावस्स भावओ तुल्ले, ओदइए भावे ओदइयभाववइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले ।
५४. एवं ओवसमिए, खइए, खओवसमिए, पारिणामिए ।
५५. सन्निवाइए भावे सन्निवाइयस्स भावस्स भावओ तुल्ले, सन्निवाइए भावे सन्निवाइयभाववइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—भावतुल्लए-भावतुल्लए ।

वा०—'उदइए भावे' त्ति उदयः—कर्म्मणां विपाकः स एवौदयिकः—क्रियामात्रं अथवा उदयेन निष्पन्नः औदयिको भावो—नारकत्वादिपर्यायविशेषः औदयिकस्य भावस्य नारकत्वादेर्भावतो—भावसामान्यमाश्रित्य तुल्यः—समः,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं उवसमिए—ओपशमिक भाव पिण इमहिज कहिवो तथाहि—उवसमिए भावे उवसमियस्स भावस्स भावओ तुल्ले तथा उवसमिए भावे उवसमियवइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले। इम शेष नैं पिण कहिवो। तिहां उपशम ते उदय आव्या कर्म नों क्षय अनैं उदय नाव्या तेहनों थांभिवो ते ओपशमिक। अथवा उपशमे करी नीपनो ते औपशमिक सम्यक्‌दर्शनादिक।

खइए—क्षय ते कर्म नों अभाव तेहिज क्षायिक। अथवा क्षये करी नीपनो ते क्षायक केवलज्ञानादि।

खउवसमिए—उदय प्राप्त कर्म नैं विनाशे करी सहित शेष नो उपशम ते क्षायोपशमिक, क्रिया मात्र हीज। अथवा क्षयोपशमे करी नीपनों ते क्षायोपशमिक मतिज्ञानादि पर्याय विशेष।

इहां कोई एक पूछस्यै—तिहां ओपशमिक अनैं क्षायोपशमिक नैं मांहोमांहि स्यूं विशेष? बिहुं नैं विषे उदीर्ण नां क्षय अनैं अनुदीर्ण नां उपशम नो सद्भाव छै ते माटै। इहां उत्तर—क्षयोपशमिक नैं विषे विपाक वेदवो न छै पिण प्रदेशे वेदवो छै हीज। ओपशमिक नैं विषे प्रदेशे पिण वेदवो नहीं छै, ए विशेष।

५६. किण अर्थे भगवंत जी! इहविधि आख्यात।
संठाण थी जे तुल्य छै? कहियै जगनाथ!
५७. जिन कहै परिमंडल तिको, परिमंडल जान।
तुल्य अछै संठाण थी, तुल्य कहियै समान।।
५८. परिमंडल संठाण जे, अन्य संठाण साथ।
तुल्य नहीं संठाण थी, इम आखै नाथ।।
५९. एवं वट्ट संठाण ही, तंस नैं चउरंस।
आयत पिण इण रीत सूं, कहिवो सुप्रशंस।।
६०. समचउरंस संठाण जे, समचउरंस साथ।
तुल्य संठाण थकी कह्यो, वारू रीत विख्यात।।
६१. समचउरंस संठाण जे, अन्य संठाण साथ।
तुल्य सरीखो नहिं तिको, संठाण थी ख्यात।।
६२. एवं जाव हुंडक लगै, तिण अर्थे ए वाय।
जाव संठाण थी तुल्य ते, वारू वर न्याय।।

वा०—संठाण ते आकार विशेष। ते संठाण बे प्रकारे जीव अनैं अजीव नां भेद थकी। तेहनैं विषे अजीव संठाण पंच प्रकारे कहै छै—परिमंडल, वृत्त, त्र्यंस, चउरंस, आयत।

तिहां परिमंडल संठाण ते बाहिर थकी वृत्त ते गोल आकार मध्य नैं विषे पोलाड़ ते चूड़ी नीं परै। ते परिमंडल नां बे प्रकार—घन परिमंडल नैं प्रतर परिमंडल।

दूजो वृत्त संठाण ते परिमंडल जिम बाहिर गोल अनैं बिच में पोलाड़ रहित कुंभार नां चक्र नीं परै। ए वृत्त पिण बे प्रकार—घन वृत्त अनैं प्रतर वृत्त। वलि एक-एक नां बे-बे भेद सम संख्या प्रदेश नैं विषम संख्या प्रदेश नैं भेद थकी।

एवं उवसमिए' त्ति औपशमिकोऽप्येवं वाच्यः, तथाहि—'उवसमिए भावे उवसमियस्स भावस्स भावओ तुल्ले उवसमिए भावे उवसमियवइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले' त्ति, एवं शेषेष्वपि वाच्यं, तत्रोपशमः उदीर्णस्य कर्म्मणः क्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्वं स एवौपशमिकः—क्रियामात्रं उपशमेन वा निर्वृत्तः औपशमिकः—सम्यग्दर्शनादिः। 'खइए' त्ति क्षयः—कर्माभावः स एव क्षायिकः क्षयेण वा निर्वृत्तः क्षायिकः—केवलज्ञानादिः।

'खओवसमिए' त्ति क्षयेण—उदयप्राप्तकर्मणो विनाशेन सहोपशमो—विष्कम्भितोदयत्वं क्षयोपशमः स एव क्षायोपशमिकः—क्रियामात्रमेव क्षयोपशमेन वा निर्वृत्तः क्षायोपशमिकः—मतिज्ञानादिपर्यायविशेषः।

नन्वौपशमिकस्य क्षायोपशमिकस्य च कः प्रतिविशेषः, उभयत्राप्युदीर्णस्य क्षयस्यानुदीर्णस्य चोपशमस्य भावात्? उच्यते, क्षायोपशमिके विपाकवेदनमेव नास्ति प्रदेशवेदनं पुनरस्त्येव, औपशमिके तु प्रदेशवेदनमपि नास्तीति। (वृ० प० ६४९)

५६ से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ—संठाणतुल्लए-संठाणतुल्लए?

५७. गोयमा! परिमंडले संठाणे परिमंडलस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले परिमंडले संठाणे।

५८. परिमंडलसंठाणवइरित्तस्स संठाणस्स संठाणओ नो तुल्ले।

५९. एवं वट्टे, तंसे, चउरंसे, आयए।

६०. समचउरंससंठाणे समचउरंसस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले समचउरंसे संठाणे।

६१. समचउरंससंठाणवइरित्तस्स संठाणस्स संठाणओ नो तुल्ले।

६२. एवं परिमंडले वि, एवं जाव (सं० पा०) हुंडे। से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ- संठाणतुल्लए-संठाणतुल्लए। (श० १४।८१)

वा० 'संठाणतुल्लए' त्ति संस्थानं—आकृतिविशेषः तच्च द्वेधा—जीवाजीवभेदात, तत्राजीवसंस्थानं पञ्चधा।

तत्र 'परिमंडले संठाणे' त्ति परिमण्डलसंस्थानं बहिस्ताद्‌वृत्ताकारं मध्ये सुषिरं यथा वलयस्य, तच्च द्वेधा—घनप्रतरभेदात्।

'वट्टे' त्ति वृत्तं—परिमण्डलमिवान्तः सुषिररहितं यथा कुलालचक्रस्य, इदमपि द्वेधा—घनप्रतरभेदात्, पुनरेकैकं द्विधा—समसंख्यविषमसंख्यप्रदेशभेदात्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं त्र्यंस अनैं चतुरंस । नवरं एतलो विशेष—त्र्यंस ते त्रिकोण सिंघाडा नीं परै । चउरंस—चउखूणो नारक नैं उपजवा नां स्थानक नीं परै अथवा बाजोट नीं परै ।

आयत ते दीर्घ दंड नीं परै । आयत तीन प्रकार—श्रेणी आयत, प्रतर आयत और घन आयत । वलि एक-एक नां बे-बे भेद—सम संख्या प्रदेश अनें विषम संख्या प्रदेश ।ए पांच प्रकार नां अजीव संठाण विश्रसा ते स्वभाव करिकै प्रयोगसा ते जीव नां व्यापार करकै हुवै ।

वलि जीव संस्थान ते संठाण नाम कर्म नी उत्तर प्रकृति नां उदय थकी पाम्यो जीव सहित शरीर नों आकार । ते छह प्रकार ।

तिहां प्रथम समचउरंस—ते तुल्य आरोह-परिणाह, सम्पूर्ण अंग नां अवयव—पोता नीं आंगुल थी एकसौ आठ आंगुल ऊंचो । समचउरंस—तुल्य आरोह-परिणाहपणैं करी समपणां थकी पूर्ण अवयवपणैं करी चउरंसपणां थकी ते संस्थान नैं समचउरंसपणो संगत छै ।

इम निगोहपरिमंडल पिण । जिम समचउरंस कह्यो तिम न्यग्रोध परिमंडल पिण कहिवूं । न्यग्रोध नाम बड़ वृक्ष नों छै । तेहनीं परै परिमंडल—नाभी थकी ऊपर चउरंस लक्षण युक्त अनैं नाभी नै हेठै ऊपरला रै अनुरूप नहीं हुवै—ऊपरला प्रमाण थकी अतिही हीन हुवै ।

एवं जाव हुंडक । इहां जाव शब्द कहिवा थकी 'साइखुज्जेवामणे' पिण कहिवा । तिहां सादी-नाभी थकी हेठै चतुरस्र लक्षण युक्त अनैं नाभी नैं ऊपर तेहनैं अनुरूप नहीं ।

अनैं खुज्ज कहितां कुब्ज ते गाबड़ आदि नैं विषे अनैं हाथ पग नैं विषे चतुरस्र लक्षण युक्त । अन्य मध्य भाग संक्षिप्त अनै विकृत रूप ।

वामन ते मध्य तो लक्षण युक्त अनैं ग्रीवादिक तथा हाथ पग नैं विषे आदि लक्षणे करि हीन ।

हुंडक ते बहुलपणैं सर्व अवयव नैं विषे आदि लक्षण विसंवाद सहित—एतलै मूल लक्षणे करी हीन । जे अवयव नैं विषे जेहवा लक्षण चाहिजै तेहवा नथी ।

६३ चवदम शत देश सप्तमों, बेसौ अठाणूंमी ढाल ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी, 'जय-जश' हरश विशाल ।।

एवं त्र्यस्रं चतुरस्रं च, नवरं 'त्र्यस्रं' त्रिकोणं शृंगाटकस्येव चतुरस्रं तु चतुष्कोणं यथा कुम्भिकायाः ।

आयतदीर्घं यथा दण्डस्य, तच्च त्रेधा—श्रेण्यायत-प्रतरायतघनायतभेदात्, पुनरेकैकं द्विधा—समसंख्य-प्रदेशभेदात् । इदं च पंचविधमपि विस्रसा प्रयोगाभ्यां भवति,

जीवसंस्थानं तु संस्थानाभिधाननामकर्म्मोत्तर-प्रकृत्युदयसम्पाद्यो जीवानामाकारः, तच्च षोढा,

तत्राद्यं 'समचउरंसे' त्ति तुल्यारोहपरिणाहं सम्पूर्णांगा-वयवं स्वांगुलाष्टशतोच्छ्रयं समचतुरस्रं, तुल्यारोहपरि-णाहत्वेन समत्वात् पूर्णावयवत्वेन च चतुरस्रत्वात्तस्य, चतुरस्रं सङ्गतमिति पर्यायौ ।

एवं 'परिमंडलेवि' त्ति यथा समचतुरस्रमुक्तं तथा न्यग्रोधपरिमण्डलमपीत्यर्थः, न्यग्रोधो—वटवृक्षस्तद्व-त्परिमण्डलं नाभीत उपरि चतुरस्रलक्षणयुक्तमधश्च तदनुरूपं न भवति—तस्मात्प्रमाणाद्धीनतरमिति ।

'एवं जाव हुंडे' त्ति इह यावत्करणात् 'साई खुज्जे वामणे' त्ति दृश्यं तत्र 'साइ' त्ति सादि नाभीतोऽ-धश्चतुरस्रलक्षणयुक्तमुपरि च तदनुरूपं न भवति ।

'खुज्जो' त्ति कुब्जं ग्रीवादौ हस्तपादयोश्चतुरस्र-लक्षणयुक्तं संक्षिप्तविकृतमध्यं ।

वामणे' त्ति वामनं लक्षणयुक्तमध्यं ग्रीवादौ हस्तपादयो रप्यादिलक्षणन्यूनं ।

'हुंडे' त्ति हुण्डं प्रायः सर्वावयवेष्वादिलक्षणविसंवादो-पेतमिति । (वृ० प० ६४९,५०)

ढाल २९९

दूहा

१. वक्तव्यता संठाण नीं, पूर्वे भाखी पेख ।
हिव संठाणजवंत जे, मुनि नीं बात विशेख ।।

भक्तप्रत्याख्यात-आहार पद

२.भक्त तणां पचखाण प्रभु ! कीधा जे मुनि धन्न ।
आहार विषे मूर्च्छित तिको, जावत अध्युपपन्न ।।

१. अनन्तरं संस्थानवक्तव्यतोक्ता, अथ संस्थानवतो-ऽनगारस्य वक्तव्यताविशेषमभिधातुकाम आह—
(वृ० प० ६५०)

२. भत्तपच्चक्खाए णं भंते ! अणगारे मुच्छिए जाव (सं० पा०) अज्झोववन्ने आहारमाहारेति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

३. जाव शब्द थी जान, स्नेह रूप तंतू करी।
अशने अध्यवसान, ते गढ्िए[1] कहीजियै ।।
४. गृद्ध प्राप्त जे आहार, आसक्त अतृप्ति भाव करि।
तथा आकांक्षा धार, आहार विषे वांछा घणी ।।

३. गढिए

४. गिद्धे

दूहा

५. अध्युपपन्न अप्राप्त जे, आहार विषे अतिचिंत।
एहवो अणसणियो मुनि, तेह तणो वृत्तंत ।।
६. तीव्र क्षुधा जे वेदनी, उदय थकी असमाधि।
तेह मिटावण नैं अरथ, भोगवतो अशनादि ।।
७. अथ हिव आहार कियां पछै, करै स्वाभाविक काल।
समुद्घात मारणांतिकी, काल शब्द अर्थ न्हाल ।।
८. मारणांतिक समुद्घात थी, पछै अमूर्च्छित तेह।
जाव अध्युपपन्न रहित, आहार प्रतै आहारेह[2] ?
९. जिन कहै हंता गोयमा ! अणसणियो अणगार।
तिमहिज पूरवली परै, कहिवो सहु अधिकार ।।
१०. ते किण अर्थे हे प्रभु ! इहविध कहियै सोय।
भत्त पच्चक्खाण कियो तिको, अन्य तिमज अवलोय ?
११. जिन कहै भत्त पचखाण मुनि, मूर्च्छित अति अवलोय।
जावत अध्युपपन्न ते, आहार विषे जे होय ।।
१२. हिवै स्वभावे काल करि, पछै अमूर्च्छित जाव।
आहार विषे ह्वै तिण अरथ, जाव आहार कृत साव ।।
१३. प्रश्न अर्थ तिमहीज ए, अंगीकृत्य प्रभु कीध।
किणहिक अणसणिया तणो, अशुभ भाव ते लीध ।।

५. अज्झोववन्ने

७. अहे णं वीससाए कालं करेइ।

८. तओ पच्छा अमुच्छिए अगिद्धे अगढिए अणज्झोववन्ने आहारमाहारेति ?

९. हंता गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे तं चेव (सं० पा०) (श० १४।८२)

१०. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—भत्तपच्चक्खायए णं तं चेव (सं० पा०)

११. गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे मुच्छिए जाव (सं० पा०) आहारे भवइ।

१२. अहे णं वीससाए कालं करेइ, तओ पच्छा अमुच्छिए जाव (सं० पा०) आहारे भवइ।

१३. से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव आहारमाहारेति। (श० १४।८३)

वा०—भत्तपच्चक्खाए णं कहितां अणसण कीधो ते अणगार, मुच्छिए कहित ऊपनीं मूर्च्छा—ऊपनो आहार-संरक्षण अनुबन्ध अथवा ते आहार नां दोष नैं विषे मूढ थयो। 'मूर्च्छा मोहसमुछ्राययोः' इति वचनात्। इहां मूर्च्छा धातु मोह अर्थ नैं विषे ते मूढता समुछ्राय ते वृद्धि अर्थ नैं विषे ते आहार-संरक्षण नां परिणाम नी वृद्धि।

जाव शब्द थी इम जाणवो 'गढिए गिद्धे'। गढिए कहितां आहार कै विषे स्नेह रूप तंतु करिकै गूंथणो। 'ग्रथ श्रंथ सन्दर्भे' इति वचनात्—ग्रन्थ धातु अनैं श्रंथ धातु ए दोनूं सदर्भ ते गूंथणा अर्थ कै विषे।

गिद्धे कहितां पाम्या आहार नैं विषे आसक्त अथवा अतृप्तपणैं करी ते आहार नी आकांक्षावान्। 'गृधु अभिकांक्षायां' इति वचनात्—गृधु धातु वांछा अर्थ नैं विषे।

वा० 'भत्ते' त्यादि, तत्र 'भत्तपच्चक्खायए णं' ति अनशनी 'मूर्च्छितः' सञ्जातमूर्च्छः—जाताहार-संरक्षणानुबन्धः तद्दोषविषये वा मूढः 'मूर्च्छा' मोहसमुच्छ्राययोः इति वचनात्।

यावत्करणादिदं दृश्यं—'गढिए' ग्रथितआहार-विषयस्नेहतन्तुभिः संदर्भितः 'ग्रन्थ श्रन्थ संदर्भे' इति वचनात्।

'गिद्धे' गृद्धः प्राप्ताहारे आसक्तोऽतृप्तत्वेन वा तदाकाङ्क्षावान् 'गृधु अभिकाङ्क्षायाम् इति' वचनात्।

---

१. अंगसुत्ताणि में 'गिद्धे' पहले है 'गढिए' बाद में है। जोड़ में पाठ आगे-पीछे है। कुछ आदर्शों में पाठ का यह क्रम रहा होगा।

२. प्रस्तुत ढाल में गाथा ३ से ८ तक की जोड़ पाठ और वृत्ति दोनों के आधार पर की गई है। फिर भी जोड़ के सामने केवल पाठ ही उद्धृत किया गया है। क्योंकि गाथा १३ से आगे का वार्तिक वृत्ति के आधार पर लिखा हुआ है। इसलिए वृत्ति का वह अंश अविकल रूप से वहीं पर उद्धृत किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्झोववन्ने कहितां अणपाम्या आहार नीं चिंतवणा अधिकपणैं करी ऊपनो।

आहार ते वायु, तेल चोपड़णादिक अथवा ओदनादिक नो भोगवणो। तीव्र क्षुधा वेदनीय कर्म नां उदय थकी असमाधि छते ते क्षुधा वेदनीय उपशमावा नैं अर्थे आहार करै—भोगवै।

अहेणं कहितां अथ हिवै आहार कियां पछै, वीससाए कहिता स्वभाव थकीज, कालं कहितां मरण ते काल नीं परै काल कहियै मारणांतिक समुद्घात तेहनैं काल कहियै, एतलै मारणांतिक समुद्घात करीनैं। तओ पच्छा कहितां मारणांतिक समुद्घात पछै तेह थकी निवृत्त मूर्च्छादि विशेषण रहित आहार करै प्रशांत परिणाम नां सद्भाव थकी इति प्रश्नः। अत्र उत्तरं—हंता गोयमा ! इत्यादि,

इण उत्तरे करी वलि प्रश्नार्थहीज अंगीकार कियो, एतलै गोतम जे अर्थ पूछ्यो तिकोहीज प्रभु उत्तर दियो। किणही भक्त-प्रत्याख्यान वाला रै पिण इसा भाव नां सद्भाव थकी।

अज्झोववन्ने' त्ति अध्युपपन्नः—अप्राप्ताहारचिन्ताधिक्येनोपपन्नः।
आहारं वायुतैलाभ्यङ्गादिकमोदनादिकं वाऽभ्यवहार्यं तीव्रक्षुद्वेदनीयकर्मोदयादसमाधौ सति तदुपशमनाय प्रयुक्तम् 'आहारयति' उपभुङ्क्ते।
अहे णं' ति 'अथ' आहारानन्तरं 'विस्रसया' स्वभावत एव 'कालं' ति कालो—मरणं काल इव कालो मारणांतिकसमुद्घातस्तं 'करोति' याति 'तओ पच्छ' त्ति ततो—मारणान्तिकसमुद्घातात् पश्चात् तस्मान्निवृत्त इत्यर्थः अमूर्च्छितादिविशेषणविशेषित आहारमाहारयति प्रशान्तपरिणामसद्भावादिति प्रश्नः, अत्रोत्तरं—'हंता गोयमा !' इत्यादि,
अनेन तु प्रश्नार्थ एवाभ्युपगतः, कस्यापि भक्तप्रत्याख्यातुरेवंभूतभावस्य सद्भावादिति।
(वृ० प० ६५०)

सोरठा

१४. अनंतरे अवदात, अणसणिया मुनि नो कह्यो।
अनुत्तरे उपपात, को शुद्ध अणसणी तास हिव।।

१४. अनन्तरं भक्तप्रत्याख्यातुरनगारस्य व्यक्तव्यतोक्ता, स च कश्चिदनुत्तरसुरेषूत्पद्यत इति तद्वक्तव्यतामाह—
(वृ० प० ६५०)

लवसत्तम देव पद

*चरण रयण सुध किरिया,
आ तो ज्ञान सहित अनुसरिया जी, चरण रयण सुध किरिया।
तिण सूं सव्वट्ठसिद्ध संचरिया जी, चरण रयण सुध किरिया।
शिव एक भवे अवतरिया जी, चरण रयण सुध किरिया।। (ध्रुपदं)

१५. प्रभु ! छे लवसत्तम देवा ? जिन कहै सुर छै सुखमेवा।

१५. अत्थि णं भंते ! लवसत्तमा देवा, लवसत्तमा देवा ?
हंता अत्थि। (श० १४।८४)

वा०—लव—शाल्यादिक नां करला लूणवा नीं प्रमाणै क्रिया नै काल नों विभाग, सत्तम—सात-सात नीं संख्याए मान प्रमाण जे काल ते लवसत्तम। ते लवसत्तम काल लगै आउखे अछते शुद्ध अध्यवसाय वर्तता छतां सिद्धि न गया पिण देव नै विषे ऊपनां ते लवसत्तमां। ते सर्वार्थसिद्ध नामा अनुत्तर विमान नां वासी।

वा०—लवाः—शाल्यादिकवलिकालवनक्रियाप्रमिताः कालविभागाः सप्त—सप्तसंख्या मानं—प्रमाणं यस्य कालस्यासौ लवसप्तमस्तं लवसप्तमं कालं यावदायुष्यप्रभवति सति ये शुभाध्यवसायवृत्तयः सन्तः सिद्धि न गता अपि तु देवेषूत्पन्नास्ते लवसप्तमाः, ते च सर्वार्थसिद्धाभिधानानुत्तरसुरविमाननिवासिनः।
(वृ० प० ६५१)

१६. किण अर्थे प्रभु ! इम कहियै, लव-सप्तम देव सुलहियै जी ?

१६. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—लवसत्तमा देवा, लवसत्तमा देवा ?

१७. जिन भाखै दे दृष्टंतो, कोइ पुरुष तरुण बलवंतो जी।
१८. जाव निपुण चतुराई, वलि शिल्प कला अधिकाई जी।
१९. शाल तणां कंड जाणी, अथवा व्रीही तणां पिछाणी जी।
२०. तथा गोहुं नां सोयो, अथवा जव नां अवलोयो जी।
२१. वलि जव-जव धान्य विशेखं, पाका सहु नां संपेखं जी।
२२. परिआयाणं कहिवाया, लवनीय अवस्था पाया जी।

१७. गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे
१८. जाव निउणसिप्पोवगए
१९. सालीण वा वीहीण वा
२०. गोधूमाण वा जवाण वा
२१. जवजवाण वा पक्काणं
२२. परियाताणं
परियायाणं' ति 'पर्यवगतानां' लवनीयावस्थां प्राप्तानां। (वृ० प० ६५१)

२३. हरिताणं पाठ उदारी, ते पीला थया अपारी जी।

२३. हरियाणं
'हरियाणं' ति पिङ्गीभूतानां। (वृ० प० ६५१)

*लय : सेव मुनी नीं कीजै

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. ते पत्र पीत पिण होई, तिणसुं आगल अवलोई जी।
२५. हरितकंडाणं भालो, थइ सहु नीं पीली नालो जी।

२६. तीखै दातरले ताही, तेहनैं नवो पाण चढाई जी।।

२७. सांकड़ी बीखरी नालो, बाहु करि ग्रही ततकालो जी।

२८. मुट्ठि ग्रहिवै करि तासं, संक्षेपी नैं सुविमासं जी।

२९. जाव इणामेव इत्यादि, तसु लवण क्रिया संवादि जी।
३०. तसु शीघ्रपणो देखायो, कहै हिवड़ां लूंणूं ताह्यो जी।
३१. इम कहितो चिबठी बजाई, करै काय क्रिया अधिकाई जी।

३२. शाल्यादिक नाल सलहियै, मूंठियो तास लव कहियै जी।
३३. ते लव प्रति लूणै ताह्यो, लूणतां सप्त लव थायो जी।

३४. हे गोतम ! सुण हिव लेखो, हुवै इतरो आयू शेषो जी।

३५. द्रव्य देवपणैं जे साधु, मनु भवे चरण आराधु जी।

३६. तो तिणहिज भव सीझंता, जावत दुख अंत करंता जी।

३७. ऊणो आयु सप्त लव त्यांही,
तिणसुं गया सव्वट्ठसिद्ध मांही जी।
३८. स्थिति में लवसत्तमा शिष्टं, छट्ठे सूगडांगे इष्टं जी।
३९. कह्यं वृत्तिकार इम भेवा, स्थिति परम अनुत्तर देवा जी।
४०. तिण अर्थे गोयम ! इम लहियै, लव-सप्तम देवा कहियै जी।

सोरठा

४१. लव-सप्तम आख्यात, ते अनुत्तर उपपातिका।
देव अनुत्तर जात, कहियै बे सूत्रे करी।

अणुत्तरोपपातिक देव पद

४२. *हे भगवंत ! छै स्वयमेवा, अनुत्तरोपपातिक देवा जी ?

४३. हंता अत्थि जिन भाखै, वलि गोतमजी इम दाखै जी।
४४. किण अर्थे प्रभु ! इम कहेवा, अनुत्तरोपपातिका देवा जी।

***लय : सेव मुनी नीं कीजै**

२४. ते च पत्रापेक्षयाऽपि भवन्तीत्याह— (वृ० प० ६५१)
२५. हरियकंडाणं
'हरियकंडाणं' त्ति पिङ्गीभूतजालानां। (वृ० प० ६५१)

२६. तिक्खेणं नवपज्जणएणं असिअएणं
'नवपज्जणएणं' ति नवं—प्रत्यग्रं 'पज्जणयं' ति प्रतापितस्यायोघनकुट्टनेन तीक्ष्णीकृतस्य पायनं—जलनिबोलनं यस्य तन्नवपायनं तेन 'असियएणं' ति दात्रेण। (वृ० प० ६५१)

२७. पडिसाहरिया-पडिसाहरिया
'पडिसाहरिय' त्ति प्रतिसंहृत्य विकीर्णनालान् बाहुना संगृह्य (वृ० प० ६५१)

२८. पडिसंखिविया-पडिसंखिविया
'पडिसंखिविय' त्ति मुष्टिग्रहणेन संक्षिप्य। (वृ० प० ६५१)

२९-३१. 'जाव इणामेव-इणामेव' त्ति कट्टु
'जाव इणामेवे' त्यादि प्रज्ञापकस्य लवनक्रियाशीघ्रत्वोपदर्शनपरचप्पुटिकादिहस्तव्यापारसूचकं वचनं। (वृ० प० ६५१)

३२,३३. सत्तलवे लुएज्जा।
'सत्तलवे' त्ति लूयन्त इति लवाः शाल्यादिनालमुष्टयस्तान् लवान् 'लूएज्ज' त्ति लुनीयात्। (वृ० प० ६५१)

३४. जदि णं गोयमा ! तेसिं देवाणं एवतियं कालं आउए पहुप्पते

३५. 'तेसिं देवाणं' त्ति द्रव्यदेवत्वे साध्ववस्थायामित्यर्थः। (वृ० प० ६५१)

३६. तो णं ते देवा तेणं चेव भवग्गहणेणं सिज्झंता जाव (सं० पा०) अंतं करेंता।

४०. से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—लवसत्तमा देवा, लवसत्तमा देवा। (श० १४।८५)

४१. लवसप्तमा अनुत्तरोपपातिका इत्यनुत्तरोपपातिकदेवप्ररूपणाय सूत्रद्वयमभिधातुमाह— (वृ० प० ६५१)

४२. अत्थि णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा, अणुत्तरोववाइया देवा ?
४३. हंता अत्थि। (श० १४।८६)
४४. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अणुत्तरोववाइया देवा, अणुत्तरोववाइया देवा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५. तब जिन भाखै गोयम नैं, अनुत्तरोपपातिक सुर नैं जी।
४६. अनुत्तर शब्द सुहाया, वलि रूप अनुत्तर पाया जी।
४७. जाव अनुत्तर फासा, तिण सूं तन मन हुवैं हुलासा जी।

वा०—अनुत्तर कहियैं सर्व प्रधान, अनुत्तर शब्दादिक विषय नां योग थकी उपपात जन्म ते अनुत्तरोपपात। ते अनुत्तर शब्दादि उपपात छै जे देवता नैं ते अनुत्तरोपपातिका कहियैं।

४८. तिण अर्थे एम कहेवा, अनुत्तरोपपातिका देवा जी।

४९. प्रभु! देव अनुत्तर देखो, कितै कर्म रह्या अविशेखो जी?
५०. अनुत्तरोपपातिका तेहो, सुरपणैं ऊपनां जेहो जी?
५१. तब भाखै श्री भगवंतो, जे श्रमण मुनी निर्ग्रन्थो जी।।
५२. जिता छठ भक्त रै मांह्यो, ओ तो कर्म निर्जरै ताह्यो जी।
५३. इता कर्म रह्या अवशेखो, इतलै अणखपियै लेखो जी।
५४. अनुत्तर उपपात सुरपणैं, उपनां इम प्रभुजी पभणैं जी।
५५. सेवं भंते! सुविशेषो, शत चवदम सप्तमुदेशो जी।
५६. बेसौ नव नेऊमीं ढालं, आ तो आखो बात रसालं जी।
५७. भिक्खु भारीमाल ऋषिराया, 'जय-जश' सुख हरष सवाया जी।

चतुर्दशशते सप्तमोद्देशकार्थः ।।१४।७।।

४५. *गोयमा!* अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं
४६. अणुत्तरा सद्दा अणुत्तरा रूवा
४७. जाव (सं० पा०) अणुत्तरा फासा।

वा० 'अणुत्तरोववाइय' त्ति अनुत्तरः—सर्वप्रधानोऽनुत्तरशब्दादिविषययोगात् उपपातो—जन्म अनुत्तरोपपातः सोऽस्ति येषां तेऽनुत्तरोपपातिकाः। (वृ० प० ६५१)

४८. से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ—अणुत्तरोववाइया-देवा, अणुत्तरोववाइया देवा। (श० १४।८७)
४९,५०. अणुत्तरोववाइया णं भंते! देवा केवतिएणं कम्मावसेसेणं अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववन्ना?
५१,५२. गोयमा! जावतियं छट्ठभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति।
५३. एवतिएणं कम्मावसेसेणं।
५४. अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववन्ना। (श० १४।८८)
५५. सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति। (श० १४।८९)

ढाल : ३००

दूहा

१. तुल्य रूप वस्तू तणो, धर्म सप्तमें ख्यात।
तेहिज अतररूप हिव, कहियै छै अवदात।।

१. सप्तमे तुल्यतारूपो वस्तुनो धर्मोऽभिहितः, अष्टमे त्वन्तररूपः स एवाभिधीयते। (वृ० प० ६५१)

अबाधा-अन्तर पद

*चतुर नर सांभलजो विस्तार। (ध्रुपदं)

२. प्रभु! रत्नप्रभा ए पृथ्वी तणैं रे, सक्करप्रभा मही जाण।
अबाधाए करि कह्यो रे, कितो अंतर जगभाण?
३. श्री जिन भाखै गोयमा रे, योजन असंख हजार।
अबाधाए अंतरो रे, आख्यो ते अवधार।।

२. इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए य पुढवीए केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?
३. गोयमा! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।९०)

सोरठा

४. बाधा मांहोमांहि, पीड़न ते संश्लेष थी।
बाधा पीड़न नांहि, तेह अबाधा जाणजो।।
५. अंतर शब्द कहाय, मध्य आदि जे अर्थ में।
ते टालण नैं ताय, अर्थ इहां व्यवधान छै।।

४. बाधा—परस्परसंश्लेषतः पीडनं न बाधा अबाधा। (वृ० प० ६५२)
५. इहान्तरशब्दो मध्यविशेषादिष्वर्थेषु वर्त्तमानो दृष्टस्ततस्तद्व्यवच्छेदेन व्यवधानार्थपरिग्रहार्थमबाधा-ग्रहणं। (वृ० प० ६५२)

---
*लय : राम पूछै सुग्रीव नैं रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. जोजन इहां पिछाण, प्राय प्रमाणांगुल[1] निष्पन्न।
पर्वत पृथ्वी विमाण, प्रमुख प्रमाणांगुल करी।।

७. ए अनुयोगजद्वार, दाख्यो छै तिण कारणै।
अंतर ए अवधार, जोजन प्रमाण अंगुले[2]।।

८. नगादो ग्रहण थकीज, रवि प्रकाशादिक तणुं।
प्रमाण अंगुलहीज, योजन मिणवुं छै तसु।।

९. अधोलोक जे ग्राम, प्राप्ती तिहां प्रकाश नीं।
आत्मांगुल नहिं ताम, तास अनियतपणैं करी।।

१०. उच्छेद अंगुल नांहि, ते अतिलघुपणैं करी।
प्रमाणांगुले ताहि, जोजन मिणवुं क्षेत्र नुं।।

११. सिद्धशिला थी जेह, लोक अंत नों अंतरो।
उत्सेधांगुल तेह, योजन प्रमित जणाय छै।।

१२. ते जोजन नें जाण, उपरितन इक क्रोस रै।
छट्ठै भाग पिछाण, सिद्ध तणी अवगाहणा।।

१३. त्रिण सय नें तेतीस, वलि अंगुल बत्तीस ही।
सिद्धां तणी जगीस, उत्कृष्टी अवगाहणा।।

१४. अवगाहना गिणेह, ते उत्सेधांगुल करी।
इम अंतर पिण एह, वृत्ति थकी ए आखियो।।

वा०—सिद्धिशिला रै अनैं अलोक रै देश ऊणो जोजन आंतरो ते उत्सेधांगुल संभवै, इम वृत्तिकार कह्यु। अनैं अनेरा अंतर प्रमाणांगुले जाणवा।

१५. *सक्करप्रभा पृथ्वी तणैं रे, वालुप्रभा रै नाथ!
अबाधाए अंतर कितो रे? एवं चेव कहात।।

१६. एवं जाव तमा तणैं रे, अधो सप्तमी धार।
ए बिहुं बिच अंतर तिको रे, जोजन असंख हजार।।

१७. प्रभु! सातमीं महि तणै रे, अलोक नें बलि न्हाल।
अबाधाए अंतर कितो रे? दाखो दीनदयाल!

१८. जिन भाखै सुण गोयमा! रे, जोजन असंख हजार।
अबाधाए अंतरो रे, ए वारू न्याय विचार।।

१९. ए रत्नप्रभा पृथ्वी तणै रे, ज्योतिषी नें भगवान।
अबाधाए अंतरो रे, केतलो कहियै जान?

२०. जिन कहै जोजन सातसौ रे, ऊपर नेऊ जाण।
अबाधाए अंतरो रे, शंका मूल म आण।।

२१. जोतिषी नें भगवंतजी! रे, सुधर्म नें ईशान।
अंतर कितरो आखियो रे, कृपा करो गुणखान!

६. इह योजनं प्रायः प्रमाणाङ्गुलनिष्पन्नं ग्राह्य 'नगपुढविविमाणाइं मिणसु पमाणंगुलेणं तु।' (वृ० प० ६५२)

८. इत्यत्र नगादिग्रहणस्योपलक्षणत्वादन्यथाऽऽदित्यप्रकाशादेरपि प्रमाणयोजनाप्रमेयतां स्यात्। (वृ० प० ६५२)

९. तथा चाधोलोकग्रामेषु तत्प्रकाशाप्राप्तिः प्राप्नोत्यात्माङ्गुलस्यानियतत्वेनाव्यवहाराङ्गतया रविप्रकाशस्योच्छ्रययोजनप्रमेयत्वात्। (वृ० प० ६५२)

१०. तस्य चातिलघुत्वेन प्रमाणयोजनप्रमितक्षेत्राणामव्याप्तिरिति। (वृ० प० ६५२)

११. यच्चेहेषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या लोकान्तस्य चान्तरं तदुच्छ्रयाङ्गुलनिष्पन्नयोजनप्रमेयमित्यनुमीयते। (वृ० प० ६५२)

१२. यतस्तस्य योजनस्योपरितनक्रोशस्य षड्भागे सिद्धावगाहना। (वृ० प० ६५२)

१३. धनुस्त्रिभागयुक्तत्रयस्त्रिंशदधिकधनुः शतत्रयमानाभिहिता। (वृ० प० ६५२)

१४. सा चोच्छ्रययोजनाश्रयणत एव युज्यत इति। (वृ० प० ६५२)

वा० 'देसूणं जोयणं' ति इह सिद्धचलोकयोर्देशोनं योजनमन्तरमुक्तं। (वृ० प० ६५२)

१५. सक्करप्पभाए णं भंते! पुढवीए वालुयप्पभाए य पुढवीए केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते? एवं चेव।

१६. एवं जाव तमाए अहेसत्तमाए य। (श० १४।९१)

१७. अहेसत्तमाए णं भंते! पुढवीए अलोगस्स य केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

१८. गोयमा! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।९२)

१९. इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए जोतिसस्स य केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

२० गोयमा! सत्तनउए जोयणसए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।९३)

२१ जोतिसस्स णं भंते! सोहम्मीसाणाण य कप्पाणं केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते?

---

१. ऋषभदेव भगवान री एक आंगुल, तिण नैं प्रमाण आंगुल कहियै।
२. अणुयोग० सूत्र ३८७,४१०
*लय: राम पूछै सुग्रीव नें रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. श्री जिन भाखै गोयमा ! रे, जोजन असंख हजार।
अबाधाए कर कह्यो रे, इतरो अंतर धार ॥

२२. गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।९४)

२३. सुधर्म अरु ईशाण नै रे, सनत्कुमार माहिंद।
अबाधाए अंतरो रे, एवं चेव कहिंद ॥

२३. सोहम्मीसाणाणं भंते ! सणंकुमार-माहिंदाण य केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ? एवं चेव। (श० १४।९५)

२४. सनत्कुमार महेंद्र नै रे, ब्रह्मलोक नैं ताय।
अबाधाए अंतरो रे, एवं चेव कहाय ॥

२४. सणंकुमार-माहिंदाणं भंते ! बंभलोगस्स कप्पस्स य केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ? एवं चेव। (श० १४।९६)

२५. ब्रह्मलोक देवलोक नै रे, लंतक नैं वलि फेर।
अबाधाए अंतरो रे, एवं चेवज हेर ॥

२५. बंभलोगस्स णं भंते ! लंतगस्स य कप्पस्स केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ? एवं चेव। (श० १४।९७)

२६. लंतक नैं महाशुक्र नैं रे, अंतर ते इम हीव।
महाशुक्र सहसार नै रे, एवं चेव कहीव ॥

२६. लंतयस्स णं भंते ! महासुक्कस्स य कप्पस्स केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ? एवं चेव। एवं महासुक्कस्स कप्पस्स सहस्सारस्स य।

२७. सहसार देवलोक नै रे, आणत पाणत नैंज।
इमहिज अंतर जाणवो रे, जोजन सहस्र असंखेज ॥

२७. एवं सहस्सारस्स आणय-पाणयाण य कप्पाणं।

२८. आणत पाणत कल्प नै रे, आरण अच्चु नैं धार।
एवं अंतर जाणवो रे, जोजन असंख हजार ॥

२८. एवं आणय-पाणयाणं आरणच्चुयाण य कप्पाणं।

२९. आरण अच्चू कल्प नै रे, वलि ग्रैवेयक विमान।
अबाधाए अंतरो रे, एवं चेव पिछान ॥

२९. एवं आरच्चुयाणं गेवेज्जविमाणाण य।

३०. इम ग्रैवेयक विमाण नै रे, वलै अनुत्तर विमाण।
सहस्र असंख जोजन तणो रे, अंतर इमज पिछाण ॥

३० एवं गेवेज्जविमाणाणं अणुत्तरविमाणाण य। (श० १४।९८)

३१. प्रभु ! अनुत्तर विमाण नै रे, पृथ्वी ईसिपब्भार।
कितो विचालै अंतरो रे ? जिन कहै जोजन बार ॥

३१. अणुत्तरविमाणाणं भंते ! ईसिपब्भाराए य पुढवीए केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?
गोयमा ! दुवालस जोयणे अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।९९)

३२. ईसिपब्भारा मही तणै रे, अलोक नैं प्रभु ! पेख।
अंतर पूछयां जिन कहै रे, देसूण जोजन एक ॥

३२. इसिपब्भाराए णं भंते ! पुढवीए अलोगस्स य केवतिए अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?
गोयमा ! देसूणं जोयणं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। (श० १४।१००)

सोरठा

३३. अनंतरे अवदात, पृथव्यादिक अंतर कह्यो।
ते जीवां नैं ख्यात, तिण कारण हिव आगलै ॥
३४. जीव विशेषज ताय, गति आश्रयी नैं ए इहां।
सूत्र तीन कहिवाय, श्रोता चित दे सांभलो ॥

३३,३४. अनन्तरं पृथिव्याद्यन्तरमुक्तं तच्च जीवानां गम्यमिति जीवविशेषगतिमाश्रित्येदं सूत्रत्रयमाह— (वृ० प० ६५२)

वृक्षों का पुनर्भव पद

३५. *साल रूंख ए स्वामजी ! रे, रवि प्रमुख तापेन।
प्रगट हणाणो अधिकही रे, तृषाइं व्यापेन ॥

३५. एस णं भंते ! सालरुक्खे उण्हाभिहए तण्हाभिहए

३६. दव नीं अग्नी आकरी रे, तसु ज्वालाए जाण।
एह हणाणो अति घणो रे, साल रूंख पहिछाण ॥

३६. दवग्गिजालाभिहए।

३७. काल मास काल समय नै रे, काल करीनै ताम।
जास्यै किण गति जीवड़ो रे, ऊपजस्ये किण ठाम ?

३७. कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिहिति ? कहिं उववज्जिहिति।

*लय : राम पूछै सुग्रीव नै रे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. जिन भाखै इणहिज पुरे रे, राजगृह नगर जगीस।
शालज वृक्षपणैं सही रे, उपजस्यै सुण शीस।
३९. ते तिहां चंदनादिक करी रे, अर्चित अधिक जगेण।
वंदित स्तवनाए करी रे, पूजित पत्रादिकेण ।।
४०. सत्कार ते वस्त्रादिके रे, सन्मानित कर जोड़।
दिव्य प्रधान हुस्यै तरू रे, जश कीर्त्ति बहु ठोड़ ।।
४१. सच्चे सत्यवादी तिको रे, सच्चोवाये तास।
सेव करै तसु फल दियै रे, सेव सफल सुविमास ।।

४२. कस्मात किण कारण थकी रे, एहवो तरुवर ताय।
अर्चित पूजत आदि छै रे, निसुणो तेहनों न्याय ।।
४३. सण्णीहिय कीधो पछै रे, पाडिहेर प्रतिहार्य।
कीधो प्रतिहार्य कर्म नें रे, सान्निध्य तसु सुर आर्य ।।

४४. इतरै पूरव भव तणो रे, सान्निध्य मित्री देव।
सेवा सफल करै तिको रे, पूरै चिंतित भेव।
४५. ते वृक्षपीठ लीप्यो छतो रे, धोल्यो पूज्यो पेख।
एहवो ए तरुवर हुस्यै रे, वलि शिष्य पूछै शेख ।।
४६. ते प्रभु! तरु नों जीवड़ो रे, तिहां थकी पहिछान।
नीकल किण गति जायस्यै रे, ऊपजस्यै किण स्थान ?
४७. जिन कहै क्षेत्र विदेह में रे, एह सीझस्यै शीस!
जावत सगला दुख तणो रे, करिस्यै अंत जगीस ।।
४८. द्वितीय प्रश्न पूछै वली रे, प्रभु! शाल वृक्ष छै एह।
हणाणी तसु लाकड़ी रे, रवि प्रमुख तापेह ।।
४९. जाव हणी दव ज्वाल थी रे, काल समय करि काल।
जास्यै ऊपजस्यै किहां रे? हिवै दाखै दीनदयाल ।।
५०. एहिज जंबू भरत में रे, विंजगिरि नैं जाण।
पायमूल कहितां थकां रे, अतिहि नजीक पिछाण ।।
५१. महेस्सरी नगरी तिहां रे, सामली रूंखपणेह।
ऊपजस्यै तिहां तिका रे, अर्चित वंदित जेह ।।
५२. यावत ते तरुपीठ नैं रे, लीपित धवलित जान।
पूजित ते तरुवर हुस्यै रे, हिव गोतम कहै वान ।।
५३. अंतर रहित तिहां थकी रे, नीकल नें हे भंत!
शेष साल तरु जिम सहू रे, जावत करिस्यै अंत ।।

५४. तृतीय प्रश्न पूछै वली रे, प्रत्यक्ष हे भगवान!
ऊपरली ए लाकड़ी रे, शाल तरू नी जान ।।
५५. उष्ण तृषा दव थी हणी रे, काल मास कर काल।
जास्यै ऊपजस्यै किहां रे? हिव जिन उत्तर न्हाल ।।

३८. गोयमा! इहेव रायगिहे नगरे सालरुक्खत्ताए पच्चायाहिती।
३९,४०. से णं तत्थ अच्चिय-वंदिय-पूइय-सक्कारिय-सम्माणिए दिव्वे।

४१. सच्चे सच्चोवाए।
'सच्चोवाए' त्ति सत्यावपातः सफलसेवः।
(वृ० प० ६५३)
४२. कस्मादेवमित्यत आह— (वृ० प० ६५३)

४३. सन्निहियपाडिहेरे।
'सन्निहियपाडिहेरे' त्ति संनिहितं—विहितं प्रातिहार्यं—प्रतीहारकर्म्म सांनिध्यं देवेन यस्य स तथा।
(वृ० प० ६५३)

४५. लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ। (श० १४।१०१)

४६. से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति?
४७. गोयमा! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव सव्व-दुक्खाणं अंतं काहिति। (श० १४।१०२)
४८,४९. एस णं भंते! साललट्ठिया उण्हाभिहया तण्हाभिहया दवग्गिजालाभिहया कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति?

५०. गोयमा! इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विंझगिरि-पायमूले
५१. महेसरिए नगरीए सामलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति से णं तत्थ अच्चिय-वंदिय
५२. जाव (सं० पा०) लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ।
(श० १४।१०३)
५३. से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति?
गोयमा! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव सव्व-दुक्खाणं अंतं काहिति। (श० १४।१०४)
५४. एस णं भंते! उंबरलट्ठिया

५५. उण्हाभिहया तण्हाभिहया दवग्गिजालाभिहया काल-मासे कालं किच्चा कहिं गमिहिति? कहिं उववज्जिहिति?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६. एहीज जंबू भरत में रे, पाडलीपुत्त नगरेह।
पाडली रूखपणैं तिको रे, तिहां उपजस्यै एह।।
५७. अर्चित वंदित ते तिहां रे, जाव होस्यै पूजनीक।
सुर सान्निध्यकारी हुस्ये रे, पूरववत रमणीक।।
५८. अंतर रहित तिहां थकी रे, नीकल नैं भगवंत!
शेष तिमज जावत तिको रे, करिस्यै दुख नो अंत।।

५६. गोयमा! इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पाडलिपुत्ते नगरे पाडलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति।
५७. से णं तत्थ अच्चिय-वंदिय जाव (सं० पा०) भविस्सइ। (श० १४।१०५)
५८. से णं भंते! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सेसं तं चेव जाव (सं० पा०) अंतं काहिति। (श० १४।१०६)

सोरठा

५९. शाल वृक्षादिक मांय, यद्यपि जीव अनेक ह्वै।
प्रथम जीव पेक्षाय, सूत्र तीन इम वृत्ति में।।

६०. इह विधि प्रश्न पिछाण, वणस्सइ जीवपणां प्रतै।
श्रोता अश्रद्धान, तसु पेक्षा शिष्य प्रश्न कृत।।
६१. *चवदम शत देश अष्टमो रे, तीनसौमीं ए ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी रे,
'जय-जश' हरष विशाल।।

५९. इह च यद्यपि शालवृक्षादावनेके जीवा भवन्ति तथाऽपि प्रथमजीवापेक्षं सूत्रत्रयमभिनेतव्यं। (वृ० प० ६५३)
६०. एवंविधप्रश्नाश्च वनस्पतीनां जीवत्वमश्रद्दधानं श्रोतारमपेक्ष्य भगवता गौतमेन कृता इत्यवसेयमिति। (वृ० प० ६५३)

ढाल : ३०१

अम्मड अन्तेवासी पद

दूहा

१. तिण काले नैं तिण समय, अमड़ नाम परिव्राज।
तेहनां चेला सात सय, ग्रीष्म समय अतिसाज।।
२. इम जिम उववाई विषे, जाव आराधक होय।
ते संक्षेप थकी इहां, कहियै छे अवलोय।।

†शीस अमड़ नां रे, श्रमणोपासग साचा।
कष्ट पड़्यो पिण नेम न खंड्यो, जतन रतन व्रत जाचा।। (ध्रुपदं)
३. ग्रीष्मकाल समये इक दिवसे, गंगा नां पहिछाणी।
उभयकूल थी कांपिलपुर थी, चाल्या उत्तम प्राणी।।
४. पुरिमतालपुर प्रति चाल्या ते, पैठा अरण्य जिवारै।
पूर्वे ग्रह्यो ते उदक पीवंतां, क्षीण थयो जल त्यारै।।

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं अम्मडस्स परिव्वायगस्स सत्त अंतेवासिसया गिम्हकालसमयंसि।
२. एवं जहा ओववाइए (सू० ११५-११७) जाव आराहगा। (पा. टि. ५)

३. जेट्ठामूलमासंमि गंगाए महानदीए उभओकूलेणं कंपिल्लपुराओ नगराओ
४. पुरिमतालं नयरं संपट्ठिया विहाराए। (श० १४।१०७)
तए णं तेसिं परिव्वायगाणं तीसे अगामियाए छिण्णावायाए दीहमद्धाए अडवीए कंचि देसंतरमणुपत्ताणं से पुव्वग्गहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजमाणे झीणे। (श० १४।१०८)

५. तृषाऽऽक्रांत अतिहि तनु पीड़ित, उदक तणां दातारं।
आज्ञा देणवालो अणलाधे, मन मांहे करै विचार।।

५. तए णं ते परिव्वाया झीणोदगा समाणा तण्हाए पारब्भमाणा-पारब्भमाणा उदगदातारमपस्समाणा

*लय : राम पूछै सुग्रीव नैं रे
†लय : जयवर गणपति रे मनड़ो तुम सूं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. मांहोमांहि एकठा मिलनै, इम बोल्या तिणवारं।
अरण्य विषे जल पीतां खूटो, देखो हिव दातारं।।

६. अण्णमण्णं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! से⋯पुव्वग्गहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजमाणे झीणे। तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं इमीसे अगामियाए छिण्णावायाए दीहमद्धाए अडवीए उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करित्तए त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति।

७. उदक तणां दातार तणी तब, सहु दिशि विदिशि मझारं।
गवेषणा कीधी अति अधिकी, देख्यो नहिं दातारं।।

७. ⋯उदगदातारस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेंति, करेत्ता उदगदातारमलभमाणा

८. दूजी वार माहोमां तेड़ी, इम बोल्या गुणधारं।
अहो देवानुप्रिया! इण अरण्ये, दीसै नहिं दातारं।।

८. दोच्चं पि अण्णमण्णं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—इहण्णं देवाणुप्पिया! उदगदातारो नत्थि।

९. निश्चै कर अमनैं नहि कल्पै, अणदीधुं जल लेवूं।
अदत्त भोगवूं पिण नहि कल्पै, अडिगपणै हिव रहिवूं।।

९. तं नो खलु कप्पइ अम्हं अदिण्णं गिण्हित्तए, अदिण्णं साइज्जित्तए।

१०. हिवड़ा रखे आपदा काले, अदत्त उदक लिवराइं।
अणदीधुं जल प्रति भोगवियां, रखे व्रत भंग थाइं।।

१०. तं मा णं अम्हे इयाणिं आवइकालं पि अदिण्णं गिण्हामो, अदिण्णं साइज्जामो मा णं अम्हं तवलोवे भविस्सइ।

११. तो श्रेय कल्याण निश्चै करि अमनैं देवानुप्रिय न्हालं।
त्रिदंड कमंडल एगंत एडो, वली रूद्राक्ष नीं मालं।।

११. तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया! तिदंडए य कुंडियाओ य कंचणियाओ य

१२. माटी तणो अछै जे भाजन, पाटली वलि बेसेवा।
त्रिकाष्टका अंकुश फल लेवा, चीवर खंड पूंजेवा।।

१२. करोडियाओ य भिसियाओ य छण्णालए य अंकुसए य केसरियाओ य

१३. तांबा तणी पवित्रो ते तो, अंगुली आभरण कहियै।
कलाचिका ते कर नों आभरण, एकंत ते परठवियै।।

१३. पवित्तए य गणेत्तियाओ य

१४. मस्तक धरवा नो वलि छत्रज, वाहण पग नां तलिया।
काष्ठ पावड़ी गेरू रंग्या वस्त्र तजे मनरलिया।।

१४. छत्तए य वाहणाओ य धाउरत्ताओ य

१५. एकंते ए सहु न्हाखी नैं, गंगा विषे उतरी नैं।
वेलू तणो साथरो करनैं, भात पाणी पचखी नैं।

१५. एगंते एडित्ता गंगं महानइं ओगाहित्ता वालुयासंथारए संथरित्ता संलेहणा-झूसियाणं भत्तपाणपडियाइक्खियाणं

१६. पाओवगमन काल अणवंछत, विचरां एम कही नैं।
अन्यो अन्य समीप सुणी, त्रिदंडादिक न्हाखी नैं।।

१६. पाओवगयाणं कालं अणवकंखमाणाणं विहरित्तए त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता तिदंडए य कुंडियाओ य⋯ ⋯एगंते एडेंति।

१७. गंग विषे उतरी नैं वेलू-संथारो संथर नैं।
बेसै वेलू तणै साथरै, पूर्व दिशी मुख करनैं।।

१७. एडेत्ता गंगं महानइं ओगाहेंति, ओगाहेत्ता वालुया-संथारए संथरंति, संथरित्ता वालुयासंथारयं दुरुहंति, दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहा

१८. संपल्यंक आसण बैसी नैं, बे कर जोड़ी ताह्यो।
सिद्धां प्रतै नमोत्थुणं धुर, गुणियो हरष सवायो।।

१८. संपलियंकनिसण्णा करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—
नमोत्थु णं अरहंताणं जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं।

१९. भगवंत श्री महावीर प्रतै वलि, नमोत्थुणं विधि रीतं।
जावत भुक्ति जावा रा कामी, विचरंता सुवदीतं।।

१९. नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. नमस्कार होयजो अम्मड़, परिव्राजक नैं पहिछाणी।
म्हारा धर्म आचार्य धर्मउपदेशक छै तसु जाणो।।

सोरठा

२१. 'संन्यासी नों धर्म, धर्माचार्य तेहनों।
तास धर्म नों मर्म, उपदेशक पिण ते हुंतो।।
२२. तिण सुं लोकिक हेत, नमस्कार तिण नैं कियो।
जिन आज्ञा नहिं तेथ, धर्म नहीं छै तेह में।।
२३. जिन धर्म पिण तिण पास, पाम्यो तो पिण तेहथी।
पूरव तांतो तास, तूटो नहि तिण कारणैं।।
२४. पहिलां पिण तसु तेह, नमस्कार करता हुंता।
अंतकाल पिण एह, पक्ष न तूटो ते भणी।।
२५. उष्ण उदक परिहार, सचित्त उदक वहितो लिये।
ते पिण दीधो धार, ते पिण पक्षज मत तणो।।
२६. गुरु चेलां री रीत, नमस्कार करता हुंता।
अंतकाल संगीत, तेहिज विधि त्यां साचवी।।
२७. सिद्ध अरिहन्त नैं जाण, नमस्कार लोकोत्तरे।
अम्मड़ प्रति पहिछाण, नमस्कार लोकीक मग।।
२८. सिद्ध अरिहंत नैं सार, नमस्कार जिन आण है।
अम्मड़ नैं नमस्कार, तिणमें जिन आज्ञा नथी।।
२९. सिद्ध अरिहंत नैं सार, सामायिक पोसा मभे।
नमस्कार थी धार, कर्म निर्जरा पुन्य बंध।।
३०. अम्मड़ नैं नमस्कार, सामायिक पोसा मभै।
करै कोई अवधार, तो भागै व्रत तेहनों।।
३१. सिद्ध अरिहंत नैं सार, नमस्कार निरवद्य छै।
अम्मड़ नैं नमस्कार, कीधां सावज जोग है।।
३२. श्रावक पासे कोय, धर्म पाय व्रत आदरचा।
सामायिक में जोय, नमस्कार न करै तसु।।
३३. सामायिक में जाण, त्याग जोग सावज तणां।
तिण कारण पहिछाण, सावज जाणी ए तज्यो।।
३४. सामायिक रै मांय, नमस्कार गृहि नै करै।
व्रत भंग तसु थाय, तिमहिज अम्मड़ नैं कियां।।
३५. अम्मड़ नैं नमस्कार, संथारो कीधां प्रथम।
पाप तणों परिहार, नहिं कीधो तिण अवसरे।।
३६. त्याग्या पाप अठार, तठा पछै शिष्य अम्मड़ नां।
निज गुरु नै नमस्कार, न कियो तेह विचारजो।।
३७. केइ अज्ञानी तास, एहवी करै परूपणा।
धर्म पायो जिण पास, नमस्कार करवो तसु।।
३८. सरधै तिण में धरम, तो सामायिक पोसा मभै।
ते उपगारी परम, किम नमस्कार तसु नहिं करै।।
३९. ए जाणै निरवद्य जोग, तो सामायिक नैं विषे।
निरवद्य तणो प्रयोग, ते तो त्याग्यो छै नथी।।

२०. नमोत्थु णं अम्मडस्स परिव्वायगस्स अम्हं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०. जो सावज जोग जाणेह, तिण सुं सामायिक विषे।
नमस्कार न करेह, खुलो कियां पिण धर्म नहीं ।।
४१. सम्यक्त व्रत दातार, उपगारी जाणैं परम ।।
तो पिण तसु नमस्कार, मुनि विण कीधां धर्म नहीं ।।
४२. भेषधारी पैं ताय, वलि पछाकड़ा श्रावक कनैं।
मुनि दंड लेई शुद्ध थाय, पिण नमस्कार न करै तसु ।।
४३. इम आख्यो ववहार[1], प्रथम उदेशा नैं विषे।
इम भाख्यो जगतार, अंतर न्याय आलोचियै ।।
४४. पद आराधक सार, पायो पछाकड़ा थकी।
वलि द्रव्यलिंगी थी धार, पिण नमस्कार न करै तसु ।।
४५. धर्म लह्यो जिण पास, नमस्कार थापै तसु।
तेहनैं लेख विमास, सिर देणो पग नैं विषे ।।
४६. ठाकुर चाकर पास, देश विरत समकत लह्या।
तेहनै लेख विमास, चाकर नैं पग लागवो ।।
४७. धनवंत रंकज पास, समझी नैं व्रत आदरया।
तेहनैं लेख विमास, रंक तणैं पग लागवो ।।
४८. सेठ वाणोत्तर पास, देश विरत सम्यक्त लह्यां।
तेहनैं लेख विमास, नमणां वाणोत्तर पगे ।।
४९. पिता पुत्र नैं पास, देश विरत सम्यक्त्व लह्यां।
तेहनैं लेख विमास, पुत्र तणैं पग लागवो ।।
५०. सासू बहु नैं पास, धर्म अपूरव पामियां।
तेहनैं लेख विमास, बहू तणैं पग लागणो ।।
५१. इत्यादिक अवलोय, धर्म पामियो जे कनैं।
तेहनैं लेखै सोय, पगे लाग नमवो तसु ।।
५२. चाकर रंक विचार, वाणोत्तर सुत नैं बहु।
एह भणी अवधार, पगे लगावै नृप प्रमुख ।।
५३. तो पूरो अवनीत, तेहनैं लेखै छै तसु।
पायो धर्म प्रतीत, पगे लगावै तास किम ।।
५४. केई वदै इम वाय, विनय मुनी नो मुनि करै।
तिम श्रावक पिण ताय, बड़ां तणो करवो विनय ।।
५५. तो चाकर आदि विचार, पहिलां विरतज आदरयां।
बड़ा श्रावक ते धार, पछै ठाकुर प्रमुख थयां ।।
५६. तसु लेखै सुविमास, पगे लाग करिवूं विनय।
मुनि ज्यूं रीत प्रकाश, न किया ते अवनीतड़ा ।।
५७. सावज विनय थापंत, प्रश्न पूर्व पूछयां तसु।
पग-पग में अटकंत, बुद्धिवंत न्याय विचारियै ।।
५८. तिण कारण अवलोय, विनय करै श्रावक तणो।
जिन आज्ञा नहिं कोय, धर्म नहीं आज्ञा विना ।।
५९. अम्मड़ नैं नमस्कार, चेलां कीधो छै इहां।
ए लोकिक आचार, तसु हुंतो जिसो जिन भाखियो ।।' (ज० स०)

---

१. १।३३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*चतुर विचार करीनैं देखो। (ध्रुपदं)

६०. संख नैं पोखली जीमण कीधो, ते तो आपणैं छांदै रे।
तिणनैं सरावै मूढ अग्यानी, कर्म तणां पुंज बांधै रे।।

६१. तिण जीमण नैं माठो जाणी, पोसो कर दियो त्यागी रे।
पक्खी रै दिन पाप नैं पचख्यो, संख बड़ो वैरागी रे।।

६२. उपला श्रावका पोखली घर आयां,
विनय कियो शीस नमायो रे।
ते तो छांदो आपणो जाण्यो, ते भगवंत नहीं सिखायो रे।।

६३. नमस्कार अम्मड़ नैं कियो चेलां,
ते सूत्र उववाई[1] में चाल्यो रे।
भगवंत भाव दीठा जिम भाख्या,
जिण धर्म में नहिं घाल्यो रे।।

६४. नवकार नां पद पंच परूप्या, श्रावक नैं दियो टालो रे।
जिन आगन्या नहिं गृहस्थ वांदण री,
भगवंत वचन संभालो रे।।

६५. माहोमां विनय वियावच कीधां, वीर तो नहीं वखाण्या[2] रे।
गृहस्थ रा कार्य सावज्ज दीठा,
मन कर नैं भला नहिं जाण्या रे।

६६. †पूर्वे पिण म्है अमड परिव्राजक, पास अणुव्रत धरिया।
स्थूल प्राणातिपात म्है पचख्या, जावजीव आदरिया।।

६७. स्थूल मृषा नै स्थूल अदत्तज, सर्व मिथुन पहिछाणं।
स्थूल परिग्रह ए सगलाई, जावजीव पचखाणं।।

६८. हिवडा पिण भगवंत श्रमण, महावीर समीप सुसाखं।
सर्व प्राणातिपात पचखां छां, जावजीव अभिलाखं।।

६९. जावत सर्व परिग्रह पचखां, सर्व क्रोध अरु माणं।
माया लोभ पेज्ज अरु द्वेषज, कलह अनैं अब्भक्खाणं।।

७०. पेसुण परपरिवाद अरति-रति, मायामोस पिछाणं।
मिथ्या-दर्शणशल पचखां छां, जावजीव लग जाणं।।

७१. सर्व अशन पाणं अरु खादम, स्वादम चउविध आहारं।
तेहनां म्है पचखाण करां छां, जावजीव लग सारं।।

७२. ए तनु म्हारो छै ते पिण मुझ, वल्लभ इष्ट वखानं।
कांत कमनीय प्रिय सुंदर मनगमतो अति पहिछानं।।

७३. अतिमनगमतो धेज्ज विश्वास तणुं हेतू ए जानं।
करणहार कार्य नों ए तनु, तिणसूं सम्मत मानं।।

६६. पुव्विं णं अम्हेहिं अम्मडस्स परिव्वायगस्स अंतिए थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए,

६७. मुसावाए अदिण्णादाणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए, सव्वे मेहुणे पच्चक्खाए जावज्जीवाए, थूलए परिग्गहे पच्चक्खाए जावज्जीवाए।

६८. इयाणिं अम्हे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामो जावज्जीवाए।

६९. सव्वं···परिग्गहं पच्चक्खामो जावज्जीवाए सव्वं कोहं माणं मायं लोहं पेज्जं दोसं कलहं अब्भक्खाणं

७०. पेसुण्णं परपरिवायं अरइरइं मायामोसं मिच्छादंसण-सल्लं अकरणिज्जं जोगं पच्चक्खामो जावज्जीवाए।

७१. सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं—चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामो जावज्जीवाए।

७२. जं पि य इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं मणुण्णं

७३. मणामं पेज्जं वेसासियं संमयं

***लय : चतुर विचार करी नै देखो**

१. सू० ११७

२. पद्य संख्या ६० से ६५ तक आचार्य भिक्षु द्वारा रचित है।

†लय : जयवर गणपति रै मनड़ो तुम सूं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७४. बहुमत बहु नैं इष्टपणां थी, तथा बहु कार्य कृतानं।
अनुमत बिगड़या कार्य नैं, पिण एह सुधारै जानं ।।
७५. आभरण तणां करंडिया सरिखो, रखे शीत मुझ लागे।
रखे उष्ण पिण लागे मुझ नैं, जत्न करां धर रागे ।।
७६. रखे क्षुधा नैं तृषा मुझ लागे, रखे सर्प चटकावे।
तसकर रखे दिये दुख मुझ नैं, रखे डंस मंस खावे ।।
७७. रखे वाय पित्त श्लेषम कफ, सन्निपात त्रिदोषज सोय।
विविध रोग आतंक परीसह, उपसर्ग परिसह कोय ।।
७८. एहवो तनु पिण चरम उस्सास निस्सासे करि वोसिरावां।
इम कहि संलेखणा तनु दुर्बल झूसणा सेवन भावां ।।
७९. भातपाणी पचखी पाओवगमन, अणसण ज्यां लीधा।
विचरैं काल मरण अणवंछता, अडिगपणैं मन कीधा ।।
८०. परिव्राजका तिके तिण अवसर, घणां भक्त नां धामी।
अणसण छेदै आलोवी, पड़िकमी समाधिज पामी ।।
८१. काल करी नैं पंचम कल्पे, देवपणेंज उपन्ना।
दश सागर स्थिति वर परलोक तणां आराधक जन्ना ।।

७४. बहुमयं अणुमयं

७५. भंड-करंडग-समाणं मा णं सीयं, मा णं उण्हं,

७६. मा णं खुहा, मा णं पिवासा, मा णं वाला, मा णं चोरा, मा णं दंसा, मा णं मसगा,

७७. मा णं वाइय-पित्तिय-सिंभिय-सन्निवाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतु

७८. त्ति कट्टु एयंपि णं चरिमेहिं ऊसासनीसासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु संलेहणा-झूसिया

७९. भत्तपाण-पडियाइक्खिया पाओवगया कालं अणवकंखमाणा विहरंति।

८०. तए णं ते परिव्वाया बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति, छेदित्ता आलोइय-पडिक्कंता समाहिपत्ता

८१. कालमासे कालं किच्चा बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववण्णा।
तेसि णं भंते ! देवाणं····दससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता।
ते णं भंते ! देवा परलोगस्स आराहगा ?
हंता अत्थि। (श० १४।१०९)

८२. शत चवदम अष्टम नुं नाम ए, ढाल तीन सय एकं।
भिक्खु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे,
'जय-जश' हरष विशेखं ।।

ढाल : ३०२

दूहा

अम्मड चर्या पद

१. हे प्रभु ! बहु जन अण्णमण्ण, एहवा वच आख्यात।
भाखै नैं पन्नवै वली, परूपणा अवदात ।।
२. अम्मड़ इम निश्चै करी, परिव्राजक पहिछाण।
कंपिलपुर में सौ घरां, जिम उववाई जाण ।।
३. वक्तव्यता अम्मड़ तणी, जावत दढ्ढपइन्न।
करिस्यै अंतज दुःख नों, क्षेत्र विदेह सुचिन्न ।।
४. विस्तर उववाई विषे, इहां कहीजै लेश।
कंपिलपुर में जन कनैं, गोतम सुण पूछेस ।।
५. अम्मड़ सौ घर नैं विषे, आहार प्रति आहरंत।
सौ घर वसवो सूयवो, ए सम काल करंत ।।

१. बहुजणे णं भंते ! अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ।

२. एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे नगरे घरसए एवं जहा ओववाइए

३. अम्मडस्स वत्तव्वया जाव (सं० पा०) दढपइण्णो अंतं काहिति।

४,५. 'एवं जहे' त्यादिना यत्सूचितं तदर्थतो लेशेनैवं दृश्यं—भुङ्क्ते वसति चेति, एतच्च श्रुत्वा गौतम आह—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. हे प्रभुजी ! ते किम अछै ? तब भाखै भगवान ।
हे गोतम ! ए सत्य वच, हूं पिण इम आख्यान ।।

७. किण अर्थे प्रभु ! एह वच ? तब भाखै जिनराज ।
अम्मड़ परिव्राजक प्रकृतिभद्रिक विनय समाज ।।

८. छठ-छठ तप आतापना, प्रवर शुभ परिणाम ।
प्रशस्त अध्यवसाय फुन, लेश विशुद्धज पाम ।।

९. कर्म तदावरणी तणो, क्षयोपशम कर खंत ।
करतां भली विचारणा, वीर्य लब्धि उपजंत ।।

१०. वैक्रिय-लब्धि समुप्पनी, अवधिज्ञान नीं जाण ।।
लब्धि अमड़ नैं ऊपनीं, तिण करनैं पहिछाण ।।

११. जन विस्मय उपजायवा, कंपिलपुर रै मांय ।
सौ घर भोजन आचरचो, सौ घर वासो ठाय ।।

१२. आप कनैं अम्मड़ प्रभु ! लेस्यै संजम भार ?
जिन कहै अर्थ समर्थ नहीं, वर द्वादश व्रत धार ।।

१३. इत्यादिक विस्तार बहु, मास तणो संथार ।
थइ आराधक कल्प ब्रह्म, दश सागर स्थिति सार ।।

१४. चवी विदेहे दिप्त कुल, दड्ढपइन्नो नाम ।
चरण ग्रही केवल लही, वरस्यै शिवपद धाम ।।

१५. पूर्वे शिष्य अम्मड़ तणां, देवपणैं उत्पन्न ।
हिव उद्देश समाप्ति लग, सुर अधिकार कथन्न ।।

अव्याबाध-देवशक्ति पद

*जिन-वाण सुधारस जाणियै ।। [ध्रुपदं]

१६. छै प्रभु ! अव्याबाधा देवा ? जिन कहै हंता जाणियै ।
अबाधा पीड़ा अनेरा नैं न करै, लोकंतिक में माणियै ।।

सोरठा

१७. नव लोकांतिक एह, तेह विषे जे सातमों ।
अव्याबाध कहेह, ते सुर नों अधिकार ए ।।

*लय : बलिहारी भीखणजी स्वाम की

६. से कहमेयं भंते ?
एवं खलु गोयमा ! ......सच्चे णं एसमट्ठे अहंपि णं गोयमा ! एवमाइक्खामि........ (श० १४।११०)

७. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ......
गोयमा ! अम्मडस्स णं परिव्वायगस्स पगइभद्दयाए ...विणीययाए ।

८. छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं लेसाहिं विसुज्झमाणीहिं

९. अण्णया कयाइ तदावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहापूह-मग्गण-गवेसणं करेमाणस्स वीरियलद्धीए

१०. वेउव्वियलद्धीए ओहिनाणलद्धी समुप्पण्णा....

११. जणविम्हावणहेउं कंपिल्लपुरे नगरे घरसए आहारमाहरेइ, घरसए वसहिं उवेइ । (श० १४।१११)

१२. पहू णं भंते ! अम्मडे परिव्वायए देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?
नो इणट्ठे समट्ठे । गोयमा ! अम्मडे णं परिव्वायए समणोवासए....सीलव्वय-गुण-वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासेहिं अहापरिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ । (श० १४।११२)

१४. ततश्च्युतश्च महाविदेहे दृढप्रतिज्ञाभिधानो महर्द्धिको भूत्वा सेत्स्यतीति । (वृ० प० ६५३)

१५. अयमेतच्छिष्याश्च देवतयोत्पन्ना इति देवाधिकाराद्देववक्तव्यतासूत्राण्युद्देशकसमाप्ति यावत् ।
(वृ० प० ६५३)

१६. अत्थि णं भंते ! अव्वाबाहा देवा, अव्वाबाहा देवा ?
हंता अत्थि । (श० १४।११३)
'अव्वाबाह' त्ति व्याबाधन्ते—परं पीडयन्तीति व्याबाधास्तन्निषेधादव्याबाधाः, ते च लोकान्तिकदेवमध्यगता द्रष्टव्याः । (वृ० प० ६५४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. *किण अर्थे प्रभु ! अव्याबाधा, देवा इम कहिवाणियै ?
जिन कहै इक-इक अव्याबाध सुर,
समर्थ ते पहिछाणियै ।।
१९. इक-इक पुरुष आंख नां, इक-इक भांपण ऊपर ठाणियै ।
दिव्य प्रधान जे देव संबंधी, ऋद्धि प्रतै पहिछाणियै ।।
२०. दिव्य देवद्युति दिव्य देवअनुभाव प्रती वलि आणियै ।
देव संबंधी बत्तीस प्रकारे, नाटक विधि प्रति ठाणियै ।।
२१. नाटक जेह देखाड़वा समर्थ, तेह पुरुष नैं जाणियै ।
किंचित बहुत बाधा न पमावै[1],
इम निश्चै दिल आणियै ।।

२२. अथवा छेद छवी नो न करै, देव शक्ति करि जाणियै ।
एहवो सूक्षम जेम हुवै तिम, नाटक विधि प्रति ठाणियै ।।
२३. एहवा नाटक विध प्रति देखाड़ण, समर्थ ते सुर माणियै ।
तिण अर्थे जावत ते देवा, अव्याबाध बखाणियै ।।

शक्रशक्ति पद

२४. समर्थ छै प्रभु ! शक्र सुरिंद्र, सुरां तणो राजा सही ।
पुरुष तणां मस्तक प्रति छेदै, स्वहत्थ खड्ग प्रतै ग्रही ।।
[बलिहारी हो स्वाम तणी सही ।]
२५. ते सिर छेद कमंडलु मांहे, प्रक्षेपवा समर्थ सही ?
जिन कहै हंता समर्थ छै ते, केम प्रक्षेप करै वही ?
२६. श्री जिन भाखै छेदी-छेदी नैं, क्षुरप्रादिक करनैं वही ।
कूष्मांडादिक नीं पर सूक्षम खंड करीनैं प्रक्षेपही ।।

२७. भेदी-भेदी विदारी-विदारी, कपड़ा नीं पर ए कही ।
ऊर्द्ध फाड़वै करीनैं पाछै, कमंडलु मांहे प्रक्षेपही ।।

२८. वलि तेहनों शिर कूटी-कूटी नैं, जेम ऊखलादिक मही ।
तिल प्रमुख नैं कूटै तिम कूटी, कमंडलु मांहे प्रक्षेपही ।।

२९. चूरी-चूरी नैं चूर्ण करनैं, जेम सिलादिक नैं मही ।
चूरण द्रव्य तणी पर कर नैं, कमंडलु मांहे प्रक्षेपही ।।

३०. तेह कमंडलु मांहे प्रक्षेपण, कियां पछै जे शीघ्र ही ।
ते शिर पाछो मेलै करि एकठु पुरुष नैं पीड़ हुवै नहीं ।।

***लय : बलिहारी भीखणजी स्वाम की····**

१. जोड़ में आबाहं पबाहं—इन दो शब्दों की व्याख्या है । अंगसुत्ताणि भाग २ में पबाहं के स्थान पर वाबाहं पाठ है । वहां पबाहं को पाठान्तर में लिया गया है ।

१८. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—अव्वाबाहा देवा, अव्वाबाहा देवा ? गोयमा ! पभू णं एगमेगे अव्वाबाहे देवे
१९. एगमेगस्स पुरिसस्स एगमेगंसि अच्छिपत्तंसि दिव्वं देविड्ढि,
२०,२१. दिव्वं देवज्जुतिं, दिव्वं देवाणुभागं, दिव्वं बत्तीसतिविहं नट्टविहिं उवदंसेत्तए ।
नो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएइ
'आबाहं व' त्ति ईषद्बाधां 'पबाहं व' त्ति प्रकृष्टबाधां 'वाबाहं'ति क्वचित् तत्र तु 'व्याबाधां' विशिष्टामाबाधां । (वृ० प० ६५४)
२२,२३. छविच्छेयं वा करेइ, एसुहुमं च णं उवदंसेज्जा ।
से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—अव्वाबाहा देवा, अव्वाबाहा देवा । (श० १४।११४)
२४,२५. पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया पुरिसस्स सीसं सपाणिणा असिणा छिंदित्ता कमंडलुंसि पक्खिवित्तए ?
हंता पभू । (श० १४।११५)
से कहमिदाणिं पकरेति ?

२६. गोयमा ! छिंदिया-छिंदिया च णं पक्खिवेज्जा ।
'छिंदिया छिंदिया व णं' ति छित्वा छित्वा क्षुरप्रादिना कूष्माण्डादिकमिव श्लक्ष्णखण्डीकृत्येत्यर्थः । (वृ० प० ६५४)
२७. भिंदिया-भिंदिया च णं पक्खिवेज्जा ।
'भिंदिय' त्ति विदार्योर्द्धपाटनेन शाटकादिकमिव । (वृ० प० ६५४)
२८. कोट्टिया-कोट्टिया च णं पक्खिवेज्जा ।
'कुट्टिय' त्ति कुट्टयित्वा उदूखलादौ तिलादिकमिव । (वृ० प० ६५४)
२९. चुण्णिया-चुण्णिया च णं पक्खिवेज्जा ।
'चुन्निय' त्ति चूर्णयित्वा शिलायां शिलापुत्रकादिना गन्धद्रव्यादिकमिव । (वृ० प० ६५४)
३०. तओ पच्छा खिप्पामेव पडिसंघाएज्जा ।
'ततो पच्छ' त्ति कमण्डलुप्रक्षेपणानन्तरमित्यर्थः 'परिसंघाएज्ज' त्ति मीलयेदित्यर्थः । (वृ० प० ६५४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. किंचित अथवा बहु तसु बाधा, निश्चै नहीं उपजावही ।
छविच्छेद पुण ह्वै इम सूक्षम करि कमंडलेज प्रक्षेपही ।।

३१. नो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएज्जा, छविच्छेयं पुण करेइ, एसुहुमं च णं पक्खिवेज्जा । (श० १४।११६)

जृंभक देव पद

३२. छै भगवंत जी जृंभक देवा ? जिन कहै हंत कहीजियै ।
किण अर्थे प्रभु ! जृंभक देवा, ए वचन इसो सलहीजियै ।।
[जयकारी हो जिन वच पीजियै ।]

३२. अत्थि णं भंते ! जंभगा देवा, जंभगा देवा ?
हंता अत्थि । (श० १४।११७)
से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जंभगा देवा, जंभगा देवा ।

३३. जिन कहै जृंभक देव सदाई, प्रमुदित हरष धरीजियै ।
प्रकृष्ट क्रीड़ प्रतै जे करता, तो कंदर्प अति रति भींजियै ।।
३४. मोहन मिथुन तणो शील छै जसु,
स्वच्छंद चेष्टा करीजियै ।
तिर्यग लोक तणां ए वासी, तो व्यंतर देवा वदीजियै ।।

३३,३४ गोयमा ! जंभगा णं देवा निच्चं पमुदित-पक्कीलिया कंदप्परतिमोहणसीला,
'पमुइयपक्कीलिय' त्ति प्रमुदिताश्च ते—तोषवन्तः प्रक्रीडिताश्च—प्रकृष्टक्रीडाः प्रमुदितप्रक्रीडिताः 'कंदप्परइ' त्ति अत्यर्थं केलिरतिकाः 'मोहणसील' त्ति निधुवनशीलाः । (वृ. प. ६५४)

३५. जृंभग कोप्या थका जसु देखै, दृष्टि करूर करीजियै ।
मोटो अनर्थ अजश ते पामै, तास प्रभाव लहीजियै ।।

३५. जे णं ते देवे कुद्धे पासेज्जा, से णं पुरिसे महंतं अयसं पाउणेज्जा ।
'अजसं' ति उपलक्षणत्वादस्यानर्थं प्राप्नुयात् ।
(वृ० प० ६५४)

३६. जे सुर तुष्ट थका देखै जसु, महा जश अर्थ पामीजियै ।
तिण अर्थे करिनें हे गोतम ! जृंभक देव कहीजियै ।।

३६. जे णं ते देवे तुट्ठे पासेज्जा, से णं महंतं जसं पाउणेज्जा । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ—जंभगा देवा, जंभगादेवा । (श० १४।११८)

सोरठा

३७. वृत्तकार कहि वाय, वैर स्वामीवत जाणजो ।
अनुग्रह सराप ताय, बिहुं करिवा समर्थ थकी ।।
३८. अनुग्रह सराप जाण, ते जृंभक देवां तणां ।
शील स्वभाव पिछाण, ते माटै जश अजश ह्वै ।।

३७,३८. वैरस्वामिवत् शापानुग्रहकरणसमर्थत्वात् तच्छीलत्वाच्च तेषामिति । (वृ० प० ६५४)

३९. *कतिविध हे प्रभु ! जृंभक देवा ?
जिन कहै दशविध ग्रहीजियै ।
अन्नजृंभगा ते भोजन विषये, ते सुर एम कहीजियै ।।

३९. कतिविहा णं भंते ! जंभगा देवा पण्णत्ता ?
गोयमा ! दसविहा पण्णत्ता, तं जहा—अन्नजंभगा ।
'अन्नजंभये' त्यादि अन्ने—भोजनविषये ।

सोरठा

४०. अन्न नो करै अभाव, अथवा वलि सद्भाव तसु ।
अल्प बहुत्वज साव, सरसपणें नीरसपणुं ।।
४१. इत्यादिक पहिछाण, करिवा नीं चेष्टा करै ।
ते अन्नजंभक जाण, पाण प्रमुख कहिवा इमज ।।

४०,४१. तदभावसद्भावाल्पत्वबहुत्वसरसत्वनीरसत्वादि-करणतो जृम्भन्ते—विजृम्भन्ते ये ते तथा, एवं पानादिष्वपि वाच्यं । (वृ० प० ६५४)

४२. *पाणजृंभका ते उदक सरस अरु,
निरस प्रमुखज करीजियै ।
वस्त्रजृंभका ते वस्त्र सरस अरु,
निरस आदि इम लीजियै ।।

४२. पाणजंभगा, वत्थजंभगा,

*लय : बलिहारी भीखणजी स्वाम की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३. लेणजूंभका ते घर नैं सरस अरु,
निरस प्रमुख इम गहीजियै ।
सयणजूंभका फूल नां जूंभक,
फल नां जूंभक लीजियै ।।
४४. फूल फल एह उभय नां जूंभका, पूर्व रीत वदीजियै ।
पुप्फ फल स्थाने मंतजूंभगा, वाचनांतरे कहीजियै ।।

४५. विद्याजूंभक ते पर विद्या, ऊणी अधिक करीजियै ।
नाटकप्रमुख बिगाड़ै सुधारै, ते अव्यक्तजूंभगा लीजियै ।।

सोरठा

४६. किणही स्थान संवाद, दीसै अहिवइ-जूंभका ।
ते अधिपति राजादि, नायक विषये जूंभका ।।

४७. *हे भगवंत जी ! जूंभक देवा, ते किण स्थान वसीजियै ?
श्री जिन भाखै दीर्घ वैताढज, सर्व विषेज रहीजियै ।।
४८. चित्र विचित्र जूंभक गिर ऊपर,
कंचनगिरि वलि लीजियै ।
एह विषे वसै जूंभक देवा, हिव विस्तार कहीजियै ।।

सोरठा

४९. दीर्घ वैताढ उदार, इकसौ नैं सित्तर विषे ।
जूंभक वास विचार, कर्मभूमि ए पनर में ।।

५०. पंच विदेह संपेख, विजय एकसौ साठ में ।
पंच भरत में देख, पंच एरवत नैं विषे ।।
५१. चित्र विचित्र विचार, वलि यमक वैताढ वृत्त ।
ए कुण क्षेत्र मझार, निर्णय कहियै तेहनों ।।
५२. देवकुरू रै मांय, सीतोदाज नदी तणें ।
उभय पास कहिवाय, चित्र विचित्र वैताढ वृत्त ।।
५३. तथा उत्तरकुरु जान, उभय पास सीता तणें ।
यमक नामज मान, ते बिहुं पर्वत नैं विषे ।।
५४. कंचनगिरि पर जाण, उत्तरकुरु सीता नदी ।
तास संबंधे माण, नीलवंतादिक पंच द्रह ।।

५५. तेहनैं पूरव जन्न, वलि पश्चिम दिशि नैं विषे ।
दश-दश गिरि कंचन्न, उत्तरकुरु इम सौ थया ।।
५६. देवकुरु रै मांय, नाम सीतोदा महानदी ।
तास संबंध कहाय, निषद द्रहादिक पंच है ।।
५७. तेहनैं पूर्वे जन्न, वलि पश्चिम दिशि नैं विषे ।
दश-दश गिरि कंचन्न, देवकुरू इम सौ थया ।।

***लय : बलिहारी भीखणजी स्वाम को**

४३. लेणजंभगा, सयणजंभगा, पुप्फजंभगा, फलजंभगा, 'लेणं' ति लयनं—गृहम् । (वृ० प० ६५४)

४४. पुप्फ-फल-जंभगा ।
'पुप्फफलजंभग' त्ति उभयजृम्भकाः एतस्य च स्थाने 'मंतजंभग' त्ति वाचनान्तरे दृश्यते । (वृ० प० ६५४)

४५. विज्जाजंभगा, अवियत्तिजंभगा । (श० १४।११९)

४६. क्वचित्तु 'अहिवइजंभग' त्ति दृश्यते तत्र चाधिपतौ—राजादिनायकविषये जृम्भका ये ते तथा । (वृ० प० ६५४)

४७. जंभगा णं भंते ! देवा कहिं वसहिं उवेंति ?
गोयमा ! सव्वेसु चेव दीहवेयड्ढेसु ।
४८. चित्त-विचित्त-जमगपव्वएसु, कंचणपव्वएसु य, एत्थ णं जंभगा देवा वसहिं उवेंति । (श० १४।१२०)

४९. 'सव्वेसु चेव दीहवेयड्ढेसु' त्ति सर्वेषु प्रतिक्षेत्रं तेषां भावात् सप्तत्यधिकशतसंख्येषु । (वृ० प० ६५४)

५२. देवकुरुषु शीतोदानद्या उभयपार्श्वतश्चित्रकूटो विचित्रकूटश्च पर्वतः । (वृ० प० ६५४)
५३. तथोत्तरकुरुषु शीताभिधान नद्या उभयतो यमक-समकाभिधानौ पर्वतौ स्तस्तेषु । (वृ० प० ६५४,५५)
५४. 'कंचणपव्वएसु' त्ति उत्तरकुरुषु शीतानदीसम्बन्धिनां पञ्चानां नीलवदादिह्रदानां क्रमव्यवस्थितानां । (वृ० प० ६५५)
५५. प्रत्येकं पूर्वापरतटयोर्दश दश काञ्चनाभिधाना गिरयः सन्ति ते च शतं भवन्ति । (वृ० प० ६५५)
५६. एवं देवकुरुष्वपि शीतोदानद्याः सम्बन्धिनां निषदह्रदादीनां पञ्चानां महाह्रदानामिति । (वृ० प० ६५५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८. इमहिज धातकीखंड, अर्द्धपुखर वर नें विषे।
जृंभक वसै सुमंड, कहिवो सर्व विचार नें ।।

५९. *जृंभक देव तणी हे भगवंत !
स्थिति केतला काल की ?
जिन कहै एक पल्योपम स्थिति
छै सेवं भंते ! कृपाल की ।।

६०. चवदम शतक नें अष्टमुदेशक,
ढाल तीन सौ दोय विशाल की ।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादे,
'जय-जश' गण गुणमाल की ।।

चतुर्दशशते अष्टमोद्देशकार्थः ।।१४।८।।

५८. एवं धातकीखण्डपूर्वार्धादिष्वप्यतस्तेष्विति ।
(वृ० प० ६५५)

५९. जंभगाणं भंते ! देवाणं केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?
गोयमा ! एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता ।
(श० १४।१२१)
सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ।
(श० १४।१२२)

ढाल : ३०३

दूहा

१. पूर्व उदेशक अंत में, देव तणें सुविचार।
विचित्र अर्थज विषय जे, सामर्थपणुं उचार ।।
२. तेह समर्थपणे छते, स्व कर्म लेश्या ताहि ।
किणहि प्रकार करी तिका, जाणण समर्थ नांहि ।।
३. इम साधू पिण आपरी, किणहि प्रकारे ताय ।
कर्म लेश प्रति जाणवा, सामर्थपणुं न पाय ।।
४. इत्यादिक जे अर्थ नां, निर्णय नवम उदेश ।
गोयम नें श्री वीर नुं, प्रश्नोत्तर सुविशेष ।।

१. अनन्तरोद्देशकान्त्यसूत्रेषु देवानां चित्रार्थविषयं सामर्थ्यमुक्तं । (वृ० प० ६५५)
२. तस्मिंश्च सत्यपि यथा तेषां स्वकर्म्मलेश्यापरिज्ञान-सामर्थ्यं कथञ्चिन्नास्ति । (वृ० प० ६५५)
३,४. तथा साधोरपीत्याद्यर्थनिर्णयार्थो नवमोद्देशकोऽभि-धीयते । (वृ० प० ६५५)

सरूपी सकर्म लेश्या पद

†प्रभुजी नहिं जाणें नहिं देखंत,
प्रभुजी री वाणी अमिय समाणी ।
प्रभुजी रा शीस अमोलक जाणी ।। [ध्रुपदं]

५. हे प्रभुजी ! अणगार ते जी, भावित आतम हुंत ।
आपरी कर्म लेश्या प्रतै जी, नहिं जाणें नहिं देखंत ।।
६. तं पुण ते वलि जीवड़ो जी, रूप शरीर सहीत ।
कर्म लेश्या करि सहित नें जी, जाणें देखै प्रतीत ?
७. जिन कहै हंता गौयमा ! जी, भावितात्म अणगार ।
पोता नीं जाव देखै अछै जी, पूछ्यो तिम उत्तर धार ।।

५. अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ न पासइ ।
६. तं पुण जीवं सरूविं सकम्मलेस्सं जाणइ-पासइ ?
७. हंता गोयमा ! अणगारे णं भावियप्पा अप्पणो जाव (सं० पा०) पासइ । (श० १४।१२३)

---

*लय : बलिहारी भीखणजी स्वाम की
†लय : पंथीड़ो बोलै अमृत वाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

८. आख्यो वृत्ति त्रिषेह, भावितातम अणगार ए।
संजम भावपणेह, वासित अंतःकरण तसु।।

९. निज आतम नीं जेह, कर्म योग्य लेश्या जिका।
कृष्णादिक कहेह, कर्म लेश तेहनैं कही।।

१०. तथा कर्म नुं ताय, लेश संबंध अछै तिका।
कर्म लेश कहिवाय, द्वितीय अर्थ इम वृत्ति में।।

११. तेह प्रतै अणगार, जाणैं नहीं विशेष थी।
सामान्य थी पिण धार, देखै नहि मुनिवर तिको।।

वा०—प्रथम अर्थ कर्म योग्य लेश्या वृत्ति में कही तेहनैं प्रथम ओलखाविये छै—

१२. 'जेह थी कर्म बंधाय, कर्म योग्य लेश्या तिका।
जीव तणां अध्यवसाय, भाव लेश ए जाणवी।।

१३. चवदम शतके पेख, प्रथम उदेशा नैं विषे।
कर्म लेश नैं देख, भाव लेश आखी अछै।।

१४. कर्म लेश कहिवाय, उत्तराध्येन चउतीसमें।
आत्म परिणाम ताय, कर्म बंध छै तेहथी।।

१५. पुन्यकर्त्ता धर्म लेश, पाप तणी कर्त्ता तिहां।
अधर्म लेश विशेष, भाव लेश कहियै तसु।।

१६. तेम इहां पिण ताम, कर्म लेश आखी तिका।
जीव तणां परिणाम, भाव लेश इम आखियै।।

१७. ते पोता नीं जेह, कृष्णादिक लेश्या प्रतै।
छद्मस्थ मुनिवर तेह, जाणैं नहि देखै नहीं।।

१८. सतरम पद कै मांहि, तृतीय उद्देशा नैं विषे।
कृष्ण लेश में ताहि, च्यार ज्ञान पावै अछै।।

१९. कृष्ण लेश संक्लिष्ट, मनपज्जव अति विशुद्ध ते।
किण रीते ए इष्ट, वृत्ति विषे तसु न्याय इम।।

२०. असंख लोकाकाश, तास प्रदेश परमाणु ते।
कृष्ण लेश नां तास, स्थानक अध्यवसाय नां।।

२१. कृष्ण लेश नां स्थान, मंदज अध्यवसाय में।
ह्वै मनपज्जव ज्ञान, पन्नवण वृत्ति विषे कह्यु।।

२२. आख्या अध्यवसाय, तिणसूं भावे कृष्ण ए।
पावै मनपर्याय, न्याय दृष्टि करि देखियै।।

२३. जे छट्ठे गुणठाण, भावे लेश्या षट अछै।
तीन कहै कर ताण, तास विरुद्ध परूपणा।।

२४. अवध्यादिके रहीत, निज कर्म लेश जाणैं न ते।
देखै नहि सुवदीत, ए लेश्या भाव कहीजियै।।

८. अनगारः 'भावितात्मा' संयमभावनया वासितान्तःकरणः। (वृ० प० ६५५)

९,१०. आत्मनः सम्बन्धिनीं कर्म्मणो योग्या लेश्या—कृष्णादिका कर्म्मणो वा लेश्या। 'लिश श्लेषणे' इति वचनात् सम्बन्धः कर्मलेश्या। (वृ० प० ६५५)

११. तां न जानाति विशेषतो न पश्यति च सामान्यतः। (वृ० प० ६५५)

१८. कण्णलेस्से णं भंते! जीवे कतिसु णाणेसु होज्जा? गोयमा! दोसु वा तिसु वा चउसु वा णाणेसु होज्जा। (पण्ण० १७।११२)

१९. ननु मनःपर्यवज्ञानमतिविशुद्धस्योपजायते कृष्णलेश्या च संक्लिष्टाध्यवसायरूपा ततः कथं कृष्णलेश्याकस्य मनःपर्यायज्ञानसंभवः? उच्यते— (पण्ण० मलयवृ० प० ३५७)

२०. इह लेश्यानां प्रत्येकासंख्येयलोकाकाशप्रदेशप्रमाणान्यध्यवसायस्थानानि, तत्र कानिचित् मन्दानुभावान्यध्यवसायस्थानानि प्रमत्तसंयतस्यापि लभ्यन्ते। (पण्ण० मलयवृ० प० ३५७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. जीव तणां परिणाम, दृष्टि अगोचर ते भणी।
देखै नहिं ए ताम, पिण जाणैं निज परिणाम प्रति ।।

२६. तो किण कारण ख्यात, निज कर्म लेश जाणैं नहीं ?
तास न्याय अवदात, आगल कहियै छै हिवै ।।

२७. सर्व पर्याय करेह, जाणैं नहिं परिणाम निज।
अथवा नहिं जाणेह, अनुपयुक्त छद्मस्थ मुनि ।।

२८. अथवा अवधिज आदि, सर्व भाव पर्याय कर।
निज परिणाम कृष्णादि, जाणैं नहिं देखै नहीं ।।

वा०—हिवै कर्म लेश्या नों दूजो अर्थ कर्म नों संबंध इम टीका में कियै तेहनुं न्याय कहै छै—

२९. 'द्वितीय अर्थ कर्म ख्यात, भावे लेश्या तेहथी।
बंध कर्म नों थात, पिण कर्म लेश कही कर्म नैं ।।

३०. अतिही सूक्षम तेह, अवधि आदि जे रहित मुनि।
प्रत्यक्ष नहिं जाणेह, वलि देखै नहिं निज कर्म प्रति ।।

३१. परम अवधिवंत संत, सर्व भाव पर्याय कर।
निज कर्म द्रव्य प्रति मंत, जाणै नहिं देखै नहीं ।।

३२. एहवूं न्याय जणाय, वलि बहुश्रुत आखै तिको।
निर्मल छै वर न्याय सूत्रे कर अविरुद्ध जे ।।

३३. इहविध निज कर्म लेश, जाणैं नहिं छद्मस्थ मुनि।
देखै नहिं सुविशेष, हिव जाणैं-देखै ते कहूं ।।

३४. जीव शरीर सहीत, कर्म लेश कर सहित प्रति।
जाणैं मुनी वदीत, देखै ते छद्मस्थ मुनि ।।

३५. इहां एहवो अभिप्राय, शरीर चक्षु ग्राह्य छै।
जीव तणी जे काय, ते जाणै-देखै मुनि ।।' [ज०स०]

वा०—रूप ते शरीर सहित अनै कर्म लेश्या सहित जीव प्रतै जाणैं देखै। ए संसारी जीव शरीर सहित कर्म लेश्या सहित छै, ते प्रतै जाणै-देखै। जीव नों शरीर प्रत्यक्ष दीसै ते माटै। रूप सहित जीव प्रतै जाणै-देखै कह्यो। अनैं रूप ते शरीर रहित अनै कर्म लेश्या रहित सिद्ध छै, ते प्रतै छद्मस्थ मुनि न जाणैं, न देखै। ते माटै रूप सहित जीव नों प्रश्नोत्तर कह्यो।

३६. *हे भगवंत ! अछै जिके जी, रूप वर्णादि सहीत।
जे कर्म लेश सहोत नां जी, पुद्गल खंध वदीत ।।

३७. प्रकाशै छै पुद्गल तिके जी, जाव प्रभासै ताय ?
जिन भाखै हंता अत्थि जी, वलि शिष्य पूछै न्याय ।।

३८. कुण प्रभु ! रूप सहीत नां जी, कर्म लेश्या करि सहीत।
पुद्गल अवभासन करै जी, जाव प्रभासै प्रतीत ?

३९. जिन भाखै शशि रवि तणां जी, प्रगट विमाण थी पेख।
तेज समूह बारै नीकल्यो जी, तेह प्रकाश विशेख ।।

४०. एतला माटै ते गोयमा ! जी, रूप शरीर सहीत।
कर्म लेश्या सहित पोग्गला जी, दीपै प्रकाशै प्रतीत ।।

वा०—'सरूवि' ति सह रूपेण—रूपरूपवतोरभेदाच्छरीरेण वर्तते योऽसौ समासान्तविधेःसरूपी तं सरूपिणं सशरीरमित्यर्थः अत एव 'सकर्म्मलेश्यं' कर्मलेश्यया सह वर्तमानं जानाति शरीरस्य चक्षुर्ग्राह्यत्वाज्जीवस्य च कथंचिच्छरीराव्यतिरेकादिति।
(वृ० प० ६५५)

३६,३७. अत्थि णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति उज्जोएंति तवेंति पभासेंति ?
हंता अत्थि। (श० १४।१२४)

३८. कयरे णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति जाव पभासेंति ?

३९. गोयमा ! जाओ इमाओ चंदिम-सूरियाणं देवाणं विमाणेहिंतो लेस्साओ बहिया अभिनिस्सडाओ पभावेंति।

४०. एए णं गोयमा ! ते सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासेंति उज्जोएंति तवेंति पभासेंति।
(श० १४।१२५)

*लय : पंथीड़ो बोलै अमृत वाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोरठा

४१. यद्यपि पुद्गल मांय, कर्म लेश तो छै नथी।
तथापि पृथ्वीकाय, रवि शशि तणां विमाण छै।।
४२. तेह सचेतन जाण, कर्म लेश करि सहित छै।
तेहथी निर्गतमाण, पुद्गल तणो प्रकाश छै।।
४३. पृथ्वी संबंध थीज, तसु हेतुक भावे करी।
ए उपचार थकीज, सकर्म लेशपणुं कह्यु।।
४४. पुद्गल नों अधिकार, आख्यो तिण प्रस्ताव थी।
पुद्गलनोंज प्रकार, कहियै छै हिव आगलै।।

४१-४३. इह च यद्यपि चन्द्रादिविमानपुद्गला एव पृथिवीकायिकत्वेन सचेतनत्वात्सकर्मलेश्यास्तथाऽपि तन्निर्गतप्रकाशपुद्गलानां तद्हेतुकत्वेनोपचारात्स-कर्मलेश्यत्वमवगन्तव्यमिति। (वृ० प० ६५५)

४४. पुद्गलाधिकारादिदमाह— (वृ० प० ६५५)

अत्त-अणत्त पुद्गल पद

४५. *हे प्रभु ! स्यूं नारक तणैं जी, अत्ता पुद्गल होय।
कै कहियै अणत्ता पोग्गला जी ? तास अर्थ इम जोय।।

४५. नेरइयाणं भंते ! किं अत्ता पोग्गला ? अणत्ता पोग्गला ?

सोरठा

४६. आ अभिविधि करि ताय, दुःख थकी राखै जसु।
अथवा सुख उपजाय, ते अत्ता पुद्गल कह्या।।
४७. अथवा आप्ता जेह, एकंत हित रमणीय ते।
व्याख्या वृद्धज एह, कह्या अणत्ता विपर्यय।।
४८. *जिन भाखै सुण गोयमा ! जी, अत्ता पुद्गल नांय।
अछै अणत्ता पोग्गला जी, कहियै महादुखदाय।।
४९. स्यूं प्रभु ! असुरकुमार नैं जी, अत्ता पुद्गल सार।
अथवा अणत्ता पोग्गला जी ? गोयम प्रश्न उदार।।
५०. जिन कहै अत्ता पोग्गला जी, दुख त्राता सुखकार।
नहीं अणत्ता पोग्गला जी, इम जाव थणियकुमार।।
५१. पूछा पृथ्वीकाय नीं जी, जिन कहै दोनूंइ होय।
एवं यावत मनुष्य नैं जी, सुख दुखदायक सोय।।

४६. 'अत्त' त्ति आ—अभिविधिना त्रायन्ते—दुःखात् संर-क्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्राः। (वृ० प० ६५६)
४७. आप्ता वा—एकांतहिताः, अतएव रमणीया इति वृद्धैर्व्याख्यातं। (वृ० प० ६५६)
४८. गोयमा ! नो अत्ता पोग्गला, अणत्ता पोग्गला। (श० १४।१२६)
४९. असुरकुमाराणं भंते ! किं अत्ता पोग्गला ? अणत्ता पोग्गला ?
५०. गोयमा ! अत्ता पोग्गला, नो अणत्ता पोग्गला। एवं जाव थणियकुमाराणं। (श० १४।१२७)
५१. पुढविकाइयाणं भंते ! किं अत्ता पोग्गला ? अणत्ता पोग्गला ?
गोयमा ! अत्ता वि पोग्गला, अणत्ता वि पोग्गला।
एवं जाव मणुस्साणं।

५२. वाणमंतर नैं ज्योतिषी जी, विमानीक वलि जान।
जिम कह्या असुरकुमार नैं जी, तिम कहिवुं पहिछान।।

५२. वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं। (श० १४।१२८)

इष्ट-अनिष्ट आदि पुद्गल पद

५३. स्यूं प्रभुजी ! नेरइया तणैं जी, पुद्गल वल्लभ इष्ट।
कै वल्लभ पुद्गल नहीं जी, कहियै तास अनिष्ट ?
५४. जिन कहै इष्ट पुद्गल नहीं जी, जिम अत्ता आख्यात।
कहिवा इष्ट पिण तिण विधै जी, इमहिज कांत विख्यात।।
५५. प्रियकारी पिण पोग्गला जी, मनोज्ञ गमता मन्न।
भणवा अत्ता नीं परै जी, पंच दंडक इम जन्न।।

५३. नेरइयाणं भंते ! किं इट्ठा पोग्गला ? अणिट्ठा पोग्गला ?
५४. गोयमा ! नो इट्ठा पोग्गला, अणिट्ठा पोग्गला। जहा अत्ता भणिया। एवं इट्ठा वि, कंता वि।
५५. पिया वि, मणुण्णा वि भाणियव्वा। एए पंच दंडगा। (श० १४।१२९)

सोरठा

५६. पुद्गल नों विस्तार, पूर्वे आख्यो तेहथी।
पुद्गलनोंज प्रकार, कहियै छै हिव आगलै।।

५६. पुद्गलाधिकारादेवेदमाह— (वृ० प० ६५६)

*लय : पंथीड़ो बोलै अमृत वाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवभाषा सहस्त्र पद

५७. *हे प्रभु ! महर्द्धिक देवता जी, जाव महा ऐश्वर्यवान।
सहस्त्ररूप प्रति ते सही जी, विकुर्वी नैं पिछान॥
५८. भाषा सहस्त्र प्रति बोलवा जो, समर्थ छै ते स्वाम ?
जिन भाखै हंता प्रभु जी, वलि शिष्य पूछै ताम॥
५९. स्यूं प्रभु ! भाषा इक हुवै जी, अथवा सहस्त्रज होय ?
जिन कहै भाषा एक छै जी, निश्चै सहस्त्र न कोय॥

५७,५८. देवे णं भंते ! महिड्ढिए जाव महेसक्खे रूवसहस्सं विउव्वित्ता पभू भासासहस्सं भासित्तए ? हंता पभू। (श० १४।१३०)

५९. सा णं भंते ! किं एगा भासा ? भासासहस्सं ? गोयमा! एगा णं सा भासा, नो खलु तं भासासहस्सं। (श० १४।१३१)

सोरठा

६०. एक जीव ते जाण, इक उपयोगपणां थकी।
एक काल में माण, एकहीज उपयोग ह्वै॥
६१. ते माटै सत्यादि, इक भाषा चिहुं मांहिली।
वर्त्तै छै संवादि, न्याय कह्यो ए वृत्ति में॥

६०. एकस्य जीवस्यैकदा एक एवोपयोग इष्यते। (वृ० प० ६५६)

६१. ततश्च यदा सत्याद्यन्यतरस्यां भाषायां वर्त्तते तदा नान्यस्यामित्येकैव भाषेति। (वृ० प० ६५६)

दूहा

६२. पुद्गल नां अधिकार थी, तेहिज हिव कहिवाय।
प्रश्न गोयम वर पूछिया, उत्तर दै जिनराय॥

६२. पुद्गलाधिकारादेवेदमाह— (वृ० प० ६५६)

सूर्य पद

६३. *तिण काले नै तिण समय जी, भगवंत गोतम स्वाम।
ऊगता बाल सूर्य प्रतै जी, देख्यो रत्न तमाम॥
६४. जासुमणा नामे रूंख नां जी, फूल-पुंज नो प्रकाश।
एहवो लाल रवि देखनैं जी, प्रवर्त्ती श्रद्धा तास॥
६५. जाव कोतूहल ऊपनो जी, ज्यां भगवंत महावीर।
त्यां आवै आवी करी जी, जाव नमी गुणहीर॥
६६. यावत गोतम इम कहै जी, सूरज वस्तू एह।
किसूं स्वरूप छै तेहनों जी, भाखो भगवंत ! जेह॥
६७. अथवा ए सूर्य शब्द नों जी, स्यूं छै अर्थ भगवान !
ए बे प्रश्न पूछियां जी, उत्तर दे जगभान॥
६८. जिन कहै सूर्य शुभ अछै जी, शुभ सूर्य नुं अर्थ।
सूत्र विषे इतरोज छै जी, हिव टीका में तदर्थ॥

६३,६४. तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं गोयमे अचिरुग्गयं बालसूरियं जासुमणाकुसुमपुंजप्पकासं लोहितगं पासइ, पासित्ता जायसड्ढे

६५. जाव समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ जाव (सं० पा०) नमंसित्ता

६६,६७. जाव (सं० पा०) एवं वयासी—किमिदं भंते ! सूरिए ? किमिदं भंते ! सूरियस्स अट्ठे ?

६८. गोयमा ! सुभे सूरिए, सुभे सुरियस्स अट्ठे। (श० १४।१३२)

सोरठा

६९. सूर्य वस्तू जाण, तसु शुभ स्वरूप इह विधे।
ते रवि तणो विमान, ते छै पृथ्वीकायिका॥
७०. नाम कर्म नीं जाण, त्राणुं प्रकृति मांहिली।
आतप पुन्य पिछाण, तसु उदयवर्त्तीपणां थकी॥
७१. लोक विषे पिण एह, प्रशस्त प्रसिद्धपणां थकी।
वलि शुभ वस्तु कहेह, ज्योतिषि इंद्रपणां थकी॥
७२. अथवा शुभ छै एह, अर्थ सूर्य जे शब्द नों।
तिणे प्रकार करेह, कहियै छै हिव आगलै॥

६९,७०. 'सुभे सूरिए' त्ति शुभस्वरूपं सूर्यवस्तु सूर्यविमान-पृथिवीकायिकानामातपाभिधानपुण्यप्रकृत्युदयवर्त्ति-त्वात्। (वृ० प० ६५६)

७१. लोकेऽपि प्रशस्ततया प्रतीतत्वात् ज्योतिष्केन्द्रत्वाच्च। (वृ० प० ६५६)

७२. तथा शुभः सूर्यशब्दार्थस्तथाहि। (वृ० प० ६५६)

*लय : पंथीडो बोलै अमृत वाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७३. सूर तणैं जे अर्थ, क्षमा दान तपसा वलि।
संग्रामादि तदर्थ, वीर भणी हित सूर्य ते।।
७४. अथवा वली विमास, सूर विषे साधू भलो।
सूर्य कहियै तास, सूर्य शब्द नों अर्थ ए।।
७५. *हे प्रभु ! ए सूर्य तणो जी, किसूं स्वरूप छै ताय।
स्यूं प्रभु ! प्रभा सूर्य तणी जी, एवं चेव कहाय।।
७६. एवं छाया रवि तणी जी, ए शोभा कहिवाय।
अथवा प्रतिबिंब तेहनों जी, लेश्या वर्ण इम थाय।।

७७. शत चवदम देश नवमां तणो जी,
तीन सौ तीजी ढाल।
भिक्षु भारीमाल ऋषिराय थी जी,
'जय-जश' मंगलमाल।।

७३. सूरेभ्यः—क्षमातपोदानसंग्रामादिवीरेभ्यो हितः।
(वृ० प० ६५६)
७४. सूरेषु वा साधुः सूर्यः। (वृ० प० ६५६)

७५. किमिदं भंते ! सूरिए ? किमिदं भंते ! सूरियस्स पभा ?
७६. एवं चेव एवं छाया एवं लेस्सा। (सं० पा०)
(श० १४।१३३-१३५)
छाया—शोभा प्रतिबिम्बं वा लेश्या—वर्णः।
(वृ० प० ६५६)

ढाल : ३०४

दूहा

१. लेश्या नां प्रक्रम थकी, लेश तणो अधिकार।
ते सुखरूपज देश थी, सुणियै तसु विस्तार।।

श्रमणों की तेजोलेश्या पद

२. हे प्रभुजी ! जे ए प्रत्यक्ष, आर्यपणैं विचरंत।
बाह्यभूत जे पाप थी, आर्य तेह कहंत।।
३. अथवा अज्ज एहनुं अरथ, अद्य अद्धा वर्त्तमान।
तेहपणैं विचरै मुनि, श्रमण निर्ग्रंथ सुजान।।

४. इतलै मुनि दीक्षा ग्रही, वर्त्तमान विचरंत।
केहनी तेजोलेश प्रति, अतिक्रमै ते संत ?
५. तेजोलेश्या नों अरथ, सुख-प्राप्ति कहिवाय।
तेजोलेश्या आदि जे, प्रशस्त कहियै ताय।।
६. तसु उपलक्षण थी तिका, सुख-प्राप्ति नीं हेतु।
कारण विषेज कार्य नों, उपचारात् अधेतु।।
७. तेजोलेश्या शब्द करि, सुख-प्राप्ति अवलोय।
तेह तणी वांछा इहां, वृत्ति विषे इम जोय।।
८. इतलै मुनि वर्त्तमान जे, केहवो सुख छै ताय।
केहना सुख नैं अतिक्रमै ? तब भाखै जिनराय।।

१. लेश्याप्रक्रमादिदमाह— (वृ० प० ६५६)

२,३. जे इमे भंते ! अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति।
'जे इमे' इत्यादि, ये इमे प्रत्यक्षाः 'अज्जत्ताए' त्ति आर्यतया पापकर्म्मबहिर्भूततया अद्यतया वा—अधुनातनतया वर्त्तमानकालतयेत्यर्थः।
(वृ० प० ६५६, ५७)
४. ते णं कस्स तेयलेस्सं वीइवयंति ?

५,६. 'तेयलेस्सं' ति तेजोलेश्यां—सुखासिकां तेजोलेश्या हि प्रशस्तलेश्योपलक्षणं सा च सुखासिकाहेतुरिति कारणे कार्योपचारात्तेजोलेश्याशब्देन सुखासिका विवक्षितेति। (वृ० प० ६५७)

---

*लय : पंथीड़ो बोलै अमृत वाण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

*सयाणां स्वाम वच सुखकारिया रे ।। [ध्रुपदं]

९. मास पर्याय नो श्रमण निर्ग्रंथ,
होजी ए तो व्यंतर सुख उलंघंत ।
१०. तेजोलेश्या सुखरूप कहाय,
होजी इण रै संतोष सुख अधिकाय ।।
११. बे मास पर्याय श्रमण निर्ग्रंथ,
होजी त्यांरा सुख नों सुणो वृतंत ।।
१२. असुरिंद वर्जी भवणपति देवा,
होजी ए तो तसु सुख थो अधिकेवा ।।
१३. इण आलाव करीनैं कहिवुं,
होजी ओ तो आगल इहविध लहिवुं ।।
१४. श्रमण त्रिमास तणी पर्याय,
होजी इणनैं असुर थी सुख अधिकाय ।।
१५. च्यार मास पर्याय सुतंत,
होजी ओ तो श्रमण मुनि निर्ग्रंथ ।।
१६. नक्षत्र ग्रह तारां नां सुख सेती,
होजी ओ तो अधिक चिउं मास सुखेती ।।
१७. पंच मास नीं पर्याय पाली,
होजी सुख रवि शशि थी अति न्हाली ।।
१८. रवि शशि इंद्र थी सुख अधिकाया,
होजी ए तो चरण पंच मास पाया ।।
१९. सौधर्म ईशाण सुर सुखरासं,
होजी तेहथी अधिक चरण षट मासं ।।
२०. सुख सनत्कुमार माहिंद्र नां देवां,
होजी तेहथी अधिक मास सप्त लेवा ।।
२१. अष्ट मास पर्याय ओपंत,
होजी ए तो श्रमण निर्ग्रंथ शोभंत ।।
२२. सुख ब्रह्म लंतक थी अधिकाया,
होजी ओ तो चरण मास अठ पाया ।।
२३. सुख महाशुक्र अमर सहसारं,
होजी तेहथी अधिक मास नव धारं ।।
२४. आणत पाणत आरण अच्चु,
होजी तेहथी अधिक मास दश सच्चु ।।
२५. मास इग्यार तणी पर्याय,
होजी सुख नव ग्रैवेयक थी सवाय ।।
२६. सुख अनुत्तर विमाण थकी अधिकाय,
होजी ओ तो वर्ष चरण मुनिराय ।।
२७. तेजोलेश्या सुख लेश्या देवां नीं,
होजी मुनि अतिक्रमै गुणखानी ।।
२८. वर्ष पर्याय थकी उपरंत,
होजी ओ तो श्रमण निर्ग्रंथ शोभंत ।।

९,१०. गोयमा ! मासपरियाए समणे निग्गंथे वाणमंतराणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

११,१२. दुमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

१३. एवं एएणं अभिलावेणं

१४. तिमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरकुमाराणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

१५,१६. चउम्मासपरियाए समणे निग्गंथे गहगण-नक्खत्त-तारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

१७,१८. पंचमासपरियाए समणे निग्गंथे चंदिमसूरियाणं जोतिसिंदाणं जोतिसराईणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

१९. छम्मासपरियाए समणे निग्गंथे सोहम्मीसाणाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२०. सत्तमासपरियाए समणे निग्गंथे सणंकुमार-माहिंदाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२१,२२. अट्ठमासपरियाए समणे निग्गंथे बंभलोग-लंतगाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयई ।

२३. नवमासपरियाए समणे निग्गंथे महासुक्क-सहस्साराणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२४. दसमासपरियाए समणे निग्गंथे आणय-पाणय-आरणच्चुयाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२५. एक्कारसमासपरियाए समणे निग्गंथे गेवेज्जगाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२६,२७. बारसमासपरियाए समणे निग्गंथे अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं तेयलेस्सं वीईवयइ ।

२८,२९. तेण परं सुक्के सुक्काभिजाए भवित्ता तओ पच्छा सिज्झति ।

*लय : आज अंबा जी रै नोपत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. शुक्ल शुक्ल अभिजाति थई नैं,
होजी ओ तो सीझै परम ज्ञान लही नैं ।।

३०. शुक्ल नाम ते अमच्छरमाणं,
होजी ओ तो कीधा उपगार नुं जाणं ।।

३१. सदारंभी नैं हित अनुबंध,
होजी कांइ तेह शुक्ल अभिसंध ।।

३०,३१. 'सुक्के' त्ति शुक्लो नामाभिन्नवृत्तोऽमत्सरी कृतज्ञः सदारम्भी हितानुबन्ध इति। (वृ० प० ६५७)

३२. अन्य आचार्य इम करै वरणं,
होजी ओ तो शुक्ल निरतिचार चरणं ।।

३२. निरतिचारचरण इत्यन्ये। (वृ० प० ६५७)

३३. परम शुक्ल ते शुक्ल अभिजात्य
होजी हिव एहिज कहूं अवदात्य ।।

३३. 'सुक्काभिजाइ' ति शुक्लाभिजात्यः परमशुक्ल इत्यर्थः। (वृ० प० ६५७)

३४. शोभन आगम विशुद्ध प्रतक्ष,
होजी ओ तो परम प्रकृष्ट सुलक्ष ।।

३५. श्रमण भाव प्रति वर्त्तै जेह,
होजी ओ तो निश्चै गुणमणी गेह ।।

३६. ते श्रमण भाव वर्ष थी उपरंत,
होजी ओ तो सर्वथा शुक्ल कहंत ।।

३४-३६. आकिञ्चन्यं मुख्यं ब्रह्मापि परं सदागमविशुद्धम्। सर्वं शुक्लमिदं खलु नियमात्संवत्सरादूर्द्ध्वम्। (वृ० प० ६५७)

३७. जे संत विशेष ते आश्री ए भाख्यो,
होजी पिण सर्व मुनि नो न आख्यो ।।

३७. एतच्च श्रमणविशेषमेवाश्रित्योच्यते न पुनः सर्व एवैवंविधो भवतीति। (वृ० प० ६५७)

३८. वृत्ति विषे इहविध सुविशेषं,
होजी ओ तो आख्यो है न्याय अशेषं ।।

३९. परम शुक्ल थई पाछै सीझंत,
होजी कांइ जाव करै दुख अंत ।।

३९. जाव (सं० पा०) अंतं करेति। (श० १४।१३६)

४०. सेवं भंते ! सेवं भंते !
होजी ए तो जावत विचरै महंत ।।

४०. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ। (श० १४।१३७)

४१. चवदमा शतक नों नवमो उदेशं,
होजी ओ तो अर्थ रूप सुविशेषं ।।

४२. मुनि सुख वर्णन ढाल विशाली,
होजी आ तो तीनसौ चउथी न्हाली ।।

४३. भिक्षु भारीमाल ऋषिराय प्रसादं,
होजी ए तो 'जय-जश' चित अहलादं ।।

चतुर्दशशते नवमोद्देशकार्थः ।।१४।९।।

ढाल : ३०५

दूहा

१. कह्या अनंतर शुक्ल ते, तत्व थकी तो जेह।
अछै केवली दशम हिव, केवली प्रमुख कहेह ।।

१. अनन्तरं शुक्ल उक्तः, स च तत्त्वतः केवलीति केवलिप्रभृत्यर्थप्रतिबद्धो दशम उद्देशकः। (वृ० प० ६५७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवली पद

*प्रश्नोत्तर गोयम जिनजी नों। (ध्रुपदं)

२. छद्मस्थ प्रति प्रभु ! केवलज्ञानी, जाणैं नैं देखंत जी ?
जिन कहै हंता जाणै-देखै, वलि गोयम पूछंत जी।

२. केवली णं भंते ! छउमत्थं जाणइ-पासइ ? हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१३८)

सोरठा

३. इह केवली शब्देन, ग्रहिवा भवस्थ केवली।
आगल जे कथनेन, सिद्ध प्रश्न छै ते भणी।।

३. इह केवलिशब्देन भवस्थकेवली गृह्यते उत्तरत्र सिद्धग्रहणादिति। (वृ० प० ६ ७)

४. *जेम केवली छद्मस्थ प्रति जे, जाणैं-देखै भदंत जी !
जाणैं-देखै तिम छद्म प्रति सिद्ध ? हंता जाणैं-देखंत जी।।

४. जहा णं भंते ! केवली छउमत्थं जाणइ-पासइ, तहा णं सिद्धे वि छउमत्थं जाणइ-पासइ ? हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१३९)

५. हे भगवंत ! केवली छै ते, अधो अवधि ज्ञानवंत जी।
तेह प्रतै जाणैं नैं देखै ? एवं चेव कहंत जी।।

५. केवली णं भंते ! आहोहियं जाणइ-पासइ ? एवं चेव।

सोरठा

६. प्रतिनियत जे खेत, जाणैं तेह अधो अवधि।
परम अवधि थी एथ, अधः हेठ तिण कारणैं।।

६. 'आहोहियं' ति प्रतिनियतक्षेत्रावधिज्ञानं। (वृ०प० ६५७)

७. *एवं परम अवधिज्ञानी प्रति, केवली प्रति पिण एम जी।
सिद्ध प्रतै पिण इमहिज कहिवो, जाणैं-देखै तेम जी।।
८. यावत जिम प्रभु ! केवलि सिद्ध प्रति, जाणैं नैं देखंतजी।
तिम सिद्ध सिद्ध प्रति जाणैं-देखै ? हंता जाणै-पेखंत जी।।

७. एवं परमाहोहियं, एवं केवली, एवं सिद्धं।
'परमाहोहियं' ति परमावधिकं। (वृ० प० ६५७)
८. जाव— (श० १४।१४०)
जहा णं भंते ! केवली सिद्धं जाणइ-पासइ, तहा णं सिद्धे वि सिद्धं जाणइ-पासइ ?
हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१४१)

९. केवली प्रभु ! भाखै नैं वागरै ? हंता कहै जिनराय जी।
अणपूछयां बोलै ते भाषा, पूछ्यां वागरणाय जी।।

९. केवली णं भंते ! भासेज्ज वा ? वागरेज्ज वा ? हंता भासेज्ज वा, वागरेज्ज वा। (श० १४।१४२)
'भासेज्ज व' त्ति भाषेतापृष्ट एव, वागरेज्ज' त्ति प्रष्टः सन् व्याकुर्यादिति।

१०. जेम केवली भाखै-वागरै, तेम सिद्ध पिण जेह जी।
भाखै नैं वागरै प्रभुजी ? अर्थ समर्थ न एह जी।।

१०. जहा णं भंते ! केवली भासेज्ज वा वागरेज्ज वा, तहा णं सिद्धे वि भासेज्ज वा वागरेज्ज वा ? नो इणट्ठे समट्ठे। (श० १४।१४३)

११. किण अर्थे प्रभुजी ! इम कहियै, जेम केवली ताहि जी।
भाखै-वागरै तेम सिद्ध जे, भाखै-वागरै नांहि जी ?

११. से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—जहा णं केवली भासेज्ज वा वागरेज्ज वा नो तहा णं सिद्धे भासेज्ज वा वागरेज्ज वा ?

१२. श्री जिन भाखै भवस्थ केवली, उट्ठाण कर्म सहीत जी।
बल वीर्य नैं पुरिसकार वलि, परक्कम करी वदीत जी।।
१३. सिद्ध उट्ठाण रहित छै यावत, परक्कम करि नैं रहीत जी।
तिण अर्थे करि जाव वागरै, पूर्व पाठ प्रतीत जी।।

१२. गोयमा ! केवली णं सउट्ठाणे सकम्मे सबले सवीरिए सपुरिसक्कार-परक्कमे।
१३. सिद्धे णं अणुट्ठाणे जाव (सं० पा०) अपुरिसक्कार-परक्कमे। से तेणट्ठेणं जाव (सं० पा०) वागरेज्ज वा। (श० १४।१४४)

१४. केवलज्ञानी हे भगवंत जी ! मींची चक्खु खोलंत जी।
उघाड़ी आंख प्रतै वलि मींचै ? श्री जिन भाखै हंत जी।।
१५. जेम केवली मींचै चक्खू, मींची नै खोलंत जी।
तेम सिद्ध पिण मींचै-खोलै ? जिन कहै एम न हुंत जी।।

१४. केवली णं भंते ! उम्मिसेज्ज वा ? निम्मिसेज्ज वा ? हंता उम्मिसेज्ज वा निम्मिसेज्ज वा। (श० १४।१४५)
१५. जहा णं भंते ! केवली उम्मिसेज्ज वा, निम्मिसेज्ज वा, तहा णं सिद्धे वि उम्मिसेज्ज वा निम्मिसेज्ज वा ? नो इणट्ठे समट्ठे। एवं चेव।

*लय : कनकमंजरी चतुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. इमहिज संकोचै नें पसारै, ठाणं एम कहेह जी।
ऊर्द्ध थायवो तथा बेसवो, तथा सूयवो जेह जी।।

१७. सेज्जं ते शय्या वसति प्रति, निसीहियं इम हुंत जी।
अतिहि अल्प काल वसति प्रति, केवलज्ञानी करंत जी।।

१८. प्रभु! केवली रत्नप्रभा प्रति, रत्नप्रभा छै एह जी।
इहविध ते जाणैं नें देखै? जिन कहै हंता जेह जी।।

१९. जिम प्रभु! केवली रत्नप्रभा प्रति, जाणै नें देखंत जी।
तिम सिद्ध पिण जाणैं नें देखै? श्री जिन भाखै हंत जी।।

२०. प्रभु! केवली सक्करप्रभा प्रति, जाणैं नें देखंत जी?
एवं चेव इमज जावत वलि, अधः सप्तमी हुंत जी।।

२१. हे प्रभु! केवली सौधर्म कल्प प्रति, सुधर्म कल्प छै एह जी।
इणविध जाणै-देखै? हंता, एवं चेव कहेह जी।।
२२. इम ईशाण जाव इम अच्युत, ग्रैवेयक भगवंत जी!
केवलज्ञानी जाणैं-देखै? एवं चेव उदंत जी।।

२३. एम अनुत्तर पवर विमाणज, केवली हे भगवंत जी!
सिद्धशिला प्रति जाणैं-देखै? एवं चेव कहंत जी।।

२४. प्रभु! केवली परमाणु प्रति, परमाणू छै एह जी।
एम केवली जाणैं-देखै? एवं चेव कहेह जी।।
२५. दोय प्रदेश खंध इम जावत, जिम प्रभु! अनंतप्रदेश जी।
अनंतप्रदेशिक ए इम केवली, जाणैं-देखै अशेष जी।।

२६. तेम सिद्ध पिण अनंतप्रदेशिक, जाणैं-देखै तंत जी?
हंता जाणैं नें देखै छै, सेवं भंते! सेवं भंत! जी।।

२७. चवदम शतक नों दशम उद्देशक, अर्थ अनोपम ख्यात जी।
चवदम शत पिण थयो संपूरण, विविध प्रश्न अवदात जी।।
२८. संवत उगणीसै बावीसै, प्रथम जेठ सुदि बीज जी।
सहर लाडणूं दीख्या मोच्छव,
वलि अणसण महोत्सव चोज जी।।
२९. उदयराज तपस्वी तपसा रा, बावीसमें दिन जेह जी।
संथारो पचख्यो अति हठ सूं, गुणपचासम दिन एह जी।।
३०. संत सैंताली सौ समणी रो, मेळो तीरथ च्यार जी।
संथारा नो जबरो महोत्सव, देख्यां हरष अपार जी।।

१६. एवं आउंटेज्ज वा पसारेज्ज वा, एवं ठाणं वा
'ठाणं' ति उर्द्ध्वस्थानं निषदनस्थानं त्वग्वर्त्तनस्थानं चेति। (वृ० प० ६५७)
१७. सेज्जं वा निसीहियं वा चेएज्जा।
'सेज्जं' ति शय्यां—वसतिं 'निसीहियं' ति अल्पतर-कालिकां वसतिं 'चेएज्ज' त्ति कुर्यादिति।
(वृ० प० ६५७)
१८. केवली णं भंते! इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभा-पुढवीति जाणइ-पासइ?
हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१४७)
१९. जहा णं भंते! केवली इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणइ-पासइ, तहा णं सिद्धे वि इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणइ-पासइ?
हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१४८)
२०. केवली णं भंते! सक्करप्पभं पुढविं सक्करप्पभा-पुढवीति जाणइ-पासइ? एवं चेव। एवं जाव अहे-सत्तमं। (श० १४।१४९)
२१. केवली णं भंते! सोहम्मं कप्पं सोहम्मकप्पे त्ति जाणइ-पासइ? हंता जाणइ-पासइ एवं चेव।
२२. एवं ईसाणं, एवं जाव अच्चुयं। (श० १४।१५०)
केवली णं भंते! गेवेज्जविमाणं गेवेज्जविमाणे त्ति जाणइ-पासइ? एवं चेव।
२३. एवं अणुत्तरविमाणे वि। (श० १४।१५१)
केवली णं भंते! ईसिपब्भारं पुढविं ईसिपब्भारपुढवीति जाणइ-पासइ? एवं चेव। (श० १४।१५२)
२४. केवली णं भंते! परमाणुपोग्गलं परमाणुपोग्गले त्ति जाणइ-पासइ? एवं चेव।
२५. एवं दुपएसियं खंधं, एवं जाव— (श० १४।१५३)
जहा णं भंते! केवली अणंतपएसियं खंधं अणंतपएसिए खंधे त्ति जाणइ-पासइ।
२६. तहा णं सिद्धे वि अणंतपएसियं खंधं अणंत-पएसिए खंधे त्ति जाणइ-पासइ? हंता जाणइ-पासइ। (श० १४।१५४)
सेवं भंते! सेवं भंते त्ति। (श० १४।१५५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. तीनसौ पंचमी ढाल कही ए, भिक्षु भारीमाल ऋषिराय जी।
तीर्थ संपती सखर साहिबी, 'जय-जश' हरष सवाय जी ।।

गीतक छंद

१. चउदम शत नीं जोड़ कृत सद्गुरु प्रसाद थकी मया।
जन भव्य नें कल्याण सिद्धी वर स्वभाव सुगुरु दया ।।

२. ते परम उपकारक सुगुरु नीं जय विजय थावो सदा।
सम्यक्त्व चरण सुबुद्धि पाई तसु प्रसाद थकी मुदा ।।

१,२. चतुर्दशस्येह शतस्य वृत्ति-
र्येषांप्रभावेण कृता मयैषा।
जयन्तु ते पूज्यजना जनानां
कल्याणसंसिद्धिपरस्वभावाः। (वृ० प० ६५७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चदश शतक
गोशालक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्चदश शतक

गोशालक पद

दूहा

१. चउदम शतके केवली, जाणैं रत्नप्रभादि ।
इम कह्यु ते परिज्ञानतो, आत्म संबंधि संवादि ।।

२. जिम भगवंत प्रगट कियो, गोतम अर्थे धार ।
स्व कुशिष्य गोसाल नों, गति नरकाऽधिकार ।।

३. तिण कारण इण पनरमां, शतके करी सुजोय ।
कहियै छै ते सांभलो, अर्थ थकी अवलोय ।।

४. नमस्कार थावो हिवै, श्रुतदेवता भणीज ।
पूज्यनीक जे भगवती, धुर मंगलीक सहीज ।।

वा०—श्रुत देव तीर्थंकर ते अर्थ नां कर्त्ता ते माटै । अनैं सूत्र थकी श्रुतदेव गणधर, ते सूत्र का कर्त्ता ते माटै । तथा तीर्थंकर की वाणी तेहनैं श्रुतदेव कहै तो ते पिण गुण अनैं गुणी नां अभेदोपचार थकी ते तीर्थंकर नैं हीज नमस्कार हुवै । 'णमो सुयदेवयाए भगवतीए' एहनों अर्थ इहां वृत्तिकार न कियो । बलि वृत्तिकार सम्बन्ध मिलायो तिहां कह्यो—आदि सूत्र कहियै छै, इम कही तेणमित्यादि—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' ए आदि सूत्र कह्यो । पिण 'णमो सुयदेवयाए भगवतीए' ए आदिसूत्र वृत्तिकार न कह्यो । ते माटे ए मंगलाचरण वाक्य नों न्याय बुद्धिवंत विचारी लीजो ।

५. तिण काले नैं तिण समय, नगरी सावत्थी नाम ।
हुंती अति रलियामणी, वर्णक कहिवूं ताम ।।

६. तेह सावत्थी बाहिरे, ईशाण कूण मझार ।
कोष्ठक चैत्य तिहां हुंतो, वर्णक अति विस्तार ।।

७. तिहां सावत्थी नगरीए, हालाहला जु नाम ।
कुंभारी गोसाल नीं, वसै श्राविका ताम ।।

८. ऋद्ध प्रतिपूर्ण जाव ही, अपरिभूत कहेह ।
गोसालक नां समय[1] में, लाधा अर्थ जिणेह ।।

९. वले ग्रह्या छै अर्थ जिण, पूछचा अर्थ जिणेह ।
विशेष करिकै अर्थ प्रति, निश्चय करचा तिणेह ।।

१०. हाड अनैं हाड मांहिली, मींजी लगै कहेह ।
प्रेमानुरागे करी रंगाणी छै जेह ।।

११. अन्य भणी ते इम कहै, अहो आउखावंत !
गोसालक नों समय जे, एहिज अर्थ सुतंत ।।

१२. परम अर्थ एहीज फुन, शेष सर्व पहिछाण ।
अनर्थभूत इसी कहै, बहु जन आगल वाण ।।

१. अनन्तरशते केवली रत्नप्रभादिकं वस्तु जानातीत्युक्तं तत्परिज्ञानं चात्मसंबन्धि । (वृ० प० ६५९)

२. यथा भगवता श्रीमन्महावीरेण गौतमायाविर्भावितं गोशालकस्य स्वशिष्याभासस्य नरकादिगतिमधिकृत्य (वृ० प० ६५९)

३. तथाऽनेनोच्यते इत्येवं संबंधस्यास्येदमादिसूत्रम् । (वृ० प० ६५९)

४. नमो सुयदेवयाए भगवईए ।

५. तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नामं नगरी होत्था—वण्णओ ।

६. तीसे णं सावत्थीए नगरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए, तत्थ णं कोट्ठए नामं चेइए होत्था—वण्णओ ।

७. तत्थ णं सावत्थीए नगरीए हालाहला नामं कुंभकारी आजीविओवासिया परिवसति ।

८. अड्ढा जाव बहुजणस्स अपरिभूया, आजीवियसमयंसि लद्धट्ठा

९. गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा

१०. अट्ठिमिंजपेम्माणुरागरत्ता,

११. अयमाउसो ! आजीवियसमये अट्ठे,

१२. अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे त्ति,

---

१. सिद्धांत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. आजीवक गोसाल नां, सिद्धांते करि ताम।
निज आतम प्रति भावती, विचरै छै तिण ठाम।।

१४. तिण काले नैं तिण समय, गोशालक अभिधान।
मंखलि नाम डाकोत नों पुत्र तेह पहिछान।।

१५. वर्ष चउवीस परिमाण ही, प्रव्रज्या पर्याय।
हालाहला जु नाम ही, कुंभकारिका ताय।।

१६. तेह कुंभ करिवा तणां, आपण हाट विषेह।
गोसालो निज संघ ही, साथ परिवरयो जेह।।

१७. आजीवक समये करी, निज आतम प्रति जान।
भावित ते वासित छतो, वि रै छै तेह स्थान।।

१८. तब ते गोसालक तणैं, मंखलिसुत नैं पास।
कदाचित अन्य दिवस ही, आगल कहियै जास।।

१९. प्रगट थया आव्या कन्है, दिशाचरा षट धार।
कहियै छै तसु नाम जे, सान कलंद कणियार।।

२०. अछिद्र चउथो जाणवूं, अग्निवेशायन हूंत।
छट्ठो अर्जुन नाम तसु, ए गोमायू-पूत।।

वा०—दिश नैं विषै चरै—गमन करै। मन में मानै—अम्हे भगवंत नां शिष्य छां ते दिशाचर, भगवंत नां शिष्य पासत्था थया—ढीला पड्या, इति टीकाकार नो मत अनैं चूर्णिकार कहै पार्श्वनाथ नां संतानिया।

२१. तब ते छहूं दिशाचरा, अष्ट प्रकार निमित्त।
ते इम दिव्य उत्पात फुन, आंतरिक्ष सुकथित्त।।

२२. भूकंपादी भौम फुन, अंग स्वर लक्षण जाण।
व्यंजन ए अठ पूर्वगत पूर्व मांहिला माण।।

२३. मार्ग कहितां गीत नृत्य, नवमो दशमो एह।
दशम शब्द कह्यु पाठ में, नवम लुप्त दीसेह।।

२४. निज-निज मति[1] दर्शन[2] करी, इतला प्रति जाणेह।
पूर्व श्रुत पर्याय जे, तेह थकी उद्धरेह।।

२५. निज निज मति दर्शन करी, उद्धरी पूर्व थकीज।
मंखलिसुत गोसाल प्रति, आश्रयी रह्या सहीज।।

२६. अम्है तुम्हारा शिष्य छां, एम कही पट जेह।
गोसाला पासे रह्या आश्रितवंत कहेह।।

२७. मंखलिसुत गोसाल तब, अष्टंग अठ भेदेह।
महानिमित्त नैं किणहि इक, उपदिश मात्र करेह।।

---

१. बुद्धि

२. दर्शन ते प्रमेय नैं परिच्छेदन

१३. आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ। (श० १५।१)

१४. तेणं कालेणं तेणं समएणं गोसाले मंखलिपुत्ते
'मंखलिपुत्ते' त्ति मंखल्यभिधानमंखस्य पुत्रः। (वृ० प० ६५९)

१५. चउव्वीसवासपरियाए हालाहलाए कुंभकारीए
'चउवीसवासपरियाए' त्ति चतुर्विंशतिवर्षप्रमाण-प्रव्रज्यापर्यायः। (वृ० प० ६५९)

१६. कुंभकारावणंसि आजीवियसंघसंपरिवुडे

१७. आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। (श० १५।२)

१८. तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अण्णदा कदायि

१९. इमे छ दिसाचरा अंतियं पाउब्भवित्था, तं जहा—
साणे, कलंदे, कण्णियारे,

२०. अच्छिदे, अग्गिवेसायणे, अज्जुणे गोमायुपुत्ते। (श० १५।३)

वा०—'दिसाचर' त्ति दिशं—मेरां चरन्ति—यांति मन्यन्ते भगवतो वयं शिष्या इति दिक्चराः देशाटा वा, दिक्चरा भगवच्छिष्याः पार्श्वस्थीभूता इति टीकाकारः 'पासावच्चिज्ज' त्ति चूर्णिकारः। (वृ० प० ६५९)

२१,२२. तए णं ते छ दिसाचरा अट्ठविहं पुव्वगयं
अष्टविधं—अष्टप्रकारं निमित्तमिति शेषः, तच्चेदं—दिव्यं १ औत्पातं २ आंतरिक्षं ३ भौमं ४ आंगं ५ स्वरं ६ लक्षणं ७ व्यंजनं ८ चेति, पूर्वगतं—पूर्वाभिधानश्रुतविशेषमध्यगतं। (वृ० प० ६५९)

२३. मग्गदसमं
तथा मार्गौ—गीतमार्गनृत्यमार्गलक्षणौ संभाव्येते 'दसम' त्ति अत्र नवमशब्दस्य लुप्तस्य दर्शनान्नवम-दशमाविति दृश्यं। (वृ० प० ६५९)

२४. सएहिं-सएहिं मतिदंसणेहिं निज्जूहंति
'निज्जूहंति' त्ति निर्यूथयंति पूर्वलक्षणश्रुतपर्याययूथान्निर्धारयन्ति उद्धरन्तीत्यर्थः। (वृ० प० ६५९)

२५,२६. निज्जूहित्ता गोसालं मंखलिपुत्तं उवट्ठाइंसु। (श० १५।४)
'उवट्ठाइंसु' त्ति उपस्थितवन्तः आश्रितवन्त इत्यर्थः। (वृ० प० ६५९)

२७. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तेणं अट्ठंगस्स महानिमित्तस्स केणइ उल्लोयमेत्तेणं
'अट्ठंगस्स' त्ति अष्टभेदस्य 'केणइ' त्ति केनचित्—तथाविधजनाविदितस्वरूपेण 'उल्लोयमेत्तेणं' त्ति उद्देशमात्रेण। (वृ० प० ६५९, ६०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. सर्व प्राण सहु भूत नैं, सर्व जीव नैं जाण।
सर्व सत्व नैं एह षट, अव्यभिचारि पिछाण ।।

२९. पूछ्यां छतांज वागरै, ते षट कहियै जेम।
लाभ अलाभ हि सुख रु दुख, जीवित मरिवूं तेम ।।

३०. मंखलिसुत गोसाल तब, तेणे अष्टांगे जेह।
महानिमित्त नैं किणहि इक, उपदिश मात्र करेह ।।

३१. नगरी सावत्थी नैं विषे, अजिन छतोज समील।
हूं जिन छूं इम आत्म प्रति, कहिवा नं जसु शील ।।

वा०—अजिणे जिणप्पलावी—अजिणे कहितां अवीतराग छतो, जिणप्पलावी कहितां जिन वीतराग, आत्मा प्रतै प्रकर्ष करिकै कहै, इम एहवूं शील ते जिनप्रलापी। इम अनेरा पिण पद जाणवा।

दूहा

३२. अरहत नहिं अरहंत हूं, इसो प्रलाप करेह।
अकेवली हूं केवली, इसो प्रलापी जेह ।।

३३. नहिं सर्वज्ञ सर्वज्ञ हूं, इसो प्रलापी तेह।
अजिन छतो जिन शब्द प्रति, प्रकाशतो विहरेह ।।

३४. तिण अवसर ते सावत्थी नगरी विषे कहाय।
शृंघाटक त्रिक जाव ही, महापंथ रै मांय ।।

३५. बहु जन मांहोमांहि जे, इम कहै जावत जेह।
एम परूपै इम खलु, अहो देवानुप्रियेह ।।

३६. मंखलिसुत गोशाल ते, जिन जिन-प्रलापी मंत।
जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाशतो विहरंत ।।

३७. ते किम ए वच मानियै ? इम कहै मांहोमांहि।
मण्णे पाठ नं अर्थ जे, वितर्क अर्थे ताहि ।।

३८. तिण काले नैं तिण समय, स्वामी श्री वर्द्धमान।
समवसरचा जावत वंदी परषद गई निज स्थान ।।

३९. तिण काले नैं तिण समय, श्रमण भगवंत महावीर।
तेह तणुं जे शिष्य बड़ो, इंद्रभूति गुणहीर ।।

४०. गोतम गोत्र तणो धणी, जावत छठ-छठ जाण।
इम जिम बीजा शतक नां, पंचमुद्देश पिछाण ।।

४१. नियंठ उद्देशक[1] नाम तसु, जाव गोचरी काज।
फिरतां रव बहु जन तणुं, निसुणी महामुनिराज।

४२. बहु जन इम कहै परस्पर, वलि इहविध भाखेह।
इम पन्नवै फुन इहविधे, करै परूपण जेह ।।

४३. इम निश्चै देवानुप्रिय ! मंखलिसुत गोशाल।
जिन-प्रलापी जाणवूं, जिन छतूं जिन कहै न्हाल ।।

---

१. भगवती श० २।१०६-१०९

२८. सव्वेसिं पाणाणं, सव्वेसिं भूयाणं, सव्वेसिं जीवाणं, सव्वेसिं सत्ताणं इमाइं छ अणइक्कमणिज्जाइं
'इमाइं छ अणइक्कमणिज्जाइं' ति इमानि षड् अनतिक्रमणीयानि—व्यभिचारयितुमशक्यानि। (वृ० प० ६६०)

२९. वागरणाइं वागरेति, तं जहा—लाभं अलाभं सुहं दुक्खं जीवियं मरणं तहा। (श० १५।५)
'वागरणाइं' ति पृष्टेन सत्ता यानि व्याक्रियन्ते—अभिधीयन्ते तानि व्याकरणानि। (वृ० प० ६६०)

३०. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तेणं अट्ठंगस्स महानिमित्तस्स केणइ उल्लोयमेत्तेणं

३१. सावत्थीए नगरीए अजिणे जिणप्पलावी

वा०—'अजिणे जिणप्पलावि' त्ति अजिनः—अवीतरागः सन् जिनमात्मानं प्रकर्षेण लपतीत्येवंशीलो जिनप्रलापी, एवमन्यान्यपि पदानि वाच्यानि। (वृ० प० ६६०)

३२. अणरहा अरहप्पलावी, अकेवली केवलिप्पलावी,

३३. असव्वण्णू सव्वण्णुप्पलावी, अजिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ। (श० १५।६)

३४. तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडग-जाव (सं० पा०) महापहपहेसु

३५. बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव (सं० पा०) एवं परूवेइ—एवं खलु देवाणुप्पिया !

३६. गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव (सं०पा०) पगासेमाणे विहरइ।

३७. से कहमेयं मन्ने एवं ? (श० १५।७)

३८. तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया। (श० १५।८)

३९. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूती नामं अणगारे।

४०,४१. गोयमे गोत्तेणं……छट्ठंछट्ठेणं……अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेइ।
'एवं जहा बितियसए नियंठुद्देसए' त्ति द्वितीयशतस्य पंचमोद्देशके। (वृ० प० ६६१)

४२. बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ, एवं भासइ, एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ—

४३. एवं खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४४. जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाश करतो जेह।
विचरै ते किम एह वच मानियै एम कहेह ?
४५. भगवंत गोतम तिह समय, बहु जन समीप एह।
अर्थ सांभली हिय धरी, जाव[1] जातश्रद्ध जेह ।।
४६. जाव भात-पाणी प्रतै, देखाड़ै गुणगेह।
जाव सेव करतो छतो, इहविध वयण वदेह ।।
४७. इम निश्चै भगवंत ! हूं, छट्ठ पारणैं जान।
तिमहिज बहु जन परस्पर, वदैजु इहविध वान ।।
४८. जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाश करतो जेह।
विचरै छै गोशाल ए, कहिवूं इहां लगेह ।।
४९. हिव गोतम पूछा करै, वीर प्रतै तिणवार।
ते किम हे भगवंतजी ! ए वच इम अवधार ।।
५०. ते हूं वांछूं हे प्रभु ! गोशालक नुं ताम।
मंखलिसुत नुं जन्म थी, चरित्र कहो सहु स्वाम ।।

वा०—उट्ठाणपारियाणियं परिकहियं—उट्ठाण कहितां उत्थान—जन्म तिहां थकी आरंभी नैं, पारियाणियं कहितां विविध व्यतिकर—चरित, परिकहियं कहितां ते कहो भगवंत ! एतलै गोशाला नों जन्म थीं चरित्र कहो, हूं सांभलवा वांछूं।

५१. हे गोतम ! इम आमंत्री, श्रमण भगवंत महावीर।
जे भगवंत गोतम प्रतै, इम कहै सुरगिर धीर ।।
५२. जेह भणी हे गोयमा ! बहु जन मांहोमांय।
इम कहै इम भाखैंजु इम, पन्नवै परूपै वाय ।।
५३. इम निश्चै गोशालको, मंखलि-अंगज एह।
जिन जिन-प्रलापी जाव ही, प्रकाशतो विहरेह ।।
५४. ते मिथ्या झूठो कहै, हूं पिण गोतम जाण।
एम कहूं जावत वली, एम परूपूं वाण ।।
५५. इम खलु ए गोशाल नुं, मंखलिसुत नुं जोय।
मंखलि नामै भिक्षुक, पिता हुंतो अवलोय ।।

वा०—मंखली नामे मंखे पिता होत्था—मंखलि कहितां मंखलि तो जेहनो नाम छै तिको अनैं मंखे कहितां चित्राम रा पाटिया लियां फिरै, एहवो भिक्षुक विशेष एतलै डाकोत नीं जाति ते गोशाला नुं पिता हुंतो।

५६. तेह मंखली मंख जे, भिक्षु डाकोत नैं न्हाल।
भद्रा नामे भारिया हुंती तनु सुकुमाल ।।
५७. जावत ही प्रतिरूप ते, तब ते भद्रा नार।
कदा अन्यदा ते हुई, गर्भवती तिहवार ।।
५८. तिण काले नैं तिण समय, सरवण एहवै नाम।
सण्णिवेस हुंतो तदा, ऋद्ध थमित अभिराम ।।
५९. जावत ही सुरलोक सम, छै जेहनूंज प्रकाश।
पासादीयाजु च्यार पद, देखण योग्य उजास ।।
६०. तिहां सरवण सण्णिवेश में, गोबहुल एहवै नाम।
विप्र वसै ते ऋद्धि करि, परिपूरण छै ताम ।।

१. अंगसुत्ताणि भाग २ श० १५।१३ में जायसड्ढे से पहले जाव नहीं है।

४४. जाव जिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ। से कहमेयं मन्ने एवं ? (श० १५।१२)

४५. तए णं भगवं गोयमे बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जायसड्ढे।

४६. जाव भत्तपाणं पडिदंसेइ जाव (सं० पा०) पज्जुवासमाणे एवं वयासी—

४७. एवं खलु अहं भंते ! छट्ठं तं चेव !

४८. जाव (सं० पा०) जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ।

४९. से कहमेयं भंते ! एवं ?

५०. तं इच्छामि णं भंते ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स उट्ठाणपारियाणियं परिकहियं। (श० १५।१३)

वा०—'उट्ठाणपरियाणियं' ति परियानं—विविधव्यतिकरपरिगमनं तदेव पारियानिकं—चरितम् उत्थानात्—जन्मन आरभ्य पारियानिकं उत्थानपारियानिकं तत्परिकथितं भगवद्भिरिति गम्यते। (वृ० प० ६६१)

५१. गोयमादी ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी—

५२. जण्णं गोयमा ! से बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ, एव भासइ, एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ—

५३. एवं खलु गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव जिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ।

५४. तण्णं मिच्छा। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि—

५५. एवं खलु एयस्स गोसालस्स मंखलीपुत्तस्स मंखली नामं मंखे पिता होत्था।

वा०—'मंखे' त्ति मंखः—चित्रफलकव्यग्रकरो भिक्षाकविशेषः। (वृ० प० ६६१)

५६. तस्स णं मंखलिस्स मंखस्स भद्दा नामं भारिया होत्था—सुकुमालपाणिपाया

५७. जाव पडिरूवा। तए णं सा भद्दा भारिया अण्णदा कदायि गुव्विणी यावि होत्था। (श० १५।१४)

५८. तेणं कालेणं तेणं समएणं सरवणे नामं सण्णिवेसे होत्था—रिद्धत्थिमियसमिद्धे

५९. जाव नन्दनवण-सन्निभप्पगासे, पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

६० तत्थ णं सरवणे सण्णिवेसे गोबहुले नामं माहणे परिवसइ—अड्ढे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१. जावत अपरिभूत छै, ऋग वेदादिक जाव।
ब्राह्मण तणां सिद्धांत में, सुपरिनिष्ठित भाव ॥

६२. ब्राह्मण ते गोबहुल नैं, गउ रहिवा नीं शाल।
ठाण सहित बाड़ो तसु, तेह हुंतो तिहकाल ॥

६३. तब ते मंखलि भिक्षुको, अन्य दिवस किहवार।
भद्रा भार्या गर्भिणी, तसु संघाते धार ॥

६४. चित्रफलग जसु हाथ में, एहवो छतूंज जेह।
भिक्षाचरपणैं आत्म प्रति भावित छतूंज तेह ॥

६५. पूर्वानुपूर्वे जिको, चालंतोज थकोज।
वलि ग्रामानुग्राम प्रति, उल्लंघतो छतोज ॥

६६. जिहां सरवण सण्णिवेस छै, जिहां गोबहुल तणीज।
गउ रहिवा नीं शाल छै, तिहां आवै आवीज ॥

६७. गोबहुल नामा विप्र नीं, गउ नीं शाल विषेह।
इक देशे निज भंड प्रति, मूकै मूकी तेह ॥

६८. सरवण सन्निवेस में, ऊच नीच मझिमेह।
कुल में घर समुदायणी भिक्षाचर्या जेह ॥

६९. ते भिक्षाचर्या विषे, फिरतो छतोज तेह।
पोतै जे रहिवा तणो, वसति स्थानक जेह ॥

७०. जे सगली दिशि नैं विषे, सर्व प्रकार करेह।
मार्गण-गवेषणा करै, इतलै ते जाचेह ॥

७१. रहिवा स्थानक सहु दिशे, सर्व प्रकार करेह।
मार्गण अनैं गवेषणा, करतो छतोज जेह ॥

७२. जेह अनेरे स्थानके, वसति अणलाभंत।
तब तेहिज गोबहुल जे, ब्राह्मण तणीज मंत ॥

७३. गौ रहिवा नीं शाल छै, जे इक देश विषेह।
वर्षाकाल निर्वाहिवा, करतो वास प्रतेह ॥

७४. तब ते भद्रा भार्या, गयां सवा नव मास।
मृदु जावत प्रतिरूप जे, बालक जनम्यो जास ॥

७५. तिण अवसर ते बाल नां, मात पिता धर मन।
दिन इग्यार व्यतिक्रम्ये, जाव बारमें दिन ॥

७६. ए एहवे रूपे तसु, गुणवंत गुणे निष्पन्न।
करै नाम जिह कारणैं, ए अम्ह बाल सुतन्न ॥

७७. ब्राह्मण जे गोबहुल नीं, गउशाला में जात।
तिणसूं थावो बाल नों, नाम गोशाल विख्यात ॥

७८. गउ नीं शाला ते भणी, गोशालो इम न्हाल।
मात-पिता ते बाल नां, नाम दियै गोशाल ॥

७९. गोशालो बालक तदा, बालभाव मूकाण।
परिणत मात्र विज्ञान जे, जोवन पाम्यो जान ॥

८०. पोतेहीज पिता तणां, फलग थकी भिन्न जेह।
करै चित्र नां पाटिया, ताम करीनैं तेह ॥

६१. जाव बहुजणस्स अपरिभूए, रिउव्वेद जाव बंभण्णएसु परिव्वायएसु य नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था।

६२. तस्स णं गोबहुलस्स माहणस्स गोसाला यावि होत्था। (श० १५।१५)

६३. तए णं से मंखली मंखे अण्णया कदायि भद्दाए भारियाए गुव्विणीए सद्धिं

६४ चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे

६५. पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे

६६. जेणेव सरवणे सण्णिवेसे जेणेव गोबहुलस्स माहणस्स गोसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

६७. गोबहुलस्स माहणस्स गोसालाए एगदेसंसि भंडनिक्खेवं करेइ, करेत्ता

६८. सरवणे सण्णिवेसे उच्च-नीय-मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए

६९. अडमाणे वसहीए

७०. सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेइ।

७१. वसहीए सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेमाणे

७२. अण्णत्थ वसहिं अलभमाणे तस्सेव गोबहुलस्स माहणस्स

७३. गोसालाए एगदेसंसि वासावासं उवागए। (श० १५।१६)

७४. तए णं सा भद्दा भारिया नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाण य राइंदियाणं वीतिक्कंताणं सुकुमालपाणिपायं जाव पडिरूवगं दारगं पयाया। (श० १५।१७)

७५. तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते····संपत्ते बारसमे दिवसे।

७६. अयमेयारूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं करेंति—जम्हा णं अम्हं इमे दारए

७७. गोबहुलस्स माहणस्स गोसालाए जाए तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं गोसाले-गोसाले त्ति।

७८. तए णं तस्स दारगस्स अम्मापितरो नामधेज्जं करेंति गोसाले ति। (श० १५।१८)

७९. तए णं गोसाले दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णयपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते

८०. सयमेव पाडिएक्कं चित्तफलगं करेइ, करेत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—स्वयमेव पोतैज एकलो आत्मा थई नैं एतलै पिता थी अलगो थई नैं चित्रफलग करै।

८१. चित्रफलग छै हस्त जसु, भिक्षाचर भावेह।
निज आतम प्रति भावतो, गोशालो विचरेह।।

वा०—'पाडिएक्कं' ति एकमात्मानं प्रति प्रत्येक पितुफलकादिभिन्नमित्यर्थः। (वृ० प० ६६१)

८१. चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। (श० १५।१९)

भगवान विहार पद

८२. तिण काले नैं तिण समय, हे गोतम ! गुणगेह।
तीस वर्ष लग हूं तदा, वसि गृहवास मझेह।।

८२. तेणं कालेणं तेणं समएणं अहं गोयमा ! तीसं वासाइं अगारवासमज्झावसित्ता

८३. देवपणुं माता-पिता, पाम्यो छतो सुजाण।
इम जिम भावनझयण में, आख्यो तिम पहिछाण।।

८३. अम्मा-पिईहिं देवत्तगएहिं समत्तपइण्णे एवं जहा भावणाए

वा०—आचारंग ना दूजा श्रुतखंध नां पनरमा अध्ययन नैं विषे, ते इम—माता पिता जीवतां दीक्षा न लेसूं, इसो अभिग्रह पूर्ण थयां।

वा०—'एवं जहा भावणाए' त्ति आचारद्वितीयश्रुतस्कन्धस्य पञ्चदशेऽध्ययने, (१५।२६-२९) अनेन चेदं सूचितं—'समत्तपइन्ने नाहं समणो होहं अम्मापियरम्मि जीवंते' त्ति समाप्ताभिग्रह इत्यर्थः। (वृ०प० ६६३)

८४. जावत इक सुर-दूस ग्रहि, मुंड थई गृह छंड।
वर अणगारपणां प्रतै, पडिवज्यो महिमंड।।

८४. जाव एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए। (श० १५।२०)

८५. तिण अवसर हूं गोयमा ! चरण लियै धुर वास।
अर्द्धमास-अर्द्धमास तप, करते छते विमास।।

८५. तए णं अहं गोयमा ! पढमं वासं अद्धमासं अद्धमासेणं खममाणे

८६. अस्थिक ग्राम नेश्राय जे, पढमं अंतर वास।
वर्षाकाल चउमास ही, रहिवा आव्युं तास।।

८६. अट्ठियगामं निस्साए पढमं अंतरवासं वासावासं उवागए।

वा०—पढमं अंतरवासं वासावासं उवागए। पढमं अतरवासं—अंतर अवसर अर्थात् पहिलो मेघ वृष्टि नों अवसर। वासावासं—वर्षाकाल नैं विषे वसिवो, चउमासे रहिवो, ते वर्षावास। अथवा अंतरे जाइवा वांछ्यो जे क्षेत्र, ते प्रतै अणपाम्यो पिण, बर्षा छता साधु अवश्य आवास करै ते अंतरावास। अंतरावास ते वर्षाकाल—चउमास, ते प्रति उपागत आश्रित।

वा०—'पढमं अंतरावासं' ति विभक्तिपरिणामादेव प्रथमेऽन्तरं—अवसरो वर्षस्य—वृष्टेर्यत्रासावन्तरवर्षः अथवाऽन्तरेऽपि—जिगमिषतक्षेत्रमप्राप्यापि यत्र सति साधुभिरवश्यमावासो विधीयते सोऽन्तरावासो—वर्षाकालस्तत्र 'वासावासं' ति वर्षासु वासः—चातुर्मासिकमवस्थानं वर्षावासस्तमुपागतः—उपाश्रितः। (वृ० प० ६६३)

८७. मास-मास द्वितीय वर्ष, करतो छतोज ताम।
पूर्वानुपूर्वी चलत, लंघित ग्रामानुग्राम।।

८७. दोच्चं वासं मासं मासेणं खममाणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे
'दोच्चं वासं' ति द्वितीये वर्षे। (वृ०प० ६६३)

८८. नगर राजगृह छै जिहां, नालंद पाड़ो जेथ।
तंतुवाय-शाला जिहां, हूं चलि आव्यो तेथ।।

८८. जेणेव रायगिहे नगरे, जेणेव नालंदा बाहिरिया, जेणेव तन्तुवायसाला, तेणेव उवागच्छामि,

८९. तिण ठामें हूं आयनैं, यथायोग्य प्रतिरूप।
अवग्रह प्रति म्है ग्रह्युं तदा, अवग्रह ग्रही तद्रूप।।

८९. उवागच्छित्ता अहापडिरूवं ओग्गहं ओगिण्हामि, ओगिण्हित्ता

९०. तंतुवाय-शाला तणैं, एक देश रै मांहि।
इक खूणैं चउमास ही, आश्रय रह्यूंज ताहि।

९०. तन्तुवायसालाए एगदेसंसि वासावासं उवागए। (श० १५।२१)

प्रथम मासखमण पद

९१. तिण अवसर हूं गोयमा ! मासखमण धुर न्हाल।
अंगीकार करिनैं तदा, विचरूं वणगर-शाल।।

९१. तए णं अहं गोयमा ! पढमं मासखमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि। (श० १५।२२)

९२. मंखलिसुत गोशाल तब, चित्रफलग करि जास।
भिक्षाचर भावे करी, भावित आतम तास।।

९२. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९३. पूर्वानुपूर्वी चलत, जाव उल्लंघतो तेथ ।
जिहां राजगृह नगर छै, नालंद पाड़ो जेथ ।।

९४. तंतुवाय-शाला जिहां, आवै तिहां चलाय ।
तिहां आवी तिण शाल रै, एक देश रै मांय ।।

९५. भंड मूकै मूकी करी, नगर राजगृह मांहि ।
ऊंच नीच मज्झिम कुले, फिरतां थकांज ताहि ।।

९६. किहांई अन्य स्थानक विषे, वसती अणलाभेह ।
तेहिज वणगर-शाल नैं, जे इक देश विषेह ।।

९७. वर्षाकाल चउमास ही, आय रह्यो तिहां वास ।
जिहांज हूं छूं गोयमा ! ते इक देश विमास ।।

९८. तिण अवसर हूं गोयमा ! प्रथम मास नैं जोय ।
पारण वणगर-शाल थी, निकल्युं निकली सोय ।।

९९. नालंदा पाड़ा तणैं, मध्योमध्य थईज ।
नगर राजगृह छै जिहां, तिहां आव्युं आवीज ।।

१००. नगर राजगृह उच्च नीच, जाव अटन कर तेह ।
विजय नाम गाथापति, पइठो हूं तसु गेह ।।

१०१. ताम विजय गाथापति, मुझ नैं आवत देख ।
देखी नैं हरष्यो वलि, लह्युं संतोष विशेख ।।

१०२. शीघ्रहीज आसण थकी, ऊठै ऊठी तेथ ।
पादपीढ थी ऊतरै, उतरी हरष समेत ।।

१०३. मूकै पग नीं पादुका, मूकी नैं तिहवार ।
फुन उत्तरासण एकपट करै करी धर प्यार ।।

१०४. अंजलि नां मुकुलित करौ, शिर चाढै कर जोड़ ।
सत-अठ पग मुझ सांमुहो, आवै धर अति कोड़ ।।

१०५. इम सन्मुख आवी करी, फुन मुझ प्रति त्रिण वार ।
आ दाहिण पासा थकी, करै प्रदक्षिण सार ।।

१०६. करी प्रदक्षिण इहविधे, मुझ प्रति ते वंदेह ।
नमण करै शिर नाम मुझ वंदी नमी शिरेह ।।

१०७. मुझ प्रति विस्तीरण घणुं, असणादिक चिउं आहार ।
हूं प्रतिलाभिस एहवूं, चिंतवी हरष्यो सार ।।

१०८. वलि प्रतिलाभंतो छतो, मन में हरषत थाय ।
फुन प्रतिलाभी नैं पछै, लह्युं हरष अधिकाय ।।

१०९. विजय गाथापति नैं तदा, ते द्रव्य-शुद्ध[1] करेह ।
वलि दातार-शुद्धे[2] करी, फुन लेणहार शुद्धेह ।।

९३. पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव रायगिहे नगरे जेणेव नालंदाबाहिरिया

९४. जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तन्तुवायसालाए एगदेसंसि

९५. भंडनिक्खेवं करेइ, करेत्ता रायगिहे नगरे उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे

९६. अण्णत्थ कत्थ वि वसहिं अलभमाणे तीसे य तन्तुवायसालाए एगदेसंसि

९७. वासावासं उवागए, जत्थेव णं अहं गोयमा !
(श० १५।२३)

९८. तए णं अहं गोयमा ! पढम-मासक्खमणपारणगंसि तन्तुवायसालाओ पडिनिक्खमामि, पडिनिक्खमित्ता

९९. नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छामि, निग्गच्छित्ता जेणेव रायगिहे नगरे तेणेव उवागच्छामि, उवागच्छित्ता

१००. रायगिहे नगरे उच्चनीय जाव (सं० पा०) अडमाणे विजयस्स गाहावइस्स गिहं अणुपविट्ठे ।
(श० १५।२४)

१०१. तए णं से विजए गाहावई ममं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ जाव (सं० पा०)

१०२. खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता

१०३. पाउयाओ ओमुयइ, ओमुइत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, करेत्ता

१०४. अंजलिमउलियहत्थे ममं सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ,

१०५ अणुगच्छित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ

१०६. करेत्ता ममं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

१०७. ममं विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पडिलाभेस्सामित्ति तुट्ठे,

१०८. पडिलाभेमाणे वि तुट्ठे, पडिलाभिते वि तुट्ठे ।
(श० १५।२५)

१०९. तए णं तस्स विजयस्स गाहावइस्स तेणं दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं पडिगाहगसुद्धेणं

---

१. उद्गम आदि दोष रहित ।
२. आशंसा अदि दोष रहित ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११०. तिविहेणं ते त्रिविध करि, द्रव्य दायक लेवाल ।
पूर्व कह्या ए त्रिविध शुद्ध, प्रथम अर्थ ए न्हाल ।।

१११. अथवा तिविहेणं तिको, त्रिविध त्रिभेदे शुद्ध ।
करण करावण अनुमति, द्वितीय अर्थ अविरुद्ध ।।

११२. त्रिकरण शुद्धेणं कह्यो, मन वच काया जोय ।
ए तीनूंई जोग तसु, शुद्ध करी अवलोय ।।

११३. इम ए त्रिविध त्रिकरण शुद्ध, एहवै दान करेह ।
मुझ प्रति प्रतिलाभ्यो छतो, बद्ध सुरायू जेह ।।

११४. कृत संसार परित्त तिण, तसु घर विषेजु एह ।
प्रगट थया दिव्य पंच ही, ते जिम तिमज कहेह ।।

११५. द्रव्य रूप धारा तणी, वृष्टि थई तिहवार ।
पंच वर्ण फूलां तणी, थई वृष्टि सुखकार ।।

११६. गगने वस्त्र तणी ध्वजा, तथा वस्त्र नीं वृष्टि ।
देव बजावी दुंदुभि, ए सुर वाजित्र सृष्टि ।।

११७. अंतर पिण आकाश में, अहो दान इम वान ।
देव करै उद्घोषणा, ए पंचम दिव्य जान ।।

११८. नगर राजगृह में तदा, शृंघाटक त्रिक ताहि ।
जाव महापथ नैं विषे, राजमारग रै मांहि ।।

११९. बहु जन मांहोमांहि मिल, इम कहै जावत जेह ।
जाव परूपै इहविधे, अति उचरंग धरेह ।।

१२०. धन्य ए देवानुप्रिया ! विजय गाथापति एह ।
कृतार्थ देवानुप्रिया ! विजय गाथापति जेह ।।

१२१. कृतपुन्य हे देवानुप्रिया ! विजय गाथापति जान ।
कृतलक्षण देवानुप्रिया ! विजय गाथापति मान ।।

१२२. कया णं लोक देवानुप्रिय, शुभ फल कीधा सार ।
इहभव नैं परभव तणां, विजय भणी हितकार ।।

१२३. भलुं लह्युं देवानुप्रिय ! फल मनु भवे उदार ।
जन्म अनैं जीवित तणुं, विजय नोंज सुखकार ।।

१२४. जेह तणां घर नैं विषे, तहारूवे तथाविद्ध ।
व्रत न जाण्या जेहनां, एहवूं श्रमण प्रसिद्ध ।।

१२५. साधू नों आकार जसु, प्रतिलाभ्येज छतेह ।
प्रगट हुआ दिव्य पंच ए, ते जिम तिमज कहेह ।।

१२६. वृष्टि द्रव्य धारा तणी, जावत ही आकाश ।
अहो दानं अहो दानं, सुर उद्घोषण जास ।।

१२७. तेह भणी ए धन्य छै, वली कृतारथ जाण ।
कृतपुन्य कृतलक्षण जिणे, कृतानुलोक पिछाण ।।

१२८. भलुं लह्युं मनु भव विषे, जन्म जीवित फल सार ।
विजय गाथापतिनूंज इम, जन कहै बारंबार ।।

११०. तिविहेणं
'तिविहेणं' ति उक्तलक्षणेन त्रिविधेन । (वृ० प० ६६३)

१११. अथवा त्रिविधेन कृतकारितानुमतिभेदेन । (वृ० प० ६६३, ६४)

११२. तिकरणसुद्धेणं
त्रिकरणशुद्धेन—मनोवाक्कायशुद्धेन । (वृ० प० ६६४)

११३. दाणेणं मए पडिलाभिए समाणे देवाउए निबद्धे,

११४. संसारे परित्तीकए, गिहंसि य से इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं, तं जहा—

११५. वसुधारा वुट्ठा, दसद्धवण्णे कुसुमे निवातिए

११६. चेलुक्खेवे कए, आहयाओ देवदुंदुभीओ,

११७. अंतरा वि य णं आगासे अहो दाणे, अहो दाणे त्ति घुट्ठे । (श० १५।२६)

११८. तए णं रायगिहे नगरे सिंघाडग जाव (सं० पा०) पहेसु

११९. बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव (सं० पा०)

१२०. धन्ने णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई, कयत्थे णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई,

१२१. कयपुण्णे णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई, कयलक्खणे णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई,

१२२. कया णं लोया देवाणुप्पिया ! विजयस्स गाहावइस्स,
'कया णं लोग' त्ति कृतौ शुभफलौ अवयवे समुदायोपचारात् लोकौ—इहलोकपरलोकौ । (वृ० प० ६६४)

१२३. सुलद्धेणं देवाणुप्पिया ! माणुस्सए जम्मजीवियफले विजयस्स गाहावइस्स

१२४. जस्स णं गिहंसि तहारूवे साधू
'तथारूपे' तथाविधे अविज्ञातव्रतविशेष इत्यर्थः । (वृ० प० ६६४)

१२५. साधुरूवे पडिलाभिए समाणे इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं, तं जहा—
'साधुरूपे' साध्वाकारे । (वृ० प० ६६४)

१२६. वसुधारा वुट्ठा जाव अहो दाणे अहो दाणे त्ति घुट्ठे ।

१२७. तं धन्ने कयत्थे कयपुण्णे कयलक्खणे, कया णं लोया,

१२८. सुलद्धे माणुस्सए जम्मजीवियफले विजयस्स गाहावइस्स, विजयस्स गाहावइस्स । (श० १५।२७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२९. मंखलिसुत गोशाल तब, बहु जन समीप एह।
अर्थ सुणी हृदये धरी, उपनुं संशय जेह।।

१३०. कोतूहल मन ऊपनुं, जिहां विजय नुं गेह।
तिहां आवै आवी करी, विजय घरे देखेह।।

१३१. वृष्टि द्रव्य धारा तणी, पंच वर्ण नां जाण।
फूलां नों ढिगलो पड्यो, अति अद्‌भुत पिछाण।।

१३२. विजय तणां घर थोज मुझ नीकलता प्रति देख।
देखी नैं हरष्यो घणुं, लह्युं संतोष विशेख।।

१३३. जिहां म्हांरोज समीप छै, तिहां आवै आवीज।
तीन वार जे मुझ प्रतै, दक्षिण पासा थीज।।

१३४. करै प्रदक्षिण इम करी, मुझ प्रति ते वंदेह।
शिर नामै वंदी नमी, मुझ प्रति एम कहेह।।

१३५. हे भगवन! थे मांहरा, धर्माचारज सार।
धर्मांतेवासी प्रभु! हूं थारो अवधार।।

१३६. तिण अवसर हूं गोयमा! मंखलिसुत गोशाल।
तेह तणां ए वचन नैं, आदर न दियो न्हाल।।

१३७. मन में भलो न जाणियो, रह्यो मून तिह ठाम।
प्रथम मास नां पारणो, आख्यो ए अभिराम।।

वा०—'इहां तीर्थंकर केवल ऊपनां पहिलां छद्मस्थपणैं कोई नैं उपदेश न देवै, शिष्य न करै एहवी अनादिया रीत छै। ते भणी भगवंत गोशाल नैं अंगीकार न कियो। ठाणांग ठाणे ९ के अर्थ में एहवी गाथा कही छै। ते लिखियै छै—

न परोवएसविसया, न य छउमत्था परोवएसं पि।
दिंति न य सीसवग्गं, दिक्खंति जिणा जहा सव्वे।।

वा०—छद्मस्थ तीर्थंकर अनेरा नैं उपदेश थकी प्रवर्त्तै नहीं अनैं अनेरा नैं उपदेश देवै पिण नहीं। वलि शिष्य वर्ग नैं दीक्षा न दियै।

ठाणांग नवमें ठाणे बड़ा टबा में कह्यो—तीर्थंकर छद्मस्थ थकां उपदेशे न चालै, छद्मस्थ थकां बखाण न करै, शिष्य नैं दीक्षा न दियै, ते माटै छद्मस्थपणै तीर्थंकर नैं दीक्षा देवा नीं रीत नथी। ते भणी भगवान गोशाला नैं अंगीकार न कियो।' (ज.स.)

१२९. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म समुप्पन्नसंसए,

१३०. समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव विजयस्स गाहावइस्स गिहे तणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पासइ विजयस्स गाहावइस्स गिहंसि

१३१ वसुहारं वुट्ठं, दसद्धवण्णं कुसुमं निवडियं।

१३२. ममं च णं विजयस्स गाहावइस्स गिहाओ पडिनिक्खममाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठे

१३३,१३४ जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ममं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करेत्ता ममं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता ममं एवं वयासी—

१३५. तुब्भे णं भंते! ममं धम्मायरिया, अहण्णं तुब्भं धम्मंतेवासी। (श० १५।२८)

१३६. तए णं अहं गोयमा! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं नो आढामि,

१३७. नो परिजाणामि, तुसिणीए संचिट्ठामि।

द्वितीय मासखमण पद

१३८. तिण अवसर हूं गोयमा! नगर राजगृह थीज।
निकली नालंद-पाड़ नैं, मध्योमध्य थईज।।

१३९. तंतुवाय-शाला जिहां, तिहां आव्यो आवीज।
द्वितीय मास अंगीकरी, विचरूं ध्यान धरीज।।

१४०. तिण अवसर हूं गोयमा! द्वितीय मास नैं जेथ।
पारणे वणकर-शाल थी निकल्युं निकली तेथ।।

१४१. नालंदा पाड़ा तणैं, मध्योमध्य थईज।
नगर राजगृह छै जिहां, जावत फिरतांहीज।।

१३८. तए णं अहं गोयमा! रायगिहाओ नगराओ पडिनिक्खमामि, पडिनिक्खमित्ता नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेण निग्गच्छामि।

१३९. निग्गच्छित्ता जेणेव तन्तुवायसाला तेणेव उवागच्छामि, उवागच्छित्ता दोच्चं मासखमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि। (श० १५।३०)

१४०. तए णं अहं गोयमा! दोच्च-मासखमणपारणगंसि तन्तुवायसालाओ पडिनिक्खमामि, पडिनिक्खमित्ता

१४१. नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छामि, निग्गच्छित्ता जेणेव रायगिहे नगरे जाव (सं० पा०) अडमाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४२. आणंद गाथापति तणैं, घर पेठो सुविशेख।
तब आणद गाथापति, मुज प्रति आवत देख।।

१४३. इम जिम आख्यु विजय नुं, तिम कहिवूं अधिकार।
णवरं इतो विशेष ते, आहार विषै अवधार।।

१४४. मुझ प्रति विस्तीरण घणो, खंड खाजादिक आहार।
प्रतिलाभिस इम चिंतवी, हरष्यो हिया मझार।।

तृतीय मासखमण पद

१४५. शेष तिमज कहिवो सहु, जावत तीजो मास।
अंगीकार करिनैं तदा, विचरूं ध्यान विलास।।

वा०—जिम पहिला मासखमण कै पारणे गोशाले कह्यो—थे म्हारा धर्माचार्य, हूं थारो धर्मांतेवासी शिष्य, ते इहां पिण जाव शब्द में पाठ कहिवो। तिवारै भगवान गोशाला का वचन नैं आदर दियो नहीं, मन में भलो जाण्यो नहीं, मूंन राखी। दीक्षा देवा री रीत नहीं, तिणसूं अंगीकार न कियो।

१४६. तिण अवसर हूं गोयमा! तृतीय मास नैं जोय।
पारण वणकर-शाल थी, निकल्यु निकली सोय।।

१४७. तिमज जाव फिरतां थकां, गाथापती सुनंद।
तेह तणां घर नैं विषे, कियो प्रवेश अमंद।।

१४८. गाथापती सुनंद तब, इम जिम विजय आख्यात।
णवरं इतो विशेष ते, आहार विषे अवदात।।

१४९. मुझ प्रति ते तब सर्वही, रसमय भोजन सार।
वर अभिलाषित रस करी, निपनुं छै जे आ'र।।

चतुर्थ मासखमण पद

१५०. आहार इसो प्रतिलाभियो, शेष तिमज सहु न्हाल।
तुर्य मास अंगीकरी, विचरचूं वणकर-शाल।।

वा०—अवशेष तिमहिज कहिवूं, इण वचने करी इहां पिण गोशालै कह्यो—आप म्हारा धर्माचार्य, हूं आपरो धर्मांतेवासी शिष्य। तब भगवान गोशाला रा वचन नैं आदर न दियो, मन में पिण भलो न जाण्यो। मून धारी रह्या। इहां ए अभिप्राय—जे छद्मस्थपणै दीक्षा देवा री रीत नहीं, ते माटै अंगीकार न कियो।

१५१. ते नालंदा पाड़ नैं, दूर निकट बहु नांहि।
इहां कोल्लागज नाम ही, सन्निवेस थो ताहि।।

१५२. तेहनों वर्णक जाणवो, कोल्लाग सन्निवेस।
ब्राह्मण बहुल वसै तिहां, ते ऋद्धवंत विशेष।।

१५३. जावत अपरिभूत छै, प्रथम वेद ऋग जाव।
ब्राह्मण संबंधि शास्त्र में, सुपरिनिष्ठित भाव।।

१५४. बहुल ब्राह्मण तिण अवसरे, कात्तिक मास तणीज।
चउमासी छै तेहनीं, पडिवा विषे कहीज।।

१४२. आणंदस्स गाहावइस्स गिहं अणुप्पविट्ठे। (श० १५।३१)
तए णं से आणंदे गाहावई ममं एज्जमाणं पासइ।

१४३. एवं जहेव विजयस्स नवरं

१४४. ममं विउलाए खज्जगविहीए पडिलाभेस्सामित्ति तुट्ठे।
'खज्जगविहीए' त्ति खण्डखाद्यादिलक्षणभोजन-प्रकारेण (वृ० प० ६६४)

१४५. सेसं तं चेव जाव (सं० पा०) तच्चं मासखमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि। (श० १५।३२-३७)

१४६. तए णं अहं गोयमा! तच्चमासखमणपारणगंसि तन्तुवायसालाओ पडिनिक्खमामि, पडिनिक्खमित्ता

१४७. तहेव जाव (सं० पा०) अडमाणे सुणंदस्स गाहावइस्स गिहं अणुपविट्ठे। (श० १५।३८)

१४८. तए णं से सुणंदे गाहावई एवं जहेव विजयगाहावई नवरं

१४९. सव्वकामगुणिएणं
'सव्वकामगुणिएणं' ति सर्वे कामगुणा—अभिलाष-विषयभूता रसादयः सञ्जाता यत्र तत्सर्वकामगुणितं तेन। (वृ० प० ६६४)

१५०. भोयणेणं पडिलाभेइ।
सेसं तं चेव जाव (सं० पा०) चउत्थं मासखमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि। (श० १५।३९-४४)

१५१. तीसे णं नालंदाए बाहिरियाए अदूरसामंते, एत्थ णं कोल्लाए नामं सण्णिवेसे होत्था।

१५२. सण्णिवेसवण्णओ। तत्थ णं कोल्लाए सण्णिवेसे बहुले नामं माहणे परिवसइ—अड्ढे

१५३. जाव बहुजणस्स अपरिभूए, रिउव्वेय जाव बंभण्णएसु परिव्वायएसु य नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था। (श० १५/४५)

१५४. तए णं से बहुले माहणे कत्तियचाउम्मासिय-पाडिवगंसि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५५ विस्तीरण कहितां घणुं, मधु घृत सहित सुहाय।
परमान्न क्षीर संघात ही, विप्र जिमाया ताय॥

वा०— मधु कहितां मीठो ते खांड अथवा मधु कहितां दूध।

१५६. शुद्धचर्थ 'चलु' कराविया, हूं गोयम! तिह वार।
मासखमण चउथा तणैं, पारण दिन सुविचार॥

१५७. तंतुवाय-शाला थकी, हूं निकल्युं अवधार।
तंतुवाय-शाला थकी, निकली कियो विहार॥

१५८. नालंदा पाड़ा तणैं, थई मध्य मध्येह।
निकली नैं कोल्लाग जे, सन्निवेस छै तेह॥

१५९. तिहां आव्युं आवी करी, कोलाग सन्निवेस।
तिहां उच्च नीच जाव ही, फिरतां छतां विशेष॥

१६०. ब्राह्मण बहुल तणैं घरै, हूं पेठो सुविशेख।
विप्र बहुल तिह अवसरे, मुझ प्रति आवत देख॥

१६१. तिमहिज जावत मुझ प्रतै, विपुल विस्तीर्ण ख्यात।
ते मधु घृत संयुक्त ही, परमान्न क्षीर संघात॥

१६२. हूं प्रतिलाभिस एहवूं, चिंतवि हरष्यो चित्त।
शेष कह्यूं जिम विजय नैं, तिमहिज बहुल कथित्त॥

१६३. जावत ब्राह्मण बहुल ही, दीधूं मोटो दान।
वार-वार गुणग्राम तसु, करता बहुविध जान॥

१६४. तिण अवसर गोशाल ते, मंखलिपुत्र कहाय।
मुझ प्रति वणकर-शाल में, अणदेखंतो ताय॥

१६५. नगर राजगृह नै विषे, भ्यंतर सहितज बार।
मुझ प्रति सहु दिशि नैं विषे, सर्व प्रकारे धार॥

१६६. मार्गण-गवेषणा करै, मांहरो किणही स्थान।
श्रुति वा खुति वा प्रवृति, अणलाभंतो जान॥

वा०—ममं कत्थवि सुति वा खुति वा पवत्ति वा अलभमाणे। ममं—मांहरो, कत्थवि किहांई, सुति—शब्द मात्र सांभलै ते श्रुति। आंखे अणदेखीवो जे अर्थ ते शब्द करि निश्चय करै ते माटै श्रुति नों ग्रहण, खुति छींक कृत। एणे पिण अदृश्य मनुष्यादिक नीं गमिता हुवै एतला माटै छींक नों ग्रहण कीधो ते छींक मात्र अथवा पवत्ति—वार्त्ता पिण अणलाभतो थको।

१६७. जिहां वणकर नीं शाल छै, तिहां आवै आवीज।
वस्त्र पहिरवा नां तदा, उत्तरीय वस्त्र कहीज॥

१६८. अथवा भाजन-कुंडिका, क्वचित भंडिका मान।
भाजन रांधण प्रमुख नां, वली पानही जान॥

१६९. वली चित्र नां पाटिया, ए वस्त्रादिक धार।
आपै ब्राह्मण नैं तदा, आपी नैं तिहवार॥

१५५. विउलेणं महुघयसंजुत्तेणं माहणे परमण्णेणं
'परमन्नेणं' ति परमन्नेन—क्षैरेय्या (वृ० प० ६६४)

१५६. आयामेत्था। (श० १५।४६)
तए णं अहं गोयमा! चउत्थमासखमणपारणगंसि

१५७. तंतुवायसालाओ पडिनिक्खिमामि, पडिनिक्खमित्ता

१५८. नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छामि, निग्गच्छित्ता जेणेव कोल्लाए सण्णिवेसे

१५९. तेणेव उवागच्छामि, उवागच्छित्ता कोल्लाए सण्णिवेसे उच्चनीय जाव (सं० पा०) अडमाणे

१६०. बहुलस्स माहणस्स गिहं अणुप्पविट्ठे। (श० १५/४७)
तए णं से बहुले माहणे ममं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता

१६१. तहेव जाव ममं विउलेणं महुघयसंजुत्तेणं परमण्णेणं।

१६२. पडिलाभेस्सामीति तुट्ठे सेसं जहा विजयस्स।

१६३. जाव बहुले माहणे २। (श० १५।४८-५०)

१६४. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं तंतुवायसालाए अपासमाणे

१६५. रायगिहे नगरे सब्भितरबाहिरियाए ममं सव्वओ समंता

१६६. मग्गण-गवेसणं करेइ, ममं कत्थवि सुतिं वा खुतिं वा पवत्तिं वा अलभमाणे

वा०—'सुइं व' त्ति श्रूयत इति श्रुतिः—शब्दस्तां चक्षुषा किल अदृश्यमानोऽर्थः शब्देन निश्चीयत इति श्रुतिग्रहणं 'खुइं व' त्ति क्षवणं क्षुतिः—छीत्कृतं ताम्, एषाऽप्यदृश्यमनुष्यादिगमिका भवतीति गृहीता, 'पवत्ति व' त्ति प्रवृत्ति वार्त्ता। (वृ० प० ६६४)

१६७. जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता साडियाओ य पाडियाओ य
'साडियाओ' त्ति परिधानवस्त्राणि 'पाडियाओ' त्ति उत्तरीयवस्त्राणि। (वृ० प० ६६४)

१६८. कुंडियाओ य वाहणाओ[1] य।

१६९. चित्तफलगं च माहणे आयामेइ, आयामेत्ता

१. पाठान्तर में 'पाहणाओ' शब्द लिया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७०. दाढी मूंछ सहीत ही, नापित पासे तेह।
मुंड करावै तिह समय, मुंडन करावी जेह।।

१७१. तंतुवाय-शाला थकी, निकलै निकलो जेह।
नालंदा पाड़ा तणैं, थई मध्य मध्येह।।

१७२. निकलै निकली नैं जिहां, कोल्लाग एहवै नाम।
सन्निवेस अछै तिहां, आवै आवी ताम।।

१७३. तिण अवसर कोल्लाग ते, सन्निवेस रै बार।
बहु जन इम कहै परस्पर, जाव परूपै धार।।

१७४. धन्य छै हे देवानुप्रिय! ब्राह्मण बहुल उदार।
तिमज जाव जीवित सुफल, बहुल विप्र नै सार।।

गोशालक का शिष्य रूप स्वीकरण पद

१७५. बार-बार जन इम वदै, तिण अवसर रै मांहि।
मंखलिसुत गोशाल ते, बहु जन समीप ताहि।।

१७६. एह अर्थ निसुणी करी, धारी हृदय मझार।
ए एहवे रूपे तदा, आतम विषे अवधार।।

१७७. जावत संकल्प ऊपनों, जेहवी जे सलहीज।
मांहरा धर्माचार्य नीं, धर्मोपदेशक नींज।।

१७८. श्रमण भगवंत महावीर नीं, द्युति कांति सुपरम्म।
जश बल वीर्य छै वली, पुरिसकार परक्कम्म।।

१७९. लब्ध प्राप्त सन्मुख थयो, नहिं छै तेहवी सार।
अन्य किणही तथारूप जे, श्रमण ब्राह्मण नीं धार।।

१८०. ऋद्धि द्युति जावत परक्कमे, लाधै पामै ताहि।
वलि तेह सन्मुख थयुं, अन्य तणुं ए नांहि।।

१८१. ते माटै संशय रहित, इह स्थानक अवलोय।
धर्माचारज मांहरा, धर्मोपदेशक सोय।।

१८२. श्रमण भगवंत महावीर जी, हुस्यै एम अवधार।
सन्निवेस कोल्लाग रै, भ्यंतर सहितज बार।।

१८३. मुझ प्रति सहु दिशि विदिश में, सर्व प्रकार करेह।
मार्गण-गवेषणा तदा, करै अधिक धर नेह।।

१८४. मुझ प्रति सर्व थकी तदा, सर्व प्रकार करेह।
मार्गण अनैं गवेषणा, करतो छतोज तेह।।

१८५. कोल्लाग सन्निवेस रै, बाहिर महि रमणीक।
मुझ संघात सन्मुख थयो, आय मिल्यो तहतीक।।

१८६. तिण अवसर गोशाल ते, मंखलिसुत अवधार।
हरष संतोष लह्यूं छतुं, जे मुझ प्रति त्रिण वार।।

१८७. आ दाहिण पासा थकी, प्रदक्षिणा प्रति देय।
जावत ही नमस्कार करि, इहविध वयण कहेय।।

१७०. सउत्तरोट्ठं भंडं[1] कारेइ, कारेत्ता
'सउत्तरोट्ठं' ति सह उत्तरौष्ठेन सोत्तरौष्ठं—सश्मश्रुकं यथा भवतीत्येवं 'मुंडं' ति मुण्डनं कारयति नापितेन। (वृ० प० ६६४)

१७१. तंतुवायसालाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं

१७२. निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव कोल्लाए सण्णिवेसे तेणेव उवागच्छइ। (श० १५/५१)

१७३. तए णं तस्स कोल्लागस्स सण्णिवेसस्स बहिया बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ।

१७४. धन्ने णं देवाणुप्पिया! बहुले माहणे, तं चेव जाव (सं० पा०) जीवियफले बहुलस्स माहणस्स, बहुलस्स माहणस्स। (श० १५/५२)

१७५ तए णं तस्स गोसालस्स मखलिपुत्तस्स बहुजणस्स अंतियं

१७६. एयमट्ठं सोच्चा निसम्म अयमेयारूवे अज्झत्थिए

१७७. जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था जारिसिया णं ममं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स

१७८. समणस्स भगवओ महावीरस्स इड्ढी जुती जसे बले वीरिए पुरिसक्कार-परक्कमे

१७९. लद्धे पत्ते अभिसमण्णागए नो खलु अत्थि तारिसिया अण्णस्स कस्सइ तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा

१८०. इड्ढी जुती जाव (सं० पा०) परक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमण्णागए,

१८१. तं निस्संदिद्धं णं एत्थ ममं धम्मायरिए धम्मोवदेसए

१८२. समणे भगवं महावीरे भविस्सतीति कट्टु कोल्लाए सण्णिवेसे सब्भितरबाहिरिए

१८३. ममं सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेइ।

१८४. ममं सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेमाणे

१८५. कोल्लागस्स सण्णिवेसस्स बहिया पणियभूमीए मए सद्धिं अभिसमण्णागए। (श० १५/५३)

१८६. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते हट्ठतुट्ठे ममं तिक्खुत्तो

१८७. आयाहिण-पयाहिणं जाव (सं० पा०) नमंसित्ता एवं वयासी—

---

१. 'भंड' धातु का प्रयोग क्षुर-मुंडन के अर्थ में हुआ है। पाठान्तर में 'मुंडं' शब्द लिया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८८. हे भगवन ! थे मांहरा, धर्माचार्य जगीस।
हूं छूं आप तणो सही, धर्मांतेवासी शीस॥

१८८. तुब्भे णं भंते ! मम धम्मायरिया, अहण्णं तुब्भं अंतेवासी। (श० १५/५४)

१८९. तिण अवसर हूं गोयमा ! मंखलिसुत गोशाल।
तेह तणां ए अर्थ प्रति, अंगीकरूं तिहकाल॥

१८८ तए णं अहं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं पडिसुणेमि। (श० १५/५५)

वा०—इहां वृत्तिकार कह्यो—इसा अयोग्य नैं पिण अंगीकार नुं करिवूं ते अक्षीण रागपणैं करी परिचय करिकैं, थोड़ी सी स्नेह सहित अनुकंपा सद्भाव थी। ते भणी ए अयोग्य नैं अंगीकार कियो। ते कार्य केवली नीं आज्ञा मांहिलो किम कहियै ? जे अक्षीण रागपणां थी परिचय थी, स्नेह अनुकंपा थी, जे कार्य करै, ते कार्य भलुं किम कहियै ?

वा०—यच्चैतस्यायोग्यस्याप्यभ्युपगमनं भगवतस्तदक्षीणरागतया परिचयेनेषत्स्नेहगर्भानुकम्पासद्भावात्।

वले थोड़ी स्नेह-अनुकंपा कही। जो भलो कार्य हुवै तो थोड़ी स्नेह अनुकंपा किम कहै ? थोड़ो क्रोध, थोड़ो मान, थोड़ी माया, थोड़ो लोभ भलो नहीं, तिम थोड़ी स्नेह अनुकंपा सहित कार्य कियो ते भलो नहीं।

वले वृत्तिकार कह्यो—छद्मस्थपणैं करी अनागत दोष नां अजाणवा थी अनैं निश्चै होणहार थी एहवूं कह्यूं। जो ए कार्य प्रशंसा करिवा योग्य हुवै तो छद्मस्थपणैं करी, अनागत दोष नां अजाणवा थी अनैं निश्चै होणहार थी इम क्यूं कहै ? जे छद्मस्थपणैं तीर्थंकर नैं दीक्षा देवा री रीत नहीं अनैं यां दीधी। ते माटै अक्षीण रागपणां थी परिचय मोह अनुकंपादिक थी ए कार्य कियो, इम जाणवूं।

छद्मस्थतयाऽनागतदोषानवगमादवश्यंभावित्वाच्चैतस्यार्थस्येति भावनीयमिति। (वृ० प० ६६४)

१९०. तिण अवसर हूं गोयमा ! मंखलिसुत गोशाल।
तेह तणैं संघात ही, पणित भूमि थी न्हाल॥

१९०. तए णं अहं गोयमा ! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं पणियभूमीए

१९१. जे षट वर्ष लगै सही, लाभ अलाभ विचार।
सुख दुख नैं सत्कार ही, असत्कार फुन धार॥

१९१. छव्वासाइं लाभं अलाभं सुहं दुक्खं सक्कारमसक्कारं

१९२. ए षट भोगवतो थको, अनित्य चितवणा सार।
तेह प्रतै करतो छतो, हूं विचरयो अवधार॥

१९२. पच्चणुब्भवमाणे अणिच्चजागरियं विहरित्था। (श० १५।५६)

तिल-स्तम्भ पद

१९३. तिण अवसर हूं गोयमा, अन्य दिवस किहवार।
प्रथम शरद अद्धा तणां, समय विषे सुविचार॥

१९३. तए णं अहं गोयमा! अण्णया कदायि पढमसरदकालसमयंसि

वा०—पढमं सरदकालसमयंसि—समय-भाषा[1] करिकै मृगशिर पोस-ए बिहुं मास नैं शरदकाल कहियै। तिहां 'प्रथम शरद काल समय' मृगशिर जाणवूं।

वा०—'पढमसरयकालसमयंसि' त्ति समयभाषया मार्गशीर्षपौषौ शरदभिधीयते तत्र प्रथमशरत्कालसमये मार्गशीर्षे। (वृ० प० ६६५)

१९४. अल्प[2] वृष्टि काय नैं विषे, मंखलिसुत गोशाल।
ते साथे सिद्धार्थ जे, ग्राम नगर थी न्हाल॥

१९४. अप्पवुट्ठिकायंसि गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं सिद्धत्थगामाओ नगराओ

१९५. कूर्म ग्राम जे नगर प्रति, चाल्यो करण विहार।
तिहां सिद्धार्थ ग्राम फुन, कूर्म ग्राम बिच धार॥

१९५. कुम्मगामं नगरं संपट्ठिए विहाराए। तस्स णं सिद्धत्थगामस्स नगरस्स कुम्मगामस्स नगरस्स य अंतरा

१९६. इहां मोटो तिल-थंभ इक, पत्र फूल करि सहीत।
हरितपणैं करि अतिहि ते, विराजमान कथीत॥

१९६. एत्थ णं महं एगे तिलथंभए पत्तिए पुप्फिए हरियगरेरिज्जमाणे।
'रेरिज्जमाणे' त्ति अतिशयेन राजमान इत्यर्थः। (वृ० प० ६६५)

१. सूत्र नीं भाषा।
२. इहां अल्प शब्द ते अभाववाची जाणवो। अविद्यमान वर्षा एतलै नहीं छै वर्षा ते काल।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१९७. श्री लक्ष्मी शोभा करी, अतीत अतीव धार।
उपशोभमान छतो जिहां, तिष्ठै—रहै तिवार ।।

१९८. मंखलिसुत गोशाल तब, ते तिल-बूंटो देख।
देखी नैं जे मुझ प्रतै, वंदै नमैं विशेख ।।

१९९. वंदी शिर नामी करी, मुझ प्रति बोल्यो वाय।
हे भगवंत ! तिल-थंभ ए, स्यूं नीपजस्यै ताय ?

२००. कि वा नीपजस्यै नहीं ? एह सप्त अवलोय।
तिल पुष्फ तेहनां जीव जे, मरी-मरी नैं सोय ।।

२०१. जास्यै उपजस्यै किहां, तब हूं गोयम ! तेह।
मंखलिसुत गोशाल प्रति, इहविध वयण वदेह ।।

२०२. गोशाला ! तिल-थंभ ए, सही निपजस्यै जाण।
नहीं निपजस्यै इम नहीं, प्रगटपणें पहिछाण ।।

२०३. एह सप्त तिल पुष्प नां, जीवा मरि-मरि ताहि।
एहिज तिल थंभ नैं विषे, इक तिल-संगली[1] मांहि ।।

२०४. ऊपजस्यै सप्त तिलपणैं, तिण अवसर रै मांय।
मंखलिसुत गोशाल ते, मुझ इम कहितै वाय ।।

२०५. एह अर्थ सरध्या नहीं, प्रतीत आंणी नांहि।
रोचविया नहीं ए अरथ, अणश्रद्धंतो ताहि ।।

२०६. प्रतीत अणकरतो थको, अणरोचवतो जेह।
मुझ आश्रयी वच एहनुं भूठो थावो एह ।।

२०७. इम मन चिंतवणा करी, मुझ पासा थी ताम।
हलवै-हलवै प्रच्छन्न ही, पाछो ऊसरै आम ।।

२०८. हलवै पाछो ऊपरी, जिहां तिल-बूंटो जेह।
तिहां आवै आवी करी, ते तिल-थंभ प्रतेह ।।

२०९. समूल माटी सहित हो, तुरत उपाड़ै आय।
तुरत उपाड़ी नैं तदा, एकंत न्हाखै ताय ।।

२१०. ते एकांत न्हाखी करी, तिणहिज क्षेत्र विषेह।
तिणहिज वेला गोयमा ! थयुं तिको निसुणेह ।।

२११. दिव्य उदक नों बादलो, प्रगट थयो जे मेह।
तब ते जल-बादल अतिहि, शीघ्रहीज गाजेह ।।

२१२. शीघ्रहीज अति गाज नैं, शीघ्रहीज अधिकाय।
चमकै विज्जु सौदामिनी, ते चमकी नैं ताय ।।

२१३. शीघ्रहीज नहिं अति उदक, नहिं अति कर्दम होय।
स्तोक-स्तोक जल बिंदुआ, विरली छांटां सोय ।।

१९७. सिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणे-उवसोभेमाणे चिट्ठइ। (श० १५।५७)

१९८. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तं तिलथंभगं पासइ, पासित्ता ममं वंदइ नमंसइ

१९९. वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—एस णं भंते ! तिलथंभए किं निप्फज्जिस्सइ ?

२००. नो निप्फज्जिस्सइ ? एए य सत्ततिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता

२०१. कहिं गच्छिहिंति ? कहिं उववज्जिहिंति ? तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—

२०२. गोसाला ! एस णं तिलथंभए निप्फज्जिस्सइ, नो न निप्फज्जिस्सइ।

२०३. एते य सत्ततिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता एयस्स चेव तिलथंभस्स एगाए तिलसंगलियाए

२०४. सत्त तिला पच्चायाइस्संति। (श० १५।५८)
तए णं से गोसाले मखंलिपुत्ते ममं एवं आइक्खमाणस्स

२०५. एयमट्ठं नो सद्दहइ, नो पत्तियइ, नो रोएइ, एयमट्ठं असद्दहमाणे,

२०६. अपत्तियमाणे, अरोएमाणे, ममं पणिहाए अयं ण मिच्छावादी भवउ
'ममं पणिहाए' त्ति मां प्रणिधाय—मामाश्रित्यायं मिथ्यावादी भवत्विति विकल्पं (वृ० प० ६६५)

२०७. त्ति कट्टु ममं अंतियाओ सणियं-सणियं पच्चोसक्कइ

२०८. पच्चोसक्कित्ता जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं तिलथंभगं

२०९. सलेट्ठुयायं चेव उप्पाडेइ, उप्पाडेत्ता एगंते एडेइ।

२१०. तक्खणमेत्तं च णं गोयमा !

२११. दिव्वे अब्भवद्दलए पाउब्भूए। तए णं से दिव्वे अब्भवद्दलए खिप्पामेव पतणतणाति,
'पतणतणायइ' त्ति प्रकर्षेण तणतणायते गर्जतीत्यर्थः। (वृ० प० ६६५)

२१२. खिप्पामेव पविज्जुयाति,

२१३. खिप्पामेव नच्चोदगं णातिमट्टियं पविरलपफुसियं
'नच्चोदगं' ति नात्युदकं यथा भवति 'नाइमट्टियं' ति नातिकर्दमं यथा भवतीत्यर्थः 'पविरलपप्फुसियं' ति प्रविरलाः प्रस्पृशिका—विप्रुषो यत्र तत्तथा। (वृ० प० ६६५)

---

1. तिल की फली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१४. पवनप्रजोगे नभवर्त्ति, ते तो रज कहिवाय।
रेणू कहितां भूमि स्थित, धूल कहीजै ताय ।।
२१५. इम ए रज रेणू तणो, विणासकारी मंत।
दिव्य उदक शीतादि सम, एहवूं मेह बरसंत ।।

२१६. जिणे मेघ करिनें थयुं, तिल-बूंटो थिर तेह।
थयूं विशेषे स्थिर वली, उपनुं प्रगटपणेह ।।
२१७. फुन बद्धमूल रह्यु छतुं, पड्यो जिहां थी जेह।
तिणहिज ठामें जई रह्युं, थाणो थिर थयुं तेह ।।

२१८. सप्त तिके तिल पुष्प नों, जीवा मरि-मरि ताहि।
तेहिज तिल नां थंभ नीं, एक फली रै मांहि ।।
२१९. सप्त तिलपणें समुपन्ना, तिण अवसर अवदात।
हूं गोतम ! गोशाल जे, मंखलिसुत संघात ।।

वैश्यायन बालतपस्वी पद

२२०. ज्यां कूर्म्मग्राम नामै नगर, तिहां हूं आव्यो धार।
तिण अवसर में जे कूर्म्म-ग्राम नगर नें बार ।।

२२१. नाम वेसियायण जसु, बाल तपस्वी जेह।
छठ-छठ अंतर रहित ही, तप करिवै करि तेह ।।
२२२. ऊंची बांह करी-करी, आतापन भू मांहि।
रवि सन्मुख आतापना, लेतो विचरै ताहि ।।
२२३. रवि तेजे आतप लही, ते षटपदी तिवार।
पासै पासै नीसरै, सर्व थी समस्त प्रकार ।।
२२४. प्राण भूत जीव सत्व नीं, दया अर्थ ही एह।
भूम पड़ी जूंआं प्रतै, वलि-वलि त्यांज ठवेह ।।

२२५. मंखलिसुत गोशाल तब, वेसियायण जसु नाम।
बाल तपस्वी प्रति तदा, देखै देखी ताम ।।
२२६. ए मांहरा पासा थकी, हलवै-हलवै होय।
तब ते पाछो ऊसरै, पाछो उसरी सोय ।।
२२७. जिहां वेसियायण अछै, बाल तपस्वी जेह।
तिहां आवै आवी करी, ते प्रति एम वदेह ।।
२२८. स्यूं तूं मुनि तपसी थयुं, अथवा मुनि यति जान।
मुणिक तत्व नो जाण छै, वा कदाग्रही पिछान ?

२२९. अथवा तूं जूंआं तणो, सेज्यातरियो सोय ?
तब ते वेसियायण तिको, बाल तपस्वी जोय ।।

२१४,२१५. रयरेणुविणासगं दिव्वं सलिलोदगं वासं वासति,
'रयरेणुविणासगं' ति रजो—वातोत्पाटितं व्योमवर्त्ति रेणवश्च—भूमिस्थितपांशवस्तद्विनाशनं—तदुपशमकं, 'सलिलोदगवासं' ति सलिला:—शीतादिमहानद्यस्तासामिव यदुदकं—रसादिगुणसाधर्म्यादिति तस्य यो वर्षः स सलिलोदकवर्षोऽतस्तं, . (वृ० प० ६६५)
२१६. जेण से तिलथंभए आसत्थे पच्चायाते

२१७. बद्धमूले, तत्थेव पतिट्ठिए।
'तत्थेव पइट्ठिए' त्ति यत्र पतितस्तत्रैव प्रतिष्ठितः।
(वृ० प० ६६५)
२१८. ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता तस्सेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगलियाए
२१९. सत्त तिला पच्चायाता। (श० १५।५९)
तए णं अहं गोयमा ! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सिद्धिं

२२० तए णं अहं·······जेणेव कुम्मग्गामे नगरे तेणेव उवागच्छामि, तए णं तस्स कुम्मग्गामस्स नगरस्स बहिया
२२१. वेसियायणे नामं बालतवस्सी छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं
२२२. उड्ढं बाहाओ पगिज्भिय-पगिज्भिय सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे विहरइ।
२२३. आइच्चतेयतवियाओ य से छप्पदीओ सव्वओ समंता अभिनिस्सवंति।
२२४. पाण-भूय-जीव-सत्त-दयट्ठाए च णं पडियाओ-पडियाओ तत्थेव-तत्थेव भुज्जो-भुज्जो पच्चोरुभेइ।
(श० १५।६०)
२२५. तये णं से गोसाले मंखलिपुत्ते वेसियायणं बालतवस्सिं पासइ, पासित्ता
२२६ ममं अंतियाओ सणियं-सणियं पच्चोसक्कइ, पच्चोसक्कित्ता
२२७. जेणेव वेसियायणे बालतवस्सी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वेसियायणं बालतवस्सिं एवं वयासी—
२२८. किं भवं मुणी ? मुणिए ?
'किं भवं मुणी मुणिए' त्ति किं भवान् 'मुनिः' तपस्वी जातः 'मुनिए' त्ति ज्ञाते तत्त्वे सति ज्ञात्वा वा तत्त्वम्, अथवा किं भवान् 'मुनी' तपस्विनी 'मुणिए' त्ति मुनिकः—तपस्वीति अथवा किं भवान् 'मुनिः' यतिः उत 'मुणिकः' ग्रहगृहीतः। (वृ० प० ६६८)
२२९. उदाहु जूयासेज्जायरए ? (श० १५।६१)
तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२३०. मंखलिसुत गोशाल नां, एह अर्थ प्रति जोय।
आदर नवि दीधो वलि, भलो न जाण्यो कोय।।
२३१. साभी मून रह्यु तदा, मंखलिसुत गोशाल।
वेसियायण जे बाल ही, तपस्वो प्रतै निहाल।।
२३२. बीजी तीजी वार पिण, इम कहै स्यूं तू जोय।
मुनि मुणिको जावत वली, जू-सिज्यातर होय।।
२३३. वेशियायण नामे तदा, मंखलिसुत गोशाल।
बीजी तीजी वार पिण, इम कह्यै छतैज न्हाल।।
२३४. शीघ्रहीज कोप्यो तदा, जाव मिसिमिसेमाण।
आतापन नीं भूमि थी, पाछो उसरै जाण।।
२३५. इहविध पाछो ऊसरी, तेजस समुद्घात।
तेणे करी समोहणै, इहविधि करी विख्यात।।
२३६. सात आठ पग पाछो वले, पाछो वली तिवार।
प्रयत्न विशेष अर्थ ही, मींढा नीं पर धार।।

२३७. मंखलिसुत गोशाल नैं, हणवा काजै जाण।
काढै तेज शरीर थी, ए उष्ण तेज पहिछाण।।
२३८. तिण अवसर हूं गोयमा! गोशालक नीं जेह।
तेह मंखलिपुत्र नीं, अनुकंपा अर्थेह।।
२३९. वेसियायण नामे तिको, बाल तपस्वी जेह।
तेह तणांज तेज प्रति, दूर हरण अर्थेह।।
२४०. वेसियायण गोशाल रै, इहां बिचालै न्हाल।
शीतल तेजूलेश प्रति, म्है मूंकी तिणकाल।।

यतनी

२४१. जा मुझ शीतल तेजूलेशं,
तिण लेश्या करिनैं सुविशेषं।
तेह वेसियायण नीं जाणी,
ऊन्ही तेजूलेश हणाणी।।
२४२. वेसियायण नामे तिह अवसर,
मुझ शीतल तेजूलेश्या कर।
पोता नीं जे उष्ण पिछाणी,
तेजूलेश हणाणी जाणी।।
२४३. गोशाला नां तनु नैं कांई,
थोड़ी विशेष बाधा ज्यांही।
देख्यूं छविच्छेद अणकरतो,
ते उष्ण तेजूलेश्या संहरतो।।

दूहा

२४४. उष्ण तेज प्रति संहरी, मुझ प्रति इम कहै वाय।
जाण्या भगवन! आपनैं, जाण्या जाण्या ताय।।
२४५. आप तणांज प्रसाद थी, दग्ध हुओ नहिं एह।
संभ्रम थी गत शब्द नैं, बार-बार उचरेह।।

२३०. गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं नो आढाति, नो परियाणति,
२३१. तुसिणीए संचिट्ठइ। (श० १५।६२)
तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते वेसियायणं बालतवस्सि
२३२. दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी—किं भवं मुणी? मुणिए? उदाहु जूयासेज्जायरए? (श० १५।६३)
२३३. तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी गोसालेण मंखलिपुत्तेणं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे
२३४. आसुरुत्ते जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभइ,
२३५. पच्चोरुभित्ता तेयासमुग्घाएणं समोहण्णइ, समोहणित्ता
२३६ सत्तट्ठपयाइं पच्चोसक्कइ, पच्चोसक्कित्ता
'सत्तट्ठपयाइं पच्चोसक्कइ' त्ति प्रयत्नविशेषार्थमुरभ्र इव प्रहारदानार्थमिति। (वृ० प० ६६८)
२३७ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरइ। (श० १५।६४)
२३८. तए णं अहं गोयमा! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अणुकंपणट्ठयाए
२३९. वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स उसिणतेयपडिसाहरणट्ठयाए
२४०. एत्थ णं अंतरा सीयलियं तेयलेस्सं निसिरामि।

२४१. जाए सा ममं सीयलियं तेयलेस्साए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स उसिणा तेयलेस्सा पडिहया। (श० १५।६५)

२४२. तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी ममं सीयलियाए तेयलेस्साए साउसिणं तेयलेस्सं पडिहयं जाणित्ता

२४३. गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासित्ता साउसिणं तेयलेस्सं पडिसाहरइ,

२४४ पडिसाहरित्ता ममं एवं वयासी—से गतमेयं भगवं! गत-गतमेयं भगवं! (श० १५।६६)
२४५. यथा भगवतः प्रसादादयं न दग्धः, सम्भ्रमार्थत्वाच्च गतशब्दस्य पुनः पुनरुच्चारणम्। (वृ० प० ६६८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—इहां वृत्तिकार कह्यु —भगवंते गोशाला नीं रक्षा कीधी ते सरागभावे करी। सरागभावे करी जे कार्य कीधूं तेह में धर्म किम कहियै ? वले दया नां एक-रसपणां थी कह्यो ते पिण सरागभावे स्नेह सहित अनुकम्पा करी। ते स्नेह-सहित अनुकम्पा कहो भावे दया कहो, ए मोह रूप दया जाणवी।

अनुकम्पा, दया, अनुक्रोश, करुणा इत्यादिक दया रा नाम हेम-कोष में कह्या छै। ते माटै ए मोह-सहित अणुकम्पा दया सावज्ज छै। हेमकोश (अभिधानचिन्तामणि) ३।३३

उत्तराध्ययन अध्ययन २२ में जे नेमनाथ भगवान आपरो पाप टालवा जीवां नैं देखी नैं पाछा फिरचा। तिहां अनुक्रोश-सहित पाठ में कह्यं। तिहां अवचूरी नैं विषे अनुक्रोश नुं अर्थ करुणा कह्यु छै, ते माटै ए दया करुणा निरवद्य छै। उत्तर० २२।१८

ज्ञाता अध्येन ९ में 'जिनरक्खियं समुप्पन्न-कलुणभावं' एहवूं पाठ छै। जे जिनरिख नैं रत्न-द्वीप नीं देवी रै ऊपरै करुण भाव ऊपनां, एहवूं कह्यू। ए करुणा दया सावज्ज छै। णाया० १।९।४२

वलि ज्ञाता अध्येन प्रथम गजभव मेघकुमार सुसला री अनुकम्पा करी संसार परित्त कियो ए अनुकम्पा निरवद्य छै। अनै अंतगडे कृष्णे वृद्ध नीं अनुकम्पा अर्थे हस्ती खंध बैठा ईंट ऊपाड़ उण रै घरै मूकी, एहवुं कह्यू। ते अनुकम्पा सावज्ज छै। वलि सुलसा नीं अनुकम्पा अर्थ हरिणेगमेषी देवता देवकी रा छह पुत्र सुलसा रै म्हैल्या, ते पिण अनुकम्पा सावज्ज छे, आज्ञा बाहिर छै। णाया० १।१।१८२ अंतगडो ३।८।९६, ३।८।४१

वलि ज्ञाता अ० एक अभयकुमार नीं अनुकम्पा करतो थको देवता आवी धारणी नो दोहलो पूरचो, ए पिण अनुकम्पा सावज्ज छै। वलि गर्भ नीं अनुकम्पा अर्थे धारणी राणी मनगमता असणादिक भोगव्या, ए पिण अनुकम्पा सावज्ज छै। णाया० १।१।५९, १।१।७२

तथा उत्तराध्ययन अ० १२ हरिकेशी नीं अनुकम्पा करिकै ब्राह्मणां नैं जक्ष अनेक जाब देई छात्रां नैं ऊंधा पाड़या, ए पिण सावज्ज। इत्यादिक अनेक-अनेक अनुकम्पा कही। पिण जेहनी केवली आज्ञा न देवै ते अनुकम्पा—दया सावज्ज। अनै केवली आज्ञा देवै ते अनुकम्पा—दया निरवद्य छै। उत्तरा० १२।२४

जे दया नों नाम करुणा हेमकोश में कह्यो छै तो जे नेमनाथ जी नैं जीवां री अनुक्रोश, करुणा, दया कही ते तो निरवद्य छै। अनै जिनरखिया नै रैणादेवी री करुणा ऊपनीं कही, ते करुणा दया सावज्ज छै।

इण परै गोशाला नों संरक्षण भगवान कियो ते सराग-भाव स्नेह मोह सहित दया सावज्ज जाणवी। अनैं वृत्तिकार कह्यू—दोय साधां नै न वचावस्यै ते वीतराग भावे करी। लब्धि नां फोड़वा थकी तो दयावंत भगवान जद अधिक हुंता पिण वीत-राग थयां पछै मोह रूप दया नथी, तिणसूं वीतरागपणैं करी कह्या। वलि लब्धि अणफोड़िववा थी कह्या ते वीतरागी थयां पछै लब्धि फोड़वै नहीं। एहनों पिण न्याय विचारी जोईजै। जे भगवान छद्मस्थपणैं सराग भावे लब्धि फोड़वी, तेह में धर्म किम कहियै ?

इह च यद्गोशालकस्य संरक्षणं भगवता कृतं तत्स-रागत्वेन दयैकरसत्वाद्भगवतः।
यच्च सुनक्षत्रसर्वानुभूतिमुनिपुङ्गवयोर्न करिष्यति तद्वीतरागत्वेन लब्ध्यनुपजीवकत्वादवश्यंभाविभाव-त्वाद्वेत्यवसेयमिति। (वृ० प० ६६८)

कोइ कहै गोशाला नैं बचायो ते अनुकम्पा अर्थे कह्यो छै, तेहनो उत्तर—कृष्ण वृद्ध नीं अनुकम्पा करी १, हरिणेगमेषी देवता सुलसा री अनुकम्पा करी २, देवता अभयकुमार नीं अनुकम्पा करी ३, धारणी गर्भ नीं अनुकम्पा करी ४, यक्षे हरिकेशी नीं अनुकम्पा करी ५, जिनरक्षिते रत्नद्वीप नीं देवी नीं करुणा करी, ए पाछै कही ते अनुकम्पा करुणा सावज्ज छै।

तिमहिज भगवान छद्मस्थपणैं गोशाला नीं अनुकम्पा अर्थे शीतल तेजोलेश्या लब्धि फोड़वी नै बचायो ते लब्धि फोड़िवा नों कार्य निरवद्य किम हुवै ? इण शतक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में हीज पूर्वे भगवान कह्यो —हे गोतम ! वेसियायण बाल तपस्वी तो उष्ण तेजोलेश्या मूकी अनैं म्है गोशाला नीं अनुकम्पा अर्थे शीतल तेजोलेश्या मूकी। ते मांहरी शीतल तेजोलेश्या करिकै ते वेशियायण बाल तपस्वी नीं उष्ण तेजोलेश्या हणाणी — एहवी वार्त्ता प्रगट पाठ में छै। ते माटै उष्ण अनैं शीतल ए बिहुं तेजोलेश्या छै। ते बाल-तपस्वी उष्ण तेजोलेश्या फोड़िवी अनै भगवान शीतल तेजोलेश्या फोड़िवी।

छद्मस्थपणैं तो ए कार्य कियो अनैं केवल ऊपनां पछै पन्नवणा पद ३६ में कह्यो—आहारक लब्धि फोड़्व्यां जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया लागै। इमहिज वैक्रिय लब्धि फोड़्व्यां जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया लागै, इमज तेजु लब्धि फोड़्व्यां जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया लागै। इम कह्यो तो जोवो नीं, केवल ऊपनां पछै तो तेजु लब्धि फोड़्व्यां जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया कही। अनैं छद्मस्थपणैं पोतै तेजोलेश्या फोड़वी तो जे केवल ऊपनां पछै जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया कही ते वचन प्रमाण कीजै कै छद्मस्थपणैं कार्य कीधूं ते प्रमाण कीजै। न्याय दृष्टि करि विचारी जोइज्यो। जे आहारीक वैक्रिय तेजु लब्धि फोड़वेला तेहनैं जघन्य ३ उत्कृष्ट ५ क्रिया लागै हीज पिण इम न कह्यो छद्मस्थपणैं तीर्थंकर अथवा गणधर त्यां नैं तो न लागै अनैं बीजा लब्धि फोड़वै तो लागै—एहवूं वचन नथी। पण्णवणा ३६।७०-७७

भगवती शतक २० में जघा विद्या चारण लब्धि फोड़वै ते थानक बिना आलोयां मरै तो विराधक कह्यो। भगवई श० २०।८७

तिहां वृत्ति में पिण लब्धि नुं फोड़िवूं निश्चय प्रमाद कह्यो। तथा भगवती शतक १६ उ० १ आहारक लब्धि फोड़्व्यां आहारक शरीर निपजायां प्रमाद आश्री अधिकरण कह्यो। भगवती वृ० प० ७९५ भगवई श० १६।२३,२४

तथा भगवती शतक ३ उ० ४ मायी वैक्रिय करै ते बिना आलोयां मरै तो विराधक। इम अनेक ठामें लब्धि फोड़वणी सूत्र में वर्जी छै। ते माटै भगवान छद्मस्थ-पणैं शीतल तेजोलेश्या फोड़वी ते सरागभावे करी ए कार्य कियो। तेहमें धर्म किम कहियै ? भगवई श० ३।१९२

कोइ कहै—चउदै पूर्वधर चउनाणी भगवान हुंता, ते किम खलावै ? तेहनों उत्तर—दशवैकालिक अ० ८ गाथा ५० मीं दृष्टिवाद नों जाण वचन में खलाय। जाणी ते प्रतै और साधु नैं हसणो नहीं। दसवै० ८।५०

तथा उपासगदशा अ० १ चउनाणी चउदै पूर्वधारी गोतम चउदै हजार साधां रा शिर सेहरा प्रथम गणधर ते पिण आणंद नैं घरै वचन में खलाया। ते माटै चउदै पूर्वधर चउनाणी वचन में खलावै तेहनों कारण नहीं। छद्मस्थपणैं भगवान छठै गुण-स्थान हुंता, तिहां प्रमाद आश्रव अनैं कषाय आश्रव हुंतो। ते प्रमाद कषाय आश्रयी समय-समय सात-सात कर्म लागता, छद्मस्थपणैं तो दश सुपना देख्या, तिहां प्रथम स्वप्ने पिशाच प्रति जीतो—ए पिण भाव सावज्ज जाणवो, वलि छद्मस्थपणैं गोशाला नैं दीक्षा दीधी, तिल बतायो, तेजोलेश्या सिखाई, शीतल तेजोलेश्या फोड़वी—ए सर्व कार्य छद्मस्थपणां थी किया, पिण जे कार्य नीं केवली आज्ञा न देवै, तेहनैं निरवद्य किम कहियै ? ज्ञान नेत्रे करी विचारी जोईज्यो। इहां तो वृत्तिकार पिण गोशाला नैं बचायो, ते सरागभावे करी कह्यं अनैं दोय साधां नैं न बचावस्यै ते वीतराग भावे करी कह्यूं। ज्ञान नेत्रे करी विचारी जोईज्यो। उवासग० १।७९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गीतक छंद

२४६. कह्यु वृत्ति में गोशाल नों, भगवंत संरक्षण कियो।
सरागभावे करि प्रभु, इक दया रस थी राखियो।
जे उभय मुनि नवि राखस्यै, ते वीतरागपणैं वृत्ति।
फुन लब्धि अणफोड़ण थकी, वलि अवश्यभावी भाव थी।।

दूहा

२४७. गोशालो तिण अवसरे, मुझ प्रति इम कहै वाय।
जूं-सिज्यातरियो किसूं, तुज प्रति भाखै ताय।।
२४८. जाण्या भगवंत! तो भणी, जाण्य-जाण्या ताय।
तब गोयम! गोशाल प्रति, हूं इम बोल्यो वाय।।

२४९. हे गोशाला! तूं इहां, वेशियायण नामेह।
बाल तपस्वी प्रति तदा, देखी नेत्र करेह।।
२५०. धीरै-धीरै ऊसरी, मुझ पासा थी ताय।
जिहां वेशियायण तिहां, जइ बोल्यो इम वाय।।

यतनी

२५१. स्यूं तूं मुनि तपस्वी थयुं सोई,
अथवा मुनि ते यति छै कोई।
के तूं मुणिको तत्व नो जाण, के कदाग्रही जूंआ रो स्थान?
२५२. वेशियायण तपस्वी तिवारं,
तुझ वच आदर न दियैं लिगारं।
मन मांहे भलो नहिं जाणैं, रह्यो मून धरी तिह टाणैं।।
२५३. अहो गोशाला! तूं तब हेर,
तिण बाल तपस्वी प्रति फेर।
इम बे त्रिण बार उच्चरियो,
तूं मुनि के जाव जूं-सेज्यातरियो।।
२५४. वेशियायण बाल तपस्वी विवार,
तुम्ह इम कह्यै बे त्रिण वार।
आसुरत्ते जाव अवलोय, पाछो ऊसरै ऊसरी सोय।।
२५५. तुझ हणवा तेज मूकेह, तब हूं तुझ अनुकंप अर्थेह।
तिणरी उष्ण तेज हणवा न्हाल,
मूकी शीतल तेजु अंतराल।।

२५६. बाल तपस्वी चित्त ठाणी, उष्ण तेजु हणाणी जाणी।
कांइ थोड़ी पीड़ पिण देह, अथवा विशेष पीड़ प्रतेह।।

२५७. अथवा छविच्छेद न देखेह, उष्ण तेजोलेश्या संहरेह।
इम मुझ प्रति बोल्यो वाय, जाण्या-जाण्या हे भगवान! ताय।।

२४७. तए णं गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं वयासी—किं णं भंते! एस जूयासिज्जायरए तुब्भे एवं वयासी—
२४८. से गतमेयं भगवं! गत-गतमेयं भगवं! (श० १५।६७)
तए णं अहं गोयमा! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—
२४९. तुमं णं गोसाला! वेसियायणं बालतवस्सिं पाससि, पासित्ता
२५०. ममं अंतियाओ सणियं-सणियं पच्चोसक्कसि, जेणेव वेसियायणे बालतवस्सी तेणेव उवागच्छसि, उवागच्छित्ता वेसियायणं बालतवस्सिं एवं वयासी—

२५१. किं भवं मुणी? मुणिए? उदाहु जूयासेज्जायरए?

२५२. तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी तव एयमट्ठं नो आढाति, नो परिजाणति, तुसिणीए संचिट्ठइ।

२५३. तए णं तुमं गोसाला! वेसियायणं बालतवस्सिं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी—किं भवं मुणी? मुणिए? उदाहु जूयासेज्जायरए?

२५४. तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी तुमं दोच्चं पि तच्चंपि एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव पच्चोसक्कति, पच्चोसक्कित्ता
२५५. तव वहाए सरीरगंसि तेयलेस्सं निस्सिरइ। तए णं अहं गोसाला! तव अणुकंपणट्ठयाए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स उसिणतेयपडिसाहरणट्ठयाए एत्थ णं अंतरा सीयलियं तेयलेस्सं निसिरामि।
२५६. जाए सा ममं सीयलियाए तेयलेस्साए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स उसिणा तेयलेस्सा पडिहया···तव य सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा
२५७. छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासित्ता साउसिणं तेयलेस्सं पडिसाहरति, पडिसाहरित्ता ममं एवं वयासी—से गतमेयं भगवं! गत-गतमेयं भगवं! (श० १५।६८)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

२५८. मंखलिसुत गोशाल तब, सुण ए वच मुझ पास ।
बीहनों जावत पामियो, अतिही भय मन त्रास ।।

२५८. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं अंतियाओ एयमट्ठं सोच्चा निसम्म भीए जाव (सं० पा०) संजायभए

२५९. मुझ प्रति वंदी नमण करि, इम बोल्यो अवलोय ।
संक्षिप्त विस्तीर्ण प्रभु ! तेजलेश किम होय ।।

२५९. ममं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—कहण्णं भंते ! संखित्तविउलतेयलेस्से भवति ? (श० १५।६९)

२६०. तिण अवसर हूं गोयमा ! गोशाला प्रति ताय ।
तेह मंखलीपुत्र प्रति बोल्यो इहविध वाय ।।

२६०. तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—

२६१. हे गोशाला ! मुष्टि इक उड़द रु उष्ण जलेह ।
इक पुसली तप छट्ठ-छट्ठ, अंतर रहित करेह ।।

२६१. जेणं गोसाला ! एगाए सणहाए कुम्मासपिंडियाए एगेण य वियडासयेणं छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं

२६२. ऊंची बाह आतापना, सूर्य सन्मुख लेह ।
तसु छेहड़ै षट मास रै, तेज लेश ह्वै तेह ।।

२६२. उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे विहरइ । से णं अंतो छण्हं मासाणं संखित्तविउलतेयलेस्से भवइ । (श० १५।७०)

२६३. गोशालक तिण अवसरे, ए मुझ अर्थ प्रतेह ।
अंगीकार कर्‌यूं तदा, सम्यक विनय करेह ।।

२६३. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एयमट्ठं सम्मं विणएणं पडिसुणेति । (श० १५।७१)

तिलस्तम्भ-निष्पत्ति और गोशालक-अपक्रमण पद

२६४. तिण अवसर हूं गोयमा ! गोशालक संघात ।
अन्य दिवस कूर्म-ग्राम जे नगर थकी विख्यात ।।

२६४. तए णं अहं गोयमा ! अण्णदा कदायि गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं कुम्मगामाओ नगराओ

२६५. सिद्धार्थ फुन ग्राम जे, नगरे आवत ताम ।
जे तिल-थंभ मुझ पूछियो, झट आव्या ते ठाम ।।

२६५. सिद्धत्थग्गामं नगरं संपट्ठिए विहाराए । जाहे य मो तं देसं हव्वमागया जत्थ णं से तिलथंभए ।

२६६. तब गोशालो मुझ प्रतै, बोल्यो एहवी वाय ।
मुझ नैं प्रभु ! तुम जद कह्यूं, तिल नीपजसी ताय ।।

२६६. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं वयासी—तुब्भे णं भंते ! तदा ममं एवमाइक्खह जाव परूवेह—गोसाला ! एस णं तिलथंभए निप्फज्जिस्सइ नो न निप्फज्जिस्सइ,

२६७. तिमज सप्त पुफ-जीव वच, एक सूंगणी मांय ।
हुस्यै सप्त तिल तेह वच, मिथ्या प्रत्यक्ष दिखाय ।।

२६७. एते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता एयस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगलियाए सत्त तिला पच्चायाइस्संति, तण्णं मिच्छा ।

२६८. ते तिल-स्थंभ न नीपनों, सप्त पुष्प नां जीव ।
चवी सप्त तिल नहिं थया, इक सूंगणी अतीव ।।

२६८. इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ—एस णं से तिलथंभए नो निप्फन्ने, अनिप्फन्नमेव । ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता नो एयस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगलियाए सत्त तिला पच्चायाया । (श० १५।७२)

२६९. तिण अवसर हूं गोयमा ! गोशालक प्रति वाय ।
बोल्यो तैं मुझ जद वचन, श्रद्धा नहिं मन मांय ।।

२६९. तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—तुमं णं गोसाला ! तदा ममं एवमाइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहसि,

२७०. प्रतीतियो नहिं रोचव्यो, एह अर्थ अवलोय ।
अश्रद्धतो अप्रीततो, अणरोचवतो सोय ।।

२७०. नो पत्तियसि, नो रोएसि, एयमट्ठं असद्दहमाणे, अपत्तियमाणे, अरोएमाणे,

२७१. ए मिथ्यावादी हुवो, इम मन करी विचार ।
मुझ थी पाछो ऊसर्‌यो, धीरै-धीरै धार ।।

२७१. ममं पणिहाए अयण्णं मिच्छावादी भवउ त्ति कट्टु ममं अंतियाओ सणियं-सणियं पच्चोसक्कसि पच्चोसक्कित्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७२. जिहां तिल-थंभ तिहां आयनैं, यावत एकांत ठाम।
न्हाखंतोज उपाड़ नैं, हे गोशालक ! ताम ।।

२७३. ततखिण बादल अभ्र दिव्य, प्रगट थयो गोशाल।
तब ते दिव्य अभ्र बदल झट, तिमहिज यावत न्हाल ।।

२७४. तेहिज तिल नां थंभ नीं, एक सिंगली मांहि।
तदा ऊपनां सप्त तिल, जेम कह्यूं तिम ताहि ।।

२७५. हे गोशाला ! तेह एह, तिल नों थंभ निप्पन्न।
नथी तेह अणनीपनो, निश्चै करी इम जन्न ।।

२७६. ते सप्त तिल पुफ-जीव मरि, ए तिल-थंभ नीं जाण।
एक सिंगली नैं विषे, थया सप्त तिल आण ।।

२७७. इम निश्चै गोशालका ! वनस्पती रै मांय।
पउट्ट-परिहार करै तिके, मरि-मरि तसु तनु आय ।।

वा०—वणस्सति कहितां वनस्पति नां जीव जे परिवृत्य—मरी-मरी नैं एहिज वनस्पति नां शरीर नो परिहार—परिभोग, परिभोग ते तिहां ईज ऊपजवूं, ते परिवृत्य-परिहार कहियै ते प्रति परिहरंति—करै।

२७८. मंखलिसुत गोशाल तब, मुझ इम कह्ये छतेह।
एह अर्थ श्रद्धै नहीं, न प्रतीत न रुचेह ।।

२७९. एह अर्थ अणश्रद्धतो, जाव रोचवतो नांय।
जिहांज ते तिल-थंभ छै, आवै तिहां चलाय ।।

२८०. जिहां तिल-थंभ तिहां आय नैं, ते तिल-थंभ थकीज।
ते तिल तणी फली प्रतै, तोड़ै ततखिण हीज।

२८१. ते तिल-संगलि तोड़नैं, करतल विषेज सोय।
सप्त तिल फोड़ै तदा, प्रगटपणैं अवलोय ।।

२८२. तिण अवसर गोशाल नैं, सप्त तिल गिणतां एह।
एहवै रूपै आतमनि, जाव समुत्पन्न जेह ।।

२८३. इम निश्चै सहु जीव पिण, पउट्ट-परिहार करेह।
हे गोतम ! गोशाल नों, पउट्ट जाणवूं एह ।।

२८४. हे गोतम ! गोशाल नों, मुझ पासा थी जेह।
आतमाइं करिकै तसुं, पड़िवू जुदो कहेह ।।

वा०—वृत्तिकार आयाए पाठ नां बे अर्थ किया। भगवंत कहै—मांहरा पासा थी आयाए कहितां आत्माइं करी अपक्रमण ते जुदो पड़चो—नीसरचो अथवा आयाए कहितां आदाय तेजोलेश्या नों उपदेश ग्रहण करी नैं जुदो पड़चो।

तेजोलेश्या-उत्पत्ति पद

२८५. मंखलिसुत गोशाल तब, इक मुष्टी उड़देह।
इक पुसली उष्णोदके, छट्ठ-छट्ठ तप करेह ।।

२७२. जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवागच्छसि, उवागच्छित्ता तं तिलथंभगं सलेट्ठुयायं चेव उप्पाडेसि, उप्पाडेत्ता एगंतमंते एडेसि।

२७३. तक्खणमेत्तं गोसाला ! दिव्वे अब्भवद्दलए पाउब्भूए। तए णं से दिव्वे अब्भवद्दलए खिप्पामेव पतणतणाति, खिप्पामेव तं चेव जाव (सं० पा०)

२७४. तस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगलियाए सत्त-तिला पच्चायाया।

२७५. तं एस णं गोसाला ! से तिलथंभए निप्फन्ने, नो अनिप्फन्नमेव।

२७६. ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता एयस्स चेव तिलथंभयस्स एगाए तिलसंगलियाए सत्ततिला पच्चायाया।

२७७. एवं खलु गोसाला ! वणस्सइकाइया पउट्टपरिहारं परिहरंति। (श० १५।७३)

वा०—'वणस्सइकाइयाओ पउट्टपरिहारं परिहरंति' त्ति परिवृत्त्य-परिवृत्त्य—मृत्वा-मृत्वा यस्तस्यैव वनस्पति-शरीरस्य परिहारः—परिभोगस्तत्रैवोत्पादोऽसौ परिवृत्य-परिहारस्तं परिहरन्ति कुर्वन्तीत्यर्थः। (वृ० प० ६६८)

२७८. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवमाइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहइ, नो पत्तियइ, नो रोएइ।

२७९. एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवागच्छइ,

२८०. उवागच्छित्ता ताओ तिलथंभयाओ तं तिलसंगलियं खुड्डइ,

२८१. खुड्डित्ता करयलंसि सत्त तिले पप्फोडेइ। (श० १५।७४)

२८२. तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स ते सत्त तिले गणमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

२८३. एवं खलु सव्वजीवा वि पउट्टपरिहारं परिहरंति—एस णं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स पउट्टे।

२८४. एस णं गोयमा ! गोसालस्स मखलिपुत्तस्स ममं अंतियाओ आयाए अवक्कमणे पण्णत्ते। (श० १५।७५)

२८५. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते एगाए सणहाए कुम्मासपिंडियाए एगेण य वियडासएणं छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८६. ऊंची बाहु करी-करी, यावत ही विचरेह।
तेज लेश उपजायवा, एहवूं कष्ट धरेह।।

२८६. उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय जाव (सं० पा०) विहरइ।

२८७. मंखलिसुत गोशाल तब, ते षट मासज अंत।
संक्षिप्त विस्तीर्ण तिका, तेज लेशवंत हुंत।।

२८७. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते अंतो छण्हं मासाणं संखित्तविउलतेयलेसे जाए।

२८८. तिण अवसर गोशाल पै, पार्श्वनाथ नां जोय।
षट साधू भागल हुंता, आवी मिलिया सोय।।

२८८. तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अण्णदा कदायि इमे छ दिसाचरा अंतियं पाउब्भवित्था।

२८९. गोशाला नें गुरुपणैं, पड़िवज रहिता जेह।
ते साणे तिमहिज सहु, पूर्व कह्यूं तिम लेह।।

२८९. तं जहा—साणे तं चेव सव्वं

२९०. यावत ए अजिन छतो, पिण जिन शब्द उचार।
प्रकाशमान छतोज ए, विचरै छै इहवार।।

२९०. जाव (सं० पा०) अजिणे।

२९१. ते माटै हे गोयमा! मंखलिसुत गोशाल।
निश्चै नहिं ए जिन छतो जिन-प्रलापी न्हाल।।

२९१. त नो खलु गोयमा! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी,

२९२. जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाश करतो जोय।
विचरै छै इह अवसरे, जिन बाजै छै सोय।।

२९२. जाव (सं० पा०) जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ।

२९३. अजिन छतो गोशालको, जिन-प्रलापी एह।
यावत जे जिन रव प्रतै, प्रकाशमान विहरेह।।

२९३. गोसाले णं मंखलिपुत्ते अजिणे जिणप्पलावी जाव (सं० पा०) पगासेमाणे विहरइ। (श० १५।७७)

२९४. तिण अवसर महापरिषदा, मोटो तसु विस्तार।
जिम शिव[1] चरित्र विषे कह्यूं, जाव पडिगया धार।।

२९४. तए णं सा महतिमहालया महच्चपरिसा जहा सिवे (भ० ११।७४) जाव (सं० पा०) पडिगया।
(श० १५।७८)

गीतक छंद

गोशालक-अमर्ष पद

२९५. तिह समय नगरी सावत्थी श्रृंघाटके यावत वही,
बहु जन परस्पर इम वदै फुन जाव एम परूपही,
देवानुप्रिय! गोशालको मंखलीपुत्र जिको मही,
जिन जिन-प्रलापी जाव विचरै तेह झूठो छै सही।।

२९५. तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडग जाव (सं० पा०) बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ। जण्णं देवाणुप्पिया! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव जिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ तं मिच्छा।

दूहा

२९६. श्रमण भगवंत महावीरजी, ते इहविध आख्यात।
यावत एम परूपही, गोशालक नीं बात।।

२९६. समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ जाव परूवेइ।

२९७. मंखलिसुत गोशाल नों, इम निश्चै करि जोय।
मंखलि नाम पिता हुंतो, ए भिक्षाचर सोय।

२९७. एवं खलु तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स मंखली नामं मंखे पिता होत्था।

२९८. तब ते भिक्षाचर तणैं, हुंती भद्रा नार।
इत्यादिक इम तिमज ही, भणिवुं सहु अधिकार।।

२९८. तए णं तस्स मंखस्स एवं चेव तं सव्वं भाणियव्वं

२९९. यावत अजिन छतोज ए, जे जिन शब्द प्रतेह।
प्रकाश करतो विचरही, पेखो प्रगटपणेह।।

२९९. जाव अजिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ।

३००. ते माटै निश्चै नहीं, मंखलिसुत गोशाल।
जिन जिन-प्रलापी जाव ही, विचरै एह निहाल।।

३००. तं नो खलु गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ।

३०१. अजिन छतो गोशाल जे, जिन-प्रलापी एह।
यावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाशमान विहरेह।।

३०१. गोसाले मंखलिपुत्ते अजिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ।

---

१. शिव राजऋषि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०२. श्रमण भगवंत महावीर प्रभु ! जिन जिन-प्रलापी एह।
यावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाशमान विहरेह ।।

३०२. समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ। (श० १५।७९)

गीतक छंद

३०३. तिह समय ते गोशालको बहु जन कन्है ए अर्थ ही,
निसुणी हृदय धर शीघ्र कोप्यो
जाव मिसिमिसेमान ही,
आतापना महि थीज पाछो वली नगरी बिच थई,
हालाहला कुंभकारिका नों हाट त्यां आव्यूं वही ।।

३०३. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते बहुजणस्स अंतिय एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे तेणेव उवागच्छइ,

३०४. हालाहला कुंभकारिका नों कुंभ करिवा नों जिको,
आपणे आजीविका तणां संघ साथ परवरियो थको,
मोटाज अमरस प्रतै वहतो एम अहंकारे वही,
अतिकोप चिह्न देखाड़तो छतु तेह जावत विचर ही ।।

३०४. उवागच्छित्ता हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि आजीवियसंघसंपरिवुडे महया अमरिसं वहमाणे एवं चावि विहरइ। (श० १५।८०)
'एवं चावि' त्ति एवं चेति प्रज्ञापकोपदर्श्यमानकोपचिह्नम्, (वृ० प० ६६८)

दूहा

गोशालक आक्रोशप्रदर्शन पद

३०५. तिण काले नैं तिण समय, श्रमण भगवंत महावीर।
तसु अंतेवासी प्रवर, आणंद नाम सुहीर ।।

३०५. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी आणंदे नामं

३०६. स्थविर प्रकृतिभद्रक भलुं, जावत अतिही विनीत।
छठ-छठ अंतर रहित तप, करिवै करि सुरीत ।।

३०६. थेरे पगइभद्दए जाव विणीए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेण

३०७. संजम अनै तपे करी, आतम प्रति शुभ ध्यान।
वसावतो विचरै तदा, महामुनी गुणखान ।।

३०७. संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। (श० १५।८१)

३०८. तिण अवसर आनंद ते, स्थविर छट्ठ नां ताय।
पारणके धुर पोहर में, कीधी प्रवर सभाय ।।

३०८. तए णं से आणंदे थेरे छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए

३०९. इम जिम गोयम स्वाम तिम, वीर प्रतै पूछेह।
तिमहिज यावत उच्च नीच, मज्झिम जाव अटेह ।।

३०९. एवं जहा गोयमसामी तहेव आपुच्छइ, तहेव जाव उच्चनीयमज्झिमाइं जाव (सं० पा०) अडमाणे

३१०. कुंभारी हालाहला, तसु कुंभकार हाटेह।
नहि अति दूर न ढूकड़ो, गमन करै गुणगेह ।।

३१०. हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स अदूरसामंते वीइवयइ। (श० १५।८२)

३११. तिण अवसर गोशालको, आणंद स्थविर प्रतेह।
गमन करंतो देख नैं, इहविध वयण वदेह ।।

३११. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आणंदं थेरं हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—

३१२. आव प्रथम आनंद ! इहां, सुण इक महादृष्टंत।
तब ते आणंद स्थविर इम, गोशालै कह्यो हुंत ।।

३१२. एहि ताव आणंदा ! इओ एगं महं उवमियं निसामेहि। (श० १५।८३)
तए णं से आणंदे थेरे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे

३१३. जिहां कुंभारी हालाहला, कुंभकार-हट ताय।
मंखलिसुत गोशाल ज्यां, आवै तिहां चलाय ।।

३१३. जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे, जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ। (श० १५।८४)

३१४. आणंद प्रति गोशाल तब, बोल्यो एहवी वाय।
इम निश्चै आणंद चिर-अतीत अद्धा मांय ।।

३१४. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आणंदं थेरं एवं वयासी—एवं खलु आणंदा ! इत्तो चिरतीयाए अद्धाए

वल्मीक दृष्टांत पद

३१५. उत्तम मध्यम वणिक के, अर्थी अर्थ तणांज।
अथ तणां फुन लालची, अर्थ-गवेषि समाज ।।

३१५. केइ उच्चावया वणिया अत्थत्थी अत्थलुद्धा अत्थगवेसी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१६. वांछक अर्थ तणां वली, अर्थ पिपासा तास।
अर्थ गवेषण कारणें, चाल्या आण हुलास।।
३१७. नाना विध विस्तीर्ण बहु, पणित तिको व्यवहार।
तसु अर्थे जे भंड प्रति, ग्रहण करी नैं सार।।
३१८. शकट अनैं फुन समूह तसु, ते शाकट कहिवाय।
अतिबहु भत्त जल संबलो, ते प्रति ग्रहि नैं ताय।।

३१९. मोटी एक अकामिका[1], उदक रहित अवलोय।
तिहां सार्थ नु आविवूं, विच्छेद पाम्यूं सोय।।

३२०. मोटो मारग जेहनों, एहवी अटवी मांय।
प्रवेश प्रति करता हुवा, ते अटवी दुखदाय।।
३२१. तिण अवसर जे वणिक नैं, ते अटवी रैं मांहि।
कोइक देश प्रतै तिके, अणपामंता ताहि।।

३२२. पूर्व ग्रह्यु जल अनुक्रमे, भोगवतां थयु क्षीण।
तृषा करी तब वाणिया, पराभव्या अति दोन।।

३२३. ताम वणिक ते परस्पर, तेड़ावी कहै वाय।
इम निश्चै देवानुप्रिय ! अम्ह इण अटवी मांय।।

३२४. कोई देश अणपामते, पूर्व ग्रह्यु जल तेह।
अनुक्रम भोगवतां छतां, परिक्षीण थयु जेह।।
३२५. तिण सूं श्रेय देवानुप्रिय ! अम्ह नैं अटवी मांहि।
जल नीं मग्गण-गवेषणा, सहु दिशि करवी ताहि।।

३२६. इम कही नैं इक-एक नैं, समीप अर्थज एह।
अंगीकार करी नैं तदा, तेह अरण्य विषेह।।
३२७. मार्ग-गवेषण उदक नीं, सर्व थकीज करेह।
गवेषणा करतांज इक, महा वनखंड पामेह।।

३२८. कृष्ण वर्ण वनखंड ते, कृष्ण प्रभा फुन तास।
जावत निकुरंबभूत छै, जोवा योग्य विमास।।
३२९. ते वनखंड विषे बहु मध्य देश भागेह।
देख्यो महावल्मीक इक, ढिग माटी नों जेह।।
३३०. जीव उदेही तेहनों, घर स्थानक सुविचार।
ते वल्मीक कहीजियै, वणिके दीठ तिवार।।
३३१. ते वल्मीक तणां चिहुं, वपु—शरीर विशेख।
इतरै ए तसु शिखर चिहुं, ऊंचा निकल्या देख।।

३१६. अत्थकंखिया अत्थपिवासा अत्थगवेसणयाए

३१७. नाणाविहविउलपाणियभंडमायाए

३१८. सगडीसागडेणं सुबहुं भत्तपाणं पत्थयणं गहाय
'भत्तपाणपत्थयणं' ति भक्तपानरूपं यत्पथ्यदनं—
शम्बलं तत्तथा, (वृ० प० ६७१,७२)
३१९. एगं महं अगामियं अणोहियं छिन्नावायं
'अणोहियं' ति अविद्यमानजलौघिकाम्....'छिन्नावायं'
ति व्यवच्छिन्नसार्थघोषाद्यापाताम्। (वृ० प० ६७२)
३२०. दीहमद्धं अडविं अणुप्पविट्ठा। (श० १५।८५)

३२१. तए णं तेसिं वणियाणं तीसे अगामियाए अणोहियाए
छिन्नावायाए दीहमद्धाए अडवीए किंचि देसं अणु-
प्पत्ताणं समाणाणं
३२२. से पुव्वगहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुज्जमाणे-परि-
भुज्जमाणे झीणे। (श० १५।८६)
तए णं ते वणिया झीणोदगा समाणा तण्हाए
परब्भमाणा
३२३. अण्णमण्णे सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—एवं
खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए अणो-
हियाए छिन्नावायाए दीहमद्धाए अडवीए
३२४. किंचि देसं अणुप्पत्ताणं समाणाणं से पुव्वगहिए उदए
अणुपुव्वेणं परिभुज्जमाणे-परिभुज्जमाणे झीणे,
३२५. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए
जाव अडवीए उदगस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं
करेत्तए
३२६. त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति,
पडिसुणेत्ता तीसे णं अगामियाए जाव अडवीए
३२७. उदगस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेंति,
उदगस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेमाणा एगं
महं वणसंडं आसादेंति।
३२८. किण्हं किण्होभासं जाव महामेहनिकुरंबभूयं पासादीयं
दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं।
३२९. तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए, एत्थ णं महेगं
वम्मीयं असादेंति।

३३१. तस्स णं वम्मीयस्स चत्तारि वप्पूओ अब्भुग्गयाओ,
अभिनिसढाओ
'वप्पुओ' त्ति वपूंसि—शरीराणि शिखराणीत्यर्थः
'अब्भुग्गयाओ' त्ति अभ्युद्गतान्यभ्रोद्गतानि
वोच्चानीत्यर्थः। (वृ० प० ६७२)

---
१. अंगसुत्ताणि भाग २ श० १५।८५ में 'अगामियं' पाठ है। वहां 'अकामियं' को पाठान्तर में लिया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३३२. तिरछा विस्तीरण चिहुं, अधो पन्नगार्द्ध रूप।
छिन्न उदर पुच्छ ऊर्द्ध कृत, ते संठाण तद्रूप ॥

३३३. देखण योग्यज जाव जे, वलि प्रतिरूपज तेह।
देखी हरष्या वाणिया, मन संतोष लहेह ॥

३३४. मांहोमांहे जाव ते, तेड़ावी कहै वाय।
इम निश्चै देवानुप्रिया! अम्ह इण अटवी मांय ॥

३३५. करतां उदक-गवेषणा, पाम्यो ए वनखंड।
कृष्ण वर्ण थी जाणवो, काली प्रभा सुमंड ॥

३३६. ए वनखंड तणें घणु, मध्य देश भागेह।
देख्यो ए वल्मीक तसु, च्यार वपू छै जेह ॥

३३७. वपु—तनु शिखर कहीजियै, कूट आकार अनूप।
ते तनु ऊंचा नीकल्या, जावत ही प्रतिरूप ॥

३३८. ते माटै देवानुप्रिया! आपां नें इहवार।
प्रथम शिखर वल्मीक नु, श्रेय भेदवू सार ॥

३३९. कदा उदारज दग रतन, जल में उत्तम जेह।
नीकलस्यै जो ते प्रतै, आदरसां धर नेह ॥

३४०. तिण अवसर ते वाणिया, अन्नमन्न इक-इक पास।
एह अर्थ अंगीकरै, अंगीकार कर तास ॥

३४१. ते वल्मीक तणो तदा, प्रथम शिखर भेदंत।
निमल पथ्य संस्कार रहित, हलुओ जल पामंत ॥

३४२. फटिक सरीखो वर्ण जसु, वर दग रतन पामेह।
उत्कृष्ट जल नीं जाति में, तिणसूं रतन कहेह ॥

३४३. तिण अवसर ते वाणिया, हरष संतोष लहंत।
जल पीवै पीवी करी, वृषभादिक पावंत ॥

३४४. वृषभादिक प्रति पाय नें, भाजन प्रतै भरंत।
द्वितीय वार फुन परस्पर, इहविध वयण वदंत ॥

३४५. इम निश्चै देवानुप्रिया! ए वल्मीक तणूंज।
प्रथम शिखर भेद्यां लह्यूं, वर जल रतन घणूंज ॥

३४६. ते माटै आपां भणी, अहो देवानुप्रियेह!
ए वल्मीक तणु द्वितीय शिखर भेदवूं श्रेय ॥

३३२. तिरियं सुसंपग्गहियाओ, अहे पन्नगद्धरूवाओ, पन्नगद्धसंठाणसंठियाओ,
'अहे पणगद्धरूवाओ' त्ति सर्पार्द्धरूपाणि यादृशं पन्नगस्योदरच्छिन्नस्य पुच्छत ऊर्द्ध् वीकृतमर्द्धमधो विस्तीर्णमुपर्युपरि चातिश्लक्ष्णं भवतीत्येवंरूपं येषां तानि तथा। (वृ० प० ६७२)

३३३. पासादियाओ जाव (सं० पा०) पडिरूवाओ। (श० १५।८७)
तओ णं ते वणिया हट्ठतुट्ठा

३३४. अण्णमण्णं सद्दावेंति, सद्दावेत्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हे इमीसे अगामियाए अडवीए

३३५. उदगस्स सव्वओ समंता मग्गण-गवेसणं करेमाणेहिं इमे वणसंडे आसादिए—किण्हे किण्होभासे।

३३६. इमस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए इमे वम्मीए असादिए इमस्स णं वम्मीयस्स चत्तारि वप्पूओ

३३७. अब्भुग्गयाओ जाव (सं० पा०) पडिरूवाओ।

३३८. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स पढमं वप्पुं भिंदित्तए।

३३९. अवियाइं ओरालं उदगरयणं अस्सादेस्सामो। (श० १५।८८)

३४० तए णं ते वणिया अण्णमण्णस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता

३४१. तस्स वम्मीयस्स पढमं वप्पुं भिंदंति। ते णं तत्थ अच्छं पत्थं जच्चं तणुयं
'अच्छं' ति निर्म्मलं 'पत्थं' ति पथ्यं—रोगोपशमहेतुः 'जच्चं' ति जात्यं संस्काररहितं 'तणुयं' ति तनुकं सुजरमित्यर्थः। (वृ०प० ६७२)

३४२. फालियवण्णाभं ओरालं उदगरयणं आसादेंति।
'फालियवण्णाभं' ति स्फटिकवर्णवदाभा यस्य तत्तथा, अत एव 'ओरालं' ति प्रधानम् 'उदगरयणं' ति उदकमेव रत्नमुदकरत्नं उदकजातौ तस्योत्कृष्टत्वात्। (वृ०प० ६७२)

३४३. तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठा पाणियं पिबंति, पिबित्ता वाहणाइं पज्जेंति।
'वाहणाइं पज्जंति' त्ति बलीवर्दादिवाहनानि पाययंति। (वृ० प० ६७२)

३४४. पज्जेत्ता भायणाइं भरेंति, भरेत्ता दोच्चं पि अण्णमण्णं एवं वदासी—

३४५. एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हेहिं इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पूए भिन्नाए ओराले उदगरयणे अस्सादिए,

३४६. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स दोच्चं पि वप्पुं भिंदित्तए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४७. कदाचित निश्चय करी, सुवर्ण रत्न उदार।
उत्कृष्ट सुवर्ण जाति में, तेह पामियै सार।।
३४८. तिण अवसर ते वाणिया, अन्योऽन्य इक-इक पास।
एह अर्थ अंगीकरै, अंगीकार करि तास।।
३४९. ते वल्मीक तणो तदा, द्वितीय शिखर पिण ताम।
भेदै तत्र लह्यो तिणे, सुवर्ण अति अभिराम।।
३५०. तेह निर्मल अकृत्रिम, फुन सहै ताप प्रति जेह।
महाप्रयोजन महामूल्य, मोटां योग्य सुलेह।।
३५१. प्रवर उदारज एहवूं, सुवर्ण रत्न लहेह।
उत्कृष्ट सुवर्ण जाति में, तिणसूं रत्न कहेह।।
३५२. तिण अवसर ते वाणिया, हरष संतोष पामेह।
भाजन भरै भरी करी, शकटी शकट भरेह।।
३५३. शकटी शकट भरी करी, तृतीय वार पिण तेह।
मांहोमांहे इम कहै, अहो देवानुप्रियेह !
३५४. इम निश्चै करिनैं अम्है, ए वल्मीक तणूंज।
प्रथम शिखर भेद्यां लह्यूं, वर जल रत्न घणूंज।।
३५५. द्वितीय शिखर भेद्यां लह्यूं, सुवर्ण रत्न उदार।
ते माटै देवानुप्रिय ! निश्चै करि इह वार।।
३५६. तृतीय शिखर पिण भेदवूं, आपण भणीज श्रेय।
'थ' पूर्णे[1] लहियै वली, वर मणि रत्न प्रतेह।।
३५७. तिण अवसर ते वाणिया, अन्नमन्न इक-इक पास।
एह अर्थ अंगीकरै, अंगीकार करि तास।।
३५८. ते वल्मीक तणो तदा, तृतीय शिखर पिण ताम।
भेदै तत्र लह्या तिणै, वर मणि रत्न अमाम।।
३५९. त्यां विमल निमल नित्तल निक्कल,
महाअर्थ महामूल्य।
मोटां योग्यज एहवा, जे मणि रत्न अतुल्य।।

वा०— गयो छै आगंतुक मल जेह थी ते विमल। स्वाभाविक मलरहित ते निर्मल। अनिवृत वाटलो ते निस्तल, त्रसादि रत्न दोष रहित ते निष्कल। महाप्रयोजन ते महार्थ।

३६०. तिण अवसर ते वाणिया, हरष संतोष लहेह।
भाजन भरै भरी करी, शकटी शकट भरेह।।
३६१. शकटी शकट भरी करी, तुर्य वार पिण तेह।
अन्योऽन्य प्रतै वली, इहविध वयण वदेह।।
३६२. इम निश्चै देवानुप्रिय ! ए वल्मीक तणूंज।
प्रथम शिखर भेद्ये लह्युं, वर जल रत्न घणूंज।।

३४७. अवियाइं एत्थ ओरालं सुवण्णरयणं अस्सादिस्सामो। (श० १५।८९)

३४८. तए णं ते वणिया अण्णमण्णस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता

३४९. तस्स वम्मीयस्स दोच्चं पि वप्पुं भिंदंति।

३५०. ते णं तत्थ अच्छं जच्चं तावणिज्जं महत्थं महग्घं महरिहं 'अच्छ' ति निर्मलं 'जच्चं' ति अकृत्रिमं 'तावणिज्जं' ति तापनीयं तापसहं 'महत्थं' ति महाप्रयोजनं 'महग्घं' ति महामूल्यं 'महरिहं' ति महतां योग्यं। (वृ० प० ६७२)

३५१. ओरालं सुवण्णरयणं अस्सादेंति।

३५२. तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठा भायाणाइं भरेंति, भरेत्ता पवहणाइं भरेंति,

३५३. भरेत्ता तच्चं पि अण्णमण्णं एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया !

३५४. अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पूए भिन्नाए ओराले उदगरयणे अस्सादिए,

३५५. दोच्चाए वप्पूए भिन्नाए ओराले सुवण्णरयणे अस्सादिए,

३५६. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स तच्चं पि वप्पुं भिंदित्तए, अवियाइं एत्थं ओरालं मणिरयणं अस्सादेस्सामो। (श० १५।९०)

३५७. तए णं ते वणिया अण्णमण्णस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणेत्ता

३५८. तस्स वम्मीयस्स तच्चं पि वप्पुं भिंदंति।

३५९. ते णं तत्थ विमलं निम्मलं नित्तलं निक्कलं महत्थं महग्घं महरिहं ओरालं मणिरयणं अस्सादेंति।

३६०. तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठा भायणाइं भरेंति, भरेत्ता पवहणाइं भरेंति,

३६१. भरेत्ता चउत्थं पि अण्णमण्णं एवं वयासी—

३६२. एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पूए भिन्नाए ओराले उदगरयणे अस्सादिए,

---

१. कुछ आदर्शों में 'एत्थं' के स्थान पर 'थ' पाठ लिया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६३. द्वितीय शिखर भेद्यं लह्युं, सुवर्ण रत्न उदार।
तृतीय शिखर भेद्ये लह्या, वर मणि रयण सुसार ।।

३६३. दोच्चाए वप्पूए भिन्नाए ओराले सुवण्णरयणे, अस्सादिए, तच्चाए वप्पूए भिन्नाए ओराले मणिरयणे अस्सादिए,

३६४. तिणसूं निश्चै अम्ह भणी, अहो देवानुप्रियेह !
ए वल्मीक नुं तुर्य पिण, शिखर भेदवूं श्रेय ।।

३६४ तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स चउत्थं पि वप्पुं भिंदित्तए,

३६५. कदा थ पूर्णे उत्तम ही, महामूल्य फुन जेह।
मोटा योग्य उदार वर, वज्र रत्न पामेह ।।

३६५. अवियाइं उत्तमं महग्घं महरिहं ओरालं वइररयणं अस्सादेस्सामो। (श० १५।९१)

३६६. तिण अवसर ते वणिक नों, एक वणिक अवधार।
हित-वंछक ते कष्ट नुं अभाव वांछणहार ।।

३६६. तए णं तेसिं वणियाणं एगे वणिए हियकामए
'हियकामए' त्ति इह हितं—अपायाभावः। (वृ० प० ६७२)

३६७. सुख ते आनंद रूप प्रति, तेहनुं वांछक जेह।
पथ्य इव पथ्य आनंद नुं, कारण वस्तु वांछेह ।।

३६७. सुहकामए पत्थकामए
'सुहकामए' त्ति सुखं—आनन्दरूपं 'पत्थकामए' त्ति पथ्यमिव पथ्यं—आनन्दकारणं वस्तु। (वृ० प० ६७२)

३६८. अनुकंपा धरतो तसु, निस्सेसिए सुलेह।
विपत्ति थकी मूकायवूं, ते विपत्तिमोक्ष वांछेह ।।

३६८. आणुकंपिए निस्सेसिए
'आणुकंपिए' त्ति अनुकम्पया चरतीत्यानुकम्पिकः 'निस्सेयसिए' त्ति निःश्रेयसं यन्मोक्षमिच्छतीति नैःश्रेयसिकः। (वृ० प० ६७२)

३६९. अधिकृत वणिक तणां प्रगट, पूर्व कह्या गुणगेह।
किणही प्रकार करी हिवै, युगपत योग्य कहेह ।।

३६९. अधिकृतवाणिजस्योक्तैरेव गुणैः कैश्चिद्युगपद्योगमाह— (वृ० प० ६७२)

३७०. हित सुख मोक्ष विपत्ति नीं, ए त्रिहुं प्रति वांछेह।
बहु वाण्यां प्रति ते वणिक, इहविध वयण वदेह ।।

३७०. हिय-सुह-निस्सेसकामए ते वणिए एवं वयासी—

३७१. इम निश्चै देवानुप्रिय ! ए वल्मीक तणूंज।
प्रथम शिखर भेद्यां अम्है, वर जल रत्न लह्यूंज ।।

३७१. एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पूए भिन्नाए ओराले उदगरयणे अस्सादिए,

३७२. जावत तीजा शिखर प्रति, भेद्ये छते सुयोग्य।
उदार जे मणि रत्न प्रति, पाम्या पुनः प्रयोग्य ।।

३७२. जाव (सं० पा०) तच्चाए वप्पूए भिन्नाए ओराले मणिरयणे अस्सादिए।

३७३. ते माटै होवो अलं, सरो पूरो थावो जेह।
पर्याप्त संपूरण वलि, शब्द तीनूंई एह ।।

३७३. तं होउ अलाहि पज्जत्तं णे।

३७४. प्रतिषेधक वाचकपणें, ए त्रिहुं शब्द पिछाण।
अतिही निषेधज अर्थ ही, त्रिहुं रव आख्या जाण ।।

३७४. 'तं होउ अलाहि पज्जत्तं णे' त्ति तत्—तस्माद् भवतु अलं पर्याप्तमित्येते शब्दाः प्रतिषेधवाचकत्वेनैकार्था आत्यन्तिकप्रतिषेधप्रतिपादनार्थमुक्ताः। (वृ० प० ६७२)

३७५. आपण नैं ए तुर्य ही, शिखर म भेदो कोय।
प्रत्यक्ष चउथा शिखर ते, उपसर्ग सहितज होय ।।

३७५. एसा चउत्थी वप्पू मा भिज्जउ, चउत्थी णं वप्पू सउवसग्गा यावि होत्था। (श० १५।९२)

३७६. तिण अवसर ते वाणिया, तेह वणिक नां जोय।
हित-वांछक छै जे वली, सुख-वांछक पिण सोय ।।

३७६. तए णं ते वणिया तस्स वणियस्स हियकामगस्स सुहकामगस्स

३७७. जावत हित सुख विपत्ति नीं मोक्ष नुं वांछक तेह।
इम कहतां जावत वली, परूपता नै जेह ।।

३७७. जाव (सं० पा०) हिय-सुह-निस्सेसकामगस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स

३७८. एह अर्थ श्रद्धै नहीं, जाव रोचवै नांहि।
एह अर्थ जे वचन नैं, अणश्रद्धंता ताहि ।।

३७८. एयमट्ठं नो सद्दहंति, नो पत्तियंति, नो रोयंति, एयमट्ठं असद्दहमाणा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३७९. जाव अरोचवता थका, तुर्य शिखर भेदेह।
तेह तिहां विकराल अही, वर्णन जास कहेह।।
३८०. ते सर्प उग्रविष नों धणी, दुर्जर विष छै तास।
फुन चंडविष ते नर तनु, डस्यां भटव्यापै विषराश।।

३८१. परंपरा करिकै जिको, सहस्र भणी पिण सोय।
हणवा समर्थ जेह छै, घोरविसं ते जोय।।

३८२. जंबूद्वीप प्रमाण तनु, तेह भणी पिण जाण।
व्यापन समर्थ जेह छै, महाविसं ते माण।।

३८३. शेष अहि प्रति अतिक्रमै, कहियै ते अतिकाय।
फुन तेहिज महाकाय छै, कर्मधारय कहिवाय।।

३८४. मसी ते कज्जल समी, मूसा ते सुवर्णादि-
तापन-भाजन सारिखो, कृष्ण वर्ण संवादि।।

३८५. नयन दृष्टिविष तिण करि, वलि ते रोष करेह।
पूर्ण भरचो छै ते पन्नग, दृष्टिविष कह्यूं एह।।

३८६. अंजन-पुंज तणो जिको, निकर समूह प्रकाश।
दीप्तिपणुं छै जेहनुं, एहवूं सर्प विमास।।

३८७. रक्त चक्षु छै जेहनी, जमल बरोबर लीह।
युगल उभय चंचल यथा, अतिही चपल सुजीह।।

३८८. वेणीभूत महितल विषे, वनिता तणां विशाल।
केश बंध नीं पर तिको, कृष्णपणां नां न्हाल।।

३८९. दीर्घपणां नां वलि जिके, मृदुपणां नां माण।
पश्चाद्भागपणां तणां, साधर्म्य थी पहिछाण।।
३९०. उत्कट ते बलवंत छै, अन्य जीपी न सकेह।
स्फुट ते प्रयत्न सहित छै, वक्र सरूपपणेह।।

३९१. जटिल स्कंध देशे तसु, केशरी तणी परेह।
अहि नैं पिण केशरि तणां, सद्भाव थकी कहेह।।

३७९. जाव (सं० पा०) अरोएमाणा तस्स वम्मीयस्स चउत्थं पि वप्पुं भिंदंति।

३८०. ते णं तत्थ उग्गविसं चंडविसं
'उग्गविसं' ति दुर्जरविषं 'चंडविसं' ति दष्टकनरकायस्य झगिति व्यापकविषं। (वृ० प० ६७२)

३८१. घोरविसं
'घोरविसं' ति परम्परया पुरुषसहस्रस्यापि हननसमर्थविषं। (वृ० प० ६७२)

३८२. महाविसं
'महाविसं' ति जम्बूद्वीपप्रमाणस्यापि देहस्य व्यापनसमर्थविषम्। (वृ० प० ६७२)

३८३. अतिकायं महाकायं
'अइकायमहाकायं' ति कायान् शेषाहीनामतिक्रान्तोऽतिकायोऽत एव महाकायस्ततः कर्म्मधारयः। (वृ० प० ६७२)

३८४. मसिमूसाकालगं
'मसिमूसाकालग' त्ति मषी—कज्जलं मूषा च—सुवर्णादितापनभाजनविशेषस्ते इव कालको यः स तथा तं। (वृ० प० ६७२)

३८५. नयणविसरोसपुण्णं
'नयणविसरोसपुन्नं' ति नयनविषेण—दृष्टिविषेण रोषेण च पूर्णो यः स तथा तम्। (वृ० प० ६७२)

३८६. अंजणपुंज-निगरप्पगासं
'अंजणपुंजनिगरप्पगासं' ति अञ्जनपुञ्जानां निकरस्येव प्रकाशो—दीप्तिर्यस्य स तथा तं। (वृ० प० ६७२)

३८७. रत्तच्छं जमलजुयलचंचलचलंतजीहं
'जमलजुयलचंचलचलंतजीहं' ति जमलं—सहवर्त्ति युगलं—द्वयं चञ्चलं यथा भवत्येवं चलन्त्योः—अति चपलयोर्जिह्वयोर्यस्य स तथा तं। (वृ० प० ६७२)

३८८,३८९. धरणितलवेणिभूयं
'धरणितलवेणिभूयं' ति धरणीतलस्य वेणीभूतो—वनिताशिरसः केशबन्धविशेष इव यः कृष्णत्वदीर्घत्वश्लक्ष्णपश्चाद्भागत्वादिसाधर्म्यात्स तथा तम्। (वृ० प० ६७२,७३)

३९०. उक्कड-फुड-कुडिल-
उत्कटो बलवताऽन्येनाध्वंसनीयत्वात् स्फुटो—व्यक्तः प्रयत्नविहितत्वात् कुटिलो—वक्रस्तत्स्वरूपत्वात्। (वृ० प० ६७३)

३९१. जडल
जटिलः—स्कन्धदेशे केशरिणामिवाहीनां केसरसद्भावात्। (वृ० प० ६७३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९२. कर्कस ते निष्ठुर वली, विकट विस्तीर्ण जेह।
फण नां जे आटोप प्रति, करिवा डाहो तेह।।

३९३. लोह आगर में अग्नि करी, तपावतां अय जास।
धमधमाय रव धमण नों, तेहवो घोषज तास।।

३९४. अनाकलित अप्रमेय छै, चंड तीव्र जसु रोष।
अतिही तीव्रज रोष तसु, अधिक कोप नों कोष।।

३९५. स्वान तणां मुख जिम त्वरित, चपल रु शब्द धमंत।
करतो दृष्टीविष इसो, ते अहि प्रति संघटंत।।

३९६. तिण अवसर ते दृष्टिविष अहि तसु काय विशाल।
ते वणिक संघटचे छते, कोप्यो शीघ्र कराल।।

३९७. जाव मिसमिसायमान थयुं धीरैं-धीरैं ऊठ।
धीरैं-धीरैं ऊठनैं, दृष्टीविष महादूठ।।

३९८. सर सर सर ते सर्प नुं, गति अनुकरण विचार।
ते वल्मीक तणां शिखर, तल प्रतै चढै तिवार।।

३९९. शिखर तला प्रति चढी करी, रवि सन्मुख देखेह।
रवि सन्मुख देखी करी, रोष भरचो अधिकेह।।

४००. तेह वाणिया प्रति अही, अनिमिष नेत्र करेह।
समस्त प्रकार थकी तदा, कोप करी देखेह।।

४०१. तिण अवसर ते वाणिया, तिण दृष्टिविष सर्पेण।
अनिमिष नेत्रे सर्व थी, देख्या छतांजु तेण।।

४०२. शीघ्र हीज निज भंड मत्त, उपगरण मात्र संघात।
एकज भस्मीकरण जे, तेह प्रहारे ख्यात।।

४०३. कूट तिको पाषाणमय, महायंत्र करि जेम।
हणें तिम समकाल सहु, भस्मराशि थया तेम।।

४०४. तत्र जिको ते वाणियो, ते वाण्यां नों ताम।
हित-वांछक यावत वली, हित सुख निस्सेयसकाम।।

४०५. तेह वणिक नीं नाग सुर, अणुकंपा करि ताय।
भंड मात्र उपकरण सहित, निज नगरे पहुंचाय।।

४०६. एणे दृष्टांते करी, हे आणंद! सुजोय।
धर्माचार्य तांहरो, धर्मोपदेशक तोय।।

३९२. कक्खडविकडफडाडोवकरणदच्छं
कर्कशो—निष्ठुरो बलवत्त्वात् विकटो—विस्तीर्णो यः स्फटाटोपः—फणासंरम्भस्तत्करणे दक्षो यः स तथा तं। (वृ० प० ६७३)

३९३. लोहागर-धम्ममाण-धमधमेंतघोसं
लोहागरधम्ममाणधमधमेंतघोसं' ति लोहस्येवाकरे ध्मायमानस्य—अग्निना ताप्यमानस्य धमधमायमानो —धमधमेतिवर्णव्यक्तिमिवोत्पादयन् घोषः—शब्दो यस्य स तथा तम्। (वृ० प० ६७३)

३९४. अणागलियचंडतिव्वरोसं
'अणागलियचंडतिव्वरोसं' ति अनिर्गलितः—अनिवारितोऽनाकलितो वाऽप्रमेयश्चण्डः तीव्रो रोषो यस्य स तथा तं। (वृ० प० ६७३)

३९५. समुहं तुरियं चवलं धमंतं दिट्ठीविसं सप्पं संघट्टेंति।
'समुहियतुरियचवलं धमंतं' ति शुनो मुखं श्वमुखं तस्येवाचरणं श्वमुखिका—कौलेयकस्येव भषणं तां त्वरितं च चपलमतिचटुलतया धमन्तं—शब्दं कुर्वन्तमित्यर्थः। (वृ० प० ६९३)

३९६. तए णं से दिट्ठीविसे सप्पे तेहिं वणिएहिं संघट्टिए समाणे आसुरुत्ते

३९७. जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणे सणियं-सणियं उट्ठेइ, उट्ठेत्ता

३९८. सरसरसरस्स वम्मीयस्स सिहरतलं द्रुहति
'सरसरसरसरस्स' ति सर्पगतेरनुकरणम्। (वृ० प० ६७३)

३९९. द्रुहित्ता आदिच्चं निज्झाति, निज्झाइत्ता

४००. ते वणिए अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोएति। (श० १५।९४)

४०१. तए णं ते वणिया तेणं दिट्ठीविसेणं सप्पेणं अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोइया समाणा

४०२. खिप्पामेव सभंडमत्तोवगरणमायाए एगाहच्चं
'एगाहच्चं' ति एका एव आहत्या—
आहननं प्रहारो यत्र भस्मीकरणे तदेकाहत्यं तद्यथा भवत्येवं। (वृ० प० ६७३)

४०३. कूडाहच्चं भासरासी कया यावि होत्था।
'कूडाहच्चं' ति कूटस्येव—पाषाणमयमारणमहायन्त्रस्येवाहत्या—आहननं यत्र तत् कूटाहत्यं तद्यथा भवतीत्येवं। (वृ० प० ६७३)

४०४. तत्थ णं जे से वणिए तेसिं वणियाणं हियकामए जाव (सं० पा०) हिय-सुह-निस्सेसकामए।

४०५. से णं आणुकंपियाए देवयाए सभंडमत्तोवगरणमायाए नियगं नगरं साहिए। (श० १५।९५)

४०६. एवामेव आणंदा! तव वि धम्मायरिएणं धम्मोवएसएणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४०७. श्रमण ज्ञातपुत्रे प्रगट, जेह उदार प्रधान।
पर्याय ते अवस्था प्रतै, पामी अधिक सुजान ।।
४०८. जेह उदार प्रधान छै, कीर्त्ती वर्ण विचार।
शब्द अनें श्लाघा घणी, ए च्यारूं अवधार ।।

वा०—इहां वृद्ध व्याख्या—सर्वदिग्व्यापी साधुवादः—**ते सर्व दिशि साधु** कहितां भलो वद कहितां वदवूं—कहिवूं ते कीर्त्ति । एक दिशि व्यापी **वर्ण । अर्ध** दिशि व्यापी शब्द । तिण स्थानकहीज श्लोक ते श्लाघा ।

४०९. सुर मनु असुर सहित जे, जीवलोक तिहां सोय।
पुव्वंति गमन करै वली, गुव्वंति व्याकुली होय ।।

४१०. इति खलु ए श्रमण फुन, भगवंत श्री महावीर।
दोय वार ए शब्द है, पाठ विषे गुणहीर ।।
४११. ते माटै जो मुझ भणी, ते किंचित कहै आज।
तो तप थी थयुं तेज ते, लेश्या तेज समाज ।।

४१२. तिणज तेजोलेश्या करी, एक प्रहारे जेम।
हणिवूं फुन महायंत्र करि, भस्मराशि करूं तेम ।।
४१३. जिम वा ते निश्चै करी, ते बहु वणिक प्रतेह।
सर्प भस्म किया तिमज, हूं पिण भस्म करेह ।।
४१४. तुम्ह प्रति हे आणंद ! हूं, दाह भय थी राखीस।
गोपवसूं ते खेम नें, स्थानक पहुंचाड़ीस ।।

४१५. तिम निश्चै ते वणिक इक, बहु वाण्यां नु ताम।
हित-वांछक यावत तसु, हित सुख निस्सेस काम ।।
४१६. अनुकंपा करि नाग सुर, सभंड मात्र करेह।
जाव पहुंचायो निज नगर, तिम हूं तुझ राखेह ।
४१७. ते माटै जावो तुम्हे, हे आणंद ! सुणेह।
धर्माचारज धर्म नां उपदेशक प्रति जेह ।।
४१८. श्रमण ज्ञातसुत तेहनें, एह अर्थ प्रति जाण।
कहिजै समस्त प्रकार करि, अम्है कही ते वाण ।।

आनन्द स्थविर द्वारा भगवान को निवेदन पद

४१९. तिण अवसर आनंद स्थविर, गोशाले अवदात।
इम कह्ये छतेज डरपियो, यावत अतिभय जात ।।
४२०. गोशाला नां पास थी, हालाहला कहीज।
कुंभकारिका नों जिको, कुंभकारावण थीज ।।
४२१. निकलै निकली नें तदा, शीघ्र त्वरित गति पंच।
सावत्थी मध्योमध्य थई, निकलै निकली संच ।।

४०७. समणेणं नायपुत्तेणं ओराले परियाए अस्सादिए,
'परियाए' त्ति पर्यायः—अवस्था । (वृ० प० ६७३)
४०८. ओराला कित्ति-वण्ण-सद्द-सिलोगा

वा०—इह वृद्धव्याख्या—सर्वदिग्व्यापि साधुवादः कीर्त्ति एकदिग्व्यापी वर्णः अर्द्धदिग्व्यापी शब्दः तत्स्थान एव श्लोकः श्लाघेति यावत् । (वृ० प० ६७३)

४०९. सदेवमणुयासुरे लोए पुव्वंति, गुव्वंति[1]
'सदेवमणुयासुरे लोए' त्ति सह देवैर्मनुजैरसुरैश्च यो लोको—जीवलोकः स तथा तत्र, 'पुव्वंति' त्ति 'प्लवन्ते'····गच्छंति 'गुव्वंति' गुप्यन्ति व्याकुली भवन्ति । (वृ० प० ६७३)
४१०. इति खलु समणे भगवं महावीरे, इति खलु समणे भगवं महावीरे
४११. तं जदि मे से अज्ज किंचि वि वदति तो णं तवेणं तेएणं
'तवेणं तेएणं' ति तपोजन्यं तेजस्तप एव वा तेन 'तेजसा' तेजोलेश्या 'जहा वा वालेणं' ति यथैव 'व्यालेन' भुजगेन । (वृ० प० ६७३)
४१२. एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेमि,

४१३. जहा वा वालेणं ते वणिया ।

४१४. तुमं च णं आणंदा ! सारक्खामि संगोवामि
'सारक्खामि' त्ति संरक्षामि दाहभयात् 'संगोवयामि' त्ति संगोपयामि क्षेमस्थानप्रापणेन । (वृ० प० ६७३)
४१५. जहा वा से वणिए तेसिं वणियाणं हियकामए जाव निस्सेसकामए
४१६. आणुकंपियाए देवयाए सभंड जाव (सं० पा०) साहिए ।
४१७. तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! तव धम्मायरियस्स धम्मोवएसगस्स
४१८. समणस्स नायपुत्तस्स एयमट्ठं परिकहेहि ।
(श० १५।९६)

४१९. तए णं से आणंदे थेरे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे भीए जाव संजायभए
४२०. गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अंतियाओ हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणाओ
४२१. पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता सिग्घं तुरियं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता

१. अंगसुत्ताणि भाग २ में गुव्वंति के बाद थुव्वंति पाठ है, पर उसको जोड़ नहीं है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४२२. जिहां जे कोट्ठग बाग छै, जिहां श्रमण भगवंत ।
महावीर स्वामी तिहां, आवै आवी मंत ।।

४२३. श्रमण भगवंत महावीर नैं, तीन वार धर प्यार ।
दक्षिण नां पासा थकी, आरंभी नैं सार ।।

४२४. प्रदक्षिण देई करी, वंदै स्तुती करेह ।
नमस्कार शिर नाम नैं, एम कहै गुणगेह ।।

४२५. इम निश्चै भगवंत ! हूं, छट्ठ पारणै ताहि ।
जे तुम्ह नीं आज्ञा छते, नगरी सावत्थी मांहि ।।

४२६. उच्च नीच मज्झिम कुले, यावत फिरतां जाण ।
हालाहलाजु नाम करि, कुंभकारिका माण ।।

४२७. कुंभकारि आपण थकी, जावत हूं तिण ठाम ।
जातां तब गोशाल जे, पुत्र मंखली आम ।।

४२८. मुझ प्रति जे हालाहला, कुंभकारिका ताय ।
जावत ही देखी करी, इहविध बोल्यो वाय ।।

४२९. आव इहां आणंद ! तूं, सुण इक महादृष्टंत ।
तब हूं जे गोशालके, इम कह्ये छतेज मंत ।।

४३०. जिहांज जे हालाहला, कुंभकारिका तास ।
कुंभकार आपण अछै, जिहां गोशाल विमास ।।

४३१. तिहां हूं गयो गोशाल तब, मुझ इम बोल्यो वाय ।
इम निश्चै आणंद ! चिर अतीत अद्धा मांय ।।

४३२. उच्च नीच के वाणिया, इम तिम सहु विस्तार ।
कहिवूं यावत निज नगर, पहुंचायो धर प्यार ।।

४३३. ते माटै आणंद ! जा, धर्माचारज जेह ।
धर्मोपदेशक प्रति तुम्है, यावत सर्व कहेह ।।

४३४. ते माटै भगवंत जी ! मंखलि-सुत गोशाल ।
प्रभु ते समर्थ छै तिको, तप तेजे करि न्हाल ।।

४३५. जिम ते एक प्रहार करि, हणिवूं फुन यंत्रेह ।
तेम भस्म नीं राशि प्रति, करिवा समर्थ एह ।।

वा०—इहां आणंद पूछचो—प्रभु कहितां समर्थ छै हे भगवंत ! गोशालो मंखलि-पुत्र तप थकी ऊपनों तेज ते तेजोलेश्या तिणे करी । जिम एक प्रहारे हणिवूं हुवै तिम तथा पाषाणमय महायंत्रे करी हणिवूं हुवै तिम भस्म नीं राशि प्रतै करिवा समर्थ छै ? इति एक प्रश्न ।

समर्थपणो बे प्रकारे—एक तो विषय मात्र अपेक्षया, दूजो ते भस्म करवा नीं अपेक्षया । ए बे प्रकारे करी आणंद स्थविर वली पूछै छै—

४३६. मंखलिसुत गोशाल नुं, विषय छै हे भगवान !
जाव भस्म करिवा तणुं, ए धुर विकल्प जान ।।

४३७. समर्थ छै भगवंत जी ! मंखलिसुत गोशाल ।
यावत करिवा भस्म प्रति, दूजो विकल्प न्हाल ?

४२२. जेणेव कोट्ठए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

४२३. समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं

४२४. पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—

४२५. एवं खलु अहं भंते ! छट्ठक्खमणपारणगंसि तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे सावत्थीए नगरीए

४२६. उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे हालाहलाए कुंभकारीए

४२७. कुंभकारावणस्स अदूरसामंते वीइवयामि, तए णं गोसाले मंखलिपुत्ते

४२८. ममं हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स अदूर-सामंतेणं वीइवयमाणं पासित्ता एवं वयासी—

४२९. एहि ताव आणंदा ! इओ एगं महं उवमियं निसामेहि ।
तए णं अहं गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे

४३०. जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे, जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते

४३१. तेणेव उवागच्छामि । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं वयासी—एवं खलु आणंदा ! इओ चिरातीयाए अद्धाए

४३२. केइ उच्चावया वणिया एवं तं चेव सव्वं निरवसेसं भाणियव्वं जाव नियगं नगरं साहिए ।

४३३. तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! तव धम्मायरियस्स धम्मोवएसगस्स जाव (सं० पा०) परिकहेहि ।
(श० १५।९७)

४३४. तं पभू णं भंते ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं

४३५. एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ?

वा०—'पभु'त्ति प्रभविष्णुर्गोशालको भस्मराशिं कर्त्तुम् ? इत्येकः प्रश्नः, प्रभुत्वं च द्विधा—विषयमात्रापेक्षया तत्करणतश्चेति पुनः पृच्छति—'विसए ण' मित्यादि, अनेन च प्रथमो विकल्पः पृष्टः, 'समत्थे ण' मित्या-दिना तु द्वितीय इति । (वृ० प० ६७५)

४३६. विसए णं भंते ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ?

४३७. समत्थे णं भंते ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४३८. जिन भाखै आणंद ! सुण, समर्थ छै गोशाल ।
तप तेजे करि जाव ही, करिवा भस्म कराल ।।
४३९. हे आणंदा ! विषय छै, गोशाला नुं जोय ।
जावत करिवा भस्म प्रति, विषय मात्र ए होय ।।
४४०. छै समर्थ आणंद ! ए, मंखलिसुत गोशाल ।
जावत करिवा नैं भसम, करण थकी ए न्हाल ।।
४४१. पिण अरिहंत भगवंत नैं, निश्चै करिके एह ।
भस्मराशि नहिं करि सकै, पुण परिताप करेह ।।

४३८. पभू णं आणंदा ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ।
४३९. विसए णं आणंदा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ।
४४०. समत्थे णं आणंदा ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए,
४४१. नो चेव णं अरहंते भगवंते, पारियावणियं पुण करेज्जा ।

गीतक-छंद

४४२. जेतलुं हे आणंद ! छै तप तेज जे गोशाल नुं ।
तप तेज एह थी गुण अनंत विशिष्टतर मुनि माल नुं ।
पिण क्रोध निग्रह करी खमै अणगार भगवन प्रवर ही ।
कह्यं सूत्र में तप तेज ए सामान्य साधू नों वही ।।

४४२. जावतिए णं आणंदा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवे तेए, एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव तवे तेए अणगाराणं भगवंताणं, खंतिखमा पुण अणगारा भगवंतो ।
'अणगाराणं' ति सामान्यसाधूनां 'खंतिक्खम' त्ति क्षान्त्या—क्रोधनिग्रहेण क्षमन्त इति क्षान्तिक्षमाः ।
(वृ० प० ६७५)

४४३. जेतलुं हे आणंद ! छै तप तेज जे मुनि मेर नुं ।
तप तेज एहथी गुण अनंत विशिष्टतर बहु थेर नुं ।
पिण क्रोध निग्रह करी खमै स्थविर भगवन समचितं ।
इह सूत्र में आचार्य आदि सुत्रिविध स्थविर नै भाषितं ।।

४४३. जावइए णं आणंदा अणगाराणं भगवंताणं तवे तेए एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव तवे तेए थेराणं भगवंताणं, खंतिखमा पुण थेरा भगवंतो ।
'थेराणं' ति आचार्यादीनां—वयः-श्रुतपर्याय-स्थविराणां । (वृ० प० ६७५)

४४४. जेतलुं हे आणंद ! छै तप तेज स्थविर महंत नुं ।
तप तेज एहथी गुण अनंत विशिष्टतर अरहंत नुं ।
पिण क्रोध नैंज अभाव करिकै खमै अरिहंत भगवता ।
चिहुं घातिया अघ भूर ते चकचूर तीर्थंकर कृता ।।

४४४. जावतिए णं आणंदा ! थेराणं भगवंताणं तवे तेए एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव तवे तेए अरहंताणं भगवंताणं, खंतिखमा पुण अरहंता भगवंतो ।

दूहा

४४५. ते माटै आणंद ! प्रभु मंखलिसुत गोशाल ।
तप तेजे करि जाव ही, भस्म करेवा न्हाल ।।
४४६. हे आणंदा ! विषय छै, गोशालक नुं सोय ।
जाव भस्म नीं राशि प्रति, करिवा नुं अवलोय ।।
४४७. समर्थ छै आणंद ! ए, मंखलिसुत गोशाल ।
जाव भस्म नीं राशि प्रति, करिवा नैं तत्काल ।।
४४८. पिण अरिहंत भगवंत नैं, निश्चै करिनैं एह ।
भस्मराशि नवि करि सकै, पुण परिताप करेह ।।

४४५. तं पभू णं आणंदा ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं जाव (सं० पा०) करेत्तए ।
४४६. विसए णं आणंदा ! जाव (सं० पा०) करेत्तए ।
४४७. समत्थे णं आणंदा ! जाव (सं० पा०) करेत्तए ।
४४८. नो चेव णं अरहंते भगवंते, पारियावणियं पुण करेज्जा । (श० १५।९८)

गोतम आदि को अनुज्ञापन पद

४४९. ते माटै जाओ तुम्है, हे आणंद ! अबार ।
गोतमादि जे श्रमण नैं, निर्ग्रंथ नैं सुविचार ।।
४५०. समस्तपणैं करी तिको, एह अर्थ कहो जाय ।
अभिप्राय इहां एह छै, सांभलजो चित ल्याय ।।
४५१. गोशाले तुझ नैं कही, तेह सर्व ही बात ।
गोतम आदि भणी कहो, धुर हुंती अवदात ।।

४४९. तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं
४५०. एयमट्ठं परिकहेहि ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४५२. हे आर्यो ! तुम्ह मत करो, को गोशाल प्रतेह।
धर्म पड़िचोयण करी, निष्ठुर वच मति देह ।।
४५३. धर्म पड़िसारणा करी, ते पिण मती करेह।
इतलै तेहनां मत तणी, निंदा म करो जेह ।।
४५४. धर्म प्रति उपचारे करी, म करो प्रत्युपचार।
तथा धर्म उपकार करि, म करो धर्म उपकार ।।

४५२. मा णं अज्जो ! तुब्भं केई गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएउ ।
४५३. धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारेउ ।
४५४. धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेउ ।
'पडोयारेणं' ति प्रत्युपचारेण प्रत्युपकारेण वा 'पडोयारेउ' 'प्रत्युपचारयतु' प्रत्युपचारं करोतु एवं प्रत्युपकारयतु वा। (वृ० प० ६७५)

४५५. मंखलिसुत गोशालके, श्रमण निर्ग्रंथ संघात।
म्लेच्छ अनार्य भाव प्रति, पड़िवजियो साक्षात ।।

४५५. गोसाले णं मंखलिपुत्ते समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ने। (श० १५।९९)
'मिच्छं विपडिवन्ने' त्ति मिथ्यात्वं म्लैच्छ्यं वा— अनार्यत्वं विशेषतः प्रतिपन्न इत्यर्थः। (वृ० प० ६७५)

४५६. स्थविर आणंद तिह अवसरे, श्रमण भगवंत महावीर।
इम कह्ये छते प्रभु प्रतै, वंदै नमै सधीर ।।
४५७. प्रभु वंदी शिर नामनैं, जिहां गोतम आदेह।
श्रमण निर्ग्रंथ तिहां आयनैं, आमंत्रै तेड़ेह ।।
४५८. आमंत्री नैं इम कहै, इम निश्चै करि जाण।
हे आर्यो ! हूं छठ तणां, पारण विषे पिछाण ।।
४५९. श्रमण भगवंत महावीर प्रभु, आज्ञा दिये छतेह।
नगरी सावत्थी नैं विषे, उच्च नीच मज्झिमेह ।।
४६०. तिमहिज सगलो जाव ही, ज्ञातपुत्र प्रति जाण।
एह अर्थ सहु तूं कहे, गोशाले कही वाण ।।

४५६. तए णं से आणंदे ! थेरे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ
४५७. वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव गोयमादी समणा निग्गंथा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गोयमादी समणे निग्गंथे आमंतेति
४५८. आमंतेत्ता एवं वयासी—एवं खलु अज्जो ! छट्ठक्खमणपारणगंसि
४५९. समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे सावत्थीए नगरीए उच्च-नीय-मज्झिमाइं कुलाइं
४६०. तं चेव सव्वं जाव गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं एयमट्ठं परिकहेहि।

वा०—इहां आणंद स्थविरे गोशाले जे दृष्टांत देईनैं कह्यूं ते तो समाचार जाव शब्द में आया। एतलै गोशाले जे वार्त्ता कही, तिका बात आणंद थविरे गोतमादिक नैं सर्व कही। पिण जे भगवान कनैं आणंद थविर आयो, भगवान नैं प्रश्न पूछ्या, ते जाव शब्द में न आया। ते माटै ते बात गोतमादिक नैं न कही ते विचारी जोयजो। वलि आणंद थविर गोतमादिक नैं कह्यो ते लिखियै छै—

४६१. तिणसूं आर्यो ! मति करो, को गोशाल प्रतेह।
धर्म पड़िचोयणा करी, निष्ठुर वचन मति देह ।।
४६२. जावत म्लेच्छ भाव प्रति, पड़िवजियो गोशाल।
श्रमण अनैं निर्ग्रंथ थी, भाव अनारज न्हाल ।।

४६१. तं मा णं अज्जो ! तुब्भं केई गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएउ।
४६२. जाव (सं० पा०) मिच्छं विप्पडिवन्ने।
(श० १५।१००)

वा०—'इहां आणंद थविरे कह्यो—गोशाला प्रति धर्मचोयणा कीजो मती, गोशाले श्रमण निग्रंथ सूं म्लेच्छ भाव पड़िवज्यो, ते माटै। ए आणंदे कही। पिण इम न कह्यो—मौनै भगवान म्हेल्यो, ए समाचार तूं गोतमादिक नैं कहीजै। तिणसूं हूं कहूं छूं, इम भगवान रो नांम लेई न कह्यो, ए भाव जाणवो। गोशाला नां कना थी आयनैं हूं भगवान कनैं गयो, इम आणंद गोतमादिक नैं कह्यो— एहवो पिण पाठ में नथी। तो भगवान ए समाचार कहिवाया छै तिणसूं हूं थानैं कहूं हूं, ए किम हुवै ? सूत्र देख विचार लीजो।

कोई पूछै—गोशाले आणंद स्थविर नैं वार्त्ता कही तिका बात तो गोतमादिक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नैं आणंद कही। अनैं हूं भगवान कन्है आयनैं सगला समाचार गोशाले कह्या ते भगवान नैं म्हैं कह्या। वली भगवान नैं प्रश्न पूछ्या, ए समाचार गोतमादिक नैं कह्या पाठ में चाल्या नथी, ते किण कारण? तेहनों उत्तर—आणंद स्थविर नैं गोशाले बात कही, तिका बात तो सगली गोतमादिक नैं कही। गोशाले कह्यो छै—'गोशाला सूं धर्म पडिचोयणा, धर्म पडिसारणा, धर्म प्रति उपचार कीजो मती।' गोशाले श्रमण निर्ग्रंथ सूं म्लेच्छ भाव पड़िवज्यो छै। इम कहते छते भगवान विराज्या, तिहां गोशालो आय गयो। तिणसूं आणंद स्थविर भगवान कन्है आय गयो। गोशाला रा समाचार कह्या, प्रश्न पूछ्या, ते बात गोतमादिक नैं कहि सक्यो नहीं। एहवूं न्याय संभवै।' (ज.स.)

गोशालक द्वारा स्वसिद्धान्त निरूपण पद

४६३. जितलै आणंद थविर जे, गोतमादि नैं न्हाल।
एह अर्थ कहै तेतलै, मंखलिसुत गोशाल।।

४६३. जावं च णं आणंदे थेरे गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से गोसाले मंखलिपुत्ते

४६४. कुंभारी हालाहला, तसु आपण थी ताम।
निकली आजीविक तणां, संघ संघाते आम।।

४६४. हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता आजीवियसंघसंपरिवुडे

४६५. निज संघ साथे परवरचो, महाअमरिस अभिमान।
तिण करिकै वहितो छतो, शीघ्र त्वरित ही जान।।

४६५. महया अमरिसं वहमाणे सिग्घं तुरियं

४६६. जाव सावत्थी मध्य थई, जिहां छै कोट्ठग बाग।
जिहां श्रमण भगवंत छै, महावीर महाभाग।।

४६६. सावत्थि नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव कोट्ठए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे

४६७. तिहां आवै आवी करी, श्रमण भगवंत महावीर।
तसु नहिं अलगो ढूकड़ो, एम रही प्रभु तीर।।

४६७. तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा

४६८. श्रमण भगवंत महावीर प्रति, इहविध बोलै वाय।
वचन ओलंभा रूप ते, गोशालो कहै ताय।।

४६८. समणं भगवं महावीरं एवं वदासी—

४६९. सुट्ठु णं कहितां भलो, हे आउखावंत!
हे कासप! तूं मुझ प्रतै, एहवूं वच आखंत।।

४६९. सुट्ठु णं आउसो कासवा! ममं एवं वयासी—
साहू णं आउसो कासवा! ममं एवं वयासी—

४७०. गोशालक सुत-मंखलि, धर्मंतेवासी मोय।
वार-वार तूं इम कहै, तिणसूं पाठ बे वार सुजोय।।

४७०. गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मंतेवासी गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मंतेवासी।

४७१. जे तुझ शिष्य गोशालो हुंतो, ते सूको शुष्क सरीस।
बहु रुधिर अनैं मांसे करी, शुष्क थई सुजगीस।।

४७१. जे णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तव धम्मंतेवासी से णं सुक्के सुक्काभिजाइए भवित्ता

४७२. काल अवसरे काल करि, कोइक सुरलोकेह।
देवपणैं ते ऊपनों, हिव मुझ विगत सुणेह।।

४७२. कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववन्ने।

वा०—कोई कहै—भगवान गोशालो नैं दीक्षा न दीधी, तेहनो उत्तर—इहां भगवान नैं गोशाले कह्यो—मुझ नैं तूं कहै गोशाले मंखलि-पुत्र मांहरो धर्मंतेवासी शिष्य, ते तो तन सूकावी, काल करी देवता थयो। इम गोशाले पिण कह्यो, ते माटै भगवान गोशाला नैं दीक्षा दीधी।

४७३. हूं तो उदाई नाम जे, कुंडियायण गोत्री तास।
तिण अर्जुन गोतमपुत्र नां, तनु प्रति तज्यूं विमास।।

४७३. अहण्णं उदाई नामं कुंडियायणीए अज्जुणस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं विप्पजहामि

४७४. अर्जुन तनु प्रति तजि करी, मंखलिसुत गोशाल।
तेह तणां जे तनु विषे, प्रवेश कीधूं न्हाल।।

४७४. विप्पजहित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं अणुप्पविसामि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७५. गोशाला रा तनु विषे, प्रवेश करी सुजोय।
सप्त पउट्ट परिहार ए, अम्है करूं छू सोय।।

४७६. जे पिण आयुषमंत! फुन, रे कासव! सुण बात।
जेह अम्हारा शास्त्र में, सीझ्या केई सुजात।।

४७७. वा सीझै वलि सीझस्यै, ते सगला ही सोय।
महाकल्प चउरासी लख, ते क्षय करी सुजोय।।

वा०—'ते सगलाई'—गोशाला नां सिद्धांत नों अर्थ विरुद्ध ते भणी व्याख्यान न कीधो। चूर्णिकार कहै—संदेह भणी तेहनां अर्थ लिख्या नहीं तथापि शब्द अनुसारे कोइक लिखियै छै—खपावी नैं इति योगः। तिहां कल्प कहितां काल विशेष तेह लोक प्रसिद्ध पिण हुवै ते व्यवच्छेद नैं अर्थे चउरासी लाख महाकल्प कह्या।

४७५. अणुप्पविसित्ता इमं सत्तमं पउट्टपरिहारं परिहरामि।

४७६. जे वि आइं आउसो कासवा! अम्हं समयंसि केइ सिज्झिसु वा

४७७. सिज्झंति वा सिज्झिस्संति वा सव्वे ते चउरासीतिं महाकप्पसयसहस्साइं।

वा०—'जेवि आइं' ति·····'चउरासीइं महाकप्पसयसहस्साइं' इत्यादि गोशालकसिद्धान्तार्थः स्थाप्यो, वृद्धैरप्यनाख्यातत्वात्, आह च चूर्णिकारः—संदिद्धत्ताओ तस्स सिद्धंतस्स न 'लक्खिज्जइ' ति तथाऽपि शब्दानुसारेण किञ्चिदुच्यते—चतुरशीतिमहाकल्पशतसहस्राणि क्षपयित्वेति योगः, तत्र कल्पाः—कालविशेषाः, ते च लोकप्रसिद्धा अपि भवन्तीति तद्व्यवच्छेदार्थमुक्तं महाकल्पा—वक्ष्यमाणस्वरूपास्तेषां यानि शतसहस्राणि—लक्षाणि तानि तथा।
(वृ० प० ६७६)

४७८. सप्त देव नां भव प्रते, सप्त संजूथ आख्यात।
तेह निकाय विशेष छै, सन्नी गर्भ फुन सात।।

वा०—सात संज्ञि गर्भ एतलै मनुष्य गर्भ वसती प्रतै, तेहनैं मते मोक्ष गामी नां सात सांतर हुवै छै, तेहनै आगै स्वयमेव कहिस्यै।

४७८. सत्त दिव्वे, सत्त संजूहे, सत्त सण्णिगब्भे।
'सत्त संजूहे' त्ति सप्त संयूथान्—निकायविशेषान्।
(वृ० प० ६७६)

वा०—'सत्त सन्निगब्भे' त्ति सञ्ज्ञिगर्भान्—मनुष्यगर्भवसतीः, एते च तन्मतेन मोक्षगामिनां सप्तसान्तरा भवन्ति वक्ष्यति चैवैतान् स्वयमेवेति।
(वृ० प० ६७६)

४७९. सप्त पउट्ट परिहार फुन, कर्म विषे लख पंच।
साठ सहस्र छसौ वली, ऊपर तीन विरंच।।

४८०. अंश भेद ए कर्म नां, अनुक्रम सर्व खपाय।
तठा पछै सीझै वली, बूझै कर्म मूकाय।।

४८१. हुवै शीतलीभूत फुन, सहु दुख तणोज अंत।
कियो करै करस्यै वली, हिव महाकल्प कहंत।।

४८२. जिम गंगा जिहां थी चली, जिहां समाप्ती होय।
अद्धा मारग तेहनों, आगल कहियै सोय।।

४७९. सत्त पउट्टपरिहारे पंच कम्मणि सयसहस्साइं सट्ठिं च सहस्साइं छच्च सए तिण्णि य।

४८०. कम्मंसे अणुपुव्वेणं खवइत्ता तओ पच्छा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति

४८१. परिनिव्वायंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा।

४८२. से जहा वा गंगा महानदी जओ पवूढा, जहिं वा पज्जुवत्थिया
'जहिं वा 'पज्जुवत्थिय' त्ति यत्र गत्वा परि—सामस्त्येन उपस्थिता—उपरता समाप्ता इत्यर्थः।
(वृ० प० ६७६)

४८३. लांबी जोजन पांचसै, चोड़ी अद्ध जोजन।
धनुष पांच सय जेह गंग, ऊंडी तास कथन।।

४८४. ए गंगा नों मान करि, एहवी गंगा सात।
तसु एकठ कीधे छते, इक महागंगा थात।।

४८५. सात महागंगा तणो, सादीण गंगा एक।
सप्त सादीण गंगा तणी, इक मृत्यु-गंगा पेख।।

४८६. सप्त मृत्यु-गंगा तणी, लोहित-गंग इक चंग।
सप्त लोहित-गंगा तणी, एक आवती-गंग।।

४८३. एस णं अद्धा पंचजोयणसयाइं आयामेणं अद्धजोयणं विक्खंभेणं, पंच धणुसयाइं उव्वेहेणं।

४८४. एएणं गंगापमाणेणं सत्त गंगाओ सा एगा महागंगा।

४८५. सत्त महागंगाओ सा एगा सादीणगंगा। सत्त सादीणगंगाओ सा एगा मदुगंगा।

४८६. सत्त मदुगंगाओ सा एगा लोहियगंगा। सत्त लोहियगंगाओ सा एगा आवतीगंगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४८७. सप्त आवती-गंग नीं, परमावती-गंग एक।
ए पूर्वे कही धुर सहित, अपर सहु गंग लेख।।
४८८. इक लख सतरै सहस्र फुन, षटसौ गुणपच्चास।
सहु गंगा हुवै एतली, अम्ह समये कही तास।।
४८९. ते गंगा नां वालुका-कण नां दोय उद्धार।
उद्धरवूं उद्धार ते, कहियै ते अधिकार।।

४९०. सूक्षम बोंदि-कलेवरा, सूक्षम न्हाना जेह।
बोंदी ते आकार छै, कलेवरा कण लेह।।
४९१. एहवा जे वेलू तणां, सूक्ष्म खंड नुं सोय।
उद्धरवूं उद्धार ते, प्रथम भेद ए होय।।
४९२. बादर बोंदि-कलेवरा, बादर मोटा जेह।
बोंदी ते आकार छै, कलेवरा कण लेह।।

४९३. तिहां सूक्षम बोंदि-कलेवरे, बखाणवूं नहि तेह।
तिण कारण थाप्यो तिको, द्वितीय भेद हिव लेह।।

४९४. तिहां बादर बोंदि-कलेवरे, तेह थकी इम लेख।
सौ-सौ वर्ष गये छते, काढै कण इक-एक।।
४९५. जितले काले करि जिके, गंगा नां समुदाय।
तेह रूप कोठो तिको, क्षीण वेलु-कण थाय।।

४९६. नीरए ते रज रहित ह्वै, लेप रहित ह्वै जाण।
नीठो अवयव रहित ही, ते, सर काल प्रमाण।।

वा०—एतलै एक लाख सतरै सहस्र छह सौ उगणपचास एतली नदी नों आयाम विष्कंभ ऊंडपणुं ए सर्व मेली तिण प्रमाण कोठो कीजै ते वेलू नैं कणे भरी ते मांहि थी सौए वर्षे एक-एक काढतां जेतले काले ते ठालो थावै तेतले काले एक सर कहियै।

४९७. मानस नामै सर तिको, ते सर मान करेह।
तीन लाख जे सर गयां, महाकल्प इक लेह।।
४९८. लख चउरासी एहवा, महाकल्प अवलोय।
एक महामानस तसु, कहिवायै इम जोय।।

वा०—एतलै चउरासी लाख महाकल्प परूप्या। हिवै सात भव देवादिक परूपै छै—

४९९. जेह अनंत संजुथ थकी, जीव चवन करि जोय।
अथवा चयं शरीर प्रति, छांडी नैं अवलोय।।

वा०—अणंताओ संजूहाओ कहितां अनंत जीव समुदाय रूप निकाय थकी चयं कहितां चवन प्रतै चइत्तां करीनैं अथवा चयं कहितां देह प्रतै चइत्ता कहितां त्यजी नैं।

४८७. सत्त आवतीगंगाओ सा एगा परमावती। एवामेव सपुव्वावरेणं

४८८. एगं गंगासयसहस्सं सत्तर सहस्सा छच्च अगुणपन्नं गंगासया भवंतीति मक्खाया।

४८९. तासि दुविहे उद्धारे पण्णत्ते, तं जहा—
'तासि दुविहे' इत्यादि, तासां गंगादीनां गंगादिगतबालुकाकणादीनामित्यर्थः द्विविधः उद्धारः उद्धरणीयद्वैविध्यात्। (वृ० प० ६७६)

४९०,४९१. सुहुमबोंदिकलेवरे चेव।
'सुहुमबोंदि कलेवरे चेव' त्ति सूक्ष्म बोन्दीनि—सूक्ष्माकाराणि कलेवराणि—असंख्यात्खण्डीकृत बालुकाकणरूपाणि यत्रोद्धारे स तथा। (वृ० प० ६७६)

४९२. बायरबोंदिकलेवरे चेव।
'बायरबोंदिकलेवरे चेव' त्ति बादरबोन्दीनि—बादराकाराणि कलेवराणि—वालुकाकणरूपाणि यत्र तथा। (वृ० प० ६७६)

४९३. तत्थ णं जे से सुहुमबोंदिकलेवरे से ठप्पे।
'ठप्पे' त्ति न व्याख्येयः इतरस्तु व्याख्येय इत्यर्थः। (वृ० प० ६७६)

४९४. तत्थ णं जे से बायरबोंदिकलेवरे तओ णं वाससए गए, वाससए गए एगमेगं गंगाबालुयं अवहाय

४९५. जावतिएणं कालेणं से कोट्ठे खीणे।
'से कोट्ठे' त्ति स कोष्ठो—गङ्गासमुदायात्मकः। (वृ० प० ६७६)

४९६. णीरए निल्लेवे निट्ठिए भवति सेत्तं सरे सरप्पमाणे।
निष्ठितः निरवयवीकृत इति। (वृ० प० ६७६)

४९७. एएणं सरप्पमाणेणं तिण्णि सरसयसाहस्सीओ से एगे महाकप्पे।

४९८. चउरासीतिं महाकप्पसयसहस्साइं से एगे महामाणसे।

वा०—यदुक्तं चतुरशीतिर्महाकल्पशतसहस्राणीति तत् प्ररूपितम्, अथ सप्तानां दिव्यादीनां प्ररूपणायाह— (वृ० प० ६७६)

४९९. अणंताओ संजूहाओ जीवे चयं चइत्ता

वा०—'अणंताओ संजूहाओ' त्ति अनन्तजीवसमुदायरूपान्निकायात् 'चयं चइत्त' त्ति च्यवं च्युत्वा—च्यवनं कृत्वा चयं वा—'देहं चइत्त' त्ति त्यक्त्वा। (वृ० प० ६७६)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५००. ऊपरला माणस तणां, संयुथ देव पिछाण।
तेह विषे जे ऊपजै, अनंत काय थी आण।।

वा०—ऊपरलो, बिचलो और नीचलो ए तीन मानस नां सद्भाव थकी ते मांहिलो बिचलो, हेठलो—ए दोय टालवा नैं अर्थे ऊपरलो इसो कह्यु—माणसेत्ति गंगादि प्ररूपणा थकी पूर्वोक्त स्वरूप सर नैं विषे—सर प्रमाण आउखा युक्त इत्यर्थः।

संजूहेत्ति निकायविशेष देव, तेहनैं विषे देवपणैं ऊपजै ए पहिलो देव भव कह्यो। महामाणस संजूह संख्या एतली सर्व नदी हुवै, दोय हजार नव सौ चउसठ कोड़ाकोड़ि, पचहत्तर लाख कोड़ि अडतालीस हजार कोड़ि एतली नदी जाणवी।

५००. उवरिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जति।

वा०—'उवरिल्ले' त्ति उपरितनमध्यमाधस्तनानां मानसानां सद्भावात् तदन्यव्यवच्छेदायोपरितने इत्युक्तं 'माणसे' त्ति गङ्गादिप्ररूपणतः प्रागुक्तस्वरूपे सरसि सरः प्रमाणायुष्कयुक्ते इत्यर्थः 'संजूहे'त्ति निकायविशेषे देवे 'उववज्जइ' त्ति प्रथमो दिव्यभवः।
(वृ० प० ६७६)

५०१. तिहां देव संबधिया, भोग भोगवी ताम।
विचरी ते सुरलोक थी, आउ क्षय करि आम।।
५०२. भव स्थिति क्षये अंतर रहित, तनु प्रति तजी तिवार।
प्रथम सन्नि गर्भ मनुपणैं, उपजै जीव जिवार।।
५०३. तेह जीव ते भव थकी, निकलै अणंतरेह।
मज्झिम माणस संयुथे, देवपणें उपजेह।।

वा०—जे सन्नी गर्भज मनुष्यपणो ऊपनों ते जीव ते मनुष्य नां भव थकी अंतर रहित नीकली नैं मज्झिम कहितां बिचलै मानस प्रमाण आउखा युक्त संयुथ ते निकाय विशेष देव नैं विषे ऊपजै।

५०१. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ, विहरित्ता ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं
५०२. भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता पढमे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।
५०३. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता मज्झिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जइ।

५०४. तिहां देव संबंधिया, भोग जाव विचरेह।
ते सुरलोक थकी तदा, आयू जाव चवेह।।

५०५. द्वितीय सन्नि गर्भजपणैं, मनुष्यपणैं उपजेह।
तेह जीव ते भव थकी, अणंतरं निकलेह।।
५०६. निकली हेठला मानसे, प्रमाण आयू युक्त।
संयुथ देवपणैं तिको, उपजै एहवूं उक्त।।
५०७. ते तिहां देव संबंधिया, जाव चवी नैं जाण।
तृतीय सन्नि गर्भ मनुपणैं, जीव ऊपजै आण।।
५०८. तेह तिहां थी जाव ही, निकल ऊपर लेह।
महामाणस संयुथ विषे, देवपणैं ऊपजेह।।

वा०—महामानस पूर्वोक्त महाकल्प प्रमित आउखावंत नैं विषे, जे पूर्वे कह्यु चउरासी लाख महाकल्प खपावी नैं ते प्रथम महामानस अपेक्षाये इसो देखवूं। अन्यथा महामानस त्रिण नैं विषे ते कल्प घणां थावै ते माटै एहनां तीन भेद—उपरिला, मध्यम, हेठला। ते मांहि ऊपरला महामानस प्रमाण आउखायुक्त तीन हीज संयूथ तीन देव भव नैं विषे ऊपजै।

५०४. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ, विहरित्ता ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव (सं० पा०) चइत्ता।
५०५. दोच्चे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।

५०६. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता हेट्ठिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जइ।
५०७. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव चइत्ता तच्चे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।
५०८. से णं तओहिंतो जाव उव्वट्टित्ता उवरिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जइ।

वा०—'मानसोत्तरे' त्ति महामानसे पूर्वोक्तमहाकल्पप्रमितायुष्कवति, यच्च प्रागुक्तं चतुरशीतिं महाकल्पान् शतसहस्राणि क्षपयित्वेति तत्प्रथममहामानसापेक्षयेति द्रष्टव्यं, अन्यथा त्रिषु महामानसेषु बहुतराणि तानि स्युरिति, एतेषु चोपरिमादिभेदात् त्रिषु मानसोत्तरेषु त्रीण्येव संयूथानि त्रयश्च देवभवाः।
(वृ० प० ६७६)

५०९. ते तिहां देव संबंधिया, जाव चवी नैं जाण।
तुर्य सन्नि गर्भ मनु विषे, जीव ऊपजै आण।।
५१०. तेह जीव ते भव थकी, निकली अणंतरेह।
मध्यम महामाणस संयुथ, देवपणैं उपजेह।।

५०९. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव चइत्ता चउत्थे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।
५१०. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता मज्झिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५११. ते तिहां देव संबंधिया, जाव चवी नैं जाण।
पंचम सन्नि गर्भ मनु विषे, जीव ऊपजै आण ।।

५१२. तेह जीव ते भव थकी, निकली अणंतरेह।
हेठिल महामाणस संयूथ, देवपणैं उपजेह ।।

५१३. ते तिहां देव संबंधिया, जाव चवी नें जाण।
छठा सन्नि गर्भ मनु विषे, जीव ऊपजै आण ।।

५१४. तेह जीव ते भव थकी, निकली अणंतरेह।
ब्रह्मलोक[1] नामे इसो, कल्प परूप्यो तेह ।।

५१५. लांबपणैं पूर्व पश्चिम, उत्तर दक्षिण जोग।
विस्तीर्ण चोड़ापणैं, ते पंचम सुरलोग ।।

५१६. सूत्र पन्नवणा दूसरे, ठाण पदे जिम ख्यात।
जाव पंचम अवतंसका, आख्या तेह कहात ।।

५१७. अशोक अवतंसक प्रथम, यावत ही प्रतिरूप।
ते तिहां सुर में ऊपजै, पामै सुख अनूप ।।

५१८. ते तिहां दश दधि देव नां, जाव चवी नैं जाण।
सप्तम सन्नि गर्भ मनु विषे, जीव ऊपजै आण ।।

५१९. तेह तिहां नव मास लग, बहु प्रतिपूरण लेह।
साढा सातज रात्रि दिन, ए अतिक्रम्ये छतेह ।।

५२०. तनु सुकुमालज जेहनों, भद्रक मूर्त्ती जास।
मृदु दर्भ कुंडल नीं परै, कुंचित केश विमास ।।

५२१. मृष्ट गंड-तल नैं विषे, कर्णाभरण विशेख।
देवकुमारज सारिखी, छै तनु प्रभा सुरेख ।।

५२२. जन्म्या बालक एहवो, रे काश्यप! सुण बात।
हूं इज ते बालक हुंतो, आगल सुण अवदात ।।

५२३. तिवार पछै हे आयुष्मन! अहो कासवा! जाण।
म्है बालपणैं दीक्षा ग्रही, कुमार वय पहिछाण ।।

५२४. फुन कुमार वय नैं विषे, ब्रह्मचर्य वसिवेह।
कान बिंधाया पिण नथी, कुश्रुति-शिलाक करेह ।।

५२५. कुश्रुति विण सुण्ये बाल वय, प्रव्रज्या विषे पिछाण।
संखा कहितां बुद्धि ते, म्है लाधी सुविहाण ।।

५२६. इम बुद्धि लाभी मैं किया, आगल कहिस्यै जेह।
सप्त पउट्ट परिहार प्रति, कहियै छै हिव तेह ।।

५२७. एणक फुन मल्लराम नों, मंडित रोह नों संच।
भारदाइ नों पंचमो, निज-निज नामे पंच ।।

५२८. अर्जुन गोतम-पुत्र नों, गोशालक अवलोय।
तेह मंखलिपुत्र नों, एह सप्तमों होय ।।

५११. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव चइत्ता पंचमे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।

५१२. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता हिट्ठिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जइ।

५१३. से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव चइत्ता छट्ठे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।

५१४. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता—बंभलोगे नामं से कप्पे पण्णत्ते।

५१५. पाईणपडीणायते उदीणदाहिणविच्छिण्णे।

५१६ जहा ठाणपदे (२।५४) जाव पंच वडेंसगा पण्णत्ता, तं जहा—

५१७. असोगवडेंसए जाव पडिरूवा—से णं तत्थ देवे उववज्जइ।

५१८. से णं तत्थ दस सागरोवमाइं दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव चइत्ता सत्तमे सण्णिगब्भे जीवे पच्चायाति।

५१९. से णं तत्थ नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं वीतिक्कंताणं

५२०. सुकुमालगभद्दलए मिउ-कुंडलकुंचिय-केसए

५२१. मट्ठगंडतल-कण्णपीढए देवकुमारसप्पभए

५२२. दारए पयाति। से णं अहं कासवा!

५२३. तए णं अहं आउसो कासवा! कोमारियपव्वज्जाए

५२४. कोमारएणं बंभचेरवासेणं अविद्धकण्णए
'अविद्धकन्नए चेव' त्ति कुश्रुतिशलाकयाऽविद्धकर्णः—अव्युत्पन्नमतिरित्यर्थः। (वृ० प० ६७८)

५२५. चेव संखाणं पडिलभामि।
तस्यां प्रव्रज्यायां विषयभूतायां संख्यानं—बुद्धि प्रतिलेभ इति योगः। (वृ० प० ६७८)

५२६. पडिलभित्ता इमे सत्त पउट्टपरिहारे परिहरामि, तं जहा—

५२७. (१) एणेज्जस्स (२) मल्लरामस्स (३) मंडियस्स (४) रोहस्स (५) भारद्दाइस्स।

५२८. (६) अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स (७) गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स।

---

१. आदि थकी सात संयूथ, छह देव भव अनैं सातमों देव भव ब्रह्मदेवलोक नैं विषे। ते संयूथ न हुवै सूत्र कै विषे संयूथपणैं करी नथी वांछयो ते भणी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—इहां एणकादिक पच नाम थकी कह्या अनैं दोय छेहला पिता नैं नामे करी सहित कह्या।

५२९. तिहां प्रथम पउट्ट परिहार ते, नगर राजगृह बार।
मंडिकुक्षि नामे भलु, बाग विषे अवधार।।
५३०. नाम उदाई गोत्र तसु, कुंडियायन सुविचार।
म्है छांडच् तनु तेहनो, ते छांडी तिहवार।।
५३१. एणीक तणें शरीर हूं, पैठो पैसी धार।
वर्ष बावीस रह्यो तिहां, ए प्रथम पउट्ट परिहार।।
५३२. तिहां द्वितीय पउट्ट परिहार ते, नगर उदंडपुर बार।
चंद्रोतर नामे भलो, बाग विषे सुविचार।।
५३३. एणीक तनु म्है मूकियो, मूकी नैं तिण ठाम।
मल्लराम नां तनु विषे, पैठो पेसी ताम।।
५३४. मल्लराम नां तनु विषे, रह्यो वर्ष इकबीस।
द्वितीय पउट्ट परिहार ए, म्है कीधूं सुजगीस।।
५३५. तिहां तृतीय पउट्ट परिहार ते, चंपानगरी बार।
अंगमंदर नामे भलो, बाग विषे सुविचार।।
५३६. मल्लराम नां तनु प्रतै, मूक्यो मूकी ताम।
मंडित तणां शरीर में, पैठो पैसी आम।।
५३७. मंडित नां तनु नैं विषे, रह्यो वर्ष हूं बीस।
तृतीय पउट्ट परिहार ए, मैं कीधूं सुजगीस।।
५३८. तिहां तुर्य पउट्ट परिहार ते, नगरी वाणारसी बार।
काम महावन प्रवर ही, चैतन्य विषे सुविचार।।
५३९. मंडित तणां शरीर प्रति, मूक्यो मूकी सोय।
रोह तणां तनु नैं विषे, पेठो पैसी जोय।।
५४०. रोह तणां तनु नैं विषे, रह्यो वर्ष उगणीस।
तुर्य पउट्ट परिहार ए, म्है कीधूं सुजगीस।।
५४१. तिहां पंचम पउट्ट परिहार ते, नगरो आलंभिका बार।
प्राप्त काल नामे भलो, बाग विषे सुविचार।।
५४२. रोह तणां शरीर प्रति, मूक्यो मूकी ताम।
भारदाई नां तनु प्रतै, पैठो पैसी आम।।
५४३. भारदाई नां तनु विषे, हूं रह्यू वर्ष अठार।
पंचम पउट्ट परिहार ए, मैं कीधूं तिहवार।।
५४४. तिहां षष्टम पउट्ट परिहार ते, नगरी विशाला बार।
कुंडियायण नामे भलो, बाग विषे अवधार।।
५४५. भारदाई नां शरीर प्रति, मूक्यो मूकी सोय।
अर्जुन गोतम-पुत्र तनु, पैठो पैसी जोय।।
५४६. अर्जुन गोतम-पुत्र तनु, हूं रह्यू सतरै वास।
षष्टम पउट्ट परिहार ए, म्है कीधूं सुविमास।।
५४७. सप्तम पउट्ट परिहार ते, नगरी सावत्थी एह।
हालाहला कुंभकारी नां, कुंभकार हाटेह।।

वा०—'एणेज्जस्से' त्यादि इहैणकादयः पञ्च नामतोऽभिहिताः द्वौ पुनरन्त्यौ पितृनामसहिताविति।
(वृ०प० ६७८)

५२९. तत्थ णं जे से पढमे पउट्टपरिहारे से णं रायगिहस्स नगरस्स बहिया मंडिकुच्छिसि चेइयंसि
५३०. उदाइस्स कुंडियायणस्स सरीरं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता
५३१. एणेज्जगस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता बावीसं वासाइं पढमं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५३२. तत्थ णं जे से दोच्चे पउट्टपरिहारे से णं उद्दंडपुरस्स नगरस्स बहिया चंदोयरणंसि चेइयंसि
५३३. एणेज्जगस्स सरीरगं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता मल्लरामस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता
५३४. एकवीसं वासाइं दोच्चं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५३५. तत्थ णं जे से तच्चे पउट्टपरिहारे से णं चंपाए नगरीए बहिया अंगमंदिरंसि चेइयंसि
५३६. मल्लरामस्स सरीरगं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता मंडियस्स सरीरगं अणुप्पविग्गामि, अणुप्पविसित्ता
५३७. वीसं वासाइं तच्चं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५३८. तत्थ णं जे से चउत्थे पउट्टपरिहारे से णं वाणारसीए नगरीए बहिया काममहावणंसि चेइयंसि
५३९. मंडियस्स सरीरगं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता रोहस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता
५४०. एकूणवीसं वासाइं चउत्थं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५४१. तत्थ णं जे से पंचमे पउट्टपरिहारे से णं आलभियाए नगरीए बहिया पत्तकालगंसि चेइयंसि
५४२. रोहस्स सरीरगं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता भारद्दाइस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता
५४३. अट्ठारस वासाइं पंचमं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५४४. तत्थ णं जे से छट्ठे पउट्टपरिहारे से णं वेसालीए नगरीए बहिया कोंडियायणंसि चेइयंसि
५४५. भारद्दाइस्स सरीरं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता
५४६. सत्तरस वासाइं छट्ठं पउट्टपरिहारं परिहरामि।
५४७. तत्थ णं जे से सत्तमे पउट्टपरिहारे से णं इहेव सावत्थीए नगरीए हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५४८. अर्जुन गोतम-पुत्र नों, तनु मूक्यो मूकीज।
मंखलिसुत गोशाल नां, शरीर प्रति देखीज ।।
५४९. ते तनु अतिही स्थिर सुध्रुव, धारण योग्य विचार।
शीत उष्ण फुन भूख नों, सहणहार तनु धार ।।

५५०. विविध प्रकार तणां वली, दंश मंशक अधिकेह।
परिसह नैं उपसर्ग तणो, सहणहार तनु जेह ।।
५५१. एहवूं थिर संघयण जे, तसु इम करिनैं सोय!
प्रवेश कीधूं ते तनु, प्रवेश करी सुजोय ।।
५५२. मंखलि-सुत गोशाल तनु, हूं रहूं सोलै वास।
सप्तम पउट्ट परिहार ए, तनु परावर्त्त विमास ।।
५५३. हे आयुष्मन ! कासवा ! इण प्रकार करि धार।
इक सय तेती वर्ष कृत, ह्वै सप्त पउट्ट परिहार ।।
५५४. इसो अम्हारे शास्त्र कह्यु, ते माटै कहूं तोय।
हे आयुष्मन कासवा ! भलो कहै इम मोय ।।
५५५. हे आयुष्मन कासवा ! रूडूं कहै मुझ न्हाल।
धर्मांतेवासी मांहरो, मंखलिसुत गोशाल ।।
५५६. धर्मांतेवासी मांहरो, मंखलिसुत गोशाल।
बार-बार तूं मुझ प्रतै, इम कहै तसु तनु न्हाल ।।

गोशालकवचन प्रतिकार पद

५५७. श्रमण भगवंत महावीर तब, कहै गोशाल प्रतेह।
तेह यथादृष्टांत इम, हे गोशाल ! सुणेह ।।
५५८. जे तस्कर होई तिको, ग्राम तणैं लोकेह।
पूठै वाहरू तिण करी, पराभवियोज छतेह ।।
५५९. वलि तेहथी बीहतो छतो, किहांइक गर्त्ता जेह।
वा दरी ते स्यालादि नां, कृत जे भू-विवरेह ।।

५६०. वा दुर्ग तिको जावूं दुखे, वन गहनादि कहेह।
अथवा निम्न जले करी, सूको सर आदेह ।।

५६१ अथवा गिरि वा विषम फुन, अणपामंतो स्थान।
इक मोटै जे ऊन नैं, लोमे करी पिछान ।।
५६२. अथवा सण नैं लोम करि, अथवा कपास जेह।
तेह तणैं पस्मे करी, अथवा तृण अग्रेह ।।

५६३. निज आतम ढांकी करी, तस्कर ते तिष्ठेह।
ते निज तनु अणढाकिये, ढांक्यो इम मानेह ।।
५६४. अप्रच्छन्न छतूं आतम प्रति, प्रच्छन्न इसो मानेह।
अणलुकियो निज आतम प्रति, लुकियो माने तेह ।।
५६५. अणओलावणो आतम प्रति, ओलावणो मानेह।
तूं पिण इण दृष्टांत करि, हे गोशाला ! जेह ।।

५४८. अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं विप्पजहामि, विप्पजहित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं

५४९. अलं थिरं धुवं धारणिज्जं सीयसहं उण्हसहं खुहासहं
'अलं थिरं' ति अत्यर्थं स्थिरं। (वृ० प० ६७८)

५५०. विविहदंसमसगपरीसहोवसग्गसहं

५५१. थिरसंघयणं ति कट्टु तं अणुप्पविसामि, अणुप्पविसित्ता

५५२. सोलस वासाइं इमं सत्तमं पउट्टपरिहारं परिहरामि।

५५३. एवामेव आउसो कासवा ! एगेणं तेत्तीसेणं वाससएणं सत्त पउट्टपरिहारा परिहरिया भवंति।

५५४. इति मक्खाया, तं सुट्ठु णं आउसो कासवा ! ममं एवं वयासी—

५५५. साहू णं आउसो कासवा ! ममं एवं वयासी—गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मंतेवासी,

५५६. गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मंतेवासी।
(श० १५।१०१)

५५७. तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—गोसाला ! जहानामए

५५८. तेणए सिया, गामेल्लएहिं परब्भमाणे-

५५९. परब्भमाणे कत्थ य गड्डं वा दरिं वा
'दरिं' ति शृगालादिकृतभूविवरविशेषं।
(वृ० प० ६८३)

५६०. दुग्गं वा णिण्णं वा
'दुग्गं' ति दुःखगम्यं वनगहनादि 'निन्नं' ति निम्नं शुष्कसरःप्रभृति। (वृ० प० ६८३)

५६१ पव्वयं वा विसमं वा अणस्सादेमाणे एगेणं महं उण्णालोमेण वा

५६२. सणलोमेण वा कप्पासपम्हेण वा तणसूएण वा
'तणसूएण व' त्ति 'तृणसूकेन' तृणाग्रेण।
(वृ० प० ६८३)

५६३. अत्ताणं आवरेत्ताणं चिट्ठेज्जा, से णं अणावरिए आवरियमिति अप्पाणं मण्णइ,

५६४. अप्पच्छण्णे य पच्छण्णमिति अप्पाणं मण्णइ, अणिलुक्के णिलुक्कमिति अप्पाणं मण्णइ,

५६५. अपलाए पलायमिति अप्पाणं मण्णइ, एवामेव तुमं पि गोसाला !

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५६६. अन्य अणछतूंज आतम प्रति, अन्य इम देखाड़ेह।
ते माटे तूं इम म कर हे गोशाल ! सुणेह ।।
५६७. तुझ इम करिवा योग्य नहीं, हे गोशाला ! जोय।
तेहिज छाया तांहरी, नथी अनेरी कोय ।।

गोशालक का पुनः आक्रोश पद

५६८. मंखलि-सुत गोशाल तब, प्रभु इम कह्यै छतेह।
कोप्यो शीघ्र उतावलो, पंच पाठ इहां लेह ।।

५६९. श्रमण भगवंत महावीर प्रति, उच्च अवच वचनेह।
जे आक्रोसज वच करी, अतिही आक्रोसेह ।।
५७०. उच्च अवच वचने करी, आक्रोसी नें ताम।
तू मूओ इत्यादि जे, वचन कहीनें आम ।।
५७१. उच्च अवच वचने करी, उद्धंसण करिकेह।
उद्धंसै कुलहीण तूं, इत्यादिक वचनेह ।।

५७२. उच्च अवच वचने करी, उद्धंसी नें ताम।
वलि भूंडा वच वीर प्रति, बोलै अधिक विराम ।।
५७३. उच्च अवच वचने करी, निभ्रंच्छन करिकेह।
निभ्रंछै तुझ साथ मुझ, नथी प्रयोजन एह ।।
५७४. उच्च अवच वचने करी, निभ्रंछी नें सोय।
वलि गोशालो वीर प्रति, बोलै कुवचन जोय ।।
५७५. उच्च अवच वचने करी, निच्छोड़णा करिकेह।
निच्छोड़ै त्यज मांहरो, तीर्थंकरपणुं एह ।।
५७६. उच्च अवच वचने करि, निच्छोड़ी गोशाल।
वीर प्रतै वलि इम कहै, दुष्ट वचन विकराल ।।
५७७. पोता नां आचार थी, नष्ट थयो तूं सोय।
कदाचि वितर्क अर्थ ए, हूं इम मानूं तोय ।।

५७८. थयो विनष्ट रु तूं मुओ, कदाचित फुन ताम।
वितर्क अर्थे शब्द ए, हूं इम मानूं आम ।।
५७९. भ्रष्ट थयो संपद थकी, कदाचित वच तेम।
वितर्क अर्थे शब्द ए, हूं मानूं तुझ एम ।।

५८०. नष्ट विनष्ट रु भ्रष्ट तूं, हूं मानूं तुझ हीन।
समकाले त्रिहुं धर्म नां, जोग थकी पद तीन ।।

वा०—नष्ट, विनष्ट, भ्रष्ट—ए तीनूं बोल समकाले थापवा नों जोग थकी ए तीनूं पद भेला किया।

५६६. अणण्णे संते अण्णमिति अप्पाणं उपलभसि, तं मा एवं गोसाला !

५६७. नारिहसि गोसाला ! सच्चेव ते सा छाया नो अण्णा।
(श० १५।१०२)

५६८. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते रुट्ठे कुविए चंडिक्किए मिसिमिसेमाणे

५६९. समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आओसणाहिं आओसइ,

५७०,५७१. उच्चावयाहिं उद्धंसणाहिं उद्धंसेति,
'उच्चावयाहिं' ति असमञ्जसाभिः 'आउसणाहिं' ति मृतोऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनैः आक्रोशयति शपति 'उद्धंसणाहिं' ति दुष्कुलीनेत्यादिभिः कुलाद्यभिमान-पातनार्थैर्वचनैः 'उद्धंसेइ' त्ति कुलाद्यभिमानादधः पातयतीव। (वृ० प० ६८३)

५७३,५७४. उच्चावयाहिं निब्भंछणाहिं निब्भंछेति,
'निब्भंछणाहिं' ति न त्वया मम प्रयोजनमित्यादिभिः परुषवचनैः 'निब्भंच्छेइ' त्ति नितरां दुष्टमभिधत्ते।
(वृ० प० ६८३)

५७५,५७६. उच्चावयाहिं निच्छोडणाहिं निच्छोडेति, निच्छोडेत्ता एवं वयासी—
'निच्छोडणाहिं' ति त्यजास्मदीयांस्तीर्थकरालङ्कारा-नित्यादिभिः। (वृ० प० ६८३)

५७७. नट्ठे सि कदाइ,
'नट्ठे सि कयाइ' त्ति नष्टः स्वाचारनाशात् 'असि' भवसि त्वं 'कयाइ' त्ति कदाचिदिति वितर्कार्थः अहमेवं मन्ये यदुत नष्टस्त्वमसीति।
(वृ० प० ६८३)

५७८. विणट्ठे सि कदाइ,
'विणट्ठेसि' त्ति मृतोऽसि। (प० वा० ६८३)

५७९. भट्ठे सि कदाइ,
'भट्ठोसि' त्ति भ्रष्टोऽसि—सम्पदः व्यपेतोऽसि त्वं।
(वृ० प० ३८३)

५८०. नट्ठ-विणट्ठ-भट्ठे सि कदाइ,
धर्मत्रयस्य यौगपद्येन योगात् नष्टविनष्टभ्रष्टोऽसीति।
(वृ०प० ६८३)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५८१. वलि तूं आज नहीं अछै, फुन मुझ थी अवलोय।
निश्चै सुख नहिं तो भणी, इम वच बोल्यो सोय ।।

५८१. अज्ज न भवसि, नाहि ते ममाहितो सुहमत्थि ।
(श० १५/१०३)

सर्वानुभूति-भस्मराशिकरण पद

५८२. तिण काले नें तिण समय, श्रमण भगवंत महावीर ।
तसु अंतेवासी सुशिष्य, गुणवंत अधिक गंभीर ।।

५८२. तेण कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी

५८३. पूरव देशे ऊपनो, सर्वानुभूति नाम।
वर अणगार सुहामणो, सरल भलो अभिराम ।।

५८३. पाईणजाणवए सव्वाणुभूती नामं अणगारे पगइ-भद्दए
'पाईणजाणवए'त्ति प्राचीनजानपदः प्राच्य इत्यर्थः ।
(वृ० प० ६८३)

५८४. जाव विनीत मुनी जिको, धर्माचारज सार।
तेह तणैं अनुराग करि, अधिक प्रीत अवधार ।।

५८४. जाव (सं० पा०) विणीए धम्मायरियाणुरागेणं

५८५. एह अर्थ अणश्रद्धतो, ऊठै ऊठी साहि।
जिहां गोशालो छै तिहां, आवै आवी ताहि ।।

५८५. एयमट्ठं असद्दहमाणे उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठेत्ता जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

५८६. मंखलिसुत गोशाल प्रति, बोलै एहवी वाय।
जे पिण हे गोशालका ! तावत प्रथम कहाय ।।

५८६. गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—जे वि ताव गोशाला !

५८७. तथारूप जे श्रमण वा, माहण पासे उदार।
इक पिण आर्य धर्ममय, सुवचन धारै सार ।।

५८७. तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतियं एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं निसामेति ।

५८८. ते पिण तावत ते प्रतै, वंदै करै नमस्कार।
जाव कल्याणकारी तिको, मंगलीक सुविचार ।।

५८८. से वि ताव वंदति नमंसति जाव (सं० पा०) कल्लाणं मंगल

५८९. दैवत ते धमदेव फुन, चित्त अह्लादक तेह।
चैत्य कहीजै ते भणी, तसु पर्युपास करेह ।।

५८९. देवयं चेइयं पज्जुवासति।

५९०. तो स्यूं हे गोशाल ! तुझ, भगवंत प्रव्रज्या दीध।
फुन भगवंत निश्चै करी, मुंडन कियो प्रसीध ।।

५९०. किमंग पुण तुमं गोसाला ! भगवया चेव पव्वाविए, भगवया चेव मुंडाविए,

५९१. भगवंते निश्चै करी, सेव्यो व्रतीपणेह।
भगवंत निश्चै सीखव्यो, तेज लेश आदेह ।।

५९१. भगवया चेव सेहाविए, भगवया चेव सिक्खाविए
'सेहाविए' त्ति व्रतित्वेन सेधितः व्रतिसमाचारसेवायां तस्य भगवतो हेतुभूतत्वात् 'सिक्खाविए' त्ति शिक्षित-स्तेजोलेश्याद्युपदेशदानतः । (वृ० प० ६८३)

५९२. फुन भगवंत निश्चै करी, बहुश्रुत तुझ प्रति कीध।
भगवंत थकीज पड़िवज्यो, भाव अनार्य प्रसीध ।।

५९२. भगवया चेव बहुस्सुतीकए, भगवओ चेव मिच्छं विप्पडिवन्ने

५९३. तिणसूं मा गोशाल ! इम, करिवा योग्य न कोय।
हे गोशाला ! तुझ भणी, भाव अनारज जोय ।।

५९३. तं मा एवं गोसाला ! नारिहसि गोसाला !

५९४. प्रकृति छाया तांहरी, निश्चै करी तेहीज।
पिण अन्य छाया छै नथी, इम मुनि वच सुकहीज ।।

५९४. सच्चेव ते सा छाया नो अण्णा।
(श० १५।१०४)

५९५. मंखलिसुत गोशाल तब, सर्वानुभूति संत।
इहविधि वचन कह्यं छते, आसुरुत्ते हुंत ।।

५९५. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सव्वाणुभूतिणा अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते···

५९६. सर्वानुभूति मुनि प्रतै, तप तेजे करि सोय।
जिम जे एक प्रहार करि, हणवूं जेहनूं होय ।।

५९६. सव्वाणुभूतिं अणगारं तवेणं तेएणं एगाहच्चं

५९७. महायंत्र पाषाणमय, तिण करि हणिवूं जास।
तिह विधि ते मुनिवर तणी, करै भस्म नीं राश ।।

५९७. कूडाहच्चं भासरासिं करेति । (श० १५।१०५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५९८. मंखलिसुत गोशाल तब, सर्वानुभूति तास।
तप तेजे करि जाव ही, करी भस्म नीं राश ।।

५९९. द्वितीय वार पिण प्रभु प्रतै, असमंजस वचनेह।
आक्रोसै आक्रोस करि, जावत सुख नहिं लेह ।।

सुनक्षत्र-परितापन पद

६००. तिण काले नें तिण समय, श्रमण भगवंत महावीर।
तसु अंतेवासी सुशिष्य, गुणे करी गंभीर ।।

६०१. अयोध्या देशे ऊपनों, सुनक्षत्र नाम अणगार।
प्रकृति स्वभावे भद्र ते, जाव विनीत उदार ।।

६०२. ते मुनि धर्माचार्य नां, अनुरागे करि मन्य।
जिम सर्वानुभूति तिमज, जाव ते छाय न अन्य ।।

६०३. मखलिसुत गोशाल तब, सुनक्षत्र अणगार।
इहविधि वचन कह्यै छते, आसुरुत्ते धार ।।

६०४. सुनक्षत्र अणगार प्रति, तप थी उपनुं तेज।
तेहिज तेजोलेश करि, परितापना करेज ।।

६०५. सुनक्षत्र अणगार तब, मंखलिसुत गोशाल।
तप थी उपनुं तेज करि, परिताप्ये छते न्हाल ।।

६०६. ज्यां श्रमण भगवंत महावीर त्यां, आवै आवी सार।
श्रमण भगवंत महावीर प्रति, तीन वार तिहवार ।।

६०७. वंदै शिर नामै तदा, पोतेहीज पिछाण।
पंच महाव्रत ऊचरै, जाम ऊचरी जाण ।।

६०८. बहु मुनि अज्जा खमाय नें, दोष आलोवै न्हाल।
पड़िकमी लह्युं समाधि प्रति, अनुक्रम कीधो काल ।।

६०९. सोल करोड़ सुवर्ण तजी, सुंदर सोल तजेह।
वंदूं सुनक्षत्र मुनि, ऋषिमंडल मेलेह ।।

भगवान पर तेजोलब्धि प्रयोग पद

६१०. मंखलिसुत गोशाल तब, सुनक्षत्र अणगार।
ते प्रति तप तेजे करी, परितापी तिहवार ।।

६११. तृतीय वार पिण प्रभु प्रतै, असमंजस वचनेह।
आक्रोसण करिकै तदा, आक्रोसै वलि तेह ।।

६१२. सगलूं कहिवूं पूर्ववत, तिमहिज जावत जाण।
सुख नहिं मुझ थी आज तुझ, बोल्यो इहविधि वाण ।।

६१३. श्रमण भगवंत महावीर तब, मंखलिसुत गोशाल।
तेह प्रतै इम वागरै, हे गोशाला ! न्हाल ।।

६१४. तथारूप जे श्रमण प्रति, माहण प्रतै विमास।
तिमहिज जावत जाणवूं, करै तास पर्युपास ।।

६१५. तो स्यूं हे गोशाल ! तुझ, मैंज प्रव्रज्या दीध।
जावत वलि मैं तुझ प्रतै, निश्चै बहुश्रुत कीध ।।

५९८. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सव्वाणुभूतिं अणगारं तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्ता

५९९. दोच्चं पि समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आओसणाहिं आओसइ जाव (सं० पा०) सुहमत्थि।
(श० १५।१०६)

६००. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी

६०१. कोसलजाणवए सुनक्खत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए
'कोसलजाणवए' त्ति अयोध्यादेशोत्पन्नः।
(वृ० प० ६८३)

६०२. धम्मायरियाणुरागेणं जहा सव्वाणुभूती तहेव जाव (सं० पा०) सच्चेव ते सा छाया नो अण्णा।
(श० १५।१०७)

६०३ तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सुनक्खत्तेणं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते····

६०४. सुनक्खत्तं अणगारं तवेणं तेएणं परितावेइ।
(श० १५।१०८)

६०५. तए णं से सुनक्खत्ते अणगारे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं तेएणं परिताविए समाणे

६०६. जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो

६०७. वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सयमेव पंच महव्वयाइं आरुभेति, आरुभेत्ता

६०८. समणा य समणीओ य खामेइ, खामेत्ता आलोइय-पडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगए।
(श० १५।१०९)

६१०. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सुनक्खत्तं अणगारं तवेणं तेएणं परितावेत्ता

६११. तच्चं पि समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आओसणाहिं आओसइ।

६१२. (सं० पा०) सव्वं तं चेव जाव सुहमत्थि।
(श० १५।११०)

६१३. तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—जे वि ताव गोसाला !

६१४. तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा तं चेव जाव (सं० पा०) पज्जुवासति।

६१५. किमंग पुण गोसाला ! तुमं मए चेव पव्वाविए जाव (सं० पा०) मए चेव बहुस्सुतीकए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६१६. मुझ सेती [तैं पडिवज्यो, भाव अनारज ताय।
तिणसूं मा गोशाल ! इम, जाव नथी अन्य छाय ।।

६१७. मंखलिसुत गोशाल तब, श्रमण भगवंत महावीर।
इम कह्यो शीघ्रज कोपियो, क्रुध वश थयुं अधीर ।।
६१८. तेज समुद्घाते करी, करै करी अवलोय।
सत्त-अठ पग पाछो वलै, पाछो उसरी सोय ।।
६१९. श्रमण भगवंत महावीर नैं, वध अर्थे पहिछाण।
तनु थी काढै तेज प्रति, ते यथादृष्टांते जाण ।।
६२०. उत्कलिका जे वायरो, रही-रही वाजेह।
वा मंडलिया वायरो, मंडल आकारेह ।।

६२१. शेल तिको पाषाण करि, अथवा थंभ करेह।
अथवा जे कूटे करी, वा थूभे करि जेह ।।
६२२. आवरिज्जमाणी तिका, खलना प्रति पामेह।
निवारिज्जमाणी तिका, निवर्त्यमाना जेह ।।

६२३. तिका वातोत्कलिका प्रमुख, तत्र शैलादि विषेह।
अतिक्रमैं नहि ते वली, पराभवै नहि जेह ।।
६२४. इण दृष्टांते गोशाल नों, प्रभु वधवा तप तेज[1]।
तनु थी जे काढ्यो छते, ते तत्थ नातिक्रमेज ।।

६२५. वलि विशेष न अतिक्रमै, एक वार जावेह।
आवै बीजी वार फुन, इम उरहो-परहो फिरेह ।।

६२६. इम उरहो-परहो फिरी, श्रमण भगवंत प्रतेह।
दक्षिण नां पासा थकी, प्रदक्षिणाज करेह ।।
६२७. इहविधि प्रदक्षिणा करी, ऊंचो नभ उछलेह।
ते तप तेज तिहां थकी, प्रतिहत थयुंज जेह ।।
६२८. पाछो वलतो तेज ते, मंखलिसुत गोशाल।
तसु तनु बालंतो छतो, बालंतो छतो न्हाल ।।
६२९. मांहे-मांहे तेज ते, पाछै कियो प्रवेश।
इतलै कुशिष्य शरीर में, पैठी तेजूलेश ।।
६३०. मंखलिसुत गोशाल तब, जे निज तेज करेह।
व्याप्युं पराभव्युं छतुं, प्रभु प्रति एम वदेह ।।
६३१. तूं आयुष्मन कासवा ! मम तप तेज करेह।
व्याप्युं पराभव्युं छतुं, षट मासे अंतेह ।।

६१६. ममं चेव मिच्छं विप्पडिवन्ने ? तं मा एवं गोसाला ! जाव (सं० पा०) नो अण्णा।
(श० १५।१११)
६१७. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते।
६१८. तेयासमुग्घाएणं समोहण्णइ, समोहणित्ता सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्कइ, पच्चोसक्कित्ता
६१९. समणस्स भगवओ महावीरस्स वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरति—से जहानामए
६२०. वाउक्कलिया इ वा वायमंडलिया इ वा
'वाउक्कलियाइ व' त्ति वातोत्कलिका स्थित्वा-स्थित्वा यो वातो वाति सा वातोत्कलिका 'वायमंडलियाइ व' त्ति मण्डलिकाभिर्यो वाति। (वृ० प० ६८३)
६२१. सेलंसि वा कुड्डंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा

६२२. आवारिज्जमाणी वा निवारिज्जमाणी वा
'आवारिज्जमाणि' त्ति स्खल्यमाना 'निवारिज्जमाणि' त्ति निवर्त्यमाना। (वृ० प० ६८३)
६२३. सा णं तत्थ नो कमति नो पक्कमति।

६२४. एवामेव गोसालस्स वि मंखलिपुत्तस्स तवे तेए समणस्स भगवओ महावीरस्स वहाए सरीरगंसि निसिट्ठे समाणे से णं तत्थ नो कमति,
६२५. नो पक्कमति, अंचियंचि करेति।
'अंचितांचि' ति अञ्चिते—सकृद्गते अञ्चितेन वा—सकृद्गतेन देशेनाञ्चिः—पुनर्गमनमञ्चिताञ्चिः, अथवा अञ्च्या—गमनेन सह आञ्चिः—आगमनमच्याञ्चिर्गमागम इत्यर्थः तां करोति।
(वृ० प० ६८३)
६२६. करेत्ता आयाहिण-पयाहिणं करेति,

६२७. करेत्ता उड्ढं वेहासं उप्पइए, से णं तओ पडिहए
६२८. पडिनियत्तमाणे तमेव गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं अणुडहमाणे-अणुडहमाणे
६२९. अंतो-अंतो अणुप्पविट्ठे। (श० १५।११२)

६३०. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सएणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे समणं भगवं महावीरं एवं वयासी—
६३१. तुमं णं आउसो कासवा ! ममं तवेणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे अंतो छण्हं मासाणं

---
१. तेजोलेश्या

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३२. पित्त ज्वर करि परिगत तनु, दाह ज्वर आक्रमेह ।
तूं छद्मस्थ थको सही, पामिस मरण प्रतेह ।।
६३३. श्रमण भगवंत महावीर तब, कहै गोशाल प्रतेह ।
हूं गोशाला ! तांहरे, तप तेजे व्यापेह ।।

६३४. षट मसवाड़ा अंत जे, जाव करूं नहिं काल ।
निश्चै करि ए जाणवूं, इम कहै परम दयाल ।।
६३५. हूं अन्य सोलै वर्ष लग, जिन जीत्या रागादि ।
सुहस्ती जिम विचरसूं, गंध गज जेम संवादि ।।

६३६. गोशाला ! पोतैज फुन, तूं निज तेज करेह ।
व्याप्यूं पराभव्यूं छतूं, सप्त रात्रि अंतेह ।।
६३७. पित्त ज्वर करि परिगत तनु, दाह आक्रमे न्हाल ।
जे छद्मस्थ थकोज तूं, निश्चै करसी काल ।।

श्रावस्ती में जनप्रवाद पद

६३८. तिण अवसर जे सावत्थी, नगरी विषेज ताहि ।
श्रृंघाटक आकार जे, जाव महापथ मांहि ।।
६३९. बहु जन मांहोमांहि जे, इक-इक नें कहै एम ।
जाव परूपै इह-विधे, ते सुणजो धर प्रेम ।।
६४०. इम निश्चै देवानुप्रिय ! नगर सावत्थी बार ।
कोट्ठग बागे उभय जिन, इम कहै बारंबार ।।
६४१. इक कहै तूं मरसी प्रथम, वली कहै इक वाय ।
काल करेसी तूं प्रथम, इम कहै मांहोमांय ।।
६४२. इह बिहुं जिन छै ते विषे, कुण सत्यवादी होय ।
मिथ्यावादी कवण जे, झूठाबोलो जोय ?
६४३. तत्र यथा सुप्रधान जन, जे मुख्य जन कहै वाय ।
श्रमण भगवंत महावीर जी, सत्यवादी सुखदाय ।।
६४४. मंखलिसुत गोशाल ते, मिथ्यावादी जाण ।
झूठाबोलो प्रत्यक्ष ही, ए उत्तम जन वाण ।।

गोशालक के साथ श्रमणों के प्रश्नोत्तर पद

६४५. हे आर्यो ! इहविध कही, श्रमण भगवंत महावीर ।
श्रमण निर्ग्रंथ आमंत्रि नें, एम वदै गुण हीर ।।
६४६. आर्यो ! यथादृष्टांत ते, तृणपुंज ते तृणराश ।
अथवा काष्ठ तणूंज पुंज, फुन पत्रपुंज विमास ।।
६४७. अथवा छाल तणूंज पुंज, अथवा तुस-पुंज होय ।
अथवा भुस नों पुंज जे, वा गोमयपुंज जोय ।।
६४८. कचरा तणीज राशि फुन, ए सहु पुंज प्रतेह ।
बाल्यूं अग्नि करी बली, सेव्यूं अग्नि करेह ।।

६४९. अग्नि करीनैं परिणम्यूं, पूर्व स्वभाव त्यजेह ।
तेज हणाणो तेह नों, धूल प्रमुख करि तेह ।।

६३२. पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्ससि । (श० १५।११३)

६३३. तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी—नो खलु अहं गोसाला ! तव तवेणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे

६३४. अंतो छण्हं जाव (सं० पा०) कालं करेस्सामि ।

६३५. अहण्णं अण्णाइं सोलस वासाइं जिणे सुहत्थी विहरिस्सामि ।

'सुहत्थि' त्ति सुहस्तीव सुहस्ती । (वृ० प० ६८३)

६३६. तुमं णं गोसाला ! अप्पणा चेव सएणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे अंतो सत्तरत्तस्स

६३७. पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्ससि । (श० १५।११४)

६३८. तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडग जाव (सं०पा०) पहेसु

६३९. बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ—

६४०. एवं खलु देवाणुप्पिया ! सावत्थीए नगरीए बहिया कोट्ठए चेइए दुवे जिणा संलवंति—

६४१. एगे वदंति तुमं पुव्वि कालं करेस्ससि, एगे वदंति तुमं पुव्वि कालं करेस्ससि ।

६४२. तत्थ णं के पुण सम्मावादी ? के मिच्छावादी ?

६४३. तत्थ णं जे से अहप्पहाणे जणे से वदति—समणे भगवं महावीरे सम्मावादी,

६४४. गोसाले मंखलिपुत्ते मिच्छावादी ।
(श० १५।११५)

६४५. अज्जोति ! समणे भगवं महावीरे समणे निग्गंथे आमंतेत्ता एवं वयासी—

६४६. अज्जो ! से जहानामए तणरासी इ वा कट्ठरासी इ वा पत्तरासी इ वा

६४७. तयारासी इ वा तुसरासी इ वा भुसरासी इ वा गोमयरासी इ वा ।

६४८. अवकररासी इ वा अगणिझामिए अगणिझूसिए

'अगणिझामिए'त्ति अग्निना ध्मातो—दग्धो 'अगणिझूसिए' त्ति अग्निना सेवितः । (वृ० प० ६८३)

६४९. अगणिपरिणामिए हयतेए

अगणिपरिणामिए' त्ति अग्निना परिणामितः पूर्वस्वभावत्याजनेनात्मभावं नीतः ततश्च हततेजा धूल्यादिना । (वृ० प० ६८३,६८४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६५०. वली गयुं छै तेज तसुं, नष्ट तेज फुन तास।
भ्रष्ट तेज थयुं तेहनुं, लुप्त तेज फुन जास।।

६५०. गयतेए नट्ठतेए भट्ठतेए लुत्ततेए

६५१. विनष्ट तेज थयुं तदा, सत्व रहित कहिवाय।
जुआ-जुआ इम अर्थ ए, वा एकार्थ कहाय।।

६५१. विणट्ठतेए जाए,
विनष्टतेजा निःसत्ताकीभूततेजाः एकार्था वैते शब्दाः।
(वृ० प० ६८४)

६५२. इण दृष्टांत गोशाल पिण, मंखलिपुत्रे न्हाल।
मुझ वधवा नैं अर्थ ही, तनु थी तेज निकाल।।

६५२. एवामेव गोसाले मंखलिपुत्ते ममं वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरित्ता

६५३. तेज हणाणो तेहनों, गयुं तेज फुन ताय।
जावत तेज विनष्ट ही, तेज रहित ए थाय।।

६५३. हयतेए गयतेए जाव (सं० पा०) विणट्ठतेए जाए,

६५४. तं छंदेणं ते भणी, स्व अभिप्राय करेह।
जिम इच्छा ह्वै तुम्ह तणी, हे आर्यो! गुणगेह।।

६५४. तं छंदेणं अज्जो!
'छंदेणं' ति स्वाभिप्रायेण यथेष्टमित्यर्थः।
(वृ० प० ६८४)

६५५. मंखलिसुत गोशाल प्रति, तुम्है धर्ममय जेह।
प्रतिचोयणा तिण करी, पड़िचोयणा करेह।।

६५५. तुब्भे गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएह,

६५६. करी धर्म पड़िचोयणा, वलि धर्ममय जेह।
प्रतिसारणा तिण करी, प्रतिसारणा देह।।

६५६. धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारेह,

६५७. देईनैं प्रतिसारणा, वली धर्ममय जेह।
प्रत्युपकार तिणे करी, प्रत्युपकार करेह।।

६५७. धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेह,

६५८. प्रत्युपकार करी वली, अर्थ करीनैं जाण।
वली प्रवर हेतू करी, प्रश्ने करी पिछाण।।

६५८. अट्ठेहि य हेऊहि य पसिणेहि य

६५९. वली प्रवर कारण करी, फुन व्याकरण[1] करेह।
पूछयां नों उत्तर दियै, व्याकरण कहियै जेह।।

६५९. वागरणेहि य कारणेहि य

६६०. णिप्पट्ठ-पसिण-वागरण फुन, पूछयां तणूंज जेह।
उत्तर नावै तेहनैं, एहवूं तुम्है करेह।।

६६०. निप्पट्ठपसिणवागरणं करेह। (श० १५।११६)

६६१. तदा श्रमण निर्ग्रंथ बहु, श्रमण भगवंत महावीर।
इम कह्ये छते प्रभु प्रतै, वंदै नमै सुधीर।।

६६१. तए णं ते समणा निग्गंथा समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समाणा समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति,

६६२. प्रभु वंदी शिर नामनैं जिहां गोशालक जोय।
पुत्र मंखली छै तिहां, आवै आवी सोय।।

६६२. वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता

६६३. मंखलिसुत गोशाल प्रति, जे धर्ममय हुंत।
पड़िचोयणा तिण करी, पड़िचोयणा करंत।।

६६३. गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएंति,

६६४. करि धर्म पड़िचोयणा, वलि धर्ममय मंत।
प्रतिसारणा तिण करी, पड़िसारणा करंत।।

६६४. धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारेंति,

६६५. करी धर्म प्रतिसारणा, वली धर्ममय हुंत।
प्रत्युपकार तिणे करी, प्रत्युपकार करंत।।

६६५. धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेंति,

६६६. प्रत्युपकार करी वली, अर्थ हेतु करि मंत।
जाव प्रश्न उत्तर रहित, एहवूं तास करंत।।

६६६. अट्ठेहि य हेऊहि य जाव (सं० पा०) वागरणं करेंति। (श० १५।११७)

६६७. मंखलिसुत्त गोशाल तब, श्रमण निर्ग्रंथे जेह।
धर्म पड़िचोयणा करी, पड़िचोयण कीधेह।।

६६७. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेहि निग्गंथेहि धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोइज्जमाणे,

६६८. जाव प्रश्न उत्तर रहित, करतां छतां जिवार।
आसुरुत्ते शीघ्र ही, कोप चढचो तिहवार।।

६६८. जाव (सं० पा०) निप्पट्ठपसिणवागरणे कीरमाणे आसुरुत्ते,

१. अंगसुत्ताणि भाग २ में पहले 'वागरणेहि' और फिर 'कारणेहि' है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६६६. जाव मिसिमिसेमान थयुं, श्रमण निर्ग्रंथ नां सोय ।
तनु नैं कांई पिण तदा, थोड़ी बाधा जोय ।।

६७०. अथवा बहु बाधा प्रतै, उपजावा नैं धार ।
वा तनुच्छेदज करण नैं, समरथ नहीं लिगार ।।

गोशालक-संघभेद पद

६७१. तब आजीविक नां स्थविर, जे गोशाल प्रतेह ।
श्रमण निर्ग्रंथे धर्ममय, पड़िचोयणा करेह ।।

वा०—हिवै आजीविक नां स्थविर श्रमण निर्ग्रंथे गोशाला नैं प्रश्न पूछ्यां तेहनां जाब न आया, एहवो देख्यो ते कहै छै—

६७२. पड़िचोयण करतां थकां, वली धर्ममय जाण ।
प्रतिसारणा तिणे करी, प्रतिसारतां पिछाण ।।

६७३. धर्म प्रति उपकार करि, करतां प्रत्युपकार ।
अर्थ करी अथवा वली, हेतू करी तिवार ।।

६७४. जावत प्रश्न तणां जिके, उत्तर रहित जिवार ।
एहवो गोशालक भणी, देख लियो तिहवार ।।

वा०—वली आजीविया नां स्थविर गोशाला नैं कोप चढ्यो देख्यो, पिण श्रमण निर्ग्रंथ नैं दुख अणउपजावतो देख्यो, ते कहै छै—

६७५. आसुरुत्ते गोशाल जे, जाव मिसिमिसेमान ।
वली श्रमण निर्ग्रंथ नां, शरीर नैं पहिछान ।।

६७६. थोड़ी वा बाधा घणी, वा तनुच्छेद प्रतेह ।
अणकरतो गोशाल नैं, देखै देखी जेह ।।

वा०—हिवै आजीविया नां स्थविर गोशाला नैं छोड़नैं भगवान नैं अंगीकार किया, ते कहै छै—

६७७. मंखलिसुत गोशाल नां, समीप थी अवधार ।
केइ स्थविर आतमा करी, थायै दूर तिवार ।।

६७८. तेहथी दूर थई जिहां, श्रमण भगवंत महावीर ।
तिहां आवै आवी करी, भगवंत प्रतै सुधीर ।।

६७९. तीन वार दक्षिण तणां, पासा थी गुणगेह ।
प्रदक्षिणा देई करी, वंदै शिर नामेह ।।

६८०. वंदी शिर नामी करी, श्रमण भगवंत महावीर ।
तेह प्रतै अंगीकरी, विचरै गुणमणि हीर ।।

६८१. कोइ आजीविक नां स्थविर, गोशालाज प्रतेह ।
अंगीकार करिनैं तदा, विचरै मतपक्षेह ।।

गोशालक-प्रतिगमन पद

६८२. मंखलिसुत गोशाल तब, जे प्रभु हणवा अर्थ ।
उतावलो आव्यो हतो, असाधतोज तदर्थ ।।

६८३. लांबी दृष्टे दश दिशे, देखंतो तिहवार ।
लांबा उष्ण निसास फुन, न्हाखंतोज विचार ।।

६६९. *जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणे* नो संचाएति समणाणं निग्गंथाणं सरीरगस्स किंचि आबाहं वा

६७०. वाबाहं वा उप्पाएत्तए, छविच्छेदं वा करेत्तए । (श० १५।११८)

६७१. तए णं ते आजीविया थेरा गोसालं मंखलिपुत्तं समणेहिं निग्गंथेहिं धम्मियाए पडिचोयणाए

६७२. पडिचोएज्जमाणं, धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारिज्जमाणं,

६७३. धम्मिएणं पडोयारेणं य पडोयारेज्जमाणं, अट्ठेहि य हेऊहि य

६७४. जाव (सं० पा०) य निप्पट्ठपसिणवागरणं कीरमाणं

६७५. आसुरुत्तं जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणं समणाणं निग्गंथाणं सरीरगस्स

६७६. किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकरेमाणं पासंति, पासित्ता

६७७. गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमंति

६७८. अवक्कमित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं

६७९. तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेंति, करेत्ता वंदंति नमंसंति,

६८०. वंदित्ता नमंसित्ता समणं भगवं महावीरं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति ।

६८१. अत्थेगतिया आजीविया थेरा गोसालं चेव मंखलिपुत्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति । (श० १५।११९)

६८२. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते जस्सट्ठाए हव्वमागए तमट्ठं असाहेमाणे,

६८३. रुंदाइं पलोएमाणे दीहुण्हाइं नीससमाणे ।
'रुंदाइं पलोएमाणे' त्ति दीर्घा दृष्टीर्दिक्षु प्रक्षिपन्नित्यर्थः । (वृ०प० ६८४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६८४. दाढी नां जे केश प्रति, उपाड़तो अवधार।
हिड़बची—गाबर प्रति वलि, खुजालतोज गिवार ।।
६८५. पुत प्रदेश प्रस्फोटतो, मसलंतो बिहुं हाथ।
बिहुं पग करि धरती प्रतै, कूटंतोज कुपात ।।

६८६. हा! हा! वच खेदे करी, अहोत्ति आश्चर्येह।
हतो हणाणूं हूं अछूं, एम करीनें तेह ।।
६८७. श्रमण भगवंत महावीर नां, समीप थी अवलोय।
कोट्ठग नामा बाग थी, निकलै निकली सोय ।।
६८८. छै जिहां नगरी सावत्थी, हालाहलाजु नाम।
कुंभकारिका नों जिहां, कुंभकारावण ठाम ।।
६८९. तिहां आवै आवी करी, हालाहलाज जेह।
कुंभकारिका नों जिको, कुंभकार-हाटेह ।।

वा०—पोता नीं तेजोलेश्या स्यूं ऊपनो जे दाघ ज्वर, ते उपशमावा नैं अर्थे आंबा नुं फल हाथ में राखै छै, ए भाव।

६९०. कर अंबफल छै जेह नैं, पीवंतो मद्यपान।
बार-बार फुन गावतो, गीत प्रतैज अजान ।।
६९१. बार-बार ही नाचतो, बार-बार फुन सोय।
हालाहला कुंभारि प्रति, कर जोड़तो जोय ।।

वा०—ए गावणो, नाचणो, कुंभारी नैं हाथ जोड़वो—ए मद्यपान कृत विकार जाणवूं।

६९२. शीतल माटी मिश्र जल, तिण करि तनु सींचेह।
ह्वै छै ते सामान्य पिण, तिणसूं हिवैं कहेह ।।
६९३. कुंभकार भाजन रह्यूं, तिण मृद-मिश्र जलेह।
गात्र प्रतै सींचतो थको, इण रीते विहरेह ।।

नाना सिद्धान्त प्ररूपण पद

६९४. हे आर्यो ! इहविधि कही, श्रमण भगवंत महावीर।
श्रमण निर्ग्रंथ आमंत्रि नें, इम कहै सुरगिर धीर ।।
६९५. हे आर्यो ! जितला इक, मंखलिसुत गोशाल।
मुझ वध अर्थे नीसरचो, तनु थी तेज कराल ।।
६९६. तेह तेज अत्यर्थ ही, समर्थ पहुंचै ताम।
सोल देश प्रति बालवा, कहियै तेहनां नाम ।।

६९७. अंग बंग अरु मगध जे, मलय मालवो जाण।
अच्छ वच्छ नैं कोच्छ फुन, पाढ लाढ पहिछाण ।।

६९८. वज्री नैं मोली वली, कोसी कोशल देश।
अबाध संभुत्तर अख्या, जनपद सोल अशेष ।।

६८४. दाढियाए लोमाइं लुंचमाणे, अवडुं कंडूयमाणे,
'अवडुं' ति कृकाटिकां। (वृ०प० ६८४)
६८५. पुयलि पप्फोडेमाणे, हत्थे विणिद्धुणमाणे, दोहि वि पाएहिं भूमिं कोट्टेमाणे,
'पुयलि पप्फोडेमाणे' त्ति 'पुततटीं' पुतप्रदेशं प्रस्फोटयन्। (वृ०प० ६८४)
६८६. हा हा अहो ! हओहमस्मि त्ति कट्टु

६८७. समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता
६८८. जेणेव सावत्थी नगरी, जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे
६८९. तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि

वा०—'अंबकूणगहत्थगए' त्ति आम्रफलहस्तगतः स्वकीयतपस्तेजोजनितदाहोपशमनार्थमाम्रास्थिकं चूषन्निति भावः। (वृ०प० ६८४)

६९०. अंबकूणगहत्थगए, मज्जपाणगं पियमाणे, अभिक्खणं गायमाणे,
६९१. अभिक्खणं नच्चमाणे, अभिक्खणं हालाहलाए कुंभकारीए अंजलिकम्मं करेमाणे,

वा०—गानादयस्तु मद्यपानकृता विकाराः समवसेयाः। (वृ० प० ६८४)

६९२,९३. सीयलएणं मट्टियापाणएणं आयंचिण-उदएणं गायाइं परिसिंचमाणे विहरइ। (श० १५।१२०)
'मट्टियापाणएणं' ति मृत्तिकामिश्रितजलेन, मृत्तिकाजलं सामान्यमप्यस्त्यत आह— (वृ० प० ६८४)

६९४. अज्जोति ! समणे भगवं महावीरे समणे निग्गंथे आमंतेत्ता एवं वयासी—
६९५. जावतिए णं अज्जो ! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं ममं वहाए सरीरगंसि तेये निसट्ठे
६९६. से णं अलाहि पज्जत्ते सोलसण्हं जणवयाणं, तं जहा—'अलाहि पज्जंते' त्ति अलम् अत्यर्थं 'पर्याप्तः' शक्तो घातायेति योगः। (वृ०प० ६८४)
६९७. (१) अंगाणं (२) वंगाणं (३) मगहाणं (४) मलयाणं (५) मालवगाणं (६) अच्छाणं (७) वच्छाणं (८) कोच्छाणं (९) पाढाणं (१०) लाढाणं।
६९८. (११) वज्जीणं (१२) मोलीणं (१३) कासीणं (१४) कोसलाणं (१५) अवाहाणं (१६) संभुत्तराणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६९९. घात अर्थे ते त्रस तणी, अपेक्षाय अवलोय।
वध अर्थे स्थावर तणी, अपेक्षाय ए जोय।।

७००. उच्छादन अर्थे वली, जीव अजीव विषेह।
वस्त्र छादवा अर्थ फुन, भस्म करण अर्थेह।।

७०१. हे आर्यो ! जे पिण वली, मंखलिसुत गोशाल।
कुंभारी हालाहला, तेह तणुं जे न्हाल।।
७०२. कुंभकार-आपण विषे, आंबा नों फल जान।
छै जसु हाथ विषे जिको, पीबंतो मद्यपान।।
७०३. यावत ही कर जोड़तो, विचरै छै इह वार।
ते पिण मद्यपानादि जे, पाप ढांकवा धार।।

७०४. आगल कहिस्यै तेह अठ, चरम परूपै जेह।
चरम पान मदिरा तणुं, चरम गीत फुन एह।।
७०५. चरम नाचवूं नृत्य ए, चरम अंजली कर्म।
पुष्कल संवर्त्तक जबर, महामेघ पिण चर्म।।
७०६. सींचाणक गंध गज चरम, महाशिलकंट संग्राम।
चरम जाणवूं फुन अद्धा, ए अवसर्पिणी ताम।।
७०७. तीर्थंकर चउवीस में, चरम तीर्थंकर मंत।
ते हूं छूं हिव सीझसूं, जाव करिस दुख अंत।।

वा०—चरिम—ए बीजी वार नहीं हुवै ते भणी चरम कहियै। तिहां चरम मद्यपानादिक ४ ते पोता नैं प्राप्त छै। चरमता ते पोता नैं निर्वाण जायवै करी बीजी वार वली अणकरवा थी। एतला वाना जिन नैं निर्वाण काले अवश्य हुवै। एहनैं विषे दोष नहीं, पिण हूं दाघ मिटावा नैं सेवूं नहीं, एहवूं कही मद्यपानादिक दोष ढांक्यो अनैं पुष्करावर्त्त महामेघ, सींचाणो गंध हस्ती, महाशिलाकंटक संग्राम, ए बाह्य ३ चरम कहै ते सामान्य जन नां चित्त रंजवा नैं अर्थे पोता नुं अतिशयपणुं जणायवा नैं अर्थे अनैं आठमों चरम ते इण अवसर्पिणी काल मांहै पोतै छेहलो तीर्थंकर बाजै छै, इम आठ चरम परूपै।

७०८. हे आर्यो ! जे पिण वली, मंखलिसुत गोशाल।
शीतल मृतिका मिश्र जल, तिणे करीनैं न्हाल।।
७०९. कुंभकार भाजन विषे, जल मृद-मिश्र करेह।
पोतानांज शरीर प्रति, छांटतो विहरेह।।

७१०. ते पिण निज अघ ढांकवा, पान परूपै च्यार।
च्यार अपान परूपतो, ते शीतल जल सम धार।।

७११. अथ स्यूं ते पाणी चिहुं, चउविधि पान कहेह।
गाय तणां जे पीठ थी, उदक पड़ै छै जेह।।

६९९. घाताए वहाए
घातायेति हननाय तदाश्रितत्रसापेक्षया 'वहाए'त्ति वधाय एतच्च तदाश्रितस्थावरापेक्षया।
(वृ० प० ६८४)
७००. उच्छादणयाए भासीकरणयाए।
'उच्छायणयाए'त्ति उच्छादनतायै सचेतनाचेतनतद्गतवस्तूच्छादनायेति। (वृ० प० ६८४)
७०१. जं पि य अज्जो ! गोसाले मंखलिपुत्ते हालाहलाए कुंभकारीए
७०२. कुंभकारावणंसि अंबकूणगहत्थगए, मज्जपाणं पियमाणे····
७०३. जाव (सं० पा०) अंजलिकम्मं करेमाणे विहरइ, तस्स वि य णं वज्जस्स पच्छादणट्ठयाए
'वज्जस्स'त्ति वर्जस्य—अवद्यस्य वज्रस्य वा मद्यपानादिपापस्येत्यर्थः। (वृ०प० ६८४)
७०४. इमाइं अट्ठ चरिमाइं पण्णवेइ, तं जहा—(१) चरिमे पाणे (२) चरिमे गेये।
७०५. (३) चरिमे नट्टे (४) चरिमे अंजलिकम्मे (५) चरिमे पोक्खलसंवट्टए महामेहे।
७०६,७०७. (६) चरिमे सेयणए गंधहत्थी (७) चरिमे महासिला कंटए संगामे (८) अहं च णं इमीसे ओसप्पिणिसमाए चउवीसाए तित्थगराणं चरिमे तित्थगरे सिज्झिस्सं जाव अंतं करेस्सं।
वा०—'चरमे' त्ति न पुनरिदं भविष्यतीतिकृत्वा चरमं, तत्र पानकादीनि चत्वारि स्वगतानि, चरमता चैषां स्वस्य निर्वाणगमनेन पुनरकरणात्, एतानि च किल निर्वाणकाले जिनस्यावश्यम्भावीनीति नास्त्येतेषु दोष इत्यस्य तथा नाहमेतानि दाहोपशमायोपसेवामीत्यस्य चार्थस्य प्रकाशनार्थत्वादवद्यप्रच्छादनार्थानि भवन्ति, पुष्कलसंवर्त्तकादीनि तु त्रीणि बाह्यानि प्रकृतानुपयोगेऽपि चरमसामान्याज्जनचित्तरञ्जनाय चरमाण्युक्तानि।
(वृ० प० ६८४)
७०८. जं पि य अज्जो ! गोसाले मंखलिपुत्ते सीयलएणं मट्टियापाणएणं
७०९. आयंचिण-उदएणं गायाइं परिसिंचमाणे विहरइ।
आतन्यनिकोदकं कुम्भकारस्य यद्भाजने स्थितं तेमनाय मृन्मिश्रं जलं तेन। (वृ० प० ६८४)
७१०. तस्स वि णं वज्जस्स पच्छादणट्ठयाए इमाइं चत्तारि पाणगाइं चत्तारि अपाणगाइं पण्णवेति।
(श० १५।१२१)
७११. से किं तं पाणए ?
पाणए चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—(१) गोपुट्ठए
'गोपुट्ठए' त्ति गोपृष्ठाद्यत्पतितं। (वृ० प० ६८४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७१२. कर थी मसल्यो उदक फुन, तपावियो तड़केह।
गिरवर थी पड़ियो उदक, पान कह्या चिहुं एह।।

७१३. पाणी एह यती भणी, पीवा योग्य पिछाण।
अथ स्यूं अपान ते हिवै, अपान चिहुं विधि जाण।।

७१४. थाल पान पहिलो कह्यो, त्वचा पान अवधार।
कह्यं संबलि पान फुन, शुद्ध पान सुखकार।।

वा०—ए च्यार अपान का भेद छै—तेहनैं पान शब्द किम कह्यो? तेहनों उत्तर—ए च्यारूं अपान शीतल पाणी सरीखा छै ते माटै। लुप्त उपमा अलंकार करिकै पान शब्द कह्या संभवै। पाणी घाली थाली पाणी नीं परै दाह उपशम हेतुपणां थकी ते थाल पान १, वृक्ष नीं छालि नो पाणी ते दाह उपशम हेतु ते त्वचा पान २, तुरा प्रमुख फली नों पाणी ते सिंबलि पान ३, देव हस्त स्पर्श नों जल ते शुद्ध पान ४।

७१५. अथ स्यूं छै ते थाल जल? थाल पान हिव आय।
भीनो थाल जले करी, उदक-वारकं ताय।।

७१६. महाकुंभ भीनो जले, कलश लघु इम लेख।
शीतलगं उल्लग उभय, मृत्तिका पात्र विशेख।।

७१७. हस्ते कहि फर्शै तिको, पिण जल नवि पीवेह।
ते थाल पाणी कह्यं, प्रथम भेद कह्यं एह।।

७१८. अथ स्यूं ते त्वच पान जे? त्वचा पान हिव आय।
अंब वा अंबाडग वली, जेम पन्नवणा मांय।।

७१९. प्रयोग सोलम पद विषे, आख्यो तिमज कहेह।
वनस्पती नां नाम जे, जाव बोरटी लेह।।

७२०. तिंदुसक फल टींडसो, अभिनव काचो एह।
ईषत पीड़ै मुख विषे, वा अतिही पीड़ेह।।

७२१. इतलै स्पर्श ते करै, पिण जल नवि पीवेह।
ते त्वच पाणी आखियो, द्वितीय भेद कह्यं एह।।

७२२. अथ स्यूं सिबलिपाण ते? सिंबलिपाण सुजोय।
कलाय धान तणी फली, तास उदक अवलोय[1]।।

७२३. उड़द फली नुं पाण फुन, सिंबलि वृक्ष विशेख।
तास फली नुं जल वली, अभिनव काचू देख।।

१. अंगसुत्ताणि भाग २ में 'कलसंगलियं' के बाद 'मुग्गसंगलियं' पाठ है। उसकी जोड़ नहीं है।

७१२. (२) हत्थमद्दियए (३) आतवतत्तए (४) सिलापब्भट्ठए
'हत्थमद्दियं' ति हस्तेन मर्दितं—मृदितं मलितमित्यर्थः। (वृ० प० ६८४)

७१३. सेत्तं पाणए। (श० १५।१२२)
से किं तं अपाणए?
अपाणए चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—

७१४. (१) थालपाणए (२) तयापाणए (३) सिंबलिपाणए (४) सुद्धपाणए। (श० १५।१२३)

वा०—'थालपाणए' त्ति स्थालं—त्रट्टं तत्पानकमिव दाहोपशमहेतुत्वात् स्थालपानकम्, उपलक्षणत्वादस्य भाजनान्तरग्रहोऽपि दृश्यः, एवमन्यान्यपि नवरं त्वक्—छल्ली सीम्बली—कलायादिफलिका 'सुद्धपाणए' त्ति देवहस्तस्पर्श इति। (वृ० प० ६८४)

७१५. से किं तं थालपाणए?
थालपाणए—जे णं दाथालगं वा दावारगं वा
'दाथालयं' त्ति उदकार्द्रं स्थालकं 'दावारगं' ति उदकवारकं। (वृ० प० ६८५)

७१६. दाकुंभगं वा दाकलसं वा सीतलगं उल्लगं
'दाकुंभग' त्ति इह कुम्भो महान् 'दाकलसं' ति कलशस्तु लघुतरः। (वृ० प० ६८४)

७१७. हत्थेहिं परामुसइ, न य पाणियं पियइ। सेत्तं थालपाणए। (श० १५।१२४)

७१८,७१९. से किं तं तयापाणए?
तयापाणए—जे णं अंबं वा अंबाडगं वा जहा पओगपदे जाव बोरं वा
'जहा पओगपए' त्ति प्रज्ञापनायां षोडशपदे (१६।५५)। (वृ०प० ६८४)

७२०. तेंबरुयं वा तरुणगं आमगं आसगंसि आवीलेति वा पवीलेति वा,
'तरुणगं' ति 'अभिनवम्' 'आमगं' ति अपक्वम् 'आसगंसि' त्ति मुखे 'आपीडयेत्' ईषत् प्रपीडयेत् प्रकर्षेत इह यदिति शेषः। (वृ० प० ६८४)

७२१. न य पाणियं पियइ। सेत्तं तयापाणए। (श० १५।१२५)

७२२. से किं तं सिंबलिपाणए?
सिंबलिपाणए—जे णं कलसंगलियं वा
'कल' त्ति कलायो—धान्यविशेषः। (वृ० प० ६८४)

७२३. माससंगलियं वा सिंबलिसंगलियं वा तरुणियं आमियं
'सिंबलि'त्ति वृक्षविशेषः। (वृ० प० ६८४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७२४. ईषत पीड़ै मुख विषे, वा अतिही पीड़ेह।
इतलै स्पर्श ते करै, पिण जल नवि पीवेह ।।

७२५. कह्यु सिंबलीपाण ए, अथ स्यूं ते शुद्ध पाण ?
शुद्ध पाण कहियै तिको, जे छ मास लग जाण ।।

७२६. खावै शुद्ध खादिम जिको, मही संथार विमास।
वर्त्तै वलि बे मास लग, कठ संथारो तास ।।

७२७. डाभ तणैं संथार फुन, दोय मास वर्त्तंत।
तेहनैं बहु प्रतिपूर्ण ही, छ मास नीं निशि अंत ।।

७२८. ए आगल कहिस्यै तिके, उभय देव दहदीप।
मर्हाद्धिक जाव महेसखा, प्रगटै तास समीप ।।

७२९. तास नाम धुर पूर्णभद्र, माणिभद्र सुर तेह।
शीतल उल्लग हस्त करि, तास गात्र फर्शेह ।।

७३०. अनुमोदै ते सुर प्रतै, रूडूं जाणै जेह।
तो आसीविष कर्म प्रति, तेह पुरुष पकरेह ।।

७३१. जेह पुरुष ते सुर प्रतै, नहिं मन अनुमोदेह।
तो तसु स्व तनु नैं विषे, अग्निकाय उपजेह ।।

७३२. ते पोता नैं तेज करि, शरीर प्रति सोखेह।
निज तेजे तनु दग्ध करि, तठा पछै सीझेह ।।

७३३. जावत अन्त करै तिको, एह कह्यु शुद्ध पाण।
गोशाला नीं बात ए, प्रभु कही मुनि प्रति जाण ।।

अयंपुल आजीवकोपासक पद

७३४. तिहां सावत्थी नगरी ए, नाम अयंपुल जान ।।
श्रावक आजीवक तणो, वसै धने ऋद्धिवान ।।

७३५. जेम कही हालाहला, तिमहिज जावत एह।
आजीवक सिद्धांत करि, आतम भावित विचरेह ।।

७३६. तिण अवसर गोशाल नुं, श्रमणोपासक जेह।
नाम अयंपुल तेहनैं, मध्य रात्रि समयेह ।।

७३७. कुटंब जागरणा जागतो, ए एहवे रूपेह।
अध्यातम आतम विषे, जावत मन उपजेह ।।

७३८. स्यूं संठाण परूपियो, हल्ला[1] जीव सुदोठ।
गोवालिका तृण सारिखे, आकारे जे कीट ।।

७३९. ताम अयंपुल नैं वली, द्वितीय वार पिण एह।
एहवे रूपे आतम विषे, जावत मन उपजेह ।।

७४०. इम निश्चै करि मांहरा, धर्माचारज न्हाल।
उपदेशक जे धर्म नां, मंखलिसुत गोशाल ।।

७२४. आसगंसि आवीलेति वा पवीलेति वा, न य पाणियं पियति।

७२५. सेत्तं सिंबलिपाणए। (श० १५।१२६)
से किं तं सुद्धपाणए ?
सुद्धपाणए—जे णं छम्मासे

७२६. सुद्धखाइमं खाइ, दो मासे पुढवीसंथारोवगए, दो मासे कट्ठसंथारोवगए,

७२७. दो मासे दब्भसंथारोवगए, तस्स णं बहुपडिपुण्णाणं छण्हं मासाणं अंतिमराईए

७२८. इमे दो देवा महिड्डिया जाव महेसक्खा अंतियं पाउब्भवंति, तं जहा—

७२९. पुण्णभद्दे य माणिभद्दे तए णं ते देवा सीयलएहिं उल्लएहिं हत्थेहिं गायाइं परामुसंति,

७३०. जे णं ते देवे साइज्जति, से णं आसीविसत्ताए कम्मं पकरेति,

७३१. जे णं ते देवे नो साइज्जति तस्स णं संसि सरीरगंसि अगणिकाए संभवति,

७३२. से णं सएणं तेएणं सरीरगं झामेति, झामेत्ता तओ पच्छा सिज्झति।

७३३. जाव अंत करेति। सेत्तं सुद्धपाणए।
(श० १५।१२७)

७३४. तत्थ णं सावत्थीए नयरीए अयंपुले नामं आजीविओवासए परिवसइ—अड्ढे।

७३५. जहा हालाहला जाव आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

७३६. तए णं तस्स अयंपुलस्स आजीविओवासगस्स अण्णया कदायि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि

७३७. कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) संकप्पे समुप्पज्जित्था—

७३८. किंसंठिया णं हल्ला पण्णत्ता ? (श० १५।१२८)
'हल्ल'त्ति गोवालिकातृणसमानाकारः कीटकविशेषः।
(वृ० प० ६८४)

७३९. तए णं तस्स अयंपुलस्स आजीविओवासगस्स दोच्चं पि अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

७४०. एवं खलु ममं धम्मायरिए धम्मोवदेसए गोसाले मंखलिपुत्ते

१. गोवालिका तृण सरीखे आकारे कीट विशेष आपणपो तृणे करी वींटे लोक रूढे सुघरी इति। तेहनैं हला जीव कहियै तेहनो स्यूं संठांण—स्यूं आकार ?

७४१. उत्पन्न ज्ञान दर्शण तणां, धरणहार गुणधार।
यावत ते सर्वज्ञ फुन, सहु नां देखणहार।।

७४१. उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव (सं० पा०) सव्वण्णू सव्व-दरिसी

७४२. इणहिज नगरी सावत्थी, हालाहला नामेह।
कुंभकारिका नों जिको, कुंभकार हाटेह।।

७४२. इहेव सावत्थीए नगरीए हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि

७४३. आजीविक संघ परिवरचो, आजीवक समयेह।
आतम प्रतै भावित थको, विचरै छै गुणगेह।।

७४३. आजीवियसंघसंपरिवुडे आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

७४४. ते माटै श्रेय मुझ भणी, निश्चै काल्हे जोय।
जाव जलंते रवि उदय, तेह समय अवलोय।।

७४४. तं सेयं खलु मे कल्लं पाउप्पभाए रयणीए जाव उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते

७४५. मंखलिसुत गोशाल प्रति, वंदी नैं विधि रीत।
जावत ही पर्युपासना, सेव करी धर प्रीत।।

७४५. गोसालं मंखलिपुत्तं वंदित्ता जाव पज्जुवासित्ता

७४६. ए एहवे रूपे जिको, व्याकरण प्रश्न उदार।
तेह पूछिवूं इम करी, इम चिंतै तिहवार।।

७४६. इमं एयारूवं वागरणं वागरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेति,

७४७. एहवूं मन में चिंतवी, काल्हे जाव जलंत।
ण्हाए कृतबलिकम्म प्रमुख, जाव शब्द में हुंत।।

७४७. संपेहेत्ता कल्लं पाउप्पभाए रयणीए जाव उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते ण्हाए कयबलिकम्मे

७४८. भार अल्प छै जे विषे, मोले मूंहघा जेह।
एहवे आभरणे करी, अलंकारी निज देह।।

७४८. अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे

७४९. घर थी निकलै नीकली, पालो पंथ विषेह।
तेह सावत्थी नगरीइं, थई मध्यमध्येह।।

७४९. साओ गिहाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता पायविहारचारेणं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं

७५०. कुंभारी हालाहला, कुंभ करिवा नों जान।
जिहां हाट आवै तिहां, आवीनैं तिह स्थान।।

७५०. जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

७५१. देख लियो गोशाल प्रति, कुंभकार हाटेह।
हस्त अंब फल जाव ही, कर जोड़ंतो जेह।।

७५१. गोसालं मंखलिपुत्तं हालाहलाए कुंभकारीए कुंभ-कारावणंसि अंबकूणगहत्थगयं जाव (सं० पा०) अंजलिकम्मं करेमाणं

७५२. शीतल मृद-मिश्रित जले, जावत गात्र प्रतेह।
सींचतो देखै तदा, देखी लज्जित देह।।

७५२. सीयलएणं मट्टिया जाव (सं० पा०)गायाइं परिसिंच-माणं पासइ, पासित्ता लज्जिए

७५३. वलि ते कहितां अति लज्यं, वेविडे कहितां ताय।
अत्यन्त गाढ़ो लाजियो, चलचित थयुं सवाय।।

७५३ विलिए विड्डे
'विलिए'त्ति 'व्यलीकितः' सञ्जातव्यलीकः 'विड्डे' त्ति व्रीडाऽस्यास्तीति व्रीडः—लज्जाप्रकर्षवानित्यर्थः।
(वृ० प० ६८४,८५५)

७५४. हलुवै-हलुवै गमन करि, पाछो ही ओसरंत।
तब आजीवक नां स्थविर, तेह अयंपुल प्रंत।।

७५४. सणियं-सणियं पच्चोसक्कइ। (श० १५।१२९)
तए णं ते आजीविया थेरा अयंपुलं आजीवियो-वासगं

७५५. लज्जित जावत जेहनैं, पाछो उसर्यो जेथ।
देखै देखी इम कहै, आव अयंपुल एथ।।

७५५. लज्जियं जाव पच्चोसक्कमाणं पासइ, पासित्ता एवं वयासी—एहि ताव अयंपुला! इतो।
(श० १५।१३०)

७५६. तेह अयंपुल तिह समय, आजीवक थिवरेह।
इम कह्यं छतेज ते कनै, तुरत हीज आवेह।।

७५६. तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए आजीवियथेरेहिं एवं वुत्ते समाणे जेणेव आजीविया थेरा तेणेव उवागच्छइ,

७५७. आवी आजीवक तणां, थिवरां प्रतै वंदेह।
नमस्कार वलि तसु करै, वंदी नमी शिरेह।।

७५७. उवागच्छित्ता आजीविए थेरे वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७५८. नहिं अति निकट न दूर अति, जाव करै पर्युपास।
अहो अयंपुल! एहवुं, आमंत्रण करि तास।।
७५९. कहै आजीवक नां स्थविर, अयंपुल प्रति इम वाय।
ते तुम्हनें निश्चै करी, अहो अयंपुल! ताय।।
७६०. मध्य रात्रि नें काल जे, अवसर समय पिछाण।
जावत स्यूं संठाण जे, हल्ला कह्यु सुजाण।।
७६१. अहो अयंपुल! ताम तुझ, द्वितीय वार पिण एह।
तिमहिज सहु विस्तार ही, चिंत्यूं तेम कहेह।।
७६२. जावत नगरी सावत्थी, थई मध्यमध्येह।
हालाहला तणो तिहां, कुंभकार-हट जेह।।
७६३. जिहां अम्है जे छां इहां, तिहां तुम शीघ्र आवेह।
अहो अयंपुल! अर्थ ए, समर्थ छै निश्चेह?
७६४. हंता अत्थि इह विधे, कहै अयंपुल वाय।
हां छै साचू तुझ सुवच, अर्थ समर्थ कहाय।।
७६५. अहो अयंपुल! जेह पिण, धर्माचारज तोय।
धर्म तणां उपदेश नां, देणहार अवलोय।।
७६६. मंखलिसुत गोशाल जे, हालाहला नामेह।
कुंभकारिका तेहनों, कुंभकार-हाटेह।।
७६७. रह्यू अंबफल हस्त फुन, जाव अंजलीकर्म।
करता विचरै तत्र पिण, कहै भगवन अठ चर्म।।
७६८. प्रथम चरम मद्यपान जे, जावत करी सुअंत।
धर्माचारज तांहरा, इह विधि कहै उदंत।।
७६९. अहो अयंपुल! जे वली, धर्माचारज तोय।
धर्म तणां उपदेश नां, देणहार अवलोय।।
७७०. मंखलिसुत गोशाल ते, शीतल मृत्तिका जेह।
मिश्रित जल करिनैं जिको, जावत ही विचरेह।।
७७१. तत्र अपि भगवंत जे, पाण परूपै च्यार।
च्यार अपाण परूपता, अथ स्यूं चिहुं जल धार?

७७२. जाव तिवार पछै तिको, सीझ जावत जेह।
करै अंत सहु दुख तणो, कहिवूं इहां लगेह।।
७७३. ते माटै जाओ अयंपुला! जा तूं एहिज सोय।
धर्माचारज तांहरा, धर्मोपदेशक जोय।।
७७४. मंखलिसुत गोशाल ही, ए एहवे रूपेह।
व्याकरण उत्तर प्रश्न नों, तेहिज निश्चै देह।।
७७५. तेह अयंपुल तिह समय, आजीवक थिवरेह।
इम कह्यो छतेज हरषियो, वलि संतोष लहेह।।
७७६. ऊर्द्ध थायवै करि तिको, ऊठै ऊठी एम।
मंखलिसुत गोशाल ज्यां, तिहां चाल्यो धर प्रेम।।
७७७. तब आजीवक नां थविर, मंखलिसुत गोशाल।
तसु अंबफल जु न्हखायवा, एकांत स्थानक न्हाल।।

७५८. नच्चासन्ने जाव पज्जुवासइ। (श० १५।१३१)
अयंपुलाति!
७५९. आजीविया थेरा अयंपुलं आजीवियोवासगं एवं वयासी
—से नूणं ते अयंपुला!
७६०. पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव (सं० पा०)
किंसंठिया णं हल्ला पण्णत्ता?
७६१. तए णं तव अयंपुला! दोच्चं पि अयमेयारूवे तं चेव
सव्वं भाणियव्वं।
७६२. जाव सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव हालाहलाए
कुम्भकारीए कुम्भकारावणे
७६३. जेणेव इहं तेणेव हव्वमागए। से नूणं ते अयंपुला!
अट्ठे समट्ठे?
७६४. हंता अत्थि।

७६५. जं पि य अयंपुला! तव धम्मायरिए धम्मोव-
देसए
७६६. गोसाले मंखलिपुत्ते हालाहलाए कुंभकारीए
कुंभकारावणंसि
७६७. अंबकूणगहत्थगए जाव अंजलि करेमाणे विहरइ, तत्थ
वि णं भगवं इमाइं अट्ठ चरिमाइं पण्णवेति, तं जहा—
७६८. चरिमे पाणे जाव अंतं करेस्सति।

७६९. जं पि य अयंपुला! तव धम्मायरिए धम्मोव-
देसए
७७०. गोसाले मंखलिपुत्ते सीयलएणं मट्टिया जाव (सं० पा०)
विहरइ।
७७१. तत्थ वि णं भगवं इमाइं चत्तारि पाणगाइं, चत्तारि
अपाणगाइं पण्णवेति।
से किं तं पाणए?
७७२. पाणए जाव तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति।

७७३. तं गच्छ णं तुमं अयंपुला! एस चेव तव धम्मायरिए
धम्मोवदेसए
७७४. गोसाले मंखलिपुत्ते इमं एयारूवं वागरणं वागरे-
हिति। (श० १५।१३२)
७७५. तए णं से अयंपुले आजीविओवासए आजीविएहिं
थेरेहिं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे
७७६. उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठेत्ता जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते
तेणेव पहारेत्थ गमणाए। (श० १५।१३३)
७७७. तए णं ते आजीविया थेरा गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स
अम्बकूणग-एडावणट्ठयाए एगंतमंते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७७८. संगारं सानी करै, एकांते संकेत।
तजो अंबफल कर थकी, आयु अयंपुल एथ।।

७७९. मंखलिसुत गोशाल ते, आजीविक नां थेर।
तेह तणां संकेत प्रति, ग्रहण करै मन घेर।।

७८०. तसु संकेत ग्रही करी, अंब तणों फल जेह।
न्हाखै एकांत स्थानके, विजन भूमिभागेह।।

७८१. तेह अयंपुल तिह समय, मंखलिसुत गोशाल।
जिहां अछै आवै तिहां, आवीनें तिह काल।।

७८२. मंखलिसुत गोशाल प्रति, तीन वार अवधार।
जावत ही पर्युपासना, सेवा करै तिवार।।

७८३. अहो अयंपुल! एहवूं, आमंत्रण सुकथीत।
मंखलिसुत गोशाल तब, कहै अयंपुल प्रतीत।।

७८४. ते निश्चैज अयंपुला! मध्य रात्रि समयेह।
जाव जिहां मुझ अंतिके, तिहां शीघ्र आवेह।।

७८५. ते निश्चैज अयंपुला! अर्थ समर्थ पिछाण?
हंता अत्थि इह विधे, कहै अयंपुल वाण।।

७८६. ते माटै निश्चै नहीं, अस्थि सहित अंब एह।
मुनि प्रति तेह अयोग्य छै, तें जाण्यु नहि तेह।।

७८७. ए आंबा नी छालि छै, गमन काल निर्वाण।
कर लेवूं जिन नें कह्यं, त्वक-पानक पहिछाण।।

७८८. स्यूं संठाण कह्या हल्ला, जीव विशेष पिछाण।
वंशी मूल संठाण ही, हल्ला कह्या सुजाण।।

वा०—ए वंशीमूल संस्थितपणों तृणगोवालिया नैं लोक प्रतीत हीज छै। एतलैज कह्यौ छतै जे पूर्वे गोशाले मदिरा पान कर्यूं हतु तेहथी अकस्मात् मदिरा मद विह्वलित मनोवृत्ति थई। तिण कारण तान करै ते कहै छै—

७८९. वीण बजावै फुन इहां, उन्मत्त वश अवधार।
अरे वीरगा! वीरगा! इम मुख वचन उचार।।

वा०—वीण बजावो हे वीर भाई! गीत प्रतै गावै गीत गान करि एहवूं बे वार कह्यु—आव रे वीरगा! वीरगा! एहवूं उन्माद नु वचन अकस्मात अयंपुले सांभल्युं तो पिण अयंपुल नां मन में शंका न ऊपनी। इम जाणैं—जे मोक्षे जाये ते चरम गीत नु गायवु इत्यादिक वाना निश्चै करै।

७९०. तेह अयंपुल तिह समय, मंखलिसुत गोशाल।
एह उत्तर दीधे छते, हर्ष तुष्ट तिहकाल।।

७७८. संगारं कुव्वंति। (श० १५।१३४)
'संगारं'ति 'संकेतम्' अयंपुलो भवत्समीपे आगमिष्यति ततो भवानाम्रकूणिकं परित्यजतु संवृतश्च भवत्वेवंरूपमिति। (वृ० प० ६८५)

७७९. तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आजीवियाणं थेराणं संगारं पडिच्छइ,

७८०. पडिच्छित्ता अंबकूणगं एगंतमंते एडेइ।
(श० १५।१३५)
'एगंतमंते'त्ति विजने भूविभागे। (वृ० प० ६८५)

७८१. तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

७८२. गोसालं मंखलिपुत्तं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासति।
(श० १५।१३६)

७८३. अयंपुलादि! गोसाले मंखलिपुत्ते अयंपुलं आजीवियोवासगं एवं वयासी—

७८४. से नूणं अयंपुला! पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव जेणेव ममं अतियं तेणेव हव्वमागए।

७८५. से नूणं अयंपुला! अट्ठे समट्ठे
हंता अत्थि।

७८६. तं नो खलु एस अंबकूणए
'तं नो खलु एस अंबकूणए' त्ति तदिदं किलाम्रास्थिकं न भवति यद्व्रतिनामकल्प्यं यद्भवताऽऽम्रास्थिकतया विकल्पितं। (वृ० प० ६८५)

७८७. अंबचोयए णं एसे।
'अंबचोयए णं एसे' त्ति इयं च निर्वाणगमनकाले आश्रयणीयैव, त्वक्पानकत्वादस्या इति।
(वृ० प० ६८५)

७८८. किंसंठिया हल्ला पण्णत्ता?
वंसीमूलसंठिया हल्ला पण्णत्ता।

वा०—'वंसीमूलसंठिय' त्ति इदं च वंशीमूलसंस्थितत्वं तृणगोवालिकायाः लोकप्रतीतमेवेति, एतावत्युक्ते मदिरामदविह्वलितमनोवृतिरसावकस्मादाह—
(वृ० प० ६८५)

७८९. वीणं वाएहि रे वीरगा! वीणं वाएहि रे वीरगा! (श० १५।१३७)

वा०—'वीणं वाएहि रे वीरगा २' एतदेव द्विरावर्त्तयति' एतच्चोन्मादवचनं तस्योपासकस्य शृण्वतोऽपि न व्यलीककारणं जातं, यो हि सिद्धिं गच्छति स चरमं गेयादि करोतीत्यादिवचनैर्विमोहितमतित्वादिति। (वृ० प० ६८५)

७९०. तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं इमं एयारूवं वागरणं वागरिए समाणे हट्ठतुट्ठ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६१. जावत विकस्यो हृदय तसु, मंखलिसुतत गोशाल।
तेह प्रतै वंदै नमै, वंदी नमी निहाल ।।
७६२. प्रश्न प्रतै पूछै तदा, पूछी प्रश्न प्रकार।
ग्रहण करै बहु अर्थ प्रति, ग्रहण करी तिहवार ।।
७६३. ऊर्द्ध थायवै करो तदा, ऊभो थावै तेह।
ऊभो थइ गोशाल प्रति, वंदै शिर नामेह ।।

निर्हरण निर्देश पद

७६४. वंदी शिर नामी करी, जाव गयो निज गेह।
मंखलिसुत गोशाल तब, निज मृत्यु प्रति देखेह ।।
७६५. निज मृत्यु प्रति देखी करी, आजीवक नां जाण।
थिवरां प्रति तेडै तदा, तेड़ वदै इम वाण ।।
७६६. अहो देवानुप्रिया ! तुम्है, काल गयो मुझ जाण।
सुरभि गंध उदके करी, करावजो तनु स्नान ।।
७६७. स्नान करावी नैं पछै, पम्हल जे सुकुमाल।
गंध कषाई वस्त्र करि, लूहिजो गात्र विशाल ।।
७६८. गात्र प्रतै लूही करी, सरस गोशीर्ष सार।
चंदन करिकै गात्र प्रति, लोपीज्यो धर प्यार ।।
७६९. चंदन तनु लीपी करी, मोटा योग्य सुहाय।
हंस लक्खण अति शुक्ल जे, पट शाटक पहिराय ।।
८००. पट एहवूं पहिराय नैं, जेह सर्व अलंकार।
तिणे विभूषित तनु प्रतै, कीज्यो अधिक उदार ।।
८०१. एम विभूषित तनु करी, पुरुष सहस्र सुविचार।
शिवका जेह उपाडयै, चढावजो तिहां सार ।।
८०२. एहवी शिवका चाढनैं, नगरी सावत्थी मांहि।
श्रृंघाटक त्रिक जाव ही, महापंथ में ताहि ।।
८०३. मोटै-मोटै शब्द करी, उद्घोषण कर तास।
उद्घोषण करतां छतां, कहिज्यो एम विमास ।।
८०४. इम निश्चै देवानुप्रिया ! मंखलिसुत गोशाल।
तेह केवली जिन हुंतो, जिन-प्रलापी न्हाल ।।
८०५. जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाशतोज सुजोय।
विचरी नैं ए अवसर्पिणी, काल विषे अवलोय ।।
८०६. चउवीस तीर्थंकर विषे, चरम तीर्थंकर मंत।
सीधो जावत सर्व ही, दुख नों कीधो अंत ।।
८०७. ऋद्धि करि सत्कार जे, पूजा तसु समुदाय।
तिण करिकै मुझ तनु तणै, नीहरण कीज्यो ताय ।।

७९१. जाव (सं०पा०) हियए गोसालं मंखलिपुत्तं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता

७९२. पसिणाइं पुच्छइ, पुच्छित्ता अट्ठाइं परियादियइ, परियादिइत्ता

७९३. उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठेत्ता मंखलिपुत्तं वंदइ नमंसइ,

७९४. वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए। (श० १५।१३८)
तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते अप्पणो मरणं आभोएइ।

७९५. आभोएत्ता आजीविए थेरे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—

७९६. तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! ममं कालगयं जाणित्ता सुरभिणा गंधोदएणं ण्हाणेह,

७९७. ण्हाणेत्ता पम्हलसुकुमालाए गंधकासाइए गायाइं लूहेह,

७९८. लूहेत्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपह,

७९९. अणुलिंपित्ता महरिहं हंसलक्खणं पडसाडगं नियंसेह,
'हंसलक्खणं' 'त्ति हंसस्वरूपं शुक्लमित्यर्थः।
(वृ० प० ६८४)

८००. नियंसेत्ता सव्वालंकारविभूसियं करेह,

८०१. करेत्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरुहेह,

८०२. दुरुहेत्ता सावत्थीए नयरीए सिंघाडग-तिग जाव (सं० पा०) पहेसु

८०३. महया-महया सद्देणं उग्घोसेमाणा-उग्घोसेमाणा एवं वदह—

८०४. एवं खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी

८०५. जाव (सं० पा०) जिणसद्दं पगासेमाणे विहरित्ता इमीसे ओसप्पिणीए

८०६. चउवीसाए तित्थगराणं चरिमे तित्थगरे, सिद्धे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

८०७. इड्ढिसक्कारसमुदएणं मम सरीरगस्स नीहरणं करेह। (श० १५।१३९)
'इड्ढिसक्कारसमुदएणं' ऋद्ध्या ये सत्काराः— पूजाविशेषास्तेषां यः समुदयः स तथा तेन।
(वृ० प० ६८५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८०८. तब आजीविक नां थविर, मंखलिसुत गोशाल।
तसु वच ए विनये करी, करै अंगीकृत न्हाल ।।

८०८. तए णं ते आजीविया थेरा गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति। (श० १५।१४०)

गोशालक-परिणाम-परिवर्तन पद

८०९. तिण अवसर गोशाल नैं, मंखलिसुत नैं धार।
रात्रि सातमीं वर्त्ततां, लाधुं सम्यक्त्व सार ।।

८०९. तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सत्तरत्तंसि परिणममाणंसि पडिलद्धसम्मत्तस्स

८१०. ए एहवे रूपे तसु, आतम विषे अवधार।
जावल संकल्प ऊपनो, मन मांहे तिहवार ।।

८१०. अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था—

८११. निश्चै करिनैं हूं नहीं, जिन जिनप्रलापी जाव।
जिन रव प्रतै प्रकाशतो, विचर्‍यो हूं असद्‌भाव ।।

८११. नो खलु अहं जिणे जिणप्पलावी जाव (सं०पा०) जिणसद्दं पगासेमाणे विहरिते

८१२. निश्चै करिनैं हूं सही, मंखलिसुत गोशाल।
श्रमण उभय नुं हूं थयुं, घातक महाविकराल ।।

८१२. अहण्णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए

८१३. इतला माटै हीज हूं, श्रमण-मारक साक्षात।
श्रमण तणों प्रत्यनीक हूं, प्रतिकूलपणें विख्यात ।।

८१३. समणमारए समणपडिणीए

८१४. आचार्य उवज्झाय नों, अयश तणों करणहार।
अवर्ण नुं कारक वली, अकीर्त्तिकारक धार ।।

८१४. आयरिय-उवज्झायाणं अयसकारए अवण्णकारए अकित्तिकारए

८१५. बहु असद्‌भाव उद्‌भाव नां, तेणे करिनैं ताम।
मिथ्यात्वाभिनिवेस करि, निज पर बिहुं नें आम ।।

८१५. बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा

वा०—असद्‌भाव कहितां झूठा अर्थ तेहनीं उद्‌भावना ते उत्प्रेक्षणा। ते असद्‌भाव उद्‌भावना कहियै। तिणे करी मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य त्ति मिथ्यात्व ते मिथ्या-दर्शन उदय थकी अभिनिवेश ते आग्रह तिण प्रकार करिके तिणे करी। अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा आत्मा नैं वा पर नैं वा बिहूं नैं।

८१६. व्युद्‌ग्राहमान छतोज हूं, व्युत्पादमान छतोज।
विचरी निज तेजे करी, आर्त्त ही व्याप्युं थकोज ।।

८१६. वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे विहरित्ता सएणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे

वा०—वुग्गाहेमाणेत्ति आपणी आत्मा नैं, पर नैं अनैं बिहुं नैं विरुद्ध—खोटो ग्रहणवंत करतो थको। आपणी आत्मा नैं विरुद्ध अर्थ नैं ग्रहण करै अनैं पर आत्मा नैं विरुद्ध अर्थ प्रति ग्रहण करावै। अनै इमहिज बिहुं नै एहवो छतो। वुप्पाएमाणेत्ति—दुविदग्ध एतलै दग्ध बीज सरीखो करतो छतौ हूं विचरी नैं पोता नी तेजलेश्या करीनैं व्याप्यो छतौ।

८१७. सप्त रात्रि नैं अंत तनु, पित्त ज्वर परिगत न्हाल।
दाह उपनुं छद्मस्थ छतुं, निश्चै करिसुं काल ।।

८१७. अंतो सत्तरत्तस्स पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्सं।

८१८. श्रमण भगवंत महावीर जी, जिन जिन-प्रलापी मंत।
जावत ही जिन शब्द प्रति, प्रकाशता विचरंत ।।

८१८. समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव (सं०पा०) जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ—

८१९. इम चिंतै चिंती करी, आजीविक नां थेर।
तेह प्रतै तेड़े तदा, तेड़ी नें तिह वेर ।।

८१९. एवं संपेहेति, संपेहेत्ता आजीविए थेरे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता

८२०. देव गुरू संबंधिया, सूंस करावै तास।
सूंस करावी इह विधे, बोलै वचन विमास ।।

८२०. उच्चावय-सवह-साविए पकरेति, पकरेत्ता एवं वयासी—

८२१. निश्चै करिनैं हूं नहीं, जिन जिनप्रलापी जाव।
जिन रव प्रकाशतो छतौ, विचर्‍यो मिथ्या भाव ।।

८२१. नो खलु अहं जिणे जिणप्पलावी जाव पगासेमाणे विहरिए।

८२२. निश्चै करिनैं हूं सही, मंखलिसुत गोशाल।
श्रमण-वधक जावत करि, छद्‌मस्थ छतूंज काल ।।

८२२. अहण्णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए जाव (सं०पा०) छउमत्थे चेव कालं करेस्सं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८२३. श्रमण भगवंत महावीर जी, जिन जिनप्रलापी जाव।
जिन रव प्रतै प्रकाशता, विचरै छै सद्भाव।।
८२४. ते माटै देवानुप्रिय! काल गयो मुझ जाण।
डावा पग रै दोरड़ी, तुम्है बांधजो ताण।।

८२५. डावा पग रै दोरड़ी, तुम्है बांधी नैं ताहि।
तीन वार फुन थूकज्यो, थे मुझ मुख रै मांहि।।
८२६. तीन वार मुख थूकनैं, नगरी सावत्थी मांहि।
शृंघाटक त्रिक जाव ही, महापंथ में ताहि।।
८२७. उरहो-परहो घींसाड़जो मोटै-मोट रवेह।
वार-वार उद्घोषणा, करता एम वदेह।।

८२८. नहि निश्चै देवानुप्रिय! मंखलिसुत गोशाल।
जिन जिनप्रलापी जाव ही, विचरयो ए महाबाल।
८२९. एहिज छै निश्चै करी, मंखलिसुत गोशाल।
श्रमण-वधक जावत कियो, छद्म छतेज काल।।
८३०. श्रमण भगवंत महावीर जी, जिन जिन-प्रलापी जाव।
जिन रव प्रतै प्रकाशता, विचरै छै सद्भाव।।
८३१. मोटी अणऋद्धे करी, असत्कार समुदाय।
तिणे करी मुझ तनु तणो, नोहरण कीजो ताय।।

निर्हरण पद

८३२. इम कहि कीधू काल तब, आजीवक थिवरेह।
मंखलिसुत गोशाल प्रति, मूंओ जाणीनैं तेह।।

८३३. कुंभकारी हालाहला, तसु कुंभकार-हट जेह।
तास द्वार ढांकै तदा, ढांकी कपाट करेह।।
८३४. कुंभकारी हालाहला, कुंभकार-हट ताहि।
तेह तणां बहु मध्य जे, देश भाग रै मांहि।।
८३५. नगरी सावत्थी नुं तदा, स्वरूप आलेखंत।
आलेखी गोशाल नां, शरीर तणोंज मंत।।
८३६. डावा पग रै दोरड़ी, बांधै बांधी जोय।
तीन वार मुख नैं विषे, थूकै थकी सोय।।
८३७. नगरी सावत्थी नैं विषे, शृंघाटक त्रिक धार।
जाव पंथे उरहो-परहो, घींसाड़तां तिह वार।।
८३८. नीचै नीचै शब्द करि, उद्घोषणा करंत।
उद्घोषणा करता छता, इह विधि वयण वदंत।।
८३९. निश्चै नहीं देवानुप्रिय! मंखलिसुत गोशाल।
जिन जिनप्रलापी जाव ही, विचरयो ए महाबाल।।
८४०. ए मंखलिसुत गोशाल हिज, श्रमण-वधक महाबाल।
जावत ही छद्मस्थपणें, निश्चै कीधो काल।।

८२३. समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ।
८२४. तं तुब्भं णं देवाणुप्पिया! ममं कालगयं जाणित्ता वामे पाए सुंबेणं बंधेह,
'सुंबेणं' ति वल्करज्ज्वा (वृ० प० ६८५)
८२५. बधेत्ता तिक्खुत्तो मुहे उट्ठुभेह,

८२६. उट्ठुभेत्ता सावत्थीए नगरीए सिंघाडग जाव (सं०पा०) पहेसु
८२७. आकट्टविकट्टिं करेमाणा महया-महया सद्देणं उग्घोसेमाणा-उग्घोसेमाणा एवं वदह—
'आकट्टविकट्टिं' ति आकर्षवैकर्षिकाम्। (वृ० प० ६८५)

८२८. नो खलु देवाणुप्पिया! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरिए।
८२९. एस णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए।
८३०. समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ।
८३१. महया अणिड्ढी-असक्कारसमुदएणं ममं सरीरगस्स नीहरणं करेज्जाह—

८३२. एवं वदित्ता कालगए (श० १५।१४१)
तए णं आजीविया थेरा गोसालं मंखलिपुत्तं कालगयं जाणित्ता
८३३. हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स दुवाराइं पिहेंति, पिहेत्ता
८३४. हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स बहुमज्झ-देसभाए
८३५. सावत्थिं नगरिं आलिहंति, आलिहित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं
८३६. वामे पदे सुंबेणं बंधंति, बंधित्ता तिक्खुत्तो मुहे उट्ठुभंति, उट्ठुभित्ता
८३७. सावत्थीए नगरीए सिंघाडग जाव (सं० पा०) पहेसु आकट्ट-विकट्टिं करेमाणा
८३८. णीयं-णीयं सद्देणं उग्घोसेमाणा-उग्घोसेमाणा एवं वयासी—
८३९. नो खलु देवाणुप्पिया! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरिए।
८४०. एस णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८४१. श्रमण भगवंत महावीर जी, जिन जिन-प्रलापी जाण।
जिन रव प्रकाशता छता, विचरै छै जगभाण।।
८४२. सूंस कराव्या जे हता, तास शपथ कहिवाय।
तेहनैं प्रति मोक्षण करै, सम पाली नैं ताय।।
८४३. द्वितीय वार पिण जे वली, पूजा नैं सत्कार।
ते स्थिर करिवा नैं अरथ, थेर आजीवक धार।।
८४४. मंखलिसुत गोशाल नां, डावा पग नीं जोय।
परही छोड़ै दोरड़ी, रज्जु छोड़ी नैं सोय।।
८४५. कुंभकारी हालाहला, तसु कुंभकारि-हट जेह।
द्वार तणांज कपाट प्रति, ताम उघाड़ै तेह।।
८४६. द्वार कपाट उघाड़नैं, मंखलि-सुत गोशाल।
तसुं तनु सुरभि गंध जले, न्हवरावै तिहकाल।।
८४७. तिमज जाव मोटी ऋद्धे, सत्कृत समुदायेह।
मंखलिसुत गोशाल नुं, तनु नुं नीहरण करेह।।

भगवान के रोगांतक प्रादुर्भाव पद

८४८. श्रमण भगवंत महावीर तब, अन्य दिवस किहवार।
सावत्थी नगरी थकी, चैत्य कोठग थी धार।।
८४९. निकलै निकली बाहिरै, जनपद देश विषेह।
करै विहार प्रतै तदा, विचरंता गुणगेह।।
८५०. तिण काले नैं तिण समय, मिंढिय ग्रामज नाम।
नगर हुंतो रलियामणो, तसुं वर्णक अभिराम।।
८५१. मिंढिय ग्रामज नगर नैं, बाहिर कूण ईशाण।
साणकोठ इहां चैत्य थो, तसु वर्णक अति जाण।।
८५२. जावत पृथ्वी शिलपट्टक, साणकोठ नामेह।
चैत्य तणें ते दूर नहीं, नथी ढूकड़ूं जेह।।
८५३. इहां इक मोटो मालुका-कच्छ गहन जे हुंत।
कृष्ण वर्ण काली प्रभा, जावत निकुरंबभूत।।
८५४. पत्र पुष्प फलवंत जे, हरित शोभतो जेह।।
लक्ष्मी करी घणुं-घणुं, उपशोभित तिष्ठेह।
८५५. ग्राम नगर मिंढिय तिहां, नाम रेवती जास।
जे गाथापतिणी वसै, ऋद्धिवान धन राश।।
८५६. जावत अपरिभूत तब, श्रमण भगवंत महावीर।
अन्य दिवस प्रभुजी कदा, सुरगिर जेम सधीर।।
८५७. पूर्वानुपूर्वे तदा, विचरंता बड़वीर।
जावत मिंढियग्राम जे, नगर तिहां प्रभु हीर।।
८५८. साणकोठ जिहां चैत्य छै, जाव परिषदा आय।
निज-निज स्थानक प्रति गई, वंदी श्री जिनराय।।
८५९. श्रमण भगवंत महावीर नां, तनु नैं विषे तिवार।
विपुल रोग आतंक ही, प्रगट थयो अवधार।।
८६०. उज्जल जाव दुखे करी, सहिवूं जेहनुं होय।
पित्त ज्वरे करि सर्वथा, व्याप्युं तनु अवलोय।।

८४१. समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ—

८४२. सवह-पडिमोक्खणगं करेंति, करेत्ता

८४३. दोच्चं पि पूया-सक्कार-थिरीकरणट्ठयाए

८४४. गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स वामाओ पादाओ सुंबं मुयंति, मुइत्ता

८४५. हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स दुवार-वयणाइं अवंगुणंति,

८४६. अवंगुणित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं सुर-भिणा गंधोदएणं ण्हाणेंति,

८४७. तं चेव जाव महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगस्स नीहरणं करेंति। (श० १५।१४२)

८४८. तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कदायि सावत्थीओ नगरीओ कोट्ठयाओ चेइयाओ

८४९. पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ। (श० १५।१४३)

८५०. तेणं कालेणं तेणं समएणं मेंढियगामे नामं नगरे होत्था—वण्णओ।

८५१. तस्स णं मेंढियगामस्स नगरस्स बहिया उत्तर-पुरत्थिमे दिसीभाए, एत्थ णं साणकोट्ठए नामं चेइए होत्था—वण्णओ।

८५२. जाव पुढविसिलापट्टओ। तस्स णं साणकोट्ठगस्स चेइयस्स अदूरसामंते

८५३. एत्थ णं महेगे मालुयाकच्छए यावि होत्था—किण्हे किण्होभासे जाव महामेहनिकुरंबभूए

८५४. पत्तिए पुप्फिए फलिए हरियगरेरिज्जमाणे सिरीए अतीव-अतीव उवसोभेमाणे चिट्ठति।

८५५. तत्थ णं मेंढियगामे नगरे रेवती नामं गाहावइणी परिवसति—अड्ढा

८५६. जाव बहुजणस्स अपरिभूया। (श० १५।१४४)
तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णदा कदायि

८५७. पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव (सं० पा०) जेणेव मेंढियगामे नगरे

८५८. जेणेव साणकोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ जाव परिसा पडिगया। (श० १५।१४५)

८५९. तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स सरीरगंसि विपुले रोगायंके पाउब्भूए।

८६०. उज्जले जाव (सं० पा०) दुरहियासे पित्तज्जरपरि-गयसरीरे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८६१. दाह ऊपनों छै जसु, एहवा प्रभु विचरंत।
लोही रूपज मल करै, लोही ठाण पहुंत।

८६२. ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य फुन, शुद्र वर्ण ए च्यार ।।
मुखै वागरै इह विधे, सांभलजो विस्तार।

८६३. श्रमण भगवंत महावीर ही, मंखलिसुत गोशाल।
तेहनैं तप तेजे करी, व्याप्यो छतो विशाल ।।

८६४. जे षट मासज अंत ही, पित्त ज्वरे करि जाण।
व्याप्युं समस्तपणें तनु, दाह ऊपनों आण ।।

८६५. ते माटै निश्चय करी, छद्मस्थ थकोज जाण।
करिस्यै कालज इहविधे, वदै वर्ण चिहु वाण ।।

मुनि सिंह का मानसिक दुःख पद

८६६. तिण काले नैं तिण समय, श्रमण भगवंत महावीर।
तसु शिष्य सीहो नाम जे, वर अणगार सुहीर ।।

८६७. प्रकृति स्वभावे भद्र मुनि, जाव विनीत गुणेह।
मालुक कच्छ नैं दूर नहीं, नथी ढूकडूं जेह ।।

८६८. छठ-छठ अंतर रहित तप, बाहू ऊर्द्ध करेह।
जावत विचरै इह विधे, आतापन मुनि सेह ।।

८६९. सीह अणगार तणें तदा, ध्यानांतर वर्तमान।
ए एहवे रूपेज तसु, जाव ऊपनो जाण ।।

८७०. इम निश्चै करि मांहरा, धर्माचारज धीर।
धर्म तणां उपदेशका, श्रमण भगवंत महावीर ।।

८७१. प्रगट थयो तसु तनु विषे, विपुल रोग आतंक।
उज्जल जाव छद्मस्थ ही, करिस्यै काल मृतंक ।।

८७२. कहिस्यै इम अन्यतीर्थिका, छद्म थका कृत काल।
इम एहवे रूपे मने, मानसीक दुख न्हाल ।।

८७३. मानसिक दुख पराभव्यो, आतापन भूमीज।
तेह थकी निकलै तदा, भूमि थकी निकलीज।

८७४. जिहां मालुका कच्छ छै, आवै तिहां चलाय।
मालुक कच्छ विषे मुनि, करै प्रवेशज ताय ।।

८७५. एम प्रवेश करी तिहां, मोटै-मोटै साद।
हुहु कुकु शब्दे करी, रोवै मन असमाध ।।

भगवान द्वारा आश्वासन पद

८७६. हे आर्यो ! आमंत्रि इम, श्रमण भगवंत महावीर।
श्रमण निर्ग्रंथ बोलाय नैं, इम कहै सुरगिरि धीर ।।

८६१. दाहवक्कंतिए यावि विहरति, अवि याइं लोहिय-वच्चाइं पि पकरेइ।
'लोहियवच्चाइंपि' त्ति लोहितवर्चांस्यपि—रुधिरा-त्मकपुरीषाण्यपि करोति। (वृ० प० ६९०)

८६२. चाउवण्णं च णं वागरेति
'चाउवण्णं' ति चातुर्वर्ण्यं—ब्राह्मणादिलोकः।
(वृ० प० ६९०)

८६३. एवं खलु समणे भगवं महावीरे गोसालस्स मंखलि-पुत्तस्स तवेणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे

८६४. अंतो छण्हं मासाणं पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाह-वक्कंतिए

८६५. छउमत्थे चेव कालं करेस्सति। (श० १५।१४६)

८६६. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महा-वीरस्स अंतेवासी सीहे नामं अणगारे—

८६७. पगइभद्दए जाव विणीए मालुयाकच्छगस्स अदूर-सामंते

८६८. छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे विहरति।
(श० १५।१४७)

८६९. तए णं तस्स सीहस्स अणगारस्स झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव (सं० पा०) समुप्पज्जित्था।

८७०. एवं खलु ममं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स

८७१. सरीरगंसि विउले रोगायंके पाउब्भूए—उज्जले जाव छउमत्थे चेव कालं करेस्सति।

८७२. वदिस्संति य णं अण्णतित्थिया—छउमत्थे चेव कालगए—इमेणं एयारूवेणं महया मणोमाणसिएणं दुक्खेणं

८७३. अभिभूए समाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभइ, पच्चो-रुभित्ता

८७४. जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मालुयाकच्छगं अंतो-अंतो अणुपविसइ,

८७५. अणुपविसित्ता महया-महया सद्देणं कुहुकुहुस्स परुण्णे।
(श० १५।१४८)

८७६. अज्जोति ! समणे भगवं महावीरे समणे निग्गंथे आमंतेति, आमंतेत्ता एवं वयासी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८७७. आर्यो ! इम निश्चै करी, मांहरो शिष्य सुजाण।
सीहो नाम अणगार ते, भद्रक प्रकृति पिछाण ।।
८७८. तिमहिज सघलो जाणवूं, जावत ही अधिकेह।
रोयो आर्यो ! गच्छ तुम्ह, सीह प्रतै तेड़ेह ।।

८७९. तब ते श्रमण निर्ग्रंथ बहु, श्रमण भगवंत महावीर।
इम कह्यो छतोज प्रभु प्रतै, वंदै नमै वजीर ।।

८८०. जिन वंदी शिर नामनैं, प्रभु पासा थी जाम।
साणकोठ जे चैत्य थी, निकलै निकली ताम ।।

८८१. जिहां मालुका-कच्छ छै, जिहां सीहो अणगार।
त्यां आवै आवी करी, सीह प्रति इम कहै सार ।।

८८२. सीहा ! धर्माचार्य तुझ, बोलावै जगनाथ।
तब सीहो अणगार ते, श्रमण निर्ग्रंथ संघात ।।
८८३. मालुक-कच्छ थी नीकलै, निकली नैं मतिवंत।
साणकोठ जिहां चैत्य है, जिहां प्रभु तिहां आवंत ।।

८८४. प्रभु पासे आवी करी, वीर प्रतै त्रिण वार।
दक्षिण नां पासा थकी, दियै प्रदक्षिण सार ।।
८८५. प्रदक्षिणा देई करी, जाव करै पर्युपास।
हे सीहा ! इह विध प्रभु, संबोधन दै तास ।।
८८६. श्रमण भगवंत महावीर जो, सीह प्रति इम कहै वान।
ते निश्चै तुझ नैं सीहा ! झाणंतर वर्त्तमान ।।
८८७. ए एहवे रूपे जिके, जाव रूंनो अधिकेह।
ते निश्चै करि हे सीहा ! अर्थ समर्थ छै एह ?
८८८. हंता अत्थि सीह कहै, हूं सीहा ! निश्चेह।
मंखलिसुत गोशाल नैं, व्याप्यो तप तेजेह ।।

८८९. ते षट मासज अन्त ही, जाव करूं नहिं काल।
हूं अन्य साढा पनर ही, वर्ष लगै सुविशाल ।।
८९०. जिन शोभन गज नीं परै, विचरीस जनपद सार।
ते माटै जाओ तुम्है, हे सीहा ! इहवार ।।
८९१. ग्राम नगर मिंढिय प्रति, नाम रेवती जास।
गाथापतिणी तेहनां, घर नैं विषे विमास ।।
८९२. तिहां गाथापतणी रेवती, तिण मुझ अर्थे तेथ।
दोय कपोत शरीर प्रति, संस्कारया धर हेत ।।

वा०—इहां वृत्तिकार कह्यु—श्रूयमाणमेवार्थं केचिन्मन्यन्ते। दुवे कवोया—इत्यादिक नो केइ एक जिसो शब्द कह्यो तिसोहीज अर्थ मानै ए प्रथम **अर्थ** टीका में कह्यो छै। वलि वृत्तिकार कह्यु—अनेरा आचार्य इम कहै छै—कपोतकः पक्षिविशेषः तेहनीं परै वर्ण नां सरीखापणां थकी जे फल ते कुष्मांड नां दोय फल

८७७. एवं खलु अज्जो ! ममं अंतेवासी सीहे नामं अणगारे पगइभद्दए
८७८. तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव (सं० पा०) परुण्णे तं गच्छह णं अज्जो ! तुब्भे सीहं अणगारं सद्दाह।
(श० १५।१४९)
८७९. तए णं ते समणा निग्गंथा समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समाणा समणं भगवं महावीरं वदंति नमंसंति,
८८०. वंदित्ता नमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ साणकोट्ठगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता
८८१. जेणेव मालुयाकच्छए, जेणेव सीहे अणगारे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सीहं अणगारं एवं वयासी—
८८२. सीहा ! धम्मायरिया सद्दावेंति। (श० १५।१५०)
तए णं से सीहे अणगारे समणेहिं निग्गंथेहिं सद्धिं
८८३. मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता जेणेव साणकोट्ठए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ,
८८४. उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं
८८५. जाव पज्जुवासति। (श० १५।१५१)
सीहादि !
८८६. समणे भगवं महावीरे सीहं अणगारं एवं वयासी—
से नूणं ते सीहा ! झाणंतरियाए वट्टमाणस्स
८८७. अयमेयारूवे जाव (सं० पा०) परुण्णे। से नूणं ते सीहा ! अट्ठे समट्ठे ?
८८८. हंता अत्थि।
तं नो खलु अहं सीहा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवेणं तेएणं अण्णाइट्ठे समाणे
८८९. अंतो छण्हं मासाणं जाव (सं० पा०) कालं करेस्सं। अहण्णं अद्ध सोलस वासाइं
८९० जिणे सुहत्थी विहरिस्सामि, तं गच्छह णं तुमं सीहा !
८९१. मेंढियगामं नगरं, रेवतीए गाहावतिणीए गिहं,
८९२. तत्थ णं रेवतीए गाहावतिणीए, दुवे कवोय-सरीरा उवक्खडिया,

वा०—'दुवे कवोया' इत्यादेः श्रूयमाणमेवार्थं केचिन्मन्यन्ते, अन्ये त्वाहुः—कपोतकः पक्षिविशेषस्तद्वद् ये फले वर्णसाधर्म्यात्ते कपोते—कुष्मांडे ह्रस्वे कपोते कपोतके ते च ते शरीरे वनस्पतिजीवदेहत्वात् कपोतकशरीरे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

न्हांना तेहिज शरीर वनस्पति जीव देहपणां थकी कोहला नां फलहीज अथवा कपोत नां शरीर नीं परै धूसर वर्ण नां सरीखापणां थकी जे ते कपोत फल कोहला नां फलहीज ते संस्कारया, एतलै कोहलापाक जाणवू—ए अर्थ अनेरै आचार्य कियो।

८९३. ते संघाते मांहरे, अर्थ प्रयोजन नांहि।
जे बहु पापपणां थकी, आधाकर्मी ताहि।।

८९४. वली अनेरो जेह छै, ते पहिले दिन कीध।
मार्जारकृत कुक्कड़ मंस जे, ते तूं आण प्रसीध।।

वा०—इहां 'मज्जारकडए' मार्जार इत्यादिक नों पिण केई एक श्रूयमाणहीज अर्थ माने छै, ए प्रथम अर्थ वृत्तिकार कह्यो। जे इम माने, तेहनो मानवो विरुद्ध छै। पंचेंद्रिय नों मांस साधु नैं अभक्ष छै ते भणी। वलि प्रश्नव्याकरण अध्येन ६ अमज्जमंसासिया साधू नैं कह्या छै, ते माटै श्रूयमाण अर्थ करै ते मिलै नहीं।

वलि वत्तिकार कह्यु—अनेरा आचार्य इम कहै—मार्जार वायुविशेष, तेह उपशमन नै निमित्त कीधो—संस्कारयो ते मार्जारकृत। वलि अनेरा आचार्य कहै—मार्जार—विरालिका नामै वनस्पति विशेष, तिणे करी कीधो एतलै भावित, ते कुर्कुटमांसकं बीजपूरकं कटाहं एतलै बीजोरापाक। तेह प्रतै वहिरी आण।

८९५. ते संघाते मांहरे, अर्थ प्रयोजन जाण।
ते निष्पापपणां थकी, एम कहै प्रभु वाण।।

सिंह द्वारा रेवती से भैषज्य आनयन पद

८९६. तब सीहो अणगार ते, श्रमण भगवंत महावीर।
इम कह्ये छतेज हरषियो, तुष्ट जाव हृद हीर।।

८९७. श्रमण भगवंत महावीर प्रति, वंदै नमैं विनीत।
वंदी स्तुती करि नमी, त्वरितपणांज रहीत।।

८९८. अचपल फुन असंभ्रांत ही, मुंहपोत्तिया ताम।
पड़िलेहै पड़िलेहि नैं, जिम जे गोतम स्वाम।।

८९९. तिम कहिवो जावत जिहां, श्रमण भगवंत महावीर।
त्यां आवै आवी करी, वंदै नमै सुहीर।।

९००. प्रभु वंदी शिर नाम नैं, वीर पास थी जोय।
चैत्य साण कोट्ठग थकी, निकलै निकली सोय।।

९०१. त्वरितपणां करि रहित जे, जावत जिहां छै जेह।
ग्राम नगर मिंढिय तिहां, आवै आवी तेह।।

९०२. ग्राम नगर मिंढिय तिहां, थई मध्यमध्येह।
जिहां रेवती नाम जे, गाथापतिणी गेह।।

९०३. तिहां आवै आवी करी, जेह रेवती जाण।
गाथापतिणी नैं घरे, पेठो मुनि गुणखाण।।

९०४. तिण अवसर सा रेवती, सीह अणगार प्रतेह।
आवंतो देखी तदा, देखी नैं हरषेह।।

९०५. वलि संतोष लह्युं घणुं, शीघ्रहीज सुविचार।
आसण थी ऊठै तदा, ऊठीनैं तिहवार।।

अथवा कपोतकशरीरे इव धूसरवर्णसाधर्म्यादिव कपोतकशरीरे कूष्माण्डफले एव ते उपसंस्कृते—संस्कृते।
(वृ० प० ६९०,६९१)

८९३. तेहिं नो अट्ठो,
'तेहिं नो अट्ठो' त्ति बहुपापत्वात्। (वृ० प० ६९१)

८९४. अत्थि से अण्णे पारियासिए मज्जारकडए कुक्कुडमंसए, तमाहराहि,
'पारिआसिए' त्ति परिवासितं ह्यस्तनमित्यर्थः।
(वृ० प० ६९१)

वा०—'मज्जारकडए' इत्यादेरपि केचित् श्रूयमाणमेवार्थं मन्यन्ते,

अन्ये त्वाहुः—मार्जारो—वायुविशेषस्तदुपशमनाय कृतं—संस्कृतं मार्जारकृतम्, अपरे त्वाहुः—मार्जारो—विरालिकाभिधानो वनस्पतिविशेषस्तेन कृतं—भावितं यत्तत्तथा, किं तत्? इत्याह—'कुर्कुटकमांसकं' बीजपूरकं कटाहम्। (वृ० प० ६९१)

८९५. एएणं अट्ठो। (श० १५।१५२)
निरवद्यत्वादिति। (वृ० प० ६९१)

८९६. तए णं से सीहे अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ जाव (सं० पा०) हियए

८९७. समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता अतुरियं

८९८. अचवलमसंभंतं मुहपोत्तियं पडिलेहेति, पडिलेहेत्ता जहा गोयमसामी

८९९. जाव (सं० पा०) जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ,

९००. वंदित्ता नमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ साणकोट्ठगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता

९०१. अतुरियं जाव (सं० पा०) जेणेव मेंढियगामे नगरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता

९०२. मेंढियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव रेवतीए गाहावइणीए गिहे

९०३. तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रेवतीए गाहावतिणीए गिहं अणुप्पविट्ठे। (श० १५।१५३)

९०४. तए णं सा रेवती गाहावतिणी सीहं अणगारं एज्जमाणं पासति, पासित्ता हट्ठ-

९०५. तुट्ठा खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९०६. सीह नाम अणगार नैं, सात-आठ पग धार।
सन्मुख जावै ते तदा, सन्मुख जई तिवार।।

९०६. सीहं अणगारं सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता

९०७. तीन वार दक्षिण तणां, पासा थकी पिछाण।
प्रदक्षिण देई करी, एम वदै वर वाण।।

९०७. तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेति, करेत्ता वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—

९०८. आज्ञा द्यो देवानुप्रिय ! तुम्ह आव्या मुझ गेह।
किसुं प्रयोजन कार्य छै ? कही बतावो तेह।।

९०८. संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किमागमणप्पयोयणं ?
(श० १५।१५४)

९०९. तब सीहो अणगार ते, रेवती प्रति कहेह।
इम निश्चै करिनैं तुम्है, अहो देवानुप्रियेह !

९०९. तए णं से सीहे अणगारे रेवतिं गाहावइणिं एवं वयासी—एवं खलु तुमे देवाणुप्पिए !

९१०. श्रमण भगवंत महावीर नें, अर्थे जे अवलोय।
दोय कपोत शरीर नें, संस्कारचा छै सोय।।

९१०. समणस्स भगवओ महावीरस्स अट्ठाए दुवे कवोय-सरीरा उवक्खडिया।

९११. तिणे करी नहिं अर्थ मुझ, छै अन्य तेह थकीज।
कीधो पहिला दिन तणो, माज्जरिकृत सहीज।।

९११. तेहिं नो अट्ठो, अत्थि ते अण्णे पारियासिए मज्जारकडए

९१२. कुकुड़मंस कहीजियै, बीजपूरक गिर ताय।
कहै बीजोरापाक छै, ते मुझ प्रति बहिराय।।

९१२. कुक्कुडमंसए एयमाहराहि

९१३. ते संघाते अर्थ मुझ, तदा रेवती जेह।
गाथापतिणी सीह प्रति, इह विधि वयण वदेह।।

९१३. तेणं अट्ठो। (श० १५।१५५)
तए णं सा रेवती गाहावइणी सीहं अणगारं एवं वयासी—

९१४. कुण सीहा ! ज्ञानी तिको, वा तपस्वीज तिणेह।
तुझ प्रति झट ए अर्थ मुझ, रहकृत प्रथम कहेह।।

वा०—कुण हे सीहा ! तेह ज्ञानी ते ज्ञान बले करी अथवा तपस्वी ते तप बले करी जेणे तुझ नैं एह अर्थ म्हारो पहिलांज रहस्य—एकांत कृत कुष्मांडक फल पाक लक्षण उतावलो कह्यु ।

९१४. केस णं सीहा ! से नाणी वा तपस्वी वा, जेणं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वमक्खाए।

९१५. जाणैं छै तूं जेह थकी, जिम खंधक अधिकार।
जावत जेह प्रभु थकी, हूं जाणूं छूं सार।।

९१५. जओ णं तुमं जाणासि ? (श० १५।१५६)
एवं जहा खंदए जाव (सं० पा०) जओ णं अहं जाणामि। (श० १५।१५७)

९१६. तिण अवसर सा रेवती, सीह अणगार समीप।
एह अर्थ निसुणी करी, हरष संतोष उद्दीप।।

९१६. तए णं सा रेवती गाहावतिणी सीहस्स अणगारस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा

९१७. जिहां भात नो घर तिहां, आवै आवी ताम।
पात्र प्रतै छींका थकी, मूकै मूकी ठाम।।

९१७. जेणेव भत्तघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पत्तगं मोएति, मोएत्ता
'पत्तगं मोएति' त्ति पात्रकं—पिठरकाविशेषं मुञ्चति सिक्कके उपरिकृतं सत्तस्मादवतारयतीत्यर्थः।
(वृ० प० ६९१)

९१८. जिहां सीहो अणगार त्यां, आवै आवी ताय।
सीहा नैं पड़िघे तिको, सम्यक सहु बहिराय।।

९१८. जेणेव सीहे अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहस्स अणगारस्स पडिग्गहगंसि तं सव्वं सम्मं निस्सिरति। (श० १५/१५८)

९१९. तिण अवसर ते रेवती, गाथापतिणी जेह।
तेह द्रव्य शुद्धे करी, जावत दान करेह।।

९१९. तए णं तीए रेवतीए गाहावतिणीए तेणं दव्वसुद्धेण दायग जाव (सं० पा०) दाणेणं

९२०. जे सीहा अणगार प्रति, प्रतिलाभ्येज छतेह।
देवायू बांध्यु तदा, जेम विजय तिम एह।।

९२१. वसुधारा जे विजय नैं, प्रगट थया दिव्य पंच।
जिम कह्यु तिमहिज इहां, सगलूं कहिवूं संच।।

९२०,२१. सीहे अणगारे पडिलाभिए समाणे देवाउए निबद्धे जहा विजयस्स

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६२२. जावत जीवित जन्म नुं, फल लाधु तिण सार ।
गाथापतिणी रेवती, इम कहै वारुंवार ।।

६२३. गाथापतिणी रेवती, तसु घर थी तिहवार ।
वर सीहो अणगार ते, निकलै निकली सार ।।

६२४. ग्राम नगर मिंढिय तणैं, मध्योमध्य थइ जाण ।
जिम गोतम जावत तिमज, देखाडै भत्तपाण ।।

६२५. भात पाण देखाड़नें, प्रभु कर विषेज तेह ।
पाक आहार मूकै तदा, सघलो सम्यगपणेह ।।

भगवान का आरोग्य पद

६२६. श्रमण भगवंत महावीर तब, मूर्च्छा रहित जिनेश ।
जावत अति तृष्णा रहित, बिल जिम पन्नग प्रवेश ।।

६२७. तिमहिज आतमाइं करी, शरीर-कोठा मांय ।
सीह आण्यु ते आहार प्रति, प्रक्षेपै जिनराय ।।

६२८. श्रमण भगवंत महावीर तब, आहारे छते ते आहार ।
विपुल रोग आतंक ही, शीघ्र मिट्यो तिहवार ।।

६२९. हृष्ट व्याधि करि रहित थयुं, अरोग पीड़ रहीत ।
वलि बलवंत शरीर इम, प्रभु तनु थयो पुनीत ।।

गीतक छंद

६३०. संतोष पाम्या श्रमण सहु, संतोष पामी अर्जिका ।
संतोष पाम्या सर्व श्रावक, इमज हरषी श्राविका ।
संतोष पाम्या देव बहु, इमहीज सुरवर-अंगना ।
सुर सहित मनु फुन असुर तुट्ठा, हर्षवंत थया जना ।।

दूहा

६३१. श्रमण भगवंत महावीर जी, थयाज हृष्ट निराम ।
तिण कारण श्रमणादि बहु, हृष्ट तुष्ट मन पाम ।।

सर्वानुभूति उपपाद पद

६३२. हे भदंत ! इह विधि कही, भगवंत गोतम नाम ।
श्रमण भगवंत महावीर प्रति, वंदै फुन शिर नाम ।।

६३३. वंदी शिर नामी करी, इह विध बोलै वाय ।
इम देवानुप्रिय तणों, अंतेवासी ताय ।।

६३४. पूर्व देश नुं ऊपनों, सर्वानुभूति नाम ।
प्रकृति भद्र अणगार ते, जाव विनय गुणधाम ।।

६३५. हे भदंत ! ते मुनि तदा, मंखलिसुत गोशाल ।
तिण तप तेजे भस्म नीं राशि किये करि काल ।।

९२२. जाव (सं० पा०) जम्मजीवियफले रेवतीए गाहावतिणीए रेवतीए गाहावतिणीए। (श० १५।१६०)

९२३. तए णं से सीहे अणगारे रेवतीए गाहावतिणीए गिहाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता

९२४. मेंढियगामं नगर मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जहा गोयमसामी जाव भत्तपाणं पडिदंसेति,

९२५. पडिदंसेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स पाणिंसि तं सव्वं सम्मं निस्सिरति। (श० १५।१६१)

९२६. तए णं समणे भगवं महावीरे अमुच्छिए जाव (सं० पा०) अणज्झोववन्ने बिलमिव पन्नगभूएणं

९२७. अप्पाणेणं तमाहारं सरीरकोट्ठगंसि पक्खिवति। (श० १५।१६२)
'तं सिंहानगारोपनीतमाहारं शरीरकोष्ठके प्रक्षिपतीति'। (वृ० प० ६९१)

९२८. तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स तमाहारं आहारियस्स समाणस्स से विपुले रोगायंके खिप्पामेव उवसंते,

९२९. हट्ठे जाए अरोगे बलियसरीरे।
'हट्ठे' त्ति 'हृष्टः' निर्व्याधिः 'अरोगे' त्ति निष्पीडः। (वृ० प० ६९१)

९३०. तुट्ठा समणा, तुट्ठाओ समणीओ, तुट्ठा सावया, तुट्ठाओ सावियाओ, तुट्ठा देवा, तुट्ठाओ देवीओ, सदेवमणुयासुरे लोए तुट्ठे।

९३१. हट्ठे जाए समणे भगवं महावीरे, हट्ठे जाए समणे भगवं महावीरे। (श० १५।१६३)
'हट्ठे' त्ति नीरोगो जात इति। (वृ० प० ६९१)

९३२. भंतेति ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति,

९३३. वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी

९३४. पाईणजाणवए सव्वाणुभूती नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए,

९३५. से णं भंते ! तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं तेएणं भासरासीकए समाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६३६. किहां गयो किहां ऊपनो ? तब प्रभु भाखै सोय ।
इम निश्चै करि गोयमा ! अंतेवासी मोय ।।
६३७. पूर्व देश नों ऊपनों, सर्वानुभूति नाम ।
प्रकृति भद्र अणगार ते जाव विनय गुण धाम ।।
६३८. तेह मुनी तिण अवसरे मंखलिसुत गोसाल ।
तिण तप तेजे भस्म नीं राशि किये करि काल ।।
६३९. ऊंचो रवि शशि जाव ब्रह्म, लांतक महाशुक्र एह ।
कल्प प्रतै लंघी करी, सहस्सार कल्पेह ।।
६४०. देवपणै जे ऊपनों, केइयक सुर नीं तेथ ।
अष्टादश सागर तणीं, स्थिति परूपी जेथ ।।
६४१. तिहां सर्वानुभूति जे, सुर नीं पिण तिण ठाम ।
अष्टादश सागर तणीं, स्थिती परूपी आम ।।
६४२. सर्वानुभूति सुर प्रभु ! ते सुरलोक थकीज ।
आउखा प्रति क्षय करी, फुन स्थिति क्षय करि हीज ।।
६४३. जाव महाविदेहक्षेत्र में, तेह सीझस्यै ताम ।
जाव सर्व दुख अंत ही, करिस्यै ते गुणधाम ।

सुनक्षत्र उपपाद पद

६४४. इम देवानुप्रिय तणों, निश्चै करि शिष्य जेह ।
कोसल देश नों ऊपनों, सुनक्षत्र नामेह ।।
६४५. प्रकृतिभद्र अणगार ते, जाव विनीत विशाल ।
हे भदंत ! ते मुनि तदा, मंखलिसुत गोशाल ।।
६४६. तप तेजे करि तेहनैं, परिताप्येज छतेह ।
काल अवसरे काल करि, किहां गयुं मुनि जेह ।।
६४७. किहां वली जे ऊपनों ! तब भाखै भगवंत ।
इम निश्चै करि गोयमा ! मुझ शिष्य अति गुणवंत ।।
६४८. सुनक्षत्र नामै मुनि, भद्र प्रकृति सुविशाल ।
जाव विनीत ते मुनि तदा, मंखलि-सुत गोशाल ।।
६४९. तेणे तप तेजे करी, परिताप्येज छतेह ।
जिहां मुझ समीप छै तिहां, आवै आवी जेह ।।
६५०. वंदै शिर नामै तदा, वंदी नमी शिरेह ।
पोतै महाव्रत पंच ही, उचरै उचरी तेह ।।
६५१. समणा फुन समणी प्रतै, खामै खामी ताम ।
आलोई फुन पड़िकमी, अति चित्त समाधि पाम ।।
६५२. काल अवसरे काल करि, जावत चंदिम सूर ।
जावत आणय पाणय, आरण कल्प पंडूर ।।
६५३ ते सहु प्रति लंघी करी, अच्युत कल्प विषेह ।
देवपणै ते ऊपनों, महामुनी गुणगेह ।।
६५४. किताक सुर नीं स्थिति तिहां, दधि बावीस कहीस ।
सुनक्षत्र सुर नीं पिण तिहां, स्थिति सागर बावीस ।।
६५५. शेष सर्वानुभूती नुं, आख्यो जेम उदंत ।
तिमहिज कहिवूं जाव ही, करिस्यै सहु दुख अंत ।।

९३६. कहिं गए ? कहिं उववन्ने ?
एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी
९३७. पाईणजणवए सव्वाणुभूती नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए ।
९३८. से णं तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेण तेएणं भासरासीकए समाणे
९३९. उड्ढं चंदिम-सूरिय जाव बंभ-लंतक-महासुक्के कप्पे वीइवइत्ता सहस्सारे कप्पे
९४०. देवत्ताए उववन्ने । तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।
९४१. तत्थ णं सव्वाणुभूतिस्स वि देवस्स अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।
९४२. से णं भंते ! सव्वाणुभूती देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं
९४३. जाव (सं० पा०) महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिति । (श० १५।१६४)

९४४. एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कोसलजाणवए सुनक्खत्ते नामं
९४५. अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए । से णं भंते ! तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं
९४६. तवेणं तेएणं परिताविए समाणे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए ?
९४७. कहिं उववन्ने ? एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी
९४८. सुनक्खत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए से णं तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं
९४९. तवेणं तेएणं परिताविए समाणे जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता
९५०. वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता सयमेव पंच महव्वयाइं आरुभेति, आरुभेत्ता
९५१. समणा य समणीओ य खामेति, खामेत्ता आलोइय-पडिक्कंते समाहिपत्ते
९५२. कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिम-सूरिय जाव आणय-पाणयारणे कप्पे
९५३. वीइवइत्ता अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने ।

९५४. तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता । तत्थ णं सुनक्खत्तस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ।
९५५. सेसं जहा सव्वाणुभूतिस्स जाव अंतं काहिति ।
(श० १५।१६५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक का भवभ्रमण पद

९५६. इम निश्चै करि आपरो अंतेवासी कुशोस।
मंखलिसुत गोशाल जे, हे भगवंत ! जगीस ।।

९५६. एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से गोसाले नामं मंखलिपुत्ते से णं भंते !

९५७. मंखलिसुत गोशाल ते, काल मास करि काल।
किहां गयो किहां ऊपनों ? हिव जिन उत्तर न्हाल ।।

९५७. गोसाले मंखलिपुत्ते कालमासे कालं किच्चा कहिं गए ? कहिं उववन्ने ?
एवं खलु गोयमा !

९५८. मम अंतेवासी कुशिष्य, इम निश्चै करि जाण।
मंखलिसुत गोशाल जे, श्रमणवधक पहिछाण ।।

९५८. ममं अंतेवासी कुसिस्से गोसाले नामं मंखलिपुत्ते समणघायए

वा०—'इहां गोशाला नैं भगवान कह्यो—म्हारो अंतेवासी कुशिष्य गोशालो मंखलिपुत्र। इण वचने पहिलां शिष्य हुंतो, दीक्षा दीधी तिणसूं कुशिष्य कह्यो। भगवती शतक ९ उद्देशै ३३ में जमाली नैं पिण कुशिष्य कह्यो छै। तिम इहां कुशिष्य कह्यो। कपूत कहिवै पूत ठेहरचो। तिम कुशिष्य कहिवै पहिलां शिष्य ठेहरचो। न्याय नेत्रे विचारी जोइज्यो।' (ज० स०)

९५९. जावत हि छद्मस्थ छतुं, काल मास करि काल।
ऊंचो शशि रवि जाव ही, अच्युत कल्प विशाल ।।

९५९. जाव छउमत्थे चेव कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिम-सूरिय जाव अच्चुए

९६०. देवपणैं तिहां ऊपनों, केइक सुर नीं तेथ।
दोय बीस सागर तणीं, स्थिती परूपी जेथ ।।

९६०. कप्पे देवत्ताए उववन्ने। तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता।

९६१. सुर गोशाल तणीं तिहां, बावीस दधि स्थिति ख्यात।
हे प्रभु ! ते सुरलोक थी, सुर गोशाल विख्यात ।।

९६१. तत्थ णं गोसालस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता। (श० १५।१६६)
से णं भंते ! गोसाले देवे ताओ देवलोगाओ

९६२. आयु क्षय करि जाव ही, किहां ऊपजस्यै एह ?
जिन भाखै गोयम ! एहिज, जंबूद्वीप नामेह ।।

९६२. आउक्खएणं……जाव (सं० पा०) कहिं उववज्जिहिति ?

९६३. ते द्वीपे भरतक्षेत्र में, विंझगिरि नामेह।
तास पायमूले प्रगट, पुंड नाम देशेह ।।

९६३. गोयमा ! इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विंझगिरिपायमूले पुंडेसु जणवएसु

९६४. सयद्वार नगरे सुमति नृप, भद्रा भार्या ताय।
उपजस्यै तसु कुक्षि में, पुत्रपणैं ए आय ।।

९६४. सयदुवारे नगरे संमुतिस्स रण्णो भद्दाए भारियाए कुच्छिसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति।

९६५. तेह तिहां नव मास ही, बहु प्रतिपूर्ण जाण।
यावत व्यतिक्रम्ये थके, जावत ही पहिछाण ।।

९६५. से णं तत्थ नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं जाव (सं०पा०) वीइक्कंताणं जाव

९६६. सुरूप बालक जनमस्यै, फुन जे रात्रि विषेह।
जे बाल प्रतै जनमस्यै, ते निशि में पुन्येह ।।

९६६. सुरूवे दारए पयाहिति। (श० १५।१६७)
जं रयणिं च णं से दारए जाइहिति तं रयणिं च णं

९६७. जेह नगर शतद्वार नैं, भ्यंतर सहितज बार।
भार परिमाण थकीज जे, विंशति शत पल भार।

९६७. सयदुवारे नगरे सब्भिंतरबाहिरिए भारग्गसो य

वा०—भार परिमाण थकी जे पुरुष नैं बहिवा जोग्य एतलै पुरुष थकी उपाड़णी आवै एतला बोझ नैं भार कहियै। प्रथम अर्थ तो ए जाणवो। अथवा भार ते दोय हजार पल नों एक भार।

ते भार नों मान कहै छै—पांच चिरमी नो एक मासो, सोलै मासा रो एक सोनइयो, च्यार सोनइया रो एक पल, सौ पल की एक ताकड़ी, वीस ताकड़ी रो एक भार—एतलै दोय हजार पल नो एक भार कहीजै इति हेम तृतीय कांडे।

वा०—'भारग्गसो य' त्ति भारपरिमाणत' भारश्च—भारकः पुरुषोद्वहनीयो विंशतिपलशतप्रमाणो वेति। (वृ० प० ६९१)

स्यात् गुञ्जाः पञ्चमाषकः।
ते तु षोडश कर्षोऽक्षः पलं कर्षचतुष्टयम् ।।
विस्तः सुवर्णो हेम्नोऽक्षे कुरुविस्तस्तुतत्पले।
तुला पलशतं तासां विंशत्या भार आचितः ।।
(हेमकोष ३।५४७-५४९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९६८. कुंभप्रमाणे सुजघन्य कुंभ, आढक साठ सुइष्ट ।
मध्यम कुंभ आढक असी, शताढक कुंभ उत्कृष्ट ।।

वा०—हिवै कुंभ नों प्रमाण कहै छै—दोय असती नीं एक पुसली, दोय पुसली नी एक सेइ, च्यार सेइ नों एक कुडब, च्यार कुडब नों एक पाथो, च्यार पाथा नों एक आढक, अनैं साठ आढक नुं ए जघन्य कुंभ, १०० आढक नुं उत्कृष्ट कुंभ ।

९६९. पद्म वृष्टि फुन रत्न नीं वृष्टि वरससै सार ।
तिण अवसर ते बाल नां, मात-पिता तिहवार ।।

९७०. दिवस इग्यारम अतिक्रम्ये, जावत पाम्ये छतेह ।
दिवस बारमा नैं विषे, ए एहवे रूपेह ।।

९७१. गुणे करीनैं एहवो, गुणनिष्पन जे नाम ।
करिस्यै म्हारै जे भणी, ए जनम्ये छते ताम ।।

९७२. एह नगर शतद्वार नैं भ्यंतर सहितज बार ।
जाव रत्न रूप मेघ नीं, वृष्टि हुई तिहवार ।।

९७३. तिणसूं होवो अम्ह तणां, ए बालक नो नाम ।
महापद्म महापद्म ए, पवर नाम अभिराम ।।

९७४. तिण अवसर ते बाल नां, माता-पिता अवलोय ।
नामधेय करिस्यै इसो, महापद्म इम जोय ।।

९७५. महापद्म बालक प्रतै, मात-पिता तिहवार ।
साधिक अठ वर्ष नुं थयुं, जाणीनैं धर प्यार ।।

९७६. शोभनीक तिथि करण फुन, दिवस नक्षत्र विचार ।
वली भला मुहूर्त्त विषे, आणी हरष अपार ।।

९७७. मोटै-मोटै राज्य नैं, अभिषेक करि ताय ।
करस्यै राज्याभिषेक तसु, ते तिहां होस्यै राय ।।

९७८. मोटो हिमवंत नीं परै, वर्णक तास विचार ।
जावत ही ते विचरस्यै, राज्य करंतो सार ।।

९७९. ते महापद्म राजा तणैं, अन्य दिवस किहवार ।
उभय देव महर्द्धिक तिके, महेश्वरा अवधार ।।

९८०. करस्यै सेना कर्म प्रति, ते बे सुर नां नाम ।
पूर्णभद्र महिमानिलो, माणिभद्र अभिराम ।।

९८१. तब शतद्वारे नगर बहु, राजा ईश्वर जाण ।
तलवर जावत सार्थवाह, प्रमुख घणां पहिछाण ।।

९८२. मांहोमांहि तेड़ाय नैं, तेड़ावी नैं तेह ।
इह विधि कहिस्यै जे भणी, अहो देवानुप्रियेह !

९८३. महापद्म अम्ह नृप तणैं, बे सुर महर्द्धिक जाव ।
करै सैन्यकर्म पूर्णभद्र, माणिभद्र सुर साव ।।

९८४. ते माटै होवो प्रवर, अहो देवानुप्रियेह !
एह अम्हारा महापद्म, राजा तणुंज जेह ।।

९८५. नामधेय दूजो अपि, देवसेन जग मांय ।
देवसेन इह विधि तसु, वदस्यै जन-जन वाय ।।

९६८. कुंभग्गसो य
कुंभग्गसो य' त्ति कुम्भो—जघन्य आढकानां षष्ट्या मध्यमस्त्वशीत्या उत्कृष्टः पुनः शतेनेति ।
(वृ० प० ६९१)

वा० —चतुर्भिः कुडवैः प्रस्थः प्रस्थैश्चतुर्भिराढकः ।
(हेमकोष ३।५५०)

९६९. पउमवासे य रयणवासे य वासे वासिहिति ।
(श० १५।१६८)

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो
९७०. एक्कारसमे दिवसे वीइक्कंते जाव (सं०पा०) संपत्ते बारसमे दिवसे अयमेयारूवं

९७१. गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं काहिति--जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि जायंसि समाणंसि

९७२. सयदुवारे नगरे सब्भितरबाहिरिए जाव (सं०पा०) रयणवासे वुट्ठे ।

९७३. तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं महापउमे-महापउमे ।

९७४. तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं करेहिंति महापउमे ति । (श० १५।१६९)

९७५. तए णं तं महापउमं दारगं अम्मापियरो सातिरेगट्ठवासजायगं जाणित्ता

९७६. सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-नक्खत्त-मुहुत्तंसि

९७७. महया-महया रायाभिसेगेणं अभिसिंचेहिंति । से णं तत्थ राया भविस्सति—

९७८. महया हिमवंत-महंत-मलय-मंदर-महिंदसारे वण्णओ जाव विहरिस्सइ । (श० १५।१७०)

९७९. तए णं तस्स महापउमस्स रण्णो अण्णदा कदायि दो देवा महिड्ढिया

९८०. सेणाकम्मं काहिंति, तं जहा—पुण्णभद्दे य माणिभद्दे य ।

९८१. तए णं सयदुवारे नगरे बहवे राईसर-तलवर जाव (सं०पा०) सत्थवाहप्पभितओ

९८२. अण्णमण्णं सद्दावेहिंति, सद्दावेत्ता एवं वदेहिंति—जम्हा णं देवाणुप्पिया !

९८३. महापउमस्स रण्णो दो देवा महिड्ढिया जाव महेसक्खा सेणाकम्मं करेति, तं जहा—पुण्णभद्दे य माणिभद्दे य ।

९८४. तं होउ णं देवाणुप्पिया ! अम्हं महापउमस्स रण्णो

९८५. दोच्चे वि नामधेज्जे देवसेणे-देवसेणे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९८६. तिण अवसर ते महापद्म, महिपति नु पहिछाण ।
द्वितीय नाम पिण जे हुस्यै, देवसेन इम जाण ।।

९८७. तब महिपति सुरसेन नैं, अन्य दिवस किहवार ।
श्वेत शंख नों तल विमल, तेह सरीखो सार ।।

९८८. चिहुंदंतो गज रत्न वर, ऊपजस्यै तसु आय ।
तिण अवसर ते समय ही, देवसेन बड़राय ।।

९८९. श्वेत शंख तल विमल ही, तेह सरीखो ताय ।
चिउंदंता गज रत्न प्रति, चढतो थकोज राय ।।

९९०. तेह नगर शतद्वार नैं, भ्यंतर सहितज बार ।
मध्योमध्य थई करी, वार-वार धर प्यार ।।

९९१. प्रवेश करिस्यै पुर मझै, नीकलस्यै फुन बार ।
तिण अवसर शतद्वार ते, नगर विषे अवधार ।।

९९२. बहु नृप ईश्वर जाव ही, प्रमुखज मांहोमांय ।
तेड़ावै तेड़ाय नैं, वदिस्यै इह विधि वाय ।।

९९३. देवानुप्रिय ! जे भणी, जेह अम्हारा जाण ।
देवसेन राजा तणें, श्वेत शंख तल माण ।।

९९४. तेह सरीखा दंतचिहुं, हस्ती रत्न उपन्न ।
ते माटै थावो वली, देवानुप्रिय सुजन्न ।।

९९५. देवसेन अम्ह नृप तणों, तृतीय नाम पिण जान ।
विमलवाहन एहवूं प्रसिद्ध, विमलवाहन जन वान ।।

९९६. तिण अवसर ते महीपति, देवसेन नों जोय ।
तृतीय नाम पिण जग विषे, विमलवाहन इम होय ।।

९९७. विमलवाहन नृप तेह तब, अन्य दिवस किहवार ।
पडिवज्जस्यै श्रमण निर्ग्रंथ थी, भाव अनारज धार ।।

९९८. करिस्यै केइक मुनि भणी, वच आक्रोश विशेख ।
करिस्यै केइक मुनि तणीं, हास्य मिस करी टेक ।।

९९९. केइक मुनि नैं परस्पर, जुदा पाड़स्यै ताय ।
केइक नैं दुर्वयण करी, निर्भ्रछस्यै अधिकाय ।।

१०००. केइक मुनि नैं बांधस्यै, रूंधि राखिस्यै केय ।
वलि केइक मुनिवर तणीं, करिस्यै छविछेदेय ।।

१००१. वलि केइयक मुनिवर भणी, मारण क्रिया सुजोय ।
तेह तणां प्रारंभ प्रति, करिस्यै अति अवलोय ।।

१००२. उपद्रव करिस्यै केइनैं, केइक मुनि नां देख ।
वस्त्र पात्र नैं कांबला, पायपुच्छणो पेख ।।

१००३. थोड़ो-सो तसु छेदस्यै, विशेष छेदस्यै तेह ।
तसु वस्त्रादि भेदस्यै, वली खोसस्यै जेह ।।

९८६. तए णं तस्स महापउमस्स रण्णो दोच्चे वि नाम-धेज्जे भविस्सति देवसेणे त्ति । (श० १५।१७१)

९८७. तए णं तस्स देवसेणस्स रण्णो अण्णया कयाइ सेते संखतल-विमल-सन्निगासे

९८८. चउद्दंते हत्थिरयणे समुप्पज्जिस्सइ । तए णं से देव-सेणे राया

९८९. तं सेयं संखतल-विमल-सन्निगासं चउद्दंतं हत्थिरयणं दूरूढे समाणे

९९०. सयदुवारं नगरं मज्झंमज्झेणं अभिक्खणं-अभिक्खणं

९९१. अतिजाहिति य निज्जाहिति य । तए णं सयदुवारे नगरे

९९२. बहवे राईसर जाव (सं० पा०) सत्थवाहप्पभितओ अण्णमण्णं सद्दावेहिंति, सद्दावेत्ता वदेहिंति

९९३,९९४. जम्हा णं देवाणुप्पिया ! अम्हं देवसेणस्स रण्णो सेते संखतल-विमल-सन्निगासे चउद्दंते हत्थिरयणे समुप्पन्ने, तं होउ णं देवाणुप्पिया !

९९५. अम्हं देवसेणस्स रण्णो तच्चे वि नामधेज्जे विमल-वाहणे-विमलवाहणे ।

९९६. तए णं तस्स देवसेणस्स रण्णो तच्चे वि नामधेज्जे भविस्सति विमलवाहणे त्ति । (श० १५।१७२)

९९७. तए णं से विमलवाहणे राया अण्णया कदायि समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवज्जिहिति—

९९८. अप्पेगतिए आओसेहिति, अप्पेगतिए अवहसिहिति
'आउसिहिइ' त्ति आक्रोशान् दास्यति । (वृ० प० ६९१)

९९९. अप्पेगतिए निच्छोडेहिति, अप्पेगतिए निब्भ-च्छेहिति,

१०००. अप्पेगतिए बंधेहिति, अप्पेगतिए निरुंभेहिति, अप्पे-गतियाणं छविच्छेदं करेहिति,

१००१. अप्पेगतिए पमारेहिति,
'पमारेहिइ' त्ति प्रमारं—मरणक्रियाप्रारम्भं करिष्यति प्रमारयिष्यति । (वृ० प० ६९१)

१००२. अप्पेगतिए उद्दवेहिति, अप्पेगतियाणं वत्थं पडिग्गहं कंबलं पायपुंछणं
'उद्दवेहिइ' त्ति उपद्रवान् करिष्यति । (वृ० प० ६९१)

१००३. आच्छिदिहिति विच्छिदिहिति भिंदिहिति अवहरि-हिति
'आच्छिदिहिइ' त्ति ईषत् छेत्स्यति 'विच्छिदेहिइ' त्ति विशेषेण विविधतया वा छेत्स्यति । (वृ० प० ६९१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१००४. केइक नें भत्तपाण नों, विच्छेद करिस्यै धार।
केइक मुनि नें नगर थो, काढी देस्यै बार ।।

१००५. केइक मुनि नें देश थी, काढ़ी देस्यै तेह।
अशुभ उदै मुनिवर भणीं, इह विध दुख देस्येह ।।

१००६. तिण अवसर शतद्वार जे, नगर विषे जन ताय।
बहु राजा ईश्वर तदा, जावत वदस्यै वाय ।।

१००७. इम निश्चै देवानुप्रिय! विमलवाहन राजान।
श्रमण निर्ग्रंथ सूं पड़िवज्यो, भाव अनार्य पिछाण ।।

१००८. के मुनि प्रति आक्रोश दै, जावत ही वलि जाण।
केइक मुनि नें देश थी, काढै ए महिराण ।।

१००९. ते माटै देवानुप्रिय! निश्चै करिनें न्हाल।
आपण नें ए श्रेय जे, भलुं नहीं इण काल ।।

१०१०. विमलवाहन राजा तणैं, निश्चै करिनें जोय।
एह अनार्य भाव फल, श्रेय भलुं नहि कोय ।।

१०११. निश्चै करि ए राज्य नें, अथवा राष्ट्र प्रतेह।
अथवा बल ते कटक नें, वा वाहन नें एह ।।

१०१२. अथवा पुरजन नगर नें, वा अंतेउर तास।
तथा जानपद नें वली, श्रेय भलुं नहिं जास ।।

१०१३. विमलवाहन नृप जे भणो, श्रमण निर्ग्रंथ संघात।
भाव अनार्य पड़िवज्यो, प्रत्यक्ष ही देखात ।।

१०१४. ते माटै देवानुप्रिय! आपां नै जे श्रेय।
विमलवाहन राजा प्रतै, अर्थ विनविवूं एय ।।

१०१५. एम करीनैं परस्पर, अर्थ सांभलस्यै एह।
एह अर्थ प्रति सांभली, करी अंगीकृत जेह ।।

१०१६. विमलवाहन जिहां राजवी, तिहां आवस्यै तेह।
विमलवाहन राजा कन्है, आवी पुरजन जेह ।।

१०१७. कर-तल बेहुं जोड़नैं, विमलवाहन राजान।
तेह प्रतै जय विजय करि, वधावस्यै ते मान ।।

१०१८. जय विजय करि वधाय नें, वदस्यै इह विध वाय।
इम निश्चै देवानुप्रिय! श्रमण निर्ग्रंथ थी ताय ।।

१०१९. भाव अनार्य पड़िवज्या, आक्रोसो मुनि केय।
जावत केइयक मुनि भणी, देश बार काढेह ।।

१०२०. निश्चै करि देवानुप्रिय! तुझ नें नहिं ए श्रेय।
अम्ह नें पिण निश्चै करी, भलूं नही छै एय ।।

१०२१. निश्चै करी ए राज्य नें, अथवा जावत जोय।
जनपद ते जे देश नें, भलुं नहीं छै कोय ।।

१०२२. जे माटै देवानुप्रिय! श्रमण निर्ग्रंथ संघात।
भाव अनार्य पड़िवज्या, ते प्रति विरमो नाथ!

१०२३. देवानुप्रिय! अर्थ ए, तुम्हे न करिवो कोय।
इतलै तुम्है यती भणी, दुख नहिं देवूं जोय ।।

१००४. अप्पेगतियाणं भत्तपाणं वोच्छिदिहिति, अप्पेगतिए निन्नगरे करेहिंति
'निन्नगरे करेहिंति' त्ति निर्नगरान् नगरनिष्क्रान्तान् करिष्यति। (वृ० प० ६९१)

१००५. अप्पेगतिए निव्विसए करेहिंति। (श० १५।१७३)

१००६. तए णं सयदुवारे नगरे बहवे राईसर जाव (सं० पा०) वदिहिंति—

१००७. एवं खलु देवाणुप्पिया! विमलवाहणे राया समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ने—

१००८. अप्पेगतिए आओसति जाव निव्विसए करेति।

१००९. तं नो खलु देवाणुप्पिया! एयं अम्हं सेयं,

१०१०. नो खलु एयं विमलवाहणस्स रण्णो सेयं,

१०११. नो खलु एयं रज्जस्स वा रट्ठस्स वा बलस्स वा वाहणस्स वा

१०१२. पुरस्स वा अंतेउरस्स वा जणवयस्स वा सेयं,

१०१३. जण्णं विमलवाहणे राया समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ने।

१०१४. तं सेयं खलु देवाणुप्पिया! अम्हं विमलवाहणं रायं एयमट्ठं विण्णवेत्तए

१०१५. त्ति कट्टु अण्णमण्णस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेहिंति, पडिसुणेत्ता

१०१६. जेणेव विमलवाहणे राया तेणेव उवागच्छिहिंति, उवागच्छित्ता

१०१७. करयलपरिग्गहियं जाव (सं० पा०) विमलवाहणं रायं जएणं विजएणं वद्धाविहिंति,

१०१८. बद्धावेत्ता एवं वदिहिंति—एवं खलु देवाणुप्पिया! समणेहिं निग्गंथेहिं

१०१९. मिच्छं विप्पडिवन्ना अप्पेगतिए आओसंति जाव अप्पेगतिए निव्विसए करेंति।

१०२०. तं नो खलु एयं देवाणुप्पियाणं सेयं, नो खलु एय अम्हं सेयं,

१०२१. नो खलु एयं रज्जस्स वा जाव जणवयस्स वा सेयं।

१०२२. जण्णं देवाणुप्पिया! समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ना, तं विरमंतु णं

१०२३. देवाणुप्पिया! एयस्स अट्ठस्स अकरणयाए।
(श० १५।१७४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०२४. विमलवाहन नृप तेह तब, तिणे बहू जे राय।
ईश्वर जावत सार्थवाह, आदि देईनैं ताय ।।
१०२५. एह अर्थ प्रति वीनव्ये, धर्म तणीं बुध नांहि।
वलि तसु तप नीं बुद्धि नहिं, पिण तास कथन थी ताहि ।।
१०२६. मिथ्या विनय करी तदा, एह अर्थ प्रति जेह।
अंगीकार करिस्यै जदा, भाव विना नृप तेह ।।
१०२७. ते शतद्वारज नगर नैं, बाहिर कूण ईशान।
सुभूमिभाग नामै इहां, हुस्यै प्रवर उद्यान ।।

१०२८. सर्व ऋतु नां फूल फल, तेह सहित सुखदाय।
तेहनुं वर्णक जाणवूं, अति रमणीक शोभाय ।।
१०२९. तिण काले नैं तिण समय, विमल नाम अरिहंत।
तेहनां शिष्य नों शिष्य जे, नाम सुमंगल संत ।।

वा०—विमल नामें तीर्थंकर—समवायंग में आवती चउबीसी रा नाम कह्या, तिणमें इकवीसमों तीर्थंकर नों नाम विमल दीसै छै। ते इकवीसमो विमल तीर्थंकर तो घणां कोड़ सागर गयां हुस्यै। अनैं ए गोशाला नो जीव महापद्म तो बावीस सागर पछै हुस्यै। तिहां विमल तीर्थंकर नों पड़पोतो शिष्य किम संभवै? तेहनों उत्तर—बावीस सागरोपम नैं अंते जे तीर्थंकर हुसी तेहनो विमल पिण नाम संभवै। महापुरुषां नां अनेक नाम छै ते भणी विमल अरिहंत नो पड़पोत्रो सुमंगल नामा अणगार संभवै।

१०३०. जाति-संपन्न मुनि तेह जिम, धर्मघोष तिम सार।
एकादश शत ग्यारमें, उद्देशके अधिकार ।।
१०३१. जावत संक्षिप्ता तिणे, विस्तीर्ण तेय लेश।
तीन ज्ञान करि सहित छै, मति श्रुत अवधि विशेष ।।
१०३२. सुभूमिभाग उद्यान नैं, नथी दूर सामंत।
छठ-छठ तप करस्यै तिके, अंतर रहित सुतंत ।।
१०३३. जावत ही आतापना, लेतां थकां सुजान।
तेह विचरस्यै महामुनि, ध्यावस्यै निर्मल ध्यान ।।
१०३४. विमलवाहन राजान तब, अन्य दिवस किहवार।
रथचरिया रथ फेरवा, निमित्त नीकलस्यै धार ।।
१०३५. विमलवाहन राजान तब, सुभूमिभाग उद्यान।
तास न दूर न ढूकड़ो, फेरंतो रथ जान ।।
१०३६. जेह सुमंगल मुनि प्रवर, छठ-छठ जाव आताप।
लेतां प्रति तिहां देखस्यै, देखी क्रोधे व्याप ।।
१०३७. आसुरत्ते शीघ्र ही, जाव मिसिमिसेमान।
मुनि सुमंगल तेह प्रति, रथ नैं शिर करि जान ।।
१०३८. रथ नैं शिर ए जाणवूं, कागमुंहा करि केह।
मुनि ऊपर ते फेरस्यै, उलालि न्हाखीस्येह ।।
१०३९. तेह सुमंगल मुनि तदा, विमलवाहन राजान।
रथ नैं शिर संघात ही, ठेल्ये थके पिछान ।।

१०२४. तए णं से विमलवाहणे राया तेहिं बहूहिं राईसर जाव (सं०पा०) सत्थवाहप्पभिईहिं

१०२५. एयमट्ठं विण्णत्ते समाणे नो धम्मो त्ति नो तवो त्ति

१०२६. मिच्छा-विणएणं एयमट्ठं पडिसुणेहिति।
(श० १५।१७५)

१०२७. तस्स णं सयदुवारस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभागे, एत्थ णं सुभूमिभागे नामं उज्जाणे भविस्सइ—

१०२८. सव्वोउय-पुप्फ-फलसमिद्धे वण्णओ।
(श० १५।१७६)

१०२९. तेणं कालेणं तेणं समएणं विमलस्स अरहओ पओप्पए सुमंगले नामं अणगारे
'पउप्पए' त्ति शिष्यसन्तानः। (वृ० प० ६९१)
वा०—'विमलस्स' त्ति विमलजिनः किलोत्सर्पिण्यामेकविंशतितमः समवाये दृश्यते स चावसर्पिणीचतुर्थजिनस्थाने प्राप्नोति तस्माच्चार्वाचीनजिनान्तरेषु बहवः सागरोपमकोट्योऽतिक्रांता लभ्यन्ते, अयं च महापद्मो द्वाविंशतेः सागरोपमाणामन्ते भविष्यतीति दुरवगममिदं, अथवा यो द्वाविंशतेः सागरोपमाणामन्ते तीर्थकृदुत्सर्पिण्यां भविष्यति तस्यापि विमल इति नाम संभाव्यते, अनेकाभिधानाभिधेयत्वान्महापुरुषाणामिति। (वृ० प० ६९१)

१०३०. जाइसंपन्ने जहा धम्मघोसस्स (भ० ११।१६२) वण्णओ

१०३१. जाव संखित्तविउलतेयलेस्से तिन्नाणोवगए

१०३२. सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं

१०३३ जाव (सं०पा०) आयावेमाणे विहरिस्सति।
(श० १५।१७७)

१०३४. तए णं से विमलवाहणे राया अण्णदा कदायि रहचरियं काउं निज्जाहिति। (श० १५।१७८)

१०३५. तए णं से विमलवाहणे राया सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते रहचरियं करेमाणे

१०३६. सुमंगलं अणगारं छट्ठंछट्ठेणं जाव (सं०पा०) पासित्ता आसुरुत्ते

१०३७,३८. जाव (सं०पा०) मिसिमिसेमाणे सुमंगलं अणगारं रहसिरेणं नोल्लावेहिति। (श० १५।१७९)
'नोल्लावेहिइ' त्ति नोदयिष्यति—प्रेरयिष्यति।
(वृ० प० ६९१)

१०३९. तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रण्णा रहसिरेणं नोल्लाविए समाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०४०. हलुए हलुए ऊठस्यै, ऊठीनैं मुनिराय।
द्वितीय वार पिण ऊर्द्ध बाह, प्रकर्ष करि ताय ।।

१०४१. जावत ही आतापना, लेता छता अदीन।
एह मुनीश्वर विचरस्यै, मन इंद्रिय वश कीन ।।

१०४२. विमलवाहन राजान तब, सुमंगल मुनि प्रतेह।
द्वितीय वार पिण रथ शिरे, उलालि न्हाखीस्येह।

१०४३. तेह सुमंगल मुनि तदा, विमलवाहन राजान ।।
द्वितीय वार पिण रथ शिरे, न्हाख्यो थके पिछाण।

१०४४. हलुए हलुए ऊठस्यै, ऊठीनै अणगार।
अवधि प्रतैज प्रजूंभस्यै, अवधि प्रजूंझी सार ।।

१०४५. विमलवाहन राजा तणां, काल अतीत प्रतेह।
ताम मुनीश्वर देखस्यै, देखी अवधि करेह ।।

१०४६. विमलवाहन राजा प्रतै, वदस्यै इह विध वाय।
निश्चै करिनै तूं नहीं, विमलवाहन जे राय ।।

१०४७. निश्चै करिनैं तूं नहीं, देवसेन राजान।
निश्चै करिनैं तूं नहीं, महापद्म महिरान ।।

१०४८. तूं इहां थी तीजो भवो, मंखलिसुत गोशाल।
घातक श्रमण तणों हुंतो, जाव छद्म करि काल ।।

१०४९. तेह भणी जे तांहरो, तिण अवसर रै मांहि।
मुनि सर्वानुभूतिइं, समर्थ छतांपि ताहि ।।

१०५०. तेजोलेश्या मूकिवा, समर्थ छतां सुजोय।
सम्यकपणैं सह्यं खम्यं, अहियास्यूं अवलोय ।।

१०५१. यद्यपि तुझ उपद्रव तदा, सुनक्षत्र अणगार।
समर्थ छतां अपि सह्यु, जाव अहियास्यूं सार ।।

१०५२. यद्यपि तुझ उपद्रव तदा, श्रमण भगवंत महावीर।
समर्थ छतांपि जाव ही, अहियास्यूं चित धीर।

१०५३. तेह भणी निश्चै करी, ते हूं नहिं छूं कोय ।।
तिम सम्यक भावे सहूं, जाव अहियास्यूं जोय।

१०५४. हिवड़ां इज हूं तूझ भणी, णवरं इतो विशेख।
अश्व सहितफुन रथ सहित, सारथि सहित संपेख ।।

१०५५. तप तेजे एगाहच्चं, कूडाहच्चं जास।
तेह तणों पर जाणिवूं, करिस भस्म नीं राश ।।

१०५६. विमलवाहन नृप तेह तब, मुनि सुमंगल जाण।
इम कह्ये छतेज आसुरुत्त, जाव मिसिमिसेमान ।।

१०५७. मुनि सुमंगल प्रति तदा, तृतीय वार नृप जेह।
रथ नैं कागमुंहा थकी, उलालि न्हाखीस्येह ।।

१०५८. मुनि सुमंगल ते तदा, विमलवाहन राजान।
तृतीय वार पिण रथ शिरे, ठेल्ये छते पिछान ।।

१०५९. आसुरुत्त थयो तदा, जाव मिसिमिसेमान।
आतापन नीं भूमि थी, पाछो उसरै जान।

१०४०. सणियं-सणियं उट्ठेहेति, उट्ठेत्ता दोच्चं पि उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय-पगिज्झिय

१०४१. जाव (सं० पा०) आयावेमाणे विहरिस्सति।
(श० १५।१८०)

१०४२. तए णं से विमलवाहणे राया सुमंगलं अणगारं दोच्चं पि रहसिरेणं नोल्लावेहिति। (श० १५।१८१)

१०४३. तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रण्णा दोच्चं पि रहसिरेणं नोल्लाविए समाणे

१०४४. सणियं-सणियं उट्ठेहिति, उट्ठेत्ता ओहिं पउंजेहिति, पउंजित्ता

१०४५. विमलवाहणस्स रण्णो तीतद्धं आभोएहिति, आभोएत्ता

१०४६. विमलवाहणं रायं एवं वइहिति—नो खलु तुमं विमलवाहणे राया

१०४७. नो खलु तुमं देवसेणे राया, नो खलु तुमं महापउमे राया,

१०४८. तुमण्णं इओ तच्चे भवग्गहणे गोसाले नामं मंखलिपुत्ते होत्था—समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए।

१०४९. तं जइ ते तदा सव्वाणुभूतिणा अणगारेणं पभुणा वि होऊणं

१०५०. सम्मं सहियं खमियं तितिक्खियं अहियासियं,

१०५१. जइ ते तदा सुनक्खत्तेणं अणगारेणं पभुणा वि होऊणं सम्मं सहियं जाव (सं० पा०) अहियासियं,

१०५२. जइ ते तदा समणेणं भगवया महावीरेणं पभुणा वि जाव (सं० पा०) अहियासियं,

१०५३. तं नो खलु ते अहं तहा सम्मं सहिस्सं जाव (सं० पा०) अहियासिस्सं,

१०५४. अहं ते नवरं —सहयं सरहं ससारहियं

१०५५. तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेज्जामि। (श० १५।१८२)

१०५६. तए णं से विमलवाहणे राया सुमंगलेणं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव (सं० पा०) मिसिमिसेमाणे

१०५७. सुमंगलं अणगारं तच्चं पि रहसिरेणं नोल्लावेहिति। (श० १५।१८३)

१०५८. तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रण्णा तच्चं पि रहसिरेणं नोल्लाविए समाणे

१०५९. आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभइ,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०६०. ते भूमि थकी पाछो वली, जे तेज समुद्घात ।
ते प्रति करिस्यै ते करी, अतिही क्रोध वसात ।।
१०६१. सत-अठ पग पाछो वले, वली सप्त-अठ पाय ।
विमलवाहन राजा प्रतै, घोड़ा सहितज ताय ।।
१०६२. रथ करीनैं सहित फुन, सारथि सहितज जास ।
तप तेजे करि जाव ही, करिस भस्म नीं राश ।।
१०६३. मुनि सुमंगल हे प्रभु ! विमलवाहन प्रति जोय ।
अश्व सहित जे जाव ही, भस्म राशि करि सोय ।।
१०६४. जास्यै ऊपजस्यै किहां ? तव भाखै भगवान ।
गोतम मुनी ! सुमंगले, विमलवाहन प्रति जान ।।
१०६५. अश्व सहित तसु जाव ही, करी भस्स नीं राश ।
चउथ छट्ठ अट्ठम बहु, दशम तपे तनु त्रास ।।
१०६६. जाव विचित्र तप कर्म करि, आतम भावित छतां ताय ।
घणां वर्ष लग पालस्यै, चारित्र नीं पर्याय ।।
१०६७. बहु वर्ष पाली दीक्षा, मास संलेखण सार ।
साठ भक्त अणसण भलो, जाव छेदी तिहवार ।।
१०६८. आलोई नैं पड़िकमी, समाधि ऊंचो चंद ।
जाव ग्रैवेयक तसु, वास तणां शत वृंद ।।
१०६९. अतिक्रमी नैं सव्वट्ठसिद्ध, महाविमान विषेह ।
ऊपजस्यै ते सुरपणैं, वर सुकृत फल एह ।।
१०७०. तिहां देव नीं जे स्थिति, अजघन्य अणउत्कृष्ट ।
सागर जे तेतीस नीं, स्थिती परूपी इष्ट ।।
१०७१. सुमंगल सुर नी पिण तिहां, अजघन्य अणउत्कृष्ट ।
वर सागर तेतीस नीं, स्थिती परूपी सृष्ट ।।

१०६०. पच्चोरुभित्ता तेयासमुग्घाएणं समोहण्णिहिति, समोहणित्ता
१०६१. सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्किहिति, पच्चोसक्कित्ता विमलवाहणं रायं सहयं
१०६२. सरहं ससारहियं तवेणं तेएणं जाव (सं० पा०) भासरासिं करेहिति । (श० १५।१८४)
१०६३. सुमंगले णं भंते ! अणगारे विमलवाहणं रायं सहयं जाव भासरासिं करेत्ता
१०६४. कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! सुमंगले अणगारे विमलवाहणं रायं
१०६५. सहयं जाव भासरासिं करेत्ता बहूहिं छट्ठट्ठम-दसम
१०६६. जाव (सं० पा०) विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणेहिति
१०६७. पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता, सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता
१०६८. आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते उड्ढं चंदिम जाव गेविज्जविमाणावाससयं
१०६९. वीइवइत्ता सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति ।
१०७०. तत्थ णं देवाणं अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।
१०७१. तत्थ णं सुमंगलस्स वि देवस्स अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।

वा०—'अत्र सुमंगल अणगार राजा, घोड़ा अनै सारथी नैं भस्म करिस्यै । तेहनैं नवी दीक्षा रूप आठमो प्रायश्चित्त आवै, ते इहां किम नथी कह्यो ? तेहनो उत्तर—उत्तराध्येन अ० २२ में रहनेमि राजीमती नैं विषय वचन बोल्यो, तेहनों पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी । (उत्तरा० २२।३७,३८)

सीहो अणगार मोटै-मोटै शब्दे रोयो, तेहनों पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी । (भगवई १५।१४८)

अयमुत्ते मुनि पार्णी में पात्री तिराई, तेहनों पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी । (भगवई ५।८०)

ज्ञाता अध्येन १६ में धर्मघोष रा साधां नागसिरी नैं बाजार में जायनैं हेली निंदी, तेहनों पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी । (णाया० १।१६।२६)

भगवंत महावीर स्वामी छद्मस्थपणैं सरागभावे करी शीतल तेजोलेश्या फोड़ी, गोशाला नैं बचायो, तेहनों पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी । एतलां नैं प्रायश्चित्त चाल्यो नथी, पिण लियोज हुसी । तिम सुमंगल नैं पिण प्रायश्चित्त चाल्यो नथी, पिण ते प्रायश्चित्त तो निश्चै लेस्यैज । लियां विना आराधक पद पावै नहीं ते माटै । (भगवई १५।६४)

कोइ कहै—सुमंगल नैं अधिकारे 'आलोइयपडिक्कंते' एहवूं पाठ कह्यो छै, तेहनैं विषे प्रायश्चित्त आय गयो । तेहनो उत्तर—ए आलोइयपडिक्कंते तो छेहड़ै पाठ कह्यो छै—ते आलोइयपडिक्कंते पाठ ते विषे राजादिक नैं भस्म किया तेहनों प्रायश्चित्त किम हुवै ? सुनक्षत्र मुनि नैं पिण आलोइयपडिक्कंते एहवूं पाठ कह्यो छै । (भगवई १५।१०९)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खंधक अणगार प्रमुख नैं आलोइयपडिक्कंते ए छेहड़ा नुं पाठ छ । तिमहिज सुमंगल नैं जाणवूं । भगवई २।७०

अनैं जंघा-विद्या-चारण लब्धि फोड़वी नंदीसर रुचक द्वीप जई पाछा आवै तिहां एहवो पाठ छै—'तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेइ' तेहनों अर्थ—तस्स ठाणस्स कहितां जे लब्धि फोड़वी ते रूप थानक आलोई पड़िकमी काल करै तो आराधक एहवूं कह्यूं । तिम सुमंगल नैं तस्स ठाणस्स एहवूं पाठ नथी । जो तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कह्यो हुंतो, जद तो ते लब्धि फोड़वी ते रूप स्थानक नों प्रायश्चित्त आय जातो । पिण तस्स ठाणस्स पाठ नथी ते माटै आलोइयपडिक्कंते ए छेहड़ा नुं पाठ छै । पिण जे लब्धि फोड़वी ते थानक नीं आलोयणा नुं पाठ नथी । इहां सुमंगल नैं अधिकारे तो एहवूं कह्यो छै, ते कहै छै— भगवई २०।८६,८७

गोतम पूछचो हे भदंत ! सुमंगल अणगार अश्वादिक सहित राजा प्रति भस्म करी किहां ऊपजसी ? जद भगवान कह्यो—सुमंगल अणगार अश्वादिक सहित राजा प्रतै भस्म करी बहु चउत्थ, छठ, अठम, दशम जाव विचित्र प्रकारे तप करिवै करी आतमा नैं भावता थका घणां वर्ष चारित्र नीं पर्याय पालस्यै । पाली नैं मास नीं संलेखना साठ भक्त नों अणसण छेदी नैं एतला पाठ कहीनैं पछै कह्यो—आलोइयपडिक्कंते—आलोई पडिक्कमी समाधि थी ऊंचो चंद्रमा जाव ग्रैवेयक नां विमाण प्रतै उल्लंघी नैं सर्वार्थसिद्ध महाविमाण कै विषे ऊपजसी । इहां पहिलां चोथ आदि विचित्र प्रकारे तप करिवैं करी आत्मा नैं भावता थका घणां वर्ष चारित्र पाली संथारो करिस्यै । इहां घणां वर्ष चारित्र नीं पर्याय पालस्यै कह्यो । पछै संथारा नों पाठ कह्यो । पछै आलोइयपडिक्कंते पाठ कह्यो । ते भणी पहिलां चारित्र लेइनैं छेहड़ै संथारो करिस्यै । ते संथारा नैं विषे आलोइयपडिक्कंते पाठ कह्यो छै ते माटै । ए छेहड़ा नों पाठ घणै ठिकाणै कह्यो तिम इहां पिण जाणवो । पिण अश्वादिक नैं बालस्यै तेहनी आलोयण नों पाठ न संभवै इत्यलं विस्तरेण ।' (ज०स०)

१०७२. देव सुमंगल हे प्रभु ! ते सुरलोक थकीज ।
जाव महाविदेह सीझस्यै, जाव अंत करसीज ।।

१०७२. से णं भंते ! सुमंगले देवे ताओ देवलोगाओ जाव (सं० पा०) महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं काहिति । (श० १५।१८५)

१०७३. विमलवाहन नृप हे प्रभु ! मुनी सुमंगल जास ।
रथ करि सहितज जाव ही, करचे भस्म नीं राश ।।

१०७३. विमलवाहणे णं भंते ! राया सुमंगलेणं अणगारेणं सहये जाव भासरासीकए समाणे

१०७४. जास्यै उपजस्यै किहां ? तब भाखै भगवान ।
विमलवाहन राजा प्रतै, मुनी सुमंगल जान ।।

१०७४. कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! विमलवाहणे णं राया सुमंगलेणं अणगारेणं

१०७५. अश्व सहित जे जाव ही, भस्मराशि कीधेह ।
अधो सप्तमी महि विषे, ज्येष्ठ काल स्थितिकेह ।।

१०७५. सहये जाव भासरासीकए समाणे अहेसत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि

१०७६. नरक विषे नारकपणैं, ऊपजस्यै तिहां जाय ।
तेह तिहां थी निकली, अंतर रहितज ताय ।।

१०७६. नरयंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति । से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता

१०७७. ऊपजस्यै ते मछ विषे, तिहां पिण शस्त्रे न्हाल ।
वध पामी दाह ऊपनां, काल समय करि काल ।।

१०७७. मच्छेसु उववज्जिहिति । तत्थ वि णं सत्थवज्झे दाहवक्कंतीए कालमासे कालं किच्चा
'सत्थवज्झे' त्ति शस्त्रवध्यः सन् 'दाहवक्कंतीए' त्ति दाहोत्पत्त्या कालं कृत्वेति योगः । (वृ० प० ६९३)

१०७८. द्वितीय वार पिण सातमीं, ज्येष्ठकाल स्थितिकेह ।
नरक विषे नारकपणैं, जई उपजस्यै जेह ।।

१०७८. दोच्चं पि अहेसत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि नरयंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति ।

१०७९. तेह तिहां थी नीकली, अंतर रहितज ताय ।
द्वितीय वार पिण मछ विषे, ऊपजसी तिहां जाय ।।

१०७९. से णं तओणंतरं उव्वट्टित्ता दोच्चं पि मच्छेसु उववज्जिहिति ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०८०. तिहां पिण पामी शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।
छट्ठी तमा पृथ्वी विषे, ज्येष्ठ काल स्थितिकेह ।।
१०८१. नरक विषे नारकपणें, ऊपजस्यै तिहां जोय।
तेह तिहां थी जाव ही, निकली नें अवलोय ।।
१०८२. ऊपजस्यै स्त्री वेद में, तिहां पिण शस्त्र करेह।
वध पामी दाह ऊपन्यां, जाव द्वितीय वारेह ।।
१०८३. छठी तमा पृथ्वी विषे, ज्येष्ठ काल स्थितिकेह।
जावत निकली नें तदा, द्वितीय वार पिण जेह ।।
१०८४. ऊपजस्यै स्त्री वेद में, तिहां पिण शस्त्र करेह।
वध पामी नें जाव ही, काल करीनें जेह ।।
१०८५. धूमप्रभा महि पंचमी, जेष्ठ काल स्थितिकेह।
जाव तिहां थी निकली, ऊपजस्यै उरगेह ।।
१०८६. तिहां पिण पामी शस्त्र वध, जाव करीनें काल।
द्वितीय वार पिण पंचमी, ऊपजस्यै दुख जाल ।।
१०८७. जाव नीकली अहि विषे, द्वितीय वार पिण तेह।
ऊपजस्यै जावत वली, काल करीनें जेह ।।
१०८८. चउथी पंकप्रभा मही, जेष्ठ काल स्थितिकेह।
जाव तिहां थी नीकली, ऊपजस्यै सिंघेह ।।
१०८९. तिहां पिण पामी शस्त्र वध, तिमज जाव करि काल।
चउथी पंकप्रभा विषे, जाव नीकली न्हाल ।।
१०९०. द्वितीय वार पिण सीह विषे, ऊपजस्यै तब तेह।
जाव काल करि वालुका, तीजी मही विषेह ।।
१०९१. जेष्ठ काल स्थिति नें विषे, जाव नीकली जेह।
ऊपजस्यै पक्षी विषे तिहां पिण वध शस्त्रेह ।।
१०९२ जाव काल करि जाव ही, द्वितीय वार पिण तेह।
तृतीय वालुका महि विषे, जाव नीकली जेह ।।
१०९३. द्वितीय वार पिण पंखी विषे, अघ वश ऊपजस्येह।
जाव काल करि दूसरी, सक्करप्रभा विषेह ।।
१०९४. जाव नीकली सरीसृपे, ऊपजस्यै दुख ज्वाल।
तिहां पिण पामिस शस्त्र वध, जाव करीनें काल ।।
१०९५. द्वितीय वार पिण दूसरी, सक्करप्रभा विषेह।
जाव नीकली नें तदा, द्वितीय वार पिण तेह ।।
१०९६. ऊपजस्यै सरीसृप विषे, जाव काल करि एह।
रत्नप्रभा पृथ्वी विषे, जेष्ठ काल स्थितिकेह ।।
१०९७. नरक विषे नारकपणें, ऊपजस्यै ते जाव।
निकली नें सन्नी विषे, ऊपजस्यैज कुभाव ।।
१०९८. तिहां पिण पामिस शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।
ऊपजस्यै असन्नी विषे, तिहां पिण वध शस्त्रेह ।।
१०९९. जावत काल करि तदा, द्वितीय वार पिण एह।
रत्नप्रभाइं पल्य नें, असंख भाग स्थितिकेह ।।
११००. नरक विषे नारकपणें, ऊपजस्यै अवलोय।
ते जे रत्नप्रभा थकी, जाव नीकली सोय ।।

१०८०. तत्थ णं वि सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा छट्ठाए तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठियंसि
१०८१. नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति।
से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता
१०८२. इत्थियासु उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थवज्झे दाह जाव (सं० पा०) दोच्चं पि
१०८३. छट्ठाए तमाए पुढवीए उक्कोसकाल जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता दोच्चं पि
१०८४. इत्थियासु उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा
१०८५. पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए उक्कोसकाल जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता उरएसु उववज्जिहिति।
१०८६. तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा दोच्चं पि पंचमाए
१०८७. जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता दोच्चं पि उरएसु उववज्जिहिति। जाव (सं० पा०) किच्चा
१०८८. चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता सीहेसु उववज्जिहिति।
१०८९. तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं०पा०) किच्चा दोच्चं पि चउत्थीए पंक जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता
१०९०. दोच्चं पि सीहेसु उववज्जिहिति। जाव (सं०पा०) किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए
१०९१. उक्कोसकाल जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता पक्खीसु उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थवज्झे
१०९२. जाव (सं० पा०) किच्चा दोच्चं पि तच्चाए वालुय जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता
१०९३. दोच्चं पि पक्खीसु उववज्जिहिति। जाव (सं०पा०) किच्चा दोच्चाए सक्करप्पभाए
१०९४. जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता सिरीसवेसु उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थ जाव (सं० पा०) किच्चा
१०९५. दोच्चं पि दोच्चाए सक्करप्पभाए जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता दोच्चं पि
१०९६. सिरीसवेसु उववज्जिहिति। जाव (सं०पा०) किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि
१०९७. नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति। जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता सण्णीसु उववज्जिहिति।
१०९८. तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा असण्णीसु उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थवज्झे
१०९९. जाव (सं० पा०) किच्चा दोच्चं पि इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठिइयंसि
११००. नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति जाव (सं० पा०) उव्वट्टित्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वा०—इहां जिण क्रम थी असन्नी आदि जीव रत्नप्रभादि में उत्पन्न होय, तेहनों यथोक्त वर्णन कीधो छै। कह्यं पिण छै—

असन्नी पहली नरक में, सरीसृप—भुजपर दूजी नरक तांई, पक्षी—खेचर तीजी नरक तांई, सिंह—थलचर चौथी नरक तांई, उरग—उरपरिसर्प पांचवी नरक तांई, स्त्री छट्ठी नरक तांई अनै मच्छ और मनुष्य सातवीं नरक तांई उत्पन्न थाय छै।

११०१. जेह एह पंखी तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, चर्म पंखी अवलोय।।

११०२. लोम पंखी हंसादि फुन, समुग्ग पंखी धार।
डाबा नैं आकार ए, मनुष्यक्षेत्र नैं बार।।

११०३. वलि वितत पंखी कह्या, रहै पांखा विस्तार।
मनुष्यक्षेत्र थी बार छै, ए चिहुं विषे विचार।।

११०४ अनेक लाखां वार ही, मरी-मरी नैं सोय।
तेह विषेज वली-वली, ऊपजस्यै अवलोय।।

११०५. सहु भव में वध शस्त्र करि, दाह उपजवै जेह।
काल अवसरे काल करि, भुजपर ऊपजस्येह।।

वा०—इहां खेचर का लाखां भव कह्या, ते अंतर सहित जाणवा। बीजूं निरंतरपणैं तो पंचेंद्रिय तिर्यंच नां उत्कृष्टा आठ भव भगवती शतक २४ में कह्या छै। अथवा उत्तराध्ययन अ० १०।१३ में पिण पंचेंद्रिय नां सप्त अष्ट भव कह्या। ते पिण तिर्यंच पंचेंद्रिय नीं अपेक्षाये जाणवा। ते माटै ए लाखां भव कह्या ते अंतर सहित संभवै। ते भव नीं विधि कहै छै—आठ भव तिर्यंच पंचेंद्रिय नां करी पछै एक भव एकेंद्रिय प्रमुख नों। वलि तिर्यंच पंचेंद्रिय नां आठ भव। इम अंतर सहित लाखां भव संभवै।

११०६. जे ए भुजपरिसर्प नां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, गोह नोलिया जोय।।

११०७. जेम पन्नवणा धुर पदे, आख्यो कहिवो तेम।
जावत जाहक जीव ते, चउपद विशेष एम।।

११०८. तेह विषे बहु लक्ष भव, अंतर सहित कहाय।
शेष पंखी जिम जाणवो, जाव काल करि ताय।।

११०९. जे ए उरपरिसर्प नां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, अहि अजगर अवलोय।।

१११०. आसालिया महोरगा, तेह विषे इम न्हाल।
बहु लख भव अंतर सहित, जाव करीनैं काल।।

११११. जेह एह चउपद तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, एकखुरा अवलोय।।

१११२. एकखुरा अश्वादि जे, दोयखुरा गो आदि।
गंडीपया गज आदि फुन, सनखपदा सिंहादि।।

वा०—इह च यथोक्तक्रमेणैवासंज्ञिप्रभृतयो रत्नप्रभादिषु यत उत्पद्यन्त इत्यसौ तथैवोत्पादितः, यदाह—
'अस्सण्णी खलु पढमं दोच्चं च सिरीसिवा तइय पक्खी।
सीहा जंति चउत्थिं उरगा पुण पंचमिं पुढविं।।
छट्ठिं च इत्थियाओ मच्छा मणुया य सत्तमिं पुढविं।।'
इति (वृ० प० ६९३)

११०१. जाइं इमाइं खहयरविहाणाइं भवंति—तं जहा चम्मपक्खीणं
'खहचरविहाणाइं' ति इह विधानानि—भेदाः (वृ० प० ६९३)

११०२. लोमपक्खीणं, समुग्गपक्खीणं,
'लोमपक्खीणं' ति हंसप्रभृतीनां 'समुग्गपक्खीणं' ति समुद्गकाकारपक्षवतां मनुष्यक्षेत्रबहिर्वर्त्तिनां (वृ० प० ६७३)

११०३. विययपक्खीणं
'विययपक्खीणं' ति विस्तारितपक्षवतां समयक्षेत्रबहिर्वर्त्तिनामेवेति। (वृ० प० ६९३)

११०४. तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता तत्थेव-तत्थेव भुज्जो-भुज्जो पच्चायाहिति।

११०५. सव्वत्थ वि णं सत्थवज्झे दाहवक्कंतीए कालमासे कालं किच्चा

११०६. जाइं इमाइं भुयपरिसप्पविहाणाइं भवंति, तं जहा—गोहाणं, नउलाणं

११०७. जहा पण्णवणापए (१।७६) जाव जाहगाणं चउप्पाइयाणं

११०८. तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो सेसं जहा खहचराणं जाव किच्चा

११०९. जाइं इमाइं उरपरिसप्पविहाणाइं भवंति, तं जहा—अहीणं, अयगराणं

१११०. आसालियाणं, महोरगाणं, तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो जाव (सं० पा०) किच्चा

११११. जाइं इमाइं चउप्पदविहाणाइं भवंति, तं जहा—एगखुराणं

१११२. दुखुराणं, गंडीपदाणं, सणहप्पदाणं
'एगखुराणं' ति अश्वादीनां 'दुखुराणं' ति गवादीनां

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१११३. तेह चतुष्पद नें विषे, अनेक लक्षज वार।
अंतर सहितज भव करी, जाव काल करि धार।।
१११४. जेह एह जलचर तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, मच्छ-कच्छभा जोय।।
१११५. जावत ही सुसुमार फुन, तेह में बहु लख वार।
अंतर-सहितज भव करी, जाव काल करि धार।।

हिवै ३ विकलेंद्रिय नां भव कहै—

१११६. जे ए चउरिंद्रिय तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, अंधिक पोत्तिक जोय।।
१११७. जेम पन्नवणा ध्रुर पदे, जावत गोमय कीड़।
तेह विषे बहु लक्ष भव, जाव काल लहि पीड़।।
१११८. जे ए तेइंद्रिय तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, प्रथम उपचिता जोय।।
१११९. जावत हस्तीसुंड फुन, तेह विषे इम न्हाल।
करिस्यै अनेक लक्ष भव, जाव करीनें काल।।
११२०. जे ए बेइंद्रिय तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, पुला कृमिया जोय।।
११२१. जावत समुद्रलीख फुन, तेह विषे इम न्हाल।
करिस्यै अनेक लक्ष भव, जाव करीनें काल।।

हिवै एकेंद्रिय नां भव कहै छै—

११२२. जे ए वनस्पति तणां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, रूंख गुच्छा अवलोय।।
११२३. जाव भूमि-फोड़ा वली, तेह विषे इम लेह।
बहु लाखां भव जाव ही, मरि-मरि ऊपजस्येह।।
११२४. प्राये बहुलपणें करी, कटुक रूंख रै मांय।
कड़ूई वेलि विषे वली, ऊपजस्यै तिहां आय।।
११२५. सगलेई पिण शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।
ऊपजस्यै वायू विषे, विवरो तास सुणेह।।
११२६. जे ए वाऊकाय नां, भेद विधानज होय।
जे जिम छै कहियै तिमज, पूर्व वायू जोय।।
११२७. जाव शुद्ध वायू कह्यं, तेह विषे इम न्हाल।
करिस्यै अनेक लक्ष भव, जाव करीनें काल।।
११२८. जे ए तेऊ काय नां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, जे अंगारा जोय।।
११२९. जाव सूरकंत मणि तणें, निश्चित तेऊ न्हाल।
तेह विषे बहु लक्ष भव, जाव करीनै काल।।
११३०. जेह एह अपकाय नां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, ओस रात्रि-जल जोय।।

'गंडीपयाणं' ति हस्त्यादीनां 'सणहप्पयाणं' ति सनखपदानां सिंहादिनखराणां। (वृ० प० ६९३)

१११३. तेसु अणेगसयसहस्स जाव (सं० पा०) किच्चा

१११४ जाइं इमाइं जलयरविहाणाइं भवंति, तं जहा—मच्छाणं, कच्छभाणं

१११५. जाव सुंसुमाराणं, तेसु अणेगसयसहस्स किच्चा

१११६. जाइं इमाइं चउरिंदियविहाणाइं भवंति, जहा—अंधियाणं पोत्तियाणं

१११७. जहा पण्णवणापदे (१।५१) जाव गोमयकीडाणं, तेसु अणेगसय जाव (सं० पा०) किच्चा

१११८. जाइं इमाइं तेइंदियविहाणाइं भवंति, तं जहा—उवचियाणं

१११९. जाव हत्थिसोंडाणं, तेसु अणेग जाव (सं० पा०) किच्चा

११२०. जाइं इमाइं बेइंदियविहाणाइं भवंति, तं जहा—पुलाकिमियाणं

११२१. जाव समुद्दलिक्खाणं तेसु अणेगसय जाव (सं० पा०) किच्चा

११२२. जाइं इमाइं वणस्सइविहाणाइं भवंति, तं जहा—रुक्खाणं, गुच्छाणं

११२३. जाव कुहणाणं, तेसु अणेगसय जाव (सं० पा०) पच्चायाइस्सइ

'कुहणाणं' ति कुहुणानाम् आयुकायप्रभृतिभूमीस्फोटानाम्। (वृ० प० ६९४)

११२४. उस्सन्नं च णं कडुयरुक्खेसु, कडुयवल्लीसु

'उस्सन्नं च णं' ति बाहुल्येन पुनः। (वृ० प० ६९४)

११२५. सव्वत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा

११२६. जाइं इमाइं वाउक्काइयविहाणाइं भवंति, तं जहा—पाईणवायाणं

११२७. जाव सुद्धवायाणं तेसु अणेगसयसहस्स जाव (सं० पा०) किच्चा

११२८. जाइं इमाइं तेउक्काइयविहाणाइं भवंति, तं जहा—इंगालाणं

११२९. जाव सूरकंतमणिनिस्सियाणं तेसु अणेगसयसहस्स जाव (सं० पा०) किच्चा

११३०. जाइं इमाइं आउक्काइयविहाणाइं भवंति, तं जहा—ओसाणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११३१. जावत जल खाई तणुं, तेह विषे इम लेह।
बहु लाखां भव जाव ही, मरि-मरि ऊपजस्येह।।

११३२. प्राये बहुलपणैं करी, खारा जल रै मांय।
वलि खातोदक नैं विषे, ऊपजस्यै ए आय।।

११३३. सगले ही पिण शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।
ऊपजस्यै पृथ्वी विषे, विवरो तास सुणेह।।

११३४. जे ए पृथ्वीकाय नां, भेद विधानज होय।
ते जिम छै कहियै तिमज, पुढवी सक्कर जोय।।

११३५. जाव सूरकंत जाणवूं, तेह विषे इम लेह।
बहु लाखां भव जाव ही, मरि-मरि ऊपजस्येह।।

११३६. प्राये बहुलपणैं वली, खर बादर महि मांहि।
सगलै पिण लहि शस्त्र वध, जाव काल करि ताहि।।

हिवै मनुष्य गति नैं विषे ऊपजस्यै तेहनां भव कहै छै—

११३७. नगर राजगृह बाहिरे, वेश्या प्रांतपणेह।
ऊपजस्यै तिहां शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।।

वा०—अत्र टीका में कह्यो ते लिखिये छै—बाहिं खरियत्ताए त्ति नगर-बहिर्वर्त्तिवेश्यात्वेन—नगर बारे वसवा वाली वेश्यापणैं। प्रांतज वेश्यात्वेनेत्यन्ये—अनेरा आचार्य कहै—प्रांत वेश्यापणैं ऊपजस्यै।

११३८. द्वितीय वार पिण राजगृह, नगर मांहि अवलोय।
ऊपजस्यै वेश्यापणैं, शिष्ट वेश्या कहै कोय।।

वा०—अत्र टीका में कह्यो ते लिखिये छै—अंतो खरियत्ताए त्ति नगराभ्यंतर वेश्यात्वेन—नगर मांहि वेश्यापणैं। शिष्टवेश्यात्वेनेत्यन्ये—अनेरा आचार्य कहै—शिष्ट वेश्यापणैं ऊपजस्यै।

११३९. त्यां पिण पामिस शस्त्र वध, जाव काल करि जेह।
एहिज जंबूद्वीप इण, नामैं द्वीप विषेह।।

११४०. भरतक्षेत्र में विंझगिरि, तेह समीपे जाण।
विभेल सन्निवेश में, ब्राह्मण कुले पिछाण।।

११४१. ऊपजस्यै पुत्रीपणैं, मात-पिता तब तास।
बालभाव प्रति मूकियो, प्राप्त जोवन वय जास।।

११४२. एहवी पुत्री जाण करि, जोग्य दान करि जेह।
जोग्य विनय करिनैं जिको, जोग्य कंत जाणेह।।

११४३. देस्यै तसु भार्यापणैं, तिका ब्राह्मणी तास।
भार्या होस्यै इष्ट ही, कंता वल्लभ जास।।

११४४. जाव अणुमया वा लही, भंड आभरण पिछाण।
तसु करंड भाजन कह्या, तेह सरीखो जाण।।

११३१. जाव खातोदगाणं, तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता-उद्दाइत्ता तत्थेव-तत्थेव भुज्जो-भुज्जो पच्चायाइस्सइ।

११३२. उस्सन्नं च णं खारोदएसु खत्तोदएसु

११३३. सव्वत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा

११३४. जाइं इमाइं पुढविक्काइयविहाणाइं भवंति, तं जहा—पुढवीणं, सक्कराणं

११३५. जाव सूरकंताणं, तेसु अणेगसय जाव (सं० पा०) पच्चायाहिति—

११३६. उस्सन्नं च णं खरबायरपुढविक्काइएसु सव्वत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा

११३७. रायगिहे नगरे बाहिं खरियत्ताए उववज्जिहिति। तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा

वा०—'बाहिं खरियत्ताए' त्ति नगरबहिर्वर्त्तिवेश्यात्वेन प्रान्तजवेश्यात्वेनेत्यन्ये। (वृ० प० ६९४)

११३८. दोच्चं पि रायगिहे नगरे अंतो खरियत्ताए उववज्जिहिति।

वा०—'अंतोखरियत्ताए' त्ति नगराभ्यन्तरवेश्यात्वेन विशिष्टवेश्यात्वेनेत्यन्ये। (वृ० प० ६९४)

११३९. तत्थ वि णं सत्थवज्झे जाव (सं० पा०) किच्चा इहेव जंबुद्दीवे दीवे

११४०. भारहे वासे विंझगिरिपायमूले बेभेले सण्णिवेसे माहणकुलंसि

११४१. दारियत्ताए पच्चायाहिति।
तए णं तं दारियं अम्मापियरो उम्मुक्कबालभावं जोव्वणगमणुप्पत्तं

११४२. पडिरूवएणं सुक्केणं, पडिरूवएणं विणएणं, पडिरूवयस्स भत्तारस्स

'पडिरूविएणं सुक्केणं' त्ति प्रतिरूपकेन उचितेन शुल्केन—दानेन। (वृ० प० ६९५)

११४३. भारियत्ताए दलइस्सति। सा णं तस्स भारिया भविस्सति इट्ठा कंता

११४४. जाव अणुमया, भंडकरंडगसमाणा

'भंडकरंडगसमाणे' त्ति आभरणभाजनतुल्या आदेयेत्यर्थः। (वृ० प० ६९५)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११४५. तेलकेला ते तेलना, भाजन विशेष होय।
तेहनीं पर रूड़ी परै, संगोपनीय जोय ।।

११४६. वस्त्र-मंजूसा नीं परै, रूड़ी परै विमास।
उपद्रव रहितज स्थानके, जेह राखिस्यै जास ।।

११४७. रत्न-करंडिया नीं परै, रूड़ी परै आरोग्य।
राखण योग्य हुस्यै वली, सुसंगोपन योग्य ।।

११४८. रखे शीत फर्शे वली, रखे उष्ण फर्शेह।
जाव परिसह उपसर्गा, मत फर्शो इम लेह ।।

११४९. इह विधि करस्यै यत्न तसु, ताम बालिका तेह।
कदाचित अन्य दिवस ही, हुस्यै गर्भणी जेह ।।

११५०. जे ससुरा नां घर थकी, आवंती कुल गेह।
बिच दव अग्नि ज्वालक, अधिक हणास्यै देह ।।

११५१. काल अवसरे काल करि, दक्षिण अग्निकुमार।
देव विषेज सुरपणें, ऊपजस्यै तिहवार ।।

११५२. तेह तिहां थी नीकली, अंतर रहित विचार।
मनुष्य तणों तनु पामस्यै, मनु तनु लही उदार ।।

११५३. केवल सम्यक्त्व पामस्यै, पामी सम्यक्त्व सार।
केवल मुंड थई हुस्यै, गृह तजि नें अणगार ।।

११५४. तिहां पिण चरित्त विराधि नें, काल समय करि काल।
दक्षिण असुरे सुरपणें, ऊपजस्यै इम न्हाल ।।

११५५. तेह तिहां थी जाव ही, निकली नें मनु देह।
तिमहिज जावत तत्र पिण, चरित विराधी तेह ।।

११५६. काल अवसरे काल करि, दक्षिण नागकुमार।
देव विषे ते सुरपणें, ऊपजस्यै तिहवार ।।

११५७. ते तिहां थी अंतर रहित, इम इण अभिलापेह।
दक्षिण सुवन्नकुमार में, ऊपजस्यै वलि जेह ।।

११५८. दक्षिण विद्युकुमार इम, वर्जी अग्निकुमार।
जावत दक्षिण थणिय में, ऊपजस्यै तिहवार ।।

११५९. तेह तिहां थी जाव ही, निकली नें मनु देह।
लहिस्यै जावत चरित्त प्रति, तदा विराधी तेह ।।

११६०. देव जोतिषी नें विषे, ऊपजस्यै तिहां जाय।
ते तिहां थी अंतर रहित, चवी मनुष्य तनु पाय ।।

वा०—'अत्र चारित्र विराधी अग्निकुमार वर्जी नवनिकाय नें जोतिषी में ऊपजस्यै, एहवूं कह्यूं। ते सम्यक्त्व नो पिण विराधक संभवै ते किम? जे सम्यग्दृष्टि मनुष्य अनैं तिर्यंच रै वैमानिक देवायु विना अन्य आउखा रो बंध न पड़ै, एहवूं सूत्रे कह्यो छै ते माटै। नव निकाय अनैं जोतिषी देवायु नो बंध पड़स्यै ते वेला सम्यक्त्व चारित्र दोनूं नहीं, एहवूं न्याय जाणवो।' (ज० स०)

११४५. तेल्लकेला इव सुसंगोविया
'तेल्लकेला इव सुसंगोविय' त्ति तैलकेला इव—तैलाश्रयो भाजनविशेषः सौराष्ट्रप्रसिद्धः सा च सुष्ठु संगोपनीया। (वृ० प० ६९५)

११४६. चेलपेडा इव सुसंपरिग्गहिया,
'चेलपेडा इव सुसंपरिग्गहिय त्ति चेलपेडावत्—वस्त्रमञ्जूषेव सुष्ठु संपरिवृत्ता (गृहीता)—निरुपद्रवे स्थाने निवेशिता। (वृ० प० ६९५)

११४७. रयणकरंडओ विव सुसारक्खिया, सुसंगोविया,

११४८. मा णं सीयं, मा णं उण्हं जाव परिसहोवसग्गा फुसंतु।

११४९. तए णं सा दारिया अण्णदा कदायि गुव्विणी

११५०. ससुरकुलाओ कुलघरं निज्जमाणी अंतरा दवग्गिजालाभिहया

११५१. कालमासे कालं किच्चा दाहिणिल्लेसु अग्गिकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति।

११५२. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति, लभित्ता

११५३. केवलं बोहिं बुज्झिहिति, बुज्झित्ता मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिति।

११५४. तत्थ वि य णं विराहियसामण्णे कालमासे कालं किच्चा दाहिणिल्लेसु असुरकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति।

११५५. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं जाव (सं० पा०) तत्थ वि य णं विराहियसामण्णे

११५६. कालमासे कालं किच्चा दाहिणिल्लेसु नागकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति।

११५७. से णं तओहिंतो अणंतरं एवं एएणं अभिलावेणं दाहिणिल्लेसु सुवण्णकुमारेसु,

११५८. एवं विज्जुकुमारेसु, एवं अग्गिकुमारवज्जं जाव दाहिणिल्लेसु थणियकुमारेसु।

११५९. से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति जाव (सं० पा०) विराहियसामण्णे

११६०. जोइसिएसु देवेसु उववज्जिहिति। से णं तओहिंतो अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११६१. जावत चरित्त आराध नें, काल मास करि काल ।
सुधर्म कल्पे सुरपणैं, ऊपजस्यै सुविशाल ।।

११६२. ते तिहां थी अंतर रहित, चयं चइत्ता धार ।
मनुष्य तणुं देह पामिस्यै, लहिस्यै सम्यक्त्व सार ।।

११६३. तिहां पिण चरित्त अराध नें, काल मास करि काल ।
सनत्कुमारे सुरपणैं, ऊपजस्यै सुविशाल ।।

११६४. ते तिहां थी इम जिम कह्यूं, सनत्कुमार विषेह ।
तिम ब्रह्मलोके महाशुक्र, आणत आरण जेह ।।

११६५. तेह तिहां थी जाव ही, चरित्त अराध उदार ।
काल अवसरे काल करि, संजम तप फल सार ।।

११६६. सर्वार्थसिद्ध नाम वर, महाविमाण विषेह ।
ऊपजस्यै ते सुरपणैं, लवसत्तमा सुर तेह ।।

११६७. तेह तिहां थी अंतर रहित, चयं चइत्ता सोय ।
क्षेत्र महाविदेह नैं विषे, जेह एह कुल होय ।।

११६८. ऋद्धि प्रतिपूर्ण जाव ही, अपरिभूत कहेह ।
तथा प्रकार नां कुल विषे, पुंपणैं उपजस्येह ।।

११६९. इम जिम उववाई विषे, दृढपइन्न तणोज ।
वक्तव्यता तेहिज सहु, वक्तव्यता भणवीज ।।

११७०. जावत केवलज्ञान वर, दर्शण ऊपजस्येह ।
तिण अवसर ते केवली, दृढ्प्पइणो जेह ।।

११७१. काल अतीतज आपणो, देखै देख अतीत ।
श्रमण निर्ग्रंथ तेड़ावस्यै, तेड़ावी सुवदीत ।।

११७२. इहविध कहिस्यै हे अज्जो ! इम निश्चै करि जाण ।
घणै अतीत कालेज हूं, इहां थकी पहिछाण ।।

११७३. मंखलिसुत गोशाल थो, श्रमण-वधक दुखकार ।
जाव छद्मस्थपणैंज म्हैं, काल कियो तिहवार ।।

वा०—जाव छदमस्थ थकोज निश्चै काल प्राप्त थयो ते मूल जाणवो ।

११७४. हे अज्जो ! ते मूल हूं, आदि रहित अवलोय ।
अंतर रहित फुन जाणवूं, दीर्घ काल तसु जोय ।।

११७५. चातुरंत संसार जे, तेह रूप अटवीह ।
एहवा जे संसार प्रति, म्है बहु भ्रमण करीह ।।

वा०—'कोइ पूछै—गोशालो अनेक लाखां भव करिस्यै, एहवूं पूर्वे कह्यु । अनैं इहां आदि-अंत-रहित कह्युं ते किम ? उत्तर—आदि-अंत रहित दीर्घ काल एहवी संसार रूपणी अटवी बखाणी । एहवी अटवी नैं विषे म्है परिभ्रमण कीयो, इम गोशालो केवली थई कहिस्यै । पिण हूं अनंत काल रूल्यो इम कहिस्यै, एहवूं न कह्युं ।

वलि इहां अनादि अनंत कह्यो, पिण गोशाला नैं तो संसार नो अंत आवस्यै । तै माटै ए अनादि-अनंत ते संसार रूपिणी अटवी बखाणी । तथा भगवती शतक ८ उ० १० वृत्ति में सम्यक्त्व नां आराधक नैं तथा देशविरत नां

११६१. जाव (सं० पा०) अविराहियसामण्णे कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति ।

११६२. से णं तओहिंतो अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति ।

११६३. तत्थ वि णं अविराहियसामण्णे कालमासे कालं किच्चा सणंकुमारे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति ।

११६४. से णं तओहिंतो एवं जहा सणंकुमारे तहा बंभलोए, महासुक्के, आणए, आरणे ।

११६५. से णं तओहिंतो जाव (सं० पा०) अविराहियसामण्णे कालमासे कालं किच्चा

११६६. सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति ।

११६७. से णं तओहिंतो अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे जाइं इमाइं कुलाइं भवंति—

११६८. अड्ढाइं जाव अपरिभूयाइं, तहप्पगारेसु कुलेसु पुत्तत्ताए पच्चायाहिति ।

११६९. एवं जहा ओववाइए (सू० १४२-१५३) दढप्पइण्ण-वत्तव्वया सच्चेव वत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा ।

११७०. जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिति ।
(श० १५।१८६)

तए णं से दढप्पइण्णे केवली

११७१. अप्पणो तीतद्धं आभोएहिइ, आभोएत्ता समणे निग्गंथे सद्दावेहिति, सद्दावेत्ता

११७२ एवं वदिहिइ—एवं खलु अहं अज्जो ! इओ चिरातीयाए अद्धाए

११७३. गोसाले नामं मंखलिपुत्ते होत्था—समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए ।

११७४. तम्मूलगं च णं अहं अज्जो ! अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं

११७५. चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टिए ।

'अट्ठभवा उ चरित्ते' त्ति श्रुतसम्यक्त्वदेशविरति-भवास्त्वसंख्येया उक्ताः (भग० वृ० प० ४२०)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आराधक नैं उत्कृष्ट असंख्याता भव कह्या। इमहिज अणुयोगद्वारे अर्थ में कह्यो। अनें गोशालो छेहली रात्र सम्यक्त पाय काल कियो। ते माटै एहनां अनंत भव किम हुवै ? न्याय दृष्टे विचारी जोयजो।' (ज०स०)

११७६. ते माटै आर्यो ! अहो, तुम्हे म थावो कोय।
प्रत्यनीक आचार्य नों, उपाध्याय नों जोय।।
११७७. आचार्य उवज्झाय नों, अजशकार मति होय।
अवर्णकारक मत हुओ, अकीर्त्तिकारक जोय।।
११७८. इम निश्चै करिनैं तिको, आचार्य उवझाय।
तसु अजशादिक कारको, अनादि अनंत ताय।।
११७९. जावत संसार रूपणी, एहवी अटवी मांहि।
परिभ्रमण करिसौ रखै, जिम हूं तिह विध ताहि।।
११८०. श्रमण निर्ग्रंथ तिण अवसरे, दृढ़पइण्ण जिन पास।
एह अर्थ निसुणी करी, हृदय धार वच तास।।
११८१. बीहनां त्राठा वलि लह्यं, चित्त उद्वेग सुत्रास।
वलि संसार नां भय थकी, लह्यु उद्वेग विमास।।
११८२. केवली दृढपइण्ण प्रति, वंदणा करिस्यै जाण।
नमस्कार करिस्यै वली, आलोवस्यै ते स्थान।।
११८३. वलि ते स्थानक निंदस्यै, जाव प्रायश्चित्त पेख।
पड़िवजस्यै तन मन करी, केवली वचन अवेख।।
११८४. तिण अवसर ते केवली, दृढपइण्णेण ताय।
बहु वर्षां लग पालस्यै, केवल नीं पर्याय।।
११८५. केवल पर्याय पालि नैं, शेष आयु निज जाण।
करिस्यै भत्तपच्चखाण प्रति, महामुनी गुणखाण।।
११८६. इम जिम उववाई विषे, आख्यूं कहिवूं तेम।
जाव अंत सहु दुक्ख नों, करिस्यै लहिस्यै खेम।।
११८७. सेवं भंते ! तहत्ति इम, कही गोयम बे वार।
जावत विचरै चरण तप, भावित आतम उदार।।
११८८. तेज लेश जे तेहनो, नीकलवो ते रूप।
अध्ययन संपूर्ण थयो, अर्थ रूप तद्रूप।।
११८९. थयुं संपूरण पनरमो, एकसरो शत एह।
उद्देशक नहिं ते विषे, अमल अर्थ गुणगेह।।

गीतक छंद

११९०. महावीर नां सुप्रसाद थी गोशाल अहंकृति जिम नशी।
तिमहीज मम सहु विघ्नराशि-विनास थी अति उल्लसी।।
गणनाथ भिक्षू दीर्घमाल[1] नृपेंदुना[2] सुप्रसाद थी।
शय पनरमा नीं जोड 'जय-गणि' रची धर अहलाद थी।।

पञ्चदशं गोशालाख्यं शतकं समाप्तम्

११७६. तं मा णं अज्जो ! तुब्भं केयि भवतु आयरिय-
पडिणीए उवज्झायपडिणीए।
११७७. आयरियउवज्झायाणं अयसकारए अवण्णकारए
अकित्तिकारए।
११७८. मा णं से वि एवं चेव अणादीयं अणवदग्गं
११७९. जाव (सं० पा०) संसारकंतारं अणुपरियट्टिहिति,
जहा णं अहं। (श० १५।१८७)
११८०. तए णं ते समणा निग्गंथा दढप्पइण्णस्स केवलिस्स
अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म
११८१. भीया तत्था तसिया संसारभउव्विग्गा।
११८२. दढप्पइण्णं केवलिं वंदिहिंति नमंसिहिंति, वंदित्ता
नमंसित्ता तस्स ठाणस्स आलोएहिंति
११८३. निंदिहिंति जाव अहारियं पायच्छित्तं तवोकम्मं
पडिवज्जिहिंति। (श० १५।१८८)
११८४. तए णं से दढप्पइण्णे केवली बहूइं वासाइं केवलि-
परियागं पाउणिहिति,
११८५. पाउणित्ता अप्पणो आयुसेसं जाणेत्ता भत्तं पच्च-
क्खाहिति।
११८६. एवं जहा ओववाइए (सू० १५४) जाव सव्व-
दुक्खाणमंतं काहिति। (श० १५।१८९)
११८७. सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।
(श० १५।१९०)

११९०. श्रीमन्महावीरजिनप्रभावाद्,
गोशालकाहंकृतिवद्गतेषु।
समस्तविघ्नेषु समापितेयं,
वृत्तिः शते पञ्चदशे मयेति।।

---

१. आचार्य भारीमालजी
२. आचार्य रायचन्दजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

११६१. पनरम विण सहु शतक नीं, प्रथम जोड़ जय किद्ध ।
पछै पनरमा शतक नीं, रची जोड़ सुप्रसिद्ध[1] ।।

११६२. वर्ण अद्धा निधि चंद जे, भाद्रव कृष्ण सुपक्ष[2] ।
द्वाविंशति छप्पन प्रवर, मुनि अज्जा गुण दक्ष ।।

---

१. जयाचार्य 'भगवती जोड़' की रचना कर रहे थे। चौदह शतक की जोड़ पूरी हो गई। पन्द्रहवें शतक में गोशालक का अधिकार है। आचार्य भिक्षु ने उसे आधार बनाकर गोशालक का आख्यान लिखा। उस आख्यान की ४१ ढालें हैं। जयाचार्य ने आचार्य भिक्षु की रचना का सम्मान करते हुए वह शतक यों ही छोड़ दिया और आचार्य भिक्षु रचित ४१ ढालों को जोड़ के साथ जोड़कर सोलहवें शतक का प्रारम्भ कर दिया।

भगवती जोड़ की रचना वि० सं० १९२४ में सम्पन्न हो गई। एक दशक बाद युवाचार्य मघवा तथा कुछ बुजुर्ग साधुओं ने निवेदन किया—'गुरुदेव ! स्वामीजी के प्रति आपके विनय और सम्मान का औचित्य है पर इतने बड़े और महत्त्वपूर्ण आगम की जोड़ को पूरा करना भी आवश्यक है।' उनके विशेष अनुरोध पर जयाचार्य ने पन्द्रहवें शतक की जोड़ रची पर रचना का क्रम बदल दिया। अन्य सभी शतकों में रागिनी बद्ध ढाले हैं जबकि प्रस्तुत शतक दोहों में निबद्ध है।

चौदह शतक तक ढालों की संख्या ३०५ है। सोलहवें शतक का प्रारम्भ ३४७ वीं ढाल से होता है। बीच की संख्या आचार्य भिक्षु रचित 'गोशालक आख्यान' की ४१ ढालों की गणना से पूरी कर दी गई। पन्द्रहवें शतक की रचना एक दशक बाद हुई यह बात जयाचार्य कृत इसी दोहे से प्रमाणित होती है। इस दृष्टि से उस आख्यान को पन्द्रहवें शतक के परिशिष्ट में दिया गया है।

२. पन्द्रहवें शतक की जोड़ का रचनाकाल वि० सं० १९३४ भाद्रपव मास का कृष्णपक्ष है। इसका संकेत प्रस्तुत पद्य में है। संस्कृत में संख्या की गणना का क्रम उलटा रहता है। उस समय संवत तिथि आदि का आकलन प्रायः प्रतीकात्मक शब्दों के द्वारा किया जाता था। जयाचार्य ने भी उसी क्रम को स्वीकार किया है। प्रस्तुत पद्य में चार शब्द हैं—वर्ण, अद्धा, निधि और चंद। चन्द्रमा १ होता है। निधियां ९ होती हैं। अद्धा—काल ३ होते हैं—भूत, भविष्य और वर्तमान तथा वर्ण ४ होते हैं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इस प्रकार १९३४ की संवत इस शतक का रचनाकाल है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट-१

गोसाला री चौपई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोसाला री चौपई

दूहा

अरिहंत सिद्ध नैं आयरिया, उवझाया सगला साध ।
मुगत नगर नां दायका, ए पांचू पद आराध ।।१।।
नमूं वीर सासणधणीं, सुतर देव अरिहंत -
भाख्या ते गणधरां गूंथिया, ते आगम सार सिद्धंत ।।२।।
भगोती रा पनरमां सतक में, गोसाला रो इधकार ।
तिण अनुसारे हूं कहूं, ते सांभलजो विसतार ।।३।।
तिण काले नै तिण समे, नगरी सावत्थी नाम ।
तिहां कोठग नामे बाग थो, इसाण कूण नैं ठाम ।।४।।
हलाहल कुंभारी तिहां वसै, तिणरै रिध घणीं घर मांहि ।
ते गोसाला री छै श्रावका, मत झाल रही छै ताहि ।।५।।
ते गोसाला रा सिद्धंत रा, लाधा छै अर्थ अनेक ।
वले अर्थ ग्रह्या नैं पूछिया, निरणो कीधो छै वशेष ।।६।।
हाड मींजा रंगी तेहनीं, गोसाला रा धर्म में ताहि ।
अर्थ परम-अर्थ गिणे तेहनें, सेस गिणै छै अनर्थ मांहि ।।७।।
इणविध आतमा भावती, विचरै छै दिन रात ।
ते जाणै तीर्थंकर तेहनैं, तिणरै संका नहीं तिलमात ।।८।।

ढाल : १

[मम करो काया माया कारमी]

तिण हलाहल कुंभारी री जायगां मझे, पिरवार सहित आयो तास जी ।
तिण काले गोसाला नै हुवा, पवज्जा लियां चौबीस वास जी ।।
भाव सुणो गोसाला तणां ।।१।।

छ दिसाचर पास-संतानिया, ते पूर्वधारी था ताय जी।
त्यां जस कीरत सुण गोसाला तणी, ते मिलिया गोसाला में आय जी ।।२।।
साण कलंद कणियार नैं, अछिद्र अगीवेसायण ताम जी ।
छठो गोमाउ नों पुत्र अर्जुन, ए छ दिसाचर नां नाम जी ।।३।।
जब गोसालो मन हरषत हुवो, ज्यूं डाकण नैं जरख मिलै आण जी ।
ज्यूं लीधी असवारां सांढ्यां भणी, ए दिष्टंत लीजो पिछाण जी ।।४।।
आठ महानिमत सास्त्र तके, गोसालो भण्यो मुख पाठ जी ।
तिणसूं लोकां नैं भरमाय नें, सिष-सिषणी रो कियो थाट जी ।।५।।
भूम[1] कंपै उतपात[2] हुवै वले, सुपना[3] रो जाणै विचार जी ।
उलकापात[4] हुवै लोक में, ते फल रो जाणै विसतार जी ।।६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंग[१] फुरकै डावो जीमणो, तेहनां पिण अर्थ नों जाण जी।
स्वर[२] कागादिक तेहनां, ते पिण लिया पिछाण जी ॥७॥
मस तिलकादिक बंजणा[७], लषण[८] सास्त्र जाणें ताम जी।
ए आठ महानिमत्त सास्त्र भण्यो, ते परूप रह्यो ठाम-ठाम जी ॥८॥
तिणसूं छह वागरणा मुख वागरै, जोतक भाखै अनेक जी।
तिणसूं लोक मत में पड़चा घणां, इहलोक रा अर्थी विशेष जी ॥६॥
ते लाभ[१] अलाभ[२] परूपतो, सुख[३] दुख[४] परूपै छै तेह जी।
जीवन[५] मरण[६] परूपतो, आ मुदे सिद्धाई छै एह जी ॥१०॥
तिणसूं कहै सावत्थी नगरी मझे, हूं जिण वीतराग स्वमेव जी।
हूं अरिहन्त छूं केवली, हूं सतवादी देवातदेव जी ॥११॥
गोसालो नहीं अरिहंत केवली, ओ झूठाबोलो छै साख्यात जी।
पिण जिण अरिहंत ज्यूं पूजावतो, संकै नहीं तिलमात जी ॥१२॥
घणां लोक मांहोमांहि इम कहै, आजूणां काल रै मांय जी।
गोसालोजी तीर्थंकर चोबीसमों, कोइ संक म राखजो कांय जी ॥१३॥
सावत्थी नगरी में फेलियो, गोसाला रो गूढ मिथ्यात जी।
घणां लोक गोसाला रा मत मझे, ते किण री सरधै नहीं बात जी ॥१४॥

० ० ०

दूहा

तिण काले नें तिण समे, भगवंत श्री महावीर।
ते तीर्थंकर चोबीसमां, विचरत साहस धीर ॥१॥

गांवां नगरां विचरता, करता पर उपगार।
सावत्थी नगरी पधारिया, साथे साधां रो बहु पिरवार ॥२॥

सावत्थी नगरी रै बाहिरे, इसाण कूण रै मांय।
तिहां कोठग नामे बाग थो, ते छहूं रित सुखदाय ॥३॥

तिण बाग मांहे वीर ऊतर्‌या, भव जीवां रै भाग।
मारग दिखावै मोख रो, उपजावै वैराग ॥४॥

ढाल : २

[अरिहंत मोटका ए]

भगवंत भलांइ पधारिया ए, भव जीवां रा तारणहार।
समझावै नर-नार नें ए, उतारै भव-जल पार ॥
भगवंत भलां आविया ए ॥१॥ आं०

सावत्थी नगरी में फेलियो ए, गोसाला रो गूढ़ मिथ्यात।
ते काढण आविया ए, सयमेव श्री जगनाथ ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्यां राग धेष दोय खय किया ए, वले नहिं किण री पखपात ।
निंद्या नहीं केहनी ए, नहीं य खुसामदी री बात ।।३।।
सावत्थी नगरी नीं परषदा ए, वाणी सुणे हरषत थाय ।
वंदणा करे वीर नें ए, आया था जिण दिस जाय ।।४।।
पेहिले पोहर गोतम सभ्काय करी ए, बीजे पोहर ध्यानज ध्याय ।
तीजे पोहर गोचरी ए, उठया सावत्थी नगरी रे मांय ।।५।।
लोक सावत्थी नगरी तणां ए, ठाम-ठाम करै इम बात ।
गोसालो जिण केवली ए, चौबीसमों जगनाथ ।।६।।
ए वचन गोतम सामी सांभल्यो ए, पाछा आया भगवंत पास ।
आहार देखाय नें ए, हिवै प्रश्न पूछै आण हुलास ।।७।।
हूं आप तणी लेई आगना ए, गयो सावत्थी नगरी रै मांय ।
तिहां लोक बातां करै ए, कहै गोसालो छै जिनराय ।।८।।
जो इच्छा हुवै सामी आपरी ए, तो किरपा करे कहो जगनाथ ।
उठाणपरिया[1] एहनीं ए, मांड कहो सहु बात ।।९।।

० ० ०

दूहा

गोतमादिक सहु साधां भणीं, बोलाय कहै भगवंत ।
जे गोसाला नें तीर्थंकर कहै, ते भूठ बोलै छै एकंत ।।१।।
ओ मंखलीपुत्र डाकोतरो, डाकोतरा री जात ।
हिवै धुर सुं उतपत तेहनीं कहूं, ते सुणजो विख्यात ।।२।।

ढाल : ३

[कपूर हुवै अति ऊजलो जी]

मखली भिख्याचर डाकोतरो जी, पाटिया दिखालै चित्राम ।
आजीवका करतो फिरै जी, तिणरै भद्रा अस्त्री नो नाम हो ।।
गोतम ! सुण गोसाला रो विरतंत ।।१।। आं०
ते गर्भवती भद्रा हुई जी, ते गोसालो गर्भ में ताम ।
तिण अस्त्री नें साथे लियां फिरै जी, गांव परगाम ठाम-ठाम हो ।।२।।
तिण काले नें तिण समे जी, सरवण नामे सनीवेस ।
तिहां सुखिया लोक वसै घणां जी, त्यांरै रिध रो घणो परवेस हो ।।३।।
तिहां गोबहुल नामे ब्राह्मण वसै जी, तिण रै रिध घणीं घर मांहि ।
ते च्यार वेद रो जाण थो जी, त्यांरा अनेक सास्त्र जाणै ताहि हो ।।४।।
तिण ब्राह्मण रै गउसाला हुंती जी, ते मोटी घणीं थी ताहि ।
मंखली भद्रा सहित फिरतो थको जी, आय उतरियो तिण मांहि हो ।।५।।

---

१. उठाणपरियाणिय—आद्योपान्त वृतांत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण गऊसाला में जनमियो जी, तिण सूं दियो गोसालो नाम।
ते बालभाव मूक्यां पछै जी, जोवन प्रापत हुवो ताम हो ॥६॥
कला चुतराई परगट हुई जी, पाटीए चित्र्या रूप अनेक।
ते पिण हाथे लियां फिरै जी, करै पेटभराई विशेष हो ॥७॥
हूं तीस वरस घर में रह्यो जी, पछै लीधो मैं संजम हुलास।
पख-पख खमण करतो पारणो जी, अठी-गाम कियो चौमास हो ॥८॥
बीजे वरस मास-मास पारणो जी, हूं करतो थो एकण धार।
हूं नगरी राजगृही आवियो जी, नालंदा पाड़ा मझार हो ॥९॥
तिण नालंदा पाड़ा मझै जी, तंतूवाय-साला थी तिण मांय।
तिहां आग्या लेई हूं ऊतरचो जी, तिण में दियो चौमासो ठाय हो ॥१०॥
गोसालो पिण तिण अवसरे जी, तंतूवाय-साला में आय।
एक देस में उपगरण मेलनै जी, गयो राजग्रही नै मांय हो ॥११॥
कठै जायगां न मिली तेहनै जी, जब पाछो आयो तिण ठाम।
तंतूवाय-साला रा एक देस में जी, ओ पिण रह्यो चौमासो ताम हो ॥१२॥
पहिला मासखमण रो म्हारै पारणो जी, जब लेवा नै उठचो आहार।
तंतुवाय-साला थी बारै नोकल्यो जी, आयो राजग्रही नगर मझार हो ॥१३॥

० ० ०

दूहा

हूं राजग्रही नगरी मझै, करतो सुध गवेस।
विजै गाथापती तेहनां, घर में कियो परवेस ॥१॥
तिण मोनै आवतो देखनै, घणों हरष हुवो मन मांहि।
वले संतोष पाम्यो अति घणों, वले भगत विनो कियो ताहि ॥२॥

ढाल : ४

[वीर बखाणी राणी चेलणा जी]

तिण आसण छोड्चो उतावलो जी, वले उभो हुवो मान मरोड़।
वले कियो उतरासंग जुगत सूं जी, वले अंजली कीधी कर जोड़।
साधजी भलांई पधारिया जी ॥१॥ आं०

सात-आठ पग साहमो आयनै जी, लुल-लुल नीचो जी थाय।
तीन परदिषणा दै मो भणी जी, वंदणा कीधी सीस नमाय ॥२॥
आज मांहरी रै जागी दशा जी, पूगी म्हांरा मन तणी कोड़।
आज भलो भाण ऊगियो जी, आज भाग कियो म्हारै जोर ॥३॥
आज करतारथ हूं थयो जी, मुनिवर आया म्हारै बार।
ज्यांरै पुरषां तणी चावना जी, त्यांरो म्है दीठो दीदार ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुणग्राम किया म्हांरा अति घणां जी, ते पिण वारूं जी वार।
भाव सहित मोनै वांदिया जी, भाव सूं कियो नमसकार ॥५॥
मौनै रसोड़ाघर मांहे ले जाय नै जी, प्रतिलाभ्या च्यारूंई आहार।
दान देतां नै दियां पछै जी, पामियो हरष अपार ॥६॥
दरब दातार दोनूं सुध था जी, तीजो पातर सुध जाण।
वले सुध तीन करण तीन जोग रो जी, इणरै इसड़ो मिलियो जोग आण॥७॥
इणविध मोने प्रतिलाभियो जी, असणादिक च्यारूंई आहार।
तिहां देव आऊखो तिण बांधियो जी, वले कीधो तिण परत संसार ॥८॥
तिहां सुगंध पाणी देव वरसावियो जी, वले बूठा पंचवर्ण फूल।
वले बिरखा करी सोवन तणी जी, बूठा वले वसतर अमूल ॥९॥
देव बजाई देवदुंदभी जी, आकास रै अंतर ठाम।
मोटे सब्दे घोष पारियो जी, दान रा किया गुणग्राम ॥१०॥
धिन-धिन करै छै देवता जी, धिन-धिन करै नर-नार।
विजै गाथापति नै कहै जी, इण सफल कियो अवतार ॥११॥
वले राजग्रही नगरी मझे जी, घणां लोक करै गुणग्राम।
इण जीतब जनम सुधारियो जी, तिण साध प्रतिलाभिया ताम ॥१२॥
पांच दरब परगट हुवा जी, ओ पिण लोकां इचरज देख।
तिणसूं ठाम-ठाम बातां करै जी, विवरा सुध वशेख ॥१३॥

० ० ०

दूहा

ए बात गोसाले सांभली, घणां लोकां रै पास।
ते सांसो काढण भणी, चाल्यो आण हुलास ॥१॥
तिण विजै तणो घर छै तिहां, आयो गोसालो ताम।
सोनइयादिक फूलां तणां, गिंज दीठा तिण ठाम ॥२॥
तिण विजय तणां घर मांहि थी, मौनै नीकलतो देख।
जब इण म्हांरा गुण जाण नै, हरषत हुवो वशेख ॥३॥
मुझनै आय वंदणा करी, बोल्यो जोड़ी हाथ।
थे धर्माचारज मांहरा, हुं सिष थारो सामीनाथ ॥४॥
ए वचन सुणे म्है गोयमा ! इणनैं आदर न दियो ताम।
वले भलो न जाण्यो एहनै, मून साझी तिण ठाम ॥५॥
तिवार पछै हूं गोयमा ! तिहां पाछो आयो चलाय।
बीजो मासखमण मैं पचखियो, तंतूवायसाला में आय ॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : ५

[सल्ल कोई मत राखज्यो]

बीजा मासखमण रै हूं पारणे, राजग्रही नगरी में आयो जी।
तिहां आणंद गाथापति वसै, हूं गयो तिण रा घर मांह्यो जी।।
वीर कहै सुण गोयमा ! ।।१।। आं०

आणंद हरष्यो मौनै देखी आवतो, विनो कियो रूड़ी रीतो जी।
विजय गाथापती नीं परे, अंतरंग भाव-भगत सहीतो जी।।२।।
मौनै रसोड़ाघर में लेजाय नै, खंड खाजादिक विविध पकवानो जी।
मोनै प्रतिलाभे हरष्यो घणों, संतोष पाम्यो देइनै दानो जी।।३।।
तिण देव आऊखो बांधियो, वले कीधो परत संसारो जी।
सेष विजै जिम जाणजो, सगलोई विसतारो जी।।४।।

जब पिण गोसालो मो आगले, विनो कर बोल्यो जोड़ी हाथो जी।
थे धर्माचारज मांहरा, हूं सिष थांरो सामीनाथो ! जी।।५।।
जब पिण आरे इणनै म्है नहिं कियो, मून साझे रह्यो तायो जी।
वले मासखमण तीजो पचखियो, तंतूवाय-साला में आयो जी।।६।।
तीजा मासखमण रै पारणे, हूं राजग्रही में आयो जी।
तिहां सुदंसण गाथापति वसै, हूं गयो तिणरा घर मांह्यो जी।।७।।
मोनै देख्यो सुदंसण आवतो, विनो कियो रूड़ी रीतो जी।
विजै गाथापति नीं परे, अंतरंग भाव-भगत सहीतो जी।।८।।
मोनै रसोड़ाघर में ले जाय नै, सर्व गुण भोजन सरस आहारो जी।
मौनै भाव सहित प्रतिलाभियो, हरष संतोष पाम्यो अपारो जी।।९।।

इण पिण देव आऊखो बांधियो, इण पिण कियो परत संसारो जी।
विजै ज्यूं सगलोई जाणजो, गोसाला सुधो विसतारो जी।।१०।।
जब पिण गोसाला मो आगले, विनो करे बोल्यो जोड़ी हाथो जी।
थे धर्माचारज मांहरा, हूं सिष थांरो सामीनाथो ! जी।।११।।
जब पिण इण नै आरे म्है नहिं कियो, मून साझी रह्यो ताह्यो जी।
वले मासखमण चोथो पचखियो, तंतूवाय-साला रै मांह्यो जी।।१२।।
तिण नालंदा पाड़ा थी ढूंकरो, कोलाग नामे सनिवेसो जी।
तिहां बहुल नामे ब्राह्मण वसे, तिण रै रिध प्रभूत वसेसो जी।।१३।।
ते च्यारूंई वेद रो जाण थो, ब्राह्मण रा सास्त्र जाण्या अनेको जी।
तिण काती चौमासी जीमण कियो, मधु घ्रत संजुगत विशेषो जी।।१४।।
चोथा मासखमण रै हूं पारणे, आयो कोलाग संनिवेसो जी।
तिहां बहुल ब्राह्मण रै घरे, म्है तिण में कियो परवेसो जी।।१५।।
तिण पिण मोनै आवतो देखनै, विनो कियो रूड़ी रीतो जी।
विजै गाथापति नीं परे, अंतरंग भाव भगत सहीतो जी।।१६।।
मोनै रसोड़ाघर में ले जाय नै, घ्रत मधु संजुगत आहारो जी।
मोनै भाव सहीत प्रतिलाभियो, हरष संतोष पाम्यो अपारो जी।।१७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इण पिण देव आऊखो बांधियो, कीधो परत संसारो जी।
विजै गाथापति ज्यूं जाणजो, सगलोई विसतारो जी।।१८।।

०

दूहा

जब गोसाले मोनै दीठो नहीं, तंतूवाय-साला रै मांहि।
जब मोनै जोयवा नीकल्यो, नगरी राजग्रही मांहि।।१।।
तिहां न दीठो मो भणी, जब जोवण गयो नगरी बार।
सर्व दिस विदिस घणों जोवियो, पिण खबर न पामी लिगार।।२।।
उण कठेइ न दीठो मो भणी, ते विलखो हुवो अथाय।
खप खीजे पाछो आवियो, तंतूवाय-साला रै मांय।।३।।
तिहां पाटियादिक दूरा किया, बणायो साधु रो वेस।
तंतूवाय-साला थी नीकल्यो, आयो कोलाग नामे सनिवेस।।४।।
कोलाग सनिवेस रै बाहिरे, लोक कहै मांहोमांहि आम।
धिन-धिन करै बहुल ब्राह्मण भणी, विजै नीं परे करै गुणग्राम।।५।।

ढाल : ६

(सांमी म्हांरा राजा नें धर्म सुणावज्यो)

मुझनै मूकीनै थे किहां गया? कहै गोसालो आम हो।
स्वामी! थे मुझनै मूकी नै किहां गया?
गुर विण चेलो किहां रहे, किहां पामै विसराम हो।।
सामी! थे मुझनै मूकीनै किहां गया।।१।। आं०

थां ऊपर म्हांरो अति घणों, हूंतो अतंत सनेह हो।
इसड़ा सिष सुवनीत नैं, थे कांय दे चाल्या छेह हो।।२।।
एहवी करे विचारणा, चाल्यो तिहां थी ताम हो।
कोलाग नामे सनिवेस छै, आय जोया तिण ठाम हो।।३।।
कोलाग सनिवेस बाहिरे, कहै मांहोमांहि आम हो।
बहुल नामे ब्राह्मण तणां, लोक करै गुणग्राम हो।।४।।
ए वचन गोसाले सांभल्यो, घणां लोकां रै पास हो।
जब सांसो मन ऊपनों, पछै बोल्यो मन में विमास हो।।५।।
जेहवी रिध जोत छै म्हांरा गुरु तणी, जस बल वीर्य वशेख हो।
वले प्राक्रम त्यांमें अति घणों, इत्यादिक गुण अनेक हो।।६।।
धर्माचारज मांहरा, भगवंत श्री विरधमान हो।
इसड़ो म्हे एक दीठो नहीं, बले नहिं सुणियो म्है कान हो।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इहां धर्माचारज मांहरा, आया दीसै इण गाम हो।
इसड़ी करे विचारणा, जोवा लागो तिण ठाम हो ।।८।।
कोलाग सनिवेस तेह में, जोवै अभितंर बार हो।
सर्व दिस विदिस जोवै तिहां, फिरै छै एकणधार हो ।।९।।
कोलाग सनिवेस बाहिरे, मनोज्ञ भूमि रसाल हो।
म्है कियो विसराम तिण ऊपरे, तिहां आयो गोसालो तिण काल हो ।।१०।।
तिहां गोसाले मोनै देखनै, हरष्यो घणों मन मांय हो।
तीन प्रदिखणा दे वांदनें, विनो करे बोल्यो वाय हो ।।११।।
थे धर्माचारज मांहरा, हूं सिष थांरो सुवनीत हो।
हूं धर्म-अंतेवासी तेहनैं, मोनै मेल आया इण रीत हो ।।१२।।
आप विहार कियां पछै, हूं हुवो अतंत उदास हो।
मोनै साला लागी डरावणी, हूं नीठ आयो तुम पास हो ।।१३।।

० ० ०

दूहा

हूं राजग्रही जोवण गयो, तिहां जोया अभितर बार।
म्है कठेय न दीठा आपनै, जब हुई फिकर अपार ।।१।।
पछै कोलाग सनिवेस छै तिहां, आय जोया ठाम-ठाम।
तिहां जस कीरत सुणी आपरी, मोनै धीरज आई ताम ।।२।।
थे धर्माचारज मांहरा, हूं रहसूं आप समीप।
मोनै अलगो आप म मेलजो, हूं पिण आतमा लेसूं जीप ।।३।।
ए वचन सुणी नें गोयमा ! इणनें म्है कीधो अंगीकार।
जब गोसाले मो साथे कियो, रमणीक भूम थी विहार ।।४।।
लाभ अलाभ सुख नै दुख, वले सतकार नै असतकार।
छह वरस लगे इण भोगव्या, मो साथे लगे तिण वार ।।५।।

ढाल : ७

(वेरागे मन वालियो)

अणिच जागरणा जागतो, परिसा सहै दिन रात।
हिवं करम जोगे तेहनै, किण विध आवै मिथ्यात ।।
वीर कहै सुण गोयमा ! १।। आं०

एकदा मो साथे कियो, सिद्धार्थ गाम थी विहार।
कूर्म गाम नें चालिया, बिचै तिल देख्यो तिण वार ।।२।।
ते पान फूले हरियो घणों, सोभ रह्यो थो अतंत।
ते तिल गोसाले देखनैं, मौनैं पूछयो ए विरतंत ।।३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ए तिल पाके नें नीपजै, के नहीं नीपजै हो साम !
इणरा फूल जीव इहां थी चवी, उपजसी किण ठाम ?।।४।।
तिण अवसर म्है गोयमा ! कह्यो गोसाला नै आम।
इण तिल में निश्चै करी, तिल नीपजसी ताम ।।५।।
ए जीव सात फूलां तणां, छोड़े इहां थी ठिकाण।
इण तिल रै होसी एक सूंगलो, तिहां सात तिल होसी आण ।।६।।

० ० ०

दूहा

गोसाले तिण अवसरे, ए मूल न सरधी बात।
परतीत मूल आणी नहीं, पड़िवजियो मिथ्यात ।।१।।

ढाल : ८

(प्रभवो चोर चोरां नें समझावै)

वीर सूं गोसाले पड़वजियो मिथ्यात, ते वीर वचन नहीं मानै रे।
जब वीर समीप थी हलवे-हलवे, तिल कनै आयो छानै-छानै रे।
वीर सूं गोसाले पड़िवजियो मिथ्यात ।।१।। आं०
तिण तिल उखेलनै अलगो न्हाख्यो, वीर नै भूठा घालण गोसालो रे।
जब दिव-बादल हुवा तिण काले, पाणी बूठो ततकालो रे ।।२।।
जड़ माटी सहित तिल उखणियो हुंतो, तिण पाणी थी पाछो थंभाणो रे।
तिल फल फूल सहित नीपनों, वीर कह्यो जिम जाणो रे ।।३।।
वले गोसालो वीर साथे चाल्यो, ते मन मांहे जाणे छै एमो रे।
ए प्रतख भूठ बोलै छै चोड़ै, ओ तिल नीपजसी केमो रे ।।४।।
हिवै तिहां थी चाल कूर्म गामे आया, तिहां कूर्म गाम रै बारै रे।
तिहां वेसायण नामे बाल तपसी, तपसा करै छै तिण वारै रे ।।५।।
ते बेले-बेले निरन्तर करतो, तेजू लेस्या तिण मांह्यो रे।
सूय साहमी आतापना लेवै, ऊंची कर-कर बांह्यो रे ।।६।।
तिणरै सूर्य री आताप थी जूंआं, नीकल पड़ै छै बारो रे।
त्यांरी अणुकंपा आण वेसायण तपसी, पाछी मेहलै सरीर मझारो रे ।।७।।
तिण वेसायण तपसी नै देखै गोसालो, तिण कनै आयो वीर छानै रे।
तिण नै कहै तूं मुनी के अमुनी ? ओ उत्तर दे तूं म्हांनै रे ।।८।।
के तूं जूंआं रो सेज्यातर छै? ओ उत्तर दे तूं पाछो रे।
जब तपसी ए वचन नै आदर न दीधो, मन में पिण नहिं जाण्यो आछो रे ।।९।।
वेसायण तपसी मून साझी जब, गोसालो कह्यो दोय-तीन बारो रे।
तूं मुनी के अमुनी छै तूं, के जूंआं नै सेज्या रो दातारो रे ? ।।१०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोय-तीन बार कह्यां तापस कोप्यो, धिगधिगायमान हुवो तातो रे।
आतापना भूम थी पाछै फिरियो, कीधी तेजस समुदघातो रे ।।११।।
तेजू लेस्या काढी तिण सरीर बारै, गोसाला नै बालण काजो रे।
मौनै खीजाय नै ओ जीवतो जाओ, तो बाल भसम करूं आजो रे ।।१२।।
जब म्है गोतम ! लब्ध फोरव नै, सीतल लेस्या म्है मैली रे।
गोसाला री अणुकंपा नै अर्थे, तेजू लेस्या नै पाछी ठेली रे ।।१३।।
सीतल लेस्या थी तेजू लेस्या हणाणी, गोसालो पिण बलियो नांहीं रे।
जब वेसायण उपियोग देई नै, मोनै जाण लियो उण ताही रे ।।१४।।
जब वेसायण तपसी इम बोल्यो, जाण्या-जाण्या हे भगवान ! थानै रे।
थे गोसाला नै बलवा न दीधो, ते खबर पड़ेगी म्हांनै रे ।।१५।।
जब गोयमा ! मोनै गोसाले पूछ्यो, जूं को रो सेज्यातर कहै कांई रे।
जाण्या-जाण्या हे भगवान ! आपनै जाण्या, ते मोनै खबर पड़ी नांहीं रे ।।१६।।

० ० ०

दूहा

तिण काले म्है गोयमा ! कह्यो गोसाला नै आम।
तूं मो छानै तापस कनै, तिणनें जाये पूछ्यो थै आम ।।१।।
तूं मुनी अमुनी कदाग्रही, के सेज्यातर जूआं रो ठाम ?
तब वेसायण थारा वचन नै, भलोई न जाण्यो ताम ।।२।।
जब दोय तीन बार तेहनै, खिजायो बारूंबार।
जब वेसायण तो ऊपरे, कोप्यो सिघर अपार ।।३।।
तोनै बालण कारणे, तेजू लेस्या मेली तिण काल।
जब म्है थारी अणुकंपा आणनै, सीतल लेस्या म्हेली ततकाल ।।४।।
तूं नहीं बलियो तेहथी, मोनै ओलख कीधो याद।
जाण्या-जाण्या हे भगवान ! आपनै, न बल्यो आप तणै परसाद ।।५।।
ए वचन गोसाले सांभल्यो, भय उपनों मन मांय।
ए तेजू लेस्या किम नीपजै ? मौनें पूछ्यो सीस नमाय ।।६।।
जब म्है गोयम ! तिण समे, कही गोसाला नै एम।
तेजू लेस्या इणविध नीपजै, ते सुणजो धर पेम ।।७।।
बेले-बेले निरंतर तप करै, पारणे मूठी उड़द आहार।
ऊनो पाणी एक पूसली पीए, छ मास लगै एकधार ।।८।।
सूर्य साहमी लेवै आतापना, ऊंचो कर-कर बांहि।
तिणनें छ मास रै छेहरे, तेजू लेस्या ऊपजै तिण मांहि ।।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : ९

(थे तो जीव दया धर्म पालो रे अथवा रस गिरधी ते हिलिया गटकै)

जब गोसाले तिण वारो रे, म्हांरो वचन कियो अंगीकारो।
हिवै गोतम ! ओ म्हांरी लारो रे, कूर्म गाम थी कियो विहारो ।।१।।
सिधारथ गाम नै पाछा चाल्या रे, तिल थंभ कनै आया हाल्या।
जब गोसाले पूछ्यो मोनै आमो रे, तिल नीपजसी कह्यो तामो ।।२।।
फूल तिल सूधी कही बातो रे, ते प्रतख झूठ मिथ्यातो।
ते जाबक तिल नीपनों नांहीं रे, नहीं नीपनों फूलादिक कांई ।।३।।
जब हूं बोल्यो सुण तूं गोसाला ! रे, तिण वेलां किया थै चाला।
म्हांरा वचन री परतीत न आणी रे, थै म्हांनै झूठाबोलो जाणी ।।४।।
तिणसूं मुझ पासा थी धीरे-धीरे रे, छानै-छानै आयो तिल तीरे।
तिल उखाड़ न्हाख्यो तिण कालो रे, जब बादल हुआ ततकालो ।।५।।
पाणी वरसे तिल थंभाणों रे, ऊ निश्चेई तिल नीपजाणों।
सात तिल फूल चविया ताह्यो रे, सात तिल हुआ सूंगळी मांह्यो ।।६।।
वनसपतीकाय मझारो रे, इणविध करै पोटपरिहारो।
ते तिल ऊभो छै निश्चै आज तांई रे, संका मत आणजे कांई ।।७।।
ए पिण वचन न मान्यो गोसाले रे, तिल आय जोयो तिण काले।
सूंगळी फोर काढ्या बारो रे, सात तिल गिणिया हाथ मझारो ।।८।।
तिल गिणियां पछै तिण ठामो रे, उपनों अधवसाय परिणामो।
सर्व जीवां रो एह विचारो रे, करै छै पोटपरिहारो ।।९।।
इसड़ी ऊंधी इण धारो रे, मों सूं पड़ियो गोसालो न्यारो।
मूठी उड़द खाअे जबूनो रे, पुसली पाणी पीये ऊन्हो ।।१०।।
निरन्तर बेले तपसा कीधी रे, सूर्य साहमी आतापना लीधी।
दोनूं ऊंची कर-कर बांहो रे, छ महीना लग ताह्यो ।।११।।
एहवो कष्ट कियो इण करूड़ो रे, छ मास लगे तिण पूरो।
लबद छ मास रै अंत पाई रे, इण विध तेजू लेस्या उपाई ।।१२।।
एकदा गोसाला रै मांह्यो रे, छ दिशाचर मिलिया आयो।
आगै कह्यो छै जिम विसतारो रे, सगलोई लेवो विचारो ।।१३।।
अरिहंत जिण केवली नांही रे, इणरै अतिसय गुण नहिं कांई।
अरिहंत रा गुण इणमें न पावै रे, ओ झूठो नांव धरावै ।।१४।।
इण चौड़े झूठ चलायो रे, इण सावत्थी नगरी मांह्यो।
ओ डाकोत-पूत गोसालो रे, तिण रो काढ्यो वीर नीकालो ।।१५।।
थे पूछ करी गोयम ! इणरी रे, उठाणपरिया कही तिणरी।
गोतम स्वामी बोल्या जोड़ी हाथो रे, आप सत कह्यो स्वामीनाथो ! ।।१६।।

० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

ए मोटी परखदा रै मझे, भाख्यो श्री भगवान।
वीर गोसाला री उतपत कही, ते पड़ी घणां रै कान ॥१॥
ए बात सुणी नैं परखदा, आई जिण दिस जाय।
घणां लोक मांहोमां इम कहै, सावत्थी नगरी रै मांय ॥२॥
गोसालो कहै हूं जिण केवली, ते झूठ बोलै छै ताम।
ओ तो मंखली-पुत्र डाकोतरो, लोक बात करै ठाम ठाम ॥३॥
म्है वीर जिणेसर आगले, सुणी गोसाला री बात।
ओ नहीं अरिहंत जिण केवली, यूंही बोलै झूठ मिथ्यात ॥४॥
वीर जिणंद चोबीसमां, औ देवातदेव स्वमेव।
ते निश्चै अरिहंत जिण केवली, त्यांनें वांदै कीजै नित सेव ॥५॥
ए लोक मांहोमां बातां करै, ते सुणी गोसाले कान।
जब कोप्यो सिघर उतावलो, वले हुवो धिगधिगायमान ॥६॥
आतापभूम थी नीकल्यो, आयो सावत्थी नगरी मांय।
हलाहल कुंभारी जायगां तिहां, पाछो आयो तिण ठाम चलाय ॥७॥
घणां सिषां सहीत परवरचो थको, अमरस धरतो अतंत।
जाणें घात करूं इण वीर नीं, इसड़ो मन धेष धरंत ॥८॥

ढाल : १०

(धीज करै सीता सती रे लाल)

तिण अवसर श्री भगवंत नैं रे, अंतेवासी सिष सुवनीत रे। सुगण नर !
ते आणंद नामे थिवर हुंतो रे लाल, तिणमें साध तणी रूड़ी रीत रे॥ सुगण नर !
सुणजो गोसाला री वारता रे लाल ॥१॥ आं

बेले-बेले निरन्तर तप करै रे, पारणे पेहली पोहर सझाय रे।
बीजे पोहर ध्यान ध्यावै सदा रे लाल, तीजे पोहर गोचरी नै जाय रे ॥२॥
ते वीर तणी लेइ आगना रे, उठचो सावत्थी नगरी मांय रे।
ते करै समुदाणी गोचरी रे लाल, तीनूंई कुल में जाय रे ॥३॥
हलाहल कुंभारी री जायगां थकी रे, नेड़ो जातो आणंद नैं देख रे।
जब गोसाले बोलायो आणंद नै रे लाल, पिण अंतरंग मन मांहे धेख रे ॥४॥
एक मोटो ओलंभो मांहरो रे, तूं सांभल आणंद! इहां आय रे।
जब आणंद थिवर इहां आवियो रे लाल, गोसालो कहै बात बणाय रे ॥५॥
केई धन रा लोभी वाणिया रे, चाल्या मोटी अटवी मझार रे।
त्यां अनेक वसतां सूं गाडला भर्या रे, वले असणादिक च्यारूं आहार रे ॥६॥
मोटी अटवी में आगा गयां थकां रे, नीठचा असणादिक च्यार आहार रे।
जब मांहोमां सर्व भेला हुआ रे लाल, करवा लागा विचार रे ॥७॥
पाणी तो खूटो सर्वथा रे, तिण विना पाछा जासां केम रे।
हिवै करो पाणी री गवेसणा रे, ज्यूं घरे जावां कुसले खेम रे ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एहवी करे विचारणा पाणी रे, जोवा लागा ठाम-ठाम रे।
एक मोटो वनखंड आयो जोवतां रे लाल, जोवा जोग घणों अभिराम रे ।।९।।
तिण वनखंड रा मझ देस में रे, तिहां एक मोटी जायगां जाण रे।
च्यार वलगू हुंता तिण ऊपरां रे लाल, त्यांरा ऊंचा सिषर वखाण रे ।।१०।।
ते देखी नै हरख्या वाणिया रे, सहु भेला हुवै कहै आण रे।
इण वनखंड में च्यार वलगू अछै रे लाल, ऊंचा सिषर बंध वखाण रे ।।११।।
तो श्रेय कल्याण आपां भणी रे, प्रथम वलगू भेदां जाय रे।
तिण मांसूं निरमल पाणी नीकलै रे लाल, ते पीधां सगलां रै साता थाय रे ।।१२।।
त्यां मांहोमां करे विचारणा रे, प्रथम सिषर फोड़चो आय रे।
तिण मांसूं निरमल पाणी नीकल्यो रे लाल, जब हरख्या घणां मन मांय रे ।।१३।।
त्यां पाणी तो पीधो निरमलो रे, वले वाहण भरिया तिणवार रे।
वले बीजा सिषर फोड़ण तणों रे लाल, कीधो मांहोमां विचार रे ।।१४।।
पहिलो सिषर फोड़चां पाणी नीकल्यो रे, तो सोनो नीकलसी दूजा मांय रे।
ए मिसलत मांहोमां कीधी तिहां रे लाल, बीजोइ सिषर फोड़चो जाय रे ।।१५।।
तिण मांसूं सोनो नीकल्यो रे, जब मन मांहे हरषत थाय रे।
त्यां भाजन भरचा गाडला भरचा रे लाल, तीजी वार विचारै मांहोमांय रे ।।१६।।
पहिलो सिषर फोड़चां पाणी नीकल्यो रे, सोनो नीकल्यो बीजा मांय रे।
तीजो फोड़चां मणी रतन नीकलै रे लाल, तो तीजोई सिषर फोड़ां जाय रे ।।१७।।
जब तीजो सिखर त्यां भेदियो रे, मणी रतन नीकलिया तिण मांय रे।
त्यां भाजन भरी भरचा गाडला रे लाल, ते मन मांहे हरषत थाय रे ।।१८।।
वले लोभ लागो त्यांरै अति घणों रे, जब कहै मांहोमां आम रे।
ज्यूं चिंतवियां ज्यूं नीकल्या रे लाल, मनबंछत सरिया काम रे ।।१९।।
तो चोथो सिषर फोड़चां वले रे, वजर रतन नीकलै तिण मांय रे।
त्यां वजर रतनां सूं गाडला भरां रे लाल, तो कुमी रहै नहीं काय रे ।।२०।।
इतलां मांहे एक वाणियो रे, त्यांरा हित रो वंछणहार रे।
त्यांनै कह्यो अति लोभ न कीजिये रे लाल, चोथो सिषर म फोड़ो लिगार रे ।।२१।।
पहिलो सिषर फोड़चां पाणी नीकल्यो रे, सोनो निकल्यो बीजा मांय रे।
मणी रतन तीजा मांसूं नीकल्या रे लाल, चोथो फोड़चां अवस दुख थाय रे ।।२२।।
तिणरो कह्यो त्यां मान्यो नहीं रे, चोथो सिषर फोड़चो जाय रे।
तिण मांसूं कालो सर्प नीकल्यो रे लाल, विष घणों तिण मांय रे ।।२३।।
संघट्यो हुवो तिण सर्प नों रे, जब कोप चढचो ते काल रे।
भंड उपधि सहित सगलां तणी रे लाल, बाले राख कीधी ततकाल रे ।।२४।।
जिण वाणिये त्यांनै वरज्या हुंता रे, तिण नें कुसले राख्यो तिणवार रे।
ते रिध संपत ले आपरी रे लाल, कुसले आयो निज नगर मझार रे ।।२५।।

० ० ०

दूहा

वाणियां ज्यूं थारां गुर में घणों, लोभ तणों अति दोष।
जस कीरत व्यापी तीन लोक में, तो ही आयो नहीं संतोष ।।१।।

वाणिया पाणी विण मरता तिहां, त्यांनैं पाणी मिलियो ताय।
वले सोवन मणी रतन मिलिया, तो ही तिसणा मिटी नहीं काय ॥२॥
त्यां चोथो सिषर फोड़ियो, तो घात पामी ततकाल।
त्यां सरिखो थारो गुर लोभियो, ते पिण करसी अकाले काल ॥३॥
घणां गाम नगर इण बस किया, तो ही आयो सावत्थी मझार।
सर्व सिष्य सहित हिवै तेहनीं, बाले राख करसूं एक बार ॥४॥
एक वाणे सारां नैं वरजिया, तिणरी सर्प न कीधी घात।
ज्यूं तूं थारा गुर नैं वरजसी, तो थारी घात न करूं तिलमात ॥५॥

ढाल : ११

[डाभ मूंजादिक नो डोरी]

इम सांभल बीहनो आणंद, पाछो आयो जिहां वीर जिणंद।
वंदणा कर बोल्यो जोड़ी हाथ, एक अरज करूं सामीनाथ ! ॥१॥
हूं आपरी आगन्या लेई ताह्यो, गयो सावत्थी नगरी मांह्यो।
हूं गोचरी करतो तिण काले, मौनैं देख बोलायो गोसाले ॥२॥
तिण रै मन मांहे धेष अपारी, मौनैं दियो ओलंभो भारी।
बाणियां री कीधी सर्प घात, ते मांड कही सर्व बात ॥३॥
गुर सहित थांरा गुरभाई, त्यांरी घात करसूं उठे आई।
ते पिण घणां लोकां री साख, बाल जाल भसम करूं राख ॥४॥
जो तूं जाय कहसी सर्व बात, तो हूं थारी न करसूं घात।
जब हूं भय पाम्यो तिण ठाम, ते पिण आप कनैं कही आम ॥५॥
गोसाले कही ते सर्व बात, वीर पासे कही जोड़ी हाथ।
हिवै आणंद पूछा करै आम, विनो करै सीस नाम ॥६॥
समर्थ छै सामी ! ए गोसालो, सर्व साधां नैं बालै समकालो।
इसड़ो तप तेज छै इण मांय, सर्व साधां नैं बालै इहां आय ? ॥७॥
समर्थ छै आणंद ! ए गोसालो, सर्व साधां नैं बालै समकालो।
अरिहंत भगवंत नैं बालै नांहि, एहवो तप तेज नहीं इण मांहि ॥८॥
जेहवो तप तेज छै गोसाला रो, रूठो करै बोहत बिगाड़ो।
इणथी अनंतगुणो साधु मांहि, तप तेज खिमा गुण ताहि ॥९॥
साधु रा तप तेज थी ताह्यो, अनंतगुणों थिवरां रै मांह्यो।
थिवरां रा तप तेज थो ताह्यो, अनंतगुणों अरिहंत मांह्यो ॥१०॥
त्यां अरिहंतां नैं किम बाले, यूं ही झूठ बोल्यो गोसाले।
अरिहंत रा तप तेज आगै, गोसाला रो जोर न लागै ॥११॥
वीर कहै आणंद नैं वाय, तूं साधां समीपे जाय।
कहीजै गोतमादिक सर्व साधां नैं, भगवंत कह्यो छै थांनैं ॥१२॥
थे मत करजो गोसाला री बात, उण साधां सूं पड़वजियो मिथ्यात।
तोनैं कही गोसाले वाय, ते पिण दीजे सर्व सुणाय ॥१३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वीर नें आणंद वांदे हुलास, आयो गोतमादिक पास।
सर्व साधां नें कहै बतलाय, थे सांभलजो चित लाय ।।१४।।

० ० ०

दूहा

हूं आज बेला रै पारणे, गयो सावत्थी नगरी मांहि।
मौनै गोचरी करतो देख नैं, गोसाले बोलायो ताहि ।।१।।
जे गोसाले कही तका, दीधी साधां नैं सर्व सुणाय।
मौनै वीर मेहल्यो छै थां कनै, तूं कहीजे साधां नैं जाय ।।२।।
गोसाला रा मत तणीं, कोइ म करजो बात।
गोसाले सर्व साध थो, पड़वजियो मिथ्यात ।।३।।
ए वचन आणंद रो सांभले, सर्व साधां कियो अंगीकार।
गोसाला रा मत तणीं, न करै बात लिगार ।।४।।

ढाल : १२

[पूज जी पधारो हो नगरी सेविया]

हिवै गोसालो मंखली-पुत्र डाकोतरो, तिणरै मन मांहे धेष अपार रे। दोभागो।
हलाहला कुंभारी री जायगां थकी, नीकलै छै तिण वार रे। दोभागी।
चाल्यो रे गोसालो वीर सूं झगड़वा ।।१।। आं०
निज संघ सहित गोसालो चालियो, तिण रा दुष्ट घणां परिणाम रे।
वले अमरस वहितो मन में अति घणों, साथे लियो साथ हगाम रे ।।२।।
ते क्रोध करे नै अति प्रजल्यो थको, मुख सूं कहै विपरीत बात रे।
कासप सहीत सगला साधां तणी, आज समकाले करसूं घात रे ।।३।।
तपतो थको चाल्यो सिघर उतावलो, आयो सावत्थी नगर मझार रे।
ते सावत्थी रै मझ बाजार में नीकलै, लोकां नै कहै बारूंबार रे ।।४।।
थे कहो छो तीर्थंकर महावीर तेहनै, तारण-तिरण जीहाज रे।
हिवै आवो तो दिखालूं तीर्थंकरपणों तेहनों, थे अरूबरू देखलो आज रे ।।५।।
एहवो घोष सब्द करतो थको, सावत्थी नगर मझार रे।
ए सब्द गोसाला रो बहु जण सांभली, घणां लोक हुवा तिण लार रे ।।६।।
विमती अनमती पाखंडी अति घणां, ते पिण जोवा चाल्या ताम रे।
गृहस्थ अनेक नै वृंन्द नर नार नां, ते पिण चाल्या छोड़े घर काम रे ।।७।।
सावत्थी बारै गोसालो नीकले, आयो कोठग बाग रै मांय रे।
जहां भगवंत महावीर देव बेठा तिहां, ऊभो छै गोसालो आय रे ।।८।।
नर नारी तो बोहत भेला हुवा, तिहां कोठग नामे बाग रै मांहि रे।
हिवै गोसालो भगवंत श्री महावीर नै, ओलंभा वचन कहै ताहि रे ।।९।।

० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

अहो आउषावंत कासवा ! तूं कहै लोकां रै मांय ।
ओ गोसालो सिष्य मांहरो, ते प्रतक्ष मूसावाय ॥१॥

थे आछो कह्यो आछो कह्यो, ते कह्यो ओलंभा रूप ।
हूं गोसालो सिष्य नहीं तांहरो, तूं सांभल तेह सरूप ॥२॥

गोसालो हुंतो सिष्य तांहरो, सूको भूखो तपकर ताय ।
ते आऊखो पूरो करी, देवपणैं उपनों जाय ॥३॥

हूं उदाई नामे राजान छूं, कुंडीयाण गोत सधीर ।
उरजन गोतम-पुत्र तेहनों, छोड़े दीयो म्है छठो सरीर ॥४॥

गोसाला रो सरीर सेंठो घणों, ते म्है पड़ियो देखतिणवार ।
म्है परवेश कियो तिण सरीर में, ते सातमों पोटपरीहार ॥५॥

ढाल : १३

[जगतगुर तिसलानंदन वीर]

हिवै गोसालो कहै भगवंत नै, म्हांरा भाष्या सार सिद्धंत ।
सिझ्या सिझै सीझसी घणां, तिण में बोहत कह्यो विरतंत ।
हो कासप ! सुणजे म्हांरो सिद्धंत ॥१॥

चोरासी लाख महाकल्प हुवै, करै सात देव तणां अवतार ।
सात संजूह सात सनीगर्भ करै, करै सात पोटपरीहार हो ॥२॥
पांच लाख नै साठ सहंस ऊपरे, छसौ वले अधिका जाण ।
तीन करमां रा अंस खपाय नै, गया जाये जासी निरवाण हो ॥३॥
एक दिष्टंत तोनैं साचो कहूं, ते सांभलजे चित ल्याय ।
एक मोटी गंगा लांबी घणीं, तिणरो विवरो कहूं छूं ताय हो ॥४॥
गंगा लांबी जोजन पांच सौ, अर्द्ध जोजन पेहली जाण ।
पांच सौ धनुष्य ऊंडी कही, ए गंगा नों परिमाण ॥५॥
एहवी सात गंगा भेली कियां, एक महागंगा हुवै ताम ।
सात महागंगा तिण थी हुवै, एक सादीण गंगा आम हो ॥६॥
सात सादीण गंगा भेली कियां, एक मचू गंगा हुई जाण ।
सात मचू गंगा भेली कियां, एक लोहिय गंगा बखाण हो ॥७॥
सात लोहिय गंगा तिण थकी, आवती गंगा हुवै एक ।
सात आवती गंगा तेहथी, एक परमावती गंगा वशेख हो ॥८॥
एक लाख सतरै सहंस ऊपरे, वले छसौ नैं गुणचास ।
एक परमावती गंगा तणी, एतली गंगा हुवै तास हो ॥९॥
तेहनां दोय उधार परूपिया, ते सुण तूं राखे चित ठाम ।
सुषम बोंदी कलेवर नै वले, बादर बोंदी कलेवर ताम हो ॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते सुखम कलेवर थापनै, कहूं बादर रो विसतार।
ते सौ-सौ वरस गयां थकां, एक कण रेत काढै बार हो ।।११।।
एकेको रेत रो कण काढतां, सारी गंगा खाली थाय।
जब एक सर परमाण हुवै, कह्यो छै म्हांरा सिधंत मांय हो ।।१२।।
एहवा तीन लाख सरां तणों, एक महाकल्प हुवै ताय।
एहवा चोरासी लाख महाकल्प नों, एक महामाणस थाय हो ।।१३।।
अनंता संजुक्त तिहां करै, जीव चवी-चवी तिण ठाम।
संजुक्त ऊपर लै माणसे, देवपणें ऊपजै ताम हो ।।१४।।
महामाणस नां समुदाय नीं, हूं संख्या कहूं छू ग्यान।
ते सर्व नदी हुवै एतली जी, सुणजै सुरत दे कान हो ।।१५।।
दोय हजार कोड़ाकोड़ नें, वले नवसै कोड़ाकोड़ जाण।
वले चोसठ कोड़ाकोड़ ऊपरे, पिचितर लाख कोड़ बखाण हो ।।१६।।
अड़तालीस हजार कोड़ ऊपरे, सर्व एतली नंदी जाण।
एक महामाणस हुवै तेहनीं, ए संख्या कही परमाण हो ।।१७।।
ते देव तणां भोग भोगवे, पूरो करै आऊखो ताय।
पेहिला सनी गर्भ नें मझे, जीव ऊपजै आय हो ।।१८।।
ते जीव तिहां थी नीकले, मझले माणस में आय।
संजुक्तपणें जे जीवड़ो, उपजै देव गति में जाय हो ।।१९।।
तिहां देव तणां भोग भोगवे, बीजा सनी गर्भ में उपजै ताय।
तिहां थी नीकल ते जीवड़ो, हेठला माणस में आय हो ।।२०।।
संजुक्तपणें वले जीवड़ो, उपजै देवता में जाय।
ते देव तणां भोग भोगवे, तीजो सनी गर्भ हुवै आय हो ।।२१।।
छठा सनी गर्भ तांई जीवड़ो, इणहीज विध उपजै आय।
तिहां थी नीकल हुवै देवता, पांचमां देवलोक में जाय हो ।।२२।।
पांच मोटा आवास तेह में, म्है भोग भोगविया ताय।
दस सागर आउषो पूरो करी, हुवो सातमों सनी गर्भ आय हो ।।२३।।
हूं सवा नव मासे जनमियो, हूं रूप में जाणै देवकुमार।
म्है कुमारपणें चारित लियो, कुमारपणें ब्रह्मचार हो ।।२४।।
हूं बालपणें वैरागियो, म्हैं बींधाया पिण नहीं कान।
ओ म्हारो सातमों पोटपरीहार छै, ते सुण तूं सुरत दे कान ।।२५।।
एणेज्ज नें मलराम नों, मंडिय वले रोहो ताम।
भारदाई नें उरजुन गोतम-पुत्र, गोसालो मंखली आम हो ।।२६।।
नगरी राजगृही नै बारे तिहां, मंडीकुख उद्यान में ताम।
उदाई कुंडियाण गोत नों, म्है शरीर छोड्यो तिण ठाम हो ।।२७।।
पेंठो एणेज्ज रा सरीर में, ए पेहिलो पोटपरीहार।
बावीस वरस लग हूं रह्यो, एणेज्ज रा सरीर मझार हो ।।२८।।
उदलपुर नगर रै बाहिरे, चंदोतर बाग में जाय।
तिहां एणेज्ज रो सरीर छोड़नै, पेंठो मलराम रा सरीर मांय हो ।।२९।।
मलराम रा सरीर में, रह्यो इकवीस वरस मझार।
इण रीते कासप! म्है कियो, ओ बीजो पोटपरीहार ।।३०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चंपा नगरी नैं बाहिरे, अंगमिंदर बाग में ताहि।
तिहां मलराम नो सरीर छोड़नैं, पेंठो मंडिया नां सरीर मांहि ॥३१॥
रह्यो मंडिय नां सरीर में, हूं बीस वरस लग ताम।
तीजो पोटपरीहार म्है कियो, हिवै चोथो कहूं छूं आम हो ॥३२॥
वाणारसी नगरी रै बाहिरे, काम महावन बाग में ताहि।
मंडिय नों सरीर छांड़ नैं, पेंठो रोहा रा सरीर मांहि हो ॥३३॥
रह्यो रोहा नां सरीर में जी, उगणीस वरस मझार।
इणविध कासप ! म्है कियो जी, ओ चोथो पोटपरीहार हो ॥३४॥
आलंभिया नगरी नैं बाहिरे, पतकालक बाग रै मांय।
तिहां रोहा रो सरीर छांडनैं, पेंठो भारदाई रा सरीर में आय हो ॥३५॥
भारदाई नां सरीर में, हूं रह्यो वरस अठार।
इणविध कासप ! म्है कियो जी, पांचमों पोटपरीहार हो ॥३६॥
कठियायण उद्यान थो, वेसाली नगरी रै बार।
भारदाई नों सरीर छांडनैं, गयो उरजन सरीर मझार हो ॥३७॥
रह्यो उरजन रा सरीर में, सतरे वरस मझार।
इण रीते कासप ! म्है कियो, छठो पोटपरीहार हो ॥३८॥
इण सावत्थी नगरी नैं मझे, इण हलाहल कुंभारी री हाट।
जब उरजन गोतम-पुत्र तेहनों, सरीर छोडचो इण माट हो ॥३९॥
तिहां गोसाला मंखली-पुत्र नों, सेंठो सरीर पड़ियो देख।
परिसा खमवा समर्थ जाणियो, थिर संघयण तिणरो विशेख हो ॥४०॥
उरजन रो सरीर छांडनैं, पेंठो गोसाला रा सरीर मझार।
सोलै वरस हुवा एहनै, ए सातमों पोटपरीहार ॥४१॥
एक सौ तेतीस वरस में, कीधा सात पोटपरीहार।
ते ग्यान नहीं तोनै कासवा ! तूं बोल्यो विना विचार हो ॥४२॥
वले गोसालो भगवंत नैं, बोलै ओलंभा जेम।
भलो-भलो कह्यो थे कासवा ! हिवै नहीं बोलीजे एम हो ॥४३॥
इम गोसालो भगवंत नैं, बोल्यो घणों विपरीत।
वले झूठ बोलै निसंक सूं, छोड़ी जाबक आगली पीत हो ॥४४॥

० ० ०

दूहा

थे कह्यो गोसालो सिष्य मांहरो, ते हूं सिष्य थांरो नांय।
थे सरीर गोसाला रो देखनै, भर्म भूलो तूं कांय ॥१॥
ते सिष्य कह्यो छै मो भणी, ते चोड़ै चलायो झूठ।
ते झूठ थांरो म्है सांभले, हूं आयो ठिकाणा थी ऊठ ॥२॥
एहवा वचन गोसाले कह्यां थकां, बोल्या श्री भगवान।
ते दिष्टंत देई कहै तेह नैं, ते सुणों सुरत दे कान ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : १४

(दुलहो मानव भव कांइ तुम हारियै)

हिवै वीर कहै ! गोसाला सुणे, थे बोल्यो भूठ बणाय रे। गोसाला !
तूं गोसालो मंखली-पूत छै, ते छिपायां छिपियो नहीं जाय रे। गोसाला !
तूं भूठ बोलै आपो ढांकवा ॥१॥ आं०

ज्यूं कोइ चोर चोरी करे नीकल्यो, ते आयो गाम रै बार रे।
तिण लारे वेग सताब सूं, पाछै आय लागी नेड़ी बहार रे ॥२॥
चोर बहार लगती आई जाण नें, चोर जागा जोवा लागो ताम रे।
खाड गुफा भंगी परवतादिक, चिहुं दिस जोवै ठाम-ठाम रे ॥३॥
विषम दुरगम जायगां जोवै घणी, पिण चोर न लाभी कांय रे।
तिणरै मरवा री मन मांहे नहीं, हियाफूटा ज्यूं होय रह्यो ताय रे ॥४॥
ऊन सिण रूई नें तिणां तणों, एक मोटो गिज तिण मांहि रे।
चोर जाणें हूं छिपियो एह में, पिण छिपियो नहीं चोर ताहि रे ॥५॥
आतमा नें तिण मूल ढांकी नहीं, ते ढांकी मानें मन मांय रे।
तिण चोर न छिपाई आतमा, ते जाणें छिपाई छै आय रे ॥६॥
चोर जाणें अलगो न्हाठो बहार थी, पिण नेरी आये लागी बहार रे।
तिण नें आपो मूल सूभै नहीं, इसड़ो चोर मूढ गिवार रे ॥७॥
चोर जाणतो हूं सेंठो लुक रह्यो, मोनें कोई न जाणें आम रे।
तिणनें बाहरू अलगा थकां देखनें, आय ऊभा तिण ठाम रे ॥८॥
तिण चोरनें बाहरू आय पकड़ियो, कुण ले जावादे तिण नें माल रे।
सैंठो कीधो बंदीखाने न्हाखनें, तिण में पाड़्यां घणां हवाल रे ॥९॥
इण दिष्टंते गोसाला तूं जाण ले, थे पिण आपो छिपायो छै आम रे।
पिण आपो छिपायो किम छिपै, चोर ज्यूं चोड़ै दीसै छै ताम रे ॥१०॥
चोर चोड़ै छिपै किण रीत सूं, पाछै लागा बहार रा पूर रे।
ज्यूं तूं मो आगे किणविध छिपै, ऊ जीव नें ऊ मुखनूर रे ॥११॥
हिवै इसड़ो भूठ न बोलिये, हूं तो नहीं थारो सिष्य तेह रे।
तूं तो सांप्रत गोसालो तेहीज छै, तिण में मूल नहीं संदेह रे ॥१२॥
तूं गोसालो मंखली-पूत छै, निमाई निश्चै डाकोत रे।
उवाहीज भाषा बोली तांहरी, ऊहीज सरीर छाया तेज रे ॥१३॥

० ० ०

दूहा

ए वीर वचन गोसाले सुण्या, जब कोप चढ्यो ततकाल।
मिसमिसायमान करै घणों, अंतरंग मांहे उठी भाल ॥१॥
ऊंच नीच वचन कहै वीर नें, निरभंछै बारूंबार।
भूंडो बोलै निसंक सूं, किणरी संक न आणें लिगार ॥२॥
तू नष्ट थयो रे कासवा ! तूं विनष्ट थयो किण वार।
वले भिष्ट थयो तूं किण दिने, तूं नष्ट विनष्ट नें भिष्ट अपार ॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज हित नहीं हुवै तो भणी, थे मांडचो छै मुझ थी विवाद।
आज सुख म जाणँ तूं मो थकी, आज नहीं हुवै तुजनैं समाध ।।४।।
थांरा सिष सहीत आज तांहरी, बाल जाल भसम करूं राख।
जब जाण लीजे तूं मो भणी, घणां लोकां री साख ।।५।।

ढाल : १५

(धत्तूरो रावणो जी)

हिवै सर्वाणुभूती अणगार, ते सिष्य भगवान रो जी।
ते तो गुण-रतनां रो भंडार, दाता अभय दान रो जी।
हिवै मान गोसाला! वचन, श्री भगवान रो जी ।।१।। आं०
तिणरै धर्म रो राग अतंत, भगवंत रै ऊपरे जी।
भद्रीक घणों मतवंत, विनै में रूड़ी परे जी ।।२।।
वीर नां अवगुण बोल्या अनेक, गोसाले आकूट नैं जी।
तिणरी बात न मानी एक, आयो तिहां ऊठनैं जी ।।३।।
आय ऊभो गोसाला रै तीर, समझावै तेहनें जी।
एतो भगवंत श्री महावीर, दुहवै नहीं केहनें जी ।।४।।
अै तो तारण-तरण जिहाज, अतिसै ग्यान तेहमें जी।
सहंस नैं आठ लखण बिराज रहचा त्यांरी देह में जी ।।५।।
तूं कांय दै तिणां नैं आल, चोड़े झूठ बोल नैं जी।
हिवै मत बोले आल-पंपाल, अभितंर री खोल नैं जी ।।६।।
कोइ समण निग्रंथ रै पास, सीखै पद आण नैं जी।
त्यांनें वांदै छै आण हुलास, साचा गुर जाण नैं जी ।।७।।
तोनें तो दिख्या दे भगवान, मुंडण कियो तो भणी जी।
बहुसुरती कियो दे विगनान, अणुकंपा करी तो तणी जी ।।८।।
तोसूं बोहत कियो उपगार, ते वीसारे घालनैं जी।
उलटी करवानैं आयो बिगार, सनमुख चालनैं जी ।।९।।
इसड़ो नहीं बोलीजे झूठ, हूं गोसालो नहीं जी।
हूं तोनैं कहिवा आयो छूं ऊठ, भगवंत साचा सही जी ।।१०।।
तूं तो निश्चै गोसालो साख्यात, तिण में सांसो नहीं जी।
थें पड़िवजियो मिथ्यात, भगवंत सूं सही जी ।।११।।
इम सांभलनैं कोप्यो ततकाल, निलाड़ी सल चाढनैं जी।
इणरी राख करूं बाल जाल, तेजू लेस्या काढनैं जी ।।१२।।
तेजू लेस्या काढे ततकाल, माठी मन आदरी जी।
पापी राख कीधी बाल जाल, उत्तम मोटा साध री जी ।।१३।।
वले बोलै घणों विपरीत, आगा ज्यूं भगवान नैं जी।
तिण साधु नें बाले बेरीत, चढचो अभिमान में जी ।।१४।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोलतां-बोलतां हुई बार, चलावै झूठ नैं जी।
जब सुनखत्र नामे अणगार, आयो तिहां ऊठनैं जी ।।१५।।
ते पिण कहिवा लागो आम, बाल्यो थैं साध नैं जी।
हिवै मत बोले झूठ बेकाम, छोड़े विषवाद नैं जी ।।१६।।
सर्वाणुभूती नीं परे ताम, समझावै एहनैं जी।
तूं साख्यात गोसालो छै आम, झूठो बोलो केहनैं जी ।।१७।।
समझावण लागो रूड़ी रीत, समझ्यो नहीं पापियो जी।
वीर रा गुण करै वनीत, इणनै उथापियो जी ।।१८।।
जब ओ कोप चढ्यो ततकाल, निलाड़ी सल चाढनैं जी।
इणरी राख करूं बाल जाल, तेजू लेस्या काढनैं जी ।।१९।।
इणनैं बालण लेस्या मेहली आप, ओ तो बलियो नहीं जी।
लेस्या थी उपनों परिताप, असाता हुई सही जी ।।२०।।
तिण बांद्या भगवंत रा पाय, सुमतारस मन धरयो जी।
साध-साधवी सर्व खमाय, आउखो पूरो करयो जी ।।२१।।

० ० ०

दूहा

दोय साध गोसाले बालिया, समोसरण रै मांय।
तीजी बार गोसालो भगवान सूं, झगड़ै सनमुख आय ।।१।।
रे कासव ! तूं इम कहै, गोसालो म्हांरो सिष्य छो एह।
इसड़ो झूठ न बोलियै, तुझ मुझ किसो सनेह ।।२।।
गोसालो मंखलीपूत हूं नहीं, तूं मत कर म्हांरी बात।
हिवै बोल्यो तो बाल भसम करूं, कर देसूं सगलां री घात ।।३।।
आगे अजोग बोल्यो हुंतो, तिणथी बोल्यो अजोग वशेख।
आज सगलां नैं पूरा पाड़सूं, बाकी लारै न राखूं एक ।।४।।
दोय साधां गोसाला नैं जिम कह्यो, तिमहीज कह्यो भगवंत।
बोहसुरति कियो म्हैं तो भणी, ओर सगलोई कह्यो विरतंत ।।५।।
तूं मंखली-पुत्र डाकोतरो, तूं निश्चै गोसालो साख्यात।
हिवै तूं मोसूं अन्हाखी थके, पड़िवजियो मिथ्यात ।।६।।

ढाल : १६

[रे जीव मोह अणुकंपा नाणियै]

एहवा वचन गोसालो सांभले, ओ तो कोप चढ्यो ततकाल रे।
मिसमिसायमान करै घणों, अभितर लागी झालोझाल रे।
लेस्या मेली गोसाले वीर नै ।।१।। आं०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सात-आठ पग पाछो ओसरै, तिण ठामें कीधी समुदघात रे।
तेजू लेस्या काढी तिण बाहिरे, भगवंत री करवा घात रे ।।२।।
तेजू लेस्या सरीर थी नीकली, वीर साम्हो आवै छै ताय रे।
ते किम पेसै त्यांरा सरीर में, ते दिष्टंत सुणो चित ल्याय रे ।।३।।
उकलिया नें मंडलिया वायरो, पेसै पोली वस्तु रै मांय रे।
परवत नें थंभादिक तेहथी, अटकै तिण ठामे जाय रे ।।४।।
परवत थंभादिक नें वायरो, भेदतो फोड़तो मत जाण रे।
वायरा ज्यूं तेजू लेस्या जाणजो, वीर सरीर थंभ समाण रे ।।५।।
ते किणविध पेसै त्यांरा सरीर में, तेजू लेस्या तिण वार रे।
नोपकर्मी आउखो वीर नों, त्यांरो कुण छै मारणहार रे ।।६।।
न हुई न हुवै नें होसी नहीं, तीनुंई काल में बात रे।
अरिहंत भगवंत तेहनीं, समर्थ नहीं करवा घात रे ।।७।।
लेस्या परिदिखणा करती थकी, आतो ऊंची चाली आकास रे।
ऊंचा थी हणाणी हेठो पड़ी, कठै रहिवा न पाम्यो वास रे ।।८।।
जब गोसाला रा सरीर में, तेजू लेस्या पेठी आय रे।
पोता री लेस्या थी पोते बलै, तिणरै लागो सरीर में लाय रे ।।९।।
ते बलूं-बलूं करतो थको, कहै छै भगवंत नै एम रे।
सुण रे आउखावंत कासवा ! तूं रह्यो मत जाणे कुसले खेम रे ।।१०।।
तोनै होसी छ मास रै छेहड़े, रोग पितंजर ततकाल रे।
जद बलूं-बलूं करतो थको, छदमस्थ थको करसी काल रे ।।११।।
वीर कहै गोसाला ! सांभले, हूं नहीं करूं छ मासे काल रे।
छदमस्थ थको मरूं नहीं, झूठ बोलै तूं आल-पंपाल रे ।।१२।।
हूंतो सोलै वरस लग विचरसूं, गंधहस्ती नीं परे साहसीक रे।
केवलग्यानी थको जासूं मुगत में, ते तोनैं नहीं जावक ठीक रे ।।१३।।
थे मौनै तेजू लेस्या मेहली तका, पेठी थारा सरीर में आय रे।
तिण थी रोग पितंजर ऊपजै, दाह लागै सरीर रै मांय रे ।।१४।।
जब तूं बलूं-बलूं करतो थको, असाता करे होसी हेरान रे।
काल करसी सातमीं रात में, छदमस्थ थको विण ग्यान रे ।।१५।।

० ० ०

दूहा

यांरै मांहोमां विगट बातां हुई, ते पड़ी घणां रै कान।
ते बात लोकां में विस्तरी, न्याय जाणै विरला बुधवान ।।१।।
हिवै सावत्थी नगरी रै मझे, घणां पंथ मारग रै मांय।
लोक मांहोमां बातां करै, ते सुणजो चित ल्याय ।।२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : १७

[आसण रा ए जोगी अथवा वेदक जग ए देखी]

केइ लोक मिथ्याती त्यांमें नहीं ग्यांन, वले पूरो नहीं विगनान रे।
समझू नर विरला।
आज दोय तीर्थंकर रै झगड़ो लागो, तेतो सावन्थी नगरी रै बागो रे।
समझू नर विरला ।।१।। आं०
ए दोनूं मांहोमां विवाद में बोलै, एक-एक रा पड़दा खोलै रे।
वीर तो कहै तूं म्हारो चेलो गोसालो, मोसूं मत कर झूठी झखालो रे ।।२।।
गोसालो कहै हूं थांरो चेलो नांहि, थे कूड़ी कथी लोकां मांहि रे।
म्है तो साधपणो थां आगे न लीधो, म्है तो गुर थानै कदेय न कीधो रे ।।३।।
वीर कहै गोसालो तीर्थंकर नांहि, तीर्थंकर नां गुण छै मो मांहि रे।
गोसालो कहै हूं तीर्थंकर सूरो, ओ तो कासप प्रतख कूड़ो रे ।।४।।
वीर नें सनमुख चोड़े बोल्यो गोसालो, तूं तो मो पेहली करसी कालो रे।
जब वीर कह्यो तूं सुण रे गोसाला ! तूं करसी मो पेहली कालो रे ।।५।।
आप-आप तणों मत दोनूंई थापै, एक-एक नें मांहोमां उथापै रे।
यांमें कुण साचो कुण मुसावाई, केइ कहै म्हांनै खबर न कांई रे ।।६।।
यांमें केई कहै गोसालो जी साचो, इणनै किणविध जाणो काचो रे।
यांमें तो उघाड़ी दीसै करामात, तुरत कीधी साधां री घातो रे ।।७।।
इण देखंतां बाल्या दोय इणरा चेला, इणसूं न हुआ पाछा हेला रे।
इणनैं खोटो कहितो जब बोलतो सेंठों, पछै अणबोल्यो कांय बेठो रे ।।८।।
गोसालो बोलै ते गूंजार करतो, वीर पाछो बोल्यो तो ही डरतो रे।
गोसालो जी सींह तणी पर गूंज्या, वीर नां साध सगलाई धूज्या रे ।।९।।
वीर री तो लोकां देख लीधी सिधाई, इण में कला न दीसै कांई रे।
सिधाई ह्वै तो पाछी देखावतयांनै, जब ए पिण ऊभा रहिता क्यांनै रे ।।१०।।
ओ तो इण ऊपर चलाय नै आयो, इण कोठग बार रै मांह्यो रे।
ओ सूरपणों तो दीसै इण मांहि, तिण में कुमीय न दीसै कांई रे ।।११।।
जद पिण हूंतो लोकां में इसड़ो अंधारो, ते विकलां रै नहीं विचारो रे।
ओ गोसालो पाखंडी प्रतख पापी, तिणनै दियो तीर्थंकर थापी रे ।।१२।।
चतुर विचक्षण था तिण कालो, त्यां खोटो जाण्यो गोसालो रे।
ओ गोसालो कुपातर मूढ मिथ्याती, तिण कीधी साधां री घाती रे ।।१३।।
खिमासूरा अरिहंत भगवंत, त्यांरा ग्यान तणो नहीं अंत रे।
त्यांरा कोड़ जीभा करे नित गुण गावै, तो ही पार कदे नहीं आवै रे ।।१४।।
यां लखणां कर तीर्थंकर पिछाणो, ते तो भगवंत महावीर जाणो रे।
अे तो अतिसय ग्यांन गुणे कर पूरा, यांनै कदेय म जाणो कूड़ा रे ।।१५।।
केइ तो भगवंत नै जिण जाणैं, ते तो एकंत त्यांनैं बखाणै रे।
केई अग्यांनी गोसाला री ताणैं, ते जिण-गुण मूल न जाणैं रे ।।१६।।
केइ कहै दोनूं जिण साचा, आपां थी दोनूंई छै आछा रे।
आपां नै यांरा झगड़ा में न पड़णो, सगला नै नमण गुण करणो रे ।।१७।।
केइ कहै ऐ तो दोनूंई कूड़ा, कर रह्या फेन-फितूरा रे।
आप-आप तणों मत बाँधण काजे, तिण सूं झगड़ो करता नहीं लाजे रे ।।१८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐ तो पेट भरण रो करै छै उपाय, लोकां नै घालै छै मत मांय रे।
केयक इणविध बोलै अग्यानी, भाषा काढै मनमानी रे ।।१९।।
इसड़ो अंधकार हुंतो तिण काले, उसभ उदे आपो न संभाले रे।
तीर्थंकर थकां हुआ इसड़ा वेदा रे, ते तो अनाद काल रा सेंदा रे ।।२०।।
इम सांभल उत्तम नर नारो, अंतरंग मांहे कीजो विचारो रे।
पखपात किणही री मूल न कीजे, साचो मारग ओलख नें लीजे रे ।।२१।।

० ० ०

दूहा

तिण काले नै तिण समे, जब उपगार जाणें भगवंत।
कहै साध साधवी नें बोलाय नें, थे सांभलो एक दिष्टंत ।।१।।

ढाल : १८

[बे-बे रे मुनिवर बहिरण पांगरचा अथवा आउखो तूटा नें सांधो को नहीं]

तिणा काष्ठ नें सूका पानड़ा रे, वले छाल नें तुस रा ढिगला जाण।
त्यांनें जलावै कोयक आयनै रे, अगन मेलै तिण मांहे आण रे।।
गोसालो लेस्या थी खाली हुवो रे ।।१।। आं०

तिण अगन थी बल जल नें भसम हुवा रे, तिण राख में अगन नहीं लिगार रे।
ज्यूं इण म्हांरी घात करवा रै कारणे रे, सर्व तेजू लेस्या काढी इण वार रे।।२।।
हिवै गोसालो तप तेज रहित हुवो रे, ठाला ठीकर ज्यूं हूवो निरधार रे।
सगत नहीं मिनख बालण तणी रे, इणरो डर मत राखो मूल लिगार रे।।
(गोसालो होय गयो ठाली ठीकरो रे) ।।३।।

तेजू लेस्या तो जाबक नीकली रे, लारै तो लेस्या नहीं अंसमात रे।
मुदे तो आ सिद्धाई पूरी पड़ी रे, तिण सूं मिनखां री करतो घात रे।।४।।
हिवै इच्छा हुवै तो साधां तुम तणीं रे, तो थे धर्म री करो चोयणा जाय रे।
वले प्रश्न थे पूछो गोसाला भणी रे, कारण वागरणा पूछो न्याय रे ।।५।।
इम सांभल सगला साधु हरषिया रे, सगला हुवा छै साहस धीर रे।
वीर नें वंदणा करनै नीकल्या रे, आय ऊभा गोसाला तीर रे।।६।।
गोसाला सूं कीधी धर्म चोयणा रे, पडिचोयणा कीधी वले वशेख रे।
अर्थ नें हेत वागरणा तणां रे, प्रश्न पूछ्या तिण नें अनेक रे।।७।।
त्यांरा पूछ्यां रो जाब न आयो तेहनें रे, जब कोप चढ्यो तिण नें ततकाल रे।
ते दांत पीसै नें मन में परजलै रे, लागी अंतर में झालोझाल रे।।८।।
जब गोसालो जाणें सर्व साधां तणी रे, इणरी इण ठामे कर दूं घात रे।
पीड़ा आबाधा कर सकै नहीं रे, तेजू लेस्या नहिं तिण में तिलमात रे।।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थिवर गोसाला रा तिण अवसरे रे, त्यां पिण जाण्यों तिण नें विपरीत रे।
प्रश्न पूछ्चां रा जाब न ऊपनां रे, वले साध मारण री जाणी नीत रे ।।१०।।
जब केयक थिवरां गोसाला भणी रे, तिहांइज छोड़ दिया ततकाल रे।
पखपात न राखी चेलां गुर तणी रे, गुण अवगुण निज नैंणा लिया निहाल रे ।।११।।
वीर जिणंद समीप आय नें रे, त्यां वंदणा कीधी छै बारूंवार रे।
त्यानें जाणै मोटा तीर्थंकर केवली रे, त्यां पासे त्यां लीधो संजम भार रे ।।१२।।
केइ थिवरां गोसाला नें नहीं छोड़ियो रे, ते तो रह्या छै तिण रै पास रे।
केयां खोटो जाण्यो पिण मत छोड़्यो नहीं रे, केइ मन मांहे हुआ अतंत उदास रे ।।१३।।
गोसाला रा थिवर आया भगवंत में रे, जब केयक कहिवा लागा आम रे।
इण चेला गमाया लोकां देखतां रे, इहां आय पड़ाई उलटी माम रे।।१४।।
गोसाला रा थिवर लिया समझाय नें रे, त्यांरै तो ग्यांन तणी छै बात रे।
ओ गोसालो अग्यानी दुष्टी पापियो रे, इण कीधी सूधा साधां री घात रे ।।१५।।
घणा लोकां रै मन इम मानियो रे, गोसालो भाखै ते सतवाय रे।
वीर नहीं छै जिण चोबीसमां रे, अणहूंतो बोलै मूसावाय रे ।।१६।।
केएक उत्तम था ते इम कहै रे, गोसालो जिण नहीं करै अन्याय रे।
सतवादी वीर जिणंद चोवीसमां रे, ए कदेय न बोलै मूसावाय रे ।।१७।।
कितरांएक रो सांसो मिटियो नहीं रे, म्हांनै तो समभ पड़ै नहिं काय जी।
जिण दिन पिण सगला समझ्या नहीं रे, भोल घणीं थी लोकां मांय रे ।।१८।।
श्रावक गोसाला रै सुणिया अतिघणां रे, इग्यारै लाख इगसठ हजार रे।
वीर रै एक लाख वले ऊपरै रे, गुणसठ सहंस इधिक विचार रे ।।१९।।
जद पिण पाखंडी था अति घणां रे, पिण गोसाला रो पाखंड चलियो जोर रे।
वीर जिणंद मुगत गयां पछै रे, भरत में होसी अंधारो घोर रे।।२०।।
तिण में धर्म रहसी जिणराज रो रे, थोड़ो-सो आगिया नों चमकार रे।
झबको पड़ै नें वले मिट जावसी रे, पिण निरंतर नहीं इकवीस हजार रे।।२१।।

० ० ०

दूहा

श्री वीर तणां समोसरण में, दोय साधां री कीधी घात।
वले उपसर्ग कियो भगवंत नें, ते तो अछेरो छै साख्यात ।।१।।
हूंडा नामे अवसर्पिणी, ते काल उतरतो जाण।
दस बोलां री तेहमें, समै-समै अनंती हाण ।।२।।
जे निश्चै होणहार टले नहीं, जो करै कोड़ उपाय।
व्यवहार रूप छै वारता, ते आगी पाछी पिण थाय ।।३।।
कोई निश्चै होणहार तिमहीज हुवै, ते भोलां खबर न कांय।
ते भाव भेद परगट करूं, ते सुणजो चित ल्याय ।।४।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : १९

[आ अणुकंपा जिन आगन्या में]

भगवंते गोसाला नैं चेलो कीधो, ते अखोणरागपणैं कियो जाणों।
इणरा परिचा थकी स्नेह थो इणथी, मोह अणुकंपा सभाव पिछाणों।
निश्चै होणहार टलै नहीं टाल्यो ।।१।।

छदमस्थपणां थी इसड़ी मन आई, वले अवस भावी भाव टालणी नांवै ।
जे निश्चै भाव केवलियां देख्या, ते आगा पाछा कहो किण विध थावै ।।२।।
तीर्थंकर छदमस्थ उपदेश न देवै, सिषणी पिण न करै तिण कालो ।
अवस भावी भाव टालणी नावै, जब कियो भगवंते चेलो गोसालो ।।३।।
जो धुर सूं इणनै वीर चेलो न करता, तो इसड़ा उदंगल क्यांनै थावै ।
तिण समोसरण में आय उपसर्ग कीधो, इण विनां अछेरो कुण उपजावै ।।४।।
एक तिल देखनै पूछा कीधी गोसाले, तिल नीपजसी वीर कह्यो विरतंत ।
जब वीर नें झूठा घालण गोसाले, तिल उखाण नें न्हाख दियो एकंत ।।५।।
आगा जायनें पाछा आया तिण ठामे, गोसाले कह्यो तिल नीपनों नांही ।
जब वीर कह्यो तिल निश्चै नोपनों, फूल रा जीव ऊपना सूंगली मांही ।।६।।
थेट सूं बात मांडी कही सर्व तिल री, जिण विध जीवां कीया पोटपरिहारो ।
इम सांभल नें इण उंधो विचारचो, पोटपरिहार करै छै सर्व संसारो ।।७।।
इण ऊंधी अकल सूं ऊंधी विचारै, पछै वीर सूं अलगो पड़ियो गोसालो ।
सातमों पोटपरिहार आपरो थाप्यो, सनमुख वीरसूं झगड़चो तिण कालो ।।८।।
जब गोसाला नैं साधां झूठो घाल्यो, जब गोसालो कोप चढचो ततकालो ।
जब भगवंत नैं तिण उपसर्ग कीधो, वले दोय साधां नें दीधा बालो ।।९।।
जो गोसाला नैं तिल बतावत नांहि, तो पोटपरिहार ओ क्यानें बतावै ।
इणनें पिण साधु झूठो न कहिता, तो उपसर्ग अछेरो किणविध थावै ।।१०।।
वले गोसाला नै वीर सीखाई, तेजू लेस्या नीपजै इण भांत ।
तिण लेस्या उपजाई सावद्य सेवै, तिणरै मिनख मारण री मन मांहे खांत ।।११।।
तिण लेस्या सूं कीधा अनेक अकार्य, मत बांधे फेलायो लोकां में मिथ्यातो ।
वले लोहीटाण भगवंत नैं कीधो, वले दोय साधां री कीधो घातो ।।१२।।
जो गोसाला नैं लेस्या वीर नहिं सिखावत, तो उपसर्ग किणविध करतो आय ।
जो उपसर्ग नहीं करतो गोसालो, जब एक अछेरो घटतो थाय ।।१३।।
ओ पिण निश्चै होनहार छै, तिणसूं गोसाला नैं लेस्या वीर सीखाई ।
अै पिण भाव दीठा जिम हुवा, तिण मांहे संक म आणों कांई ।।१४।।
फोड़वी लबद अणुकंपा आणे, गोसाला नैं वीर बचायो ।
छ लेस्या नैं छदमस्थ हुंता, मोह करम वस रागज आयो ।।१५।।
मोह करंम उदै अवस आयो ते, टालण समर्थ नहीं जगनाथ ।
वले अवस गोसालो अछेरो करसी, जद किणविध पामै गोसालो घात ।।१६।।
अछेरा दस देख्या अनंता अरिहंता, ते न घटै उपाय करै जो अनेक ।
जद गोसाला नै वीर नहीं बचावै, तो दसां अछेरां में घट जाअै एक ।।१७।।
साधां नैं तो लब्द फोरवणी नांही, जोवो सूतर भगवती मांय ।
पिण अवस भाव निश्चै होनहारो, तिण मांहे संक म राखो कांय ।।१८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसड़ा अजोग नें वीर दिख्या दीधी, वले इसड़ा अजोग नें वीर बचायो ।
ते अवस भावी भाव टालणी नावै, एक अछेरा रो निश्चै ओहीज उपायो ।।१६।।
गोसाला कुपातर नै वीर बचायो, तिण मांहे समदिष्टी धर्म न जाणै ।
जे धर्म जाणें तो भर्म में भूला, ते सावद्य निरवद्य केम पिछाणै ।।२०।।
असंजती गोसालो कुपातर, तिण नै साझ सरीर रो दीधो ।
धर्म जाणें तो जगत दु:खी थो, वले वीर ए काम कांय न कीधो ।।२१।।
तेजू लेस्या मेल गोसालो बाल्या, दोय साध भसम करी काया ।
लबदधारी था साध घणांई, मोटापुरषां आनें क्यूं न बचाया ।।२२।।
गोसाला कुपातर नै वीर बचायो, तिणमें धर्म कहै ते विना विचारो ।
तिण जिणमारग नै ओलखियो नांहि, त्यांरा घट मांहे पूरो घोर अंधारो ।।२३।।
गोसाला नें मरतो वीर बचायो, जो तिण मांहे धर्म जाणें जिनराय ।
तो आप तणां दोय साध न राख्या, ओ पिण किण विध मिलसी न्याय ।।२४।।
गोसाला नें वीर बचायो तिण में, धर्म जाणें सासणनायक साम ।
दोय साध बचावता आप तणां वीर, वले फिर-फिर करता वीर ओहिज काम ।।२५।।
जगत नें मरता देख्या भगवंते, कठेइ आडा न दीधा हाथ ।
धर्म जाणें तो आगो नहीं काढत, तिरण-तारण हुंता श्री जगनाथ ।।२६।।
जो गोसाला नें वीर नहीं बचावता, तो घट जातो अछेरो एक ।
निश्चै होनहार ते किणविध टालै, समझो रे समझो थे आण विवेक ।।२७।।
गोसाला नें वीर बचायो तिण सूं, निश्चैई बधियो बोहत मिथ्यात ।
वले लोहीठाण भगवंत नें कीधो, वले दोय साधां री कीधी घात ।।२८।।
गोसालो बचियां सूं राजी हुआ ते, गोसाला रा केड़ायत जाणो ।
तिण दुष्टी रा जीवियां में धर्म जाणें, त्यांरै मोह मिथ्यात उदे हुओ आणो ।।२६।।
ज्यांरी सरधा नें आचार दोनूं खोटा छै, त्यां तो गोसाला रो लीधो सरणो ।
ते गोसालो-गोसालो कर रह्या मूरख, पिण गोसाला रो पूरो न काढे निरणो ।।३०।।
गोसाला नें पाले पोसे मोटो कीधो, त्यां माइतां नें जो होसी धर्मो ।
तो तिणनै बचाया त्यांनै पिण धर्म, तिणरो ओ परमार्थ ओहीज मर्मो ।।३१।।
तठा पेहली तो जीतब रो उपगार, ते तो उपगार माइतां रो जाणो ।
तठा पछलो जीतब रो उपगार, ते तो वीर तणों उपगार पिछाणो ।।३२।।
ओ तो सावद्य जीतब रो उपगार, ते तो मोह करम वस रागज आण ।
वले पेहली उपगार कियो गोसाला थी, ग्यानादिक गुण रो तें तो निरवद जाण ।।३३।।

० ० ०

दूहा

गोसालो खाली हुवो सर्वथा, कोठग बाग रै मांय ।
तप तेज गमायो सर्व आपरो, तो ही गरज सरी नहीं कांय ।।१।।
वीर सहित सर्व साधां तणीं, जाण्यो घात करसूं तिण ठाम ।
सासण थापसूं मांहरो, ते सरचो न एको काम ।।२।।
रूद्र दिष्टे देखतो थको, लांबा मेलतो निसास ।
दाढ़ी मूंछा रा केस उखणें, घणी खाज खणतो तास ।।३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वले साथल बेहूं कूटतो थको, वले मसलतो बेहूं हाथ।
दोनूं पगां सूं भूम कूटतो कहै, म्हांरी बिगड़ गई वात ।।४।।
आज हणाणो हूं सर्वथा, हा ! हा ! करवा लागो आम।
हूं माठी विचार आयो इहां, म्हांरो बिगड़ गयो सर्व काम ।।५।।
तो हिवै हूं जाऊं इहां थकी, करूं और उपाय।
ज्यूं मत कुसले रहै मांहरो, ते किणविध करै छै जाय ।।६।।

ढाल : २०

[धर्म अराधिए ए]

हिवै कोठग बाग थी नीकल्यो ए, आयो सावत्थी नगर मझार।
जिहां निज श्राविका ए, हलाहली नामे कुंभकार।
गोसालो दुखियो घणो ए ।।१।। आँ०

तिणरी जायगां में पाछो आय नें ए, अंब फल लियो हाथ मझार।
मद पाणी पीतो थको ए, वले गीत गावै बारूंवार ।।२।।
वले बारूंवार नाचतो थको ए, कुंभारी नें नमै सीस नाम।
दोनूं हाथ जोड़नै ए, वले करै तिणरा गुणग्राम ।।३।।
सीतल पाणी माटी भरिया ठामड़ा ए, उलंची-उलंची नें ठाम।
गात्र नै सींचतो ए, माटी नां लेप लगावै ताम ।।४।।
बलूं-बलूं सरीर हुवो तेहनों ए, ते सीतल करवा काज।
करै छै विटंबणा ए, पिण नांणै मन मांहे लाज ।।५।।
भगवंत कहै तिण अवसरे ए, श्रमण निग्रंथ नें बोलाय।
मोनै बालण कारणे ए, लेस्या काढी सरीर मांथी आय ।।६।।
ते लेस्या हुंती अति आकरी ए, जाजलमान वशेख।
मोनै म्हेली तिण थकी ए, बल जाअै सोलै देस ।।७।।
अंग बंग नै मगद देस में ए, मलया नें मालव जाण।
अच्छा बच्छा देस नें ए, कोच्छा पाढ नें लाढ वखाण ।।८।।
वज मोली नें मोसली[1] ए, कोसल अवाहाज ताम।
सोलमों संभूतरा ए, ए सोलै देसां रा नाम ।।९।।
तिण तेजू लेस्या थी सोलै देस नै ए, बाले राख कर दै ताम।
एहवी लेस्या आकरी ए, मेली मोनै बालण रै काम ।।१०।।
ते लेस्या पेठी तिणरा सरीर में ए, बलूं-बलूं करे रह्यो ताम।
कुंभारी री जागां मझे ए, विटंबणा करै तिण ठाम ।।११।।
तिण अंब फल लियो छै हाथ में ए, जाव करै छै अंजली कर्म।
करै छै विटंबणा ए, तिण छोड़ी लाज नै सर्म ।।१२।।
तो पिण ऊंधी करै छै परूपणा ए, तिणरै घट मांहे ओघट घाट।
वज्र पाप ढांकवा ए, चरम परूपै आठ ।।१३।।

१. काशी : (अंगसुत्ताणि भाग २, श० १५, सू० १२१)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ओ छेहलो पाणी[1] मांहरे ए, वले छेहला गावूं छूं गीत[2]।
छेहलो नाटक[3] करूं ए, छेहलो अंजलि[4] करूं इण रीत ।।१४।।
महामेह पुषलसंवट्ट[5] पांचवों ए, सींचाण गंधहस्ती[6] ताम।
वले कहूं सातमों ए, महासिला कंटक संगराम[7] ।।१५।।
हूं छेहलो तीर्थंकर[8] चोबीसमों ए, ते हूं आठमों चरम भगवंत।
इण अवसर्पणी काल में ए, मोख जासूं करमां रो कर अंत ।।१६।।
सीतल माटी पाणी रा ठाम मांहि थी ए, उलंची-उलंची ठाम।
गात्र नें छांटतो ए, वले भूठ बोलै छै आम ।।१७।।
हूं छेहलो तीर्थंकर चोबीसमों ए, इतरा कियां म्हांनै नहीं दोख।
ते कल्पै छै मो भणी ए, म्हांरै जाणो छै वेगो मोख ।।१८।।
जो हूं इतरा वाना करूं नहीं ए, तो मौनै लागे छै उलटा दोख।
इतरा कियां विना ए, हूं जाय न सकूं मोख ।।१९।।
आ तो थित छै काल अनाद री ए, ते छेहला तीर्थंकर नीं जाण।
संका मत राखजो ए, इण विध कियां पोंहचैं निरवाण ।।२०।।
इसड़ी खोटी करै छै परूपणा ए, वज्र पाप ढांकण रै काज।
वीर कहै साधां भणी ए, इतरी करै गोसालो आज ।।२१।।

० ० ०

दूहा

वले कुण-कुण करै छै परूपणा, घणां लोकां रै मांय।
ते जथातथ परगट करूं, ते सुणजो चित ल्याय ।।१।।

ढाल : २१

[अरे हां सुज्ञानी पास जिनंदा बे, अरे हां सुज्ञानी साहिब मेरा बे]
अथवा
[सलूणी रमणी रूड़ी बे अरे हां कुसंगे बोलै कूड़ी बे]

ओ जस महिमा कीरत वधारण, वले मान बड़ाई ताम।
ते तो गोला फेंकै गालां तणां, ते तो मत राखण रै काम।
गोसालो जिण नहीं रूड़ो बे, अरे हां अग्यानी भितर कूड़ो बे ।।१।। आं०

ते मन मांहे जाणै हूं प्रतख खोटो, साचा श्री विरधमान।
ते तो करमां वस जाणतो थको, वले कुण-कुण करै छै तान ।। गो० २।।

आप तीर्थंकर जेम पूजावै, भगवंत नै कहै इन्द्रजाल।
अन्हाखी थको बकवो करै, ओ तो दे-दे अणहूंतो आल ।।३।।

सात पोटपरिहार परूप्या, आपो छिपावण काम।
ओ भूठ बोलै निसंक सूं, वले दुष्ट घणां परिणाम ।।४।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रूप रच्यो है साधु नों वारूं, गुण नहीं मूल लिगार।
जाणै जुगां रो जूनो जती, बणियो सासण रो सिणगार ।।५।।
गोसाले लोक धूतवा माटै, साधु रूप रच्यो अद्भूत।
मूंहढे बांधी मुंहपत्ती, ओघो लियो बिना करतूत ।।६।।
नहीं उठाण कम बल नै वीर्य, पुरषाकार प्राकम नहीं ताय।
ए पांचां रो कारण को नहीं, होसी होणहार ते हो जाय ।।७।।
करणी रो कारण को नहीं छै, होणहार तिम होय।
एहवी ऊंधी करै परूपणा, घणां लोकां नै दीधा डबोय ।।८।।
सीतल पाणी पीधां सूं मोख न अटकै, अस्त्री सेव्यां न अटकै मोख।
बीज हरीकाय भोगव्यां, त्यांमें पिण न बतावै दोष ।।९।।
छेहलो तीर्थंकर बाजै लोकां में, तिणसूं हुवो घणों मगरूर।
पिण अतिशय गुण एको नहीं, यूं ही थोथो चलायो फितूर ।।१०।।
आठ चरम तिण छेहला परूप्या, ते पिण भूठ एकंत।
महाकल्प ते मन सूं उठाय नैं, तिणरा भूठ रो बोहत विरतंत ।।११।।
आप तो जाबक गुण विन थोथो, थोथो सहु पिरवार।
पलाल ज्यूं पुंज दीसै घणों, मांहे कण नहीं मूल लिगार ।।१२।।
इणरै सरधा मांहे अतंत अंधारो, आचार में नहीं ठिकाण।
भारीकरमां हुंता ते जीवड़ा, पड़िया खोटा मत में आण ।।१३।।
जिण काले जिण केवली हुंता, कहिता मनोगत बात।
भारीकरमां रै गोसाला तणों, मिटियो नहीं मूल मिथ्यात ।।१४।।
वले वज्र पापनैं ढांकवा काजे, पाणी परूपै च्यार।
वले अपाणी च्यार परूपिया, त्यांरो करै घणों विसतार ।।१५।।
एक तो पाणी परूपै थाल रो, बीजो पाणी छाल रो जाण।
तीजो पाणी फूलां तणों, चोथो सुध पाणी पिछाण ।।१६।।
छ मास लगे सुध खादिम भोगवै, तिण में दोय मास पुढवी संथार।
काष्ठ संथारो दोय मास नों, दोय मास नों डाभ मभार ।।१७।।
तिण नैं छ मासे नीं छेहली राते, दोय देव आवैं तिण पास।
पूर्णभद्र माणभद्र तेहनीं, सेवा करै आण हुलास ।।१८।।
सीतल अगोंचो लेई हाथ में, गात्र लूहै आय।
तिणनैं भलो जाणै तो तेह नैं, आसीविस करम करै ताय ।।१९।।
जो ऊ भलो न जाणैं तेहनैं, तो अगन सरीर में थाय।
तिण अगन सूं सरीर प्रजलै, घणों बलूं-बलूं करै ताय ।।२०।।
इतरी रीत कियां पछै, ओ तो जाअै मोख मभार।
इणविध सुध पाणी तणो, कहै घणों विस्तार ।।२१।।

० ० ०

दूहा

एहवी ऊंधी करै छै परूपणा, ते भूठ में भूठ अनेक।
तिणरो श्रावक अयंपुल आवै तिहां, ते सुणजो आंण विवेक ।।१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २२

[पुन नीपजै सुभ जोगं सूं रे]

सावथी नगरी में तेह में रे लाल, अयंपुल नामे जाण हो। भविक जण !
ते श्रावक छै गोसाला तणों रे लाल, तिण रै रिध प्रभूत बखाणहो। भविक जण !
श्रावक सुणजो गोसाला तणों रे लाल ।।१।। आं०

ते गोसाला रै मत मझे रे लाल, प्रवीण घणों अतंत हो।
विचरै छै आतमा भावतो रे लाल, गोसाला रो मारग जाणै तंत हो ।।२।।
ते रात समां रै विषे एकदा रे लाल, कुटंब जागरणा जागतो जाण हो।
तिण अवसर मन मांहे ऊपनीं रे लाल, हल रो छै कुण संठाण हो ।।३।।
बीजी वार अयंपुल मन चिंतवै रे लाल, मांहरा धर्म आचार्य ताहि हो।
गोसालो जी तीर्थंकर मोटका रे लाल, सर्व ग्यान दरसण त्यां मांहि हो ।।४।।
ते विचरै छै सावत्थी नगरी मझे रे लाल, हलाहल कुंभारी री जायगां मांहि हो।
संघ सहित परवरयो थको रे लाल, आतमा नैं भाये रह्या ताहि हो ।।५।।
तो श्रेय किलाण छै मो भणी रे लाल, सूर्य उगां पछै बांदू जाय हो।
सेवा-भगत करूं तेहनो रे लाल, त्यांनै प्रश्न पूछूं हित ल्याय हो ।।६।।
एहवी राते कीधी विचारणा रे लाल, सूर्य उगां पछै परभात हो।
तिण मरदन सिनान किया तिहां रे लाल, चंदण सूं चरच्यो गात हो ।।७।।
मोल मूंहघा नैं हलका घणां रे लाल, एहवा कपड़ा गेहणा पेहरचा ताम हो।
सगलोई अंग सिणगारियो रे लाल, घर बारे नीकलियो आम हो ।।८।।
हलाहल कुंभारी री जायगां तिहां रे लाल, अयंपुल आयो तिण वार हो।
तिण देख्यो गोसाला नै दूर थी रे लाल, अंबफल देख्यो हाथ मझार हो ।।९।।
जाव नमण करै कुंभारी भणी रे लाल, गात्र पाणी सींचतो देख्यो ताय हो।
जब अयंपुल लाज्यो मनमें अति घणों रे लाल, हलवे-हलवे पाछा दीया पाय हो ।।१०।।
जब गोसाला रा थिवरां जाणियो रे लाल, अयंपुल लाज्यो देखी ताहि हो।
जब अयंपुल नै कहै छै बोलाय नै रे लाल, थारै इसड़ी उपनीं मन मांहि हो ।।११।।
ते बात पूछण तूं आवियो रे लाल, तूं लाज्यो अंबफल देखे हाथ हो।
ए बात साची कै साची नहीं रे लाल, अयंपुल कह्यो साची छै बात हो ।।१२।।
तूं लाज्यो अंबफल देखे हाथ में रे लाल, ते तूं संका मन में मत जाण हो।
भगवंत परूपै आठ चरम नै रे लाल, पछै पोंहचै निरवाण हो ।।१३।।
इण कारण अयंपुल गुर तांहरो रे लाल, सरीर छांटै पाणी सूं जाण हो।
आठ चरमादिक सगला बाना करी रे लाल, सीझै बुझै जासी निरवाण हो ।।१४।।
ए वचन थिवरां रा सांभल्या रे लाल, अयंपुल घणों हरखत थाय हो।
हिवै तिहां थी उठी नै नीकल्यो रे लाल, गोसाला नैं वंदण जाय हो ।।१५।।
जब थिवर गोसाला कनै गया रे लाल, अंबफल दियो एकंत न्हखाय हो।
अयंपुल आय वांदे बेठो तिहां रे लाल, गोसालो कहै तिणनै बतलाय हो ।।१६।।
इणरै मनमें उपनी ते थिवरां कही रे लाल, तिम हिज गोसाले कही जाणहो।
आठ चरमादिक सगली मांडी कही रे लाल, हल छै वंसी मूल संठाण हो ।।१७।।
वीणा वजावै गीत गावतो रे लाल, गावतो-गावतो करै तान हो।
वीरगा-वीरगा मुख ऊचरै रे लाल, वीर भाई-वीर-भाई करतो मान हो ।।१८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एहवो वचन बे-बे वेलां उचरै रे लाल, उनमाद नों कारण जाण हो।
तो पिण श्रावकां रै संका पड़ै नहीं रे लाल, ते पिण जाणै छै कारण निरवाण हो ।।१६।।
ते श्रावक पिण मुख सूं इम कहै रे लाल, आ छेहलां तीर्थंकर नीं रीत हो।
त्यांरी मत ढंकार्णा मोह करम सूं रे लाल, तिणसूं गोसाला री पूरी परतीत हो ।।२०।।
वले प्रश्न अयंपुल पूछिया रे लाल, त्यांरा अर्थ सुणै हरषत थाय हो। भ०।
भाव सहित वंदणा करै रे लाल, पछै आयो जिण दिस जाय हो ।।२१।।

० ० ०

दूहा

गोसालो मरण जाण्यो आपरो, जब थिवरां नैं कहै पूरण खांत।
थे काल गयो जाणो मो भणी, म्हांरी महिमा कीजो इण भांत ।।१।।

ढाल . २३

[जंबूद्वीप मझार रे]
अथवा
[भर जोवन रै मांय रे देही निरोगी हुवै]

सुरभी गंध पाणी आण रे मुझ, सरीर नैं।
रूड़ी रीत न्हवरावजो ए ।।१।।
परमल अति सुखमाल रे, गंध कसाई ए।
तिण करे सरीर नैं लूहजो ए ।।२।।
गोसीस चंदण आण रे, सरस ततकाल नों।
मुझ गातर लेप लगावजो ए ।।३।।
महामोटां जोग वशेष रे, सपेत ऊजलो।
इसडो कपड़ो आण नैं ए ।।४।।
ढांकजो मुझ सरीर रे, रूडी रीत सूं।
ज्यूं दीसै अति सोभतो ए ।।५।।
अलंकार करो सर्व अंग रे, विभूसत करो घणों।
ज्यूं लागै अति रलियामणो ए ।।६।।
सरीर घणों सिणगार रे, दीपक ज्यूं दीपतो।
देखतां नयण ठरै ए ।।७।।
पुरुष उपाड़ै सहंस रे, एहवी सेवका।
ते रूड़ी रीत बणायजो ए ।।८।।
करजो हजारां रूप रे, सेवका मझे।
ते देखतां लोचन ठरै ए ।।९।।
सावत्थो नगरी रै मांहि रे, घणां पंथ भेला हुवै।
तिहां कीजो उद्‌घोषणा ए ।।१०।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इत्यादिक रिध सतकार रे, मुझ सरीर नैं ।
नगरी बारै काढजो ए ।।११।।
वले मुख सूं कहिजो आम रे, संका मत आणजो ।
आज हुवो अंधारो भरत में ए ।।१२।।
इण अवसर्पिणी मांहि रे, चरम तीर्थंकर ।
ते करम खपाय मुगते गया ए ।।१३।।
जस कीरत गुणग्राम रे, कीजो अति घणां ।
ज्यूं जिणमारग दीपै घणों ए ।।१४।।
गोसालो मंखली-पूत रे, जिण चोवीसमों ।
ते सींह तणी परे विचरता ए ।।१५।।
ते तारण-तिरण जिहाज रे, भव जीवां तणां ।
इणविध कीजो उद्घोषणा ए ।।१६।।
ते पुरष गया छै काल रे, तो हिवै भरत में ।
मिथ्यातज वधसी अति घणों ए ।।१७।।
ते सासणनायक साम रे, विच्छेद गयां थकां ।
हिवै कासप अति गूंजसी ए ।।१८।।
कासप री मन खांत रे, आज पूरीजसी ।
जाणै मत फेलांसूं मांहरो ए ।।१९।।
त्यां पुरुषां नै देख रे, पाखंडी धूजता ।
सनमुख कोइ न फुरकता ए ।।२०।।
आगा थी जाता भाग रे, पग नहीं मांडता ।
छिप जाता काने सुण्यां ए ।।२१।।
इत्यादिक बोल अनेक रे, कहिजो जुगत सूं ।
बहु जन में संभलावता ए ।।२२।।
पाड़े मोटे-मोटे सब्द रे, एहवी उदघोषणा ।
ठाम-ठाम करजो घणीं ए ।।२३।।

० ० ०

दूहा

ए वचन गोसालो कह्या तके, थिवरां सुणैं तिण वार ।
विनैं सहीत हाथ जोड़ नै, रूड़ी रीत किया अंगीकार ।।१।।
हिवै गोसालो सातमीं रात में, लाधो समकत सार ।
अधवसाय मन में ऊपनों, जब करै छै कुण विचार ।।२।।
म्है कूड़ कपट करे घणों, मत बांध्यो एकंत ।
हूं प्रतख झूठो निसंक सूं, साचा श्री भगवंत ।।३।।
जो ए सल मांहे रहै मांहरे, तो बध जाऐ अनन्त संसार ।
नरकादिक दुख भोगवूं, तिणरो कहितां न आवै पार ।।४।।
तो हिवै सल न राखणों, आलोवण कियां सुध थाय ।
हिवै करै आलोवण किण विधे, ते सुणजो चित ल्याय ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २४

[चंदगुपत राजा सुणै]

हूं तो निश्चै तीर्थंकर छूं नहीं, हूं केवलग्यानी पिण नांही रे।
जे अतसय गुण छै जिणेसर तणां, ते जाबक नहीं मों मांही रे।
हा ! हा ! रे पापी मैं स्यूं कियो ।।१।। आँ०

हूं तो गोसालो मंखली-पूत छूं, भारीकरमो मूढ मिथ्याती रे।
दोय साध भगवंत रा, त्यांरो हुवो हूं घाती रे।।२।।
अे तो वीर जिणंद चोबीसमां, ते तो च्यार तीर्थ नां थापी रे।
ते तो निश्चै तीर्थंकर केवलो, ते म्है जाणे उथाप्या पापी रे।।३।।
मौनें दिख्या दे वीर चेलो कियो, वले, बहुसुरती मोनें कीधो रे।
ते उपगार विसारे में घालियो, त्यांनें उलटो म्है दुख दीधो रे।।४।।
तेजू लेस्या जिण विध नीपजै, ते पिण मौनें वीर बताई रे।
त्यांरो विनो भगत तो जीहांई रह्यो, त्यांनें उलटो हुवो दुखदाई रे।।५।।
त्यांरा दोय साधां नै म्है मारिया, तेजू लेस्या मेहली म्है पापी रे।
वले लेस्या मेहली म्है वीर नै, त्यांनै मारण री मन में थापी रे।।६।।
हूं प्रतणीक सर्व साधां तणों, त्यांरो अंतरंग मांहे वेरी रे।
म्है काण न राखी किण साध री, त्यांसूं दुष्ट परिणामे रह्यो गेरो रे।।७।।
वले आचार्य नै उवज्झाय नों, त्यांरो अजस करतो वारूंवारो रे।
त्यांरा अवरणवाद बोल्या घणां, त्यांरी कीधी अकीरत अपारो रे।।८।।
अछता आल दिया म्है अति घणां, त्यांरी कर-कर कूड़ी बातो रे।
म्है च्यार तीथ सूं पापिये, पड़िवजियो मिथ्यातो रे।।९।।
हूं तो पूरो विगूतो मिथ्यात में, घणां जणां नें विगोया रे।
त्यांनें संसार रूपिया समद में, ऊंधी सरधा में न्हाख डबोया रे।।१०।।
म्है तेजू लेस्या मेहली वीर नें, ते लेस्या मो में पाछी आई रे।
तिण तेजू लेस्या रा तप तेज थी, म्हांरै बलण घणीं छै मांही रे।।११।।
तिण सूं रोग पितंजर ऊपनों, वले दाह लागी विकरालो रे।
तो आज सातमीं रात छै, छदमस्थ थको करसूं कालो रे।।१२।।
जद वीर मोनें न बचावता, तो हूं कुसले न रहितो पापी रे।
दोय साधां नें भगवंत रो, मूल न ह्वैतो संतापी रे।।१३।।
हूं पापी जीव बचायां थकां, गुण किणरै ई नीपनों नांहीं रे।
म्है हाण पाड़ी जिण-धर्म री, उलटा न्हाख्या मिथ्यात रै मांही रे।।१४।।
मोटा-मोटा अकार्य म्है किया, वले हुवो करमां सूं भारी रे।
मो जीव्यां थी ए गुण नीपनों, म्हांरो किम होसी निसतारी रे।।१५।।
एहवी करै विचारणा, निज थिवरां नें बोलाया रे।
जब वचन लेई थिवरां तणों, भारी-भारी सूंस कराया रे।।१६।।
भारी सूंस कराय थिवरां भणी, पछै मांड कही सर्व बातो रे।
हूं पूरो पाखंडी थेट रो, म्है कीधी साधां री घातो रे।।१७।।
तीर्थंकर वीर जिणंद चोबीसमां, ते तो विचरै छै साहसीको रे।
हूं गोसालो मंखलीपूत छूं, हूं रह्यो पाखंड में तीखो रे।।१८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थे काल गयो जाणों मो भणी, हूं कहूं ते सगला कीजो रे।
डावा पग रै बांधजो सींदरी, म्हारा मूंढा में थूकीजो रे ।।१६।।
सावत्थी नगरी नैं मझे, तीन च्यार घणां पंथ तामो रे।
तिहां आमो-साह्मो सरीर घींसालजो, बारूंवार पारजो मामो रे ।।२०।।
ठाम-ठाम कीजो उद्घोषणा, मोटे-मोटे सब्दे विख्यातो रे।
गोसालो नहीं जिण केवली, पापी कीधी साधां री घातो रे ।।२१।।
तिण आउखो आज पूरो कियो, छदमस्थपणें कियो कालो रे।
इत्यादिक निज ओगुण कह्या घणां, ते कहिता म कीजो टालो रे ।।२२।।
तार्थंकर अरिहंत जिण केवली, ते तो समण भगवंत महावीरो रे।
त्यांनै परगट कीजो सहर में, घणां लोकां रै तीरो रे ।।२३।।
मुझ सरीर नैं भूंडी तरे, काढजो नगरी बारो रे।
जे कही ते सर्व सरलपणें, पछै काल कियो तिण वारो रे ।।२४।।

० ० ०

दूहा

गोसाले काढ्यो सल आपरो, तिण पाछ न राखी कांय।
तिण मान अभिमान सर्व छोड़नै, निज अवगुण दिया बताय ।।१।।
एहवी करै आलोवणा, ते तो विरला जाण।
सल काढे मरै तिण पुरुष नां, जिणवर करै छै बखाण ।।२।।
हिवै गोसाला रा थिवरा तिहां, काल गयो गोसालो जाण।
त्यांनै आय बणी छै सांकड़ी, त्यांसूं मेलणी नांवै माण ।।३।।
ते वचन गोसाला रो राखवा, वले निज सूंस राखण काज।
ते नाम मातर छानै करै, चोड़ै करतां आवै लाज ।।४।।
गोसाले तो खोटो मत छोड़ियो, तिण तो जाबक दियो छै उठाय।
जे भारीकरमां जीवड़ा, त्यांसूं मत छोड़्यो नहिं जाय ।।५।।

ढाल : २५

[सुण हे सुवटी मत कर सुत नी आस]

थिवर मांहोमांही चिंतवै, हिवै करवो कवण विचार।
जे नायक था सासण तणां, त्यां दीधी बात बिगाड़।
सुणो भाई थिवरां, म करो मत रो उघाड़ ।।१।। आं०

आपे तो यांनें जाणता, ए ग्यान गुणां भरपूर।
त्यां तो मुख सूं इम कह्यो, म्है जाबक कियो फितूर ।।२।।
उघाड़ कियां में गुण नहीं, खोटो जाणै रे लोक।
जब पड़ै बिखेरो मत मझे, सहु जाण लेवेला फोक ।।३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपां नें दिन काढणा, इणहीज मत रै मांय।
तिणसुं बात बारै मत काढजो, चुप राख्यां गुण थाय ।।४।।
गोसाले कह्यो छै जिम करां, तो लागै घणी विपरीत।
न्यात जात सर्व लोक में, जाअै निज परतीत ।।५।।
गोसालो काल गयां थकां, करवा लागा विचार।
जब कुंभारी नां घर तणां, आडा जड़्या किमाड़ ।।६।।
कुंभारी नीं जायगां मझे, बहु मझ देस में रे जाय।
नगरी आलंकी सावत्थी, तिहां रूड़ी रीत बणाय ।।७।।
डावा पग रै बांधी सींदरी, गोसाला रै तिण ठाम।
तीन बार थूक्यो मुख तेहनै, वले करवा लागा आम ।।८।।
तिण सावत्थी नगरी मझे, तीन च्यार घणां पंथ मांय।
आमो साह्यो घींसाल्यो तेहनै, सींदरी हाथ संभाय ।।९।।
नीचो-नीचो मुख करी, सब्द कह्यो तिण काल।
उदघोषणा करनै कह्यो, ओ मंखली-पूत गोसाल ।।१०।।
ओ नहीं अरिहंत जिण केवली, ओ डाकोतरा री जात।
इण कियो अकार्य पापिये, कीधी दोय साधां री घात ।।११।।
छदमस्थपणे ओ चल गयो, आसा अलूधो रै आज।
वले करम बांध भारी हुवो, इणरो न सर्‍यो आतम काज ।।१२।।
श्रमण भगवंत महावीर जी, अै निश्चै देवातदेव।
ते अतिसय गुणकर दीपता, त्यांरी इंद्र करै छै सेव ।।१३।।
गोसाले कह्यो थो जिम कर्‍यो, त्यां नगरी नें आलंक।
ते जथातथ किणविध करै, जे भारीकरमां बंक ।।१४।।
हिवै दूजी बार महिमा करै, ते मत राखण तिण वार।
खोलै डावा पगां री सींदरी, वले किया उघाड़ा दुवार ।।१५।।
सुरभीगंध पाणी करी, न्हवरायो तिण काल।
पेहिला कह्यो गोसाले तिम कर्‍यो, कीधा सगला बोल संभाल ।।१६।।
मोटी रिध सतकार सूं, काढ्यो नगरी रै बार।
तिणरा किया महोछव अति घणां, सुतर में घणों विसतार ।।१७।।

० ० ०

दूहा

काल कितोएक बीतां पछै, भगवंत कियो विहार।
सावत्थी नगरी थी नीकले, चाल्या जनपद देस मझार ।।१।।
तिण काले नें तिण समे, मेढीगाम नगर थो ताहि।
साण कोठ नामे बाग थो, ईसाण कूण रै मांहि ।।२।।
तिण साण कोठ नामा बागथी, नेड़ो मालुआ कच्छ थो एक।
ते पान फूल फलां करी सोभतो, तिण में रूड़ा विरख अनेक ।।३।।
तिण मेढीगाम नगर मांहे वसै, रेवती गाथापतणी नाम।
कोइ धन कर गंज सकै नहीं, रिध प्रभूत छै ठाम-ठाम ।।४।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : २६

[हंस हंस बांधै करम अथवा आछे लाल]

तिहां भगवंत श्री महावीर, विचरत साहस धीर। आछे लाल।
मेढ़ीगाम पधारिया ॥१॥
मेढीगाम नगर रै बार, साण कोठ बाग मझार।
तिण बाग में वीर समोसरया ॥२॥
साथे मोटा-मोटा अणगार, वले सिष्यां रो बहु पिरवार।
मोटे मंडाणे वीर आविया ॥३॥
तिहां आया लोक अनेक, कीधी सेवा भगत वशेख।
जिण दिस आया तिण दिसे गया ॥४॥
तिण अवसर श्री महावीर, त्यांरै आतंक रोग सरीर।
वेदन वेदै अति आकरी ॥५॥
ते वेदन जाजलमान, कायर कंपै सुण कान।
ते अहियासतां अति दोहिली ॥६॥
पितंजर परगट्यो सरीर, समे परिणामे खमैं महावीर।
दाह उपनों सर्व सरीर में ॥७॥
लोहीठाण हुवो तिण काल, ते वेदना अति विकराल।
वीर वाणी अटके गई ॥८॥
च्यारूं वर्ण रै मांहोमांही आम, लोक बात करै छै ठाम-ठाम।
भगवंत नै करड़ो रोग ऊपनों ॥९॥
वीर नै गोसाला रै संवाद, हुवो कोठग बाग में विवाद।
जब तेजू लेस्या मेली वीर नें ॥१०॥
तिण लेस्या रो लागो ताप, ते रह्यो सरीर में व्याप।
जब वीर वाणी अटकी तेह सूं ॥११॥
छ मास तणें अंत जोय, जब रोग पितंजर होय।
दाह उपजसी सर्व सरीर में ॥१२॥
छदमस्थ थको करसी काल, इम कह्यो थो जद गोसाल।
ए बात मिलती दीसै तेहनीं ॥१३॥
वीर कह्यो जद मूओ गोसाल, तिणरो तो आयो निकाल।
ते पिण वचन नहीं विगटियो ॥१४॥

० ० ०

दूहा

तिण काले नें तिण समे, भगवंत नों सिष सुवनीत।
सीहो नामे अणगार थो, तिण में साध तणीं सुध रीत ॥१॥
बेले-बेले निरंतर तप करै, सूर्य साह्मो लेवै आताप।
मालुआ कच्छ री पाखती, दोनूं हाथां नैं ऊंचा थाप ॥२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण ठामे ध्यान ध्यावतां, उपनों मन में अधवसाय।
म्हांरा धर्माचार्य वीर नैं, रोग ऊपनों आय ।।३।।
छ मास रै छेहड़ै लेस्या थकी, छदमस्थ थका करसी काल।
इम सीहे सुणी लोकां कनै, उठी मोह नी झाल ।।४।।

ढाल : २७

[बालम मोरा हो बिछडिया घणो संभरं अथवा सहियां हे मोरी आज सोनं रो सूरज ऊगियो]

हिवै सीहो अणगार तिण अवसरे, तिण पाम्यो घणों दुख अतंत।
जिणंद मोरा हो।
मोटो दुख माणसीक मन ऊपनों, जाण्यो काल करसी भगवंत।
जिणंद मोरा हो।
तुझ विरहो मुझ दोहिलो ।।१।। आं०
हिवै हूं प्रश्न पूछसूं केहनै, कुण देसी प्रश्नां रा मोनैं जाब।
तुझ दरसण री ह्वेती मौनै चावना, जब दरसण करतो सताब ।।२।।
तो हिवै सर्व पाखंडी गूंजसी, वले बधसी घणों मिथ्यात।
अंधकार होसी भरतखेतर में, जाण पूरी अमावस री रात ।।३।।
आप विना इण भरतखेतर मझे, सर्व सासण होसी अनाथ।
वले हलुकरमां जीवां तणों, त्यांरो कुण काढसी मिथ्यात ।।४।।
आप विनां इण भरतखेतर मझे, इसड़ी वाणी कुण वागरै आम।
ते सुण-सुण भवियण जीवां तणां, तुरत सुलटा हुवै परिणाम ।।५।।
तीनसौ नै तेसठ आप भाषिया, पाखंडियां तणां मत जाण।
आप विना पाखंडी घणां जीव नै, त्यांरा मत में न्हाखसी ताण ताण ।।६।।
अंतरंग मांहे दुख व्याप्यो घणों, तिणरी छाती भराणी छै ताहि।
जब आतापना भूम थी नीकल्यो, गयो मालुआ कच्छ मांहि ।।७।।
मालुआ कच्छ नैं मझ तिहां गयो, तठै मिनख नहीं कोइ ताम।
तिहां मोटे-मोटे सब्दे रोवै घणों, घणी कूक पाड़ै तिण ठाम ।।८।।
जो आप आउखो पूरो कियां, किणनै कहिसूं हिया री हूं बात।
मुझ नैं आप तणों आधार छै, आप विनां हूं निश्चै अनाथ ।।९।।
इणविध आक्रंद करै घणों, मोटे सब्दां रोवै बांगां पार।
तुझ विना तो हूं दुखियो घणों, म्हांरो किम नीकलै जमवार ।।१०।।
ए मोह करम जोरावर जीव नै, तिणसूं करै अनेक अकाज।
तिण उदे आयां संवली सूझे नहीं, ते जाणै छै श्री जिणराज ।।११।।

० ० ०

दूहा

वीर जाण्यो सीहा नैं रोवतो, जब कहै साधां नैं विचार।
अंतेवासी सिष मांहरो, सीहो नामे अणगार ।।१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते रोवै छै मालुआ कछ मभ्भे, सगली बात कही विसतार।
तेड़ ल्यावो हिवै तेहनें, म करो ढील लिगार ॥२॥
साधु तिहां थी नीकल्या, आया सीहा रै तीर।
ते साध कहै छै सीहा भणी, तोनै बोलावै श्री महावीर ॥३॥
हिवै सीहो तिहां थी नीकल्यो, आयो भगवंत पास।
वंदणा करे श्री वीर नें, तिहां ऊभो अतंत उदास ॥४॥

ढाल : २८

[कपूर हुवै अति ऊजलो जी]

श्री वीर जिणंद चोवीसमां रे, कहै सीहा नै बोलाय।
जे-जे सीहा रै मन ऊपनीं रे, ते दीधी छै वीर बताय।
रे सीहा ! मत कर फिकर लिगार ॥१॥ आं०

थारै ध्यान करतां मन ऊपनीं रे, भगवंत रै उपनों आतंक रोग।
म्हांरा धर्माचार्य तेहनों रे, थे पड़तो जाण्यो विजोग ॥२॥
थे जाण्यो धर्मगुर मांहरा रे, छदमस्थ थका करसी काल।
केइ अणतीर्थी इम भाषसी रे, तिण सूं उठी थारै मोह भाल ॥३॥
तिण कारण तूं रोयो घणों रे, मालुआ कच्छ रै मांही।
बांगां पाड़ी छै अति घणी रे, मोटे-मोटे सब्दे ताही ॥४॥
सीहे विलाप कियो तके रे, वले चिन्तवी थी मन मांय।
ते वीर सगली सीहा नै कही रे, ते सगली आगूंच दीधी बताय ॥५॥
वीर कहै सीहा ! वारता रे, कहै साची कही के नांहीं।
जब सीहो कहै साची वारता रे, भूठ नहीं तिण मांही।
रे जिणेसर ! म्हांरी कही मनोगत बात ॥६॥

हूं गोसाला रा ताप थी रे, काल न करूं छ मासा रै अंत।
लोक बातां करै ते भूठा थका रे, ते साच न जाणै मतवंत ॥७॥
साढा पनरै वरसां लगे रे, केवलग्यान सहीत।
गंधहस्ती नीं परे विचरसूं रे, हिवै जाबक रोग रहीत ॥८॥
हिवै जा तूं सीहा ! इहां थकी रे, मेढीगाम नगर रै मांय।
तिहां गाथापतणी छै रेवती रे, तिण रै घर तूं जाय ॥९॥
तिण म्हांरै अर्थे नीपजावियो रे, ते कोल्हापाक पिछाण।
तिण नें तूं मत ल्यावजे रे, आधाकरमी दोषण जाण ॥१०॥
जे उणरै अर्थे नीपनों रे, विजोरापाक वशेष।
ते तूं ल्याव निसंक सूं रे, सुध निरदोषण देख ॥११॥

० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

इम सांभल नें सीहो मन हरषियो, वले पाम्यो अतंत संतोष ।
तो हिवै जाय सताब सूं, पाक ल्याऊं निरदोष ॥१॥
हिवै भगवंत नें वंदणा करे, आयो मेढीगाम में ताहि ।
जिहां रेवती नों घर छै तिहां, परवेस कियो तिण मांहि ॥२॥

ढाल : २९

[वीर बखाणी राणी चेलणा जी]

रेवती देख्यो सीहो मुनि आवतो जी, हरषत हुई मन मांय ।
आसण छोड़े ऊभी थई जी, सात आठ पग साह्मी आय ।
साधजी भलांई पधारिया जी ॥१॥ आं०

तीन प्रदिषणा दे करी जी, वांदै छै बारूं जी बार ।
पांचूंई अंग नमाय नें जी, मन मांहे हरष अपार ॥२॥
आज म्हारी रे जागी दसा जी, पूगी म्हांरा मन तणीं कोड ।
आज भलो भाण उगियो जी, भाग कियो म्हांरै जोर ॥३॥
आज करतारथ हूं थई जी, मुनिवर आया म्हांरै वार ।
ज्यां पुरुषां तणीं चावनां जी, त्यांरो म्है तो दीठो दीदार ॥४॥
किण प्रयोजन आप पधारिया जी, ते कहि नें बतावो जी मोय ।
जब सीहो कहै रेवती भणी जी, एक ओषध आप तूं मोय ॥५॥
कोल्हापाक थे वीर अर्थे कियो जी, ते लेणो कल्पै नहीं मोय ।
बीजोरापाक तुझ अर्थे कियो जी, ते बेहराय निरदोष जोय ॥६॥
कुण ग्यानी हो थांरै एहवा जी, त्यां कही म्हांरी छानी जी बात ।
थे परगट कही मो आगले जी, ते उत्तर दो सामीनाथ ! ॥७॥
वीर जिणंद चोबीसमां जी, त्यांसूं छानी नहीं कांइ बात ।
ते लोक अलोक जाणें सर्वथा जी, त्यांरा कह्यां सूं जाणूं साख्यात ॥८॥
ए वचन सीहा तणों सांभली जी, रेवती हरषत थाय ।
तिण दान दियो सीहा अणगार नै जी, मन रलियायत थाय ॥९॥
दरब दातार दोनूं सुध था जी, तीजो पातर सुध जाण ।
वले सुध तीन करण तीन जोग सूं, इणरै इसड़ी जोगवाई मिली आण॥१०॥
तिण ओषध बेहरायो अति भाव सूं जी, वले उछरंग पाम्यो तिण वार ।
तिहां देव आउखो तिण बांधियो जी, वले कीधो छै परत संसार ॥११॥
तिहां सुगंध पाणी देव वरसावियो जी, वले बूठा पांच वर्ण जी फूल ।
वले विरखा करी सोवन तणीं जी, बूठा वले वसतर अमूल ॥१२॥
देव बजावै देव-दुंदभी जी, आकास रै अंतर ठाम ।
मोटे सब्दे घोष पाड़ियो जी, दान रा किया गुणग्राम ॥१३॥
धिन-धिन करै छै देवता जी, धिन-धिन करै नर-नार ।
रेवती गाथापतणी नै कहै जी, इण सफल कियो अवतार ॥१४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वले मेढी गाम नगर मझे जी, घणां लोक करै गुणग्राम।
इण जीतब जनम सुधारियो जी, तिण साध प्रतिलाभिया ताम ।।१५।।
पांच दरव परगट हुवा जी, ओ पिण लोक इचरज देख।
तिण सूं ठाम-ठाम बातां करै जी, विवरा सुध विशेख ।।१६।।

० ० ०

दूहा

हिवै सीहो तिहां थी नीकल्यो, आयो भगवंत पास।
पाक सूंप्यो भगवंत नें, मन मांहे अतंत हुलास ।।१।।
पाक लेई वीर हाथ में, प्रक्षेप्यो सरीर मझार।
ततकाल मिटी दाह वीर नीं, सुखसाता हुई तिणवार ।।२।।
रोग रहित हुआ वीर सर्वथा, वल बधियो सरीर मझार।
तेज प्राकम बधियो अति घणों, ते कहितां न आवै पार ।।३।।
वाणी वागरवा समर्थ हुवा, चोबीसमां जिणराय।
जब कुण-कुण जीव हरषत हुआ, ते सुणजो चित ल्याय ।।४।।

ढाल : ३०

[सोरठ देश मझार द्वारका नगरी सार आज हो वसुदेव राजा राज करै तिहां जी]

वीर लियो बीजोरापाक, तिण सूं हुय गया चाक।
आज हो सीहो मुनीसर ल्यायो बेहरनै जी ।।१।।
साध साधवियां सुविसेष त्यां पाम्यो हरष संतोष।
आज हो मन रा मनोरथ फलिया तेहनां जी ।।२।।
वले श्रावक श्रावका जाण, ते पिण चतुर सुजाण।
आज हो हरष संतोष त्यां पिण पामियो जी ।।३।।
ए हरख्या तीरथ च्यार, त्यां पाम्यो आणंद अपार।
आज हो विकसत हुआ कमल नां फूल ज्यूं जी ।।४।।
वले देवी देवता ताम, ते हरष्या ठामो ठाम।
आज हो वीर सरीर निरोगो सांभले जी ।।५।।
वले देव मिनख सुर लोग, त्यांरा विकस्या तीनूं जोग।
आज हो रलियां पुराणी त्यांरा मन तणी जी ।।६।।
वले हरषी परखदा बार, ते सुणवानै हुआ त्यार।
आज हो वाणी चलू हुई जाणी वीर नीं जी ।।७।।
हिवै गणधर गोतम साम, पूछै भगवंत नै आम।
आज हो वंदणा करे नें वीर जिणंद नें जी ।।८।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वाणुभूती अणगार, ते गुण-रतनां रा भंडार।
आज हो ते उपनो पिछम नां जनपद देस नों जी ॥९॥
जद गोसाले तिण ठाम, तेजू लेस्या म्हेली ताम।
आज हो बाल जाले नै भसम किया तिहां जी ॥१०॥
ते पूछा करूं जोड़ी हाथ, मोनें कहो तिलोकीनाथ !
काल करे नें मुनिवर कियां गयो जी ॥११॥
हिवै भाखै श्री भगवंत, सुण गोतम ! मतवंत।
आज हो सर्वाणुभूती गयो सुर आठमें जी ॥१२॥
आठमां सुर मझार, आउखो सागर अठार।
आज हो देव तणां सुख भोगवसी तिहां जी ॥१३॥
ओ चव नै जासी केत ! वीर कहै महाविदेह खेत।
आज हो संजम लेई नें सिवपुर जावसी जी ॥१४॥
वले हाथ जोड़ी सीस नाम, पूछै गोतम साम।
आज हो वंदणा करी नें वीर जिणंद नें जी ॥१५॥
उपनों कोसल देस मझार, सुनषत्र नामे अणगार।
आज हो अंतेवासी थो सामी तुम तणों जी ॥१६॥
तिण नें गोसाले ताम, तेजू लेस्या मेली तिण ठाम।
आज हो तिणरै परतापे मर नै किहां गयो जी ?॥१७॥
हिवै भाषै श्री भगवंत, सुण गोतम ! मतवंत।
आज हो सुनषत्र साधु आयो मो कनै जी ॥१८॥
मोनें वांदै वारूंवार, वले फेर महाव्रत धार।
आज हो साध साधवियां सर्व खमाविया जी ॥१९॥
आलोए पडिकमे ताम, समाध पामै तिण ठाम।
आज हो काल करे गयो सुर बारमें जी ॥२०॥
इणरो आउखो सागर बावीस, ते भाख्यो जगदीस।
आज हो देव तणां सुख भोगवसी तिहां जी ॥२१॥
ओ चवने जासी केत, वीर कहै महाविदेह खेत।
आज हो संजम लेई नें सिवपुर जावसी जी ॥२२॥
वले हाथ जोड़ी सीस नाम, पूछै गोतम साम।
आज हो वंदणा करे नें वीर जिणंद नें जी ॥२३॥
थारै कुसिष्य हुवो गोसाल, तिण कियो इहां थी काल।
आज हो किण ठिकाणे जाए ऊपनों जी ॥२४॥
हिवै वीर कहै छै ताय, सुण गोतम ! चित ल्याय।
आज हो गोसालो कुसिष्य हुवो ते मांहरो जी ॥२५॥
घात कीधी साधां री बाल, छदमस्थपणै कर काल।
आज हो बारमें देवलोके हुवो देवता जी ॥२६॥
गोतम सामी सुणै इम वाय, मन में इचरज थाय।
आज हो इसड़ो दुष्टी बारमें सुर किम गयो जी ?॥२७॥
इण इसड़ा किया अन्याय, तिणसूं पड़ै नरक में जाय।
आज हो तिणसूं हूं इचरज पाम्यो अति घणों जी ॥२८॥
गोतम पूछै जोड़ी हाथ, मोनै कहो तिलोकीनाथ !
आज हो किण करणी कर गयो सुर बारमें जी ॥२९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब मांड कही जगनाथ, गोसाला री बात।
आज हो आलोवण कीधी ते सगली कही ॥३०॥
जद चोखी समकत पाय, तिहां पुन रा थाट उपजाय।
आज हो तिण सूं बारमें सुर हुवो देवता जी ॥३१॥
गोतम पूछै जोड़ी हाथ, उठै आउखो कितो सामीनाथ !
आज हो बारमें देवलोके तिण देवता तणों जी ॥३२॥
इणरो आऊ सागर बावीस, ते भाख्यो श्री जगदीस।
देव तणां सुख भोगवसी तिहां जी ॥३३॥

• • •

दूहा

देव आउखो पूरो करे, चव उपजसी किहां जाय ?
जब वीर कहै सुण गोयमा ! सुण तू चित्त लगाय ॥१॥

ढाल : ३१

[नमिराय धिन-धिन तूं अणगार]

जोहो जबूंद्वीप नां भरत में, पंडू जनपद देस मझार।
जोहो सयदुवार नामे नगर हुंतो, तिहां भरिया रिध भंडार।
चतुर नर जोवो करम विपाक ॥१॥ आं०
जोहो तिण सयदुवार नगरी अधिपति, सुमति नामे राजान।
जीहो भद्रा राणी तिण राय नें, ते डाही चतुर सुजान ॥२॥
जीहो बारमां देवलोक थी चवी, ते तो छोड़सी तेह ठिकाण।
जीहो भद्रा राणी री कूख में, पुत्रपणैं उपजसी आण ॥३॥
जीहो सवा नव मास पूरा हुआं, जनम होसी तिण काल।
जीहो सुंदर रूप सुहामणों, वले सरीर घणों सुकमाल ॥४॥
जीहो जनम होसी तिण रात नों, जद नगरी मांहे नें बार।
जीहो पदम रतनां तणी विरखा हुसी, उसरा पुन ले जासी लार ॥५॥
जीहो बारमें दिन न्यात जीमावियां, त्यां नैं मात-पिता कहसी आम।
जीहो म्हांरै पुत्र हुवो छै तेहनों, म्हे तो गुणनिपन देसां नाम ॥६॥
जीहो म्हांरै पुत्र जनमो तिण रात नों, नगरी मांहे बारै ठाम-ठाम।
जीहो पदम रतन तणीं विरखा हुई, महापदमकुमर इण रो नाम ॥७॥
जीहो आठ बरस जाझेरो हुसी, वले डाहो चतुर सुजाण।
जीहो मात-पिता इणनैं हरष सूं, राज देसी मोटे मंडाण ॥८॥
जीहो ओ महापदम राजा होसी, मोटो हेमवंत ज्यूं जाण।
जीहो गाम नगर सर्व देस में, सगलै वरतसी इणरी आण ॥९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीहो काल कितोएक बीतां पछै, दोय देव प्रगट होसी ताम।
जीहो ते मोटी रिध सुख नां धणो, पूर्णभद्र माणभद्र नाम ।।१०।।
जीहो महापदम राजा तणों, सेनापतीपणों करसी आय।
जीहो इसड़ा पुन भोगवसी तिहां, सुखसाता मांहे दिन जाय ।।११।।
जीहो सयदुवार नगर तेहमें, मांहोमां मिल कहसी आम।
जीहो इण राजा री सेवा करै देवता, देवसेन दूजो देसी नाम ।।१२।।
जीहो देवसेन राजा तणैं, हस्ती रतन उपजसी आण।
जीहो उजलो संख तल ज्यूं निरमलो, चउदंतो हाथी रतन बखाण ।।१३।।
जीहो देवसेन राजा तिहां, तिण हस्ती ऊपर चढ़े ताम।
जीहो सयदुवार नगर नैं मझे, बार-बार नीकलसी तिण ठाम ।।१४।।
जीहो तिण काले सयदुवार नगर में, घणां राजादिक सहु जाण।
जीहो ते कहसी मांहोमां तेड़नैं, तिणरा करसी घणां बखाण ।।१५।।
जीहो देवसेन राजा तणों, विमल हस्ती उपनों ताम।
जीहो तिणसूं तीजो नाम दो एहनों, विमलवाहण राजा नाम ।।१६।।
जीहो महापदम नाम पहिल रो, देवसेन राजा दूजो नाम।
जीहो विमलवाहन नाम तीसरो, मोटो राजा होसी अभिराम ।।१७।।
जीहो सुखे समाधे राज करतां थकां, माठी उपजसी मन मांहि।
जीहो घातक साधां रो भव पाछिले, ते गूद मिटी नहीं ताहि ।।१८।।
जीहो छेहले अवसर आलोय नें, सल काढ्यो थो तिण ठाम।
जीहो तिहां पुन बांध्या ते भोगव्या, पाछा आया मूलगा परिणाम ।।१९।।
जीहो गोसालो मंखली-पूत थो, हूंतो डाकोतरा नीं जात।
जीहो लाहीठाण कियो थो भगवंत नैं, वले दोय साधां रो घात ।।२०।।
जीहो तेहीज लखण वले परगट्यां, वले तेहीज खोटा परिणाम।
जीहो ते धेखो होसी सुध साधां तणो, ते कुण-कुण माठा करसी काम ।।२१।।

० ० ०

दूहा

काल कितोएक बीतां पछै, विमलवाहण राजान।
ते धेषी होसी जिण धर्म नों, वले खोटो रहिसी तिणरो ध्यान ।।१।।
पाप करम रा उदा थकी, बिगड़े जासी बात।
श्रमण निग्रंथ अणगार थी, पड़िवजसी मिथ्यात ।।२।।

ढाल : ३२

[इण पुर कंबल कोय न लेसी]

एक-एक साधु नैं आक्रोस करसी, एक-एक री घात करतो न डरसी।
एक-एक साधु नैं उपद्रव देसी, एक-एक नैं निरभंछणा करसी ।।१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक-एक नैं बंधण बांधसी ताम, एक-एक नें रूंध राखेसी एक ठाम।
एक-एक री करसी चामड़ी नो छेद, एक-एक नैं मारे गमासी विछेद ।।२।।
एक-एक नैं उपद्रव उपजाय, ते करतो संक न आणै कांय।
एक-एक रा वस्त्र छेदै ताम, पडिग्गह कंबल पायपूंछणो आम ।।३।।
एक-एक रा उपध विशेषे छेदै, एक-एक रा उपध विशेषै भेदै।
एक-एक साधु रा उपधि नै चोरै, एक-एक रा उपधि नें फाड़ै-तोड़ै ।।४।।
एक-एक रो विच्छेद करसी भात-पाणी, एक-एक नै निगन करसी जाण-जाणी।
एक-एक नै निप्रष्ट करसो जाण-जाण, एक-एक नें दुख देसी ताण-ताण ।।५।।
इत्यादिक साधां रो हुसी दुखदाई, दुख देतो संक न राखै कांई।
साधां रो हुसी वले अंतरंग वेरी, इसड़ो विमलवाहण राजा गेरी ।।६।।
जे कोइ साध-सतो नें सतावै, ते जीव सुख किहां थी पावै।
ते राय साधां नें दुख देसो जाण, तिणरै किण-विध पाप उदे हुवै आण ।।७।।

० ० ०

दूहा

हिवै सयदुवार नगर नें मझे, लोक कहै मांहोमांही आम।
राजा ईसर जुगराजादिक बहु, घणां बात करेसी ठाम-ठाम ।।१।।
विमलवाहण राजा हिवै, साधु सूं पड़वजियो मिथ्यात।
त्यांनैं विविधपणैं दुख दै घणों, तिण सूं बिगड़ी दोसै छै बात ।।२।।
ते भलो नहीं आपां भणी, राजा नै पिण भलो नांय।
राज देस बल बाहन भणी, ते निश्चै भलो नहीं कांय ।।३।।
पुर अंतेवर नें भलो नहीं, नहीं किण रै सुख तिलमात।
विमलवाहन राजा साधां थकी, पड़वजियो मिथ्यात ।।४।।
तो श्रेय किलाण छै आपां भणी, राजा सूं अरज करां जाय।
ए मांहोमां मिलि वातां करी, ते सगलां रै आसी दाय ।।५।।

ढाल : ३३

[खटमल मेवासी]

सगलाई मतो कर हाल्या, आसी राय कनै सहु चाल्या हो।
आय ऊभा रहसी राजा रै पास, हाथ जोड़ी विनों करसी तास हो ।।१।।
राजंद बड़भागी ।।१।। आँ०

जय-विजय करे नें वधासो, वले विरदावलियां बोलासी हो।
तिहां बोलावसी मीठी वाणी, एक अरज करां म्है जाणी हो ।।२।।
थे साधां सूं पड़िवजियो मिथ्यात, ते आछी नहीं छै बात हो।
एक-एक नें आक्रोसो तास, सगली मांड कही राय पास हो ।।३।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते भलो नहीं छै थांनै, वले भलो नहीं छै म्हांनै हो ।
वले राज देस नै भंडार, भलो नहीं छै किणनै ई लिगार हो ।।४।।
किणही साध री म करो घात, मती पड़िवजो त्यांसू मिथ्यात हो ।
दुख पिण मती देवो लिगार, आ अरज करां वारूंबार हो ।।५।।
इम सांभल लोकां री वाय, विमलवाहण नामे राय हो ।
धर्म तप नहीं जाण्यो लिगार, खोटा मन सूं कियो अंगीकार हो ।।६।।
घणां लोकां कही ते बात, मूंढे तो मान लीधी साख्यात हो ।
पिण अंतरंग मांहे उवाहीज रीत, तिणरै साध मारण री नीत हो ।।७।।
दिन काढसी इण परिणाम, साध नें दुख देवा री हाम हो ।
हिवै किणविध साधु नै सतावै, किणविध कीधा रा फल पावै हो ।।८।।

० ० ०

दूहा

तिण काले नें तिण समे, विमलवाहण अरिहंत ।
त्यांरो परपोतो सिष्य दीपतो, सुमंगल साध महंत ।।१।।
त्यांरी जात माता री निरमली, कुल पिता रो निरदोष ।
त्यांरा गुण रो छेह आवै नहीं, गुण जाणों जिम धर्मघोष ।।२।।
तेजू लेस्या होसी त्यामें दीपती, तीन ग्यान करे नें सहीत ।
बेले-बेले निरंतर तप करै, आतापना लेवै रूड़ी रीत ।।३।।
सयदुवार नगर रै बाहिरे, ईसाण कूण में ताम ।
सुभूमभाग उद्यान में, आय उतरसी तिण ठाम ।।४।।

ढाल : ३४

[जाणं छं राय तूं बात ए]

जद विमलवाहण नामे राय ए, एकदा बेससी रथ मांय ए ।
रथकीला करण नें काम ए, नगर बारै जासी तिण ठाम ए ।।१।।
सुभूमभाग उद्यान रै पास ए, रथकीला करतो आसी तास ए ।
तिहां सुमंगल नामे अणगार ए, आतापना लेसी तिणवार ए ।।२।।
तिण साधु नें राजा देख ए, तब जागसी राजा नें धेख ए ।
आसुरत्ते मिसमिसायमान ए, वले कोप चढसी असमान ए ।।३।।
ऊभा सुमंगल नामे अणगार ए, रथ सूं हेठा न्हाखसी तिणवार ए ।
रथ फेरसी सिर ऊपर ताम ए, राय नां होसी दुष्ट परिणाम ए ।।४।।
वले सुमंगल नामे अणगार ए, हलवे-हलवे तिण वार ए ।
पाछो ऊभो होसी तिण ठाम ए, वले लेसी आतापना ताम ए ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूजी वार साधु नैं देख ए, वले राय नैं जागसी धेख ए।
वले कोप चढ़सी तिण वार ए, वले रथ फेरसी सिर मझार ए ॥६॥
वले सुमंगल नामे अणगार ए, वले हलवे-हलवे तिण वार ए।
पाछो ऊभो होसी तिण ठाम ए, पछै अवधि प्रजूंजसी ताम ए ॥७॥
अवधि प्रजूंजसी तिण वार ए, गया काल रो करसी विचार ए।
इणरो पाछिलो भव लेसी जाण ए, इणनैं बोलसी एहवो वाण ए ॥८॥
राजा नां गुण नहीं तो मांहि ए, विमलवाहण राजा तूं नांहि ए।
तूं निश्चै नहीं देवसेन राय ए, भूंडा लषण दीसै तो मांय ए ॥९॥
तू नहीं महापदम राजान ए, तं थोथो करै गुमान ए।
आज थी तीजा भव मांहि ए, गोसालो मंखली-पूत ताहि ए ॥१०॥
साधां री घात कीधी थे बाल ए, छदमस्थ थके कियो काल ए।
अजे उहीज थांरो ध्यान ए, तिण सूं तूं नहीं निश्चै राजान ए ॥११॥
जद थे कीधी साधां री घात ए, ते पिण समर्थ हुंता विख्यात ए।
बाले जाले भसम करै तोय ए, पिण यां क्रोध न कीधो कोय ए॥१२॥
समे परिणामे सह्यो जाण ए, खिमता कीधी सुमता आण ए।
सर्वाणुभूति सुनखत्र साध ए, मूआ श्रीजिण धर्म अराध ए ॥१३॥
तिम भगवंत श्री महावीर ए, ते पिण रह्या साहस धीर ए।
षिमासूरा जे अरिहंत ए, त्यां पिण षिमा कीधी मतवंत ए ॥१४॥
पिण त्यां जिस्यो हूं छूं नांहि ए, खिमता रस नहीं मो मांहि ए।
तोने घोड़ा नैं रथ सारथी समेत ए, बाले जाले भसम करूं एथ ए ॥१५॥
ए साधु रा वचन सुणे कान ए, घणों कोप चढ़सी राजान ए।
सुमंगल नामे अणगार ए, त्यांनैं मारण री मन धार ए ॥१६॥
तीजी वार होसी वले तयार ए, रथ फेरण सिर मझार ए।
तीजी वार रथ आवतो देख ए, साध नैं जागसी धेख वशेख ए ॥१७॥
साधु होसी धिगधिगायमान ए, घणों कोप चढसी असमान ए।
समुदघात करसी तिण काल ए, तेजू लेस्या काढसी ततकाल ए ॥१८॥
राय घोड़ा रथ सारथी समेत ए, बाल जाल भसम करसी तेथ ए।
साधु नैं संतापसी जाण ए, तिण रै तुरत फल लागसी आण ए ॥१९॥
ते तो बानगी मातर जाण ए, आगै दुख अनंत पिछाण ए।
खासी नरकादिक में मार ए, तिण रो छै घणों विसतार ए ॥२०॥
गोतम सामी पूछा करी आम ए, साधु उपजसी किण ठाम ए ?
वीर कहै सुमंगल साध ए, घोर तप करे पासी समाध ए ॥२१॥
घणां बरसां रो चारित पाल ए, काटसी करमां रा जाल ए।
तप करसी विचित्र परकार ए, एक मास तणों संथार ए ॥२२॥
आलोए पडिकमे सुध थाय ए, उपजसी स्वार्थसिध मांय ए।
तिणरो आउखो सागर तेतीस ए, गोतम नैं कह्यो जगदीस ए ॥२३॥
ओ चवनैं जासी केत ए, वीर कहै महाविदेह खेत ए।
उठे करे करमां रो सोख ए, तिहां थी जासी पाधरो मोख ए ॥२४॥

० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

सुध साधां नें दुख देतां थकां, बांधिया करम अथाय।
ते छूटै नहीं विण भोगव्यां, ते सुणज्यो चित ल्याय ।।१।।
विमलवाहण राजा पापियो, ते होय जासी जीतब रहीत।
तिणनै साधु बाले भसम कियो, घोड़ा रथ सारथी सहीत ।।२।।
विमलवाहण राजा तणीं, पूछा कीधी गोतम साम।
आउखो पूरे करे, जासी कुणसे ठाम ?।।३।।
वीर कहै सुण गोयमा ! विमलवाहण राजान।
ते मरनैं जासी नरक सातमीं, तिहां महा दुखां री खान ।।४।।
तिहां आउखो सागर तेतीस नों, खेत्र वेदना अनंती जाण।
तिहां दुख मांहे दुख होसी घणों, उठे कुण छुड़ावै आण ।।५।।

ढाल : ३५

[साधु जी नगरी आया सदा भला]

सातमीं नरक थकी ते नीकली रे, मछपणैं उपजसी आण।
तिहां पिण सस्त्र सूं घात पामसी रे, बलूं-बलूं करतो छोड़ै प्राण।
करम थी न छूटै रे कोई विन भोगव्यां रे ।।१।। आं०

तिहां थी मरनै जासी वले सातमीं रे, तिहां उत्कृष्टी थित जाण।
वले सातमीं नरक थकी ते नीकली रे, बीजी वार होसी मछ आण ।।२।।
तिहां पिण सस्त्र सूं घात पामसी रे, बलूं-बलूं करतो पाड़ै चीस।
तिहां थी मरनै जासी छठी नरक में रे, तिहां आउखो सागर बावीस ।।३।।
छठी नरक तणो नीकल्यो थको रे, अस्त्रीपणैं उपजसी आय।
तिहां पिण घात पामसी आगली विध रे पड़सी छठी नरक में जाय ।।४।।
वले अस्त्री होसी छठी रो नीकल्यो रे, तिण हीज विध पामसी घात।
तिहां थी मरनै जासी नरक पांचमी रे, तिहां पिण सुख नहीं तिलमात ।।५।।
पांचमी नरक तणो नीकल्यो थको रे, सर्प होय नैं पांचमी जाय।
पांचमी रो नीकल्यो वले सर्प होय नै रे, चोथी नरक में जासी ताय ।।६।।
ते सींह होसी चोथी थी नीकली रे, वले परसी चोथी में जाय।
वले सींह थई जासी तीजी नरक में रे, तिहां थी नीकल पंखी थाय ।।७।।
पंखो मर जासी तीजी नरक में रे, तिहां थी नीकल पंखी फेर थाय।
ते पंखी मर जासी बीजी नरक में रे, तिहां थी नीकल सिरीसव होसी ताय ।।८।।
ते सिरीसव मरनै जासी बीजी नरक में रे,तिहां थी निकल सिरीसव फेर थाय।
ते सिरीसव मरनैं जासी पेहली नरक में रे, तिहां थी नीकल सनी में जाय ।।९।।
ते सनी मरनैं असनी होय नै रे, वले पेहले नरक में जाय।
एकण पल रो भाग असंख्यातमो रे, एहवो आउखो पाय ।।१०।।
शेष आउखो सगलेई नरक में रे, उतकष्टो पामसी तेह।
सस्त्र घात सगलैई पामसी रे, बलूं-बलूं करतो मरसी एह ।।११।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गोसाला रो जीव सातोंई नरक में रे, जासी दोय-दोय बार।
एकसौ नैं पच्यासी सागर जाभी थकी रे, इतरी खासी नरक में मार ।।१२।।
साधां री घात कीधी थी पापिये रे, वले कीधी मिथ्यात री थाप।
उसभ करम उपाया तिण समै रे, ते भोगवसी इणविध पाप ।।१३।।
पाप री गुद सूं गुद बधसी घणी रे, भूंडा लारै भूंडोइज होय।
इम सांभल नै थे भवियण जीवडां रे, किणरो भूंडो म कीजो कोय ।।१४।।
सातोंई नरक मांहे दुख भोगव्या रे, तोही नांवै करमां रो अंत।
शेष करम रह्या ते किणविध भोगवे रे, ते सुणजो मतवंत ।।१५।।

० ० ०

दूहा

दुख भोगवतां सातूं नरक में, तिहां होसी घणोंइज हेरान।
गोसाले संचो कियो थो जिण दिने, तिण पाप री उघड़सी खान ।।१।।

ढाल : ३६

[कर्म भुगत्यां इज छूटिये]

पेहली नरक थी निकली, जासी पंखी तणी जात मांय लाल रे।
त्यांरा तो भेद अनेक छै, ते पूरा केम कहवाय लाल रे।
करम भुगत्यां इज छूटियै ।।१।। आं०

चम पंखी नें लोम पंखिया, समुग पंखी विततादिक पंखी मांहि लाल रे।
लाखां गमे करसी भव तेहमें, वारूंवार उपजसी ताहि लाल रे ।।२।।
सगले सस्त्र सूं घात पामसी, वलूं-वलूं करतो करसी काल लाल रे।
तिहां दुख भोगवसी अति घणां, वेगी-वेगी लागसी झालोझाल लाल रे ।।३।।
षहचर पंखी मांहि थी नीकली, भुजपर री जात में जाय लाल रे।
त्यांरा पिण भेद अनेक छे, ते पूरा केम कहवाय लाल रे ।।४।।
गोह नोलियादिक तेहमें, करसी लाखां गमे भव ताम लाल रे।
ते पिण षहचरनीं री परे जाणजो, मर-मर उपजसी तिण ठाम लाल रे ।।५।।
त्यां सूं नीकल जासी उरपर मझे, त्यांरी पिण जात वशेख लाल रे।
अही अजगर नै असलिया आली, महोरगादिक भेद अनेक लाल रे ।।६।।
लाखां गमे करसी भव तेह में, मर-मर उपजसी बार-बार लाल रे।
तिहां पिण दुख भोगसी घणां, षहचर जिम विसतार लाल रे ।।७।।
ते भुजपर मांसूं नीकली, पछै जासी थलचर मझार लाल रे।
तिहां भव करसी लाखां गमे, मर-मर उपजसी वारूंवार लाल रे ।।८।।
एगखुरा दुखुरा गंडीपया, सणपया ते चउपद पिछाण लाल रे।
त्यांरा नाम जात अनेक छै, ते पिण षहचर नीं पर जाण लाल रे ।।९।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते थलचर मांहि थी नीकली, पछै जासी जलचर मांहि लाल रे।
मछ कछ सुसमारादिक, त्यांरा नाम अनेक छै ताहि लाल रे ।।१०।।
त्यांमें भव करसी अनेक लाखां गमे, एकीकी नाम जात मझार लाल रे।
तिहां पिण सघले सस्त्र सूं मारीजसी, ते पिण षहचर जिम विसतार लाल रे ।।११।।
तिहांथी नीकल जासी चोइंदी मझे, तिहां पिण लाखां गमे भव जाण लाल रे।
इमहिज तेइंद्री नैं मझे, बेइंद्री पिण एम पिछाण लाल रे ।।१२।।
त्यां मांहि थी नीकल्यो थको, जासी वनसपती रै मांहि लाल रे।
पांचूं थावर में बेहिला बीचसी, ते संक्षेप कहूं छूं ताहि लाल रे ।।१३।।
वनसपती नैं वाउकाय नां, तेऊ अप नैं प्रथवीकाय लाल रे।
त्यांरा पिण भेद अनेक छै, अनुक्रमे उपजसी त्यां मांय लाल रे ।।१४।।
लाखां गमे करसी भव तेहमें, एकीकी काय रा भेद मांहि लाल रे।
त्यां पिण घात सस्त्र सूं पामसी, बलूं-बलूं करतो मरसी ताहि लाल रे ।।१५।।
मार खातो-खातो एकिन्द्री मझे, मिनष तणां भव मांय लाल रे।
ते किण-किण ठिकाणे ऊपजे बले, सुणजे गोतम ! चित ल्याय लाल रे ।।१६।।

० ० ०

दूहा

तिण काले नैं तिण समे, नगरी राजग्रही ताम।
भमतो-भमतो जीव गोसाला तणों, आय उपजसी तिण ठाम ।।१।।

ढाल : ३७

[माधव इम बोलै रे]

नगरी राजग्रही नैं बाहिरे रे, अचोखी वेस्या रै ठिकाण।
अछेप मेला कुल मझे रे, वेस्यापणैं उपजसी आण रे।
करमां गति जोयजो ।।१।। आं०

तिहां अनेक माठा किरतब करै रे, त्यां पिण सस्त्र सूं पाम घात।
बलं-बलूं करती मरसी तिहां रे, वले करती अनेक विलापात रे ।।२।।
काल करेसी तिहां थकी रे, चोखी वेस्या होसी दूजी वार।
ते राजग्रही नगरी मझे रे, माठा किरतब री करणहार रे ।।३।।
तिहां पिण सस्त्र सूं घात पामसी रे, बलूं-बलूं करती तिण ठाम।
विलविलाट करती थकी रे, तिहां पिण दुखणी थकी मरण पाम रे ।।४।।
पछै इण हीज जंबूद्वीप में रे, भरतखेतर सुठाम।
विभारगिरी नैं मूले तिहां रे, होसी विभल सनीवेस गाम रे ।।५।।
तिहां ब्राह्मण नां कुल नैं मझे रे, पुत्रीपणैं उपजसी आण।
मात-पिता नैं व्हाली होसी रे, ते रूप में अतंत बखाण रे ।।६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिण नैं माता-पिता परणावसी रे, भरतार सूं करसी केल ।
इष्ट कंत होसी भरतार नैं रे, तिहां सुख रै संजोग समेल रे ।।७।।
ते गर्भवंती होसी एकदा रे, ते रहितां सासरा मांय।
ते सुसरा नां घर थकी रे, आवती कुलघर मांय रे ।।८।।
मारग दव लागो तिहां रे, तिण ज्वाला करी तेह ।
पराभव पामी अति घणों रे, दग्ध हुई तसु देह रे ।।९।।
अगन मांहे बली थकी रे, काल करेसी ताय ।
दिखण दिसे अगनकुमार में रे, देवपणैं उपजसी जाय रे ।।१०।।
ते अग्निकुमार थी नीकली रे, पामी नर अवतार ।
त्यां समगत बोध पामनैं रे, बले लेसी संजम भार रे ।।११।।
चारित्र विराधि आपरो रे, काल करसी तिण ठाम ।
दिक्खण दिशि रा असुरकुमार में रे, देवपणैं उपजसी ताम ।।१२।।
वले मिनख हुवै चारित विराध नै रे, देवता होसी नागकुमार ।
अगनकुमार वरजी दियो रे, जाव देवता थणियकुमार रे ।।१३।।
नव वार चारित विराध नैं रे, देवता होसी नवूंई वार ।
असुरकुमार आदि दे रे, इम नवूंई लीजो विचार रे ।।१४।।
थणियकुमार थी नीकली रे, वले मिनख तणो भव पाय ।
चारित विराधी तिहां थकी रे, ज्योतिषी देवता होसी जाय रे ।।१५।।

० ० ०

दूहा

सुख भोगवे जोतषियां तणां, वले पामसी नर अवतार ।
वले वाणी सुण साधां तणी, लेसी संजम भार ।।१।।

ढाल : ३८

[जाणपणो जग दोहिलो]

तिहां साधपणों सुध पालसी रे लाल, आश्रव नाला रोक सुविचारी रे ।
करसी चारित आराधना रे लाल, जासी पेहले देवलोक सुविचारो रे ।
गोसालो जिण धर्म आराधसी रे लाल ।।१।। आं०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पेहले देवलोक में सुख भोगवी रे लाल, वले पामसी नर अवतार।
उत्तम कुल आय अवतरी रे लाल, वले लेसी संजम भार ।।२।।
रूड़े रीते चारित अराध नै रे लाल, करे तिहां थी काल।
देवता होसी तीजा देवलोक में रे लाल, तिहां पामसी भोग विसाल ।।३।।
तिहां देव तणां सुख भोगवी रे लाल, वले थित पूरी करे ताय।
वले मिनष तणों भव पामसी रे लाल, उत्तम कुल में उपजसी आय ।।४।।
तिहां वाणी सुणसी साधां तणी रे लाल, जब आसी वेराग अतंत।
मात-पिता नैं पूछ नं रे लाल, चारित लेसी मतवंत ।।५।।
तिहां चारित आराधे चोखी तरे रे लाल, करे तिहांथी काल।
देवता होसी देवलोक पांचमें रे लाल, तिहां पामसी भोग रसाल ।।६।।
तिहां सुख भोगवे देवतां तणां रे लाल, वले पामे नर अवतार।
तिहां पिण चारित आराधे होसी देवता रे लाल, सातमां देवलोक मझार।।७।।
सातमां देवलोक रो चव्यो थको रे लाल, लेसी उत्तम कुल अवतार।
तिहां पिण वाणी सुणे थिवरां तणी रे लाल, वले लेसी संजम भार ।।८।।
तिहां पिण चारित सुध आराधसी रे लाल, काल करसी तिण ठाम।
देवता होसी नवमां देवलोक में रे लाल, तिहां पिण सुख पामसी अभिराम ।।९।।
ते चवसी नवमां देवलोक थी रे लाल, वले लेसी मानव अवतार।
तिहां पिण वाणी सुणे थिवरां तणी रे लाल, वले लेसी संजम भार ।।१०।।
तिहां चारित आराधे रूड़ी रीत सूं रे लाल, काल करसी तिण वार।
देवता होसी मोटको रे लाल, इग्यारमां देवलोक मझार ।।११।।
इग्यारमां देवलोक थी रे लाल, चव लेसी मानव अवतार।
तिहां पिण वाणी सुणे थिवरां तणी रे लाल, संजम ले होसी मोटो अणगार।।१२।।
काल करसी चारित आराध नैं रे लाल, जासी स्वार्थसिध मझार।
महामोटो होसी देवता रे लाल, तिणरा सुख रो घणों विसतार ।।१३।।

० ० ०

दूहा

देवता मांहे सारे सिरे, स्वार्थसिद्ध मझार।
भारी पुन उपजाए तिहां ऊपनों, त्यांरा सुख घणां श्रीकार ।।१।।
मेहलायत मोटी रलीयामणी, तिहां लागी झिगमिग जोत।
अंधकार कदेइ हुवै नहीं, सदा होय रह्यो छै उद्योत ।।२।।
तिहां सेज्या अतंत रलियामणी, तिण ऊपर चंद्रवो एक।
तिणरै लेहकै मोती नों झूंबको, ते शोभ रह्यो छै विशेष ।।३।।
सोवन पानड़ियां करी, मोती रह्या छै ताम।
वले सोवन सर में पोया थकां, त्यांरो रूप घणों अभिराम ।।४।।
मेहलायत सेज्या नैं मोत्यां तणों, इधको घणों छै सरूप।
थोड़ो-सो परगट करूं, ते सुणजो अति चूंप ।।५।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : ३९

[कोड़ पूर्व लग पामी साता, मोरा देवी माता जी]

इग्यारै सौ जोजन री मेहलायत, ते रतनां सेती जड़िया जी।
साधपणों सुध जे नर पालै, त्यांरै पाने पड़िया जी।
इण स्वार्थसिध रै चन्द्रवे कांइ, मोती भूंबक सोहै जी ॥१॥
तस भूंबक रै विचलो मोती, चोसठ मण रो जाणी जी।
च्यार मोती वले तस पाखतिया, बतीस मण रा बखाणी जी ॥२॥
तेहनैं पाखतियां अति ही निरमल, सोलै मण रा आठ मोती जी।
सुन्दरता देखी हियो हरषै, वधै आंखड़ियां री जोती जी ॥३॥
तस पाखतियां सोलै मोती, त्यांमें आठ-आठ मण भारो जी।
सोभा बोहत विराजै तेहनीं, ते दीठां हरष अपारो जी ॥४॥
बतीस मोती तस पाखतियां, त्यांमें च्यार-च्यार मण तोलो जी।
ते दीठां अति हियो हरषै, ते मोती घणां अमोलो जी ॥५॥
तस पाखतियां चोसठ मोती, ते दोय-दोय मण छै तासो जी।
तेज उद्योत करै तिण ठामे, तेहनों घणों प्रकासो जी ॥६॥
त्यां पासे मोती मण-मण रा, एक सौ नै अठावीसो जी।
ते दीठां भूख त्रिषा मिट जावै, ते भाष गया जगदीसो जी ॥७॥
दोय सौ नै तेपन मोती, सर्व थई नै मिणिया जी।
तिसलानन्दण वीर जिणेसर, केवलग्यानी गिणिया जी ॥८॥
वाऊ जोगे मोती आफलनां, तो ही मोती मूल न फूटै जी।
मीठा सब्द गेहर गंभीरा, त्यां मोत्यां मांसूं ऊठै जी ॥९॥
ते सदा काल सासता मोती, त्यांनै पवन चलावै जी।
मधुर सब्द त्यां मांसूं निकलै, ते सुर नै घणां सुहावै जी ॥१०॥
जाणै बतीस विध रा नाटक पड़ै छै, छ राग त्यां मांसूं होवै जी।
छतीस रागणी त्यां मांसूं नीकलै, ते सुर नां हीया मोहै जी ॥११॥
बूर वनसपती पेहल रूई नां, ऐसी ओपमा न्हाली जी।
माखण नै रेसम नां लच्छा, तिण सूं सेज्या घणी सुहाली जी ॥१२॥
तेतीस हजार वर्ष नीकलियां, भूख री मनसा थावै जी।
सास ऊंचा थी नीचो मूकै, पख तेतीस जावै जी ॥१३॥
अवधिग्यान सूं नीचो देखै, नरक सातमी हेठो जी।
ऊंचो देखै ध्वजा पताका, तिरछो थेटाथेटो जी ॥१४॥
स्वार्थसिध नां सुख भोगवतां, हरखै विसवावीसो जी।
त्यां एकधारा लहलीन रहै छै, सुर सागर तेतीसो जी ॥१५॥
तिण ठामे जे जाय ऊपनां, ते सगला एकाऽवतारो जी।
ते देव चवी नैं मिनषज होवै, मोटा कुल मझारो जी ॥१६॥
साधपणों सुध चोखो पालै, इसड़ा मेहलज पावै जी।
थोड़ा दिनां में करणी कर नै, चव नैं मुगत सिधावै जी ॥१७॥

० ० ०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूहा

ते जीव स्वार्थसिध मझे, सुर-सुख विलसी एथ।
देव आउखो पूरो करी, चव नें जासी केत ?॥१॥

ढाल : ४०

[वीर सुणो मोरी विनती]

वीर कहै सुण गोयमा !, ए चवसी हो गोसाला रो जीव।
महाविदेह खेतर मझे, जनम लेसी हो मोटे कुल अतीव।
वीर कहै सुण गोयमा !॥१॥ आं०

रिध कर नें अति दीपतो, वस्तीर्ण हो घणां महल आवास।
पिलंग सिंघासण पालखी, रथ घोड़ा हो हाथी हुवै तास॥२॥
माणक मोती जिहां घणां, सोनो रूपो हो धन बधतो व्याज।
भात-पाणी जीमें घणां, उगरता हो न्हाखै एंठा नाज॥३॥
दास-दासी जेहनै घणां, गायां भेंस्यां हो छालो प्रमुख जाण।
धन कर गंज सकै नहीं, तिण घर में हो उपजसी आण॥४॥
पुत्र गर्भ आव्यां थकां, मां-बाप हो धर्म में दिढ थाय।
सवा नव मासे जनमसी, सुखमाल हो पूरी इंद्री काय॥५॥
लषण वंजण गुण भला, परमाणे हो सहु सुंदर अंग।
सोम चन्द्रमा सारिखो, मनगमतो हो तिणरो रूप सुचंग॥६॥
जनम महोछव थित करी, तीजे दिन हो चंद सूर्य दिखाय।
छठे दिन छठी जगावसी, बारमें दिन हो सुध होसी न्हाय॥७॥
कहिसै न्यात जीमाड़ नें, जिन दिन हो गर्भ ऊपनों ताम।
दिढ हूवा म्है धर्म में, दिढपइनो हो देसां इण रो नाम॥८॥
आंगण गोडालिये चालणो, सीख्यो जब हो खरचै धन माल।
पगे चाल्यां थड़ी कियां, वसलु नीं हो अगड ले झाल॥९॥
जीमण कवल वधारियां, बोली सीख्यां हो विंधायां कान।
वरसी गांठज लेखव्यां, प्रथम मुंडण हो ओछव दे दान॥१०॥
पांच धाए वींटचो थको, खीरधाई हो पेहली कहवाय।
मंजण धाय न्हवरावसी, मंडण धाई हो सिणगार कराय॥११॥
अंक धाय खोले लियै, कीलावण हो करासी केल।
देश अठारै री दासियां, खोजादिक हो करनै अति चेल॥१२॥
कुबजा बांकी देसनी, चिलाती हो देस नी केइ जोय।
वामणी वामण देस नी, वडभी नो हो हियो ऊंचो होय॥१३॥
बबर चोसिया जोनिया, पलवीया हो ऋषी गणका जाण।
चरुणिया लासिया भणी, लाउसिया हो दमलिया पिछाण॥१४॥
सिंघल अरब देस नीं, पुलिंदी हो पकणी वले देस।
मरूड़ी सबरी पारसी, आप आपणां हो देस नां छै वेस॥१५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ते दास्यां डाही घणी, मनचिंत्या हो करै आफे काम ।
वय तुरणी विनयवंती, घणां खोजा हो अंत:पुर अभिराम ।।१६।।
पालसी बालक नैं प्रीत सूं, हुंसे लेसी हो सहु हाथोहाथ ।
बाल-लीला करावसी, नहि मूकै हो न्हेरो दिन-रात ।।१७।।
एक खोला थी बीजे लिये, नचावै हो गाए गीत विनोद ।
हालरियो दे हेत सूं, निज मानै हो नित का प्रमोद ।।१८।।
मधुर वचन बोलावसी, रमावण रो हो सगलां उछरंग ।
टोपी झुगो बोहू रंग नां, रतन जड़्या हो सोभै गेहणा सुचंग ।।१६।।
रमणीक मणी रतनां जड़्यो, तिण आंगण हो कीला करसी बाल ।
विघन रहित सुखे बधे, गिरि-गुफा हो जिम चंपा नीं डाल ।।२०।।
कला-आचार्य नें सूंपसी, जाझेरो हो वरस आठ परमाण ।
कला बोहितर सीखसी अठारै देसी हो होसी भाषा नो जाण ।।२१।।
नव अंग सूता जागसी, द्रव इन्द्री हो आठ नै मन जाण ।
गीत रित गंधरव कला, नाटक में हो डाहो चतुर सुजाण ।।२२।।
सिणगार सुंदर रूप मैं, हसण बोलण हो चालण री चूंप ।
समझसी लोक आचार में, जुध जीपण हो सूरवीर अनूप ।।२३।।
भोग जोग समर्थ हुसी, अबीहतो हो फरसी काल अकाल ।
मात-पिता बहु धामसी, मनगमता हो कामभोग रसाल ।।२४।।
पिण ए कंवर न राचसी, विषिया रस हो गिरधी नहिं थाय ।
जिम ए कमल कादे हुवो, जल बधियो हो पिण नहीं लिपाय ।।२५।।
तिम काम-कादे ऊपनों, भोग जल सूं हो बधसी जाणो एह ।
पिण न लेपै काम-भोग में, सजन सूं हो न लगावै नेह ।।२६।।

० ० ०

दूहा

तिण अवसर पधारसी, मोटा ऋष अणगार ।
मुगतनगर नां दायका, ग्यान तणां भंडार ।।१।।
लोक जासी वांदण भणी, थिवर पधार्‌या जाण ।
दिढपइनो पिण जावसी, कर मोटे मंडाण ।।२।।
वंदणा करसी भाव सूं, नीचो अंग नमाय ।
मुनिवर देसी देसना, ते सुणसी चित लगाय ।।३।।
वाण अपूर्व सांभली, रुचसी अंगो-अंग ।
विरकत होय संसार सूं, मुगती जावण उछरंग ।।४।।
मात-पिता नैं पूछे तिहां, संजम लेसी सूर ।
तपसा करे घणघातिया, करम करसी चकचूर ।।५।।
केवलग्यान उपजसी तिहां, वाणी वागरसी तिणवार ।
घणां जीवां नै समझाय नैं, करसी मुगत नैं तयार ।।६।।
केवलग्यान उपना पछै, समण निर्ग्रंथ नैं बोलाय ।
कहिसी पोते दुख भोगव्या तिके, वले निज आंगुण देसी सुणाय ।।७।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ढाल : ४१

[धर्म आराधियै ग]

घणां काल पेहली जीव मांहरो ए, हूं तो मंखली-पूत गोसाल।
घातक साधां तणों ए, थे सुणजो सुरत संभाल।
गोसालो इम भाषसी ए ।।१।। आं

पाछै हुई चोबीसी तेह में ए, छेहला तीर्थंकर महावीर।
जद हूं सिष थयो तेहनों ए, म्है दिख्या लीधी त्यांरै तीर ।।२।।
त्यांनेंईज दुःख म्है दिया घणां ए, लेस्या मेले कियो लोहीठाण।
वले लेस्या थकी ए, दोय साधां नें बाल्या जाण ।।३।।
म्है पाषंड चलायो अति घणों ए, भगवंत नें परूप्या इंद्रजाल।
वले अन्हाखो थके ए, हूं तीर्थंकर बाज्यो तिण काल ।।४।।
म्है महिमा बधारी अति मांहरी ए, भूठ बोल्यो मैं विवध प्रकार।
तिहां सिष्य-सिषणी तणो ए, भेलो कियो बोहत परिवार ।।५।।
हूं आचार्य नें उवभाय तणों ए, प्रतणीक हुवो वारूंवार।
अजश कियो अति घणों ए, घणां आंगुण बोल्या मुख फार ।।६।।
इत्यादिक सगली कहसी मांड नै ए, पछै छेहलै अवसर सल काढ।
समकत पामी तिहां ए, जद तो काम सिराड़े दियो चाढ ।।७।।
पछै मरनै गयो सुर बारमें ए, तिहां थी चवे हुवो मोटो राय।
तिहां पिण साधां भणो ए, दुख घणों दियो ताय ।।८।।

वले सुमंगल नामे अनगार नें ए, हेठो नाख्यो रथ फेरचो दोय बार।
तिण तेजू लेस्या काढनें ए, मोनै बाले जाले कियो छार ।।९।।

तिहां थी मरनै गयो हूं नरक सातमी ए, तिहां दुख भोगविया अपार।
सातोंई नरक में ए, हूं छूं गयो दोय-दोय बार ।।१०।।

पछै तिर्यंच में दुख भोगव्या ए, ते पिण मांडे कही सर्व बात।
मिनष रा भव मझे ए, समकत आयो गयो मिथ्यात ।।११।।

दस वार चारित म्है विराधियो ए, गयो भवणपती रै मांय।
तिहां थी हूं नीकली ए, मानव नो भव पाय ।।१२।।

तिहां पिण चारित विराध नै ए, जोतषी देवता हुओ जाय।
पछै चारित आराध नै ए, सात बार गयो सुर मांय ।।१३।।

इणविध संसार में हूं रूल्यो ए, तिणरो छै घणो विस्तार।
मो जिम करजो मती ए, वधारजो मती संसार ।।१४।।

आचार्य नै उवभाय नां ए, प्रतणीक मत होयजो कोय।
अंजस कीजो मती ए, वले आंगुण मत बोलजो सोय ।।१५।।

वले अकीरत करजो मती ए, कीधां हुवै दुख अनंत।
मो जिम संसार में ए, भमण करोला वार अनंत ।।१६।।

जद समण निग्रंथ इम सांभली ए, भय पामसी तिण ठाम।
आलोए पडिकमी ए, प्राछित ले सुध होसी ताम ।।१७।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दढपइनो साधू तिण भव मझे ए, घणां वरस केवल प्रज्या पाल ।
संथारो करे तिहां ए, मोख जासी काटे कर्म जाल ।
आठूं करम खै करी ए ।।१८।।

जठै जनम-मरण नहीं सर्वथा ए, सासता सुख घणां श्रीकार ।
त्यां सुखां नें नहीं ओपमा ए, त्यांरो पामै नहि कोई पार ।
एहवा सुख पामसी ए ।।१९।।

एहवा सुख गोसाला रो जीव पामसी ए, बीचे विघन घणां छै ताम ।
बांध्या करम भोगवी ए, छूटेको होसी ताम ।
जिणेसर भाखियो ए ।।२०।।

ए चरित करयो गोसाला तणों ए, सुतर भगोती रै अणुसार ।
पनरमा सतक में ए, तिहां पिण जोय लीजो विसतार ।।२१।।
संवत अठारे छयालै समं ए, काती बिद सातमी रविवार ।
चोपी गोसाला तणीं ए, कीधी खैरवा सहर मझार ।
जिणेसर भाखियो ए ।।२२।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

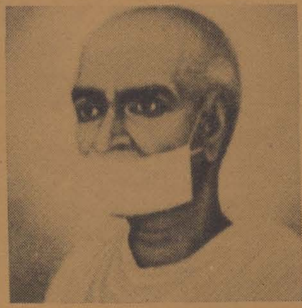

प्रज्ञापुरुर्ष जयाचार्य

छोटा कद, छरहरा बदन, छोटे-छोटे हाथ-पांव, श्यामवर्ण, दीप्त ललाट, ओजस्वी चेहरा– यह था जयाचार्य का बाहरी व्यक्तित्व।

अप्रकंप संकल्प, सुदृढ़ निश्चय, प्रज्ञा के आलोक से आलोकित अंतःकरण, महामनस्वी, कृतज्ञता की प्रतिमूर्ति, इष्ट के प्रति सर्वात्मना समर्पित, स्वयं अनुशासित, अनुशासन के सजग प्रहरी, संघ व्यवस्था में निपुण, प्रबल तर्कबल और मनोबल से संपन्न, सरस्वती के वरद्पुत्र, ध्यान के सूक्ष्म रहस्यों के मर्मज्ञ—यह था उनका आंतरिक व्यक्तित्व।

तेरापंथ धर्मसंघ के आद्यप्रवर्तक, आचार्य भिक्षु के वे अनन्य भक्त और उनके कुशल भाष्यकार थे। उनकी ग्रहण-शक्ति और मेधा बहुत प्रबल थी। उन्होंने तेरापंथ की व्यवस्थाओं में परिवर्तन किया और धर्मसंघ को नया रूप देकर उसे दीर्घायु बना दिया।

उन्होंने राजस्थानी भाषा में साढ़े तीन लाख श्लोक प्रमाण साहित्य लिखा। साहित्य की अनेक विधाओं में उनकी लेखनी चली। उन्होंने भगवती जैसे महान् आगम ग्रंथ का राजस्थानी भाषा में पद्यमय अनुवाद प्रस्तुत किया। उसमें ५०१ गीतिका हैं। उसका **गंथमान है**—साठ हजार पद्य प्रमाण।

- जन्म—१८६० रोयट (पाली मारवाड़)
- दीक्षा—१८६९ जयपुर
- युवाचार्य पद—१८९४ नाथद्वारा
- आचार्य पद—१९०८ बीदासर
- स्वर्गवास—१९३८ जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

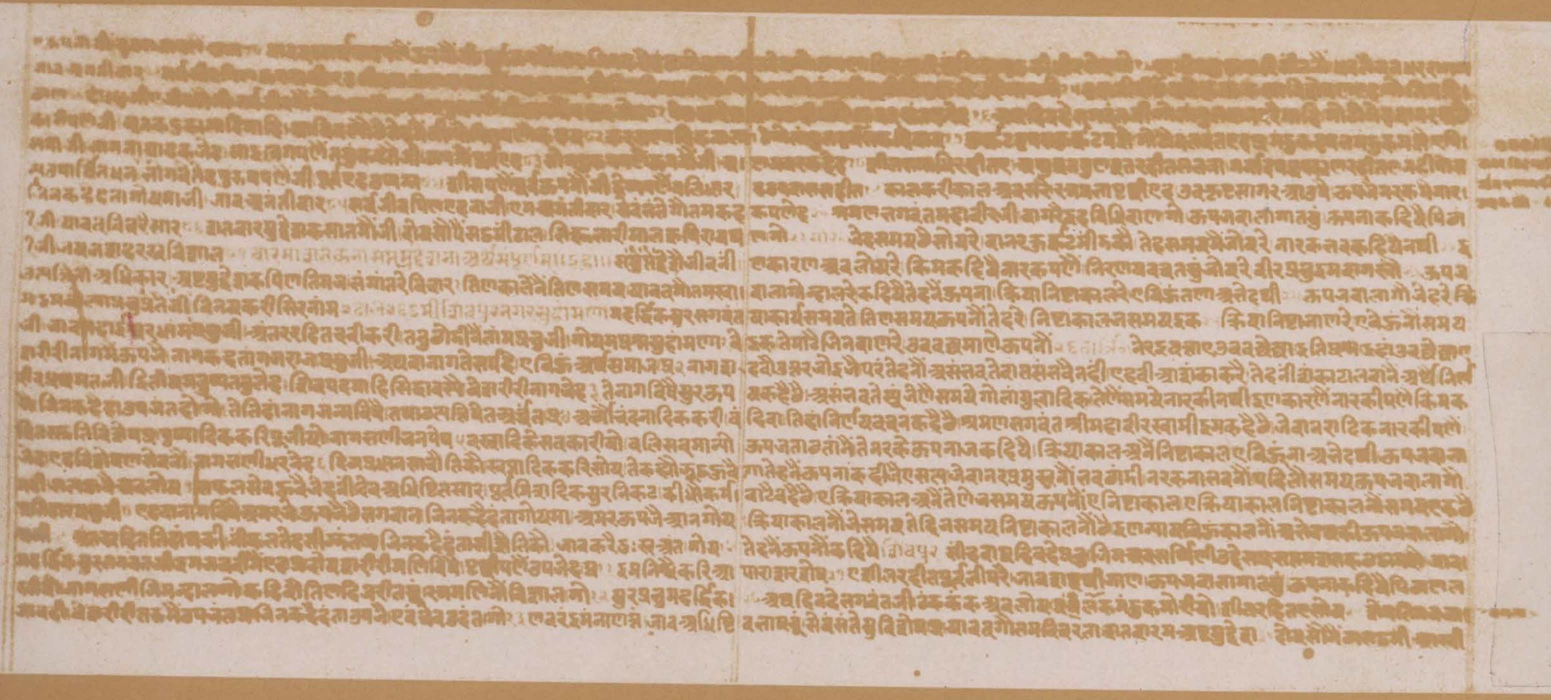

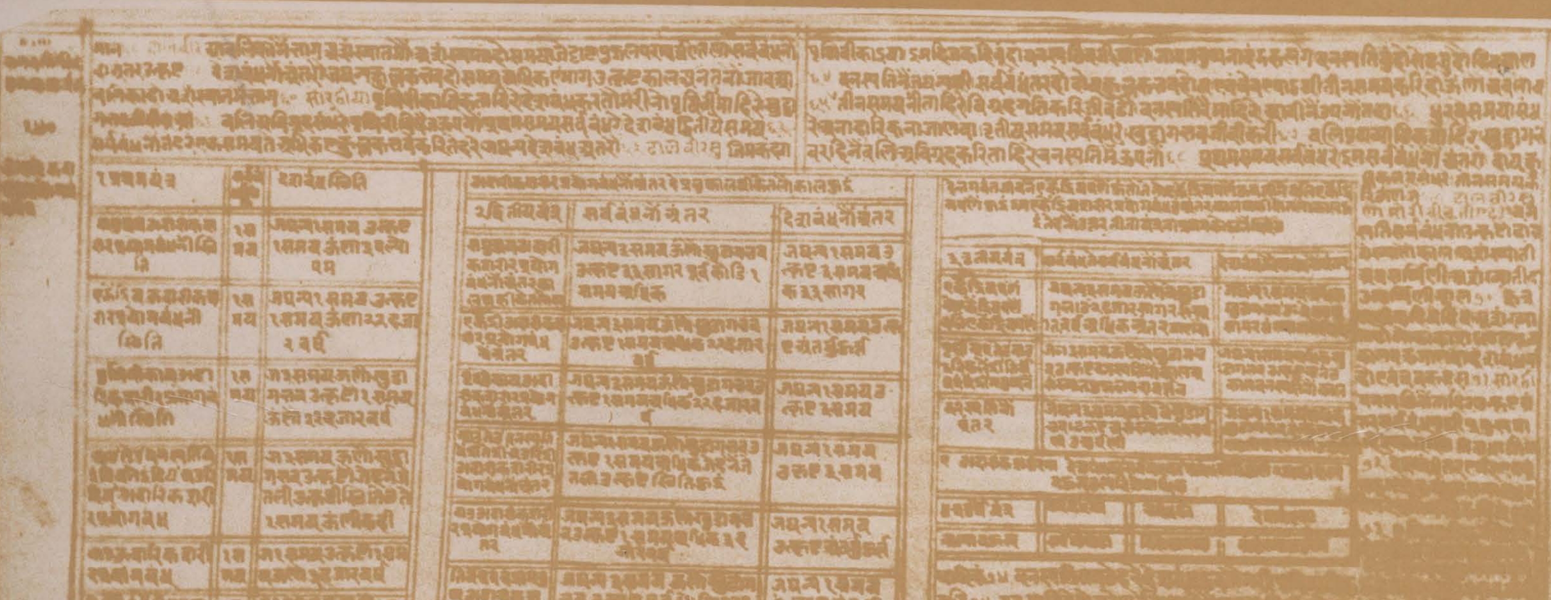

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org